# भा ॰ दि ॰ जैनसंघग्रन्थमालायाः प्रथमपुष्पस्य तृतीयो दलः

# श्रीयतिवृषभाचायरचितच्णिसूत्रसमन्वितम्

भीभगवद्गुणधराचार्यप्रणीतम्

# क साय पा हु डं

तयोश्च

### श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका

[ तृतीयोऽधिकारः द्विदिविहत्ती ]

सम्पादक

फ़्लचन्द्र

सिद्धान्तशास्त्री सम्पादक महावन्ध, सहसम्पादक -----

धवला

कंलाशचन्द्र

सिद्धान्तरन्न, सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ प्रधान श्रध्यापक स्यादाद सहाविद्यालय काशी

प्रकाशक

मंत्री साहित्य विभाग

भा० दि० जैन मंघ, चारामी मथुरा

वि सं० २०२२ ]

वीरनिर्वाणाब्द २४८१

िइ० मं० १६५५

मूल्यं रूप्यकद्वादशकम्

# भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

# इस प्रन्थमाला का उद्देश्य

प्राकृत मंस्कृत त्रादि में निवद्ध दि॰ जेनागम, दर्शन, साहित्य, पुराण त्रादिका यथा सम्भव हिन्दी त्रानुवाद सहित प्रकाशन करना

1600 CO

सञ्चालक

भा० दि० जैनसंघ

ग्रथाङ्क १−३

त्राप्ति<del>ग</del>्थान

**मंने**जर

भा० दि० जैन संघ

चौरामी, मधुरा

मुद्रक-शिवनारायण् उपाध्याय, नया संसार प्रेम, काशी।

## Sri Dig. Jain Sangha Granthmala No. 1-III

# KASĀYA-PĀHIUDAM III (THIDI VIHATTI)

BY

### GUNABHADRACHARYA

WITH

### CHURNI SUTRA OF YATIVRASHABHACHARYA

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF VIRASENACHARYA THERE-UPON

EDITED BY

Pandit Phulachandra Siddhantashastri,

EDITEOR MAHARANDRA JOINT EDITOR DHAFALA,

# Pandit Kailashachandra, Siddhantashastri

Nyayatirtha, Suddhantaratna Pradhanadhya pak, Suadvadu Drgambara Jain Vidyalaya, Banaras.

PUBLISHED BY

THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT,

THE ALL-INDIA DIGMBAR JAIN SANGHA

VIRA-SAMVAT 2481 ] VIKRAMA S. 2012 [ 1955 A. C.

### Sri Dig. Jain Sangha Granthamala

Foundation year-]

-Vira Niravan Samvat 2468

Aim of the Series:-

Publication of Digambara Jain Siddhanta, Darsana, Purana, Sahitya and other Works in Prakrit, Samskrit etc. Possibly with Hindi Commentary and Translation.

DIRECTOR .-

## SRI BHARATAVARSIYA DICAMBARA JAIN SANCHA

NO. 1. VOL. III.

To be had from:-

# THE MANAGER SRI DIG. JAIN SANGHA. CHAURASI, MATHURA,

U. P. (INDIA)

Printed by = S. N. UPADHYAYA,

AT THE NAVA SANSAR PRESS, PANARAS.

800Copies.

Price Rs. Twelve only

### प्रकाशककी ओर से

श्राज सात वर्षके पश्चान कमायपाहुड ( जयधवला ) के तीमरे भाग ( स्थिति विभक्ति ) को प्रकाशित करते हुए हमे जहाँ हुए हैं वहाँ अपने पर खेद भी हैं। दूसरा भाग प्रकाशित करते समय ही उत्तम कागज दुएपाट्य था और प्रस सम्बन्धी कठिनाइयाँ भी थी। उनके पश्चान श्रार्थिक कठिनाई भी उपस्थित होगई और प्रयन्त करनेपर भी छपाईका कार्य प्रारम्भ न हो सका।

डमी बीचमे सबके प्रधानमंत्री पंठ राजेन्द्रकुमार्ग्जाने प्रधानमत्रित्वके कार्य-भारसे मुक्ति ले ली और पठ जगमोहनेवालजी शह्मीको प्रधानमत्रित्यण भार सौंपा गया । आपके कार्यकालमे कुण्डल-पुर ( मध्यप्रदेश ) से सबका बाधिक अधिवेशन हुन्ना और उसका सभापितपद डागरगढ़ ( मध्यप्रदेश ) के प्रसिद्ध उदारमना दानवीर सेठ भागचन्द्रजीने मुशोभित किया ।

उस अवसर पर आपने कसायपाइड (जयभवला) के प्रकाशनको चाल् रखनेके लिये ग्यारह हजार रूपयोके दानकी उद्दार घोषणा की और यह भी आह्वासन दिया कि द्रव्यकी कमीके कारण यह सन्कार्य बन्द नहीं होगा। इससे रफ्षंकों हप तथा और कागज नशा प्रेसकी व्यवस्था होते ही तीसर(भाग प्रेसके द दिया गया जा एक वर्षके परचात प्रकाशित हो रहा है। नथा चीथ भागके भी कुछ फाम हुए चुल हे और परियों भाग भी प्रेसके दिया जानेवाना ह।

यह सब दानवीर सेठ भागचन्द्रवीकी उदार दानशीलताका ही सुकत है। उन्होंने त्रपनी लद्दमी-का विनियोग एसे रात्कायम करके धनिका और द्यानियों के सन्मुख एक आदर्श उपस्थित करनेके साथ साथ अक्षय पुरुषलाग लिया है। क्यांकि शान्त्रकाराने कहा है—

> ये यत्तने श्रृत भक्तया ने यक्तनेऽखमा (जनम् । च क्षित्रिक्तःर प्रानुसार हि श्रृतदेवयोः॥

ंडो भक्तिप्रथंक शुनको पुरस करते हैं वे यथार्थमें जिनेन्द्रदेवको ही पूजा करते हैं, क्योंकि सर्वज-देवने अन और जिनदेवमें कुछ सो भेद नहीं व लाया है ।

त्रयः कमावराहुड जेते प्रत्यराजके प्रकाशनमें द्रध्यका विनियोग करके सेट भागचन्द्रजीने प्रकाशन्तरमें गजरथ महोत्सपको ही सम्पन्न किया है, क्याकि जिनविस्व प्रतिष्ठामे जिनवाणी प्रतिष्ठा किसी भी ऋशमें कम नहीं है।

हम सेठ मागचन्द्रजीको उनकी इस उदारताके िये शतशः धन्यवाद देते है और आशा करते है कि अब यह सन्काय अवश्य ही निर्मित्र पूर्ण होगा ।

इस भागके अनुवादादि समस्त वाय प० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीने निष्पन्न किये हैं। मूल व अनुवाद आ दका संशाधन व पाठ सितान आदि कायमें मैने भी पहिनर्जीके साथ सहयोग किया है। पण्डितर्जी आगके खण्डाका भी सब कार्य बड़ी तत्परतासे कर रहे हैं। उक्त दानमें भी उनकी प्रेरणा विशेषतः रही है। इस्लिये वे भी धन्यवादके पात्र हैं।

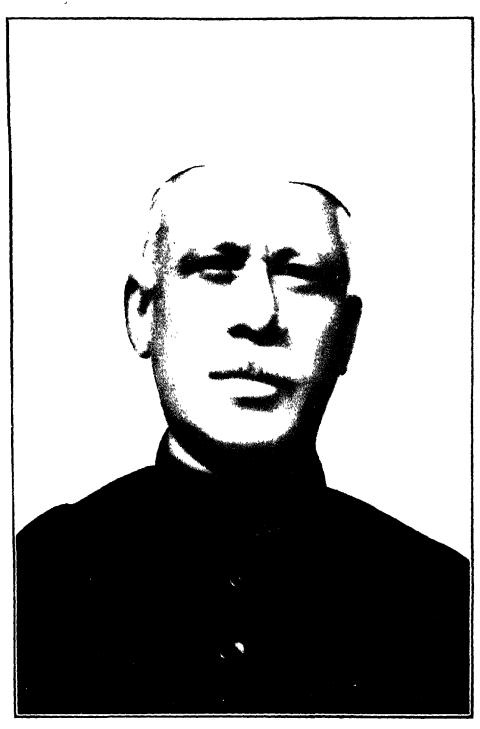
इस भागमें स्थितिविभक्ति नामक अधिकार आया है, जो अपूरण है, वह चौथे भागमे पूर्ण होगा। इसलिये उसके सम्बन्धमें स्म्पादकीय धक्तव्य वर्गरह चौथे अधिकारमें दिया जायेगा।

कार्णामे गद्भातट पर स्थित स्व० वावृ छेदीलालजीके जिनमन्दिरके नीचेके भागमे जयधवला कार्यालय अपने जनमकानमे ही स्थित है। और यह स्व० वावृ सा० के मुपुत्र धर्मध्रेमी वावृ गर्माणवासजी और पीत्र वार साल्यगरामजी तथा अप्रसन्दर्जीके सीजन्य और धर्मध्रेमका परि-चायक है, अतः मैं उन सजनोका भी आभारी हैं। सहारतपुरके स्व० लाला जम्बूश्रमादर्जीके सुपुत्र रायसाहिब लाला प्रयुद्धकुमार्जीने अपने जिन-मन्दिरजीकी श्री जयधवलाजीकी प्रति मिलानके लिये प्रदान की । श्री स्थाद्वाद महाविद्यालय काशी-के अकलद्ध सरस्वती भवनके प्रस्थाका उपयोग विद्यालयके व्यवस्थापकोके मोजन्यसे जयधवलाके सम्पादनमें हो सका है । तथा जैन सिद्धान्त भवन आराके पुस्तका यक्ष श्री पं० नेमिचन्द्जी ज्योति-पाचार्यके सोहादसे भवनसे सिद्धान्त प्रत्याकी प्रतिचां आदि प्राप्त होती रहती हैं, अतः उक्त सभी सजनाका भी में आसारी ह ।

नया संसार घेसके व्यवस्थापक पं० शिवनारायण्डी उपाध्याय तथा उनके कर्मचारी भी धन्यवादके पात्र है जिन्होंने इस संथके सुद्रण् से पृण् सहयोग दिया।

जयधवला कार्यालय भदेनी, कार्शा भादपद कृष्णाः १ वी० नि० सं० २४=१

कॅलाशचन्द्र शास्त्री मंत्री माहित्य विभाग भा० दि० जैनसंघ



दानवीर सेठ भागचन्द्रजी डोंगरगढ

### चित्र परिचय

देशी बोलीम 'भाग्य' को 'भाग' कहते हैं श्रीर जिनका भाग सराहने योग्य होता है उन्हें भागचन्द्र कहते हैं। डोगरगहिनवामी दानवीर सेठ भागचन्द्रजी ऐसे ही व्यक्तियोमेसे एक हैं। यह इमिलए नहीं कि वे श्राधुनिक माजसज्जावां तुन्दर माजनमें रहते हैं, उनके यहाँ निरंतर दम-पाँच नोकर लगे रहते हैं श्रीर वश्रकी परिस्थितिक त्रानुह्मप वे साधनमम्पन्न है विल्क इमिलिये कि उन्हें पुराने श्रीर नये जो भी माधन मिले हैं, अपनी परिस्थितिक श्रनुह्मा वे उनका उपयोग लोकसेवा व सांस्कृतिक और सामाजिक कार्योम करना जानते हैं।

लगभग दस वर्ष पूर्व सेठ सा० से हमारी प्रथम भेट हुई थी। उस समय व मोटर अपघातसे पीड़ित हो अस्पतालमें पड़े हुए थे। सेठ सा०को छाती व सिरमें मुदी चोट आई थी, इसलिए उनके दाएँ-वाएँ कई परिचारक परिचर्यामें लगे हुए थे, डाक्टर फुरमी डालकर सिरहाने बैठा हुआ था और दस-पाँच नाते रिश्तेदार व मित्र दोड़धूप कर रहे थे। किसीको मिलने नहीं दिया जाता था। बात-चीत करना तो दूरकी बात थी। हमें केवल दूरमें देखने भरका अवसर मिला था। हम चाहते भी नहीं थे कि ऐसी पिटिश्विमें उनमें किमा अकारकी बा चीत की जाय। किन्तु उनकी सतर्फ आंखोने हमें पिटिचान लिया और डा स्टर्फ लाग्य मना करनेपर भी वे बोलने से अपने आपको न रोक मके। पासमें खुलाकर कहने लगे — 'पण्डितजी आप आगये, अन्छा हुआ। हमारी सेवा स्वीकार किये विना आप जा नहीं सकते। सिर्फ दो दिन करे। इतनेमें ही हम इस लायक हो जायेंगे कि आपसे चन्द मिनट बातचीत कर सिंह और आपके मुखसे धर्मके दो शब्द मुत सिर्फ।'

रीठ सा० एक भावनाप्रधान उत्माही ब्यापारकुण ग व्यक्ति है। वे किसी विद्वान्, त्यागी या अतिथिको अपने घर ब्यापा तथा देखकर खित्र उठते हैं और सपत्नीक हर तरहसे उसका आदर-सन्कार करनेसे जुट जाते हैं। कभी कभी तो ऐसा भी देखा गया है कि वे इस आवभगनमें लगे रहनेके कारण उस दिन करने योग्य अन्य आवश्यक कार्योको भी भूल जाते हैं। इस कारण उन्हें काकी अति भी उठानी पड़नी है।

सेठ साठ की मुख्य किया विषय शिक्षा है। सम्फ्रत शिक्षा और द्वाब्युन्ति पर गुप्त और प्रकाशरूपमें आप निरन्तर खर्च करने रहते है। रामहेक गुरुकु गके आप प्रधान आलम्बन है। एक मात्र इसीकी सेवाके उपलब्यमें समाज द्वारा आप 'दानवीर' परमें अलकृत किये गये हैं। आप अपने गाँवमें एक हाइम्कृत खोलता चाहते थे। किन्तु हमारे यह कहने पर कि इस शिक्षापर खर्च करनेवाले बहुत है, आपको सामकृतिक और सामाजिक कार्योकी ओर ही मुख्य रूपमें ध्यान देना चाहिये, सेठ साठ ने यह विचार त्याग दिया है।

इधर आपका थान साहिन्यिक सेवाकी श्रोर भी गया है। श्री ग० वर्णी जैन प्रथमालाकों आप निरंतर सहायना करने रहते हैं। हम जब भी टीगरगढ़ जाते हैं, खाली हाथ नहीं लीटने। यह भी नहीं कि हमे मांगना पड़ना हो। चलने समय हजार-पाँचमी जा भी देना होता है, स्वेच्छासे उपस्थित कर देते हैं। यह पृद्धने पर कि इसे किस मदमे खर्च किया जाय, एक सात्र यही उत्तर मिलता है कि आएकी इच्छा।

श्री भारतवर्षीय दिरास्वर जैनसंघ एक पुरानी संस्था है। सुरुयक्ष्पसे इसके सख्चालक विद्वान है। अब तक इस संस्थान साहित्यसेवा और धर्मप्रचारक त्रवसे जो सेवा की है और कर रही है वह किसीसे छिपी हुई नहीं है। शास्त्रार्थके वे दिन हुसे खाज भी याद खाने हैं। जब खायंसमाजका जार था और जैनियोंको शास्त्रार्थके लिये मार्वजनिक रूपसे ललकार। जाता था। उस समय यही एक ऐसी मंस्था थी जिसने आर्यसमाजियोसे न केवल टकर ली, अपि तु अपने प्रचार और शास्त्रार्थकं वलपर उनका मदाके लिये मुँह वन्द कर दिया और वल तोड़ दिया। ऐसी प्रसिद्ध संस्थाके वर्तमान स्थायी अध्यक्ष सेठ साथ ही है। आप इस पदका बड़ी सुन्दरतासे निर्वाह कर रहे हैं। इसके साथ आप श्री जयध्यवलाजीके प्रकाशनका भार भी सम्हाल रहे हैं। उसीके परिणामस्वरूप प्रस्तुत बन्धका प्रकाशन हो रहा है।

सामाजिक और सांस्कृतिक वेत्रमं आपकी जो विशेषता है वह राजनैतिक और सार्वजनिक वेत्रमं क्षेत्रमं भी देखनेको मिलती है। आप अपने वेत्रमं इतने अधिक लोकप्रिय है कि गरीव अमीर सभी आपकी सलाह लेने तथा उचित महायता आप करनेके लिये आपके पास आने रहते हैं। कई वर्ष पृवं आपकी इस लोकप्रियता और परोपकारी स्वभावके कारण आप केत्रपट राज्य और जनता द्वारा 'राज्यरत्न' जैसी सम्मानित उपाधिसे विभूषित किये गये थे। जनता और सरकारमं आज भी आपका वही सम्मान है।

संयोगवहा आपको जीवनसाथी भी आपके अनुम्दप ही मिला है। वहिन नर्मदावहि अपने हंगकी एक ही महिलारन है। इनकी टकरकी वहुन ही कम महिलाएँ सभाजमें देखनेको मिलेंगी। आपके मुख्यर प्रसन्नता और वोलीमें मिठास है। समय निकानकर धर्मशायके रवा यायद्वारा आत्मकत्याणमें लगे रहना आपका देनदिनका कार्य है। सेठ साठ जो। भी लोकोपकारी कार्य करते हैं उन सबसे आपका पूरा सहयोग रहता है। किर भी आपकी कचिका मुख्य विषय आयुर्वेदिक आंपधियोका समह कर और जो सम्भव है उन्हें स्वयं नेयार कर गरीव अमीर सबको समान भावसे विनिदेन करना है। चिकित्साशासका आपने सविधि आध्ययन किया है, अतण्य आप स्वयं रोगियोको देखने जाती है और आवश्यकता पड़ने पर दूसरे वैद्य वा डावटरकी भी महायता लेती है। उनके इस कार्यमें सेठ साठ भी बड़ी किय रखते हैं और विहन नर्मदार्थको उन्साहित करने रहते हैं। तथा कभी कभी स्वयं भी उस कार्यमें जुट जाते है।

वर्तमान देश और समाजके लिये ऐसे संवाभावी महानुभावोकी वड़ी आवश्यकता है। हसारी मङ्गलकामना है कि यह दम्पति युगल चिरजीवी ही और परीपकार जैसे महान लीकोपकारी कार्यको करने हुए पुण्य और यशके भागी वने।

फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

# विषय-सूची

# स्थितिविभक्ति पु० १

विपय	ás ,	विषय	<i>র</i> ম্ভ
<b>मं</b> गलाचरण	<b>ę</b> .	स्वामित्व	१६–≎पू
स्थितिविभक्ति के दो भेद	į Ę	उत्कृष्ट स्वामित्व	१६–२०
स्थितिविभक्ति की सार्थकता		जवन्य स्वामित्व	¥०—₹्पृ
स्थितिविभक्तिकं दो भेदो का		काल	२्५−४७
संयुक्तिक निर्देश	ર_ક્¦	उत्कृष्ट काल	ર્યુ <b>–</b> 3્ફ
मल प्रकृतिस्थितिका विशेष		जयन्य काल	३७-४७
<b>उत्तर्भा</b> त	₹-8	मृलोच्चारणा पाठका निर्देश	80
स्थितिवि <b>स</b> क्तिका अर्थपद	ų	<b>ऋन्तरानुग</b> प्त	<b>४</b> ८⊷४ <b>३</b>
मल प्रकृतिस्थितिमे विभक्ति		उन्हरद अन्तरानुगम	४४-५०
पद्धा सार्थकता	પૂ-૬	जवन्य अन्तरानुग्म	પુ <b>१</b> −યુ ફ
उत्तर प्रकृतिस्थितिमे विमक्ति		नाना जीवोकी ऋषेक्षा	
<b>पटकी</b> राष्ट्रीतवा	ξ- s	भन्नियय	યુષ્ઠ–પૂછ
मल प्रकृतिस्थितिवर्भाक्तके	,	उत्कृष्ट मर्तावचय	યુષ્ઠ-પૃષ્
- अनुयोगद्वार	<b>%−</b> ≒	ज्ञवन्य भद्गविचय	45-10
ये ही अनुयोगद्वार उत्तर प्रकृतिस्थि	ਜ	भागाभागानुगम	ય≍– <b>ફ</b> ∘
विभक्तिमं भी लागु होने है	5	उन्कृष्ट भागामागानुगम	42-48
मृत्तप्रकृतिस्थितिविभक्ति	c-980	जवन्य भागामागानुगम	46-60
२४ श्र <u>ज</u> ुयोगद्वार	= ;	परिमाणानुगम	६१ <b>–</b> ६३
२४ <b>अधुपागकार</b> ऋद्वाच्छेद	=-\\\ =-\\\		६१ <b>–६</b> २
अक्षान्थर उत्कृष्ट ऋद्वाच्छेर		ज्ञधन्य परिमाणानुगम चेत्रकारम	<b>६२–६</b> ३
	8 <b>4-3</b>	चेत्रानुगम	६४-६ <i>७</i>
जपन्य त्रद्धान्छेद 	१६-१४	उन्द्राप्ट च्यानुगम	<b>६</b> ૪–६૫
मर्व-नामर्वविभक्ति	<b>१</b> 8	ज्ञचन्य चत्रानुगम ' <del>- वर्णायस्य</del>	<b>६</b> ६–६७ -
उत्कृष्ट-अनुन्कृष्ट्रवि० 		स्पर्शनानुगम	<b>ξ</b> π–πο
जधन्य-त्र्यज्ञवन्यवि०	48	ं उत्कृष्ट स्पर्शनानुगम ———	<b>६</b> =−७७
मर्वस्थिति स्रोर स्रद्धारुद्धेदकी		जघन्य स्पश्तानुगम	99- <del>2</del> 0
उत्कृष्ट स्थितिमे स्थन्तर कथन	१४-१५	कालानुगम	द <b>्र</b> =
उत्हृष्ट विभक्ति श्रीर उत्हृष्ट		उत्कृत्ट कालानुगम	⊏०− ,२ ३९
अड़ाच्छेदमे अन्तर कथन	શ્ય	ज्ञचन्य कालानुग <b>म</b>	च३- <b>च</b> ६ ऽन
सर्वविभक्ति श्रीर उन्हरट	6	- अन्तरानुगम	दद- <b>६२</b> (
विभक्तिमे त्र्यन्तर कथन	१५	उन्हाट श्रन्तरानुगम	53- <b>5</b> 8
मादि-ग्रनादि-ध्रुव-त्र्रध्रुववि०	१५-१६	। ज्ञचन्य श्रन्तरानुगम	६०−६३

विषय	वृष्ट	विषय	प्रष्ठ
भावानुगम	६३	कालानुगम	१७५–१८०
<b>त्रान्पवहुत्वानुगम</b>	£ <b>३–</b> દૃપૂ	<b>अन्तरानुगम</b>	१८०-१८४
उत्कृष्ट अल्पवहुत्वानुगम	६३-६४	भावानुगम	१⊏५
जघन्य ऋल्पबहुत्वानुगम	£8-E¥	श्रारुपबहुत्वानुगम	१८५-१८६
भुजगारके १३ श्रनुयोगद्वार	<b>દ</b> પ્ <b>–१</b> ૨७	स्थानप्ररूपणा	१८६–१६०
समुत्कीर्ननानुगम	<b>દય</b> – <b>દ</b> દ્દ	उत्तरप्रकृतिस्थितिविभक्ति ११	<b>.</b> १-५४४
स्वामित्वानुगम	६६-६७	अर्थपद ओर उमकी व्याख्या	१८१-५६२
काला <del>नु</del> गम	६५-१०५	स्थिति पदर्की व्याख्या	१६२
<b>अन्तरानुगम</b>	१०५-(११	उत्तरप्रकृति पदकी व्याख्या	१६२
नाना जीयोकी ऋषेक्षा भङ्ग विचय	१११-११३	चाँबीस अनुयोग द्वार	१६३-५४४
भागाभागानुगम	११६–११४	अनुयागद्वाराका नाम निर्देश	१६३
परिमाणानुगम	१,४-११५	भूजगार आदि अनुयोगद्वारोंका २४	?
चत्रानुगम	११६-११७	अनुयागद्वारोमे अन्तर्भाव	१६३
स्परानानुगम	184-820	ग्रद्धा च्छेद	१६४-२१४
कालानुगम	१२१–१३२	उत्कृष्ट स्थिति श्रद्धान्छेद	१६४-२०३
<b>अन्तरानुगम</b>	१२३∸१२५	मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति	१ <b>८४</b> -१ <b>८५</b>
भावानुगम	१२६	सम्यक्तव खाँर सम्यग्मिश्यात्वकी	
<b>अल्पवहुत्वानुगम</b>	१२६–१२७	उन्दृष्ट स्थिति	१६५-(६६
पद्निक्षेपके ३ श्रजुयोगद्वार	१२७ १२५	मांगह काायोकी उन्हाप्ट स्थिति	१६७
समुर्त्कीर्तना	१२७-१२५	नो नोकपायोकी उत्क्रप्ट स्थिति	₹ <del>5-0</del> -3}
उत्कृष्ट समुर्त्कार्तना	183-185	चारा गतियाम सब कर्मीकी	
जवन्य समुर्त्कार्तना	१२५	उन्कृष्ट स्थिति	<b>3</b> 58
स्वामित्वानुगम	५२,६	१४ मार्गणाओं में उच्चारणार्क	
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	१२६-१३३	त्रमुसार उत्कृष्ट स्थिनि	<b>१</b> ६६–६ <b>०</b> २
जवन्य स्वामित्वानुगम	१३३-/६४	जवन्य स्थिति ऋद्वाच्छेद	२०२–२१४
<b>अल्पव</b> ृत्व	१६४-१५५	मिण्यात्व, मन्यग्मिण्यात्व ऋौर	
उत्रुष्ट ऋल्पबहुत्व	१५४-१३५	वारह कपायोकी जघन्य स्थिति	२०३-२०५
जघन्य अल्पबहुत्व	१३ <b>५</b>	सम्यक्तव, लाभसंज्वलन, स्वीवेद	
वृद्धिके १३ अनुयोगद्वार	५ <b>३</b> ६−१≂८	श्रीर नपुंसक्वेदकी जघन्य स्थिति	२०५-२०७
समुर्त्कातना	१३६-१२७	क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थिति	२०७-२०८
स्वामित्वानुगम	१३५-१४८	म।नसंज्वलनकी ,, ,,	२०⊏-२०६
कालानुगम		म।यासंज्वलनकी ", ,,	२०६
<b>अन्तरानुगम</b>		पुरुपवेदकी ,, ,,	२०६–२१०
नाना जीवोकी श्रपेक्षा भद्गविचय		छह नोकपायोंकी , , ,	२१०
भागाभागानुगम	१६४-१६६	I -	
परिमाणानुगम	१६६-१६=		<b>२११</b>
<b>त्रेत्रानुगम</b>	र६=−१६६	१४ मार्गणात्रोमे उचारणाके अनु-	- 4 6
स्पर्शनानुगम	885-8 <b>0</b> 1	सार जघन्य स्थिति	२११२२५

विपय	वृष्ठ	विपय	दृष्ट
उचारणाके अनुसार नोकपायोंके		त्रोर जुगुप्सा	२६६
बन्धक कालका ऋरपबहुत्व	२१३	सम्यक्त्व श्रौर सम्यग्मिध्यात्व	२७०
इस विपयमें व्याख्यानाचार्यका		स्त्रीवेद, पुरुपवेद, हास्य और रति	२७०-२७१
अभिप्राय	२१३–२१४	चार गतियोमे	२७२
सर्व-नोसर्वस्थितिविभक्ति	२२६	उचारणाके अनुसार काल	२७२–२६०
उत्कृष्ट-ग्रजुःकृष्टस्थिति०	२२६	जघन्य स्थितिका काल	२६०–३१५
जघन्य-ऋजघन्यस्थिति०	२२६–२२७	मिश्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मि-	
सादि-त्र्यनादि-ध्रु व-त्र्रध्रुवस्थि०	२२७–२२⊏	भ्यात्व, सोलह कपाय <b>श्रीर</b>	
एक जीवकी ऋपेक्षा स्वामित्व	२४६-२६६	तीन बंद	२६०–२६१
उत्कृष्ट स्थितिका स्वामित्व	<b>२२</b> ६–२४ <b>१</b>	छह नाकपाय	२६१–२६२
मिथ्यात्व	२२६–२३०	जघन्य स्थिति और जघन्य श्रद्धा-	
सालह कपाय	२३०	च्छेद तथा उत्कृष्ट स्थिति ऋौर	
सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्व	<b>२</b> ३१-२३२	उत्कृष्ट ग्रद्धाच्छेरका विचार	<b>६</b> १–२६२
नो नोकपाय	२३३ <b>–२</b> ३४	उचारणांके ऋनुसार जघन्य	
१४ मागणात्र्योमे उद्यारणाके		स्थितिका काल	२६२-३१५
श्रनुसार स्वामित्व	२ <b>३</b> ४–२४१	त्रन्तर	३१६–३४५
जघन्य स्थितिका स्वामित्व	२४१–२६६	उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर	३१६-३३०
मिथ्यात्व	२४१–२४२	मिथ्यात्व और १६ कपाय	३१६-३१७
सम्यक्त्य	<b>- 8</b> 3	नी नोकपाय	३१७–३१८
सम्यग्मिध्यात्व	788	सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्व	३१⊏-३∶६
श्रनन्तानुबन्धी चार	२४५–२४७	ड्यारणाके अनुसार उत्कृष्ट स्थित-	
मध्यकी आठ कपाय	२४ऱ-२४६	का ऋन्तर	३१६-३३०
क्रोधसंज्वलन	२४६–२५०	जघन्य स्थितिका श्रन्तर	₹३२–३४५
मान त्रीर माया संज्वलन	સ્પુર	मिश्यात्व,सम्यवत्व, वारह कपाय	
लोभ संज्वलन	સ્પૂર	श्रीर नी नीक्पाय	३३१
स्रीवद	२५१–२५२	सम्यग्मिथ्यात्व श्रीर श्रनन्तानु-	
पुरुपवद	२५२–२५३	बन्धी चार	३३१-३३२
नपुसकवेद	સ્યૂર	उचारणाके ऋनुसार जयन्य स्थिति-	
छह नोकपाय	રપૂર્-રપુષ્ઠ	का अन्तर	३३२–३५५
नारकियामं जघन्य स्वामित्व	२५४–२५्⊏	नाना जीवोंकी ऋपेक्षा भङ्गविचय	રે8પ્−રેપ્∢
शेर गतियोमे ., "	२५६	ऋर्थपद	<b>३४५-३४६</b>
शेप मार्गणात्रोंमे उचारणाके अनु-		उत्कृष्ट स्थितिका भन्नविचय	३४६–३४६
सार जघन्य स्वामित्व	२५⊏–२६६	मिश्यात्वकी ऋषेक्षा भङ्गविचय	३४६–३४≍
काल	२६६–३१५	रोप प्रकृतियोकी ऋपेक्षा भन्नविचय	३४८
उत्कृष्ट स्थिनिविभक्तिका काल	२६७–२६०	उचारणाके त्र्रानुसार भङ्गविचय	₹४≒–₹४६
मिथ्यात्व	२६७–२६⊏	जमन्य स्थितिका भङ्गविचय	३ <i>४६</i> –३ <b>५</b> ३
सानह कपाय	२६⊏–२६६	त्र्यर्थपद	इंग्रं०
पुंनसकवेद, ऋरति, शोक, भय	ł	मिथ्यात्वकी श्रपेक्षा भङ्गविचय	३५०–३५१

विषय	प्रष्ठ	विपय प्रष्ठ
शेप प्रकृतियोंकी ऋषेशा भन्नविचय	દપુર	मिभ्यात्व, सम्यक्त्व, आठ कपाय
उचारका के अनुमार भन्नविचय	६५६–३५३	और॔छह्नोकपाय ४२०–४११
भागाभागानुगम	રેષ્ઠ⊱રેષ્હ	सम्बाग्मश्यात्व श्रीर श्रनन्ता-
उत्कृष्ट भागाभागानुगम	ફેપ્રેષ્ઠ−ફેપ્રુપ	नुबन्धी चार ४११
जवन्य भागाभागानुगम	३५६–३५७	र्तान मञ्चलन और पुरुषवेद ४१२-४१३
परिमाणानुगम	३५५-३६३	लाभमं व्यलन ४१३
<del>उन्कृ</del> ष्ट परिम।णानुगम	<b>ર્ય</b> ≒−ેેય્{	स्त्रीवेद और नपुंसकवेद ४१३-४१४
जघन्य परिमाणानुगम	३६०-३६३	
चेत्रानुगम	३६४–३६७	का विचार ४१५
उत्कृष्ट चेत्रानुगम	३६४	ज्वारगारे अनुमार जवन्य अन्तर   ४१५-४२४
जवन्य चेत्रानुगम	३६५–३६७	मावानुगम ४२४-४२५
स्पर्शनानुगम	३६५-३५७	उत्कृष्ट भावानुगम ४२४
उत्क्रट <sup>्र</sup> पर्शनानुग्म	३६≒–३७≒	उपनान्तकवाय गुग्गस्थानमं सव
स्रोवसे स्वीनेद और पुरावंदरे		प्रहतियोका औदियक साव
स्परान्क मनभदका निर्देश	३६८	केंमे बनना है इस शकाका
जवन्य स्परानानुगम	<b>३ ડ</b> ⊱્રે= ક	परिहार ४२५
तियञ्जोमे उछ प्रकृतियोकी अपेक्षा		जवन्य मात्रानुगम ४२४-४२५
स्पर्शनमं पाठभेद	ફેંન૦	्रतिनकर्प ४२५ <u>–</u> ५२४
नाना जीवोंकी ऋपेक्षा काल	३८४-५०६	् उन्द्रेष्ट अन्तिकर्भ
उत्कृष्ट काल	346-568	मिभ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका त्र्याल-
मम्यक्त्व श्रीर मर्म्याग्मध्यात्वके		म्बन लेकर मन्निकर्प विचार ४२५-४५४
उन्द्वष्ट् कालका स्वतन्त्र निर्देश	१-३-३=६	सरयक्त्वकी उत्वृष्ट स्थितिका त्राल-
उचारमाके श्रनुसार उत्कृष्ट काल	३⊏६–३६४	ग्वन लेकर सन्निकर्य दिचार १५५-४५८
जघन्यकाल	६६४-४०६	सम्यग्मिश्यान्वकी उत्ह्यः स्थितिका
मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, बारह कपाय		श्रवलभ्वन लेकर मित्रकर्प विचार   ४५८-४५६
ऋौर तीन वेद	<b>ネ</b> とターネヒ⊌	मोलह करायोकी उत्कृष्ट स्थितिका
सम्यग्मिश्यान्व ऋोर ऋनन्ता-		त्र्यालम्बन ले <b>कर</b> स <b>न्निक</b> र्प विचार 🛮 ४५६
नुवर्ग्धा चार	३६५–३६६	स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका त्रालम्पन
छह् नोक्पाय	३६६	लेकर सन्निकर्प विचार ४५१-४७२
उचारणांके श्रमुमार जघन्य कान	<b>१</b> ६६	रोप प्रकृतियोकी च्यर्थान् हास्य, रति,
चूर्णिसूत्र, वष्पदेवकी उद्याराणा		प्रीर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक।
श्रीर वीरसेन द्वारा लिखिन		त्रालम्बन लेकर सन्निकर्प विचार ४८२-४७५
उचारणामे पाठभेदका निर्देश	३६≒–४०६	मतभेदका उल्लेख ४५४
नाना जीवोंकी ऋषेक्षा ऋन्तर	४०६–४५४	नपुसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका त्र्याल-
उत्कृष्ट श्रन्तर	४०६–४१०	म्बन लेकर सन्निकर्षका निर्देश ४ <b>७६</b> –४ <b>५</b> २
सय प्रकृतियोंका उक्कष्ट प्रस्तर	かいぎーよいる	त्रगति, शोक, भय श्रोर जुगुप्साकी
उम्चारणा ६ अनुमार उन्हार प्रनार	805-8(0	ङक्ष्य स्थितिका स्रालम्बन लेकर
जघन्य अन्तर	४८०-४२४	

विपय	वंत	विपय	वृष्ठ
उचारणाके अनुसार उत्कृष्ट सन्निकर्प	8=4-858	नरकगतिमे सब प्रकृतियाके ऋत्य-	
ज्ञघन्य सन्तिकर्प		बहुत्व का विचार	પુરદ્-પૂરહ
मिथ्यात्वकी जन्नन्य स्थितिका		उचारणाके अनुसार उत्कृष्ट स्थिति	
स्त्राल <b>म्बन लेकर सन्नि</b> हर्ष विचार	858	<b>अल्पब</b> टुत्य	पूर्≒ <b>-पू</b> ३०
शेप प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिका		उचारणाके अनुसार जघन्य स्थिति	
ऋालम्बन <mark>लेकर मन्निकर्</mark> प विचार	r કૃક્યુ	<b>अस्पबहु</b> त्व	પુ૩૦–પુષ્ટર્
उन्चारग्गाके ऋनुसार जघन्य सन्निकः	ર્મ પ્રસ્યુ-પુરુષ	उचारणाके ऋनुसार वन्धक कालकी	
<b>ऋ</b> त्पबहुत्व	પ્ર૨૪–૫૪૪	ऋपेक्षा संदृष्टि सहित सब	Ī
स्थिति ऋत्पबहुत्व	પૂર્જ-પુજર	प्रकृतियोंके अरुपबहुत्वका निर्देश	तपू३१–५३२
उत्सृष्ट स्थिति चान्पबहुत्व	યુર્૪-યુર્૦	चिरन्तन व्याख्यानाच।र्यके द्वारा	
नो नोकवाय	યુર્ઝ-યુર્યુ	निर्दिष्ट श्रन्पबहुत्व	५३२–५३ <b>३</b>
सालह कपाय	પુર્પુ	दोनों ऋल्पबहुत्वोंमें मतभेदका	
सम्यग्मिथ्यात्व	પૂર્ય	<b>उ</b> ल्लेम्ब	પૂરફ
सम्यक्त्व	પૂર્ધ-યુર્ફ	निर्यञ्चगनिमे उक्त दोनों अल्प-	
चूर्णीसृत्र स्रोर उचारणाका स्रालख्क	₹	वहुन्धोकी अपेक्षा पुनः विचार	્યુ રૂપુ
ंलकर कालप्रधान छोर निपेकप्रधान		र्जाव अन्पबहुत्व	482-488
स्थितिका उदाहरण सहित निर्देश	४्र् <b>प्र-</b> पुर्	उत्कृष्ट जीव ऋल्पबहुत्व	५४५-५४३
मिध्यात्व	પૂર્ફ	ं जय <del>न</del> ्य जीव अरूपबहुत्व	485-488

## शुद्धि

प्रप्र २२७ के मृलकी ७ वी पक्ति इस प्रष्टकी प्रथम पंक्ति है।

**→>8(©1:4(©18**++-

# कसायपाहुडस्स द्वि दि वि ह त्ती

तदियो ऋत्थाहियारो



## सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुिएणसुत्तसमिएिणट्ं सिरि-भगवतगुणहरभडारश्रोवइट्टं

# क सा य पा हु डं

तस्म

सिरि -वरिसंगाइरियावरइया टीका

## जयधवला

नस्थ

हिदिविहत्ती ए॥म विदिश्री अन्थाहियारी

अंताइ-मज्भरिहया जाइ-जग-मरणणंतपोरहा। संसारत्या तमहं जेण च्छिण्णा जिणं वंदे।।

जिन्होंने ऋादि, मध्य ऋांर ऋन्तसे रहित तथा जाति, जरा ऋाँर मरण्यस्पी ऋनन्त पोरोसे व्याप्त संसाररूपी वेलको छेद दिया है उन जिनदेवको मैं (वीरसेन स्वामी) नमस्कार करना हूँ।

. विशेषार्थ—यहां संसारको वलकी उपमा दी है। बेलका आदि भी है, मध्य भी है और

### ॐ द्विदिविहत्ती दुविहा, मृलपयिडिदिविहत्ती चेव उत्तरपयिडि-द्विदिविहत्ती चेव ।

\$ १. दिदिविद्दत्ति ति अहियारो किमहमागओ १ पुन्वं पयिडिविहत्तीए जाणाविद्दअहावीसमोहकम्मसहावम्स सिम्सम्स तेसि चेत्र अहातीसमोहकम्माणं प्रवाहमरूवेण आदिविद्याज्ञयाणमेगेससम्यपद्धविसेसप्पणाए सादिसपज्जव-साणाणं जहण्णुकम्महिदीओ चोदस-मग्गण-हाणाणि अम्मिद्ण परूवणहं हिदिविहत्ती आगया । सा द्विहा मृत्रपयिडिहिदिविहत्तीउत्तरपयिडिहिदिविहत्तीभेदेण । तिविहा किण्ण होदि १ ण, मृलुत्तरपयिडिहिदिविदितिहत्तीए अण्णिस्स पयिडिहिदीए अभावादो । णोकम्मपयिडिस्व-रसादीणं हिदीणं हिदीओ अन्थि, ताओ एत्थ किण्ण उच्चेति १

अन्त भी है तथा उमकी पोरं भी स्वल्प होती हैं, पर यह संसार ऐसी वेल है जो सन्तान-क्रमसे अनादि कालसे चला आ रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा, अतः उसके आदि, मध्य और अन्तका निर्णय नहीं किया जा सकता है। तथा उसमें अनन्त जन्म, जरा और मरण होते रहते हैं। ऐसी संसाररूपी वेलको जिन जिनेन्द्रदेवने छेद दिया उन्हें मैं (वीरसेन म्यामी) नमम्कार करता हैं। यहां प्रश्न होता है कि जिसके आदि, मध्य और अन्तका पता नहीं उसका छंद केसे किया जा सकता है। समाधान यह है कि यदापि नाना जीवोंकी सन्तानकी अपेक्षा संसार आदि, मध्य और अन्तसे रहित है पिर भी कोई एक भव्य जीव उसका अन्त कर सकता है। इस प्रकार उक्त मंगल गाथामें वीरसेन स्वामीने देंानों प्रकारके संसारके स्वरूपका निर्देश कर दिया है।

ॐ म्थितिविभिक्ति टो प्रकारकी है─मृलप्रकृति स्थितिविभिक्ति और
उत्तरप्रकृति स्थितिविभिक्ति ।

श्वा—िस्थितिविभक्ति यह अधिकार किसलियं आया है ?

समाधान — पहले जिस शिष्यको प्रकृतिविभक्ति नामक श्रिधकारके द्वारा मोहनीयकी श्रष्टाईस प्रकृतियोके स्वभावका ज्ञान करा दिया है उसे प्रवाहकी अपेत्ता आदिरहित और प्रत्येक समयम वंधनेवाले एक एक समयप्रवहिवशेषकी अपेत्ता सादि तथा सान्त उन्हीं मोहनीयकी अद्वाईम कर्मप्रकृतियोंकी चोवह मार्गणाओं वे बाअयसे जधन्य और उत्कृष्ट स्थितिका कथन करनेके लिये यह स्थितिवभक्ति नामक अधिकार आया है।

बह स्थितिविभिक्ति मृलप्रकृतिस्थितिविभिक्ति और उत्तरप्रकृतिस्थितिविभिक्तिके भेदसे दो प्रकारकी है।

शंका-वह तीन प्रकारकी क्यों नहीं होती ?

समाधान — नहीं, क्योंकि: मृलप्रकृतिस्थितिविभिक्त और उत्तरप्रकृतिस्थितिविभिक्तको छोड़कर प्रकृतियोकी अन्य स्थिति नहीं पाई जाती हैं, अतः स्थितिविभिक्त तीन प्रकारकी नहीं होती।

शंका-नोकर्म प्रकृतियोके रूप और रसादिककी स्थितियाँ पाई जाती हैं, उनका यहाँ

### ण, कम्मपयडिहिदिपरूवणाए पंकताए णोकम्महिदिपरूवणाए असंभवादो ।

§ २. का मृलपयिडिटिटी णाम ? अहावीसपयडीणं पयिडिसमाणत्तणेण एयत्तमृत्रगयाणं हिदिविसेसा मृलपयिडिटिटी । कथं पुत्रभूदिटीणमेयत्तं ? सिरसत्तणेण
पयडीए । ण च पयिडिसिरिसत्तमिसद्धं, उप्पण्णमोहपयडीए पढमसम्यप्पहुिंड
अविणासादो मोहपयडीसरूवेणेव अवहाणुवलंभादो । मोहपयिडिटिटीए सामण्णाए
आदिविविज्ञियाए कथं परूवणा कीरदे ? ण, पवाहसरूवेण अणादिमोहपयिडिटिं
मोत्ण एगसमयिम् दुक्तमोहासेसपयडीणं मोहपयिडित्तणेण एयत्तमुवगयाणं हिदीए
परूवणा कीरिद त्ति दोसाभावादो । एवं संते मूलपयिडिटिंद त्ति कथं जुज्जदे ?
ण, सन्वेसि समयपबद्धाणं पयिडिसमूहस्स मूलपयिडित्तन्यभ्रवगमाभावादो । का पुण

कथन क्यों नहीं किया ?

समाधान — नहीं, क्योंकि कर्मप्रकृतियोंको स्थितिको प्ररूपणा करते समय नाकर्मकी स्थितिकी प्ररूपणा करना असंभव है, अतः यहाँ नोकर्मप्रकृतियोको स्थितियोका प्रहण नहीं किया है।

इंश्वंका — मृलप्रकृतिस्थिति किसे कहते हैं ?

समाधान—प्रकृति सामान्यकी अपेद्मा एकत्वको प्राप्त हुई अट्टाईस प्रकृतियोंकी जो स्थिति-विशेष है उसे मूलप्रकृतिस्थिति कहते हैं।

शंका — जब कि सब प्रकृतियों की स्थितियाँ अलग आलग है, तब उनमे एकत्व कैसे हां सकता है ?

समाधान — प्रकृतिसामान्यकी अपेद्या सभी प्रकृतियाँ एक हैं, अतः उनकी स्थितियोंमें एकत्व माननेमें कोई वाधा नहीं आती ।

यदि कहा जाय कि प्रकृतियोकी सहशता असिद्ध है सो भी बात नहीं है, क्योंकि मोहप्रकृतिक उत्पन्न होनेक पहले समयसे लेकर जब तक उसका बिनाश नहीं होता तब तक उसका मोह-प्रकृतिरूपसे ही अवस्थान पाया जाता है, इसलिये उनमें सहशता माननेमें कोई बाधा नहीं आती है।

शंका - माहकर्मकी सामान्य स्थिति ऋ।दिरहित ऋथीत् अनादि है, अतः उसकी प्ररू-पणा कैसे की जा सकती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रवाहरूपसे अनादिकालीन मोहकर्मकी स्थितिको छोड़कर एक समयम जो मोहनीय कर्मकी समस्त प्रकृतियां बन्धको प्राप्त होती है जो कि मोहप्रकृति सामान्य-की अपेचा एक हैं, उनकी स्थितिकी यहाँ प्रकृपणा की गई हैं, इसलिय कोई दोप नहीं है।

शंका - यदि ऐसा है तो मृलप्रऋतिस्थिति कैसे वन सकती है ?

समाधान — नहीं, क्योंकि संपूर्ण समयप्रवद्धोका जो प्रकृतिसमृह हैं उसे यहां मृलप्रकृति-रूपसे स्वीकार नहीं किया है।

शंका-तो फिर यहां मूलप्रकृति पदसे किसका प्रहण किया है ?

एत्थ मूलपयडी ? एगसमयम्मि वद्धासंसमोहकम्मक्खंधाणं पयडिसम्हो मूलपयडी णाम । तिस्से हिदी मूळपयडिहिदी । पुध पुध अहावीसमोहपयडीणं हिदीओ उत्तर-पयांडिहिटी णाम । एवं हिदिविहत्ती दविहा चेव होटि ।

् ३. उत्तरपयडिद्दिदिवहत्तीए पर्स्वदाए मुळपयडिद्दिदिवहत्ती णियमेणेव जाणिज्ञदि तेण उत्तरपयिडिटिदिविहसी चेत्र वसच्या ण मृत्यपयिडिटिदिविहसी, तत्थ फलाभावादो । ण, दब्बिहियपज्जविहयणयागुग्गहर्द्व तप्परूवणादो । एत्थतण वे वि 'च' सद्दा समुज्ञए दहच्या । एगेणेव 'च' सद्देण समुज्ञयहावगमादो विदिय 'च' सहो अणन्थओं चि णावणेदं सिक्जिदं । अप्पिदेगणयं पद्च परूवणाए कीरमाणाए मूळपयडिद्दिविहत्ती उत्तरपयडिद्दिविहत्ती च उत्तरपयडिद्दिविहत्ती मृत्रपर्याद्धिदिविहनी चेिंद एग'च'सद्दुचारणं मोन्ए विदिय ( च ) सद्दुचा-रणाए अभावेण पुणरुत्तदोसाभावादो । 'एव'सहो इदिसहन्थे दहन्त्रो; अवहार-णत्थस्य एत्थासंभवादो ।

समाधान-एक समयमे वंधे हुए संपूर्ण मोहनीय कर्मके स्कन्धोके प्रकृतिसमृहका यहां मृलप्रकृतिरूपसे यहण् किया है । उस मृलप्रकृतिकी स्थितिको मूलप्रकृतिस्थिति कहते हैं। तथा मोहनीयकी पृथक पृथक अट्टाईम प्रकृतियोकी स्थितियोको उत्तरप्रकृतिस्थिति कहते हैं। इस प्रकार स्थितिविभक्ति दो प्रकारकी ही होती है।

§ ३. <mark>शंका</mark>—उत्तर प्रकृतिस्थितिवभक्तिका वयन करनेपर मूलप्रकृतिस्थितिविभक्तिका नियमसे ज्ञान हो जाता है, अतः उत्तरप्रकृतिस्थितिवर्भक्तिमा ही कथन करना चाहिये, मुलप्रकृतिस्थितिविभक्तिका नहीं, क्योंकि मृलप्रकृतिस्थितिविभक्तिका कथन करनेमे कोई फल नहीं हैं ?

समाधान-नहीं, क्योकि द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनयका अर्थात द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयवाले शिष्योका अनुप्रह करनेके लिये दोमा स्थितियोका कथन किया है।

उपर्युक्त सुत्रमे अ।ये हुए दोनो ही 'च' शहद समुज्ञयरूप अर्थमे जानना चाहिये । एक ही 'च' शब्दसे समुज्यसप अर्थका ज्ञान हो जाता है, अतः दूसरा 'च' शब्द अनर्थक है इसलिये उसे निकाला नहीं जा सकता है क्यांकि अपित एक नयकी अपेद्या कथन करनेपर द्रव्यार्थिकनयकी ऋषेत्रा 'मृलपयडिहिदिविहत्ती उत्तरपयडिहिदिविहत्ती च' इस प्रकार और पर्यायार्थिकनयकी ऋषेत्रा े 'उत्तरपयिडिद्धिदिविहत्ती मृलपयिडिद्धिदिविहत्ती च' इस प्रकार प्राप्त होता है अतः एक 'च' शब्द के उच्चारएके सिवाय दूसरे 'च<sup>े</sup> शब्दका उचारए नहीं रहता, श्रातः पुनस्कत दोप नहीं प्राप्त होता है। सूत्रमं जो 'एव' शब्द आया है वह 'इति' शब्द अर्थमं जानना चाहिये, क्योंकि यहा उसका अवधारणरूप अर्थ नहीं हो सकता है।

विशोपार्थ-यहा स्थितिविभिक्तके दो भेद किये गये है-मूलप्रकृतिस्थितिविभिक्त और उत्तरप्रकृतिस्थितिविभक्ति । 'मृलप्रकृति' पदसे अवान्तर भेदांकी गणना न कर सामान्य माहनीय कर्मका प्रहण किया है और 'उत्तरप्रकृति' परसे मोहनीयके प्रत्येक भेदका पृथक पृथक क तत्थ त्रहपदं एगा हिदी हिदिविहत्ती, त्रणेगात्रो हिदीक्रो हिदिविहत्ती ।

§ 8. तत्थ दोण्हं पि हिद्विहत्तीणं पुरुवृत्ताणमेदमहपदं उचदे । तं जहा,
एगा हिदी हिद्विहत्ती । विहत्ती भेदो पुत्रभावो ित एयहो । हिदीए विहत्ती
हिद्विहत्ती जेणेवं हिद्विहत्तीसहो हिद्दिभेद्पस्त्रवजो, तेण मूळपयि हिदीए
विहत्तितं णित्थ, एिक्सिसे भेदाभावादो । भावे वा ण सा मृळपयि हिदी, एिक्सिसे
पयडीए हिदिवहृत्तिवरोहादो ित उत्ते एगा हिदी हिद्विहित्ति ित परिहारो
पर्विदो । कथभेिकस्से हिदीए णाणतं १ ण, एिक्सिसे वि हिदीए पदेसभेदेण पयि डिनेये च णाणत्त्वतंभादो । ण च पथि दिपदेसभेदो हिदिभेदस्स कारणं ण होदिः। भिण्णभेदेण च णाणत्त्वतंभादो । ण च पथि दिपदेसभेदो हिदिभेदस्स कारणं ण होदिः। भिण्ण-

प्रहल् किया है। यद्यपि प्रवाह् रूपसे मोहनीय कर्म अनादि है पर यहां प्रत्येक समयमे जो समयप्रवह प्राप्त होता है उसकी स्थिति ली गई है इसलिए स्थितिविभिक्तिकी अविधि वन जाती है। उसमें जा प्रत्येक भेदकी विवत्ता किये विता सामान्य रूपसे माहनायका स्थिति प्राप्त होती हैं वह मूलप्रकृतिन्थितिविभिक्ति है। यहां सामान्य क्योर विशेषक मेदकी जो स्थिति प्राप्त होती है वह उत्तरप्रकृति-स्थितिविभिक्ति है। यहां सामान्य क्योर विशेषक से मोहनायकी स्थितिका ही प्रहल् किया है इसलिए वह दो प्रकारकी वतलाई है। नोकर्मका प्रकरण न होनेसे वहां उसकी स्थितिक। प्रदल्ण नहीं किया है। सूत्रमं दो 'च' शब्द आये है सो व दोनो ही समुज्याथक जानने चाहिए। प्रथम 'च' शब्द द्वारा मुख्यक्षपेस मूलप्रकृति स्थितिवभिक्तिका और गोणक्षपेस उत्तरप्रकृतिस्थितिवभिक्तिका स्थोर्ग समुच्य होना है। तथा दूसरे 'च' शब्द द्वारा मुख्यक्षपेस मृत्यकृतिस्थितिवभिक्तका समुच्य होना है। तथा दूसरे 'च' शब्द द्वारा मुख्यक्षपेस मृत्यकृतिस्थितिवभिक्तका समुच्य होना है। शेष विवेचन स्पष्ट ही है।

ॐ अव उन दोनों स्थितिविभिक्तियोंके अर्थपदको कहते हैं—एक स्थिति स्थितिविभिक्ति है और अनेक स्थितियां स्थितिविभिक्ति हैं।

\$ १. अव पूर्वोक्त दोनों ही स्थितिविभिक्तयों के इस अर्थरहका खुलासा करते हैं। जो इस प्रकार है—एक स्थिति स्थितिविभिक्त है। विभिक्त, भेद और प्रथमाव ये तीनो एकार्थवाची शब्द है। और स्थितिकी विभिक्त स्थितिविभिक्त कही जाती है। यतः स्थितिविभिक्त अब्द स्थितिभेदका कथन करता है, और इसलिये मृलप्रकृतिकी स्थितिमे विभिक्तया नहीं वनती है, क्यों के एकमें भेद नहीं हो सकता। यदि एकमें भेद माना जाय तो वह मृलप्रकृतिस्थित नहीं उद्दर्ती, क्यों कि एक प्रकृतिकी अनेक स्थितिया माननेमें विरोध आता है इस प्रकार आन्नेप करने पर 'एगा हिंदी हिविबिहन्ती' इस प्रकार कहकर उस आन्नेपका परिहार किया है।

शंका - एक स्थितिमें नानात्व कैमे हो सकता है ?

समाधान —नर्टी, क्योंकि एक स्थितिमें भी प्रदेशभेद श्रीर प्रकृतिभेदकी अपेद्धा नानात्व पाया जाता है।

यदि कहा जाय कि प्रकृतिभेद स्त्रीर प्रदेशभेद स्थितिभेदका कारण नहीं हैं सो भी वात नहीं है, क्योंकि भिन्न भिन्न प्रकृति स्त्रीर प्रदेशोंमें पाई जानेवाली स्थितिका एक माननेमें विरोध

१ चेखेपं

पयि पदेसिटिदिहितीणमेयत्तिविरोहादो । ण च मूळपयि हििदीए पयि भेदो असिद्धो, सर्गतोळीणसयलुत्तरपयि भेदाए तिम्से तद्विरोहादो विविक्खियमोह० मृळपयि हि-दीए सेसणाणावरणादिम्ळपयि हििदीहितो भेटोववत्तीदो वा पयदत्थसमत्थणा कायव्वा ।

१ अथवा ण एन्थ मृलपयिडिहिदीण एयत्तमित्थ, जहण्णिहिद्प्पहुिंड जाव उक्कस्मिहिद् ति सन्वामि हिदीणं मृलपयिडिहिद् ति गहणादो । एवं घेप्पदि ति कथं णव्वदे ? उविर उक्कस्माणुक्कस्मजहण्णाजहण्णिहिदीणं सामित्तपरूवणादो मृलपय-डिहिद्हिणपरूवणादो च । तेण पयिडमरूवेण एगा हिदी सगिहिदीभेदं पड्च हिदि-विहत्ती होदि ति सिद्धं । जदि मृलपयडीए हिदिविहत्ती श्रात्थि तो उत्तरपयिडिहिदीणं णित्थ विहत्ती मृलुत्तरपयडीणं परोप्परिवरोहादो ति वृत्ते अणेगाओ हिदीओ हिद्विहत्ती इदि परिहारो वृत्तो । जदि एक्किस्से पयडीए हिदीणं सगिहिद्विसेसं पड्च भेदो होदि तो उत्तरपयिडिहिदीणं सगपरपयडीहिद्भेटं पड्च हिद्भेदो किण्ण जायदे विरोहादो ।

आता है। यदि कहा जाय कि मूजप्रकृतिस्थितिमें प्रकृतिभेद असिद्ध है, सो भी बात नहीं है,क्योंकि मृलप्रकृतिस्थितिके भावर सब उत्तर प्रकृतियोंके भेद गर्भित है, अतः उसमें प्रकृतिभेदके माननेमें कोई थिरोध नहीं आता । अथवा विविद्यत्तिन माहनीयकी मृलप्रकृतिस्थितिका शेव ज्ञानावरणादि मृलप्रकृतिस्थितियोंसे भेद पाया जाता है, इसलिये इस दृष्टिसे भी प्रकृत अर्थका समर्थन कर लेना चाहिये।

इ. प्रथवा प्रकृतमे मृलप्रकृतिस्थितिका एकत्व नहीं लिया है, क्योंकि जवन्य स्थितिसे लेकर उत्कृष्ट स्थिति तक सभी स्थितियोका 'मृलप्रकृतिस्थिति' पदके द्वारा घटण किया है इसलिये मलप्रकृतिके साथ विभिन्न शब्दका प्रयोग वन जाता है।

शंका-मृतप्रकृतिस्थितिवभिक्त पदके द्वारा जघन्य स्थितिसे लेकर उन्कृष्ट स्थिति तक सभी स्थितियोका प्रदेश किया है यह किस प्रमाणसे जाना जाना है ?

समाधान—त्रागे उत्कृष्ट, त्रानुन्कृष्ट, ज्ञानन्य त्रीर त्राज्ञचन्य स्वितियोके स्त्रामीका कथन किया है और मृत्रप्रकृतिकं स्थितिस्थानोका भी कथन किया है, इससे जाना जाता है कि यहां मृत्रप्रकृतिस्थितिविभित्ति पदके द्वारा जघन्य स्थितिसे लेकर उत्कृष्ट स्थिति तक सभी स्थितियोका प्रहण् किया है।

इसलिये प्रकृतिरूपसे एक स्थिति अपने स्थितिभेदोकी अपेत्ता स्थितिविभक्ति होती हैं यह सिद्ध होना है ।

यदि मृलप्रकृतिम स्थितिविभिक्त है तो उत्तर प्रकृतियोंकी स्थितियोमे भेद नहीं रह सकता है क्योंक मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतियोंमे परस्पर विरोध है इस प्रकारका आन्तप करने पर 'ऋणुंगाओं द्वितिओं द्वितिवहत्ती' इस प्रकार परिहार कहा है।

यदि एक प्रकृतिकी स्थितियोमे अपने स्थितिविशेषकी अपना भेद हो सकता है तो उत्तर प्रकृतियोंकी स्थितियोमें अपने स्थितिभेदकी अपना और अपनेसे भिन्न अन्य प्रकृतियोंकी

#### तत्थ ऋणियोगद्दाराणि ।

- ५ ६ तत्थ मूळपयिडिटिविहत्तीए अणियोगद्दाराणि वत्तव्वाणि अण्णद्दा परूव-णाणुववत्तीदो । किमणिओगद्दारं णाम ? अहियारो भण्णमाणत्थस्स अवगमोवाओ ।
- असम्बिवहत्ती णोसम्बिवहत्ती उद्यस्मिवहत्ती अणुकस्मिवहर्ता जहण्णविहत्ती अजहण्णविहत्ती सादियविहत्ती अणादियविहत्ती धुव-विहत्ती अद्युवविहत्ती एयजीवेण सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंग-

स्थितियों के भेदकी अपेचा स्थितिभेद क्यों नहीं हो सकता है अर्थान हो सकता है क्योंिक एक प्रकृतिमें अपने स्थितियोंिकों अपेचा भेद मानते हुए उत्तर प्रकृतियोंकी स्थितियों अपने स्थिति भेदकी अपेचा और अपनेसे भिन्न अन्य प्रकृतियोंकी स्थितियों के भेदकी अपेचा यदि स्थिति भेद न माना जाय तो विरोध आता है।

विशेषार्थ-प्रश्न यह है कि एक स्थितिकां स्थितिविभिक्त पदके द्वारा कैसे सम्बोधित कर सकते है, क्यों के जां स्थिति स्वस्पतः एक है उसमें भेदकी करपना नहीं की जा सकती है। इसका कई प्रकारसे समाधान किया है। प्रथम तो यह वतलाया है कि स्थिति एक हो कर भी उसमें प्रकृति खौर प्रदेशोंकी अपेचा भेद सम्भव है, इसिलए एक स्थितिकों भी स्थितिविभिक्त कहा है। किर भी यह समाधान स्थितिकी मुख्यतासे नहीं हुआ इसिलए खन्य प्रकारसे इस प्रश्नका समाधान किया गया है दिसमें बतलाया है कि कर्म खाठ है और उनमेंसे यहां माहनीयकी मृलप्रकृतिस्थिति विविच्चत है। यतः वह अन्य ज्ञानायरणादिकी मृलप्रकृतिस्थिति भिन्न है इसिलए यहां मृलप्रकृतिस्थितिके साथ विभिन्न पद जोड़ा गया है। इस प्रकार यह अंकाका उत्तर तो हो जाता है पर इससे एक स्थितिका स्वरूपगत भेद समभमें नहीं ख्राता। इमिलिए अपो इसे प्रकट करनेके लिए चोथे प्रकारसे समाधान किया गया है। इसमें बतलाया है कि जब मूलप्रकृतिस्थितिमे उत्कृष्ट ख्रादि भेद सम्भव है तब उसके साथ विभिन्न पर जोड़नेमें क्या वाधा है। इस प्रकार एक स्थिति स्थितिविभिन्न है ख्रोर ख्रनेक स्थिति स्थितिविभिन्न है यह सिद्ध होता है।

### 🏵 अत्र मूल्प्रकृतिस्थितिविभिक्तिके विषयमें अनुयोगद्वार कहते हैं।

१६. मूलप्रकृतिस्थितिविभक्तिके विषयमें अनुयोगद्वार कहना चाहिये, अन्यथा उसकी प्रकृषणा नहीं हो सकती है।

शंका-अनुयोगहार किसे कहते हैं ?

समाधान—कहं बानेवाले अर्थके जाननेके उपायभूत अधिकारको अनुयोगद्वार कहते हैं।

कहते हैं।

अया - सर्वेविभवित, नोसर्वेविभिवत, उन्क्रप्टविभिवत, अनुन्क्रप्टविभिवत, ज्ञान्यविभिवत, अज्ञान्यविभिवत, आज्ञान्यविभिवत, सादिविभिवत, अनादिविभिवत, भ्रुविभिवत, अश्रुविभिवत, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, और अन्तर तथा नाना जीवों

### विचन्नो परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो त्रंतरं सिण्णियासो त्रप्पाबहुत्रं च भुजगारो पदणिक्खेवो वट्टी च

६७. एट्राणि मृत्यपिडिहिटिविहत्तीए अणियोगहाराणि। एत्थ अंतिल्लो 'च'सदो उत्तसमुचयहो । अप्पावहुअअंते हिदो 'च नहो अवृत्तसमुचयहो । तेण एट्रेमु अणियोगहारेमु अवृत्तस्य अद्वाहेटाणिओगहारम्स भागाभागभावाणिओगहाराणं च गहणं कदं । एत्थ मृत्यपिडिहिटिविहर्त्ताए जिट वि सिण्णियासो ण संभवइ तो वि उत्तो; उत्तरपयडीमु तम्स संभवदंसणाटो । एत्थ मोत्तृण तत्थेव किण्ण वृच्चदे ? सच्चं, तत्थ चेव वृत्तो ण एत्थ । जिद्द एवं, तो किण्णावणिज्जदे ? ण, मृत्युत्तरपयिडिहिदिविह-त्तीणं साहारणभावेण प्रविदाणिओगहारेमु हिट्टर्गिण्यासम्स अवण्यगुत्रायाभावादो ।

#### 🛞 एदाणि चेव उत्तारपयिडिहिदिविहर्त्ताए कादव्वाणि ।

६ =. सुगममेटं; अण्णाहियाणभेटेसि तत्थ संभवाटो ? संपहि एटेसिमणियोग-हार्गेह मृत्यपाडिहिटिविटची वृचदे । तं जहा,अद्धाच्छेटो दुविहो—जहण्णओ उक्कम्सओ की अपेचा भंगविचय, परिमाण, चेत्र, म्पर्शन, काल, अन्तर, सन्निकर्ष और अल्पवहृत्व तथा भुजगार, पट्निचोप और वृद्धि ।

ें ७. ये मृत्यवृति स्थिति विभक्ति विषयमे अनुयोगद्वार होते हैं। इस स्त्रमें जो अन्तमें 'च' शदद अध्या है वह उक्त अर्थके समुरुचयके लिए आया है। तथा अन्यवहृत्य पदके अन्तमें जो 'च' शदद स्थित है वह अनुक्त अर्थके समुरुचयके लिए आया है, इसलिए इस 'च' शददके द्वारा इन उपर्युक्त अनुयोगद्वारों में अनुक्त अत्वान्द्वेद अनुयोगद्वार तथा भागाभाग और भाव अनुयोग द्वारोंका अदण विया गया है।

यद्यपि यहाँ मृजप्रकृतिरिथतिविसिक्ति सन्निक्यं अनुयोगद्वार सम्भव नहीं है तो भी वह यहाँ पर कहा गया है, क्योंकि उत्तर प्रकृतियोंने उसकी सम्भावना देखी जाती है।

श्रंका - मिन्न पं अनुयोगद्वारको यहाँ न कह कर वही उत्तर प्रकृतियो के प्रकरणमें क्यों नहीं कहा है ?

समाधान- यह ठीक है, क्योंकि मिन्निकर्प अनुयोगद्वारको वहीं उत्तर प्रकृतियोंके प्रकरणमें ही कहा है यहाँ मूल प्रकृतिके प्रकरणमें नहीं।

शंका यदि ऐसा है तो यहाँ से उसे वया नहीं अलग कर दिया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मृलप्रकृतिस्थितिविभक्ति और उत्तरप्रकृतिस्थितिविभक्ति इन दोनोंके विषयमे साधारण्कत्यमे ये अनुयोगद्वार कहे गये हैं, इसलिये इनमें स्थित सन्निकर्षको अलग करनेका कोई कारण नहीं है।

### 🕸 उत्तरप्रकृतिम्थितिविभिक्तिके विषयमें ये ही अनुयोगद्वार कहने चाहिये।

१ प. यह सूत्र मुगम है, क्योंकि न्यूनता और श्रधिकतासे रहित ये सभी श्रनुयोगद्वार उत्तर प्रकृतिस्थितिविभक्तिके विषयमे संभव है।

अब इन अनुयोगद्वारोंके द्वारा मृतप्रकृतिस्थितिविभिक्तका कथन करते हैं । यथा—जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे अद्धान्छेद दो प्रकारका है । च । बहुसु अणिओगहारेसु संतेसु अद्धाछेदो चेव पढमं किमट्ठं वुच्चदे ? ण, अद्धाछेदे अणवगए संते उविरमअहियारपरूविज्ञमाणत्थाणमवगमावगुवत्तीदो ।

\$ ६. उक्षम्से पयदं | दृविहो णिद्देसो-ओघेण आदेसेण य | तत्थ ओघेण मोहणीय उक्षम्साद्दिविहत्ती केत्तिया ? सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ पिंडवुण्णाओ | कुदो ? अकम्मसस्त्वेण दिदा कम्मइयव गणवस्तंथा मिच्छत्तादिपचएण मिच्छत्तकम्मस्त्रेण परिणदसम् चेव जीवेण सह वंधमागदा सत्त्वाससहम्सावाधं मोत्तृण सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीमु जहाक्षमेण णिसित्ता सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तकालं कम्मभावेणच्छय पुणो तेसिमकम्मभावेण गमणुवलंभादो | एवं सव्वणिरय-तिरिक्ख-पंचिदियितिरिक्खित्य-पंचिव्य-पेविव्य-पेविव्य-पेविव्य-पंचिव्य-पंचिव्य-पेविव्

शंका—बहुतसे अनुयागढ़ारोंके रहते हुए सबसे पहले अद्धाच्छेदका ही कथन क्यों किया ? समाधान—नहीं, क्योंकि अद्धाच्छेदके खज्ञात रहनेपर आगेके अधिकारोंके द्वारा कहे जानेवाले अर्थका ज्ञान नहीं हो सकता है। अतः सबसे पहले अद्धाच्छेदका कथन किया जा रहा है।

ई ६. उत्कृष्ट अद्धाच्छेदका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अंधिनिर्देश आरे आदेशनिर्देश । उनमेसे आपिनिर्देशकी अपेचा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिबिभक्ति कितनी है १ रिपृरी सत्तर कोडाकोडी सागर है ; क्योंकि जो कामण्यगेण।आके स्कन्ध अकर्मरूपसे स्थित हैं वे मिण्यात्व आदिके निमित्तसे मिण्यात्व कर्मरूपसे परिणत होनेके समयमे ही जीवके साथ बन्धको प्राप्त होकर सात हजार वपप्रमाण आवाधा कालसे कम सत्तर कोड़ाके इी सागरोके समयोमे यथाकमसे निषक्रभावको प्राप्त हो जोते हैं और सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर कालतक कर्मरूपसे रहकर पुनः वे अकर्म भावको प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार सभी नारवी, सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच, योनिमती निर्यंच, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्यणी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिक-काययोगी, वैकियिककाययोगी, तीनों बंदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मन्यज्ञानी, श्रुताञ्चानी, विभंगज्ञानी, असंयत, चचुदर्शनी, अचचुदर्शनो, कृष्ण आदि पाँच लेस्यावाले, भव्य, अभव्य, मिण्याहिष, संज्ञी और आहारिक जीवोंक ज्ञानना चाहिये।

विशेषार्थ-वेर्धकालमे मिण्यात्वकी उक्रष्ट स्थित सत्तरकोडाकोडी सागर प्रमाण प्राप्त होती है, अतः श्रोघसे मिण्यात्वकी स्थितिका उत्कृष्ट श्रद्धाच्छेद सत्तर कोड़ाकंड़ी सागर कहा है। श्रागे और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं वे सब संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अवस्थाके रहते हुए सम्भव हैं और उनके मिण्यात्व गुण्स्थानके सद्भावमें मिण्यात्वका यह उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सम्भव हैं इसीलिये इनके कथनको आघके समान कहा है। शुक्ललेश्यामें संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अवस्था और मिण्यात्व गुण्स्थान भी होता है परन्तु शुक्ललेश्यामे अन्तःकोटाकोटीसे अधिक

\$ १० पंचिद्यितिग्कियअपज्ञनः मोहः उकः सत्तरिसागरीव मकोडाकोडीओ अंतोमुहुनृणायो । एवं भणुमयापज्ञः वादरेईदिययपज्ञतः -सुहमेंईदियपज्जता-पज्जतः सञ्जविगिर्दिय-पंचि व्यपज्ञः वादरपुर्दाव व्यपज्ञः वादरयाउ व्यपज्ञः -वादरवणप्पदि व्यत्तेययपञ्जः वेत्र-वाद्य-सहुप-पज्जत्तापज्जत्त-सहुमवणप्पदि व्य पज्जत्तापज्जत्त-सञ्चिष्णगेट-त्ययपज्ञः -याभिणः सुद्व-योहिव-योहिदंसः -सुक्क-सम्मादिहि-वेदगः -सम्मासिन्द्यादिहि ति ।

४ ११ त्राणटाटि जात्र सब्बह ति मोह० उक्क० त्राद्धस्त्रेदो अंतोकोडाकोडीए । एवधाहार०-त्राहारमिस्स० त्रावगट्०-त्राकसा०-भणपज्ज०-संजट०-साभाइयच्छेदो०-

्स्थिति नहीं बंधती अतः उसको यहाँपर नहीं ब्रह्म किया है और इसी कारण आनतादि उपरिम विमानोको भी छोड़ दिसा है।

'१०. पंचेन्द्रिय निर्यंच लह प्रपर्शप्तकोंके मंहिनीय कर्मकी स्थितिका उत्हृष्ट काल अन्तर्मुहृतंकम सत्तर कं। डाक्षी प्रकार सनुष्य हापर्याप्त, वाहर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सृहम एकेन्द्रिय, सृहम एकेन्द्रिय प्रयाप्त, सृहम एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सृहम एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सृहम एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सृहम एकेन्द्रिय अपर्याप्त, स्राव्य अपर्याप्त, स्राव्य अपर्याप्त, कायिक अपर्याप्त, वाहर जलकालिक अपर्याप्त, वाहर विकलित्य प्रयाप्त, वाहर अग्निकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त अग्निकायिक, वाहर अग्निकायिक, वाहर अग्निकायिक अपर्याप्त, सृहम अग्निकायिक अपर्याप्त, स्राव्य अग्निकायिक अपर्याप्त, वाहर वायुकायिक, वाहर वायुकायिक, वाहर वायुकायिक, वाहर वायुकायिक, वाहर वायुकायिक, वाहर वायुकायिक, स्राव्य वायुकायिक, स्राव्य वायुकायिक, स्राप्त, स्राव्य वायुकायिक, स्राव्य वायुक्त, स्राव्य स

विशेषार्थ - जिस मनुष्य या नियंचने मत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिका बन्ध किया वह यदि सरकर पंचेन्द्रिय निर्यंच लब्ध्यपर्याप्रकोमे उत्पन्न होता है नो अन्तर्मु हुनैक पद्मान् ही उत्पन्न हो मन्तरा है इसके पहले नहीं, अतः पंचेन्द्रिय निर्यंच अपर्याप्रके मोहनीयकी स्थितिका उत्हृष्ट अद्धान्छेद अन्तर्मु हर्नकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर ही प्राप्त होता है अधिक नहीं। इसके सिवा और जितनी मागणाएँ गिनाई है उनमें भी मोहनीयका उत्हृष्ट अद्धान्छेद इसी प्रकार जानना चाहिए, वयोकि मोहनीयकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव अन्तर्मु हर्नके पहले उस उस मागजास्थानको नहीं प्राप्त होता है। सादि मिथ्याहिष्ट सात प्रकृतिको सत्तावाले जिसने मोहनीयका उत्कृष्ट वंध किया है वह स्थिति कांडक बात किये विना वेदक सम्यक्टर्य अन्तर्मुहर्न कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर पाया जाता है। इसी प्रकार मिश्र गुण्यस्थानमें भी जानना चाहिए।

ं११. त्यानत करपसे लेकर सर्वार्थ सिद्धि तकके देवोके मोहनीयकी स्थितिका उन्कृष्ट ऋद्धाच्छेद अन्तः कोड़ाकोड़ी सागर प्रमास् है। इसी प्रकार आहारककाययागी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकपायी, सनःपर्ययद्यानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार- परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद-खइय०-उवसम०-सासणसम्मादिहि चि ।

१२ एइंदिएसु मोह० उक्क० अद्भुच्छेदो० सत्तरिसागगेवभकोडाकोडीयो समयूणायो । एवं वाटरेइंहिय-वाट्रेइंहियपज्ज०-वाट्रपुढवि०-वाट्रपुढविपज्ज०-वाट्रयाउ०- वाट्ग्याउपज्ज०--वाट्रवणस्फटिपत्तेय०--वाट्रवणस्फटिपत्तेयपज्ज०--योरालियभिस्स०-वेउन्वियमिस्स०-कस्भइय०-य्यसिण्ण-य्यणाद्यारि ति ।

### एवमुकम्सञ्जो अद्भान्छेदो सवनो ।

विद्याद्भियत्, सूद्भसाम्परायिकसंघत्, विधार्ध्यातस्यत्, स्यतास्यतः, स्वायिकसम्यग्हाष्ट, उपशम-सम्यग्हष्टि त्र्योर सासादनसम्यग्हाष्टि जीवाके जानना चाहिए किर्माति कार्यास्थान

विशेषार्थ--नौ अनुदिश और पाच अनुत्तर, विमानों नो सकत संयमी सन्यन्दृष्टि ही पदा होता है। किन्तु आनतादि चार करणों में और नौ श्रैययक में मिण्यादृष्टि जीव भी उत्पन्न हो सकता है। पर एसा जीव द्रव्यक्तिंगी मुनि संयतासंयत ज्यवस्य होगा और एसी जीवक कर्मोकी स्थित अन्तः को इंकि इं सागरसे अधिक नहीं पाई जाती है। तथा आनतादिक में उत्पन्न होने के परचात भी टमके स्थितिसक्त्र में कम स्थितवाल कर्मका ही बन्द होना है, अनः व्यान्त्यादिक में मोहने स्थित उत्पृष्ट स्थितिका अद्धान्छेद अन्तः को इंग्लें सागर कहा है। इनके सिवा और जितनी मागणाएँ गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार मोहनीयकी उन्हृष्ट स्थितिका अद्धान्छेद अन्तः को इंग्लें सागर व्यद्धित कर लेना चाहिए। यद्याप इनमें कह ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनमें अन्तः को इंग्लें सागर प्रमाण स्थितिबन्ध नहीं होता पर प्राक्तन सन्त्यकी अपेद्वा वहा भी यह अद्धान्छेद उपलब्ध हो जाता है।

११२. एकेन्द्रियोमे माहनीयकी उन्क्षप्ट स्थितिका अद्धान्छेद एक समय कम सत्तर को इकिं। सागर है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, बादर एकी कायिक, बादर प्रथिवी कायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येककारीर, बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येककारीर पर्याप्त, औदारिक मिश्रकाययोगी, बैकियिकमिश्रकाययोगी, कामएकाययोगी, असंबी और अनाहारक जीवोक जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जा देव माहनीयकी सत्तर कांड़ाकोड़ी ग्रमाण उन्छष्ट स्थितका बन्ध करके आर दूसर समयम मरकर एकेन्द्रियादिकमे उत्पन्न होते हैं उन एकेन्द्रियादिकके मोहनीयकी न्थितिका उत्कृष्ट अद्धान्छद एक समय कम सत्तर कांड़ाकोड़ी सागर पाया जाता है । इसी प्रकार इस अपेत्तासे असीझयाके मोहनीयकी स्थितिका एक समय कम सत्तर कांड़ाकोड़ी प्रमाण प्रद्धान्छद कहना चाहिये । किन्तु ओदारिकमिश्रकाययोगियाम उन्कृष्ट अद्धान्छदेका कथन करते समय देव और नरक पर्यायसे तिथेचाम उत्कृत्र कराकर कहना चाहिये । वैक्रियकमिश्रकाययोगियाम उत्कृष्ट अद्धान्छदेका कथन करते समय मनुष्य और तिर्यच पर्यायसे नारिकयोगे उत्पन्न कराकर कहना चाहिये । कार्मणकाययोगी और अनाहारकामे उन्कृष्ट अद्धान्छदेका कथन करते समय चारो गतिक जीवोंकी अपेत्ता वहना चाहिये, क्योंकि जय विवित्ति गतिक जीव भवके अन्तम मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितवन्य करके और मरकर औदारिकमिश्रकाययोगी आदि होते हैं तव उनके मोहनीयकी स्थितिका उत्कृष्ट अद्धान्छदे एक समय कम सत्तर कांड्राकोड़ी सागर देखा जाता है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अद्धाच्छेद समाप्त हुआ।

- § १३ जहण्णश्रद्धाहेदाणुगभेण दृविहो णिद्देसो श्रोघेण श्रादेसेण य । तन्थ श्रोघेण मोह० जहण्णिया श्रद्धा केत्तिया ? एगा हिदी एगसमझ्या । एवं मणुसतिय-पंचिदिय०-पंचि ०पज्ञ०-तम-तमपज्ज०-पंचमण०--पंचविच०--कायजोगि--श्रोगालि०-श्रवगट०-लोभक०-श्राभिणि०-सुद०-श्रोहि०-मणपज्ज०-सुहुममांपरा०-संजद-चक्खु०-श्रवक्खु०-श्रोहिद्स०-सुक्क०-भविसिद्ध०-सम्मादि०-खइय०-सण्णि०-श्राहारि ति ।
- १४ ब्रादेमेण ऐरइएमु मोह० सागरोवमसहस्सम्स सत्तसनभागा पिलदौ-वभम्स संखेर्ज्जादभागेण ऊणया । एवं पढमाए पुढवीए पंचिद्यितिरिक्ख०-पंचि०-तिरि०पज्ज०-पंचि०तिरि०जोणिणी-पंचि०तिरि०ब्रपज्ज-मणुसब्रपज्ज० [देव-] भवण०-वाण०-पंचिद्यित्रप्रज्ञ० वत्तव्वं ।
  - ६१५. विद्यादि जाव सत्तमि <del>ति</del> मोह० अंतोकोडाकोडीए । एवं

\$१३. जयन्य अद्वाच्छेदानुगमकी अपेचा निरंश दो प्रकारका है-आंघनिरंश आंर आदेश-निरंश। उनमेसे ओघनिर्देशकी अपेचा मोहनीयका जघन्यकाल किनना है १ एक समयवाली एक स्थितिप्रमाण जघन्यकाल है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्यनी, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रम पर्याप्त, पाचो मनोयोगी, पाचो वचनयोगी, काययोगी, आंदारिक काययोगी, अरगतवेदी, लोभकपायी, आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुवज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी सूदम-मोपरायिक संयत, संयत, चचुदर्शनी, अचचुदर्शनी, अवधिदर्शनी, ग्रुवललेश्यावाले, भव्य, सम्य-ग्रुष्टि, चायिकसम्यग्रुष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोक जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जो जीव चपवश्रेणीपर आरोहणकर सूरमसांपरायके अन्तिम समयमें स्थित रहता है उसके मोहनीयका एक समयवाला एक स्थितिप्रमाण श्रद्धान्छेद उपलब्ध होता है यहां अन्य जितनी मार्गणीए गिनाई है उनमें चपकश्रेणीकी प्राप्ति सम्भव है इमिलिये इनमें मोहनीयका श्रद्धान्छेद उक्त प्रमाण कहा है।

११४. आदेशनिर्देशकी अपेक्षा नारिकयोमे मोहर्नायकी जवन्य स्थिति हजार सागरके सात भागामे से पर्न्यापमके संख्तातर्वे भाग कम सात भागप्रमाण होती है। इसी प्रकार पहली प्रश्वीक जीवोक तथा पंचिन्द्रिय तियंच, पंचेन्द्रिय तियंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तियंच योनिमती, पंचेन्द्रिय तियंच लब्ध्यपयाप्त, मनुष्य लब्ध्यपयात, देव, भवनवासी व्यन्तर और पंचेन्द्रिय लब्ध्यपयाप्त जीवोके जानना चाहिये।

विशेषार्थ असंज्ञी पंचेन्द्रियके मोहनीयका उर्ह्य स्थितिबन्ध पत्यके संख्यातवें भाग कम हजार सागर प्रमाण होता है और यह जीव सामान्यसे नारिकयोंमें, प्रथम प्रथ्नीके नारिकयोंमें, देवोमें, भवनवासी और व्यन्तर देवोमे तथा मनुष्य अपर्याप्रकोंमे मरकर उत्पन्त हो सकता है इसलिए तो इन मार्गणाओं में मोहनीयका जवन्य अब्रान्छेद उक्त प्रमाण कहा है। मात्र ऐसे अमंज्ञी जीवको इनमें उत्पन्न करानेके पहले प्राक्तन सन्व इससे अधिक नहीं रखना चाहिए। तथा पंचेन्द्रिय तिर्थे आदि चार अवस्थावाला असंज्ञी पंचेन्द्रिय भी होता है इसलिए इनमें भी मोहनीयका जवन्य अब्रान्छेद उक्त प्रमाण कहा है।

ं १५. दूसरी पृथ्वीसे लेकर सानवी पृथिवी तकके नारिकयों के मोहनीयकी जघन्य स्थिति

जोदिसियादि जाव सव्वद्दः वेउव्वियः ४-वेउव्वियमिस्स०-त्राहार०-त्राहारमिस्स०-त्र्यकसाय०-विहंग०--परिहार०-जहाक्खाद०--संजदासंजद- तेउ०--पम्म०-वेदय०-उव-सम०-सासण०-सम्मामि० वक्तव्वं।

§ १६. तिरिक्तव भोह जह सागरोवम सत्तसत्तभागा पिलदोवमस्स असंग्वेज्जिदिभागेण ऊणया । एवं सव्वएइंदिय-पंचकाय ०-श्रोरालियिमस्स ०-कम्भइय ०-मिद्-सुद्व्रणणाण ०-श्रसंजद्-तिण्णिले ०-श्रभव ०-मिच्छा ०-श्रसण्ण ०-श्रणाहारि ति । सव्विविगलिदिय ० मोह ० जह ० सागरोवभपणुवीसाए सागरोवभपण्णासाए सागरोवम-सद्स्स सत्त सत्तभागा पिलदोवमस्स संखेज्जिदिभागेण ऊणया । तसश्रपज्ज ० वेइंदियश्रपज्जत्तभंगो ।

§ १७. वेदाणुवादेण इत्थि०-णवुंस० मोह० संखेजाणि वस्समहम्साणि ।

अन्तः भोड़ाकोड़ी सागर होती है। इसी प्रकार उद्योतियां देवांसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देव, वैकि-यिककाययांगी,वैकियिकसिश्रकाययोगी,आहारककाययोगी आहारकिमश्र काययोगी अकपायी,विभंग-ज्ञानी,परिहारविशुद्धिसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले,वेदकसम्य-ग्टप्टि, उपश्मसम्यग्टप्टि, सासादनसम्यग्टप्टि श्रोर सम्यग्मिण्याटप्टि जीवोके कहना चाहिए।

विशेषार्थ-यहाँ जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें स्थितिवस्थ और प्राक्तन सत्त्व श्रन्तः कोंड़ाकोड़ी सागर प्रमाण भी सम्भव होनेसे इनमें मोहनीयका जघन्य श्रद्धाच्छेद उक्त प्रमाण कहा है।

े१६. तिर्येक्चोके मोहनीयकी जघन्य स्थिति एक सागरके सात भागोंमसे पत्यापमके असंख्यात्र्यें भाग कम सात भागप्रमाण है। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, पाँचों स्थावरकाय, अोदारिकिमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, कृष्ण आदि तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिश्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके कहना चाहिए। सभी विकलिन्द्रिय जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थिति कमसे पर्चीस, पचास और सी सागरके सात भागोमें से पत्यापमके संख्यातवें भाग कम सात भाग प्रमाण है। त्रस लब्ज्यपर्याप्तकोंके द्वीन्द्रिय लब्ज्यपर्याप्तकोंके समान जघन्य स्थित जाननी चाहिए।

विशेषार्थ—एकेन्द्रियोंमे मोहनीयका जवन्य स्थितिसत्त्व पत्यका असंख्यातवां भाग कम एक सागर प्रमाण प्राप्त होता है और एकेन्द्रिय तियंख्य ही होते हैं, इसलिए इनमें मोहनीयका जघन्य अद्धाच्छेद उक्त प्रमाण कहा है। यहाँ अन्य एकेन्द्रिय आदि जितनी मार्गणए गिनाई है उन मार्गणावाले जीव भी एकेन्द्रिय हो सबते हैं इसलिए उनका कथन उक्त प्रमाण कहा है। इसी प्रकार द्वीन्द्रिय आदिकके जघन्य स्थितिसत्त्वको ध्यानमें रखकर उनमें मोहनीयका जघन्य अद्धाच्छेद पत्यका संख्यातवाँ भाग कम कमसे पचीस, पचाम और सो सागर कहा है।

१९७. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदी और नपुंसकवेदी जीवोंके मोहनीय कर्मकी ज्ञान्य स्थिति संख्यात हजार वर्ष है। पुरुषवेदी जीवोंके मोहनीयकी ज्ञान्य स्थिति संख्यात

पुरिस० मोह० जह० संग्वेजाणि | कोह-माण-माय० मोह० जह० चत्तारि-वे-एकवस्साणि पडिवुण्णाणि | सामार्य-छेदो० मोह० जह० अंतोम्र० |

### एवमद्धान्नेदो समनो।

- ६ १८. सञ्चिवहत्ती-णोसञ्जविहत्तीत्रणुगमेण दुविहो णिहिसो--ग्रोघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण सञ्जाञ्चो हिदीश्चो सञ्जविहत्ती, तद्णं णोसञ्जविहत्ती । एवं जाणिदण णेदञ्जं जाव श्रणाहारि नि ।
- १९. उकस्स-अणुकम्स० दुविहो णिर सो ओघेण आदसेण य । तत्थ ओघेण सच्चुकस्सिया हिदी उकम्सविहत्ती । तदृणा अणुकम्सविहत्ती । एवं णेदव्वं जाव अणाहारए ति ।
- ६२० जहण्णाजहण्ण ० दुविहो णिदेसो--श्रोघेण श्रादेसेरा य । तत्थ श्रोघेरा सन्दजहण्णहिदी जहण्णहिदिविहत्ती । तदुविर्धाश्रो श्रजहण्णहिदिविहत्ती । एवं णेदन्वं जाव श्रणाहारए ति । सन्दिदीए श्रद्धान्देदिम भणिटउक्कस्सिहिदीए च को

वपे हैं। तथा त्रोधी, मानी और माया कपायवाले जीवोंक मोहनीयकी जवन्य स्थिति क्रमसे परिपूर्ण् चार, दो श्रीर एक वर्ष हैं। सामायिक संयत श्रीर छेदोपस्थापना संयत जीवोके मोहनीय कर्मकी जवन्य स्थिति श्रन्तमुं हुन हैं।

विशेषाधी—उक्त तीन वेदवाले और क्रांधादि तीन क्रपायवाले जीवोके मोहनीयकी यह स्थिति चपकश्रेणिमे अपने अपने उदयके अन्तिम समयमे प्राप्त होती है, इमलिए इन मार्गणाओं-में मोहनीयका जवन्य अद्धान्छेद उक्त प्रमाण कहा है।

#### इस प्रकार अद्धाच्छेद समाप्त हुआ ।

<sup>६</sup>र⊏. सर्वविभक्ति खोर नोसवविभक्ति अनुगमकी अपेचा निर्देश हो प्रकारका है— ख्रांबिनदेंश खोर आदेशनिर्देश । उनमेंसे खोबिनदेंशकी खपेचा सर्व स्थितियाँ सर्वविभिक्त हे और उससे न्यून नोसर्वविभिक्ति है । इसी प्रकार खनाहारक मार्गणतक जानकर कथन करना चाहिये।

ैं१६. उन्हृष्ट्रविभक्ति और अनुन्कृष्ट्रविभक्ति अनुगमकी अपेद्या निर्देश दो प्रकार है— अग्रेष्यनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेसे आधिनिर्देशकी अपेद्या सबसे उन्हृष्ट स्थिति उन्हृष्ट्रविभक्ति है और उससे न्यून स्थिति अनुन्कृष्ट्रविभक्ति है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणानक कथन करना चाहिए।

\$२०. जघन्यविभक्ति श्रोर श्रजवन्यविभक्ति श्रनुगमकी अपेद्धा निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघनिर्देश श्रोर श्रादेशनिर्देश। उनमेसे ओघनिर्देशकी श्रपेद्धा सबसे जवन्य स्थिति जघन्यस्थिति विभक्ति है श्रोर उससे ऊपरकी सब स्थितियाँ श्रजधन्य स्थितिविभक्ति है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गण तक ले जाना चाहिए।

शंका\_सर्विस्थिति श्रीर अद्धान्छेदमे कही गई उत्कृष्ट स्थितिमे क्या भेद है ?

भेदो ? वृचदे--चिरमणिसेयस्स जो कालो सा उक्कस्सन्रद्धान्नेदिम भणिदउक्करसिद्धती णाम । तत्थतणसन्वणिसेयाणं समृहो सन्विद्धिती णाम । तेण दोण्हमित्थ भेदो । उक्कस्मित्रहत्तीए उक्कम्सन्रद्धान्नेद्धस्स च को भेदो ? वृचदे--चिरमिणिसेयस्स कालो उक्कम्सन्रद्धान्नेद्धो णाम । उक्कम्मिद्धितिवहत्ती पुण सन्विण्यसेयाणं सन्विण्यसेयपदेसाणं वा कालो । तेण एदेसि पि न्नत्थि भेदो । एवं संते सन्वृक्कस्सिवहत्तीणं णित्थ भेदो चि णासंकिष्ण उन्नं । ताणं पि णयिवसेसवसेण कथींच भेदवलभादो । तं जहा--समृद्धायपहाणा उक्कस्सिवहत्ती । त्रवयवपदाणा सन्विवहत्ति ति ।

२१ सादि०४ दुविहो णिट्देसो--श्रीघेण श्रादेसेणय। तन्थ श्रीघेण मीह० उक्क० श्रणुक्क० जह० कि सादि०४ ? सादि० श्रद्धुव० । श्रजह० कि सादि०४ ?

समाधान — अन्तिम निपंकका जो काल है वह उत्कृष्ट ऋद्वाच्छेदमे कही गई उत्कृष्ट स्थिति है। तथा वहाँ पर रहनेवाले सम्पूर्ण निपंकोंका जो ममृह है वह सर्वस्थिति है, इसलिए इन दोनोंमें भेद है।

शंका - उत्कृष्ट विभक्ति और उत्कृष्ट श्रद्धाच्छेदमे क्या भेद हैं ?

स्माधान—अन्तिम निषंकके कालको उत्कृष्ट अद्धान्छेद कहते हैं और समस्त निषंकों के या समस्त निषंकों के प्रदेशोंके कालको उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति कहते हैं, इसिलए इन दोनोंमें भी भेद हैं। एसा होते हुए सर्वविभक्ति और उत्कृष्टविभक्ति इन दोनोंमें भेद नहीं है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि नय विशेषकी अपेचा उन दोनोंमें भी कथंचित भेद पाया जाता है। वह इस प्रकार है—उत्कृष्ट विभक्ति समुदायप्रधान होती है और सर्वविभक्ति अवयवप्रधान होती है।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट अद्धान्छेद, सर्वस्थितिविभक्ति और उत्कृष्टिस्थितिविभक्ति ये शब्द प्रयोगमे आते हैं, इतना ही नहीं; इन नामवाले स्वतन्त्र अधिकार भी हैं, इसलिए इनमें क्या भेद हैं यही यहां वतलाया गया है। खुलासा इस प्रकार है-- मान लो किसी जीवने मिण्यात्वका सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिवन्ध किया। एसी अवस्थामें मत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके अत्तिम समयमें स्थित जो निपंत्र हैं उसका उत्कृष्ट अद्धान्छेद सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण हुआ, क्योंकि इतने काल तक इसके सत्तामें रहनेकी योग्यता है। यह तो उत्कृष्ट अद्धान्छेदका उदाहरण है। तथा इस उत्कृष्ट स्थितिवन्धके होने पर जो प्रथम निपंत्रसे लेकर अतिम निपंत्र तक निपंत्र रचना होती हैं वह सूर्वस्थितिवभित्तन है, क्योंकि यहां मर्व पद द्वारा सब निपंत्र लिए गए हैं। आब रही उत्कृष्ट स्थितिविभित्तन सो इसमें उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होने पर प्रथम निपंत्रसे लेकर अत्तिम निपंत्र तककी सब स्थितियोका ब्रह्मण किया है। यहां सत्ताका प्रकरण होनेसे सत्ताकी अपेचा इस अन्तरको घटित कर लेना चाहिए। इतना विशेष जानना चाहिए कि यह सब जहां ओष उत्कृष्ट सम्भव हो वहां ओष उत्कृष्ट कहना चाहिए और जहां औष उत्कृष्ट सम्भव न हो वहां आवे उत्कृष्ट प्राप्त कर लेना चाहिए।

<sup>६</sup>२१ सादि, अनादि, ध्रव और अधुव अनुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—ओघ-निर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे आघकी अपेता मोहनीयकी उन्द्रप्टविभक्ति, अनुन्ह्रप्टविभक्ति अर्णादिय० धुवा वा अद्भुवा वा । एवमचक्खु०-भवसिद्धि० । एविरि भवसि० धुवं एात्थि । सेसासु मन्गणामु उक्क० अणुक्क० जह० अजह० सादि-अद्धुवाओ ।

### एवं सादि-श्रद्धुवाणुगमी समत्तो ।

§ २२. सामिनं दुविधं-जहण्णं उक्कस्सं च । तत्थ उक्कस्से पयदं । दुविही णिद्देसी-श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ श्रोघेण उक्कस्सिहिदी कस्स ? श्रण्णदरस्स, जो चउद्दाणियजवमज्भस्म उविर अंतोकोडाकोडि वंधंतो श्रच्छिटो उक्कस्ससंकिलेसं गदो । तदो उक्कस्सिहिदी पबद्धा तस्स उक्कस्सयं होदि ।

#### एवमीघपरुवणा गदा।

स्रोर जघन्यविभिन्त क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या श्रुव है या क्या स्रश्नुव है ? सादि स्रोर स्रश्नुव है। अजघन्य विभिन्त क्या सादि है, क्या स्रनादि है, क्या श्रुव है या क्या स्रश्नुव है ? स्रनादि श्रुव स्रोर स्रद्धुव है। इसी प्रकार स्रचनुदर्शनी स्रोर भव्य जीवोके जानना चाहिय। इननी विशेषता है कि भन्यजीवोंक श्रृव यह विकल्प नहीं है। शेप मार्गणास्रोमे उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य स्रोर स्रजघन्य ये चारों सादि स्रोर स्रश्नुव है।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिवभक्ति कादाचित्क है और जघन्य म्थितिविभक्ति चपवश्रीण के मूद्रमसाम्पराय गुण्स्थानके अनिम समयमें होती है इसलिए ये तीनों सादि और अधुव कही हैं। किन्तु अजघन्य स्थितिविभिक्तका विचार इससे कुछ भिन्न है। बात यह है कि जघन्य स्थितिविभिक्तके प्राप्त होनेके पूर्व तक अनादि कालसे अजघन्य स्थितिविभिक्त होती है इसलिए तो वह अनादि कही है और भव्योकी अपेचा अधुव तथा अभव्योंकी अपेचा भ्रुव कही है। इसमें सादि विकल्प सम्भव नहीं है, क्योंकि एक वार इसका अन्त होने पर पुनः इसकी उत्पत्ति नहीं होती। अचचुद्द्रीन और भव्य ये दो मार्गणाएं क्रमसे चीणमाह गुण्स्थानके अन्त तक और अयोगिकवली गुण्स्थान तक निरन्तर बनी रहती हैं इसलिए इनमें आघ्यरूपणा अविकल घटित होनेके कारण वह उक्त प्रकार कही है। मात्र भव्य मार्गणामें अजवन्य स्थितिविभिक्तिका भ्रुवपना सम्भव न होनेसे उसका निपंप किया है। जेप मार्गणामें अजवन्य स्थितिविभिक्तिका भ्रुवपना सम्भव न होनेसे उसका निपंप किया है। जेप मार्गणाणें कादाचित्क हैं इसलिए उनमें चारों स्थितिविभिक्तियोंके सादि और अधुव ये दो विकल्प कहे हैं। केवल अभव्य मार्गणा रह जाती है क्योंकि यह कादाचित्क नहीं है पर इसमें ओपके अनुसार जयन्य और अज्ञयन्य स्थितिविभिक्त सम्भव नहीं है इसलिए इसमें भी चारों स्थितिविभिक्तियां सादि और अधुव कही है।

### इस प्रकार सादि-अध्रुवानुगम समाप्त हुआ।

ेंदर, स्वामित्व दा प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेसे पहले उत्कृष्ट स्वामित्वका प्रकरण हैं । उसकी अपेका निर्देश दो प्रकारका हैं—अघिनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेसे आधिनिर्देशकी अपेका उत्कृष्ट स्थिति किसके होती हैं ? जो चतुःस्थानीय यवमध्यके उत्पर अन्तः कोडाकोड़ीप्रमाण स्थितिको वांधता हुआ स्थित है और अनन्तर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर जिसने उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है ऐसे किसी भी जीवके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थित होती है ।

इस प्रकार श्रोधप्ररूपणा समाप्त हुई।

- ६२३. एवं सत्तपुढ्विणेरइय-तिरिक्ख-पंचिद्वियतिरिक्खितय-मणुसितय-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिद्विय०-पंचि०पज्ञ०-तस-तसपज्ञ०-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-ओराल्डि०--वेडिव्वय०-तिष्णिवेद-चत्तारिकसाय-मिद्सुद्अण्णाण-विहंग०-अमंजद०-अचक्खु०-चक्खुटं०-पंचले०-भविमिद्धि -अभविसिद्धि०-मिच्छादि०-सिण्णि०-आहारि ति ।
- ्२४. पंचिद्यितिरिक्खअपज्ज० मोह० उक्क० कस्स ? अण्णद्रस्स सिण्णि-पंचि०तिरिक्खो वा भग्रुम्सो वा उक्कम्सिट्टिं वैधिय पंडिभगो होद्ण द्विदिघादमका-इ.ण पंचिद्यितिरिक्खअपज्जत्तण्मु उववण्णो तम्स पदमसमयउववण्णल्लयस्स उक्कम्सिया द्विदी । एवं मग्रुम्सअपज्ज०-वाद्ग्रेइंदियञ्चपज्ज०-मृहुमेईंदियपज्जत्तापज्जत्त-सव्विविगलिदिय-पंचिद्यअपज्ज०-वाद्ग्रुद्धवीअपज्ज०-वाद्ग्आउ०अपज्ज०-वाद्र्यण-प्पदिञ्चपज्ज०-मृहुम्पुद्धविपज्जतापज्जत्त-मृहुम्आउ०पज्जतापज्जत्त-सुहुम्बणप्पदिपज्ज त्वापज्जत्त-सव्विणगोद्०-सव्ववाउ०-सव्वतेउ०-तमअपज्जते त्ति ।
- १२५. आणटादि जात्र उत्रिक्षिगेत्रज्ञ० उक्क० कम्म ? जो द्व्यिलिंगी उक्कस्स-दिद्सितकिमाओ पढमसम्यउत्रत्वणो तम्म । असुदिसादि जात्र सन्बद्दे ति मोह०
- े २३. इसी प्रकार अर्थान् आघप्रक्षण्यकं समान सातो पृथिवियोके नारकी, सामान्य निर्यच, पंचेन्द्रिय तिर्यच, पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्त, योक्तिमत्ता तिर्यच, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्य, पंचेन्द्रिय, मनुष्यनी ,सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्वार स्वर्ग तकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाचो मनोपोगी, पाचो वचनयोगी, काययोगी, अोदारिककाय-योगी, वैकियिककाययोगी,तीनो प्रकारके वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुनाज्ञानी, विभद्गज्ञानी, असंयत, अचनुद्र्शनी, चनुद्र्शनी, कृष्ण आदि पांच लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, सिण्यादृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोक जानना चाहिए।
- ैरश. पंचेन्द्रिय तिर्यच लट्यपर्याप्तकोंम मोहनीयकी उद्घष्ट स्थिति किसके होती है ? दे जो संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यच्च या मनुष्य उच्छुष्ट स्थितिका बंध करके और यहांसे च्युत होकर स्थितिका बात न करके पंचेन्द्रिय तिर्यच्च लट्यपर्याप्तकोंम उत्पन्न हुआ है, उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमें मोहनीयकी उद्घष्ट स्थिति होती है। इसी प्रकार लट्यपर्याप्तक मनुष्य, बादर एकेन्द्रिय लट्यपर्याप्त, सूदम एकेन्द्रिय तथा उसके पर्याप्त और अपर्याप्त, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय लट्यपर्याप्त, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सूदम पृथिवीकायिक नथा उसके पर्याप्त और अपर्याप्त, सूदम जलकायिक व उसके पर्याप्त और अपर्याप्त, सूदम जनस्पतिकायिक और उसके पर्याप्त और अपर्याप्त, सभी तिगोद, सभी बायुकायिक, सभी अग्निकायिक और त्रस लट्यपर्याप्त जीबोंक जानना चाहिय।
- ै २५. आनत स्वर्गमे लंकर उपरिम प्रैवेयक तकके देवोमे उन्कृष्ट स्थिति किसके होती हैं ? जिसके मोहनीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिकी सत्ता है ऐसा जो द्रव्यलिंगी जीव आनतादि स्वर्गीमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती हैं । अनुदिशसे

उक्क० कस्स० १ अण्णद्र•स्स जो वेद्यसम्माइही तप्पाओग्गुकस्सहिद्संतकिम्मओ पढमसमए उववण्णो तस्स ।

१२७. ओरालियमिस्स० मोह० उक्क० कस्स १ अण्णद० देवो णेरइओ वा उक्कस्सिटिवंधमाणो पदो तिरिविषेमु उववण्णो पदमसमयओरालियभिस्सो जादो तस्स उक्कस्सिया हिर्द्। । वेजिव्यिमस्स० भोह० उक्क० कस्स १ अण्णद० तिरिक्खो मणुस्सो वा उक्कस्सिटिदं वंधमाणो मदो णेरइएमु उववण्णो पदमसमए वेजिव्यिमस्सो जादो तस्स उक्कस्सिया हिट्छी । आहार० मोह० उक्क० कस्स १ अण्णद० वेद्यसम्मा-दिही तथ्याओग्गुकस्सिटिदिसंतकिम्मओ पद्धमसभए आहारखो जादो तस्स उक्कस्सिया हिदी । ब्राहारिमस्स० मोह० उक्क० कस्स १ वेदग० उक्क० पद्धमसमयजादस्स । कम्मइय० उक्क० कस्स १ अण्णद० चउगद्यो उक्कस्सिटिदं वंधिद्ण मदो तिरिक्सेमु

लेकर सर्वार्थिसिट नकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति किसके होती है ? मोहनीयकी तत्प्रा-योग्य उत्कृष्ट स्थितिकी सत्तायाचा जो वेदकसम्बग्दिष्ट जीव अनुदिश आदिमे उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है।

ेर्६. एकेन्द्रिय और बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोमें मोहनीयकी उन्छ्ष्ट स्थिति किसके होती हैं ? जो देव मोहनीयकी उन्छ्ष्ट स्थितिकों वाधकर मरा और उक्त जीवोमें उन्पन्न हुआ उसके एकेन्द्रिय और बादर एकेन्द्रियमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें मोहनीयकी उन्छ्ष्ट स्थिति होती हैं। इसी प्रकार पथित्रीकारिक, जलकायिक, बनस्पितकायिक, बादर प्रथिवीकारिक, वादर प्रथिवीकायिक और बादर वनस्पितकायिक पर्याप्त, बादर उनस्पितकायिक और बादर बनस्पितकायिक पर्याप्त, बादर अनस्पितकायिक और बादर बनस्पितकायिक पर्याप्त जीवोके जानना चाहिये।

१ ५७. श्रीटारिकमिश्रकाययोगी जीवोमें मोहनीयकर्मकी उन्छए स्थित किसके होती हैं ?

(को कोई एक देव या नारफी जीव मोहनीयकर्मकी उन्छण्ट स्थित वांधकर मरा श्रीर तियंचोमें उत्पन्न होकर पहले सभयमें श्रीटारिकमिश्रकाययोगी हो गया उसके मोहनीयकी उन्छण्ट स्थित होती हैं ? चैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोमें मोहनीयकी उन्छण्ट किसके होती हैं ? जो कोई एक मनुष्य या तियंच मोहनीयकी उन्छण्ट स्थित बांध कर मरा श्रीर नारिकयोंमें उन्पन्न होनेके पहले समयमें चैकियिकमिश्रकाययोगी होगया उसके मोहनीयकी उन्छण्ट स्थित होती हैं । श्राहारकाययोगी जीवोमें मोहनीयकी उन्छण्ट स्थित किसके होती हैं ? जिसके तन्त्रायोग्य मोहनीयकी उन्छण्ट स्थित विद्यमान हैं ऐसा कोई एक वेदकसम्यन्दिए जीव श्राहारकिययोगी जीवोमें मोहनीयकी उन्छण्ट स्थिति किसके होती हैं ? मोहनीयकी उन्छण्ट स्थिति

णेरइएसु वा उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स उकस्सिया हिंदी ।

- ३ २६. आभिणि०-मुद्०-ग्रोहि० मोह० उक्त० कस्स १ अण्णद० उक्तस्सिटिदि-संतक्तम्मेण तप्पाओग्गेण हिद्घाटमकाऊण सम्भन्तं पिडवण्णो तम्स पढमसमय-वेद्यसम्माइिट्स्स उक्तकस्सयिदिद्यंतकम्मं । एवमीहिद्स०-सम्मादि०-वेद्य० वत्तव्वं । मणपज्त० उक्क० कस्म १ अण्णद० वेद्यसम्मादिटी संजदो तप्पाओ-गुक्कम्सिटिद्संतकम्मो पढमसमयमणपज्जवणाणी जादो तस्स उक्कस्सिटिदि-मंतकम्मं । एवं संजद०-सामा६्य-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद० वत्तव्वं ।
- ६३०. सुक्क० मोह० उक्क० कम्स १ अण्णद्० उक्कस्सर्हिद्संतकिम्मओ हिटिबाद्मकद्वेलाए चेव परार्वात्तद्पढशसमयसुक्कलस्सा तम्स उक्कस्सिया हिदी।

मिश्रकाययोगी हो गया उसके पहले समयमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। कामण्काययोगी जीयोमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति किसके होती हैं ? कोई एक चारो गतिका जीव मोहनीयकी स्थिति बांधकर मरा खाँर तियँच या नारिकयोमे उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है।

- \$ २८. अपगतवदी जीवोमं मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति किसके होती है ? अनन्तानुबन्धी चनुष्कके विना जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव अपगतवदी जीवोके योग्य उत्कृष्ट स्थितिकी सत्ताकं साथ अपगतवदी हुआ उसके पहले समयमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। इसी प्रकार अकपायी, सूद्रमसांपरायिक संयत और यथाख्यातस्यत जीवोके कहना चाहिये।
- \$ २६. आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अयधिज्ञानी जीयोम मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति किसके होती है ? तिसके तत्यायोग्य मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति विद्यमान है और जो स्थितियात न करके सम्यक्तवको प्राप्त हुआ है उस मित्ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके पहले समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। इसी प्रकार अवधिद्यानी, सम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंक मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति कस्के होती है ? मनःपर्ययज्ञानके योग्य उत्कृष्ट स्थितिकी सत्तावाला जो कोई एक स्यत वेदकसम्यग्दृष्टि जीव मनःपर्ययज्ञानी हुआ उसके पहले समयमें मोहनीयका उत्कृष्ट स्थिति सत्त्व पाया जाता है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छदोपस्थापनामंयन, परिहारिवशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके कहना चाहिये।
- \$ २०. शुक्ललंश्यावालं जीयांमे मोहनीयकी उत्युष्ट स्थिति किसके होती हैं ? जिसके मोह-नीयकी उत्कृष्ट स्थिति विद्यमान है और जिसने स्थिति घात करके उसी समय शुक्ललंश्याको प्राप्त कर लिया है ऐसे किसी भी शुक्ललंश्यावाले जीवके पहले समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है।

§ ३१ व्यापि उक्क० कस्स १ अण्णद० पढमसमयखाइयसम्मादिष्टिस्स तस्स उक्किम्सया हिदी । उवसम० भोह० उक्क० कम्स १ अण्णद० पढमसमय- उवसामिद्दंसणमाहिस्स उवस्यसम्मादिष्टिस्स तस्य उक्किम्सया हिदी । सासण० मोह० उक्क० कस्स १ अण्णद० पढमसमयसामणसम्मादिष्टिस्स । सम्मामि० मोह० उक्क० कस्स १ हिद्संतकम्बद्याद्मकाऊण पढमस्यसम्मामिच्छाइही जादो तस्स । असिण्ण० एइंदियभंगो । अणाहारि० कम्मइयभंगो ।

## एवमुकम्समाभित्तं समत्तं ।

- ५ ३२. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्सो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ त्रोघेण मोह० जह० दिदी कम्स ? अण्णद० खवगस्स चरिमसमयसकसायस्स जहण्णदिदी । एवं मगुसतिय-पंचिद्य-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचर्वचि-कायजोगि०-
- \$ ३१. च्वायिक सम्यग्दृष्टि जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति दिसक होती है १ किसी भी च्वायिकसम्यग्दृष्टि जीवके पहले समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति किसके उपशामना की है ऐसे किसी भी उपशमसम्यग्दृष्टि जीवके पहले समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। सासा-दनसम्यग्दृष्टि जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति किसके होती है। सम्यग्निष्यादृष्टि जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। सम्यग्निष्यादृष्टि जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। सम्यग्निष्यादृष्टि जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। स्थाइंग जीवोके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। स्थाइंग जीवोके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति एकेन्द्रियोके समान जानना चाहिये। तथा स्थाइएक जीवोके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति कार्मण्काययोगी जीवोंके समान जानना चाहिये।

विशेषार्थ—यहां पर ज्ञायिकसम्यग्हांष्ट, उपजमसम्यग्हिष्ट और मासाइनसम्यग्हिष्ट जीवके कमसे ज्ञायिकसम्यक्तव, उपशमसम्यक्तव और सामाइनसम्यक्तवके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमे उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व कहा गया है। सो इसका कारण यह है कि एक तो इन मार्गणाओं में पूर्व मार्गणासे आनेपर जितना अधिक स्थितिसत्त्व सम्भव है उतना स्थितिबन्ध नहीं होता। दूसरे प्रथम समयके वाद उत्तरोत्तर स्थितिसत्त्व हीन होता जाता है, अत्रण्य इन मार्गणाओं में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका स्वामी प्रथम समयवाले जीवको कहा है। सम्यिग्धिटिष्ट गुणस्थानमे मिथ्यान्षिट जीवका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके तथा उसका घात न करके आना सम्भव है और ऐसे सम्यन्मध्यादृष्टि जीवके सबसे अधिक स्थितिसत्त्व सम्भव है, इसलिए इसके भी उक्त प्रकारसे आनेपर उत्कृष्ट स्थिति कही है।

### इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुन्या।

\$ ३२. अब जवन्य स्वामित्य प्रकृत है। उसकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—आंघ-निर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेसे ओघनिर्देशकी अपेता माहनीयकी जघन्यस्थिति किसके होती है ? किसी भी त्तपक जीवके सकपाय अवस्थाके अन्तिम समयमे अर्थात् त्तपक मूत्तमसाम्पराय गुण्स्थानके अन्तिम समयमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति होती है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, ओरालि०-त्रवगद्०--लोभक०-आभिणि०-मुद्०-त्र्योहि०-मणपज्ज० संजद्०--मुहुम०-चक्खु०-अचक्खु०-त्र्योहिदंस०-मुक्क०-भवसि०-सम्मादि०-खइय०-सण्णि-आहारि त्ति ।

§ ३३. आदेसेण णेग्इएसु मोह॰ जह॰ कस्स ? अण्णद० स्रस्रिण्णपच्छायदम्स विदियसमयविग्गहे वहमाणस्स तस्स जहण्णिया हिदी। एवं पहमपुढवि०-देव-भवण०-वाण० वत्तव्वं। विदियादि जाव छिट ति मोह॰ जह० कस्स ? अण्णद० जो उक्क॰ आउत्रहिदीए उववण्णो अप्पिदपुढविसु अंतोमुहुनेण पढमसमत्तं पिडविज्ञिय पुणो अंतोमुहुनेण अणंतासुबंधिचउक्कं विसंजोइय चिग्मसमयणिप्पिदपागत्रो तस्स जहण्णिया हिदी। एवं जोइसि॰।

६ ३४. सत्तमाए पुढवीए मोह० जह० कम्स ? अण्णद० जो उक्क० आउद्विदीए उववण्णो अंतोमुहुत्तेण पहमसम्मत्तं पडिवण्णो पुणा अणंताणुर्वधिच उक्कं विसंजोइय

पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंके तथा पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, ब्रस, ब्रम पर्याप्त, पांचो मनोयोगी, पांचो बचनयोगी, काययोगी, औदारिककावयोगी, अपगतवेदी, लाभकपायी, ब्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुनज्ञानी, अविध्ञानी मनःप्ययज्ञानी, संयत, सूक्ष्मसांपरा- विकसंयत, चनुदर्शनी, अचनुदर्शनी, अविद्रश्रीनी, श्रुक्तलेश्यावाले, भव्य, सम्पन्दिष्ट, न्नायिकसम्यग्दृष्टि, संज्ञी, और आहारक जीवोक जानना चाहिये।

§ ३३. श्रादेशकी श्रपंत्ता नरिकयोमें माहनीय की जवन्य स्थिति किसके होती है ? जो श्रसंज्ञि-योमेसे नरकमें श्राया है और जो विग्रहगतिके दूसरे समयमें विद्यमान है ऐसे नारकीं के मोइनीयकी जवन्य स्थिति होती हैं। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी जीवोके तथा सामान्य देव, भवन-वासी श्रीर व्यन्तर देवोंके कहना चाहिये।

विशापार्थ — अमंज्ञी जीव नरकमे उत्पन्न हो सकता है और उसके विमहगतिमे असंज्ञीके योग्य स्थितिवन्ध होता है इसलिए यहां अमंज्ञियोमें आए हुए नारकी जीवके द्वितीय विमहमें जधन्य स्थिति कही है। मात्र ऐसे असंज्ञी जीवके प्राक्तन सन्त्व तत्प्रायाग्य जघन्य स्थितिवन्धसे अधिक नहीं होना चाहिए। यह असंज्ञी प्रथम नरकके समान भवनवासी और व्यन्तर देवोमें भी उत्त्वन होता है इसलिए प्रथम नरक, सामान्य देव, भवनवासी देव और व्यन्तर देवोमे यह स्वामित्व इसी प्रकार दिया है।

दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयों में माहनीयकी जघन्य स्थिति किसके होती है। जो कोई एक जीव दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तक अपनी अपनी पृथिवीके अनुसार उत्कृष्ट आयुको लेकर उत्पन्न हुआ है, तथा जिसने उत्पन्न होनेके अन्तर्महृतं कालके बाद प्रथमांपदाम सम्यक्त्वका प्राप्त करके अनन्तर अन्तर्मु हुत्तं कालके हारा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना की है उस जीवके नरकसे निकलनेके अन्तिम समयम मोहनीयकी जघन्य स्थिति होती है। इसी प्रकार ज्योतियी देवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थित जाननी चाहिये।

६ ३४. सातवीं पृथिवीमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति किसके होती ह ? जो उत्कृष्ट आयुकी लेकर सातवें नरकमें उत्पन्न हुआ तथा अन्तर्भु हुर्त कालके पश्चान् जिसने प्रथमीपशम सम्यक्त्व अंतोमुहुत्तं जीवियमित्थ त्ति मिच्छत्तं गदो जाविद् सका ताव संतकम्मस्स हेटा वंधिय से काले समिद्विदं वंधिय वोलेहिद त्ति तम्स जहण्णयं हिद्सितकम्मं ।

- १३५. तिम्क्खिगइ० मोह० जह० कम्स १ अण्णदरम्स जो एइंदिय्रो हद्समु-पत्तियं काऊण जाव सका ताव संतकम्मम्स हेटा वंधिय से काले समिटिदिं वोलेहिद् त्ति तम्स जहण्णयं टिद्संतकम्मं । एवं सव्वण्डंदिय-पंचकाय०-ओगलियमिम्स०-कम्मइय०-मिदः सुद्य्यण्णाण-असंजद०-तिष्णि लेम्सा०-अभव्व०-मिन्छादि०-असिष्ण०-अणाहारि ति ।
- १३६. पंचिदियतिग्विस्वित्यिम्स मोह० जह० कस्स १ जो एइंदियपच्छायदो हिटीए कयहदसमुप्पत्तिय्रो पढमिविद्यिवस्गहे बट्टमाणो तस्स जहण्णयं हिदिसंतकम्मं । एवं पंचिदियतिग्विस्वयपज्ञ०-मगुसअपज्ञ०-सन्विवािहिद्य-पंचि०त्रपज्ञ०-तस अपज्ञते ति वत्तव्वं । णविर विगलिटिएस सन्थाणे वि सामिन्मविस्द्धं दहव्वं ।
  - ६३७, सोहर्म्भासाणादि जाव सच्वह० मोह० जह०१ अण्णद्० दो वारे

- \$ ३५. तिर्यचर्गातमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति किसके होती है १ जो कोई एकेन्द्रिय जीव हतसमुखितकको करके जब तक शक्य हो तब तक सत्तामे स्थित मोहनीयकी स्थितिसे कम स्थिति-बाले कर्मका बन्ध करके तदनन्तर कालमे सत्तामे स्थित मोहनीयकी स्थितिके समान स्थितिबाले कर्मका बन्ध करेगा उसके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, पांचों स्थावरकाय, श्रोदारिकिमिश्र काययोगी, कार्मण काययोगी,मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रासंयत, इष्ण श्रादि तीन लेक्यावाले, स्थमव्य, सिश्यादृष्टि, स्रसंज्ञी श्रीर अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।
- ६३६. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त और योनिनी इन तीन प्रकारके निर्यचोमें मोहनीयकी जवन्य स्थिति किमके होती है ? जो एकेन्द्रियोमेंसे लोटकर आया है, जिमने स्थितिका हतसमुत्यिक्त किया है और जो पहले या दूसरे विष्यहमें स्थित है उस पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त या योनिनी निर्यचके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय निर्यच लब्ध्यप्याप्तक, मनुष्य लब्ध्यप्याप्तक, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय लब्ध्यप्याप्तक और अस लब्ध्यप्याप्तक जीवोक्ते कहना चाहिये। इतनी विद्याप्ता है कि विकलेन्द्रिय जीवोमे स्वस्थानकी अपेन्ना भी स्वामित्वके कथन करनेमें कोई विरोध नहीं आता। अर्थात जो विकलेन्द्रियोमेंसे भी विकलेन्द्रियोमें लोटकर आया है उसके भी जवन्य स्थितिसत्त्व हो सकता है।
  - ५ ३७. सौधर्म श्रीर एशान स्वर्गसे लेकर सर्वाधिसिद्धि तकके देवोंमे मोहनीयकी जघन्य

प्राप्त किया है, पुनः अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करके वहा रहा और जब जीवनमें अन्तर्मुहृतं काल शेष रह जाय तब मिण्यात्वको प्राप्त होकर जहा तक शक्य हो वहां तक सत्तामें स्थित माहनीय कर्मकी स्थितिसे कम स्थितिबाले कमका बन्ध करके तदनन्तर कालमें जो सत्तामें स्थित मोहनीय कर्मकी स्थितिके समान स्थितिबाले कर्मका बन्ध करेगा उमके मोहनीयका जयन्य स्थितिसत्त्व होता है।

उवसमसेढिमारूढो पच्छा दंसणमोहं खिवय अपपपणो उकस्साउहिदीए उववण्णो तस्स चरिमसमयणिष्फिद्माणयम्स जहण्णयं हिद्सितकम्मं।

इ्र्वेडिव्य० मेह० जह० कम्स १ अण्णद० सव्वह० देवम्स खइयसम्मादिहिस्स उवसंतकसायपच्छायदम्स सगसगुक्कस्साउहिद्चिरमसभए वेउिव्यकायजोगे वट्टमाणस्स तस्स जहण्णयं हिद्संतकम्मं । वेउिव्यमिस्स० मोह० जह०
कस्स १ अण्ण० खइयसम्मा० उवसंत० पच्छायदस्स चरिमसभयवेउिव्यमिस्सकायजोगिस्स जहण्णयं हिद्संतकम्मं । आहार० मोह० जह० कम्स १ आण्ण०
खइयसम्माइहिस्स से काले मूलसरीरं पविसंतस्स जह० हिद्संतकम्मं । आहारिमस्स०
मोह० जह० कस्स १ अण्ण० खइयसम्मा० से काले सरीरपज्जित्तं कोहद् (काहद्)
चितस्स जह० हिद्संतकम्मं ।

५ ३६, वेटागुवादेण इत्थिवेट भोह० जह० कस्स ? अण्णद० अणियद्दिश्ववओ चरिमसमए इत्थिवेट्यो तस्स जह० द्विदिसंतकम्मं । एवं पुरिस०-णवंस० वत्तव्वं।

६४० कोह०-माण०-माय० जह० कस्स १ अण्णद्० अणियद्यिवजो

स्थिति किसके होती है ? जो कोई एक जीव उपशमश्रेणी पर दो वार चढ़ा है अनन्तर दर्शनमोह-नीयका त्त्रय करके आयुकर्मकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिको लेकर सौधर्मादिमें उत्पन्न हुआ है उसके वहासे निकलनेके अन्तिम समयमें मोहनीयका जवन्य स्थितिसत्त्व होता है।

इत्र. वैकियिककाययोगी जीवोमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति किसके होती है ? जो ज्ञायिकसम्यग्हिष्ट उपजान्तकपाय गुण्स्थानमें सर्वार्थिसिद्धिमें उत्पन्न हुन्ना तथा जो न्नप्रनी न्नप्रमें निक्ष्यक्रम्यग्हिष्ट निक्षयक्ष्ययोगी जीवके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है। वैक्षियकम्यग्रेमिश्रकाययोगी जीवोमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति किसके होती है ? जो ज्ञायिकसम्यग्हिष्ट जीव उपजान्तकपाय गुण्स्थानसे न्नाकर देवोमें उत्पन्न हुन्ना है उसके वैकियिकसिश्रकाययोगिक न्नान्तकपाय गुण्स्थानसे न्नाकर देवोमें उत्पन्न हुन्ना है उसके वैकियिकसिश्रकाययोगिक न्नान्तकपाय गुण्स्थानसे निक्षक होता है । न्नाहारककाययोगी निव्यामें मोहनीयका जघन्य स्थितिसन्च किसके होता है ? जो ज्ञायिकसम्यग्हिष्ट न्नाहारक काययोगी जीव तदनन्तर समयमें मूल अरोरमें प्रवेश करेगा उसके न्नान्तम समयमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसन्च होता है । न्नाहारकिपश्रकाययोगी जीवोमें मोहनीयका जघन्य स्थितसन्च होता है । न्नाहारकिपश्रकाययोगी जीवोमें मोहनीयका जघन्य स्थितसन्च किसके होता है ? जो ज्ञायिकसम्यग्हिष्ट न्नाहारकिपश्रकाययोगी जीवोमें मोहनीयका जघन्य स्थितसन्च किसके होता है ? जो ज्ञायिकसम्यग्हिष्ट न्नाहरकिपश्रकाययोगी जीवोमें नोहनीयका जघन्य स्थितसन्च किसके होता है ।

६३६. वेद्मार्गणाके अनुवादमे स्त्रीवेदी जीवोमे मोहनीयका जवन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है ? जो स्त्रीवेदी अनिवृत्तिच्चक जीव है उसके स्त्रीवेदके अन्तिम समयमें मोहनीयका जवन्य स्थितिसत्त्व होता है। इसी प्रकार पुरुपवेदी और नपुंसकवेदी जीवोके मोहनीयका जवन्य स्थितिसत्त्व कहना चाहिये।

ें ४०. क्रांघ, मान ऋोर मायाकपायवाले जीबोमें माहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके

अप्यप्पणो चरिमसमए बहुमाणो तस्स जह० हिद्सितंतकम्मं । अकसा० मोह० जह० क० ? अण्ण० खइयसम्मा० चरिमसमयअकसायस्स जहण्णयं हिद्सितंतकम्मं । विद्यंग० मोह० जह० क० ? अण्ण० जो उवरिमगेवज्जदेवो चउवीससंतकम्मिओ अवसाणे मिच्छत्तं गतृण चरिमसमयविद्यंगणाणी जादो तम्म० जह० हिद्सितंतकम्मं ।

६८१. सामाइय-छेटो० जह० कस्म ? अण्ण० अणियहिस्ववक्रो चरिमसमय-सामाइय-छेटोवहावण० संजमो तस्स जह० हिटिसंतक्षम्मं । परिहार० मोह० जह० क० ? अण्ण० खड्यसम्मा० जो दो वारे उवसमसेढिं चढिय पच्छा खिवददंसण-मोहणीओ देवेमु तेनीससागरीवममेत्ताउदिदिम्सुपालिय मणुस्सेमुववज्जिय समया-विरोहेण पिडवण्णपिहारमुद्धिमंजमो तस्स चरिमसम्यपिरहारमुद्धिमंजदस्स जह० हिटिसंतक्षम्मं । संजदासंजद० मोह० जह० कम्स ? अण्णद० जो खड्यसम्मा० परिहारम्स भणिद्विहाणेणागंत्ण चरिमसम्यमंजदासंजदो जादो तम्स जह० हिटिसंतक्षम्मं ।

होता है ? जो अनिवृत्तिच्चपक कोध, मान और मायाकपायके अन्तिम समयमें विद्यमान है उसके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है। अकपायी जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है ? जो जायिकसम्यग्ट्रिट अकपायी जीव है उसके अन्तिम समयमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है ? वीवीस प्रकृतियोकी किसायाज्ञा जो उपरिम मेदिनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है ? वीवीस प्रकृतियोकी किसायाज्ञा जो उपरिम मैदिनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । होकर विभोगज्ञानी हो गया है उसके अन्तिम समयमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है।

\$ ४१ सामायिक श्रीर छेदोपम्थापना संयत जीवोमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्व किसके होता है १ जो श्रान्तिम समयवर्ती श्रात्ववृत्ति इपक है उस सामायिकसंयत श्रीर छेदो-पस्थापना संयत जीवके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । परिहारिबशुद्धि संयत जीवोमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है १ दो बार उपश्मश्रेणीपर चह्वर अनन्तर जिसने दर्शतमोहनीयका स्थि किया है ऐसा जो साथिकसम्यग्रहिष्ट जीव देवोमे उत्पन्न होकर श्रीर वहां तेतीस सागर प्रमाण श्रायुको समाप्र करके श्रान्तर सनुत्योमे उत्पन्न होकर जिस प्रकार श्रागममें बताया है उसके श्रानुमार परिहारिबशुद्धि संयमको प्राप्त हु ब्रा है उस परिहारिबशुद्धि संयत्वके श्रान्तम समयमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । संयत्वासंयत जीवोमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है १ जो साथिकसम्यग्रहिष्ट परिहारिबशुद्धि संयत जीव आगममें जिस प्रकार विधि बताई है उसके श्रानुसार परिहारिबशुद्धि संयमको त्यागकर संयतासंयत हो। गया है उस संयतासंयतके श्रान्ति समयमें मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है।

ई ४२. पीतलेश्या और पद्मलेश्यावाले जीवोकं मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व परिहार

१४३. वेदग० मोह० जह० क० ? अण्णद० चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणी-यस्म जह० हिदिसंतकम्मं। उवसम० मोह० जह० क० ? अण्ण० उवसमसेढीए हिदि-घादं काद्ण अधिहिद्गळणाए च गाळिय से काले वेदयसम्मादिही होहिद् ित्त जो हिटो तस्स जह० हिदिसंतकम्मं। सासण० मोह० ज० कस्स ? अण्णद० चरिमसमय० सासण० तम्स जह० हिदिसंतकम्मं। सम्मामि० मोह० ज० क० ? अण्णद० चउवीस-मंतकम्मिओ जो चरिमसमयसम्मामिच्छादिही तस्स जह० हिदिसंतकम्मं।

### एवं सामित्तं समत्तं।

विद्युद्धिसंयत जीवोके समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि पीतलेश्या ख्रोर पद्मलेश्या-वाले जीवके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्तव कहते समय ख्रान्तिम समयमे पीतलेश्या ख्रोर पद्म-लेश्या प्राप्त कराके उसका कथन करना चाहिये।

१४३. वेदकसम्यग्हिष्ट जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है ? जिसके दर्जनमोहनीयका च्चय नहीं हुआ है ऐसे वेदकसम्यग्हिष्ट जीवके अन्तिम समयमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । उपशममभ्यग्हिष्ट जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है ? जो उपशमसम्यग्हिष्ट जीव उपशमश्रेणीमे स्थितिघात करके और अधस्तन-स्थिति गलनाके द्वारा स्थितिको गला कर तदनन्तर समयमे वेदकमम्यग्हिष्ट होगा उसके मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । सामादनसम्यग्हिष्ट जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । सामादनसम्यग्हिष्ट जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । सम्यग्मिण्याहिष्ट जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है । सम्यग्मिण्याहिष्ट जीवोमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व किसके होता है । चोवीस प्रकृतियोकी सत्तावाला जो जीव सम्यग्मिण्याहिष्ट हुआ है उसके अन्तिम समयमे मोहनीयका जघन्य स्थितिसत्त्व होता है ।

### इस प्रकार स्वामित्वानुयोगद्वार समाप्त हुआ।

\$ ४४. काल दो प्रकारका है—जघन्यकाल त्रोर उत्कृष्ट काल । उनमेसे पहले उत्कृष्ट काल का प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोवनिर्देश श्रोर आदेशनिर्देश। उसमें से श्रोवकी अपेचा मोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिसत्त्वका काल कितना है ? जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मृहूर्त है। मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थिति सन्यका काल कितना है ? जघन्य काल अन्तर्मृहूर्त और उत्कृष्टकाल असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है जिसका प्रमाण अनन्तकाल है : इसी प्रकार मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचचुद्शनी, भव्य, अभव्य और मिध्यादृष्टि जीवोंक कहना चाहिये।

९ ४५ - आहेमण णिरवर्गात णेरतामु मोह० उक्क० केविच० ? जह० एगममओ, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० केविचरं० ? जह० एगममओ, उक्क० तेत्तीम सागराविभाणि । पहमादि जाव सन्ति। नि मोह० उक्क० केविचरं० ? जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहुनें। अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० णवक० तिण्णि० सन्त० दस० सन्तारस० वावीस० तेनीससागराविभाणि ।

४६ (तिश्वित्वव मोह० उक्व ० केव० ? जह० एगसमञ्जो, उक्क ० अंते)मुहुत्तं । त्र्यमुक्क ० के० ? जह० एगसमञ्जो, उक्क० त्र्यमंत्रकार्याममंत्रेज्ञा पोग्गलपरियद्रा । एवं कायजोगि०-णवंस० वत्तव्वं ।

विशेषार्थ मंहिनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य बन्धकाल एक समय और उत्कृष्ट वन्धकाल अन्तर्महृतं होनेसे उत्कृष्ट स्थिति सत्त्वका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्त-मृहृतं कहा है। उत्पृष्ट स्थित बन्धकी व्युच्छिति होने पर पुनः उसका बन्ध कमसे कम अन्त-मृहृतं कालके वाद ही होता है। इस बीच अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध होने लगता है और सत्त्व भी अधःस्तन स्थिति गलना है हारा उत्तरीत्तर त्यून होता जाता है इसलिए अनुत्कृष्ट स्थितिसत्त्वका जवन्यकाल अन्तर्मृहृतं कहा है। तथा संद्यों वंचिन्द्रिय पर्याप्त पर्यायका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल होनेसे इस कालमे अनुत्कृष्ट स्थितिसत्त्व रहता है, इसलिए अनुत्वृष्ट स्थितिसत्त्वका उत्कृष्ट काल अनन्तकाल इहा है। यहाँ अन्य जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें आप प्ररूपणा अविकल पटिन हो जाती है, इसलिए इनकी प्ररूपणा आविक समान कही है।

ई १५. आदेशकी अपेदा नरकगतिमें नारिकयों में मोहनीयकी उन्हृष्ट स्थितिका मन्यकाल कितना है ? जयन्य सन्यकाल एक समय और उन्हृष्ट सन्यकाल अन्तर्महुत्ते हैं । मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिका गन्यकाल कितना है ? जयन्य सन्यकाल एक समय और उन्हृष्ट सन्वकाल तेतीस सागर है । पहली पृथियीसे लेकर सानधी पृथियी तकके प्रत्येक नरकमें मोहनीयकी उन्हृष्ट स्थितिका गन्यकाल कितना है ? जयन्य सन्यकाल एक समय और उन्हृष्ट सन्यकाल अन्तर्मृह्ते हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिका सन्यकाल कितना है ? जयन्य सन्यकाल एक समय और उन्हृष्ट सन्यकाल कितना है ? जयन्य सन्यकाल एक समय और उन्हृष्ट सन्यकाल कितना है ? जयन्य सन्यकाल एक समय और उन्हृष्ट सन्यकाल कितना है ?

निरोपार्थ—यह। सर्वत्र मेहिनीयवी उत्युष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्टकाल क्रमशः एक समय और अन्तर्म जीविके समान चिटित कर लेना चाहिए। नरकमें अनुख्य स्थितिका जवन्य काल एक समय निरास प्रवार होता है—जिस नारकीने भवके उपान्त्य समयमे उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर अन्तिम समयमे अनुखुष्ट स्थितिको बांधकर अन्तिम समयमे अनुखुष्ट स्थितिको बांधा है और तीमरे समयमे मरकर जो अन्य पर्यारको प्राप्त हो गया उसके अनुख्य स्थितिको जवन्य काल एक समय पाया जाता है। नेय कथर स्थार ती है।

ं ४२. तिर्श्चोमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जयन्य सत्त्वकाल एक रागर और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्महर्त है । मोहनीयकी अनुस्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जयन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट अनन्तकाल है जो असंस्थान पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है । इसी प्रवार काययोगी और सपुंसकवेदी जीवोके कहना चाहिये ।

४७. पचिद्यितिरिक्खितयिम्म में)ह० उक्क० केव०? जह० एग्समञ्जो,
 उक्क० अनोम्रहुनं । अणुक्क० केव०? जह० एग्समञ्जो, उक्क० सगसगुक्कम्सिंहदी।
 एवं मणुस्तियस्स ।

विशेषार्थ — तियंचोमं अनुन्छ एथितिका जयस्यकाल एक समय नार्शक्ष्यांक समान चिटित कर लेना चाहिए । तथा अनुन्छ स्वितिका उन्छ काल ओषके समान चिटित कर लेना चाहिए । तथा अनुन्छ स्वितिका उन्छ काल ओषके समान चिटित कर लेना चाहिये। जब कोई जीव असंस्थात पुरुगल परिवर्तनकाल तक एकेन्द्रिय पर्यायमे निरन्तर रहता है तब उसके काययोग ओर नपुंसकवेद ही होता है अतः काययोग ओर नपुंसकवेदमें भी मोहनीयकी उन्छष्ट और अनुन्छ ए स्थितिका काल तिर्यचोंके समान बन जाता है । शेष कथन सुगम है।

६ ४७ पंचिन्त्रिय तिर्यच, पंचिन्त्रिय तिर्यच पर्याप्त और योनिमर्ता तियेचोम मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिका सन्त्यकाल कितना है ? जयन्य एक समय और उन्कृष्ट व्यन्तमृहुर्त है । मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थितिका सन्त्यकाल कितना है ? जयन्य एक समय और उन्कृष्ट व्यपना व्यपनी उन्दृष्ट स्थितिप्रमाण् है । इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंके जानना च।हिये।

विशेषार्थ—उक्त नीन प्रकारक नियंचों अन्द्रष्ट स्थिनिका ज्ञान्य आर अन्द्रष्ट काल आपके समान नथा अनुत्रुष्ट स्थिनिका ज्ञान्य काल एकसमय नारिकयों के समान चित्त कर लेना चाहिये। इनका खुलासा हम पहले कर ही आये हैं। तथा अनुत्रुष्ट स्थिनिका उत्रुष्ट काल अपनी अपनी उत्रुष्ट स्थिनिक प्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि किसी भी नियंचक अपनी अपनी उत्रुष्ट स्थिनिक भीतर मोह्नीयकी उत्रुष्ट स्थिनिका बन्द न हो यह गम्भव है। यहा स्थिनिसे कार्यास्थिन का प्रह्मण करना चाहिये। इसी प्रकार अन्यत्र भी जहां स्विस्थितिसे कार्यास्थिन अधिक हो वहा भी स्थिति पदसे कार्यस्थिनिका ही प्रह्मण करना चाहिये। उक्त नीन गन्तर के नियंचोंकी कार्यास्थिन कमसे पंचानवे पूर्वकोटि अधिक नीन पत्य, सेनालीस पूर्वकोटि अधिक नीन पत्य आर पन्द्रह पूर्वकोटि अधिक नीन पत्य होनी है। सामान्य मनुष्य, प्रयोध मनुष्य और मनुष्यनीक भी इसी प्रकार जानना चाहिए। उनकी कार्यस्थिन कमशः संनालीस पूर्वकोटि अधिक नीन पत्य और सात पूर्वकोटि अधिक नीन पत्य होनी है।

8 ४८. पंतिन्द्रिय तिर्ये छ तट यपयामकोमे मोह्नीयकी उन्छए स्थितिक। सत्त्वकाल कितना है ? जबन्य और उन्छए दानो एक समय है। मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जबन्य एक समय कम खुदाभवप्रहण प्रमाण है और उन्कृष्ट अन्तर्मु हुन है। इसी प्रकार लट्यपयाप्रक मनुष्यके जानना चाहिए।

विशेषार्थ —पंचेन्द्रिय नियंख्न ००थ्यपयांत्रकोंके बन्धमें मोहनीयथी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती नहीं। हा जिसने संज्ञी पर्याप्त अवस्थाम माहनीयकी उत्कृष्ट स्थितका बन्ध किया और वह स्थिति घात न करके अन्तमुंहूत कालके होनेपर मरकर उक्त जायोंमें उत्पन्न ही ग्राया तो उसके १ ४५ - आहेमेण णिरवर्गाण णेरइएमु मोह० उक्क० केविच० ? जह० एगसमुओ, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० केविचरं० ? जह० एगममुओ, उक्क० तेचीम सागराविमाण । पढमादि जाव सत्ति चि मोह० उक्क० केविचरं० ? जह० एयसमुओ, उक्क० अंतोमुहुर्च । अणुक्क० जह० एयसमुओ, उक्क० एक्क० तिष्णि० सत्ति० दम० सत्तारम० वावीस० तेचीमसागराविमाण ।

४६ तिग्किय । मोह० उक्य ० केव० ? जह० एगमम्ब्रो, उक्क० अंतोम्रहुत्तं । त्रामुक्क० के० ? जह० एगसम्ब्रो, उक्क० त्रामंत्रालभमंत्रेजा पोग्गलपिर्यहा । एवं कायजोगि०-णवंस० वत्तव्यं ।

विशेषार्थ मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जपन्य बन्धकाल एक समय और उत्कृष्ट बन्धकाल व्यन्तर्महुत होनेसे उत्कृष्ट स्थित सन्त्वका जपन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्महुत वहा है। उत्कृष्ट स्थित बन्धकी व्युन्छित्ति होने पर पुनः उसका बन्ध कमसे कम अन्तर्महृत बाले बाद ही होता है। उस बीच अनुकृष्ट स्थितिबन्ध होने लगता है और सन्त्व भी अधःकृत स्थित गलना है होग उत्तरोत्तर न्यून होता जाता है इमलिए अनुकृष्ट स्थितिसन्त्वका जपन्यकाल अन्तर्महुत करा है। तथा संजी पंचित्र्य पर्याप्त पर्यायका उन्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल होनेसे इस कालमे अनुकृष्ट स्थितिसन्त्व रहता है, इसलिए अनुकृष्ट स्थितिसन्त्वका उन्कृष्ट काल अनन्तकाल जहा है। यहाँ अन्य जितनी मार्गणाएँ गिनाई है उनमे औष प्रस्पणा अविकल पटित हो जाती है, इसलिए इनकी प्रस्पणा श्रोषक समान कही है।

१८४. आदेशकी अपेता नरकगतिमें नारिकयों में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सन्त्रकाल कितना है? जयन्य सन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट सन्यकाल अन्तर्मृहर्त है। मोहनीयकी अपुत्रुष्ट स्थितिका रान्यकाल कितना है? जयन्य रान्यकाल एक समय और उत्कृष्ट सन्द्रकाल वैतीस सागर है। पहली पृथिवीसे लेकर सातवी पृथिवी तकके प्रत्येक नरकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका रान्यकाल कितना है? जयन्य सन्यकाल एक रामय और उत्कृष्ट सन्यकाल अन्तर्मृहर्त हैं। अनुत्रुष्ट स्थितिका सन्यकाल कितना है? जयन्य सन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट स्थितिका सन्यकाल कितना है? जयन्य सन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट स्थितिका सन्यकाल कितना है? जयन्य सन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट स्थितिका सन्यकाल कितना है? जयन्य सन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट स्थार कीता सागर है।

विशेषार्थ— यहां सर्वत्र मोहनीयकी उन्हृष्ट स्थितिका जयस्य और उत्कृष्टकाल कमशः एक समय और अन्तर्भु उर्त औषके समान घटित कर लेना चाहिए। तरकमें अनुन्कृष्ट स्थितिका जयस्य काल एक मगथ निष्ट प्रकार होता है—जिस नारकीने भवके उपान्त्य समयमें उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर अन्तिम समयमें अनुन्कृष्ट स्थितिको बांधकर अन्तिम समयमें अनुन्कृष्ट स्थितिको बांधा है और तीमरे समयमे मरकर जो अन्य पर्यायको प्राप्त हो गया उसके अनुन्कृष्ट स्थितिक। जयस्य काल एक समय पाया जाता है। केए कथन र एह ही है।

े ४६. तियंचोमे मोहतीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जयन्य सत्त्वकाल एक गमय और उत्कृष्ट गत्त्वकाल अन्तर्मुहृते हैं। मोहतीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल पितना है ? जथन्य मत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है । इसी प्रकार काययांगी और नपुंसकवेदी जीवोके कहना चाहिये।

४७. पचिदियतिरिक्यितियमिम मोह० उक्क० केव०? जह० एगसमञ्रो, उक्क० अतोम्रहुत्तं । अणुक्क० केव०? जह० एगसमञ्रो, उक्क० सगसगुक्कम्सिट्दी। एवं मणुसितयस्स ।

विशेषार्थ—तियंचोमे अनुकृष्ट स्थितिका जवन्यकाल एक समय नारिकयोंके समान घटित कर लेना चाहिए । तथा अनुकृष्ट स्थितिका उन्दृष्ट काल ओघके समान घटित कर लेना चाहिए। तथा अनुकृष्ट स्थितिका उन्दृष्ट काल ओघके समान घटित कर लेना चाहिये। जब कोई जीव अमंत्यान पुरुगल परिवर्तनकाल तक एकेन्द्रिय पर्यायमे निरन्तर रहना है तब उमके काययोग आर नपुंसकवेदमें भी मोहनीयकी उन्दृष्ट और अनुकृष्ट स्थितिका काल तियंचोंके समान बन जाता है। शेष कथन सुगम है।

६ ४० पंचेत्रिय तिर्यंच, पंचेत्रिय तिर्यंच पर्याप्त और योनिमती नियंचोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जयन्य एक समय और उत्कृष्ट खन्तमुंहर्त है। मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जयन्य एक समय और उत्कृष्ट छपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण् है। इमी प्रकार सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—उक्त तीन प्रकारके तियंचों ने उन्कृष्ट स्थितिका ज्ञ्चन्य स्रोर उन्कृष्ट काल स्रोघके समान तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका ज्ञ्चन्य काल एकसमय नार्राक्यों के समान चिटित कर लेना चाहिये। इनका खुलासा हम पहले कर ही आगे हैं। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल अपनी स्रपनी उन्कृष्ट स्थिति प्रमाण प्राप्त होता है, क्यों कि किसी भी तियंचक अपनी अपनी उन्कृष्ट स्थितिके भीतर मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिका बन्ध न हो यह रामनव है। यह। स्थितिसे कायस्थिति का यहण करना चाहिये। इसी प्रकार अन्यत्र भी जहा भवस्थितिसे कायस्थित अधिक हो वहा भी स्थिति पर्से कायस्थितिका ही प्रहण करना चाहिये। उक्त तीन प्रकारके तिथेचोकी कायस्थिति कमसे पंचानवे पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य, सेतालीस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य सोर्रा प्रकार जानना चाहिए। उनकी कार्यस्थिति कमशः सेतालीस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य, तेईस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य सेतालीस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य, तेईस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य सेतालीस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य, तेईस पूर्वकोटि अधिक तीन पन्य सेतालीस पूर्वकोटि स्थित तीन पन्य सेतालीस पूर्वकोटि स्थितिक तीन पन्य सेतालीस पूर्वकोटि स्थित सेतालीस पूर्यकोटिस सेतालीस पूर्यकोटिस सेतालीस पूर्यकोटिस सेतालीस स्थित सेतालीस पूर्यकेति सेतालीस स्थित सेतालीस सेतालीस

8 ४८. पंचित्रिय तिर्यक्च लब्ध्यपर्याप्रकोमे मोहनीयकी उत्श्रष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है १ जबन्य और उत्कृष्ट दोनों एक समय है । मोहनीयकी अनुश्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है १ जबन्य एक समय कम खुहाभवप्रहण प्रमाण है ओर उत्कृष्ट अन्तर्मु हुते है । इसी प्रकार लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यके जानना चाहिए ।

विशेषार्थी—पचेन्द्रिय निर्यञ्ज लब्ध्यपर्याप्तकोकं बन्धसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिनि प्राप्त होती नहीं । हा जिसने संज्ञी पर्याप्त अवस्थाम मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितका बन्ध किया और बह स्थिति घात न करके अन्तमुहेत् कालके होनेपर मरकर उक्त जाबोमें उत्पन्न हो गया तो उसके § ४६. देवाएं णारगभंगो । भवणादि जाव सहस्सार ति उक्क० श्रोधभंगो । श्रामुक्क० केव० ? जह० एगसमश्रो, उक्क० श्रप्पपणो उक्कस्सिट्दी । आणदादि जाव सञ्बद्घ० मोह० उक्क० केव० ? जहण्युक्क० एगसमश्रो । अणुक्क० जह० जहण्णिट्दी० समऊणा, उक्क० उक्कस्सिट्दी संपुण्णा ।

\$ ५० एइंदिएस मोह० उक्क० जह० एगसमयो, उक्क० एगस० । अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं, उक्क० अणंतकालमसम्बेज्ञा पोग्गलपरियद्दा। एवं वादरेइंदिय० । णवरि अणुक्कस्सिटिदीए उक्कस्सिटिदीए पहंदियभगो । अणुक्क० केव० १ जह० अंतोमुहुत्तं (एगसमयूणं), उक्क० संखेज्ञाणि वाससहस्साणि।

उत्पन्न होनेके पहले समयमें अपनी पर्यायमे सम्भव स्थितिकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है अतः इनके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा इस एक समयको कम कर देनेपर अनुःकृष्ट स्थितिका जघन्यकाल एक समय कम खुद्दाभव-मह्म प्रमाण प्राप्त होता है। तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च लद्ध्यपर्याप्तकका उत्कृष्ट काल अन्तमुं हुतं बतलाया है, अतः अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तमुं हुतं वाप्त होता है। मनुष्य लद्ध्यपर्याप्तकोके भी इसी प्रकार उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिका काल घटित कर लेना चाहिए।

६ ४६. देवोके उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिका काल नारिकयों के समान जानना चाहिये। भवनवासियोंसे लेकर सहस्थारस्वर्ग तकके देवोके उत्कृष्ट स्थितिका सन्त्वकाल आघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिका सन्त्वकाल कितना है १ जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। आनतसे लेकर सर्वायसिद्धि तकके देवोके मंग्हनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सन्त्वकाल कितना है १ जघन्य और उत्कृष्ट दोनो सन्त्वकाल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका सन्त्वकाल कितना है १ जघन्य एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थिति प्रमाण है और उत्कृष्ट अपनी अपनी सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है।

विशेषार्थ — आनतसे सर्वार्थासिक्षितकके देवोकं मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति भवकं पहले समयमं ही सम्भव हें, अतः इनके उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य और उत्कृष्टकाल एक समय कहा। तथा इस एक समयको कम कर देनेपर अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्यकाल एक समय कम अपनी जधन्य स्थिति प्रमाण प्राप्त होता है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है यह स्पष्ट ही है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि सर्वार्थसिद्धिमं जधन्य और उत्कृष्ट आयु नहीं होती अतः वहाँ अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्यकाल एक समय कम तेतीस सागर और उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर होगा। शेष कथन सुगम है।

है। तथा अनुत्कृष्ट । स्थितिका जघन्य स्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट । स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल खुदाभवम्महण्यमाण और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय जीवोके कहना चाहिये। पर इतनी विशेषता है कि इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट सत्त्वकाल बादर स्थिति प्रमाण है। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंके उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल एकेन्द्रियोके समान है। तथा इनके

- ६ ५१. वादरेइंदियत्रपज्ज०-सहुमेइंदियत्रपज्ज०-विगलिदियत्रपज्ज०-पेचिदिय-त्रपज्ज०-पंचकाय०वादरत्रप्रज्ज०-तेसि सहुमश्रपज्ज०-तसत्रपज्ज० पर्चिदियतिरिक्ष्व त्रपज्जत्तभंगो ।
- ५२. सुहुमेइंदिय० उक्क० केव० ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमञ्जो । अणुक्क०
   जह० खुद्दाभवग्गहणं समऊर्ण, उक्क० असंखेजा लोगा । एवं पंचकायसहुमाणं
   प्रजत्तार्ण ।
- ९ ५३. मुहमइंदियपज्ञ० केव० ? जहण्णुक्कस्सेणेगसमओ । अणुक्क० जह० अतोमुहुत्तं समयूर्णं, उक्क० अतोमुहुत्तं । एव पचकायसुहम० ।

अनुकृत्प्ट स्थितिका सत्त्वकाल किनना है ? जघन्य अन्तर्मुहृर्ते और उत्कृष्ट संख्यान हजार वर्ष है ।

विशेपार्थ — एकेन्द्रियोंमें मोहनीयकी उन्ह्रण्ट स्थित भवके पहले समयमे ही प्राप्त होती है अतः इनके मोहनीयकी उन्हृष्ट स्थितका जयन्य और उन्ह्रष्टकाल एक समय कहा। साथ ही यह उन्ह्र्ष्ट स्थिति लव्ध्यपर्याप्तक एकेन्द्रिय और सूद्म जीवोके नहीं प्राप्त होती, अतः अनुन्द्रुष्ट स्थितिका जयन्यकाल प्रा खुद्दाभवग्रह्ण प्रमाण कहा। एकेन्द्रियोकी कार्यस्थिति असंख्यात युद्गल परिवर्तन प्रमाण होनसे इनके अनुन्दृष्ट स्थितिका उन्ह्रष्टकाल उक्त प्रमाण कहा। बादर एकेन्द्रिय प्रयाप जीवोकी कार्यस्थिति कमझः अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अर्थात असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उन्ह्रासिर्णी काल प्रमाण व संख्यात हजार वर्ष काल प्रमाण होनसे इनके केवल अनुन्द्रुष्ट स्थितिके उन्ह्रुण्ट कालमें एकेन्द्रियोसे अन्तर है। बाकी सब एकेन्द्रियोंके समान है। सो इसका उन्लेख पहले किया ही है।

ई ५१ बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक, सूद्रम एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक, विकलेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक, पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक, पांचो स्थावरकाय बादर लब्ध्यपर्याप्तक, पांचो स्थावर काय सृद्रम लब्ध्यपर्याप्तक और त्रम लब्ध्यपर्याप्तक जीवोके पंचेन्द्रिय निर्येख लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिये। नात्पर्य यह है कि सभी लब्ध्यपर्याप्तक जीवोके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका जबन्य और उत्कृष्टकाल एक समान होता है, अनः उक्त सब लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अनुत्कृष्ट स्थितिका काल पंचेन्द्रिय निर्येख लब्ध्यपर्याप्तकोंक समान जानना चाहिये।

\$ ५२. सूद्रम एकेन्द्रियोके माहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है ? जघन्य श्रांर उत्कृष्ट दोनों एक समय है। तथा श्रानुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय कम न्युद्दाभव- प्रहणप्रमाण है श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल असंख्यात लोक प्रमाण है। इसी प्रकार पांचों सूद्रम स्थावर- कायिक जीवोंके कहना बाहिये।

९ ५३. सूद्म एकंन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके मोहनीयकी उन्हर्ष्ट स्थितिका सत्त्वकाल कितना है १ जवन्य और उन्हर्ष्ट दोनों एक समय है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय कम अन्तर्भुहर्त है और उन्हर्ष्ट सत्त्वकाल अन्तर्भुहर्त है। इसी प्रकार पांचों सूदम स्थावरकायिक पर्याप्तकोंक जानना चाहिये।

- ५ ४४. विगर्लिटय० मोह० उक्क० केव० १ जहराणुक्क० एयसमओ । ऋणुक्क० जह० खुदाभवग्गहरां सम्बद्धां, उक्क० संखेजाणि वाससहस्साणि । एवं विगर्लिट्यपज्जनारां पि । जवरि अणुक्कस्सजहराणकाला अंतोगुहुनं समक्रणं ।
- ६ ५५. पचिद्य-पचि ०पज्ज० तस-तसपज्ज० भोह० उक्क० श्रोघभगो । अगुक्क० जह० एगसभयो, उक्क० सगसगुक्कस्महिदी ।
- ्र ५६. पुढविञ्चाद्रपुढविञ्-न्याउञ्चाद्रशाउञ्जाउञ्चकः केञ् १ जहञ् एगसमञ्जो, उक्कञ् एगसमञ्चो । त्राणुक्कञ्जहञ् खुदाभवग्गहणं, उक्कञ् सगसगुक्क-स्सिंहिदी । बादरपुढविपञ्जञ्चादरत्राउञ्जञ्जञ् उक्कञ् केञ्? जहञ् एगसमञ्चो,
- इ.५४. विकलेन्द्रिय जीत्रोके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिक। सन्वकाल कितना है १ जघन्य स्थार उत्कृष्ट दोनो एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जबन्य सन्वकाल एक समय कम खुद्दाभवप्रहण्यमाण और उन्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष है। इसी प्रकार विकलेन्द्रिय पर्याप्तकोके भी जानना चाहिये। पर उत्तनी विक्षेपता है कि इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सन्वकाल एक समय कम अन्तर्भ हुते है।

विशेषार्थ-सूत्म एकेन्द्रियसे लेकर आगे जिनती मार्गणाओं में काल कहा है उन सबके मोहतीयकी उत्कृष्ट स्थिति भवके पहले समयमें ही प्राप्त हो सकती है, अतः सबके मोहतीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उन्कृष्ट काल एक समय कहा। पर अनुत्कृष्ट स्थितिक जवन्य द्वालका कथत करते समय जहा बुहाभन्त्रप्रहण् प्रमाण जवन्य स्थिति सम्भव है वहा एक समय कम बुहा भवप्रहण् प्रमाण जवन्य काज कहा और जहां अन्तमुं हुर्त प्रमाण जवन्य स्थिति सम्भव है वहा एक समय कम अन्तमुं हुर्त प्रमाण जवन्य काल कहा। तथा जहां को उन्कृष्ट काल सम्भव है वहां अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल तन्त्रमाण कहा।

्षपः पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रमपर्याप्त जीवोके मोहनीयकी उन्छट स्थितिका सत्त्वकाल त्र्योपके समान है। तथा त्रनुत्कृष्ट स्थितिको जघन्य सन्द्रकाल एक समय त्र्योर अक्ट्रुष्ट सन्द्रकाल त्र्यपनी ऋपनी अन्तर्भ अन्तर्थिमाण है।

विशेषार्थ-पंचित्रियोकी उन्हाट स्थिति पूर्व कोटि पृथवत्यमे अधिक एक हजार सागर, पंचित्रिय पर्याप्तकोकी उन्हाट स्थिति मी सागरपृथवत्व, जमकाथिकोंकी उन्हाट स्थिति पृथवत्वसे प्रधिक दो हजार मागर और जसकायिक, पर्याप्तकोकी उन्हाट स्थिति दो हजार सागर बतलाई हे अतः इनके अनुन्हाट स्थितिका उन्हाट काल उक्त स्थिति प्रमाण जानना चाहिये। तथा अनुन्हाट स्थितिका जपन्य काल एक समय जिस प्रकार नारिकयोंके घटित करके लिख आये हैं उसी प्रकार यहां भी घटित कर लेना चाहिये। हो। कथन सुगम है।

ू ५६. पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक, जलकायिक और वादर जलकायिक जीवोंके मोहनीयकी उन्तृष्ट स्थितिका सन्द्यकाल कितना है ? जबन्य और उत्तृष्ट सन्त्यकाल एक समय है । तथा अनुत्रुष्ट स्थितिका जबन्य सन्त्यकाल खुदाभवप्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट सन्त्यकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । वादर पृथिवीकायिक पर्याप्त और वादर जलकायिक पर्याप्त उक्क० एगसमञ्जो । श्राणुक्क० जह० अतोमुहुत्तमेगसमञ्जणं, उक्क० संखेजजाणि वासमहस्साणि ।

६ ५७ तेउ०--वाटरनेउ०--वाटरतेउपज्ञा०--वाट०-वाट्स्वाउ०--वाटस्वाउपज्ञा० उक्क० जहण्णुक्कस्प्रेण एगसमञ्रो, अणुक्क० जह० खुद्दाभवस्महणं समऊणं। णवरि पज्जचाणमंतोमुहुचं समऊणं। सब्वेसिमणुक्कस्मुकस्सं सगसगुक्कस्सिटिदी।

्र ५⊏् वणष्फदिकाइयाणमेइंटियभंगो । वाट्रवणष्फदिकाइयाणं वाट्रेइंटिय-

जाबोरे मोहनीयकी उन्छए स्थितिका सन्वकाल कितना है ? जघन्य और उत्छए सन्वकाल एक समय है। तथा अनुत्रुए स्थितिका जघन्य सन्वकाल एक समय कम अन्तर्मुहर्त है। और उन्हुए सन्वकाल सम्यात हजार वप है।

विशेषार्थ एकेन्द्रिय, वाहर एकेन्द्रिय झाँर वाहर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोकं जिस प्रकार उन्कृष्ट स्थितिका जयन्य झाँर उन्कृष्ट काल तथा अनु-कृष्ट स्थितिका जयन्य काल घटित करके लिख आये हैं उसी प्रकार यहां पृथिवीकायिक, वाहर पृथिवीकायिक झाँर वाहर पृथिवीकायिक पर्याप्त प्रादि जीवोके जानना चाहिये। किन्तु इनके अनु-कृष्ट स्थितिके उन्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है जिसका निर्देश मृलमें किया ही है। प्रथिवीकायिक और जलकायिक जीवोकी उन्कृष्ट कायस्थिति असंस्थान लोक प्रमाण वहीं है। वाहर पृथिवीकायिक और वाहर जलकायिक जीवोकी उन्कृष्ट कायस्थिति उन्कृष्ट कमंस्थिति प्रमाण कहीं है। तथा वाहर पृथिवीकायिक पर्याप्त झाँर वाहर जलकायिक पर्याप्त और वाहर कालकायिक पर्याप्त और वाहर जलकायिक पर्याप्त और वाहर कालकायिक पर्याप्त जीवोकी उन्कृष्ट कायस्थिति संस्थान हजार वर्ष प्रमाण कहीं है सो इस काम उक्त जीवोके अनुन्दृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल जानना चाहिये।

६ ५.०. अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक खौर वादर वायुकायिक पर्याप्त जीवों के मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और अकृष्ट सन्यकाल एक समय कम अुदामक्षप्रदेशभागा है। इतनी विद्यारता है कि पर्याप्तकों के अनुन्कृष्ट स्थितिका जवन्य सन्त्वकाल एक समय कम अन्तर्मुहर्त है। तथा उपर्युक्त सभी जीवों के अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट सन्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट सन्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाग है।

विशेषार्थ- उक्त कायवाल जीवोक भवक पहले समयमें उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त होना मन्भव है अतः इसके उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। पर्याप्त जीवोका जयन्य काल अन्तर्मुहर्त और शेक्का खुहाभवयहण प्रमाण है अतः इस जयन्य काल में ते उत्कृष्ट स्थितिक कालके एक समय घटा देने पर जो एक समय कम खुहाभवयहण्एप्रमाण और एक समय कम अन्तर्मुहर्त काल वचता है वह इनकी अनुःकृष्ट स्थितिका जयन्य काल है। इनमेसे कौन किमका काल है यह खुलासा मूलमे ही किया है। तथा अग्निकायिक और वायुकायिकका उत्कृष्ट काल असं यात लोक प्रमाण है। वादर अग्निकायिक और वादर वायुकायिकका उत्कृष्ट काल कर्मस्थितिप्रमाण है और वादर अग्निकायिक पर्याप्त तथा वाहर वायुकायिक पर्याप्तका उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष है। इस प्रकार इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल उपर कही गई अग्नी अपनी कास्थिति प्रमाण जानना।

\S ५८. वनम्पतिकायिक जीवोंके एकेन्द्रियोके समान, बादर वनम्पतिकायिक जीवोंके बादर

## भंगो । वाद्रवणप्फदिकाइयपज्जत्ताणं वाद्रेइंदियपज्जत्तभंगो ।

- ६५८. पंचमण०-पंचर्वाच० मोह० उक्क० ऋगुक्क० जह० एगसम्ब्रो, उक्क० अंतोमुहुनं । एवं वेउव्वियकाय० वत्तव्वं । ख्रोगालि० मोह० उक्क० ख्रोघभंगो । ख्रगुक्क० के० ? जह० एगसम्ब्रो, उक्क० वावीसवाससहस्साणि देसूणाणि । ख्रोग-लियभिस्म० मोह० उक्क० के० ? जहण्णुक० एगसम्ब्रो । ख्रणुक० ज० खुद्दाभवग्गहणं तिसम्बर्णा, उक्क० अंतोम्० ।
- ्र६०. वेउञ्चियमिस्स० मोह० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो, अणुक्क० जह० अंतोमुहुत्तं समऊणं, उक्क० अंतोमु० । एवमाहारमिस्स०-उक्सम०-सम्मामि० वत्तव्यं । आहार० मोह० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । (अणुक्क०) ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवमवगद०-अकसा०-सृहुमसांप०-जहाक्याद० वत्तव्यं । कम्मइय० मोह० उक्क० जहण्णुक्क० एगस०, अणुक्क० जह० एगसमञ्रो, उक्क० तिण्णि समया ।

एकेन्द्रिय जीवोके समान और वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त जीवोके बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोके समान काल जानना चाहिये। तात्पर्य यह है कि इनके सब प्रकारसे एकेन्द्रिय और उनके सेद-प्रसिदोके समान उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिका काल वन जाता है।

- ६ ५८. पांचो मनायोगी और पांचों वचनयांगी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति और अनुन्कृष्ट िम्थिनिका ज्ञचन्य सत्त्वकाल एक समय है तथा उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्मृहर्त है। इसी प्रकार बैक्रियिककाययांगी जीवोंके कहना चाहिये। औदारिककाययांगी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट िम्थिनिका सत्त्वका ख्रांचके समान हैं। तथा अनुन्कृष्ट िस्थिनिका सत्त्वकाल कितना है १ ज्ञचन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल कुछ कम वाईस हजार वपे हैं। ओदारिक-मिश्रकाययोगी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिनिका सत्त्वकाल कितना है १ ज्ञचन्य ख्रोर उत्कृष्ट स्थिनिका सत्त्वकाल कितना है १ ज्ञचन्य और उत्कृष्ट मिथिनिका ज्ञचन्य सत्त्वकाल नीन समय कम जुद्दाभवप्रहण् प्रमाण् और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्मु हुर्न है।
- ई ६०. वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सन्त्रवकाल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सन्त्रवकाल एक समय कम अन्तर्महुर्त हो। इसी प्रकार श्राहारकमिश्रकाययोगी, उपश्मसम्यग्दिष्ट श्रोर सम्यग्मिश्यादिष्ट जीवोंके कहना चाहिये। आहारककाययोगी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सन्त्रवक्षाल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सन्त्रवक्षाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट सन्त्रवक्षाल श्रक्तममू है। इसी प्रकार अपगतवंदी, श्रक्षणयी, सूक्षमशंपरायिकसंयत श्रोर यथाख्यातसंयत जीवांके जानना चाहिये। कामण्काययोगी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सन्त्रवक्षाल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य स्वरूप्ट सन्त्रकाल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सन्त्रकाल एक समय है।

विशोषार्थ—पांचों मनोयोग और पांचों वचनयोगोका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त है अतः इनके मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट म्थितिका जयन्यकाल एक

६२. इत्थि० मोह० उक्क० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । ऋणुक्क० जह० एगसमञ्चो, उक्क० सगिंददी । एवं पुरिस० ।

समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त वन जाता है। यही बात वैकियिक काययागमें जानना चाहिये। श्रौदारिक काययोगमें अनुत्कुष्ट स्थितिके उन्कृष्टकालमे बुद्ध विशेषता है। बातयह है कि श्रोदारिक-काययोगका उत्कृष्ट काल व्यन्तर्भहुत कम वार्डम हजार वर्षप्रमाग है और इतने काल तक जीवके इसमे मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है, अतः श्रोदारिककाययोगमें अनुत्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा;। श्रोदारिक मिश्रकाययांगके पहले समयमें ही उत्कृष्ट स्थिति हो सकती है अतः श्रीटारिकमिश्रकाययोगमे उत्कृष्ट स्थिति हा जवन्य और उत्कृष्टकाल एक समय वहा । पर ऐसा जीव निवृत्यपर्याप्र होगा । इससे सिद्ध हुआ कि लब्ध्यपर्याप्तक श्रीदारिक मिश्रकाययोगीके अनुत्कृष्ट स्थिति ही होती हैं। अब यदि कोई जीव तीन मोड़ा लेकर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोमे उत्पन्न हो तो उसके खुदाभवप्रहणप्रमाण कालमें से तीन समय और कम हो जायँगे अतः औदा-रिकमिश्रकाययोगमें अनुत्कुष्ट स्थितिका जयन्यकाल तीन समय कम खुद्दाभवप्रहण्पप्रमाण कहा। तथा इसके अनुकुष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्महर्त होता है यह स्पष्ट हो है। वैक्रियिकमिश्र-काययोगक पहले समयमे ही उत्कृष्ट स्थिति हो सकती है, अतः इसके उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उन्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा उत्कृष्ट स्थितिके इस एक समयको कम कर देने पर जो वैंकियिकिभश्रका एक समय कम अन्तर्महर्त काल होए रहता है वह अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगमे बानुत्कुष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्महर्त होता है यह स्रष्ट ही है । आहारकमिश्रकाययोगी, उपज्ञाससम्यग्हिष्ट और सम्यग्मिश्याहर्ष्ट जीवोके भी इसी प्रकार कथन करना चाहिये क्यों कि इनके भी पहले समयमे ही उन्कृष्ट स्थिति सम्भव है, अतः इनके उन्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय वन जाता है। तथा इस एक समयको कम कर देने पर उक्त मार्गणात्र्योंका जो एक समय कम अन्तर्महुर्त प्रमाण काल शेप बचता है वह उनकी अनुन्कृष्ट मिथतिका जबन्य काल है और उन्कृष्टकाल अपनी अपनी उन्कृष्ट स्थितिप्रमाण् अन्तर्महुर्त होता है यह स्पष्ट ही है। आहारककाययोगके पहले समयमे ही उत्कृष्ट म्थिति सम्भव हे अतः इसमे उत्कृष्ट म्थितिका जवन्य खोर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। जो जीव एक समय तक ब्याहारक काययांगके साथ रहकर दुसरे समयमें मरणादि निभिन्ताेमे अन्य योगको प्राप्त हो जाते है उनके अनुत्कृष्ट स्थितिका जपन्य काल एक समय पाया जाता है श्रतः श्राहारक काययागमे अनुत्कृष्ट म्थितिका जघन्य काल एक समय कहा । तथा उत्कृष्टकाल अन्तर्महर्त आहारक कायरांगक उत्हत्य कालकी अपेत्तामे कहा । अपगतवेदी, अकपायां, सदमसांपरायिक संयत और यथाच्यातसंयत इन मार्गणात्रोकी स्थिति त्राहारक काययागके समान हैं अतः इसमे उत्कृष्ट और अनुकष्ट स्थितिका काल आहारककाय योगके समान कहा। कार्मणकाय योगके पहले समयमे उन्कृष्ट स्थिति सम्भव है अतः इसमे भी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा कार्मणकाययांगका जघन्य काल एक समय आर उत्फ्रुप्टकाल तीन समय है त्रनः इसमे अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय त्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय कहा है।

\$ ६१. स्त्रीवदी जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्महर्त हैं। तथा अनुस्कृष्ट स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार पुरुषवदी जीवोंके कहना चाहिये।

- ९६२. चत्तारिकसाय० मोह० उक्क० अणुक्क० जह० एगसमञ्चो, उक्क० अंतोम्०।
- ६३. विहंग॰ सत्तमपुहविभंगो । णविष् अणुक्कः उक्कः तेत्तीस सागरोः अंतोमुहृत्वणाणि । आभिणि०-सुद्रः अहि गोहः उक्कः केवं । जहण्णुक्कः एगसम्भा । अणुक्कः जहः अंतोमुः, उक्कः खाविष्ट्रसागरोवमाणि सादिरेयाणि । एवमोहिदंसः सम्मादिः वेद्यसम्मादिः । णविष् वेद्यसम्मत्तिम अणुक्कः छाविष्टि-सागरोवमाणि । मणपज्ञः सोहः उक्कः जहण्णुक्कः एगसम्भा, अणुक्कः जहः अंतोमुहुत्तं, उक्कः पुत्वकोडी देस्णा । एवं संदर्-परिहारः संजदासं नदः । साधा-इय-देदो० एवं चेव । णविष्ठ अणुक्कः जहः एगसम्भा । चक्षः तस्पज्ञत्तभंगो ।

विशेषार्थ स्त्रीवंद और पुरुषवंदमे उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अन्तर्महर्त ओघके समान घटिन कर लेना चाहिये। जो स्त्रीवंदसे अपगतवंदको प्राप्त हुआ जीव उपशमश्रेणीसे उतरते हुए एक समयके लिये स्त्रीवंदी हुआ और दृष्णे समयमे मरकर अन्यवंदी हो गया उस स्त्रीवंदीके अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। या जिस स्त्रीवंदी या पुरुषवंदी जीवने उत्कृष्ट स्थितिके पदचान एक समयके लिये अनुत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त किया और दृसरे समयमे वह मर कर अन्यवंदी हो गया उस स्त्रीवंदी या पुरुषवंदीके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी पत्योपमशतपृथक्त्व व सागरोपमशतपृथक्त्व स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

६२. चारों कपायवाले जीवोंके मोहनीयकी उन्हुए श्रोर खनुत्हुए स्थितिका जवन्य सत्त्वकाल एक समय खीर उन्हुए सत्त्वकान अन्तर्मुहुर्न है। नात्पर्य यह है कि चारो कपायोगा जघन्य काल एक समय खीर उन्हुए काल अन्तर्मुहुर्न है खनः इनमे उक्त प्रमाण काल बन जाना है।

१६३. विभंगज्ञानी जीवोंक सानची पृथिवींके समान जानना चाहिये। पर इतनी विशेषता है कि इनके अनुन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट सन्वकाल अन्तर्मुहर्न कम तेतीस सागर है। श्राभिनिवाधिकज्ञानी श्रुतज्ञानी और अविधिज्ञानी जीवोंके मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिका सन्वकाल कितना है ? जयन्य और उन्कृष्ट सन्वकाल एक समय है। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका जयन्य सन्त्वकाल अन्तर्मुहर्त और उन्कृष्ट सन्वकाल साधिक छ्यासट सागर है। इसी प्रदार अविदर्शनी, सम्यन्द्रि और वेदकसम्यन्द्रि जीवोंके कहना चाहिये। इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यक्त्यमें अनुन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट सन्त्वकाल पूरा छ्यासट सागर है। मनःपर्यवज्ञानी जीवोंके मोहनीयका उन्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उन्कृष्ट सन्त्वकाल एक समय है। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका जयन्य सन्त्वकाल अन्तर्मुहर्म श्रीर उन्कृष्ट सन्त्वकाल एक समय है। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका जयन्य सन्त्वकाल अन्तर्मुहर्म श्रीर उन्कृष्ट सन्त्वकाल कुछ कम एक पूर्वकांदि है। इसी प्रकार संयत, परिहारियग्रुद्धिसंयत और संत्रतासंयत जीवोंके जानना चाहिय। तथा सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिए। पर

केव० जह० उक्क० केव० जहण्यु० इति पाठः।

# १६ प्रत्यक्षके कितने भेद हैं?

१६ दो भेद हैं-एक सांव्यवहारिकप्रत्यक्ष दृसरा पारमार्थिकप्रत्यक्ष ।

१७ सांव्यवहारिकप्रत्यक्ष किसको कहते हैं?

१७ जो इन्द्रिय और मनकी सहायतासे पदार्थको एकदेश स्पष्ट जानै।

१८ पारमार्थिकप्रत्यक्ष किसको कहते हैं ?

१८ जो विना किसीकी सहायताके पदार्थको स्पष्ट जाने।

१९ पारमार्थिकप्रत्यक्षके कितने भेद हैं?

१९ दो भेद हैं-एक विकलपारमार्थिक दूसरा स-कलपारमार्थिक ।

२० विकलपारमार्थिकप्रत्यक्ष किसको कहते हैं? २० जो रूपी पदार्थोंको विना किसीकी सहायता-के स्पष्ट जाने।

२१ विकलपारमार्थिकप्रत्यक्षके कितने

९ लक्ष्यके एकदेशमें लक्षणके रहनेको, अव्याप्ति

दोष कहते हैं। जैसे पशुका रुक्षण सींग।

१० अतिव्याप्ति दोष किसको कहते हैं।

१० ठक्ष्य और अठक्ष्यमें रुक्षणके रहनेको अतिव्याप्ति दोष कहते हैं। जैसे—गौका रुक्षण सींग।

११ अठक्ष्य किसको कहते हैं।

११ ठक्ष्यके सिवाय दूसरे पदार्थोंको अठक्ष्य कहते हैं।

१२ असंभवदोष किसको कहते हैं।

१२ उक्ष्यमें रुक्षणकी असंभवताको असम्भवदोष
हते हैं।

१३ प्रमाण किसको कहते हैं।

१४ प्रमाणके कितने भेद हैं।

१४ दो भेद हैं, एक प्रत्यक्ष और दूसरा परोक्ष।

प्रत्यक्ष किसको कहते हैं?

जो पटाथको स्पष्ट जाने ।

६ ६४. किण्ह०--णील०--काउ०--तेउ०--पम्म० मोह० उक्क० त्रोघभगो । अणुक्क० जह० अंतोमु० एगसमञ्चो, उक्क० सगुक्कस्सिहिदी । मुक्क० मोह० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमञ्चो । अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीस सागरोव-इतनी विशेषता है कि इनके अनुःकृष्ट स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल एक समय होता है। चत्रु-दुर्शनी जीवोंमें त्रसपर्याप्रकोंके समान जानना चाहिये।

विशेपार्थ-विभंगज्ञान पर्याप्त अवस्थामे ही होता है ऋतः इसके ऋनुत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट काजको अन्तर्म्हृतं कस तेतीस सागर कहा। शेष कथन स्तम है। आभिनिवोधिक ज्ञानी,श्रुतिज्ञानी अौर अवधिज्ञानी जीवोके उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त होना पहले समयमे ही सम्भव है, अत: इनके उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य श्रोर उत्कृष्टकाल एक समय कहा। जो जाव त्र्यन्तर्मृहृतं तक सम्यग्हिष्ट रहा पश्चात् सम्यक्त्वसे च्युत हो गया या सम्यक्त्व प्राप्तिके बाद जिसने अन्तर्मृहर्तमे केवलज्ञान प्राप्त कर लिया उसके उक्त तीन ज्ञानोंके रहते हुए अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तर्महूर्त प्राप्त होता है । तथा ऋामिनिबोधिकज्ञान, अतज्ञान और अविधिज्ञानका उत्कृष्टकाल चार पूर्वकोटि ऋधिक छ्यासट सागर है अतः इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर कहा। यहाँ पर अधिकसे चार पूर्वकोटियोका प्रहण करना चाहिये। अवधिद्र्यनी, सम्यग्द्रष्टि और वेदकसम्यग्द्रष्टि जीवके भी इसी प्रकार उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका काल कहना चाहिये । किन्तु वेदकसम्यक्त्व-का उत्कृष्ट काल पूरा छवासठ सागर है, खतः इसके । खनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल पूरा ब्रया-सठ सागर होगा । जो जीव सनःपर्ययज्ञानको प्राप्त होता ८ उसके प्रथम समयमे ही उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है अतः मनः पर्यवज्ञानीके उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा मनःपर्याञ्चानका जवन्य काल अन्तर्महुते और उत्कृष्ट काल कुछ कम पूर्वकोटि प्रमाए है, अतः इसके अनुत्कृष्ट स्थितिक। जघन्य काल प्रन्तमु हुर्न और उत्कृष्ट काल कुंब्र कम पूर्वकोटि-प्रमाण कहा । यहां कुछ कमसे त्राठ वर्ष अन्तर्भु हुते लिया है । पूर्वकोटिमेसे इतना काल कम कर देना चाहिये । संयत, परिहारविशुद्धिसंयत श्रोर संयतासंयतकी स्थिति मनःपर्ययज्ञानकं समान हं अतः इनमे उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिकं कालका मनःपर्ययज्ञानकं समान कहा । परन्तु इतनी विदेशिता है कि परिहारविद्युद्धिसयतका उत्कृष्ट काल ३८ वर्प कम एक पूर्वकोटि वप है ओर संयतासंयतका उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त कम एक पूर्व कोटि वर्ष है। जो जीव उपशमश्रेणीसे उतर कर और एक समय तक नोवें गुणस्थानमें रह कर मर जाता है उसके सामायिक और छेदो-पस्थापना संयतका जवन्य काल एक समय पाया जाता है, अतः इनके ऋनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल एक समय वन जाता है । शेष कथन मनःपर्ययज्ञानक समान है । त्रसपर्याप्रसे चन्नः दर्शनीकी स्थितिम अन्तर नहीं है अतः चलुदर्शनीके उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका काल त्रस-पर्याप्तके समान कहा ।

\$ ६४. कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापातलेश्यावाले, पीनलेश्यावाले श्रीर पद्मलेश्यावाले वाले जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्वकाल श्रीष्ठक समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य सत्त्वकाल प्रारंभकी तीन लेश्यावालोंके अन्तर्मृहर्त श्रीर पीत तथा पद्मलेश्यावालोंके एक समय है। तथा उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। शुक्ल लेश्यावाले जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है।

### माणि सादिरेयाणि । एवं खड्य० वत्तव्वं ।

६६५. सासण० मोह० उक्क० जहण्णुक्क० एगसभञ्जा । अणुक्क० जह० एग-समञ्जो, उक्क झ आविष्ठयात्रो । सिष्णि० पुरिसभंगो । असिष्णि० एइंदियभंगो । आहारि० मोह० उक्क० ग्रोधभंगो । अणुक्क० जह० एगसमञ्जो, उक्क० सगिहिटी । अणाहारि० कम्मइयभंगो ।

# एवमुक्कम्सकालाणुगमो समन्तो ।

तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल अन्तर्महूर्त और उत्कृष्ट सत्त्वकाल साधिक तेनीस सागर है । इसी प्रकार जायिक सम्यग्हण्ट जीवोक कहना चाहिये ।

विशेषार्थ—मरते समय यदि अगुभ लेश्या हो तो दूसरी पर्यायमे उत्पन्न होने पर अन्तर्मु - हुन काल तक वही लेश्या वनी रहती है पर पीन आर पद्म लेश्याकी यह वान नहीं, क्योंकि उक्त लेश्यावाला यदि कोई देव निर्यचोमें उत्पन्न होता है तो उसके तिर्यच पर्यायमें कापीत लेश्या हो जाती है, अतः तीन अगुभ लेश्याओं अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल अन्तर्मुहृते ही प्राप्त होता है। तथा पीत और पद्म लेश्यामें अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय भी प्राप्त हो जाता है। तथा पीत आप पद्म लेश्यामें अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य मायमें माहनीयका उत्कृष्ट वंघ किया और अन्तर्क एक समयमें पीत तथा पद्म लेश्याके साथ अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाला हो गया। किर मरकर निर्यचोमें उत्पन्न होने लेश्या पलट गई। इस प्रकार पीत व पद्मलेश्यामें अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्तिका जयन्य काल एक समय होता है। शुक्त लेश्याके तो पहले समयमें ही उत्कृष्ट स्थिति सम्भव हें अतः इसके उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। लेश्याओंमें को। कथन सुगम है। चायिकसम्यवन्य की रिर्थात शुक्त लेश्याके समान है, अतः इसके कथनको शुक्त लेश्याके समान कहा। इतनी विशेषता है कि शुक्त लेश्याका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहृते कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीम सागर है। अतः इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कहते समय अपना अपना काल कहना चाहिये।

§ ६५. सासादनसम्यग्द्राष्ट्र जीबोक मोहनीयकी उन्द्रष्ट स्थितिका जघन्य और उन्द्रष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अनुन्द्रष्ट्र स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उन्द्रष्ट्र सन्वकाल एक समय है। तथा अनुन्द्रष्ट्र स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उन्द्रष्ट्र सम्बद्धां जीबोक एकेन्द्रियोक समान जानना चाहिए। आहारक जीबोक मोहनीयकी उन्द्रष्ट स्थितिका सत्त्वकाल आघक समान हैं। तथा अनुन्द्रष्ट स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उन्द्रष्ट्र सत्त्वकाल अपनी स्थितप्रमाण हैं। अनाहारक जीबोक कार्मण काययोगियोक समान जानना चाहिये।

विशोपार्थ—सासादनका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह श्राविल है, श्रतः इसके श्रानुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आवि त्रिप्रमाण प्राप्त होता है। किन्तु सासादनसम्यग्दृष्टिकं उत्कृष्ट स्थिति पहले समयमे ही प्राप्त हो सकती है। श्रतः इसके उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। जो श्राहारक उपान्त्य समयमे उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करके श्रन्त समयमे श्रनुत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करके श्रन्त समयमे श्रनुत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करता है श्रोर तीसरे

६६. जहण्णए पयदं दुविहो णिहेसो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण मोह० जह० के० ? जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ । अजहण्ण० अणादिओ अपज्जविसदो अणादिश्रो सपज्जविसदो वा । एवमचक्ख०-भविस० । सादिसपज्जविसदभगो अजहण्णस्स णित्थः जहण्णिहिदीदो चिरमसभयसुहु भसांपगइयखवयस्स श्रजहण्णिहिदीए णिवायाभावादो । उवसंतकसाए मोहोदयविज्ञिदे हेटा णिविदिदे अजहण्णिहिदीए सादिनं किण्ण घेप्पदे ? ण, उवसंतकसाए वि मोह० श्रजहण्णिहिटीए सब्भावुवलंभादो ।

६७. त्रादेसेण णिरय० मोह० जह० जहएणुक्क० एगसमओ । अजहएण०

समयमे मरकर त्र्यनाहारक हो जाता है उसके त्र्याहारकके त्र्यनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है त्र्योर उत्कृष्टकाल त्र्यंगुलके त्र्यसंख्यातयें भाग प्रमाण त्र्यसंख्यातासंख्यात त्र्यव-सर्पिणी उत्सर्पिणी प्रमाण है। रोप कथन सुगम हैं।

इस प्रकार उत्कृष्ट कालानुगम समाप्र हुआ।

ृद्दः अय जघन्य कालानुगम प्रकरण प्राप्त है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अंधिनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेसे आघकी अपेचा मोहनीयकी जयन्य स्थितिका कितना सत्त्वकाल है? जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका सत्त्वकाल घनादि अनन्त और अन्यादि-सान्त है। इसी प्रकार अचलुदर्शनी और भव्य जीयोंके जानना चाहिये। अजघन्य स्थितिका सादि-सान्त भंग नहीं है, वयोंकि चपक सूद्रममापराधिक जीवके अन्तिम समयमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति होती है और उसपे जीवका अजघन्य स्थितिमें पतन नहीं होता। अर्थात् सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य स्थिति के चित्र सुद्रमसापरायिक जीवके अन्तिम समयमे होती है और वह जीच तद्रनन्तर चीएसोह हो जाता है पुनः वह अजघन्य स्थितिमें लीटकर नहीं जाता है. अतः अजघन्य स्थितिका सादि-सान्त भंग नहीं है।

शंका-मोहनीय कर्मके उदयसे रहित उपशान्तकपाय जीव जब नीचे दसवें गुण्स्थानमें आता है तब उसके अजवन्य स्थितिका सादिपना क्यों नहीं लिया जाता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि उपशान्तकपायमे भी मोहनीयकी अजवन्य स्थितिका सद्भाव पाया जाता है, अतः सामान्यकी अपेदाा मोहनीयकी अजवन्य स्थितिमें सादि-सान्त भंग नहीं बनता।

विशेषार्थ च्रापक मृद्मसाम्पराय गुण्म्थानक अन्तिम समयमें सूद्म लोभका उद्यक्ष्य निपंक रोप रहता है जो उसी समय फल देकर निर्जाण हो जाता है, अतः आघमे मोहकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा पूरे मोहनीयका अभाव होकर पुनः उसका सद्भाव नहीं होता, अतः आघमे मोहकी अजघन्य स्थितिका काल अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त ही होता है, सादि-सान्त नहीं। इनमें से अनादि-अनन्त काल अभव्योंकी अपेद्मा कहा और अनादि-सान्त काल भव्योंकी अपेद्मा कहा। यह आघ्यस्पणा अचनुउजन्याले और भव्योंके अविकल वन जाती है, अतः इनकी प्रस्पणाकी आघ्येक समान कहा। यहा इतना विजेष जानना चाहिये कि भव्योंके मोहकी अजघन्य स्थितिका अनादि-अनन्त विकल्प नहीं बनता। अथवा जो भव्य अभव्योंके समान हैं उनकी अपेद्मा यह विकल्प भव्योंके भी वन जाता है।

ई ६७. अ।देशसे नरकगतिमे माहनीयकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्क्रद्ध

जह॰ एगसमञ्जो, उक्क॰ स गुक्कम्सिटिदी । पटमाए ज॰ जहण्युक्क० एगसमञ्जो । अज॰ जह० एयसभञो, उक्क॰ सागरीवर्ध । विद्यादि जाव छिट त्ति सोह॰ ज॰ जहण्युक्क॰ एगसमञो । अजहण्य॰ जहण्येण जहण्यिदिती, उक्कम्सेण उक्कम्सिटिदी । सत्त्वाए पुढवीए सोह॰ जहण्यदिती जह० एगसभञो, उक्क॰ अंतोमु॰ । अजहण्य॰ ज॰ अंतोमु॰, उक्क॰ नेत्तीमं सागरीवर्माण ।

सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी उत्कृष्ट स्थितिका। है। पहले नरकमें मोहनीयकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक सागर है। दूसरे नरकमें लेकर छटे नरक तक प्रत्येक नरकमें मोहनीयकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल अपनी अपनी जयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल अपनी अपनी जयन्य स्थितिका प्रमाण है । तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सात्वें नरकमें मोहन्वयकी जयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तमुंहर्त है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल यन्त्रकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तमुंहर्त है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल यन्त्वकाल यन्त्वकाल स्थाप और उत्कृष्ट सत्त्वकाल वेतीम सागर है।

विशेषार्थ- जो असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव हजार सागर प्रमाण अकृष्ट स्थितिवंधमेले. पन्थी-पमके संख्यातवे माग प्रमाण कम जधन्य स्थिति सत्कर्मको प्राप्त करके प्रमः जबन्य स्थिति सत्त्व होनेक समय हो जघन्य स्थिति सत्त्वके समान स्थितिको बांयकर दो समय विषह करके नरकगति में उत्पन्न हाता है त्य्रीर विग्रहमें अमंज़ी पंचेन्द्रियके जपन्य स्थिति मत्त्वसे हीन स्थितिका बंब करता है उसके दुसरे विश्वहके समय मोहनीयकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है,अतः तरकमे जघन्यस्थितिका जघन्य और अकुष्टकाल एक समय कहा। तथा ऐसे नारकीके पहले समयमे अजघन्य स्थित रहती है श्रतः नरकमे अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय कहा । तथा नरकमे अजयन्य स्थिति-का उन्कृष्ट काल नरककी उन्कृष्ट स्थिति प्रमाण होता है यह स्पष्ट ही है। सामान्य नारिकयोंके समान पहले नरकमं भी मोहकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय तथा अज-घरय स्थितिका जघरय काल एक समय घटिन कर लेना चाहिये। पहले नरककी उत्झाट स्थिति एक सागर है ऋतः यहा ऋजधन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल एक सागर कहा । दुसरे नरकमे लेकर छुठे नरक तकके नार्राकयोंके मोहकी जधन्य स्थितिका प्राप्त होना भवके ऋत्तिम समयमे ही सम्भव है अतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य त्यार उत्क्रप्ट काल एक समय कहा । किन्तू यह जघन्य स्थिति श्रपने श्रपने नरककी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवके ही प्राप्त हो सकती है सो भी सबके नहीं, ऋतः अज्ञचन्य स्थितिका जचन्य काल अपने अपने तरककी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्टकाल श्चपने अपने नरककी उत्क्राप्ट स्थितिप्रमाण कहा । सातवें नरकमे उत्कृष्ट श्रायवाला जो नारकी पर्याप्ति पूर्ण करके अन्तर्मु हुर्न कालके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हाकर दूसरे अन्तर्मु हुर्नके द्वारा अन-न्तानुबन्धी स्थितिसत्त्रमंकी विसंयाजना कर जीवन भर सम्यक्त्वके साथ रहा और अ न्तुमु हुर्त आय शेप रहने पर मिण्यात्वको प्राप्त हुआ पुनः मिण्यात्वमे जितने काल तक शक्य हो उतने काल तक स्थिति सत्तर्मसे हीन वंध करके अगले समयमे सत्त्व स्थितिसे अधिक स्थिति वंध करंगा, उस जीवके जवन्य स्थितिका जवन्यकाल एक समय प्राप्त होता है और जो सत्तामें स्थित स्थितिके समान स्थितिवाले कर्मका बंध करना रहता है उसके जघन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्त-

- ६ ६८. तिरिक्ख० मोह० जहण्णिहिदी ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । अज-हण्ण० ज० एगसमओ, उक्क० असंखेजा लोगा । एवं मिद्-सुद्अण्णाण०-असंजद्०-अभव०-मिच्छादि०-असिण्णि त्ति वत्तव्वं । णवीर असिण्णिविज्ञिएमु अज ज० अंतोमु० ।
- ३ ६६. पंचिदियतिरिक्खचउक्कम्मि मोह० जहण्णहिदी जह० एगसमञ्जो, उक्क० वे सपया । अजहण्ण० जह० खुदाभवग्गहणं विसमऊणं, अंतोमुहुत्तं विसमऊणं ! एत्थ

र्मु हुर्न होता है। तथा जघन्य स्थितिके बाद जो अन्तर्मु हुर्न काल रोप रह जाता है वह अजघन्य स्थितिका जघन्यकाल है। तथा अजघन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल सातवे नरककी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण होता है, यह स्पष्ट ही है।

\$ ६८. तिर्यंच गतिमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और त्रिक्ट सत्त्वकाल खन्तर्मुहर्त है। तथा खजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल खन्तर्म्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार मत्यज्ञाती, श्रुताज्ञानी, असंयत, अभव्य, मिश्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोके कहना चाहिये। इतनी विशेषता है कि असंज्ञियोंको छोड़कर शेष मत्यज्ञानी खादि जीवोके अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल अन्तर्मुहर्त है।

विशोपार्थ-तिर्यंचोमे माहनीयकी जघन्य म्थिति एकेन्द्रियोके प्राप्त होती है और वह कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मु हुन काल तक रहती है; क्योंकि प्रत्येक स्थिति-का जघन्य बन्धकाल एक समय और उत्कृष्ट बन्धकाल अन्तर्मु हुन है। अतः इनके मोहनीयकी जयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त कहा। नथा जो तिर्यंच जधन्य स्थितिके बाद एक समय तक अजधन्य स्थितिके साथ रहा और मरकर दूसरे समयमें अन्य गतिको प्राप्त हो गया उसके अजधन्य स्थितिका जधन्य काल एक समय प्राप्त होता है । तथा तिर्यच पर्यायमे मोहनीयकी अजयन्य स्थितिके साथ रहनेका उस्कृष्ट काल असंख्यात लोक-प्रम रा है, अतः इनके अजयन्य स्थितिका उन्कृष्ट काल ध्रसंख्यात लोक प्रमाण कहा । यह जो उपर सामान्य तिर्थंचोके जघन्य त्रोंर अजघन्य स्थितिका काल कहा वह एवेन्द्रियोंकी प्रधानतासे कहा : ख्रोर एकेन्द्रिय पर्यायके रहते हुए मत्यज्ञान, श्रुताज्ञान, असंयम, अभव्य, मिथ्याहिट्ट त्रीर असंजो ये मार्गगुण सम्भव है ही त्रातः इनका कथन निर्यचोके समान जानना । किन् ऊपर अजधन्य स्थितिका जधन्यकाल जो एक समय कहा है वह ऋमंज्ञी खबस्थाम ही प्राप्त होता है शेप मार्गगुश्योमे नहीं, क्योंकि जो जीव जबन्य स्थितिके बाद एक समय तक अजघन्य स्थितिको प्राप्त हुन्ना च्योर तदनन्तर मरकर अन्य गतिको प्राप्त हो जाता है इसके असंज्ञी मार्गणा तो बदल जाती है पर ऊपर कही हुई मार्गणाएँ नहीं बदलती अतः मत्यज्ञानी आदि उपर्युक्त श्रेप मार्गणाश्रोमे अजधन्य स्थितिका जधन्य काल अन्तमु हुर्न जानना चाहिये ।

§ ६६. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, योनिमती और लब्ध्यपर्याप्त इन चार प्रकारके तिर्यचोमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है और उत्कृष्ट मन्त्रकाल दो समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य मन्त्रकाल पंचेन्द्रिय तियच और लब्ध्यपर्याप्त पंचेन्द्रियित्यचोमें दो समय कम खुद्दाभवयहण प्रमाण और शेप दो प्रकारके तिर्यचोमें दो समय कम अन्तमु हुर्त है। यहां मूलोच्चारणाका पाठ है कि उक्त चारो प्रकारके तिर्यचोके अजघन्य

मृजुचारणापाटों जह० एयसमञ्जे ति । तत्थायमहिष्पाओ एईदिएसु समयुत्तरमसण्णि-हिदिं सण्णिहिदिघादवसेण काद्ण गटम्स पदमित्रगहे तदुवलंभसंभवो ति । उक्क-स्सेण सगिहिदी ।

६ ७० मणुमनिय० मोह० जहण्णहिटी जहण्युक्त० एगममओ । अजह० जह०

स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है। इसका यह अभिप्राय है कि जो संज्ञी एकेन्द्रियोमें उत्पन्न हुआ और वहाँ इसने संज्ञीकी स्थितिका घात किया। अनंतर वह मरवर एक समय अधिक असंज्ञीके योग्य स्थितिक साथ उक्त चार प्रकारके तिर्यचोमे उत्पन्न हुआ तो उसके पहले विग्रहमें अज्ञचन्य स्थितिका जघन्य बाल एक समय पाया जाता है। तथा उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोके अज्ञचन्य स्थितिका उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण् है।

विशेपार्थे – जो एकेन्ट्रिय दो मोड़ा लेकर पंचेन्द्रिय तिर्यंचचतुष्कमे उत्पन्न होते हैं उनके पहले और दूसरे समयमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति सम्भव है अत. इनके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जबस्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय कहा । तथा इन दो समयोंको . खदाभवप्रहराष्ट्रमारा अन्तर्मु हुर्त कालमे घटा देने पर जो दो समय कम खदाभवप्रहराष्ट्रमारा काल डोप रहना है वह पंचेन्द्रिय तिर्यच श्रीर पंचेन्द्रिय लब्ब्यपर्याप्रक तिर्यचोकी अजघन्य स्थितिका जबन्य काल होता है। तथा जो दो समय कम अन्तर्भुहर्त काल शेए रहता है वह पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय निर्यंच योनिमनी जीवोंकी अजधन्य स्थिनिका जधन्य काल होना है। इन चार प्रकारके तिर्यचोके अजधन्य स्थितका जधन्य काल एक समय होता है ऐसा मुलानचारणाम पाट पाया जाता है मो उसका यह तात्पर्य है कि पहले कोई एक मंजी जीव एकेन्द्रियोमें उत्पन्त हुआ। अनन्तर उस एकेन्द्रियने मंत्रीकी स्थितिका घात किया और ऐसा करते हुए जब उसके त्र्यसंजीकी जघन्य स्थितिमे एक समय अधिक स्थिति शेष रह गई तव वह मरकर उक्त चार प्रकारक निर्यचोमे उत्पन्न हो गया, इस प्रकार इन चारो प्रकारके निर्यचौके पहले मोड्के समय अजयन्य स्थिति प्राप्त हो गई और स प्रकार अजयन्य स्थितिका भी एक समय काल वन जाता है। बात यह है कि एकेन्द्रियोमें लेकर अमंजी तक जो जीव मर कर संज्ञियोंमें उत्पन्न होते है उनके अनाहारक अवस्थामे असंजीके योग्य स्थितिका ही बन्ध होता है। हॉ ऐसे जीवोंके शरीर ग्रहण करनेके समयसे लेकर संज्ञियोंके योग्य स्थितिका बन्ध होने लगता है। अतः ऐसे संज्ञी र्जावोंके पहले खोर दुसरे मोड़ेमे असंज्ञियोंका जवन्य स्थिति भी पाई जाती है और यही इनकी जवन्य स्थित हो जाती हैं। अब यदि कोई जीव एक समय ऋधिक असंज्ञियोकी जवन्य स्थितिके साथ संज्ञियोमे उत्पन्न हुन्ना तो उसके पहले मांडुमे अजयन्य स्थिति ही कही जायगी। यही सबव हैं कि मुलानचारणामे उक्त चार प्रकारके तिर्यचांके अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय भी माना है। तथा उक्त चार प्रकारके तिर्यचोमें जिसके जितनी कायस्थिति हो उतनी उनके अजघन्य म्थितिका उत्कृष्ट काल जानना चाहिये। किसके कितनी कायस्थिति है यह ऋन्यत्रसे जान लेना चाहिये।

्र ७०. सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट मत्त्वकाल एक समय है । तथा अजघन्य खुद्दाभवग्गहणं अंतोम्रुदुत्तं, उक्क० सगिंददी । मगुसअपज्ज० पिंदियतिरिक्खञ्चप-जन्नभंगो ।

९७१. देव० मोह० जहण्णिहिदी जहराणुक्क० एगसमओ । अजह० जह० एगस-मओ, उक्क० सगिहिदी । भवण०-वाण० मोह० जहण्णिहिदी जहण्णुक्क० एयसमओ । अजह० जह० एयसमओ, उक्क० सगसगुक्कस्सिहिदी । जोदिसियादि जाव सव्वह० ति जह०हिदि० जहराणुक्क० एगसमओ । अजहण्ण० जहराणुक्क० जहराणुक्कस्सिहिदी ।

स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल सामान्य मनुष्योंके खुद्दाभवग्रहण्प्रमाण श्रीर शेप दोके श्रन्तर्मुहूर्त हे तथा उत्कृष्ट सत्त्वकाल श्रपनी श्रपनी स्थितिप्रमाण है । लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिका काल पंचेन्द्रियतिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान जानना।

विशेषार्थ—मामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल जो एक समय वतलाया है सो इसका खुलासा जिस प्रकार अाघप्ररूपणांके समय कर आये हैं उस प्रकार कर लेना चाहिये। तथा सामान्य मनुष्यका जघन्य काल खुदानवप्रहण्यमाण और शेप दो प्रकारके मनुष्योंका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्त है, अतः इनके अजघन्य स्थितिका जघन्य काल उक्त प्रमाण कहा। तथा अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट कायस्थितिप्रमाण होता है यह स्पष्ट ही है। इस विषयमे लब्ध्यपर्याप्त मनुष्यकी स्थिति लब्ध्यपर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यचके समान है, अतः इसके जघन्य और अजघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल लब्ध्यपर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यचके समान है तिर्यचके समान कहा।

\$ ७१. देवोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी स्थिति-प्रमाण है। भवनवासी और व्यन्तर देवोंम मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिश्रमाण है। ज्योतिपियोसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंक जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल क्रमसे अपनी अपनी अपनी जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल क्रमसे अपनी अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिश्रमाण है।

विशेषार्थ—जिस प्रकार सामान्य नारिकयोके मोहनीयकी जघन्य श्रोर अजघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल घटित करके लिख श्राय हैं उसी प्रकार सामान्य देवोके घटित कर लेना चाहिए। तथा भवनवासी श्रोर ट्यन्तर देवोके भी इसी प्रकार जानना। विशेष बात इतनी हैं कि इनके अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रपनी श्रपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण होता है, क्योंकि इतने काल तक उनके मोहकी अजघन्य स्थिति पाई जा सकती है। ज्योतिषियोंसे लेकर सर्वार्थ- सिद्धि तकके देवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थिति भवके श्रनिम समयमें ही सम्भव है, श्रतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक ममय कहा। पर यह जघन्य स्थिति उत्कृष्ट अगयुवालेके होती है श्रोर वह भी सबके नही श्रतः श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल श्रपनी श्रपनी जघन्य स्थितिप्रमाण कहा।

- \$ ७२. एइंदिय॰ मोह॰ जह० के० ? जह० एगसमओ, उक० अंतोमुहुत्तं । अज॰ के॰ ? जह० एगसमओ, उक० असंखेजा लोगा। एवं मुहुमेइंदिय० । वादरे-इंदिय०—वादरेइंदियपज्ज० मोह० जहण्णिद्दि० के० ? ज० एगसमओ, उक० अंतोमु० । अजहण्ण० के० ? ज० एगसमओ, उक० सगिद्दि। वादरेइंदियअपज्ज० सहुमपज्ज० सहुमप्रज्ज० सोह जहण्णाजहण्णिद्दि। ज० एगसमओ, उक० अंतोमु० । एवं विगलिदियअपज्ज० पंचकायाणं वादरअपज्ज॰ सहुमप्रज्जतापज्जत्त-अंगलियमसम० वत्तव्वं।
- ६ ७२. विगलिंदिय-विगलिंदियपज्ञ० मोह० जहण्णिहिदी जह० एयसमञ्जो, उक्क० वे समयाः परन्थाणसामित्तावलंवणादो । अजहण्ण० जह० खुदाभवग्गहणं विसमऊणं अंतोमुहुत्तं विसमऊणं एगसमओ वा, उक्क० संखेज्ञाणि वस्ससहस्माणि ।
- \$ ७२. एकेन्द्रिय जीवोमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका मन्त्रकाल कितना है ? जघन्य सन्त्रकाल एक समय और उत्कृष्ट सन्त्रकाल अन्तर्मु हुत है । तथा अजघन्य स्थितिका मन्त्रकाल कितना है ? जघन्य सन्त्रकाल एक समय और उत्कृष्ट सन्त्रकाल असंख्यात लाकप्रमाण है । इसी प्रकार सृहम एकेन्द्रिय, जीवोके जानना चाहिए । वादरएकेन्द्रिय और वाहरएकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य सन्त्रकाल कितना है ? जघन्य सन्त्रकाल फक समय और उत्कृष्ट सन्त्रकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । जघन्य सन्त्रकाल एक समय और उत्कृष्ट सन्त्रकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्रक समय और उत्कृष्ट सन्त्रकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्रक जीवोमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका जवन्य सन्त्रकाल एक समय है । तथा उत्कृष्ट सन्त्रकाल अन्तर्मु हुत्ते है । इसी प्रकार धिकलेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्रक, पांचों स्थावरकाय वादर लब्ध्यपर्याप्रक, पांचों स्थावरकाय सृहमपर्याप्रक और लब्ध्यपर्याप्रक तथा औदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोके कहना चाहिये।
- विशेषार्थ—सामान्य एकेन्द्रिय श्रोर उनके जितने भेद प्रभेद हैं उनमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य स्थोर उन्हृष्ट काल नथा श्रज्जघन्य स्थितिका जघन्य काल सामान्य तिर्यनोके समान घटित कर लेना चाहिये। किन्तु अजघन्य स्थितिका उन्हृष्ट काल अपनी अपनी उन्हृष्ट स्थिति प्रमाण जानना चाहिये, क्योंकि जिसकी जितनी कायस्थित बतलाई है उसके उतने काल तक मोहनीयकी श्रज्जयन्य स्थिति पाई जा सकती है। किन्तु एकेन्द्रिय जीवोंके श्रज्जयन्य स्थितिका उन्हृष्ट काल श्रसंख्यान लोकप्रमाण ही होता है। तथा विकलत्रय श्रपयाप्त, पांचो स्थावरकाय वादर अपर्याप्त, पांचो स्थावरकाय सूद्म पर्याप्त श्रप्याप्त तथा श्रोदारिकमिश्र-काययोगी जीवोंके भी इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिये। किन्तु इनके श्रज्ज्यन्य स्थितिका उन्हृष्ट काल श्रन्तर्मु हुने होता है, क्योंकि इनका उन्हृष्ट काल इससे अधिक नहीं है।
- \$ ७३. विकलेन्द्रिय ऋौर विकलेन्द्रिय पर्याप्तक जीयोमे मोत्तीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय ऋौर उत्कृष्ट सत्त्वकाल दो समय है। यह काल परस्थान स्यामित्वका अवलम्बन करनेसे प्राप्त होता है। तथा मोहनीयकी अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल

९ ७४ पंचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस०-तसपज्ज० मोह० जहण्णिहिदी जहएगुक० एगसमओ । अजहण्ण० ज० खुदाभवग्गहणं अंतोमु०, उक्क० सगसगुकस्सिहिदी ।

ह ७५. पंचकायसहुमार्णं सहुमेइंदियभंगो । बादरपुढवि०-बादरआउ०-बादर-तेउ०-बादरबाउ०-बादरबणण्फदिपरोय० तेसि पज्जत्त० जहण्णिहिदी ज० एयसमुत्रो, उक्क० अंतोमु०। अजहण्ण० जह० एगसमुत्रो, उक्क० सगिहिदी । वण्फिदि०-णिगोद०

क्रमसे दो समय कम खुद्दाभवयहण प्रमाण त्रोर दो समय क्रम अन्तमुं हूर्त है या एक समय है स्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल संख्यात हजार वर्ष है।

विशेषार्थ—जिस एकेन्द्रियने हतसमुन्पत्ति कमसे विकलत्रयके यांग्य जघन्य स्थिति प्राप्त की अनन्तर वह मरा श्रांर दो मांडों साथ विकलत्रयों उत्पन्न हुआ तो उसके पहले और दूसरे मांडेमें जघन्य स्थिति पाई जाती है, अतः विकलत्रयके मांहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय कहा। यहां यह जो जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय वतलाया है सो जो जीव एकेन्द्रियोंमेंसे आकर विकलत्रयोंमें उत्पन्न होता है उनकी श्रपेचासे वतलाया है यही यहां परस्थान स्वामित्वका श्रवलम्बन है। तथा इन दो समयोंको खुहाभवप्रहाण्यमाण श्रोर अन्तर्मु हृत कालमेंसे घटा देने पर जो दो समय कम खुहाभवप्रहाण्यमाण काल श्रेप रहता है वह सामान्य विकलत्रयोंके मांहनीयकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल होता है। तथा जो दो समय कम श्रन्तर्मु हृते काल श्रेप रहता है वह पर्याप्त विकलत्रयोंके मांहनीयकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल होता है। तथा इन दोनो प्रकारके विकलत्रयोंके श्रजघन्य स्थितिका जा जघन्यकाल एक समय वनलाया है सो यह सूलाचारणाके पाठके श्रमुसार वत्ताया है श्रोर इसका खुलासा जिस प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यच चतुष्कके कर आये हैं उसी प्रकार यहां भी कर लेना चाहिये। उक्त दोनों प्रकारके विकलत्रयोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति संख्यात हजार वर्ष है श्रोर इतने कालतक इनके मांहनीयकी अजघन्य स्थिति प्राप्त होने वाधा नहीं श्राती है, श्रातः इनके श्रजघन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल श्रपनी श्रपनी स्थिति प्राप्त होने वाधा नहीं श्राती है, श्रातः इनके श्रजघन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल श्रपनी स्थिति प्राप्त हाने वाधा नहीं श्राती है,

\$ ७४. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस श्रोर त्रसपर्याप्तक जीवोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल खुद्दाभवप्रहण प्रमाण श्रोर अन्तर्मु हूर्त है। तथा उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति-प्रमाण है।

विश्रोषाधी-पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस श्रीर त्रस पर्याप्त जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थिति दशवें गुणस्थानके श्रन्तिम समयमे प्राप्त होती है, श्रतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। शेव कथन सुगम है।

३ ७५ पाँचो स्थावरकाय तथा उनके सूच्म जीवोंके सूच्म एकेन्द्रियोंके समान है। बादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक, वादर अप्रिकायिक, वादर वायुकायिक और बादर वनस्पति प्रत्येक शरीर जीवोंक तथा इन सब पर्याप्त जीवोंके जघन्य स्थितिका जवन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्मु हुर्त है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। वनस्पतिकायिक और

एइंदियभंगो । पंचिदियअप०-तस०अप० पंचि०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

६ ७६. पंचमण०-पंचविक मोह० जहण्णिहिटी जहएणुक० एयसमञ्जो । अज-हण्ण० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवमवगद०-अकसा०-सुहुमसांपराय०-जहा-क्खाद० वत्तव्वं ।

१७७. श्रोगलिय॰ मोह॰ जहण्णिहिदी जहण्णुक॰ एगसमञी। श्रजहण्ण॰ ज॰ एगसमञो, उनक॰ वावीस वासमहस्साणि देस्णाणि। वेउन्विय॰ मणजोगिभंगो। वेउन्वियमिस्स॰ मोह॰ जहण्णिहिदी जहण्णुकक॰ एगसमञो। श्रजहण्ण॰ जहएणुकक॰ अंतोमुहुनं। कायजागि॰ मोह॰ जहण्णिहिदी॰ जहएणुकक॰ एगसमञो। श्रजहण्ण॰ जह॰ एगसमञो, जहण्णिविहन्तियदुचिरमसभए कायजागेण पिरणद्मिम तदुवलंभादो। उकक॰ अणंतकालमसंखेजा पोग्गलपरियद्वा। एवं णवुंस॰ वत्तन्वं। आहार॰ मणजोगि-भंगो। श्राहारिमस्स॰ वेउन्वियिषस्सभंगो। कम्मइय० मोह० जहण्णिहिदी जह॰ ण्णुकक॰ एगसमञ्रो। अज॰ जह॰ एगसमञ्रो, उकक॰ तिण्णि समया।

निगाद जीवोंके एकेन्द्रियोके समान है। पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक और त्रस लब्ध्यपर्याप्तक जीवोके पंचेन्द्रियनिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान है।

\$ ७७. श्रोदारिक काययांगी जीवांमे माहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय हैं। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल कुछ कम बाइम हजार वर्ष हैं। वेकियिककाययांगी जीवोंक मनायांगी जीवोंक समान जानना चाहिये। वैकियिकमिश्रकाययांगी जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय हैं। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल श्रक्तमुं हुत्ते हैं। काययोगी जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय हैं। तथा श्रजघन्य म्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय हैं। जो जघन्य स्थिति विभक्तिके द्विचरम समयमें काययोगिक होनेपर पाया जाता हैं। तथा उत्कृष्ट सत्त्वकाल श्रक्ति कालप्रमाए हैं जिसका प्रमाए श्रसंख्यात पुग्दल परिवर्तन हैं। इसी प्रकार नपुंसकवेदी जीवोंक कहना चाहिये। श्राहारक काययोगी जीवोंके मेंहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय हैं। तथा कार्मणकाययोगी जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय हैं। तथा श्राहारक योगी जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य स्थितका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा श्राहारक स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है। तथा श्राहारक योगी जीवोंके मोहनीयकी जघन्य सत्त्वकाल एक समय है। तथा श्राहारक स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है। तथा श्राहारक स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है। तथा श्राहारक स्थितका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है।

विशेषार्थ-पांचों मनोयोगी और पांचों वचनयोगी जीवोंके दशवें गुणस्थानके अन्तमें जयन्य स्थिति प्राप्त होती है, अतः इनके जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्सृष्टकाल एक समय

६ ७८. वेदागुवादेण इत्थिवेदे० मोह० जह० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । अज० ज० एगसमञ्जो, उक्क० समिट्टिदी । पुरिस० मोह० जहण्णिटिदी जहण्णुक्क० एग-समञ्जो । अज० ज० अंतोमु०, उक्क० समिट्टिदी । ्∽

कहा । तथा पांचों मनोयोग श्रीर पांचों वचनयोगोका जघन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त है, अतः इनके अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमु हुत वन जाता है। अौदारिककाययोगमें अजघन्य स्थितिके उत्कृष्टकालमें विशेषता है। वान यह है कि अौदारिककाययांगका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहर्त कम वाईस हजार वर्ष है अत: इसमे ब्रजयन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल उक्त प्रमास प्राप्त होता है । शेप कथन मनोयोगियोंके समान है । वैक्रियिककाययांगमें भी जघन्य और श्रजघन्य स्थितिका काल मनायांगके समान जानना । किन्तु जो जायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणीसे सर्वार्थासद्भिमं जाता है उसके भवके ऋन्तिम समयमे यदि वैक्रियि ककाययोग हो तो वैक्रियिककाययोग में मोहनीयकी जवन्य स्थिति प्राप्त होती है, अतः वैक्रि-यिककाययोगमें इस प्रकार जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय घटित करके कहना चाहिये । वैक्रियिकमिश्रकाययागकं अन्तिम समयमे माहनीयकी जघन्य स्थितिका प्राप्त होना सम्मव है, अतः इसमें जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय कहा । तथा वैक्रियिकमिश्र-काययांगका जधन्य और उत्कृष्टकाल अन्तमु हूर्त है, अतः इसमें अजधन्य स्थितिका जधन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्म हुर्त कहा । काययोगमे जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल मनोयोगके समान घटित कर लेना चाहियं। काययोगमे ऋजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय होता है। इसका कारण यह बतलाया है कि जिस समय जबन्य स्थिति हुई उसके उपान्त्य समयमे यदि काय-योग हो तो काययोगमे अजधन्य स्थितिका जबन्यकाल एक समय पाया जाता है। उदाहरणार्थ दशवें गुणस्थानके ऋन्तिम समयमे जघन्य स्थिति होती है । वह यदि अन्तिम दो समयके लिये काययोगी हो जाय तो काययोगमे अजयन्य स्थितिका जधन्य काल एक समय प्राप्त हो जाता है। काययोगका उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है, अतः इसमे अजघन्य स्थितिका उत्कृष्टकाल उक्त प्रमाण कहा। काययागियाके समान नपुंसकाके कथन करना चाहिये। किन्त ज्ञपक नपुंसकके ऋन्तिम समयमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति होती है इतना विशेष जानना। आहारक काययोगमें मनोयोगीके समान जवन्य और अजवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्टकाल पाया जाता है। किन्तु इतना विशेष है कि आहारक काय गांगके अन्तिम समयमे मोहनीयकी जवन्य स्थिति होती है। शेप कथन सुगम है।

ें ७८. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदी जीवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी उत्कृष्ट स्थितिकाण्य है। पुरुपवेदी जीवोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल अन्त-मुहूर्त और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी उत्कृष्ट स्थितिकाण है।

विशेषार्थ—चपकके स्त्रीवंदके उदयके अनितम समयमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति होती हैं। इसी प्रकार पुरुपवेदकी अपेद्या जानना चाहिए, अतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। उपशम श्रेणींसे उतर कर जो जीव एक समयके लिये स्त्रीवंदी हुआ श्रोर दूसरे समयमें मरकर देव हो गया उसके अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता

 ७६. चत्तारिकसाय० मोह० जहण्णाहिदी जहराणुक्क० एगसमओ । अजह० ज० एगसमओ, उक्क० अंनोमु० ।

\$ ८०. श्राभिणि०-मुद्०-श्रोहि० मोह० जहण्णहिदी जहएणुक्क० एगसमओ । अजह० जहण्णुक्कस्सेण जहण्णुक्कस्महिदी । एवं मणपज्जव०-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार०--संजदासंजद०--ओहिदंस०-मुक्कले०-सम्मादि-खइय०-वेदग० वत्तव्वं । विहंग० जह० जहएणुक्क० एयसमओ । अजह० जह० एगसम्ब्रो, उक्क० सगहिदी । चक्ख० तसपज्जत्तभंगो ।

हैं। तथा पुरुपवेदका जघन्य काल ऋन्तर्मु हुर्न हैं,ऋतः पुरुपवेदमे ऋजघन्य स्थितिका जघन्य काल ऋन्तर्मु हुर्न कहा । शेष कथन सुगम है ।

६५६. चारो कपायवाले जीवोकं मोहनीयकी जयन्य स्थितिका जयन्य श्रीर उत्कृष्ट सत्त्व-काल एक समय है। तथा श्रजघन्य स्थितिका जयन्य सत्त्वकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्मु हुने हैं।

विशेषार्थ- त्रपक जीवके अपनी अपनी कपायके अन्तिम समयमे मोहर्नायकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है, अतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा प्रत्येक कपायका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्महूर्त है, अतः इनमें अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्महूर्त कहा।

\$ ८०. त्राभिनियाधिकज्ञानी, श्रुनज्ञानी त्रोर अवधिज्ञानी जीयोंके मोहनीयकी जयन्य स्थितिका जघन्य त्रीर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय त्रीर अजघन्य स्थितिका जघन्य त्रीर उत्कृष्ट सत्त्वकाल क्रममे त्रपनी अपनी जघन्य त्रीर उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार मनःपययंज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, श्रुक्षलेश्यावाले, सम्यग्हिष्ट, चायिकसम्यग्हिष्ट त्रीर वेदकसम्यग्हिष्ट जीवोंके कहना चाहिये। विभंगज्ञानी जीवोंके जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा स्रज्ञज्ञच्य स्थितिका जघन्य सन्वकाल एक समय त्रीर उत्कृष्ट सत्त्वकाल त्रपनी उत्कृष्ट स्थितिन प्रमाण है। चतुद्र्शनी जीवोंके त्रमपर्याष्टकोंक समान जानना चाहिये।

विशेषार्थ—आभिनियोधिकज्ञानी,श्रुनज्ञानी और अवधिज्ञानी चक्क जीवके दसर्वे गुणस्थानके अनिक्ष समयमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है, अतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। दोन कथन सुनम है। मूलमें और जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें भी जघन्य स्थितिकं स्वामित्वका विचार करके जघन्य स्थितिकं जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समयका कथन करना चाहिये। जो चौबीस प्रकृतियोकी सत्तावाला उपरिम येवेयकवासो देव आयुके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हो। यथा उसके अन्तिम समयमें विभंगज्ञानमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय पाया जाता है। तथा जो अवधिज्ञानी शेप देव या नारकी अन्तिम समयमें मिथ्यादृष्टि हो जाता है उसके विभंगज्ञानमें अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। तथा अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल

- इट्र किण्ह०-णील०-काउ० मोह० जहण्णहिदी ज० एगसमञ्रो, उक्क० अंतीमु०। त्रज्ञ० जह० एगसमञ्रो, उक्क० सगहिदी। तेउ० सोहम्मभंगो। पम्म० सहस्सारभंगो।
- ६ द्वर. उवसम०-सम्मामि० त्राहारियसभागो । सासण० मोह० जहण्णिहिदी जहएगुक्क० एगसमओ । त्रजह० जह० एगसमत्रो, उक्क० छ त्रावित्यात्रो । सिण्ण० पुरिसभंगो । आहार० मोह० जहण्णिहिदी जहण्णुक० एगसमत्रो । अज० जै० खुदा-भवग्गहणं तिसमऊणं । उक्क० सगहिदी । त्राणाहार० कम्मइयभंगो ।

### एवं कालाणुगमा समत्तो।

- ्र द्व स्पष्ट ही है। चत्तुदर्शनवालोमे त्रस पर्याप्त मुख्य हैं, खतः चत्तुदर्शनके कथनको त्रसपर्यप्रकांके समान कहा।
- \$ ८१. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अन्तर्मुहृतं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पीनलेश्या-वाले जीवोके सोधमस्वर्गके समान जानना चाहिए। पद्मलेश्यावाले जीवोके सहस्रारस्वर्गके समान जानना चाहिए।
- ू ५२. उपशम सम्यन्दिष्ट और सम्यग्मिण्याद्दिष्ट जीवोंके आहारकिमश्रकाययांगी जीवोंके समान जानना चाहिए। सामादनसम्यग्दिष्ट जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्लोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और काल छह आवली है। मंही जीवोंक पुरुषवेदियोंके समान जानना चाहिये। आहारक जीवोंके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य सत्त्वकाल तीन समय कम जुद्रभवप्रहण्यमाण और उत्कृष्ट सत्त्वकाल अपनी उत्कृष्ट स्थितियमाण है। अनाहारक जीवोंके कार्मणकाययोगी जीवोंके समान जानना चाहिये।

विशेषार्थ-कृष्णादि तीन लेश्याश्रामे मोहनीयकी जघन्य श्रोर अजघन्य स्थितिका काल सामान्य तिर्यचोंके समान घटित कर लेता चाहिये। किन्तु इनके अजघन्य स्थितिका उन्कृष्ट काल अपनी अपनी उन्कृष्ट स्थित प्रमाण जानना चाहिये, क्यांकि अपने अपने उन्कृष्ट काल तक अजघन्य स्थितिके निरन्तर रहनेमें कोई बाधा नहीं आती है। आहारकके दसवें गुण्स्थानके अन्तिम समयमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति होती है अतः इनके जघन्य स्थितिका जघन्य और उन्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा जो तीन मोइसे लघ्य्यपर्याप्रकोमें उत्पन्न होता है उसके आहारककाल तीन समयकम खुहाभवग्रहण्प्रमाण पाया जाता है, अतः आहारकके अजघन्य स्थितिका जघन्य काल तीन समय कम खुहाभवग्रहण् प्रमाण कहा। अजघन्य स्थितिका उन्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। होप कथन मुगम है।

६ =३. अन्तरानुगन दो प्रकारका है.—जयन्य ऋोर उत्कृष्ट । उनमेंसे उत्कृष्ट अन्तरानुगमका

१. प्रता ज॰ एगसमन्त्रो खुदा-ईति पाठः।

दुविहो णिहेसो—-श्रोघेण त्रादेसेण य । तत्थ श्रोघेण उक्कस्सिट्टिशंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जह० अंतामुहुनं, उक्क० अणंतकालमसंखेज्ञा पोमालपरियद्या । अणुक्क० अंतरं के० ? जह० एगसमञ्चो, उक्क० अंतामुहुनं । एवं तिरिक्ख०-कायजोगि० णवुंस०-मिद-सुद्त्रप्रणाण-असंजद०-श्रचक्खु०-भवसिद्धि-न्राभवसिद्धि-निक्छाटिटि नि वत्त्व्वं ।

\$ ८४. ब्रादेसेण णेरइएमु मोह० उक्क० अंतरं जह० अंतोम्र॰, उक्क० तेत्तीस सागरो० देसूणाणि । ब्रणुककस्म० ब्रोघभंगो । पढमादि जाव सत्तिमि ति मोह० उक्क० अतरं केवचिरं० ? ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगसगुक्कस्सिंडदी देसूणा । अगुक्क० ब्रोघभंगो ।

प्रकरण है। उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है-आंचिन देश और आदेश निर्देश। उनमें से आंचिकी अपेना उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल कितना है ? जपन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हुन है और उत्कृष्ट अंतरकाल अनंतकाल प्रमाण है। जिसका प्रमाण असंख्यात पुर्गल परिवर्तन है। अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल कितना है ? जपन्य अंतरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंतर्मु हुन है। इसी प्रकार निर्यन्त, काययोगी, नपुंसकवेदी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचनुदर्शनी, भव्य, अभव्य और मिण्यादृष्टि जीवोक कहना चाहिये।

विशेषार्थ—ऐमा नियम है कि जिसने कमेंकी उन्छष्ट स्थितिका बन्ध किया है वह यदि अनुकृष्ट स्थितिका वन्ध करने लगे तो कममे कम अन्तर्मु हुन कालके पहले उस जीवमें उन्छष्ट स्थितिक बन्ध करनेकी योग्यता नहीं आ मकनी अतः मोहनीयकी उन्छष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर्भकाल अन्तर्मु हुन कहा। तथा किमी मंजी पंचेन्द्रिय पर्याप्तने मोहनीयकी उन्छष्ट स्थिति बांधी अनन्तर वह अनुन्छ्य स्थितिका वन्ध करने लगा और मर कर एकेन्द्रियादिमें उत्पन्न होकर अनन्त काल नक वहा घृमता रहा। पुनः एकेन्द्रियोम अनन्त कालके पूरे हो जाने पर वह संज्ञी पंचेन्द्रिय हुआ और पर्याप्त होनेक पश्चान उसने मोहनीयकी उन्छ्य स्थितिका वन्ध किया। इस प्रकार इस जीवके मोहनीयकी उन्छ्य स्थितिका अन्तरकाल असंख्यान पुद्गल परिवर्तनप्रमाण प्राप्त होता है अतः आवसे उन्छ्य स्थितिका वैध एक समय नक भी होता है, अतः अनुन्छ्य स्थितिका जघन्य अंतर एक समय प्राप्त हो जाता है। तथा उन्छ्य स्थितिका निरन्तर वन्ध अंतर्मु हुन काल नक होता है अतः अनुन्छ्य स्थितिका उन्छ्य अन्तर अन्तर्मु हुन प्राप्त हो जाता है। तथा उन्छ्य स्थितका निरन्तर वन्ध अंतर्मु हुन काल नक होता है अतः अनुन्छ्य स्थितिका उन्छ्य अन्तर अन्तर्मु हुन प्राप्त हो जाता है। मूलमे सामान्य निर्यंच आदि और जितनी मागैणाए गिनाई है उनमे ही यह ओघ प्रक्षणा घटिन होती है, अतः इनके कथनको योघके समान कहा।

\$ ८४. त्रादेशकी अपेचा नारिकयोमं मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अंतरकाल अंतर्मु हुर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल जुल कम तेतीस सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अंतरकाल आंघके समान है। पहले नरकसे लेकर सानवें नरक तक प्रत्येक नरकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका अंतर काल कितना है । जघन्य अंतरकाल अंतर्मु हुर्त है और उत्कृष्ट अंतरकाल कुल कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल आंघके समान है।

६ ८५. पंचिदियतिरिक्खितय॰ मोह॰ उक्क० अंतरं ज॰ अंतोमु॰,उक्क० पुन्बकोडिपुथत्तं। अणुक्क० ओघभंगो। एवं मणुसितय॰। पंचि०ितरि० अपज्ञ॰ मोह०
उक्क॰ अणुक्क० णित्थ अंतरं। एवं मणुसअपज्ञ०-आणदादि जाव सन्बह०-सन्बएइंदिय-सन्बिनिगलिदिय-पंचिदियअपज्ञ०-पंचकाय-तसअपज्ञ०-ओरालियमिस्स०-वेउव्यिपिस्स०-आहार॰-आहारिमिस्स०--कम्मइय०-अवगद०-अकसाय-आभिणि०-सुद०ओहि॰-मणपज्ज०-संजद०-सामाइयद्धेदो०-परिहा०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदामंजदओहिदंस०--सुक्क्लेस्स०-सम्मादि०-खइय०--वेदय०-उवसम०-सासण०--सम्मामि०असण्णि०-अणाहारि ति वत्तन्वं।

्र द्द. देव० मोह० उक्क० अंतरं ज० अंतोमु०,उक्क० अद्वारस सागरोवपाणि सादि-रेयाणि । अणुक्क० ओघभंगो । भवणादि जाव सहस्सारे त्ति उक्क० अंतरं केव० १ ज० अंतोमु०, उक्क० सगद्विदी देस्णा । ऋणुक्क० ओघभंगो ।

६ ८७. पंचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस०-तसपज्ज०मोह०उक्क० अंतरं जह० अंतोमु०, उक्क० सगहिदी देमुणा। अणुक्क० त्रोघं। एवमिन्थि०-पुरिस०-चक्खु०-पंचलेस्सा०-

<sup>्</sup>रम्, पंचेन्द्रियतिर्यंच,पंचेन्द्रियतियंच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती जीवोमे मंहिनीयकी उन्हृष्ट स्थितिका ज्ञयन्य ज्ञंतरकाल ज्ञंतर्मृहृतं हे ज्ञोर उन्हृष्ट द्रंतरकाल पृवंकोटिष्ट्रथक्तव है। तथा अनुन्हृष्ट स्थितिका ज्ञयनरकाल ओवके समान है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यने इन तीन प्रकारके मनुष्योके जानना चाहिये। पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ज्यपर्याप्तक जीवोंमें मोहिनीयकी उन्हृष्ट और अनुन्हृष्ट स्थितिका ज्ञयनरकाल नहीं है। इसी प्रकार लब्ज्यपर्याप्तक मनुष्य, आनत स्वर्गमे लेकर सर्वाधिसिंड तकके देव. सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक, पांचो स्थावरकाय, त्रस लब्ज्यपर्याप्तक, छोवारिकिमिश्रवाययोगी, वैकियिकिमिश्रकाययोगी, ज्ञाहारककाययोगी, ज्ञाहारकिमिश्रकाययोगी, ज्ञाहारकिमिश्रकाययोगी, ज्ञावारिकिमिश्रकाययोगी, ज्ञावारिकिमिश्रकाययोगी, ज्ञावारिकिमिश्रकाययोगी, ज्ञावारिकिमिश्रकाययोगी, ज्ञाभिनिवाधिकज्ञानी श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी,मनःपप्रवज्ञानी, संयत, सामाधिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिविद्युद्धिस्थत, सृद्ममांपरायिकसंयत, यथाल्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, श्रुक्रलिश्यावाले,सस्यस्यस्टिष्ट, ज्ञायिकसम्यस्टिष्ट,वेदकसस्यस्टिष्ट,इपश्रमस्यस्यस्टिष्ठ, सासादनसस्यस्टिष्ट, सासादनसस्यस्टिष्ट, सास्याद्दि, असंज्ञी और ज्ञनाहारक जीवोके कहना चाहियं।

<sup>्</sup>रद् देवगितमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्न हे और उत्कृष्ट अन्तरकाल माधिक अठारह सागर है। तथा अनु-कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल आयके ममान है। भवनवासियोसे लेकर सहस्रार स्वग तकके देशेक उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल कितना है? जयन्य अन्तरलाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल अंग्वके समान है।

६ ८७. पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्तक, त्रस खोर त्रस पर्याप्तक जीवोंक मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिनिक। जघन्य ब्रान्तरकाल अन्तर्मु हुर्न हैं खोर उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल आंघके समान है। इसी प्रकार

सण्णि०-आहारि० ति।

्रदः पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगिय-त्रोगित्रि०-वेउव्विय०-चत्तारिक० मोह०उक्क०णन्थि अंतरं । अणुक्क० ओघं । विद्यग०सत्तमपुढविभंगो । एवमुक्कस्स-हिटिअंतराणुगमा समत्तो ।

स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, चस्तुदर्शनी, इटण आदि पाच लेश्यावाले, मंत्री और आहारक जीवोके बहना चाहिये।

्र ८८. पांची मनीर्णागी. पाची वचनयोगी, काययोगी, खोदारिककाययोगी. बैकियिककाय-योगी खोर कोधादि चारो कपायवाले जीवोके मोहनीयकी उत्हृष्ट स्थितिका अन्तरकाल नहीं हैं। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल खोपके समान है। विभंगज्ञानी जीवोके अन्तरकाल सातवी प्रथि-वीमें कहे गये अन्तरकालके समान है।

विशोपार्थ- त्रादेशसे अन्तरकालका खुलासा करने समय जहा जो विशेषना होगी उमीका स्पष्टीकरण करेंगे शेवका खलासा श्रांघके समान जानना । सामान्यमे नारिकयांकी जन्म स्थिति तेनीम सागर है, अनः यहा उन्हृष्ट स्थिनिका उन्हृष्ट अन्तर बुद्ध कम तेनीम सागर प्राप्त होगा। इसी प्रकार प्रथमादि नरकोमें भी उत्कृष्ट म्थितिका उन्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण घटित घर लेना चाहिये । सामान्य पंचेन्द्रिय तिर्यचोकी उत्कृष्ट स्थिति सत्ता-नवं प्रवेकोटि अधिक तीन पत्य हैं । पंचेन्द्रिय तिर्यन पर्याप्तकोकी रुद्धिए स्थिति सेतालिन पूर्वकोटि श्रधिक तीन पत्य है और योनिमनी निर्यचोकी उत्बृष्ट स्थिति पन्द्रः पूर्वकोटि अधिक नीन पत्य है। किन्तु भोगभूमिमे उन्कृष्ट स्थिति नहीं प्राप्त होती अतः प्रत्येक्ते कालमेमे तीन पत्य कम कर देना चाहिये और उस प्रकार जो प्रत्येकका पूर्वकोटिप्रथक्त एमाण काल शेप रहना है वही उनके उन्क्रष्ट स्थितिका उन्क्रप्ट अन्तरकाल जानना चाहिये। इसमें भी प्रारम्भका पर्याप्र होने तकका काल श्रीर कम कर देन। चाहिये । जिसका मुलमे सिर्देश नहीं फिया । इसी प्रकार गनुष्य त्रिकके उत्कृष्ट स्थितिका उन्कट अन्तरकाल पूर्वकोटिष्युधक्त्य ग्रमाण लेना चाहिये। यहा सामान्य मनुष्यकी सेतालिम, पर्याप्र मनुष्यकी नैर्दम ऋोर मनुष्यनीकी मात पूर्वकोटियाँ लेनी चाहिये। पंचेन्द्रिय तिर्यक्क लब्बपर्याप्रकांके उत्पृष्ट स्थिति उत्पन्न होनेके अरम ससय से ही होती है जो संज्ञी पंचेन्द्रिय से मरकर उत्पन्न हुआ है । इनके बन्धकी अपेचा उत्कृष्ट स्थिति नहीं होनी श्रातः इनके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट इनमेसे किसी भी स्थितिका चन्तरहाल नहीं होता ऐसा कहा है। मूलमे लट्चपर्याप्रक मनुष्योमे लेकर अनाहार 5 तक और श्री जिननी मार्गणाएं गिनाई है उनके भी इसी प्रवार समकता चाहिए । देवोंसे वारटवं स्वर्गनक ही सोहतीयका उ कृष्ट स्थितिवन्ध होता है और वारटवे रवर्गकी उत्क्रष्ट स्थिति साधिक अठारह सागर है. अनः सामान्यमे देवोकं उत्वृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल माधिक ऋठारह मागर कहा । इसा अकार भवनवासियों में लेकर महस्वार स्वर्गनकके देवोंग्ने जिसकी जितनी अबूष्ट स्थिति हो उसरोसे जुल कम प्रमाण अबूष्ट स्थितका उक्रप्ट अन्तर काल जानना चाहिये। आगे और दिवना मार्गगाएँ बनलाई है उनमें भी इसी प्रकार विचारकर खलाना कर लेना चाहिए। हा पाची मनोयोग, पांची बन्धारीम, कायरोग, खीटारिककायरोग देकियव-काययोग और वारा कपायोमें उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल नहीं होता, क्योंकि इनका काल इतना कम है जिससे इनके कालके भीतर दोवार उत्क्रप्र स्थिति नहीं प्राप्त दोती। किन्तु जिसने अनुत्कृष्ट स्थितिके साथ इन मागणाश्रोको प्राप्त किया खाँर मध्यमे एक समय इट. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेमो-श्रोघेण-श्रोदेसेण य । तत्थ श्रोघेण
होह जहण्णाजहण्णिहिर्गृष्ठां णित्थ अंतर । एवं विदियादि जाव छही पुढवी० सन्व
पं(चंदियतिरिक्ख-सन्वभणुस्स-जोदिसियादि जाव सन्वह-सन्वविगलिदिय-सन्वपंचिदिय-सन्वतस-पचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-ओरालि०-वेउन्विय०-वेउन्वियमिस्स०श्राहार्०-स्राहार्राभस्स-इत्थि०-पुरिस०-णवुंसय-स्रवगद् -चत्तारिकसाय-अकसाय- विहग०-श्रामिण०-सुद्०-ओहि०-एणपज्जव०-संजद्०-सामाइय०-छेदो०-परिहार०-सुहुम०
जहाकखाद्०-संजदासंजद-चक्खु०-अचक्खु०-ओहिद्रंगण-तिण्णिले०-भवसि०-सम्मादि०स्वइप०-वेद्ग०-उवस्म०-सासण०-तम्मामि०-सण्णि०-आहारि ति ।

तक या अन्तमु हूर्त कालतक उन्छप्ट मिशतिका बन्ध हुआ तो उसके अनुन्छप्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उन्छप्ट अन्तर अन्तर्मु हुर्त प्रमाण बन जाता है। अतः उक्त मार्गणाओं में अनुन्छप्ट स्थितिका अन्तरकाल छोषके समान कहा। यद्यपि काययोग और औदारिक काययोगका काल बहुत अधिक है पर तह काल एकेन्द्रिय और प्रथिवीकायिक जीयों के ही प्राप्त होता है अतः इनमें भी उन्छप्ट स्थितिका अन्तरकाल सम्भव नहीं।

## इस प्रकार उन्कृष्ट स्थिति अन्तरागुगम समाप्त हुआ।

्न-. अत्र जवन्य स्थिति अन्तरानुगम प्रष्ठत हैं। उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है — आंचितिर्देश और आदेशित्रिंश । उनसेसे आंघिकी अपेना मोहनीयकी जवन्य और अज्ञवन्य नियित्योका उन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकी, सभा पंचित्रिय तिर्घय, सभी समुष्य, ज्योतियी देशोसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देव, सभी विकलित्रिय, सभी पंचित्रिय, सभी त्रम, पांची मनोयोगी, पांची वचनयोगी, काल्यकाम्यांगी, बेकियकाम्यांगी, बेकियकाम्यांगी, आहारक काम्यांगी, अल्लारकाम्यांगी, बीक्यकाम्यांगी, काल्यकाम्यांगी, बीवर्दी, पुरुषवदी, नपुंसक्येदी, ज्ञप्यात्वेदी, कोधादि चारो कपायवाले, अल्लार्या, विभंगज्ञानी, आभिनियाधिकज्ञानी, श्रृतज्ञानी, अल्लावानी, मतःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकस्यत, छद्दीपस्थापनालेयत, परिहार्यश्रुद्धिस्थत, सूर्मसापरायिकसंयत, यथान्यातसंयत, स्वाप्यत, चतुद्शनवाले, अच्चुद्शनवाले, अल्लाद्यतन्त्रले, तीन लेश्यावाले. भव्य, सम्यन्दिष्ट, चार्षिकसम्यन्दिष्ट, वदकसम्यन्दिष्ट, उपशमसम्यन्दिष्ट, सामादनसम्यन्दिष्ट, सम्यग्मिण्यादिष्ट, संज्ञी आर आहारक जावाक कहना चाहिये।

विशेषार्थ-श्रावसं माहनीयका जलन्य म्थित चपक जीवक दसवें गुण्स्थानके अन्तिम समयमे हाना है खतः श्रावसे जवन्य ख्राँर अजन्य स्थितिका खन्तर काल नहीं वनता । इसी प्रकार मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी, पंचित्त्रिय, पंचित्त्रिय पर्याप्त, जस, जस पर्याप्त, पांचों मनोयोगी,पाचा वचनयागी,काययागी,श्रोदाारककाययोगी,अपगतवेदी,लोमकपायी,आमिनवोधिक- हानी, श्रुतज्ञानी, अवधिकानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, स्दममापरायिकमंयत, चचुदर्शनी, खचजुदर्शनी, खवधिदर्शनी, द्युत्त लेरयावाले, भव्य, सम्यरहीष्ट, हायिक सम्यरहीष्ट, संज्ञी ख्रोर खाहारकके जानना चाहिये, क्यािक इनमें भी चपक्का दसवाँ गुण्म्थान पाया जाना है। दूसरे नरकमे हाँ नरक तक नारकी, ज्योतिषी देवोसे लेकर मर्वाथिसिद्धि तकके देव, वैकियिक काययोगी, वैकियिक मिश्रकाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी अकपार्यी, परिहारविशुद्धि

- ६०. ब्याटेसेण णिग्यगर्डण् मोह० नहण्ण० णिन्थ अतरं । अज० नहण्णुक० एगसमञ्जो । एवं परमपुर्दाव-देव-भवण०-वाण०-कम्पर्य-ब्राणाहारि ति । सत्तमाए मोह० जह० णिन्थ अतरं । अज० नह० एगसमञ्जो, उक्क० अंतोपुरुत्तं ।
- ६१. तिग्क्ति मोह० जह०ज० अतोमुहुनं, उक्क० असंखेळा लोगा। अज० ज० एग्रसमुत्रो, उक्क० अंतोमुहुनं। एवं मिद्-सृद्अण्णाण-असंबद०-अभवसि०-

संयत, यथाल्यातसंयत, संयतासंयत, धंदकसम्यग्दिष्ट, उपशमसम्यग्दिष्ट और सामादनलम्यग्दिष्टिक अपने अपने उत्कृष्ट आयुर्क अन्तिम समयसं ही मीहनीयकी जयन्य स्थिति होती है अतः इनके जयन्य और अजयन्य स्थितिका अन्तर नहीं होता। सभी पंचित्रयित्यंच, लट्यपयीप्रक मनुष्य, सभी विकलेन्द्रिय, पंचित्रिय अपयीप्र, और जस अपयीप्रकाक उत्पन्न होते समय ही जयन्य स्थिति होती है अतः उनके भी अन्तर नहीं होता। स्थितिती, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी, कोध, मान और माया कपायवाले जीधोके नीथ गुणस्थानमें अपने अपने चयके अन्तिम समयमें और सामायिक संयत व छेदीपस्थापनावाले जीधोके चपणिक नीथे गुणस्थानके अन्तिम समयमें ही मोहनीयकी जयन्य स्थिति होती है अतः इनके भी जयन्य और अजयन्य स्थितिका अन्तर नहीं होता। विभंगज्ञानमें उपरिम यैवेयकके देवके आयुक्ते अन्तिम समयमें मोहनीयकी जयन्य स्थिति होती है, अतः अन्तर नहीं होता। पीत लेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले परिहारियशुद्धि संयतके समान जानना।

§ ६०. श्रादेशकी अपेता नरकगितमे मोहनीयकी जवन्य स्थितिका अन्तरकात नही है। अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य देव, भवनवासी देव, व्यन्तर देव, कार्मणकाययोगी आंर अनाहारक जीवोंके कहना चाहिये। सातवी पृथिवीमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका अन्तरकाल नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुंहूर्त है।

विश्वार्थ जो असंज्ञी जीव नरकमें दो विश्वह से उत्पन्न होता है उसके दूसरे विश्वह के समय जघन्य स्थित सम्भव है अतः सामान्यसे नारिकयों अज्ञचन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा। क्यों कि एसे नारकीं अप्रथम और तृतीयादि समयों में अज्ञचन्य स्थिति हुई और दूसरे समयमें जघन्य स्थिति रही अतः अज्ञचन्य स्थितिका अन्तरकाल एक समय प्राप्त हो गया। इसी प्रकार पहली पृथिवीं के नारकीं, सामान्य देव, भवनवासी, व्यन्तर, कार्मणकाय-योगी और अनाटारक जीवों के अज्ञचन्य स्थितिक जघन्य अन्तरकाल एक समयको घटित कर लेना चाह्य। सातवे नरकमें जब आयुमं अन्तर्मु हूर्तकाल शेष रह जाता है तब कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मु हूर्त काल तक जघन्य स्थितिका प्राप्त होना सम्भव है। तथा इस नारकीं के इस जघन्य स्थितिक पश्चान पुनः अज्ञचन्य स्थितिका जानी है, अतः यहां अज्ञचन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मु हुर्त वन जाता है। तथा जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मु हुर्त वन जाता है। तथा जघन्य स्थिति दो वार नहीं प्राप्त होनी इसलिय उसका अन्तरकाल नहीं बनता।

\$ ६१. तियंचगितमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है और अल्छ अन्तरकाल असंख्यान लोक है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। इसी प्रकार मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अभव्य,

मिच्छादिही०-असिष्णि ति । एइंदिय० तिरिक्खभंगो । वाटरेइंदिय-वाटरेइंदियपज्ञ०-वाटरेइंदियत्रप्रज्ञ०-सुहुमेइंदिय-सुहुमेइंदियपज्ञ०-सुहुमेइंदियअपज्ज० शेह० जह० अंतीमु०, उक्क० सगिहिटी देस्णा । अञ्ज० जह० एगसमओ, उक्क० अंतीमुहुत्तं । एवं चत्तारि काय० । णवरि सगसगुकस्सिहिटी देस्णा । वणप्पदि० एइंदियभंगो ।

्ह२. ओगिलियमिम्स० मोह० जह० ज० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु०। अज० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। किण्णह-णील-काउ० सत्तमपुढविभंगो । एवशंतराणगमी समत्तो ।

मिण्यादृष्टि और अमंजी जीवोके कहना चाहिये। एकेन्द्रियोके तिर्यंचोके समान जानना चाहिये। वादर एकेन्द्रियपयाप्तक, बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपयाप्तक, सूरम एकेन्द्रिय, सूरम एकेन्द्रिय, सूरम एकेन्द्रिय एकेन्द्रिय पर्याप्तक और सूर्म एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवोके मोहनीयकी जघन्य न्धितिका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहृतं है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट क्यितिप्रमाण है। तथा अजयन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहृतं है। इसी प्रकार पृथिवीकायिक आदि चार स्थावरकायिक जीवोके जानना चाहिये। पर इतनी विशेषता है कि इनके मोहनीयकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिये। चनस्पतिकायिक जीवोके एकेन्द्रियोंक समान जानना चाहिये।

ई हर. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवो हे मोहनीयकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल अन्तमु हूर्त है। तथा श्रजयन्य स्थितिका जवन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमु हूर्त है। कृष्ण, नील और कापोनलेक्यावाले जीवोंके सानवीं पृथिवींक समान है।

विशेषार्थ-उत्कृष्ट स्थितिकं समान आदेशसे जवन्य स्थितिकं सम्बन्धमे भी यह नियम समकता चाहियं कि जिसके जवन्य स्थितिके पश्चान श्रजवन्य स्थिति हो जाती है उसे पुनः जवन्य स्थितिको प्राप्त करनेमे कमसे कम अन्तम् हूर्त काल अवश्य लगता है तथा जिसने तियेच पर्यायमे जधन्य स्थितिको प्राप्त किया पुनः वह अजधन्य स्थितिको प्राप्त करके यदि निरन्तर उसीके साथ रहे ता उसे पुन. जघन्य स्थितिके प्राप्त करनेमे अधिकसे अधिक असंख्यात लोकप्रमाण काल लगता है अतः तिर्यचोमे जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मु हूर्त और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यान लोकप्रमाण प्राप्त होता है यह सिद्ध हुआ। तथा जबन्य स्थितिका जबन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्म् हर्न होता है अतः तिर्घचोमें अजयन्य स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा। मूलमे गिनाई गई मत्यज्ञानी आदि मार्गणाओमे श्रन्तरकाल प्राप्त करनेकी यही विधि जानना, श्रतः इसमे जवन्य श्रीर अजवन्य स्थितिके श्रन्तर कालको सामान्य निर्यंचोके समान कहा । तथा आगे जो बादर एकेन्द्रियादिकोके जघन्य और श्रजघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल कहा उसमे केवल जयन्य स्थितिके उत्कृष्ट श्रन्तरकालमे ही विशे-पता है। शेष सब कथन सामान्य तिर्यचोंके समान है। बात यह है कि इन बादर एकेन्द्रियादिककी उन्हुष्ट कायस्थिति भिन्न भिन्न है अतः इनमे जघन्य स्थितिका उन्हुष्ट बान्तरकाल कुद्र कम अपनी श्रपनी कायस्थितिप्रमाण ही कहना चाहिये । श्रीदारिकमिश्रकाययागका उन्कृष्टकाल अन्तर्मु हुर्त है भनः इसमे जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्न कहा । कृष्ण, नील व कार्पातलेश्या-

्ह ३. णाणाजीवेहि भंगिविचयाणुगमेण भण्णहाणं तत्थ णाणाजीवेहि उक्करसभंगविचए इदमहपदं—जे उक्करमस्स विहित्या ते अणुक्करमस्स अविहित्या । जे अणुक्करसम्स विहित्या ते उक्करसम्स अविहित्या । एतेण अहपदेण द्विहो णिहेसो
ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मोह० उक्करसिंहिदीए सिया सब्बे जीवा अविहित्या, सिया अविहित्या च विहित्तिओ च, सिया अविहित्या च विहित्तिया च ।
एवं तिष्णि भंगा ३ । अणुक्क० हिटीए सिया सब्वे विहित्तिया, सिया विहित्या च
अविहित्तिओ च,सिया विहित्या च अविहित्या च। एव सब्बिण्य-सब्बितिस्क्व-मणुसतिय-देव-भवणादि जाव सब्बह्ण सब्वण्हेदिय-सब्बिवगिलिदिय-सब्बिविय-इक्कायपंचमण विविच्य-काम्बित्य-ओगिल्य-ओगिलय०--वेडिव्य ०-ओगिलयिनस्व--ओहि०-मणइय ०-ितिष्णिवेट-चत्तिरिकसाय-मिद्-सुद्अण्णाण-विहेग०-आभिणि०-सुट०-ओहि०-मण-

वाले किन्द्रिय जीवोके मोहनीयकी जयन्य स्थिति होती है। एकेन्द्रियोसे उक्त लेटयाओका काल अन्तर्मु हुत है जो अजयन्य स्थितिक जयन्यकालमें छोटा है अतः जयन्य स्थितिका अन्तर नहीं है परन्तु उक्त लेक्स्थाओंका काल जयन्य स्थितिक कालमें यड़ा है अतः अजयन्य स्थितिका जयन्य अन्तर एक समय और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्म हूर्त घटित हो जाता है जो सातवी पृथिवीके समान है। होप कथन सुगम है।

#### इस प्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

६६३ अब नाना जीवोकी अपेद्धा भेगविचयानुगमका कथन करते हैं। उसमे भी नाना जीवोकी अपेता उत्हुए संगविचयके कथनमें यह अथपर है—जो उत्हुए मिथितिविसकितवाले हैं वे श्चनुत्कुष्ट स्थितिविभक्तिवाले नहीं है । जो अनुत्कुष्ट स्थितिविभक्तिवाले हैं वे उपुष्ट स्थिति-विमाधनवाले नहीं है। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दा प्रकारका है-अविनिर्देश खीर अदिक निर्देश । उनमेसे स्रोवका अधेवा कदाचित सभी जीव मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिवसनितसे रहित है । किसाचित बहुतसे जीव मार्स्नायको उत्कृष्ट स्थितिविमिक्तसे रहित है और एक जीव माहनीयको उन्हर्ण्य स्थितियमाक्तवाला है । कदाचित् बहुतसे जीव मोहनीयको उत्कृष्ट स्थितिविमिक्तमे रहित हे और बहुतसे जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट मिशतिविमिक्तिवाले हैं। इस प्रकार उत्कृष्ट्र स्थितिविभिवनका अपेचा तीन भंग होते है। तथा अनुत्कृष्ट्र स्थिति-विभक्तिका अपेत्री कदाचित् सभी जाव माहनीयकी अनुत्कृत्य स्थितिविभक्तिवाले हैं । कदाचित बहुतमे जाव मोहनावका व्यनुन्छण्ट (स्थातावमाक्तवाल हे आर एक ज व मोहनीयकी अनुन्छण्ट स्थितिविभावितसे रहित हैं, कदाचित बहुतसे जीव माह्नीयकी अनुन्हण्ट स्थितिविश्वकितवाले हैं श्रीर बहुतसं जीव माह्नीयकी अनुन्हण्ड स्थितिवमिक्तसे रहित हैं ये तीन मंग होने हैं। इसी प्रकार संभी नारकी, सभी दियंच, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यना ये तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर अवायसिद्धि तकके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभा विकले-न्त्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, छहो कायवाले, पाचा मनोयोगी, पाचो बचनयोगी, काययागी, श्रीदारिक काययांगी, वैकियिककाययांगी, खोदारिकमिश्रकाययांगी, कामणकाययोगी, तीनो वेदवाले, क्रोधादि चारो कपायवाल, मत्यज्ञानी, श्रतज्ञानी, विभगज्ञानी, श्रामिनिवाधिकज्ञानी, श्रतज्ञानी, श्रवधिज्ञानी,

पज्ज०-संजद्०-सामाइय-छेदो०-परिद्याग०-संजदामंजद०-श्रसंजद०-चक्खु०--श्रचक्खु०-ब्रोहि०-ब्रलेस्सा० भव०-श्रभव सम्बद्धि०-खइय०-वेद्य० -भिच्छा०-सण्णि०-श्रसिणि० आदारि०-श्रणाद्यारि ति ।

् ६४. मणुसञ्चषज्ञः - उक्तम्सविहत्तिषुव्वा अद्वर्भगा । अणुक्कस्सविहत्तिषुव्वा वि श्रद्धभंगा । एवं वेडिव्यिमिस्स० श्राहार् ०-श्राहार्मिस्स० श्रवगद० - अकसा० -सुदूर्नसांप० - जहाक्ष्याद्० - उवसम० - सासण० - सम्मामि० ।

## एवमुकस्मभंगविचयो समतो ।

मनःपययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनामंयत, पारहार्ययुद्धिमंयत, सयतासंयत, श्रमयत, चत्तुदर्शनयाले, अचनुद्रशनयाले, अयधिदर्शनयाले, छहों लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, सम्यन्हिष्ट, चायिकसम्यन्हिष्ट, वेदकसम्यन्हिष्ट, मिण्याहिष्ट, मज्ञी, श्रमंज्ञी, श्राहारक श्रीर श्रमाङारक जीवोक कहना चाहिये।

े ६४. लब यपर्यान्तक सनुष्योसे उत्कृष्ट स्थितिविभिक्त पूर्वक आठ भंग होते हैं और अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तिपृत्रक भी आठ भंग होते हैं। इसी प्रकार विकियिकसिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकिभिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकपायी, सृष्ममांपरायिकसंयत, यथाष्यातसंयत, उपशासमस्यष्टिष्ट, सासादनसस्यष्टिष्ट और सस्यिगिध्याटिष्ट जीयोंके जानना चाहिये।

विशापार्थ-निश्चित सिद्धान्तके अनुसार व्यवस्थाके द्यातक वाक्यकी अर्थपट कहते हैं। यहाँ निश्चित सिद्धान्त यह है कि जा उन्द्रष्ट स्थितिवाले होते हैं वे अनुन्द्रष्ट स्थितिवाले नहीं होते और जो अनुत्कृष्ट स्थितिवाले होते हैं वे उत्कृष्ट स्थितिवाले नहीं होते। इसमें यह व्यवस्था फलित हुई कि उत्कृष्ट स्थितिविभिवितवालोंसे अनुत्कृष्ट स्थितिअविभिवितवाले जीव भिन्न नहीं और अनुन्द्रष्ट स्थितिवर्भ कावालां में उन्द्रुष्ट स्थिति अविभिन्नवाले जीव भिन्न नहीं । फिर भी एकवार उन्कृष्ट स्थितिवालोको स्रोर इसरी बार स्रमुन्कृष्ट स्थितिवालोको मुख्य करके भंगोंका संग्रह किया जाय तो प्रत्येककी अपेचा तीन तीन भद्ग प्राप्त होते हैं। जो मुलमे गिनाये ही हैं। वात यह है कि उन्हर स्थितिवाला जीव कदाचित एक भी नहीं रहता. तथा कदाचित एठ होता है और कदाचित अनेक होते हैं । अब यदि इन तीन विकल्पोको मुख्य करके मंग कहे जाते है तो उनकी सुरत निस्न होती है-(१) कदाचित सब जीव उत्कृष्ट स्थिति-अविभिन्नित्वाले होते हैं। (२) बहुत जीय उत्कृष्ट स्थितिअविभिन्नवाले होते हैं और एक जाव उत्कृष्ट स्थिति विभिन्नवाला होता है। (३) कराचित बहुत जीव उत्कृष्ट स्थिति-अविभिवनवाले होते हैं और बहुत जीव अबूट स्थितिविभिवनवाले होते हैं। यह तो उत्कृष्ट म्थितिकी त्रपेत्ता कथन हुआ । अब यदि इसके स्थानमें अनुष्कृष्ट स्थितिवाल<mark>ोंको स</mark>रूय कर देते हैं और उत्हर्ट स्वितिवारोको गीए ता उन्हीं भंगोकी अक्षत्र निम्न हो जाती है—(१) कदाचित सब जीव अनुकार स्थितिविभिवित्वाले होते हैं । (२) कदाचित बहुत जीव अनुकार स्थितिविभक्तिवाले होते हैं और एक जीव अनुत्वृष्ट स्थिति अविभक्तिवाला होता है । (३) कदाचित बहुत जीव अनुत्कृष्ट स्थिति विभिन्नवाले और बहुत जीव अनुत्कृष्ट स्थिति-अविभिक्तवाले होते है। सब नारिक्योंमें लेकर अनाहारको तक मुलमे जितनी मार्गणाएँ गिनाई है। उनमें यह खोच्यकपूणा वन जानी हैं। अर्थान उन मार्गणात्रोमें भी इसी प्रकार उन्द्रुप्ट खोर अनुत्कृष्ट स्थितियालोकी अपेचा तीन तीन भंग वन जाने हैं, अतः इनकी प्ररूपणाको श्रोधके

\$ ६५. जहण्णयमि अहपदं। तं जहा—जे जहण्णस्स विहत्तिया ते अजहण्णस्स अविहत्तिया, जे अजहण्णस्स विहत्तिया ते जहण्णस्स अविहत्तिया। एदेण अहपदेण द्विहो णिहं मो ख्रोयेण आदंमेण य। तत्थ ख्रोयेण मोह०-जहण्ण-हिदीए सिया सच्चे जीवा अविहत्तिया, सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च, सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च, एवं तिण्णि भंगा। एवमजह०। णवरि विहत्तिया पुच्चं भाणियच्चं। एवं सत्तमु पुहवीमु सच्चपंचिद्यितिरिक्ख-मणुसतिय-सच्चदेव-सच्चविगलिद्य-सच्चपंचिद्य-वादरपुद्वि०पज्ज०-वादरखाउ० पज्जत०-वाटरतेउ०-पज्ज०-वादरवाउ०पज्ज०-वादरवणप्पदि०पत्तिय ०पज्ज०-सच्चतस०-पंचमण०-पंचविच०-

समान कहा। किन्तु लब्ध्यपर्याप्रक मनुष्य यह सान्तर मार्गणा है अतः इसकी अपेचा उत्कृष्ट स्थिति और अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंमेसे प्रत्येकके आठ आठ संग हो जाते हैं। इसी प्रकार और जिननी सान्तर मार्गणाऍ है उनमें नथा अपगतवेदी, अकपायी और यथास्यातसंयत इन तीन मार्गणाओंमें भी आठ आठ भंग प्राप्त होते हैं।

वह त्राठ भंग इस प्रकार हैं:-एक जीव उत्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाला (१), अनेक जीव उन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाला (२), एक जीव अनुन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाला (३), अनेक जीव अनुन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाला (३), अनेक जीव अनुन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाला (१) एक जीव उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाला और एक जीव अनुन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाला (१), एक जीव उत्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाले (६), अनेक जीव उत्कृष्ट स्थित विभिक्तवाले और एक जीव अनुन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाले (६), अनेक जीव उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले और अनेक जीव अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले (६)।

### इस प्रकार उन्कृष्ट भंगविचय समाप्र हुआ।

ें ६५. नाता जीवोंकी श्रपेसा जयन्य भंगविचयक कथनमें जो अर्थपट् है वह इस प्रकार हें — जो जघन्य म्थिति विभक्तिवाले हैं वे अजघन्य स्थिति विभक्तिवाले नहीं हैं । जो अजघन्य स्थिति विभक्तिवाले है वे जधन्य स्थितिविभक्तिवाले नहीं हैं। इस ऋर्यपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है--श्रोचनिर्देश श्रीर श्रादेशनिर्देश। उनमेसे श्रोचकी श्रोपेका कदाचित सभी जीव मोह-नीयकी जधन्य स्थितिविभक्तिवाले नहीं है । कहाचिर बहतसे जीव मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभ-क्तिवा । नहीं है स्रोर एक जीव माहनीयकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाला है। कदाचिन यहनमे जीव मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तियाले नहीं हैं श्रोर बहुतमे जीव मोहनीयवी जघन्य स्थिति-विभक्तिवाले है इस प्रकार जबन्य स्थितिविभक्तिकी ऋषेचा तीन भंग होते हैं । इसी प्रकार मोह-नीयकी अजवन्य स्थितिविभिवनकी अपनामे भी तीन भंग होते हैं। इतनी विशेषता है कि अज-घन्य स्थितिविभिन्तर्का अपेदा कथन करते समय 'विद्यत्तिया' का पहले कथन करना चाहिये। अर्थात् जिस प्रकार जवन्य स्थितिकी अपैद्या कथन करते समय तीन भंगोंमें अविभिन्तिवालोका पहले कथन किया है उसी प्रकार अजयन्य स्थितिकी अपेदा कथन करते समय तीन भंगोंमे पहले विभ-क्तिवालोंका कथन करना चाहिये । इसी प्रकार सातों प्रथिवियोके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य मनुष्य,पर्याप्त मनुष्य श्रीर मनुष्यनी यं तीन प्रकारके मनुष्य,सभी देव, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, बादर पृथिबीकायिक पर्याप्त. बादरजलकायिक पर्याप्त, बादर ऋग्निकायिक पर्याप्त, बादरवायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, सभी त्रस, पांचों मनोयोगी, काययोगि०-ओरालि० -वेउच्विय०-तिण्णिवेद०-चत्तारिकसाय-विहंग०-आभिणि०-सुद०-ब्रोहि०-मणपज्जव०-संजद-सामाइय-छेदो०-पिश्हार० संजदासंजद०- चक्खु०-ब्रचक्खु०-ब्रोहिदंस०-तिण्णिलेरसा०-भवसिद्धि०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-सण्णि--ब्राहारित्ति।

५९६. तिरिक्यः मोहः जः अजः णियमा स्रत्थि । एवं सव्वएइंदिय-पुढविः चादरपुढविः चादरपुढविद्यपज्ञः मुहुमपुढविः पज्जनापज्जनः — आउः -वादर-स्राउः -वादरआउत्रपज्ञः मुहुमस्राउः -पज्जनापज्जनः तेउः -वादरतेउः -वादरतेउत्रपज्ञः -मुहुमतेउः —पज्जनापज्जनः —वादः -वादरवाउः -वादरवाउः अपज्ञः -मुहुमवाउः -पज्जना पज्जनः —वाद्रवणप्पदिपत्तेयः अपज्ञः —वणप्पदि —िणगोदः -अरालियमिस्सः -कम्म -इयः -मदि –मुदः अण्णाणः —स्रसं जदः -ितिण्णलेः -स्रभवः -मिच्छादिः -स्रसण्णिः -अणाहारिः नः ।

ः ६७. मणुसञ्चपज्ञ ॰ उक्कस्सभंगो । एवं वेउव्वियमिस्स०-आहार०-त्राहार-मिस्स-( श्रवगद- ) अकसाय-सृह्म०-जहक्खाट०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० । एवं णाणाजीवेहि भंगविचत्रो समत्तो ।

पाचों वचनयोग,काययोगी, ख्रोदारिककाययोगी,बैक्रियिककाययोगी. तीनों वेदवाले, क्रोधादि चारों कपायवाले.विभंगज्ञानी, ख्राभिनिवोधिकज्ञानी, अनज्ञानी,ख्रवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी,मंयत, मामा-यिकमयत, छेदोपस्थानामंयत, परिहारविद्युद्धिमंयत, मंयतामंयत, चज्जुदर्शनवाले, अचज्जदर्शनवाले ख्रविदर्शनवाले, पीत ख्रादि तीन लेदयायाले, भव्य, सम्यग्दृष्टि, च्रायिकमम्यग्दृष्टि, वेदकमम्यग्दृष्टि गंजी ख्रोर आहारक जीवोके जानना चाहिये।

६६. तिर्यचोमे मोहनीयकी जयन्य स्थिति विभिन्नवाले और अज्ञयन्य स्थितिविभिन्निन्वाले जीव नियममे हैं। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, पृथिबीकायिक, बादर पृथिबीकायिक, बादर पृथिबीकायिक, बादर पृथिबीकायिक, अपर्याप्त, सूच्म पृथिबीकायिक अपर्याप्त, सूच्म पृथिबीकायिक अपर्याप्त, सूच्म पृथिबीकायिक अपर्याप्त, सूच्म जलकायिक,वादर जलकायिक,वादर जलकायिक,वादर जलकायिक अपर्याप्त, सूच्म जलकायिक, सूच्म जलकायिक अपर्याप्त, सूच्म अग्निकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूच्म वायुकायिक, सूच्मवायुकायिक पर्याप्त, सूच्म वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वास्प्तिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, वास्प्तिकायिक, निगोद, औदारिकिमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रनाज्ञानी, अस्ययन, कृष्ण आदि तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिश्यादृष्टि, असंज्ञी और आदारक जीवोक कहना चाहिये।

हुँ ८७. लद्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके उन्कृष्ट स्थितिविभिक्तिके समान यहां भी आठ आठ भंग हैं। इसी प्रकार वैक्षियकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, यकपायी, सूचमसांपरायिकसंयत, यथाच्यातसंयत, उपजमसम्यग्द्रष्टि, सासादनसम्यग्द्रिष्टि और सम्यग्मिथ्याद्यक्षि जीवोके जानना चाहिये। ६८८. भागाभागाणुगमा दुविहो — जहण्णञ्जो उक्कम्सञ्जो चेदि । तत्थ उक्कस्से पयदं । दुविहो णिहे सो — छोषेण अहेसेण य । तत्थ ओषेण मोह० उक्कम्सिहिटि — विहत्तिया जीवा सञ्बर्जावाणं केविडियो भागो ? अर्णातशभागो । ऋणुक० सञ्बजी० के० भागो ? ऋणांता भागा । एवं तिश्विश्व०-सञ्चण्ड्ंदियः वणप्पदि०-णिगोद०-काययोगि०-छोगाळ०-ओगाळ्यिभस्य-कम्मद्वय-णवुं स०--चत्तागिकसाय-मिट-मुट — अण्णाण-असंजद०-अनवस्यु०-तिष्णिलंस्सा-भवसिद्धिः -अभव ०-मिच्छा०-छमण्णि— आहारि०-ऋणाहारि सि ।

. ६६ आदेसेण णेग्इएसु श्रीह० उक्क० सव्यज्ञी० के० भागो ? असंखे० भागो । व्यणुक्क० सव्यज्ञी० केवडिक्री भारो ? असंखेज्ञा भागा । एवं सव्यपुढवि०-सव्यपंचि०तिग्वस्य-मणुस-भगुमव्यपज्ञ०-देव- भवणादि जाव व्यवगाइद०-सव्यविग-लिदिय-सव्यपंचिदिय-सव्यपुढिवि०-सव्यव्याउ० सव्यतेउ०-सव्यवाउ०-वादस्यणप्पदि०

विश्रोपार्थ-उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिकां अपेदा संगिविषयदा कथन करते समय स्रोध स्रोर आदेशमें जिन संगोको पहले बनला आये हैं वे संग यहां जबन्य स्रोर अजबन्य स्थितिकी अपेद्धा भी उसी प्रकार बन जाते हैं। किन्तु सामान्यितिषेच और एकेन्द्रियोसे लेकर अनाहारक तक सृत्में गिनाई हुई कुछ मार्गणाएं ऐसी है जिनमें जबन्य स्थितिवाले बहुत जीव और स्रजन्य स्थितिवाले बहुत जीव नियमसे पाये जाते है, स्रातः गद्दां (१) सोहतीयकी जबन्य स्थितिविभित्तवाले और स्रविभित्तवाले नाना जीव नियमसे हैं। (२) सोहतीयकी स्रजन्य स्थितिविभित्तवाले जीर स्रविभित्तवाले जीव दिसमसे हैं ये दो संग ही प्राप्त होते हैं।

इस पदार नाना जीवोंकी अर्दता संगविचयानुगम। समाप्त हुआ।

े हिन्न, भागाभगानगम दो प्रकारका है—जनस्य और उन्हृष्ट । उनमेसे उन्हृष्ट भागा-भागानुगमका प्रकारण है । उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है—आंधनिर्देश चौर आदेशनिर्देश । उनमेसे आंधनिर्देशकी अपेना मोहनीयकी एक्ष्ट किन्नि विश्वविद्याणे जीक एक जीवोके किनने भाग है १ अन्तन के भाग है । अनुष्कृष्ट क्लि विश्वविद्यावो जीव सब जीवोके किनने भाग है १ अन्तन बहुनाम है । इसी प्रवार निर्वेच, कार्या एरेकिया, धनस्पतिकायिक, निर्माद जीव, काय-योगी, ओद्यारिक अध्योगी, खोद्यारिक प्रिश्व व्ययोगी, कार्मणकाय्योगी, नपुंसकवेदयाले, कोधादि चारो क्ला व्याचे, मत्यज्ञानी, श्रुकाञानी, अस्प्यन, अचनुद्देशनवाले, हृष्ण आदि तीन लेस्यायले, भव्य, अस्व्य, मिथ्याहण्टि, असंजी, आहारक और अनाहारक जी लेके जानना चाहिये ।

्रह्ट आदेशनिर्देशकी अपेचा नारिकयोमें मोहनीयकी उन्द्रस्य निथितिविभिन्तिवालें जीव सब जीयोके कितने भाग हैं ? उमंत्रातवें भाग हैं । अनुत्रुस्य मियितिविभिन्तिवालें जीव सब जीयोके कितने भाग हैं ? असं यात बहुभाग हैं । इसी प्रकार मातो पृथिविथों के नारकी, सभी पंचेत्रियतिर्यच् सामान्य मनुष्य, लब्ध्यपर्यात्तक मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर अपराजित तकके देव, सभी विक्तेन्द्रिय, सभी पंचेत्रिय, सभी प्रियोकायिक, सभी जलकायिक, सभी अप्रिकायिक, सभी वायुकायिक, बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर,

पत्तेय ०-पज्जनापज्जत्त—सव्वतस-पंचमण०-पंचवचि०-वेउिव्वय०--वेउिव्वयिमस्स०— इत्थि०-पुरिस० - विहग०-आभिणि०- मुद्० अहेह०-संजदासंजद-चक्खु०--ब्रोहिदंस०-तिण्णिले०-सम्भादि० खइय०-वेटय०-उवसम०-सासण०-सम्माभि०-सण्णि ति ।

१००. मणुसपज्ञ०-मणुसि० मोह० उक्क० सव्वती० के० भागो ? संखे०-भागो ! त्र्रणुक्क० सव्वतीः के०? संखेजा भागा । एवं सव्वट०-आहार०-आहार— विस्स०-अवगट०-अकसाय-विषयज्ञ० सजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-मुहुमसांप०-जहाकस्वाद० ।

## एवमुक्स्सभागाभागो सबत्तो ।

# े १०१. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ऋोघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण

वाउर वनस्वतिकायिक प्रत्येक गरीर पर्याप्त,वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकश्ररीर अपर्याप्त,सभी ब्रस, पाचो मनोरोगी, पांचो वचर्यामी,बेकियककाय गर्गी, विकित्तिकिकायवागी, खोवदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, आमिर्गनेषीकिकाती, अत्वानी, अयधिज्ञानी, संयतासंयत, चनुदर्शनवाले, अविधि दर्शनवाले, पीत आदि तीन लेश्यावाले, सम्परहिट, चायिकसम्यग्हिट, वेदकसम्यग्हिट, उपश्रमसम्यग्हिट, सामादनगम्यग्हिट, सम्यग्मण्याहिष्ट और संज्ञी जीवोंके कहना चाहिये।

५००. मनुष्यवर्यान और मनुष्यिनयोमे सोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीव सव जीवो रु कितने काम है ? संख्यात्व भाग है । अनुकृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीव सव जीवोके कितने भाग है ? संख्यात्व भाग है । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिक देव, व्याहारककाययोगी, अहारकिश्रकाययोगी, व्यवगतवेदवाले, अकवार्या, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छदापस्थावनासंयत, परिहारविद्युद्धिसयत, सूदमस्वयर्गियकस्यत व्योर यथाख्यातसंयत जीवोकि जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—सामानाममें कोन किसके कितने भागप्रमाण है इसका धिचार किया जाता है। प्रकृतमें सामान्यरूपसे और विशेषरूपसे उन्कृष्ट स्थिति और अनुन्कृष्ट स्थितियाले जीव किसके कितने भाग है यह वतलाया गया है। लाकमें जितन उन्कृष्ट आर अनुन्कृष्ट स्थितियाले जीव हैं उनमें अनन्तवें भागप्रमाण उन्कृष्ट स्थितियाले हैं आर अनन्त बहुभाग अनुन्कृष्ट स्थितियाले हैं। नागणात्र्योकों अपेदा। उनकी रूपणा तीन प्रकारमें हो जाती है। कुछ मार्गणात्र्योमें उन्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितियाले प्रकृत्यात्र्य भागप्रमाण उन्कृष्ट स्थितियाले और अनेन्यात्र्य समान है। कुछ मार्गणात्र्याम असेन्यात्र्य भागप्रमाण उन्कृष्ट स्थितियाले और अनेन्यात्र्य स्थितियाले और अनेन्यात्र्य स्थितियाले और सिन्धित वहुमाग अनुन्कृष्ट स्थितियाले है। तथा कुछ मार्गणात्र्योमें सम्बातिय भागप्रमाण जाव उन्कृष्ट स्थितियाले है। इस सब मार्गणाआक नाम मूलम गनाय हो है। इसी प्रकार जघन्य और अजन्यन्य स्थितियाले जीवाके भागाभाग्रका खुलासा समकता चाहिये।

### इस प्रकार उत्कृष्ट भागावाग समाप्त हुआ।

१०१. अब जबन्य भागामागका प्रकरण है। उनकी अपेचा निर्देश है। प्रकारका है—
 ओविनिर्देश और और आदेशनिर्देश। उनमेसे आविनिर्देशकी अपेचा मोहनीयकी जबन्य स्थिति-

मोद्द० ज० सब्वजीवा० केविंडि० ? ऋणंतिमभागो । अज० सब्वजी० के० ? ऋणंता भागा । एवं कायजोगि०-ओरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-अचक्खु८-भविसिद्धिय-ऋहिरि ति ।

\$ १०२. आदेसेण णेग्इएसु मोह० ज० सच्चजी० के० ? असंखे०भागो । अज० सच्चजी० के० ? असंखेजा भागा । एवं सत्तरमु पुढवीसु सच्चितिरक्ख-मणुस — मणुसअपज्ञ०-देव०-भवणादि जाव अवगाइद०-सच्चएइंदिय-सच्चिविगिलंदिय-सव्वपंचिदिय-अकाय-पंचमण०-पंचविच०-ओरालियभिम्स-वेउच्विय०-वेउ०मिस्स०-कम्मइय०-इत्थि०-पुरिस०-मदि-सुद्अण्णाण-विद्दंग०-आभिण०-सुद्०-ओहि०-संजदा०-संजद०-असंजद०-चक्खु०-ओहिदंस०-अलेम्सा-अभव०-सम्मादि०-खर्य०-वेदय०-उवस्म०-सासण०-सम्मापि०-भिच्छादि०-सण्ण०-असण्ण -अणाहारि चि ।

१०३. मणुसपज्ज०-मणुसिणी० मोह० जह० सव्वजी०के० ? संखे०भागो । अज० सव्वजी० के० ? संखेजा भागा । एवं सव्वट्ट० आहार०-आहार्गामस्य०-अवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद्-सागाइय-छेदो०-परिहार०-मृहुमसांप०-जहाक्खाद०।

## एवं भागाभागाणुगया समत्तो ।

विभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? अनन्तर्वे भाग हैं । मोहनीयकी अजघन्य स्थिति-वाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? अनन्त बहुभाग हैं । इसी प्रकार काययोगी, ओंदारिक काययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारो कपायवाले, अचकुटर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवों के कहना चाहिये ।

६ १०२. आदेशनिर्देशको अपेता नारिकयोमे मोहनीयकी जयन्य स्थितिविमिक्तिवाले जीव विविद्धत जयन्य और अजयन्य स्थितिवाले नारिकी जीवोके कितने भाग है ? असंख्यातवे माग है । तथा अजयन्य स्थितिविमिक्तिवाले नारिकी जीवोके कितने भाग है ? असंख्यात बहुभाग है । इसी प्रकार सातों पृथिवियोके नारिकी, सभी तियंच, सामान्य मनुष्य, लट्व्यपर्यात्तक मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोमे लेकर अपराजित तक्षके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, छहो काष्याले, पांचो मनीयोगी, पांचो वचनयोगी, औत्रारिक मिश्रकाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, कार्मण्काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, मत्यज्ञानी,श्रुतान्त्रानी, विभंगज्ञानी,आभिनवोधिवज्ञानी,श्रुतज्ञानी,अविध्वज्ञानी,संयतासंयत,असंयत, चचुद्रजनवाले, अविधद्र्शनवाले, छहो लेख्यावाले, अभव्य, सम्यग्द्रिष्ट, चायिकसम्यग्द्रि,वेदकसम्यग्द्रिष्ट, उपशमिस्यग्द्रि, सासादनसम्यग्द्रि,सम्यग्निष्याद्रि, मिथ्याद्रि,संज्ञी, असंज्ञी और अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।

१०३. मनुष्यपर्याप्त श्रोर मनुष्यिनियोमे नोहनीयकी जघन्य स्थितियिमिनितवाले जीव जघन्य श्रोर श्रज्ञचन्य स्थितियाले पर्याप्त मनुष्य श्रोर मनुष्यिनियोके कितने भाग है ? संख्यातवें भाग है । तथा श्रज्ञचन्य स्थितिविमिक्त्राले जोव कितने भाग है ? संख्यात बहुमाग है । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिके देव, श्राहारकवाययोगी, श्राहारकमिश्रकाययागी, अनगतवेदवाले. श्रक्षपायी,

१०४. परिमाणाणुगमो दुविहो - जहण्णश्रो उक्कस्सओ चेदि । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो--श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ ओघेण भोहः उक्कस्सिहिद्दिः विहत्तिया जीवा केत्तिया ? असंखेजा । श्रणुक ० केत्तिया ? अणंता । एवं तिरिक्ख-सब्बएइंदिय॰-वणप्पदि०-णिगोद०-कायजोगि०-श्रोरालि०-ओरालियमिस्स०-कम्मइय०-णवुंस०-चत्तारिकसाय०-मिद-सुद्अण्णाण०-श्रमंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भविम०-अभविम०-भिच्छा०-श्रमण्णि०-आहारि०-अणाहारि ति ।

१०५. त्रादेसंण णेग्इएसु मोह० उक्क० त्राणुक्क० केत्तिया ? असंखेजा । एवं सत्तपुढवि०-सव्वर्षचिद्यितिग्वस्य-मणुमग्रपज्ञ०-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-सव्विविगलिदिय-सव्वर्षचिद्य -चत्ताग्विताय-सव्वतस-पंचमण-पंचविच०--वेजिव्यक्--वेजिव्यमिस्स०-इत्थि०-पुग्स०-विदंग०-आभिणि०-सुद०-त्रोहि०-संजदामंजद-चक्खु० ओहिदंस०-तिण्णिले०-सम्मादि०-वेद्य०-उवस्म०-सामण०-सम्माभि०-सण्णि ति ।

् १०६. मणुस० मोह० उक० के०? संखेजा। अणुक० ऋसंखेज्जा।

मनःपर्यययज्ञानी, संयत, सामायिकसयत, छेदोपस्यापनासयत, परिहार्पयक्वद्विभयत, सूर्यसापरा-यिकसंयत और यथारुयातसंयत जीवोके कहना चाहिये।

### इस प्रकार भागानागानुगम समाप्त हुआ।

९ १०४ परिमाणानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेसे उत्कृष्ट परिमाणानुगमका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अधिनिर्देश और आदेशनिर्देश । उसमें अधिकी अपेचा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितियिमिकितयाले जीव कितने हैं ? असंख्यात है । अनुकृष्ट स्थितियिमिकितयाले जीव कितने हैं ? असंख्यात है । इसी प्रकार तिर्यंच, सभी एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद, काययोगी, आँटारिककाययोगी, चौदारिकमिश्रकाययोगी, कामेणकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधिद चारा कपाययोले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अच्चुदर्शनी, कृष्ण आदि नीन लेश्यायोले, मत्य, प्रभव्य, मिल्याद्दिर, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोक जानना चाहिये।

१०५. आदेशकी अपेता नार्रिक्यों मोहनीयको उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभिवत-वाले जीव कितने हें ? अभंख्यात हैं। इसी प्रकार सातो प्रथित्याके नारकी, सभी पचेत्रियत्तियच, लब्यपर्याप्तक मनुष्य, सामान्य देव, भयनवासियों से लेकर महस्त्रार तकवे देव, सभी विकलेत्द्रिय, सभी पचेत्द्रिय, पृथिबीकायिक आदि चार कायवाले, सभी त्रस, पाची मनोयोगी, पांचा वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपयेदी, विभंगज्ञानी, आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, संयतासंयत, चतुर्द्रातवाले, अवधिद्र्रातवाले, पीत आदि तीन लेश्यावाले, सम्यन्दिर, वेदकसम्यन्दिर, उपश्रमसम्यन्दिर, सामादनसम्यन्दिर, सम्यग्मिण्यादिष्ट और संजी जीवोक जानना चाहिये।

ु १०६. मनुष्योमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिवितवाले जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिविभिवितवाले कितने हैं १ असंख्यात हैं। इसी प्रकार आनतसे लेकर अपराजित

एवमाणदादि जाव अवगड्द॰ भ्वडय॰दिहि ति । मगुसपज्ज - मगुसिणी० उकः अगुक्क॰ केत्ति०? संग्वेजा । एवं सम्बद्दः आहार०-आहारिक्स०-अवगद्ध-अकसारा मणपज्ज०-संजद्ध-समाइय-छेदो० परिहार्थ सहस्थ-जहाकस्वाद्धः ।

# एवमुक्स्मञ्जो परियाणाणुगयो सवत्ता ।

् १०७, जहण्णए पयदं । दृविही णिद्देसी—श्रीयेण आदेसेण य । तत्थ श्रीयेण मोह० ज - के० १ संखेजा । अज० के० १ अएता । एव कायजीग०-औराळि०-णवुंस०-चनारिकसाय - अचक्ख्०-भवसि०-आटारि चि ।

् १०८. आरेसेण रोग्इएसु मोह० ज० अज० केत्तियो १ असंखेजा । एवं पहसपुर्हित्र-सब्बपचिदिय—तिग्विस्व—समुसअपज्ञ०-देव०-भवणः -वाण०-सध्व— विगलिदिय - पंचिदियअपज्ञ०-चनारिकाय-तसअपज्ञते ति ।

तकक द्य आर चायिक सम्यग्हिष्ट जायोक जानना चाहिये । सनुत्य पर्यात्व आर सनुत्यानयाम् उन्द्रुष्ट और अनुन्द्रुष्ट स्थितिबिनिक वाले जीव कितने हे ? राव्यात है । इसी प्रकार स्थाय-सिद्धिक देव, आहारकालयंगी। आहारकिनिश्रकाययोगी, अपगत्येद्वली, अकवाया मनःपययजानी, संयत, सामायि त्यंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिविद्यद्विसंयत, सूच्मसापरायिकसंयत
और स्थाप्यातसंयत जीवोके कहना चाहिये ।

विशेषार्थ-इसमे ओव और आदेशसे उन्हुष्ट और अनुकुट (स्थितवाले जीवीकी सं रा वनलाई गई है। आघमे उन्हुट स्थितिवाले जीव असंल्यात और अनुन्हुट स्थितिवाले जीव अनन्त है। तथा आदेशमें संख्याकी प्रम्पपणा चार भागोंमें यट जाती है। जुड़ मागेणाएं अन्ता। संख्यावाली है जिनमें ओवप्रम्पपणा घटित हो जाती है। जुड़ मागेणाएं असंख्यात संख्यावाली है जिनमें उन्हुष्ट और अनुन्हुष्ट दानो स्थितिवाले असंख्यात है। कुड़ मागेणाएं असंख्यात संख्यात्वाली है परन्तु उनमें उन्हुष्ट स्थितिवाले जीव असंख्यात है। स्था उन्हु मागणाए संख्यात संख्यावाली है जिनमें उन्हुष्ट स्थितिवाले और अनुन्हुष्ट स्थितिवाले दोनों संख्यात है। मार्गणाधाके नाम भूतमें गिनार्थ है।

### इस प्रकार उत्कृष्ट परिमाणान्गम समाप्त हुन्या।

६ १०७. अब जवन्य परिमाणानुगमका प्रकरण है ? उसकी अपेज। निदेन दो अकार का है - आंघि निदेन सोर आदेशनिर्देश । उनमेसे ओघकी अपेज। मोहनीयकी जघन्य स्थिति क्रिक्ति बाले जीव किनने है ? संस्थान है । अजयन्य स्थिति विभक्ति जीव किनने है ? अन्त है । अजयन्य स्थिति विभक्ति जीव किनने है ? अन्त है । इसी प्रकार काययोगी, ओदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चारां कपायवाले, अबजुद्धान वाले, भव्य और आहारक जीवों के जानना चाहिये ।

६ १०८. श्रादेशकी अपेता नारिकयोम मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ अमेर्यात हैं। इसी प्रकार पहली प्रथिवी के नारकी, सभी पेचिन्द्रिय तियच, जघ-यप-याप्तक मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासी, ज्यन्तर, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय छघ यपयीप्रक, पृथि-बीकायिक आदि चार स्थायरकाय, और त्रस लघ-यपयीप्रक जीवोका परिमाण जानना चाहिये।

- ९ १०६. विदियादि जाव छिंड चि मणुसक जोदिसियादि जाव अवराइद-पंचि०-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचिक वेउव्वि०-वेउव्वियमिस्स -इस्थि०-पुरिसा० विद्दंगक स्त्राभिणिक सुद०-ओहिल-संजदामंजद०-चक्खु०-ओहिद्सेल-तिण्णिले०-सम्बद्धदि• खइय०-वेद्यक-उत्रस्यक्र-सामण० सम्पामिल-सण्णि० मोह०डिदि० केऽ १ संखेजजा । स्रज्ञ० के० १ असंखेजजा ।
- ६ ११०. सत्तमाइए मोह० ज० अज्ञ० केत्ति० ? अमंखेज्जा । तिरिक्ख० मोह० ज० अज्ञ० के० ? अर्छाता । एवं सम्बण्इंद्यि-सम्बवणप्फद्धि-सम्बणिगोद०-ओगिलियिषस्स ०-कम्मइप०-पिट-सुटअण्णाण-असजद०-तिण्णिले०—अभव०-पिच्छा— दिहि०-अमिण्णि०-अणाहारि ति ।
- १११, मणुसपज्जरु-मणुसिणीय मोहय जय अजय केत्तिया १ संखेज्जा। एवं सञ्बद्धव-आहारय-ब्याहारसिस्सव-ब्यवगदय-अकसाव-मणपज्जय-संजदय-सामाइय-बंदोय-परिहारव-सुहुभसांपरायव-जडाक्याद्मंजदा ति ।

# एवं परिभाणाणुगमो समत्तो ।

विशेषार्थ—स्रोवसे जवन्य स्थिति चपक जीवके दशवें गुग्गस्थानके स्रान्तिम समयमें प्राप्त ोती हैं। स्रतः स्रोवकी स्रपेका जवन्य स्थितिवाले जीव संख्यात हैं। तथा इनके स्रातिरिक्त

६१०२. दृसरी पृथिबीसे लेकर छठी पृथिबी तकके नारकी,सामान्य मनुष्य,ज्योतिषियोसे लेकर अपराजित तकके देव.पंचे ित्य,पंचे ित्य पर्याप्त,त्रम.त्रमपर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, विकिषिक हा ययोगी, विकिषिक मिश्रकाययोगी, स्वीवदी, पुरुषविदी,विभंगज्ञानी,त्र्यामिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुवज्ञानी, त्र्यविद्यानी, संयतान्यय, चवदर्शनवाले, श्रुवधिदर्शनवाले, पीत स्वादि तीन लेश्यावाले, सम्प्रहृष्टि, ज्याविक सम्यग्रहृष्टि, वेदक सम्यग्रहृष्टि, उपभासस्यग्रहृष्टि, सामादनसम्यग्रहृष्टि, सम्यग्रिक्ष स्वीविक सिक्त के हैं १ संस्थात हैं । तथा अज्ञधन्य स्थितिष्य मिलतवाले जीव कितने हैं १ संस्थात हैं ।

६ ११०. सानवी प्रथिवीमे मोहनीयकी जयन्य और अजयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात है। तियेचीमे मोहनीयकी जयन्य और अजयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त है। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, सभी यनस्पतिकायिक, सभी निगोद, औदारिकितिश्रकाययोगी, कामेश्वकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, हृष्ण आदि तीन लेश्यावाले. अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असती और अनाहारक जीवीके कहना चाहिये।

१११. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनयोमं मोहनीयकी जवन्य श्रोर अजवन्य स्थितिविभक्ति-वाले जीव किनने हैं १ संख्यात हैं । इसी प्रकार सर्वार्थमिद्धिक देव, आहारककाययोगी, श्र हारकिमश्रकाययोगी, अपगलवेदवाले, श्रकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, सयत, सामायिकसंयत, होदो स्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सृत्मसापरायिकसंयत श्रोर यथाख्यातसंयत जीवोके जानना चाहिये।

११२. खेनाणुगमो दुविहो जहण्णओ उक्तम्सओ चेदि। उक्तस्से पगदं। दुविहो णिद्देसी— ओवेण आदेसेण य। तत्थ ओवेण मोह० उक्त० केविह खेने १ लोगस्स असंखे भागे। अणुक्त० के० खेने १ सच्चलोण्। एवं तिरिवख-सच्चण्इंदिय०— पुढिवि०— वादग्युढिवण्डन पडिम्युढिवण्डन पादग्याउभ्याउन- आउ०- वादग्याउभ्याउन-सृह्मआउ०-प्रजनाप्डन नेउ०-वादग्तेउ०-वादग्तेउभ्याउन-सृह्म- तेउ-प्रजनाप्डन नवादग्वाउभ्याउन- वादग्वाउभ्याउन- वादग्वाउभ्याउन- सच्ववण्फिटिए नेयग्रप्डन०- सच्ववण्फिटि०-सच्विणगोद०- कायजोगि०-ओगिल्येन आगिल्यिभिम्स०-कम्मह्य०-णवुंस०-चनाग्विसाय—मिद्य-सुद्भण्णाण०-असंजठ०- अचक्यु०-तिण्णिले०भविस०-ग्रभवसि०-भिन्छा०-असिण्ल-आहिण्-आहिए०-अणाहारि नि।

मंहिनीयकर्मकी सत्तावाले शेष मय जीव अजघन्य स्थितिवाले हुए और उनका प्रमाण अनन्त हं अतः अघिमे अजघन्य स्थितिवाले जीव अनन्त कहें। तथा मार्गणाओकी अपेला विचार करने पर कहीं आष जघन्य स्थितिवाले जीव अनन्त कहें। तथा मार्गणाओकी अपेला विचार करने पर कहीं आष जघन्य स्थिति सम्भव है। इमीप्रकार कहीं जघन्य स्थितिवाले काल एक समय हैं और कहीं अन्तमुँ हुने, अतः जहां जिस प्रकारसे जघन्य स्थितिवाले जीवोका वस या अधिक संचय होता है वहां उसके अनुसार उनकी संख्या कहीं। किन्तु अजघन्य स्थितिवालोकी संख्या सर्वत्र अपनी अपनी मार्गणाकी संख्याके अनुसार जानना चाहिये। अर्थान जिस मार्गणामे अजघन्य जीवोकी संख्या अनन्त जीवना।। तथा जिस मार्गणामे जीव असंख्यात या संख्यात है उसमे अजघन्य स्थितिवाले जीवोकी संख्या असंख्यात या संख्यात जानना।

## इस प्रकार परिमाणानुगम समाप्त हुआ।

११२. तेबानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेसे उत्कृष्ट चेत्रानुगमका प्रवरण है । उमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघितिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेसे योघिनिर्देशको अपेचा मोहनीयकी उत्कृष्ट विभिन्नवाले जीव कितने चेत्रमें रहते हैं ? लोकके अमंख्यानवें भाग चेत्रमें रहते हैं । अनुत्कृष्ट म्थितिधिभिन्नवाले जीव कितने चेत्रमें रहते हैं ? मव लाक्ष्में रहते हैं । अनुत्कृष्ट म्थितिधिभिन्नवाले जीव कितने चेत्रमें रहते हैं ? मव लाक्ष्में रहते हैं । इसी प्रकार निर्यक्ष, सभी एकेन्द्रिय, प्रधिवीकायिक, वादर प्रथिवीकायिक, वादर प्रथिवीकायिक अपर्याप, सूच्म प्रथिवीकायिक, यादर जलकायिक अपर्याप, सूच्म जलकायिक, यादर जलकायिक अपर्यापत, सूच्म जलकायिक, यादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक अपर्यापत, सूच्म अग्निकायिक, यादर अग्निकायिक अपर्यापत, सूच्म अग्निकायिक अपर्यापत, सूच्म वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्यापत, सूच्म वायुकायिक अपर्यापत, यादर वायुकायिक अपर्यापत, यादर वायुकायिक अपर्यापत, यादर वायुकायिक अपर्यापत, यादर वार्यकायिक अपर्यापत, सूच्म वायुकायिक अपर्यापत, यादर वार्यकायिक, माने विगापत, कार्यवाणी, आदारिककाययोगी, आदारिकिमिश्र हार्योगी, कार्मेण्यवाणी, निर्मेषकवेदी, काधादि चारो कपायवाले, मत्यज्ञानी, अग्निकानी, अग्निकानी, अग्निकारक जीयेके कहना चाहिये।

\$ ११३. आदेमेण णेरइएसु मोह० उक्क० अणुक्क० के० खेते १ लोग० असंखे०भागे । एवं सत्तपुढिव - णेरइय-सन्वपचिदियतिरिक्ख० - सन्वमणुस्स-सन्वदेव-सन्वविगलिदिय-सन्वपंचिदिय-वाद्रपुढिविपज्ञ० - वाद्रजेड - पज्ज० - वाद्रजेड - वाद्रजे

६ ११४. वाट्रवाउपज्ञ० उक्क० के० खेत्ते १ लोग० अमंखे०भागे । ऋणुक्क० लोग० संखे०भागे ।

# एवमुक्कम्सखेत्ताणुगमी समत्ती ।

\$ ११३. त्रादेशनिर्देशकी त्रपंत्ता नारिकयोमे मोहनीयकी उन्छप्ट व त्रमुत्कृष्ट स्थिनिविभक्तिन्वालं जीव किनने त्रेत्रमें रहते हैं १ लोकके त्रमंत्व्यानवे भाग त्रेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार सानों पृथिवियोके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय निर्यंच, सभी मनुष्य. सभी देव, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, वादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, वादर त्र्रायनकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पत्तिकायिक प्रत्येक अर्रार पर्याप्त, सभी त्रम,पाचो मनोयोगी, पांचो वचनयोगी,वेकियिककाय-योगी, वैकियिकमाययोगी, आहारककाययोगी, त्राविद्याले,अकप्रयोगी, आहारककाययोगी, त्राविद्याले,अकप्रयोगी,विभंगजानी, ग्राभिनिवोधिकज्ञानी,अवद्यानी,त्र्रायनी,मनःपर्ययक्षानी, स्वयानवेदवाले,अकप्रयोगी,विभंगजानी,ग्राभिनिवोधिकज्ञानी,अवद्यानी, स्वप्तानी,मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापतासंयत, परिहार्राथग्रीहसंयत, सृत्मश्परायिकसंयत, यथान्यानसंयत, चन्नुद्रानी, त्र्रायनसंयत, पंत्रत्रायाले, सम्यग्द्रिय, व्याप्तसंयत, संयनासंयत, चन्नुद्रानी, त्र्रायस्थिकसंयत, प्रत्रावाले, सम्यग्द्रिय, वायिकसम्यग्द्रि, वेदगसम्यग्द्रि, उपश्चमसम्यग्द्रि, सासादनसम्यग्द्रि, सम्यग्मिण्यादृष्टि श्रीर संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

ई ११४. बादर बायुकायिक पर्याप्त जीवोमे उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीव कितने क्रियमें रहते हैं ? लोकके व्यासंख्यातवें भाग क्रियमे रहते हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीव कितने क्रियमें रहते हैं ? लोकके संख्यातवें भाग क्रियमें रहते हैं ।

विशेषार्थ-श्रोघमे उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव यसंख्यात हैं श्रोर मार्गणाश्रोमेसे किसीमें असंख्यात है श्रोर किसीमें संख्यात । अतः उत्कृष्ट स्थितिवालोका जेन्न सर्वन्न लोकके असंख्यात वें भाग प्रमाण कहा । किन्तु अनुन्कृष्ट स्थितिवालोमें श्रोघ या आदेशमें जिनका प्रमाण अनन्त हैं उनका जेन्न सब लोक कहा श्रार जिनका प्रमाण असंख्यात हैं उनका जेन्न तीन प्रकारका हैं। किन्हीं मार्गणाओंका सब लोक जेन्न हैं, किन्हींका लोकका संख्यातवा भाग जेन्न हैं। तथा जिन सार्गणावालोंका प्रमाण संख्यात हैं उनका जेन्न लोकका असंख्यातवां भाग ही हैं। जिन मार्गणावालोंका जिनना जेन्न हैं उनके नाम मूलमें गिनाये ही हैं।

६ ११५. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेमो—श्रोघेण श्रादेसेण य । तन्थ श्रोघेण मोह० जह० अजह० उक्कम्सभंगो । एवं कायजोगि० ओगिळ०-णवुंम०-चत्तारिक०-अचक्खु० भविम०-आहारि ति ।

१११६. आदेमेण णिग्यगदीए मोह० जह० खजह० उक्कम्सभंगो । एवं सत्त-पुद्वीसव्यपंचिदियतिष्कित्व-सव्यमणुस-सव्यदेव-सव्यचितिदिय-सव्यप्पपदिपत्ते य-वाद्गपुद्विपज्ज०-बादग्द्याउपज्ज०-बाद्गतेउपज्ज०बादग्याउपज्ज०-बादग्यणप्पदिपत्ते य-पज्ज०-पच्णण० पंचर्यच० - येउव्यिय०-वेउ०िस्य० आहाग०-ख्राहागिसम्स०-इत्थि०-पुरिस०-ख्रवत्त०-ख्रद्यसा०-विहंग०-ख्राभिणि०-सृद्०-ओहि०-सण०पज्ज०-संजद०-सामाइय०-छेटो० पिन्हाग० सृहुम० जहाबस्थाद -संजदामंजद०-चक्खु०-ओहिद्स०-तिष्णत्ते०-सम्बद्धि०-ख्रुय०-वेदय०-उदस्य०-सामण०-सम्माधि०-सिष्णि ति । णविरि वादग्याउपज्ज० जह० अजह० लोगम्स संखे०भागे ।

११७ तिरिक्षाव भोह० जह० अजह० के० खेत्ते ? सव्वलीए । एवं सव्य-एइंडिय-पुरुविक वादरपुरुवि -वादरपुरुवि प्रपत्तक-सुदुनपुरुविपत्तत्तापत्तत्त्त-त्राउ०-वादर-

१११६. अब ज्ञयन्य स्थितियिभक्ति चेत्रानुगशका प्रकरण् है। उसकी अपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है— योष निर्देश और आदेशनिर्देश । उनसे में खोषितिर्देशकी श्रोता सोहनायकी ज्ञथन्य आर अवधन्य स्थितियर्धकार्ती अपेता चेदका कथन उत्तर स्थितियर्धकार्के समान है। इसी प्रकार काययोगी, ओंदारिक अपयोगी, ज्युंपकवेदी, के धादि चारी कपायवाने, अचनुदर्शनी, भट्य और अध्यक जीतों अधना चार्थि।

११६. आरंशनिर्देशकी अपंचा नरमगतिमें मंप्तनीयकी जघन्य और अजपन्य स्थितिनिर्मित कार्या कर्म अपंचा च्या उत्कृष्ट स्थिति क्षितिक समान है। इसी प्रकार साने पृथिवियों के नार्यी, सभी प्रोत्य विश्वत, सभी रागुण, सभी देव, सभी विक्वेत्य, सभी पंचेत्य, सभी अस, बादर प्रथियों कांचिक प्रयोत्र, बादर जानिर्मित्य कांचिक प्रयोत्र, बादर वायुक्तिय क्ष्यां कांचिक प्रयोत्र, बादर वायुक्तिय क्ष्यां कांचिक प्रयोत्र, बादर वायुक्तिय क्ष्यां कांचिक प्रयोत्र कांचिक क्ष्यां कांचिक क्षयों कीं, विक्वित कांचिक क्ष्यां कांचिक कांचि

\$ ११७. निर्यवांमें मोहानीयकी जयन्य और अजयन्य स्थितिविभिवित्याले जीव कितने चेत्रमें रहते हैं । सब लोकमें रहते हैं । इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादरपृथिवीकायिक, बादरपृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूनमपृथिवीकायिक, सृत्वमपृथिवीकायिक

त्राउ०-वाद्रआउत्रपज्ञ०-मुहुभआउ-पज्जनापज्जन-तेउ०-[वाद्रतेउ०-]वाद्रतेउत्रपज्ज०-मुहुभतेउ०-पज्जनापज्जन-वाउ०-वाद्रवाउ०-वाद्रवाउत्रपज्ज०- सुहुभवाउ०--पज्जना पज्जन-वाद्रवणप्फिद्०पत्तेय०-ते(सहपज्ज०-सब्ववणप्फिद्०-सब्विणगे:द०अ)राल्यि-मिस्स०-कम्मइय०-मिद्-मुद्अण्णाण-त्रमंजद०-तिष्णिलेस्सा-त्रभवसि०-बिच्छादि०-त्रसण्णि-अणाहारि नि ।

\$ ११८. एत्थ मूलुचारणापाहो—तिरिक्ख गोह ० जह ० लेग ० संखे ० भागे । अज ० सब्बलोगे । एदस्साहिष्पाओं सत्थाणिवसुद्धवादरेईदियपञ्चलएमु चेव जहण्ण-साभित्तं जाविषिद् । एवमेईदिय-वादरेईदियपञ्चलापञ्चल-वाउ-वाउर्वाउ०-तदपञ्चलाणं च वत्तव्वं । एदिस्य अहिष्पाण् चलारिकाय-तेमि वाद्र-तद्पञ्चलाणं जह ० लोग ० असंखे ० भागे । अज ० सब्बलोगे । सिद्-सुद्अष्णाण०-असंजद् ० तिष्णिले ० - अभव ० - भिच्छादिदि-असण्णीणं वादरवाउभंगो । एतदणुसारेण च पोसर्णं णेद्व्विधिद् एद-मेत्थ पहाणं ।

# एवं खेत्ताणुगमा समत्ता।

व्यपयाप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक वादर जल रायिक अपयाप्त, सूच्म जलकायिक, सूच्म जलकायिक पर्याप्त, सूच्म जलकायिक अपयाप्त, व्यप्तिक, वादर अभिनकायिक वादर अभिनकायिक अपयाप्त, सूच्म अभिनकायिक पर्याप्त, सूच्म अभिनकायिक वादर अभिनकायिक वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपयाप्त, सूच्म वायुकायिक, सूच्म वायुकायिक पर्याप्त, सूच्म वायुकायिक अपयाप्त, वादर वनम्पतिकायिक प्रत्येक अरीर, वादर वनम्पतिकायिक प्रत्येक अरीर, वादर वनम्पतिकायिक प्रत्येक अरीर, वादर वनम्पतिकायिक प्रत्येक अरीर अपयाप्त, कार्मणकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, अस्यत, अपयाप्त, अपयाप्त, वादर वनम्पतिकायिक, सभी निगोद, आदारिक्षित्रकाययागी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, अस्यत, अपयाप्ति, वादयेविक, असंबी अस्यत्व, अस्यतेविक, वान्तिविक्ष, वान्तिव

\$ ११ मण्डां पर मृणाचार एका पाठ है कि निर्यचाम मां, चीयकी जयन्य स्थितिविभित्तवाले जीव लोक के संख्यात वें भाग लेखने रहते हैं। तथा अजवन्य स्थितिविभित्तवाले जीव सब लोक में रहते हैं। इसका यह आभिवाय है कि स्वस्थान बिछुद्ध बादर एके न्त्रिय पर्याप्तकों में ही जहा तक जवन्य स्थामित्व है वहा नदा अन लेख प्राप्त होता है। नात्पर्य यह ह कि निर्यचों में जयन्य स्थिति बादर एके न्द्रिय पर्याप्त कों के ही प्राप्त होती है और उनका पत्र लोखके संख्यान वें भाग से अधिक नहीं इसितये सामान्य निर्यचों में जवन्य स्थितिवाले जीयों का विश्व उकत प्रमाण बनलाया है। इसी प्रकार एके न्द्रिय, वादर एके न्द्रिय प्रयाप्त, वादर एके न्द्रिय प्रयाप्त, वादर एके न्द्रिय प्रयाप्त, वादर एके न्द्रिय अपयोप्त, वायुकायिक आदि वादर वायुकायिक अपयोप्त जीयों के कहना चाहिये। तथा इस अभिप्रायानुसार प्रविवीकायिक आदि चार स्थादरकाय, उनके वादर ओर उनके बादर अपयोप्त जायों में जवन्य स्थितिविभित्तवाले जीव सब लोक में रहते हैं। मत्युकानि, श्रुताकानी, अमयन, प्रपण्ण आदि तीन लेस्यावाले, अभव्य, मिण्याहिष्ट और असंबी जीवोंक बादर वायुकायिक जीवाक समान चेत्र हैं। तथा इसिक अनुसार स्थानका कथन करना चाहिये। इस प्रकार यही विवच्ना यही पर प्रधान है। तथा इसिक अनुसार स्थानका कथन करना चाहिये। इस प्रकार यही विवच्ना यही पर प्रधान है।

विशेषार्थ-श्रांत्रसे जवन्य स्थितिवालं जीव संख्यात हैं श्रोर मार्गणाश्रोकी श्रपेत्ता

११६ पोसणाणुगमो दुविहो— नहण्णश्रो उक्कस्सओ च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिह सो— ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण मीह० उक्कि० के० खेत्तं पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अह-तेरहचोहम भागा वा देसणा । श्रणुक्क० खेत्त-भंगो । एवं कायजोगि०-चत्तारिकसाय-मित्त्रप्रणाण-सुद्अण्णाण-असंनद०-अचक्खु०-भव०-श्रभव०-भिच्छाद्०-श्राहारि ति ।

किसीमे अनन्त हैं. किसीमे असंख्यात और किसीमे संख्यात है। इनमेसे जिन मार्गणाओंमे जघन्य स्थितिवाले संख्यात जीव हैं उनका वर्तमान जेव लोकके श्रमख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। जिन मार्गणात्रोम असंख्यात है उनमेंसे ऋछ मार्गणाएं तो ऐसी हैं जिनका वर्तमान चेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण ही हैं। जैसे सातों नरकोके नारकी ऋादि। तथा वाहरवायकायिक पर्याप्त यह मार्गणा ऐसी है जिसकी अपेना जघन्य स्थिनिवाले जीवोंका नेत्र लोकके संख्यातवें भाग-प्रमाण है। इनके अतिरिक्त जो अनन्त संख्यावाली और असंख्यात संख्यावाली मार्गणाएं शेप रहती हैं उनकी अपेचा जघन्य स्थितियाले जीयोंका वर्तमान चेत्र सब लांक प्राप्त होता है। जैसे सामान्य निर्यंच, एकेन्द्रिय और पृथिवीकायिक आदि। पर इस विषयमे मुलीचारणामें जो पाठ पाया जाता है उसका यह अभिप्राय है कि मूलमे असंख्यात संख्यावाली और अनन्त संख्यावाली जिन मार्गणात्रोकी जघन्य स्थितिवाले जीवोका देत्र सब लोक कहा है उनमेसे पृथिवीकायिक त्रादि चार स्थावरकाय, उनके वादर तथा वादर त्रापर्यात जघन्य स्थितिवाले जीवों का त्तेत्र तो लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है और इन्हे छोड़कर रीप सब जबन्य स्थितिवाले जीवोंका ज्ञेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। सा वीरसेन स्वामीने इस मतभद्का यह कारण बतलाया है कि ऊपर जो सब लोक चेत्र कहा है वह मारणान्तिकसमुद्धात अविकी अपेचामें कहा है और मुलानचारणामें जो कुछका लोकके अमंख्यातवे भागप्रमाण श्रीर कुछका लोकके संख्यातवें भागप्रमाण त्रंत्र कहा है वह स्वस्थानस्वस्थानकी अपेत्रासे कहा है, अतः दोनों कथनोंमें कोई विरोध नहीं है। फिर भी वीरसेन स्वामी इन दोनोंमसे मुलोचारणाके अभिप्रायको प्रधान मानते हैं और उसके अनुसार स्वर्शनके कथन करनेकी सूचना भी करते हैं। अब रहा ओघ और आदेश से अजधन्य स्थितियाले जीवोका चेत्र सां आंच या आदेशसे जिसका जितना चेत्र बतलाया है, श्वजघन्य स्थितिकी अपेन्ना भी उसका उतना ही नेत्र जानना चाहिये। क्योंकि सर्वत्र यदापि जघन्य स्थितिवाले जीव कम हो जाते हैं फिर भी इससे अजघन्य स्थितिकी अपेका उनके क्रिमे न्युनता नहीं आती।

### इस प्रकार चेत्रानुगम समाप्त हुआ।

\$ ११६. स्पर्शानुगम दो प्रकारका है — जयन्य और उत्कृष्ट । उनमेंसे उत्कृष्ट स्पर्शनानुगमका प्रकरण है । उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है — आंपनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे आप निर्देशकी अपेना माहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तनवाले जीवोंने कितने नेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातर्वे भाग नेत्रका तथा त्रस नालीक चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भागप्रमाण नेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंका स्पर्श नेत्रके समान है । इसी प्रकार काययांगी, कोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुनाज्ञानी, असं-यत, अचनुदर्शनी, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक जीवोंके कहना चाहिये ।

विशेषार्थ-यहां मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका जो लोकने असंख्यात वें भाग प्रमाण

१२०. आदेसेण णिरय मोह० उक्क० अणुक्क० के० खेनं पोसिद १
 होगस्स असंखे०भागो अचेदिस भागा वा देसुणा । पढमाए खेतभगो । विद्यादि
 जाव सत्तिभि तो मोह० उक्क० अणुक्क० के० खेनं पोसिदं १ लोग० असंखे०भागो
 एक-वे-तिण्णि-चत्तारि-पंच-अचोदस भागा देसुणा ।

स्पर्श वतलाया है वह वर्तमान कालकी मुख्यतामें बतलाया हे, क्योंकि मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति सातो नरकोके नारकी, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त िर्यंच, पर्याप्त मनुष्य व वारहवें स्वर्ग तकके देवों के ही सम्भव है। पर इन सबका वर्तमान चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही है। त्रसनालीके चौरह भागोमसे जो कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भाग प्रमाण स्पर्श वतलाया है वह अतीत कालकी अपचासे वतलाया है क्योंकि विहारवत्स्वस्थान, वंदना, कपाय और वैकिथिक पदसे परिणत हुए मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंने कुछ कम आठ भाग स्पर्श किया है और मारणान्तिक समुद्धातसे परिणत हुए मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंने कुछ कम तेरह भाग स्पर्श किया है। मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंने कुछ कम तेरह भाग स्पर्श किया है। मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंने कुछ कम तेरह भाग स्पर्श किया है। मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंने कुछ कम तेरह भाग स्पर्श किया है। हां स्वस्थानस्वस्थानपद अवश्य होता है सो उसकी अपेचा स्पर्श लो के अतंर ख्यात्वें भागप्रमाण जानना चाहिये। तथा मोहनीयकी अनु कुष्ट स्थितिवालोका चत्र जब कि सब लोक है तब स्पर्श तो सब लोक होगा ही। कुछ मार्गणाएं भी एसी है जिनमे यह आंच प्रसूपणा अविकल बन जाती है अतः उनके कथनको आंचके समान कहा। जैसे काययोगी आदि।

\$ १०० आदेशनिर्देशकी अपेत्ता नरकगितमें नारिकयों में मंहिनी पकी उन्छए और अनुन्छए स्थितिविभीक्तवाले जीवोंने कितने त्तेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग त्तेत्रका और असनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भाग त्तेत्रका स्पर्श किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्श त्तेत्रके ममान है। तथा दूसरी पृथिवीसे लेकर मानवीं पृथिवी तक प्रत्येक पृथिवीमें मोहनीय की उन्छए और अनुन्छए स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने त्रेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग त्रेत्रका तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम एक, दो, तीन, चार, पांच और छह भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्श किया है।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारिकयोंका वर्तमान कालीन स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं और अतीन कालीन स्पर्श त्रमनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण बतलाया है। इसीसे यहां पर मोहनीयकी उत्कृष्ट आर अनुन्कृष्ट स्थितिवाले नारिकयोंके दोनो प्रकारका स्पर्श उक्तप्रमाण कहा। विशेषकी अपेक्षा जिस नरकका अतीत कालीन जितना स्पर्श बतलाया है उतना ही जान लेना चाहिये जो मूलमे बतलाया ही है। यहां हमने पद्विशेषोंका उल्लेख नहीं किया है सो यह सब विशेषता जीवहाणसे जान लेनी चाहिये।

\$ १२१. तिर्यंच गितमे तिर्यंचोंमें माहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिधिभ कितवाले जीवोने कितने चित्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने

१२२. पंचिदियतिरिक्वतियम्मि उक्क० तिरिक्वोधं । अणुक्क० के० खे० पो० १ लोग० असंखेभागो सञ्बलोगो वा । पंचिदियतिरिक्खअपञ्ज० मोह उक्क० लोग० असंखे भागो । अणुक्क० लोग० अमंखे०भागो सञ्बलोगो वा । एवं मणुस-अपञ्ज० ।

च्चिका स्पर्धा किया हे १ सब लोकप्रमाण च्चिका स्पर्धा किया है । इसी प्रकार अोदारिककाययोगी और नपुंसकवेदी जीवोके कहना चाहिये ।

विशेषार्थ — तिर्यचोंमें मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थिति मंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यचोंके ही सम्भव हैं और इनका वर्तमान निवास लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होता हैं, अतः तिर्यचोंमें माहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिवाले जीवोका वर्तमान स्पर्भ लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण वत्तलाया है। तथा मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिवाले तिर्यचोंका अतीत कालीन स्पर्श कुद्ध कम छह वटे चोदह भागप्रमाण वत्तलानेका कारण यह है कि ऐसे तिर्यचोंने मारणान्तिक समुख्यात हारा नीचे बुद्ध कम छह राजुप्रमाण लेतका स्पर्श किया है। क्योंकि जिन तिर्यचोंके मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिका वन्य हो रहा है उनका संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तियंच, मनुष्य और नार्यक्रयोंमें ही मारणान्तिक समुख्यात करना सम्भव हैं। तथा मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थिति सब जातिके तिर्यचोंके सम्भव हैं और वे सब लोकमें पाये जाते हैं अतः मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थितिवाले तिर्यचोंका सब लोक स्पर्श वत्तलाया है। ओवारिककाययोग और नपुंसकवेदमें भी यह व्यवस्था वन जाती है, अतः इनके स्पर्शकों सामान्य तिर्यचोंके समान वतलाया है।

\$ १२२ पवेन्द्रिय तिर्थच, पंचेन्द्रिय तिर्थच पर्याप्त श्रीर पंचेन्द्रिय तिर्थचयोतिमती इन तीत प्रकारके नियं छोमे उन्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन सामान्य तिर्थचोंके समान है। तथा उकत तीन प्रकारके तिर्थचोंमें अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक ।वाले जीवोंने कितने तेवका स्पर्शन किया है १ लोकके असंख्यातवे भाग ज्ञेत्रका खार सब लोकप्रमाण ज्ञेत्रका स्पर्श किया है। पंचेन्द्रियित्यंच लब्ज्यपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवे भाग ज्ञेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवे भाग ज्ञेत्रका खार सर्व लोक त्रेत्रका स्पर्श किया है। इसा प्रकार लब्ज्यपर्याप्तक सनुष्पोके जानना चाहिये।

विशेषाथं—सामान्य निर्यवांमं जो उन्कृष्ट स्थितवाले जीयो का स्पर्ध कहा है वह पंचेन्द्रिय निर्यविक्र की मुख्यतासे ही कहा है अतः इन तीन प्रकारके निर्यवांमं उत्कृष्ट स्थितिवाले जीयोका स्पर्ध सामान्य निर्यवोंके समान वनलाया है। किन्तु उक्त तीन प्रकारके निर्यवांमं अनुत्कृष्ट स्थितवाले जीयोक स्पर्धामं छुट्ठ विशेषाता है। वात यह है कि इन तीन प्रकारके निर्यवांका वर्तमान स्पर्ध लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण है और अर्तानवातीन स्पर्ध सब लोक है अतः इनमे अनुन्कृष्ट स्थितिवालोका स्पर्ध उक्त प्रमाण वनलाया है। जो तियंच या मनुष्य मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करके और स्थितिवान किये विना पंचेन्द्रिय निर्यव लव यपयाप्रकोमं उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करके और स्थितिवान किये विना पंचेन्द्रिय निर्यव लव यपयाप्रकोमं उत्कृष्ट स्थितिका और वर्तमानकालीन चेन्नका विचार करते है ता वह लोकके असंख्यानवे भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, अतः यहां मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले लब्ध्यपयाप्तक निर्यवांका दोनों प्रकारका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। वैसे पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक निर्यवांका वर्तमानकालीन स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत कातीन स्पर्श सब लोक वनलाया है जो इनके अनुत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए सम्भव है, अतः मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोक दोनों प्रकारका स्पर्श लोकके विश्ववांक दोनों प्रकारका स्पर्श

१२३. मणु०-मणुसपज्ज०-त्रणुसिणीसु उक्क० के० खे० पो० ? लोग० असंखे०
 भागो । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा ।

१२४. देवेसु मोह॰ उक्त० अणुक्क० के० खेत्त० पो० १ लोग॰ असंखे॰भागो अह-णव चोहसभागा वा देम्णा । एवं सोहम्भीसाण० वत्तव्वं । भवण०-वाण०-जो-दिसि॰ मोह॰ उक्क० अणुक्क० के० खे० पो० १ लोग॰ असंखे भागो अद्धुष्ट-अह-णव चोहसभागा वा देम्णा । सणक्कुमारादि जाव सहम्सारे ति मोह० उक्क० अणुक्क० के० खे० पो० १ लोग० असंखे०भागो अहचोहस भागा वा देम्णा । आणद्-पाणद्-आगणच्चुद० मोह० उक्क० खेत्संगो । अणुक्क० के० खे० पो० १ लोग० असंखे०भागो

उक्त प्रमाण बनलाया है । इस विषयमें मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकोंकी स्थिति पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यचोके समान है अतः मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकोंका स्पर्श पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोक समान बनलाया है ।

\$ १२३. सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यितयोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति-विभिक्तवाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुकृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है ।

विशेषार्थ—मामान्य आदि तीन प्रकारके मनुष्योमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंका स्पर्ध लोकके असंख्यातवे भाग कहनेका कारण यह है कि ऐसे मनुष्य संख्यात ही होते हैं और इनका उन्कृष्ट स्थितिके साथ सर्वत्र मारणान्तिक समुद्धात करना सम्भव नहीं, अतः इनका दोनो प्रकारका स्पर्ध इससे अधिक नहीं प्राप्त होता । किन्तु उक्त तीन प्रकारके मनुष्योंका वर्तमान स्पर्श लोकके असख्यातवें भाग और अतीनकालीन स्पर्श सब लोक वतलाया है जो मोहतीयकी अनुःकृष्ट स्थितिके साथ सम्भव है अत. अनुन्कृष्ट स्थिति । उक्त तीन प्रकारके मनुष्योका स्पर्श उक्त प्रमाण कहा ।

\$ १२४. देवोमे मोहनीयकी उन्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थित विभिक्तवाल जीवोने कितने वेत्रका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका तथा असनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार सौधर्म और एंजान स्वर्गके देवोंके कहना चारिये । भवनवार्मा, ज्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमे मोहनीयकी उन्कृष्ट आर अनुन्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाल जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवे भाग चेत्रका तथा असनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम साढ़े तीन, आठ और नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सानत्कुमारसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देवोंमे मोहनीयकी उन्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है । लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और अस्युत कल्पके देवोंमे मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंका स्पर्श उनके चेत्रके समान है । तथा उनते देवोंमे मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंका स्पर्श उनके चेत्रके समान है । तथा उनते देवोंमे मोहनीयकी अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और असनालीके चोदह भागोमेसे कुछ कम छह भाग चेत्रका स्पर्श किया है । लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और असनालीके चोदह भागोमेसे कुछ कम छह भाग चेत्रका स्पर्श किया है । लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और असनालीके चोदह भागोमेसे कुछ कम छह भाग चेत्रका स्पर्श किया

छचोहस भागा वा देसूणा । उवरि खेत्तभंगो । एवं औरालियमिस्स- वेउिव्वयमिस्स-आहार-त्र्याहारमिस्स-अवगद्०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद्०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद्०-संजदे ति ।

१२४. एइंदिय० मोह० उक्क० के० खे० पो० १ लोग० असंखे०भागो णव
चोदसभागा वा देम्णा । अणुक्क० सव्वलांगो । एवं वादरेइंदिय-वादरेइंदियपज्ज० ।
सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-वादरेइंदियअपज्ज० मोह० उक्क० के० खे० पो० १ लोगस्स
असंखे०भागो सव्वलोंगो वा । अणुक्क० सव्वलोंगो । एवं पंचकाय-सुहुम-पञ्जत्तापज्जताणं ।

है। अन्युत स्वर्गके अपर देवोंके स्पर्श उनके च्रेत्रके समान है। इसी प्रकार अर्थात् नौप्रेयक आदिके देवोंक समान ऑदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवंदी,अकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसयत, छेदोपस्था-पनासंयत,परिहारिवशुद्धिसंयत,सृच्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

विशोपार्थ—जीवहाण् आदिमें सामान्य देवोंका व भवनवासी आदि देवोंका जो वर्तमानकालीन व अतीनकालीन स्पर्श वतलाया है वही यहां उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट स्थितिवाले उक्त देवोंका
स्पर्श जानना चाहिये जो मूलमें वतलाया ही है। अन्तर केवल आनतादिक चार कल्पोंके देवों में
उत्कृष्ट स्थितिवालोंके स्पर्शमें है। वान यह है कि आनतादिक चार कल्पोंमें जो द्रव्यिलंगी मुनि
उत्पन्न होते हैं उन्हींके पहले समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है और इनके अतीनकालीन
स्पर्श कुछ कम छह बटे चौदह राजु विहार आदिके समय प्राप्त होता है। इस प्रकार आनतादिकमें
मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिवालोंका वर्तमान व अतीन स्पर्श लोकके अमंख्यातवें भागप्रमाण्
ही प्राप्त होता है। मूलमें औदारिकमिश्र आदि मार्गणाओं में इसी प्रकार है यह वतलाया है सो
इसका भाव यह है कि इन मागणाओं में भी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श अपने अपने ज्ञेके
समान जानना चाहिये। उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

\$ १२५. एकेन्द्रियों में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवालें जीवोने कितने जंत्रका स्तर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग ज्ञेत्रका खोर त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम नौ भाग प्रमाण ज्ञेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोने सब लोक प्रमाण ज्ञेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार वादर एकेन्द्रिय और वादर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोके जानना चाहिय । सूच्म एकेन्द्रिय, सूच्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, सूच्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त और वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोने कितने ज्ञेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और सब लोक ज्ञेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोने सब लोक प्रमाण ज्ञेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार पांचों स्थावरक्तय, पांचों स्थावरकाय सूच्म पर्याप्त और पांचों स्थावरकाय सूच्म अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये ।

विशोषार्थ—जिन देवोने मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अनन्तर समयमें मरकर एकेन्द्रिय पर्यायको प्राप्त किया उन्हीं एकेन्द्रियोंके पहले समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति होती है, अतः इनका वर्तमानकालीन स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीतकालीन स्पर्श

 १२६. सव्यविगलिंदिय० मोह० उक्क० लोग० असंखे०भागो । अगुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । एवं पीचिंदियअपज्ज०-तसअपज्ज० वत्तव्वं ।

१२७. पंचिदिय-पंचिदियपज्ज०-तस-तमपज्ज० मोह० उक्क० औघं । अणुक०
लोग० असंखे०भागो अहचोइस भागा वा देमृणा सन्वलागो वा । एवं पंचमण०पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-विहंग०-चक्खु०-मण्णि ति ।

कुछ कम नो वटे चौदह राजु वनलाया है। यहां तीसरी पृथिवीनक दो राजु और ऊपर सान राजु इम प्रकार नो राजु लेना चाहिये। तथा अनुत्कृष्ट स्थिनिवाल एकेन्द्रिय जीव सब लोकमें पाये जाते हैं, अतः इनका दोनों प्रकारका स्पर्श सब लोक कहा। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें यह व्यवस्था अविकल घटित हो जानी है इमलिये इनके स्पर्शको एकेन्द्रियोंके समान कहा। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनका सब लोक स्पर्श मारणान्तिक और उपपादपदकी अपना ही जानना चाहिये। जो मंजी पंचेन्द्रिय निर्यंच और मगुष्य माहनीयकी उन्कृष्ट स्थिनिका बन्ध करके स्वम एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त तथा बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंमे उत्पन्न होते हैं उन्होंके पहले समयमे माहनीयकी उन्कृष्ट स्थिति होती है। अब यदि इनके वर्तमान स्पर्शका विचार किया जाना है तो वह लोक अमंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है और अतीन कालीन स्पर्शका विचार किया जाना है तो वह सब लोक प्राप्त होना है। यही सबय है कि यहां उक्त मार्गणाओं उन्कृष्ट स्थितिवालोंका वर्तमान स्पर्श लोकके असंप्यातवें भागप्रमाण और अतीन कालीन स्पर्श सब लोक प्रमाण वत्ताया जाना सम्भव है अतः उक्त मार्गणाओं अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श सब लोक कहा। यहां वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोका सब लोक स्पर्श उपपाद और प्रारणान्तिक पदकी अपेदा ही जानना चाहिये। पांचो स्टम स्थावरदाय आदि कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें यह व्यवस्था वन जाती है, अतः उनके कथनको उक्त प्रमाण कहा।

१२६. मभी विकलेट्रिय जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग जेत्रका तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग जेत्रका तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग जेत्रका और अस लेक्का और सब लोक जेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्यात्तक और अस लब्ध्यपर्यात्तक जीवोके कहना चाहिये।

विशोपार्थ-सब विकलेन्द्रियों में उन्कृष्ट स्थित उन्हीं के होती है जो संझी तियंच और मनुष्यों में से आकर यहाँ उन्पन्न होते हैं। अतः उनमें उन्कृष्ट स्थितिवालोका दोनो प्रकारका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। तथा सब विकलेन्द्रियोंका वर्तमान स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं और अतीतकालीन स्पर्श सब लोक है अतः उनमें अनुन्दृष्ट स्थितिवालोंका दोनों प्रकारका स्पर्श उन्कृष्माण कहा है। यही व्यवस्था पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और अस अपर्याप्तकोंमे बन जाती है अतः उनके कथनको सब विकलेन्द्रियोंक समान कहा।

\$ १२७. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रम पर्याप्त जीवोमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिवितवाले जीवोका स्पर्श योपके ममान है। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिविभिवतवाले जीवोका स्पर्श लोकका असंख्यातवां भाग,त्रमनालांके चोदह भागोमेंमे कुछ कम आठ भागप्रमाण और सब लोक है। इसी प्रकार पांची मनोयोगी, पांची ववनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, चसु-दर्शनी और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये।

विशोषार्थ-पंचेन्द्रियादि चार मार्गणाओं मं अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श तीन प्रकारका वतलाया है। लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्श वर्तमानकालकी अपेचासे वतलाया है, क्योंकि

§ १२८. कायागुवादेण पुढिव-वादरपुढिवि०-वादरपुढिविपज्ज०-आउ०-वादरआउ० —वादरआउपज्ज० —वणप्फिद्-वादरवणप्फिद्दि०-वादरवणप्फिद्पित्तेय० तस्सेव
पज्ज० मोह० उक० एइंदियभंगो । अणुक० सव्वलोगो । णविर तिण्हं पज्जत्ताणां
मोह० अणुक्क० लोग० असंग्व०भागो सव्वलोगो वा । वादरपुढिविअपज्ज०-वादर
आउत्रप्रज्ज० — तेउ० —वादरतेउ०-वादरतेउअपज्ज०-वाद० वादरवाउ०-वादरवाउयपज्जल-वादरवणप्फिद्पित्तेयअपज्ज० मोह० उक्क० लोग० असंग्व०भागो सव्वलोगो
वा । णविर वादरपुढिविअपज्ज० [ -वादरत्याउ० अपज्ज०- ] वादरतेउ० अपज्ज०[वादरवाउअपज्ज०- ] वादरवणप्फिद्पित्तेयअपज्जत्ताणं सव्वलोगोस्ताणं णित्थ ।
अगुक्क० सव्वलोगो । वादरवाउ०पज्ज० मोह० उक्क० लोग० असंग्व०भागो सव्वलोगो
वा । अणुक्क० लोग० संग्व०भागो सव्वलोगो वा । वादरतेउ०पज्ज० मोह० उक्क०
के० खे० पो० १ लोग० असंग्व०भागो । अणुक्क० लोग० असंग्व०भागो सव्वलोगो वा ।

जितने चेत्रमे उक्त मार्गणावाले जीव निवास करते हैं। उनके वर्तमान चेत्रका प्रमाण लोकके असंख्यातवें भागमे ऋधिक प्राप्त नहीं होता। कुछ कम ऋाठ वटे चौटह भागप्रमाण स्पर्श विहारवत् स्वस्थान ऋाटिकी ऋपेचामे कहा है, क्योंकि इन जीवोंके ये पद दो राजु नीचे और छह राजु ऊपर इस प्रकार ऋाठ राजु चेत्रमें ही पाये जाते हैं। तथा सब लोक प्रमाण स्पर्श मारणान्तिक और उपपाद पदकी ऋपेचामे कहा है। कुछ और सार्गणाण हैं जिनमें उक्त व्यवस्था ही पाप्त होती है। जैसे पांचों मनीयोगी ऋादि।

<sup>९</sup> १२८. कायमार्गमाके ऋनुवादमे पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवी-कायिक पर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिकपर्याप्त, बनस्पितकायिक, बादर वनम्पतिकायिक बाहर बनम्पतिकाविक प्रत्येक शरीर खीर बाहर बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंमें मोहनीयकी उत्युष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोका रूपर्शन एकेन्टियोंके समान है। तथा अनुन्कृष्ट स्थितिविभिक्तवालं जीवोंका स्पर्शन सब लांक है। इननी विशेषता है कि उक्त तीन प्रकारके पर्याप्त जीवोमें अनन्त्रहरू स्थितिविभिक्तवाले जीवोका प्यर्जन लोकका असंख्यातवां भाग श्रीर मव लोफ है। बादर प्रथिबीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकाथिक अपर्याप्त, श्रामिकायिक, वादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, बायुकायिक, बादर बायुकायिक, बादर बायु-कायिक अपर्याप्त और वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त जीयोमे मोहनीयकी उत्झब्द स्थिति विभिक्तवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग आँर सव लोक चेत्रका स्पर्श किया है। इतनी विशेषता है कि वादर प्रिवर्शकायिक अपर्याप्त बादर जलकायिक अपर्याप्त, यादर अभिनकायिक अपर्याप्त, बादर बायुकायिक अपर्याप्त जोर बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त जीवोंके सर्वलांक स्पर्शन नहीं है। तथा अनुन्क्रष्ट स्थिति विभिक्तवाले उक्त जीवोंका स्पर्शन सव लोक है । बादर बायकायिक पर्याप्त जीवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोने लोकके अमंख्यातवें भाग और मब लोकका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्युष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंने लोको संख्यातवें भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है। बादर श्राग्निकायिक पर्याप्त जीवोमे मोहतीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यानचें भाग तेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थिति-विभक्तिवाल जीवोंने लोकके असंख्यातवे भाग और सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है।

विशोपार्थ-यहां पृथिवीकायिक त्रादिमे उन्हाष्ट्र स्थितिवालोंका स्पर्श एकेन्द्रियोके समान वतलाकर भी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श अलगसे वतलाया है। उसका कारण यह है कि उपर्युक्त मार्गणात्रोमेंसे कुछमे तो त्रानुकुछ स्थितिवालोका दोनों प्रकारका स्पर्श सब लोक बन जाता है पर उनके पर्याप्तकोंमें वर्तमानकालीन स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है क्योंकि बादरष्ट्रथिबीकायिक पर्याप्तक त्रादि जीयाने वर्तमानमे लोक है असं्यातवें भाग स्त्रेका ही स्पर्श किया है। वस इतनी विशेषताके लिये ही उक्त मार्गशाश्रोमें श्रमुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्वर्श अलगसे कहा है। वादर पृथिवीकायिक अपयोध आदि जीवामें सोहनीय हो उत्हुए स्थिति उन्ही जावोमे प्राप्त होती है जा संज्ञा निर्यंच या ननुष्य उत्कृष्ट स्थित वाधकर पश्चान इनमे उत्पन्न होते हैं। अब याद इनके बतमान त्र्योर ऋतीत स्पर्शका विचार करते हैं तो वह लोकके ऋसंख्यातवे भागप्रमाण ही प्राप्त होता है ऋतः यह। उक्त मार्गणाश्राम सब लाह प्रमाण स्वर्शका निपंध किया है। यद्यपि बादर बायुकायिक पर्याप्त जाब लोकक सख्यातवे भागका अार**्सव**्लोकका स्पन्न क<mark>रते</mark> है किन्तु मोहनायका उत्कृष्ट स्थितिका अपना जब विचार करते हैं। तब उनका लाकके संख्यातवें मागके स्थानम लोकका असंख्यातत्रा भागतमाण हा स्वत्र प्राप्त हाता है, क्यांकि जा संज्ञी पचान्द्रय पर्याप्त तियेच या मनुष्य माहनीयका उत्कृष्ट ास्यतिका चन्य करके परचात् वादर पर्याप्त वायुकायिकाम उत्पन्न हाते हैं। उनक बनमान कालान स्पशका योग लोकका असख्यानवा भाग प्रमाण ही हाना है। हा यदि अनात कालान उपपादका अपेन्ना इसका विचार करत है ता वह सब लाक बन जाता ह।

§ ११६. बेकियक काययागा जीवाम उत्कृष्ट श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितियमिक्तवाले जीवोने कितने लगा स्परा किया है ? लाकक असंख्यातव भाग चत्रका तथा त्रसनालाक चादह भागामिसे कुछ कम आठ भाग आर अब कम तरह भाग प्रमाल चित्रका स्परा किया है। कामणकाययागियाम माहनाय का उत्कृष्ट स्थात विभाक्तवाले जावान लाकक असंख्यातव भाग आर त्रसनालाक चादह भागाम से कुछ कम तरह भाग प्रमाण चत्रका स्परा किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितियमिक्तवाले जावान सवलाक चत्रका स्परा किया है। आभिन्याधिकज्ञाना, अत्वज्ञाना और अर्थाध्वानी जावाम माहनायकी उत्कृष्ट आर अनुत्कृष्ट स्थितियमिक्तवाले जावान लाकक असंख्यातव भाग आर त्रसनालीक चौदह भागामेस कुछ कम आठ भाग प्रमाण चेत्रका स्परी किया है। इसी प्रकार अवधिद्रानी, सम्यग्रहिष्ट, वेदकसम्यग्रहिष्ट, उपश्वासम्यग्रहिष्ट आर सम्परिमण्याहिष्ट जावाक ज्ञानना चाहिष्।

विशेषार्थ-वैकियिक काययांगमे उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिवालाका स्पर्श तीन प्रकार का वनलाया है। लोकके असल्यातवे मागजमाण स्पर्श वतमानकालकी अपेचा वनलाया है, क्यािक वैकियककाययागवालाका वर्तमानकालीन स्पर्श लाकके असंख्यातवे भागजमाण हो है। अर्तीनकालीन स्पर्श पदावेशेगाकी अपेचा दा प्रकारका है, छुद्ध कम आठ वटे चादह राजु और कुद्ध कम तेरह वटे चोदह राजु । इनमेसे पहला विहारवन् स्वस्थान, वदना, कराय और वैकियिक

- \$ १३०. संजदासंजद-संजद० उक्क० खेत्तभंगो । अणुक्क० लोग० असंखे०-भागो छचोदस भागा वा देस्णा । एवं सुक्कले० । तेउले० सोहम्मभंगो । पम्म० सहस्सारभंगो ।
- § १३१. किण्ड०-णीळ०-काउ० उक्क० के० खे० पो० १ लोग० अमंखे०भागो
  छ-चदु-वे-चोइसभागा देसृणा । अणु० सव्वली० ।
- १३२ खइय० मोह० उक्क० खेत्तभंगो । अणुक्क० के० खे० पो० ? लोग०
   ऋसंखे०भागो अहचोहस भागा वा देसृणा ।
- १३३. सासण० मोह० उक्क० लोग० असंखे०भागो ऋडचोइस भागा वा देसूणा । अणुक्क० अड-वारहचोइस भागा वा देसूणा । असिण्ण० एइंदियभंगो ।

पदोंकी अपेक्षा कहा है और दूसरा मारणान्तिक समुद्वातकी अपेक्षा कहा है। कामण्काययांगियोका स्वरं यद्यपि सब लोक है किन्तु यहां उत्कृष्ट स्थितिवालोका वर्तमानकालीन स्पर्श लोकके
असंख्यातवे भाग है और अतीतकालीन स्पर्श कुछ कम तेरह वटे चौदह राजु है, क्योंकि मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति संज्ञी पर्याप्तके ही होती है। अब यदि ऐसे जीव दूसरे समयमे मरकर कामणकाययोगी होते हैं तो उनका वर्तमान स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं प्राप्त होता,इसलिय
यहां वर्तमान स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग कहा। तथा उत्कृष्ट स्थितवाले कामणकाययोगियोने
अतीत कालमें नीचे कुछ कम छह राजु और उत्पर कुष्ठ कम सात राजु चेत्रका स्पर्श किया है अतः
इनका अतीतकालीन स्पर्श कुछ कम तरह वटे चोदह राजु कहा। आभिनिवाधिकज्ञानादि मार्गणाअमें उस मार्गणाका जो स्पर्श है यही यहा उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेका जानना चाहिये।

- \$ १३० सयनासंयत जोबोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीबोंका स्पर्श चेत्रके समान है। तथा ऋनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीबोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग और ऋसनालींक चींदह भागोंमें से छुळ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार शुक्त-लेरयावाले जीबोंका स्पर्श सहै। पीतलेरयावाले जीबोंका स्पर्श से समान है। तथा पद्मलेरयावाले जीबोंका स्पर्श सहस्तार स्वर्गके देवोंक समान है।
- \$ १३९. ऋष्ण, नील और कापीत लेश्यावालोमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तियालें जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया हं ? लोकके असंख्यातवे भाग चेत्रका तथा त्रसनालीके चोदह भागों में से कुछ कम छह, चार खार दा भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालें जीवोने सवलाक प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है।
- \$ (३२. चायिकसम्यग्दिष्ट जीवोमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाल जावोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लीकके असंख्यातवें भाग और असनालाक चोदह भागोंमें से कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है।
- § १३३. सासादनसम्यग्दिष्ट जीवोमे मोहनीयको उत्कृष्ट स्थितिविमिक्तवाले जीवोने लोकके श्रासंख्यातवें भाग चेत्रका श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम त्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम त्राठ

## ग्रणाहारि॰ कम्पइयभंगो ।

## एवं उकस्सपोमणाणुगमी समत्तो ।

१३४. जहण्णए पयदं । दुविहो णिड्देसो — ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मीह० जह० के० खे० पो० ? लोग० असंखे०भागो । अज० सन्वलीगो । एवं काययोगि-ओरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-अचक्क्वु०-भविस०-आहारि ति ।

ृ १३५ आदेसेण णेरइय० मीह० जट० खेत्तभंगो । अज० अणुक्कम्सभंगो । पढमाए खेत्तभंगो । विदियादि जाव सत्तिमि त्ति मोह० जह० खेत्तभगो । अज० अणु-क्कम्स०भंगो ।

अं(र कुछ कम वारह भागप्रमाण चेत्रका स्वर्ग किया है । ऋसंज्ञी जीवोका स्पश एकेन्द्रियोंके समान है । तथा प्रनाटारी जीवोका स्पश कार्मणकाययोगियोक समान है ।

विशेषार्थ —संयत्तामंयतके मोहनीयकी उत्दृष्ट स्थिति इत सुणाम्थानोको प्राप्त होनेके पहले समयम होती है पर उस समय मारणानिक ममुद्यात सम्भव नहीं, अतः इन दोनों मार्गणाओं में उन्दृष्ट स्थितियालोका स्वशं लोकके असंख्यातवे भाग कहा है और अनुत्दृष्ट स्थितियालोका स्वशं इन मार्गणाओं के स्वशंक समान ही कहा है। इन्गण लेश्यामें उन्दृष्ट स्थितियालोका स्वशं सातवे नरककी मुख्यतासे, नील लेश्यामें उत्कृष्ट स्थितियालोका स्वशं कार्पात लेश्यामें उत्कृष्ट स्थितियालोका स्वशं तीसरे नरककी मुख्यतासे और कार्पात लेश्यामें उत्कृष्ट स्थितियालोका स्वशं तीसरे नरककी मुख्यतासे उत्कृष्ट स्थितियालोका को उत्कृष्ट स्थितियालोका को उत्कृष्ट स्थितियालोक के यादित स्वशं की स्वश्वा दे यह द्योकी प्रधानतासे कहा है।

### इस प्रकार उत्कृष्ट स्पर्भनानुगम समाप्त हुआ।

§ १२४. अब जवन्य स्पर्शनानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— आंघनित्श आंर आदेशनिर्देश । उनमेंसे आंघ निर्देशकी अपेचा मोहनीयकी जवन्य स्थिति- विभक्तियां जीत्रोंने कितने चंत्रका स्पर्श किया है? लोकके असंख्यातवेंभाग नंत्रका स्पर्श किया है। तथा अजयन्य स्थितिबभक्तियांले जीवोंने सर्वलांक चंत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार काययोगी आंदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, कांघादि चारो कपायवाले, अचचुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके कहना चाहिये।

विशेषार्थ- ओघसे मोहनीयकी जबन्य स्थिति चपकश्रेणिमे प्राप्त होती है स्त्रीर चपकोंका स्पर्ध लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है अतः यहाँ खोषमे जबन्य स्थितिबालोंका स्पर्ध लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण बनलाया है। तथा अजबन्य स्थितिबालोंका स्पर्ध सब लोक है यह स्पष्ट हो है। मूलमे गिनाइ गई काययोगी आदि कुछ ऐसी मार्गणाएँ है जिनमें ओषके समान स्पर्ध बन जाता है अतः उनके कथनको ओषके समान कहा।

§ १३५. आदेशनिर्देशकी अपेचा नारिक्यों में मोहनीयकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवों का स्पर्श चंत्रक समान हैं। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान हैं। पहली पृथिवीमें स्पर्श चंत्रके समान हैं। तथा दूसरी पृथिवीसे लेकर सात्वी पृथिवी तकके नारिकयों में मोहनीयकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान हैं। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके स्पर्शकं समान हैं।

१२६ तिरिक्षक मोह० जह० अजह० के० खे० पीसिदं ? सव्वलीगो ।

एवं सव्वेइंदिय-पुढिव०-वाद्रपुढिवि०-वाद्रपुढिविअपज्ञ०-मुहुमपुढिवि०-पज्जत्तापज्जत्तआज०-वाद्रआउ०-वाद्रआउत्रपज्ज०-मुहुमआउ०-पज्जत्तापज्जत्त - तेउ०-वाद्रतेउ०वाद्रतेउअपज्ज०-मुहुमतेउ०-पज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-वाद्रवाउ०-वाद्रवाउत्रायज्ञ -सुहुमवाउ०-पज्जत्तापज्जत्त-वाद्रवणप्पद्यित्तेय०-तस्सेव अपज्ज०-सव्ववणप्पद्वि०-सव्वणि

गोद्०-स्रोरालियिपस्स-कम्मइय-मिद्अण्णाण-मुद्अण्णाण-असंजद्-तिण्णिले०-अभव०
मिच्छा०-असण्णि०-अणाहारि ति । एत्थ खेत्तिम्म भणिद्विहाणेण मृतुचारणाए पाठभेदो अणुगंतव्वो। तद्दिप्पाएण तिरिक्षोसुलोगस्स असंग्हो०भागमेत्तपंसणुवलंभादो।

विरोपार्थ--नारिक्योम मोहनीयकी जबन्य स्थितिवालोका चेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। स्वर्श भी उतना ही प्राप्त होता है, क्योंकि जो असंज्ञी नरकमे उत्पन्न होते हैं उन्हीं नारितियोंके विश्वहर्के दूसरे समयमें जबन्य स्थिति होती है। किन्तु असंबी जीव पहुले नरकमे ही उत्पन्न होते हैं और पहुले नरकका स्पर्श लोकक असंख्यानवें भागस अधिक नहीं है श्रतः सामान्यसे नारिकयोमं जघन्य स्थितवालोका स्पर्ग चेत्रके समान बनजाया है। अजघन्य स्थितिवालोमें जघन्य स्थितिवालोको छोड़कर शेष सवका समावेश हो जाता है अतः सामान्यसे अजधन्य स्थितिवालोका स्पर्शे अनुत्कृष्टके समान बनलाया है। पहली पृथिवीके नारिकयोंका स्वर्श उनके क्रेंत्रके समान ही है अतः यहां पहली पृथिवीकं जवन्य और अजवन्य स्थितिवाले नारिकयोका स्पर्श जेत्रके समान कहा है। दूसरेसे लेकर छठ नरक तक जबन्य स्थिति उन सम्यग्हिप्ट नारिकयोंके अनितम समयमें हाती है जिन्होंने नरकमें उत्पन्न होनेके अन्तर्महर्त बाद सम्यक्त्वको प्राप्त कर लिया है और अनन्तानुबन्धाकी विसंयोजना कर ली है। तथा साववें नरकम खन मिथ्याद्यांच्य नार्राक्योंक होती हैं जो जावन भर सम्यग्द्राच्य रहे हैं। पर अन्तमे निश्याद्यांच्य हो गये हैं। अब यदि इन जीवोके स्वशंका विचार किया जाता है तो वह लोकक असंख्यातवें भाग-प्रमाण हो प्राप्त होता है और इन द्वितीयादि नरकोंक नारिक्याका तत्र भी इतना ही है अतः उक्त तरकोमे जयन्य स्थितिवालोका स्परा चंत्रक समान बतलाया है। तथा अजवन्य स्थितिवालोके स्पर्शका खुलासा जैसा उत्पर कर आय है उसी प्रकार यहा भी कर लेना चाहिय।

\$ १३६. तियंचगितमे मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिवमिक्तवाले जावाने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? सब लोक ज्ञका स्पर्श किया है। इसी प्रकार सभी एकन्द्रिय,प्रथिवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक अपयाप्त, सूदम प्रथिवीकायिक अपयाप्त, सूदम प्रथिवीकायिक अपयाप्त, सूदम प्रथिवीकायिक अपयाप्त, सूदम प्रथिवीकायिक अपयाप्त, ज्ञक्कायिक, बादर ज्ञलकायिक, बादर ज्ञलकायिक अपयाप्त, सूदम ज्ञलकायिक, सूदम ज्ञलकायिक अपयाप्त, सूदम ज्ञलकायिक अपयाप्त, आग्नकायिक, वादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपयाप्त, सूदम वायुकायिक, सूद्दमवायुकायिक प्रयाप्त, सूद्दमवायुकायिक अपयाप्त, स्याप्त वादर वाद्यकायिक प्रयाप्त, सूद्दमवायुकायिक प्रयाप्त, सूद्दमवायुकायिक अपयाप्त, स्याप्त वादर वनस्पितिकायिक प्रत्यक श्रार, बादर वनस्पितिकायिक प्रत्यक श्रार, बादर वनस्पितिकायिक प्रत्यक श्रार, मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, कृष्ण आदि तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाद्दरक जायोक जानना चाहिये। यहां पर ज्ञानुगममं कही

१३७. सव्वपंचिदियतिरिक्खाणं जह० खेत्तभंगो । अज० अणुक्कस्सभंगो ।
 एवं सव्वमणुस० ।

 १३८. देव० मोह० ज० खेत्तभंगो । अज० अणुकस्सभंगो । भवणादि जाव ब्राग्णच्चुदे त्ति जह० खेत्तभंगो । ब्रज० ब्रणुक्कस्सभंगो । उविर खेत्तभंगो । एवं वेउब्वियमिस्स०-ब्राहार०-आहारमिस्स०-ब्रवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामा∢य ब्रेटो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खादसंजदे ति ।

गई विधिसे मूलोच्चारणाके अनुसार पाठभेद जान लेना चाहिये । उसके अभिष्रायानुसार तिर्यंचोंमें लोकका असंख्यानवां भागमात्र स्पर्शन पाया जाता है ।

विशेषार्थ—तिर्यंचोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति एकेन्द्रियोंके होती है तथा श्रजघन्य स्थितिवालोंमें भी एकेन्द्रिय ही मुख्य हैं श्रोर वे सब लोकमें पाये जाते हैं श्रातः तिर्यंचोंमें जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श सब लोक वनलाया है। इसी प्रकार मूलमें जो सब एकेन्द्रिय श्रादि मार्गणाणं गिनाई हैं उनमें भी तिर्यंचोंके समान जानना चाहिये। किन्तु मूल उचारणामें इन मक्का जघन्य स्पर्श लोकके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण वनलाया है। सो वह स्थम्थानस्वस्थान पदकी श्रपेदा जानना चाहिये।

\$ १३७. मभी पंचेन्द्रिय तिर्यचोमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोंका स्पर्ध-टेन्नके समान है। तथा श्रज्ञचन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीवोंके समान है। इसी प्रकार सभी मनुष्योंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ - पंचेन्द्रिय आदि तिर्थचोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थित उन्हीं तिर्थचोंके पहले और दूसरे विश्वहमें होती है जो एकेन्द्रिय पर्यायमें आकर उक्त तिर्थच हुए हैं। अब यदि इनके घत्रका विचार किया जाता है तो वह लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। स्वर्धतमें भी इसमें विशेष अन्तर नहीं पड़ता, अतः सब प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्थचोंमें जघन्य स्थितियालोका भप्यो जेत्रके समान वतलाया है। तथा अजयन्य स्थितियालोका भंग अनुन्दृष्टिके समान वतलानेका कारण यह है कि अजयन्य स्थितिमें जघन्य स्थितिकों छोड़कर होप सब स्थितियोका ब्रह्मण हो जाता है और इसलिये इनका स्पर्ध अनुन्दृष्टिके समान वन जाता है। सब मनुष्योके भी इसी कममें स्पर्धतका कथन करना चाहिये। इसका यह तात्पर्य है कि सब प्रकारके मनुष्योमें जघन्य स्थितियालोंका स्पर्श क्रेत्रके समान है और अजयन्य स्थितियालोंका स्पर्श अनुन्दृष्ट स्थितिवालोंके स्पर्शके ममान है।

§ १३८. देशों मंगहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तियाले जीशोंका स्पर्श क्रिके समान है।
तथा अजघन्य स्थितिविभक्तियाले जीशोंका स्पर्श अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले देशोंके स्पर्शक समान
है। भवनवासियोसे लेकर आरण अच्युत स्वर्ग तकके देशोंमें जघन्य स्थितिविभक्तियाले जीशोंका
स्पर्श क्रिके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तियाले उक्त देशोंका स्पर्श अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले उक्त देशोंका स्पर्श अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले उक्त देशोंके स्पर्श से समान है। अच्युत स्थाने ऊपर स्पर्श क्रेत्रके समान है। इस
पकार वैकियिकिमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अतपार्था सनःपर्ययज्ञानी, सुंयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थानासंयत, परिहारिविद्यद्विसंयत, सूदमसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीशोंक जानना चाहिये।

- ६ १४० वादरपुढिविपज्ञ०-वाद्ग्याउपज्ञ०-वाद्रतेउपज्ज०-वाद्रवणप्पदिपत्ते य पज्ज० मोह० ज० अज्ञ० लोग० यसंखे०भागो सन्वलोगो वा । वाद्रवाउपज्ज० मोह० ज० अज्ञ० लोग० संखेजिदिभागो सन्वलोगो वा ।
- ं १४१, वेउच्विय० मोह० जह० खेत्तभंगो । अज० ऋणुक्कस्सभंगो । एव-माभिणि०-सुद्०-झोहि०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-तिण्णिले०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-जवसम०-सासण०-सम्माभि० ।

# एवं पोसणाणुगमो समत्तो ।

- १४२ कालाणुगमो दुविहो-जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि । तत्थ उक्कस्सण् पयदं ।
   दुविहो णिह सो-स्रोचेण स्रादेसेण य । तत्थ ओघेण मोह० उक्क० केविचर कालादो ?
- § १३६. सभी विकलेन्त्रिय, पंचेन्त्रिय अपर्याप्त और त्रसअपर्याप्त जीवोमे स्पर्श पंचेन्त्रिय तियँच अपर्याप्तकोंके समान है। पंचेन्त्रिय, पंचेन्त्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रम पर्याप्त जीवोमें मोहनीयकी जचन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है। तथा अजयन्य स्थिति-विभक्तियाले उक्त जीवोका स्पर्श उन्हींके अनुन्कृष्टके समान है। इसी प्रकार पांचों मनोयोगी, पांचों चचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, चचुदर्शनी और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये।
- \$ १४०. वाटर पृथिवीकायिक पर्याप्त, वाटर जलकायिक पर्याप्त, वाटर अग्निकायिक पर्याप्त और बाटर वनस्पतिकायिक प्रत्येष शरीर पर्याप्त जीवोमें मोहनीयकी जवन्य और अज्ञच्य स्थितिविभिक्तवाले जीवोंने लोकके अमंख्यातवें भाग और सव लोक जेवका स्पर्श किया है। बाटर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें मोहनीयकी जवन्य और अज्ञचन्य स्थितिविभिक्तियाले जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग और सव लोक जेवका स्पर्श किया है।
- \$ १४१. वैकियिककाययोगी जीवोमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीवोंका स्पर्श उनके चेत्रके समान है। तथा अजयन्य स्थितिविभिक्तवाले उक्त जीवोंका स्पर्श उनके अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंके स्पर्शके समान है। इसी प्रकार आभिनिवोधिकज्ञानी, अतज्ञानी, अविद्याविभिक्तवाले, संयतासंयत, अविधिदर्शनी, पीत आदि तीन लेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदगसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इस प्रकार स्पर्शनानुगम समान हुआ।
- § १४२. कालानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेसे उत्कृष्ट कालानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेसे ओघकी

१—प्रतौ श्रज॰ लोग॰ श्रसंखे॰ भागो सव्यलोगो वा । बाद्रधाउपज॰ श्रगुक्कस्सभँगो इति पाठः।

जह० एगसमओ, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। अणुक्क० के०? सव्बद्धा। एवं सव्बिणरय-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खित्य-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिदिय-पंचि०प्रज्ञ०-तस-तसप्रज्ञ०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-स्रोरालिय०-वेउव्विय०-तिण्णिवेद०-चत्तारिक०-मिद-सुद्अण्णाण०-विद्ंग०-असंजद०-चक्खु०-श्रचक्खु०-पंचले०-भवसि०-स्रभवसि०-मिच्छाइिद-सिण्ण-स्राहारिति?

६ १४३. पंचिदियतिरि॰ अपज्ञ० मोह० उक्क० केव० १ जह० एगसमओ, उक्क० ब्राविल० ब्रसंखे०भागो। अणुक्क० सन्बदा। एवं सन्बएइंदिय-सन्बविगिलंदिय-पंचि-दियअपज्ज०-पंचकाय०-तसअपज्ञ०-ब्रोरालियमिस्स०-कम्मइय०-ब्राभिणि०-सुद०-ओहि०-संजदाअंजद-ओहिदंस०-सुक०-सम्मादि०-वेदय०-ब्रसण्णि-अणाहारि ति ।

ई १४४. मणुसितिय० मीह० उक्त० के० ? जह० एगसम्ब्रो, उक्त० अंतोम्रहुत्तं । अणुक्त० सव्वद्धा । मणुसअपज्ज० मोह० उक्त० के० ? जह० एगसमओ, उक्क० ब्रावित्र० श्रसंखे०भागो । श्रणुक्ष० के० ? जह० खुद्दाभवग्गहणं समऊणं । उक्क० पित्रदो० श्रमंखे०भागो । आणदादि जाव सव्वद्व० मोह० उक्क० केव० ? ज० एग-

श्रपंत्ता मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति विभिक्तवाले जीवोका सत्त्वकाल कितना है ? जयन्य सत्त्वकाल एक समय श्रोर उन्कृष्ट सत्त्वकाल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रनुन्कृष्ट स्थिति-विभिक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है ? सर्प्रकाल है। इसी प्रकार सभी नारकी, सामान्य निर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय योतिमती तिर्यंच, सामान्य देव, भवन-वासियोमे लेकर महस्त्रार स्वर्ग तकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, बस, ब्रसपर्याप्त, पांचों मनायोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी श्रोहारिककाययोगी, विक्रिक्काययोगी, तीनों वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुनाज्ञानी, विभंगज्ञानी, असंयत, चच्दर्शनी, अचचुदर्शनी, कृष्ण आदि पांच लेश्यावले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी श्रोर श्राहारक जीवोंके कहना चाहिये।

§ १४३. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उन्छष्ट विभिन्नवाले जीवोंका सत्त्व-काल कितना हैं ? जवन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्छष्ट सत्त्वकाल आवलीके असंख्यातवें भाग-प्रमाण हैं। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभिन्नवाले जीवोंका सत्त्वकाल सर्वदा है। इसी प्रकार सभी एके-न्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, पांचों स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, औदारिकमिश्र-काययागी,कार्मणकाययागी,आभिनिवाधिकज्ञानी,अनुज्ञानी,अवधिज्ञानी, संयनासंयत, अवधिद्र्यनी, सुक्ललेरयावाले, सम्यग्टप्टि, वेदकसम्यग्टिष्ट, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ १४४. सामन्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है ? जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तमु हूर्त है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल सवदा है। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योमें मोहनी नकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है ? जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है। जघन्य एक समय कम खहाभवप्रहण्यमाण और उत्कृष्ट पत्योपमके असंख्यातवें

समञ्जो, उक्क० संखेजा समया | त्रणुक्क० सव्वद्धा । एवं मणपज्ज०-संजद०-सामा-इय-छेदो०-परिहार०-खइयसम्माइहि ति ।

- § १४५. वेउव्वियमिस्स॰ मोह० उक्क० के॰ ? जह॰ एगसमओ, उक्क० आवलि० ऋसंखे॰भागो । ऋणुक्क० जह॰ अंतो०, उक्क० पलिदो० ऋसंखे॰भागो । एवम्रुवसम०-सम्मामि॰ वत्तव्वं ।
- § १४६. अवगद० मोह० उक्क० जह० एगसमझो, उक्क० संखेजा समया । श्रणुक्क० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोम्र०। एवमकसा०-म्रहुमसांपरा०-जहक्खादे त्ति । [ एवं आहार०-आहारमि० । णवरि आहारमि० अणुक्क० जह० अंतोस्र० । ]
- ६ १४७. सासणः मोहः उनकः जहः एगसमञ्चो, उनकः आवलिः ग्रसंखेः-भागो । त्रणुक्कः जहः एगसमञ्चो, उनकः पलिदोः असंखेःभागो । एवसुक्कस्सकालाणुगमो समत्तो ।

भागप्रमाण है। त्रानत करपसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति-वाले जीवोंका सन्त्वकाल कितना है ? जबन्य एक समय और उत्कृष्ट संख्यात समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल सर्वदा है। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापन।संयत, परिहारविशुद्धिसंयत और चायिकसम्यग्टिण्ट जीवोंके जानना चाहिये।

- § १४५. वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमे मोहनीयकी उन्हण्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है ? जवन्य एक समय और उन्हण्ट आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जवन्य सत्त्वकाल अन्तमु हुर्त और उन्कृष्ट सत्त्वकाल पत्यापमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार उपशमसम्यग्द्यष्टि और सम्यग्मिण्याद्यष्टि जीवोंके कहना चाहिये।
- § १४६. ऋष्मत्वेदियों में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय ख्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकात संख्यात समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय ख्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल ख्रन्तमुं हूर्त हैं। इसी प्रकार ख्रकपायी, सूत्त्मसांपरायिकसंयत ख्रोर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए। इसी प्रकार ख्राहारक व आहारकिमिश्रकाययोगियोंके जानना चाहिए। परन्तु आहारकिमिश्रकाययोगियोंके जानना चाहिए। परन्तु आहारकिमिश्रकाययोगियोंके जानना खरिए। स्थिति विभक्तिवालोंका जघन्य सत्त्वकाल ख्रन्तमुँ हुते हैं।
- § १४७. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल आवलीके असंख्यानवें भागप्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।
- (विशोषार्थ--नाना जीवोंके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध कमसे कम एक समय तक भौर त्राधिकसे अधिक पत्यके असंख्यातवें भाग कालतक होता है। इसके पश्चात् एक भी जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला नहींरहता, इसलिए नाना जीवोंकी अपेन्ना मोहनीयकी

बत्कप्र स्थितिका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा । सामान्य नारकी त्रादि कुछ ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनमें यह त्रोधप्ररूपणा त्रविकल घटित होती है. श्चतः उनकी प्ररूपणाको श्रोघके समान कहा । उन मार्गणाश्रोंके नाम मूलमें गिनाये ही हैं। इनके ऋतिरिक्त और जितनी मागणाएँ हैं उनमेसे ऋाठ सान्तर मार्गणाओंको तथा ऋपगतवेद. श्रकपाय त्रौर यथाल्यातसंयत इन तीन मार्गणात्र्योंको छोड़कर शेप सब मार्गणात्र्योंमें अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल सर्वदा है, क्योंकि इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल नहीं पाया जाता। तथा उत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल एक समय है, क्योंकि इन मार्गणात्रोमें एक समयतक उत्कृष्ट-स्थिति प्राप्त होकर दूसरे समयमें उसका विरह सम्भव है। हां इनमे उत्कृष्टकाल भिन्न भिन्न प्रकार पाया जाता है जिसका निर्देश मूलमे किया ही है। फिर भी यहाँ उसके कारणका संचेपमें विचार कर लेते हैं। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्ज लब्ध्यपर्याप्तकोंमें एक जीवकी अपेन्ना उत्कृष्ट काल एक समय बतलाया है। अब यदि नाना जीव निरन्तर उत्क्रष्ट स्थितिके धारक हों तो वे आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक ही होंगे उसके बाद इनमें उत्कृष्ट स्थितिका नियमसे अन्तरकाल आ जाता है. श्रतः इनमें उत्कृष्टस्थितिका उत्कृष्ट काल त्र्यावितके त्र्यसंख्यातवें भागप्रमाण कहा। मलमें निर्दिष्ट सब एकेन्द्रिय आदि कुछ मार्गणाओंकी स्थिति इसी प्रकारकी है अतः इनमे भी उत्कृष्ट-स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा । सामान्य श्रादि तीन प्रकारके मनुष्योमें एक जीवकी अपेना उत्फ्रप्ट स्थिति हा उत्क्रप्ट काल अन्तर्म हर्त है। परन्तु इनका प्रमाण संख्यात है अतः लगातार संख्यात नाना जीव भी क्रमशः यदि उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त हों तो भी उस सब कालका जोड़ अन्तर्भ हर्तसे अधिक नहीं होगा। यही कारण है कि इनमे उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्स हूर्त कहा। यदापि सामान्य मनुष्योंकी संख्या श्रासंख्यात है फिर भा यहाँ उत्कृष्ट स्थितिके प्रकरणमें सामान्य मनुष्योंमें लब्ज्यपर्याप्त मनुष्य प्रधान नहीं हैं। ज्ञानतादि कल्पोमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें ही उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है जिसका काल एक समय है त्रीर यहां मनुष्य जीव ही मरकर उत्पन्न होते है। अब यदि आनतादि कल्पोमें उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव लगातार उत्पन्न हो तो संख्यात समय तक ही उत्पन्न हो सकते हैं, क्योंकि उनमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्य ही संख्यात हैं। श्रतः इनमे उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा । यही बात मनःपययज्ञान श्रादि मुलमं गिनाई गई शेप मार्गणात्रोंमे जानना चाहिए। अब रही सान्तर मार्गणात्रो और अपगत-वद त्रादि तीन मार्गणात्रोंकी बात । सो इनमें कालका खुलासा निम्न प्रकार हैं--लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योमें एक जीवकी अपेन्ना उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय बतलाया है। अब यदि अन्तरके बाद नाना जीव एक साथ उत्कृष्ट स्थितिके धारक हुए तो दूसरे समयमें उनकी नियमसे अनुत्कृष्ट स्थिति हो जायगी अतः लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंमे नाना जीवोंकी अपेना भी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्यकाल एक समय प्राप्त होता है। यही बात शेष मार्गणात्रोमें जान लेना चाहिए। लब्ज्यपर्याप्तक मनुष्य यदि निरन्तर उत्कृष्ट स्थितिके धारक हाते रहे तो आवितिके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण काल तक ही होगे, श्रतः इनमें उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल श्रावलिके त्र्यसंख्यातवें भागप्रमाण कहा । यही वात वैक्रियिकभिश्रकाययांगी, उपशमसम्यग्द्दिः, सम्यग्मि-श्याद्दिष्ट स्रोर सासादनसम्यग्द्दि मार्गणाओं के विषयमें जानना चाहिये। तथा उत्कृष्ट स्थितिके धारक लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य एक साथ उत्पन्न हुए और दूसरे समयसे उनका उत्पन्न होना ही बन्द हो गया तो लब्ध्यपर्याप्तक मनष्योंमें ऋतुत्कृष्ट स्थितिकाजवन्यकाल एक समय कम खुद्दाभवश्रहण प्रमाण प्राप्त होगा । तथा लब्ज्यपर्याप्तक मनुष्योंका उत्कृष्टकाल परुषके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है अतः इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल भी इतना ही प्राप्त होता है । इसी प्रकार वैक्रि-यिकमिश्रकाययागी, उपरामसम्यग्द्धिः श्रीर सामादनसम्यग्द्धिःयोके श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट

§ १४८. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण० मोह० जह० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा सामया । अज० सबद्धा । एवं विदि-यादि जाव ब्रिट त्ति मणुसतिय-जोदिसियादि जाव सव्वद्द०-पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालि०-वेउव्विय०--तिण्णिवेद०-चत्तारिक०-आभिणि०-सुद०-ओहि०--मणपज्ज०-विहंग०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परि-हार०-संजदासंजद०-चक्ख०-ओहिदंसण०-तिण्णिले०-भवसि०-सम्मादि०-वेदय०-खइय०-सण्णि०-आहारि० ति ।

§ १४६. आदेसेण णेरइयेस्र मोह० जह० ज० एगस०,उक्क० आवलि० असंखे०-भागो । अज० केव० १ सव्वद्धा । एवं पढमाए । एवं सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-देव०-भवण०-वाण०-सव्वविगलिंदिय-पंचिं०अपज्ज०-तसअपज्ज० वत्तव्वं । सत्तमाए० मोह०

काल पत्यके असंख्यातवें भागवमाण जानना । नाना जीवोंकी अपेत्ता भी वैक्तियिकमिश्रकाययोगी, उपशमसम्यग्हिष्ट और सम्यग्मिश्याहिष्ट जीवोंका जवन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है अतः इनमे अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा । यदि मनुष्य उपशमश्रेणी पर निरन्तर वहें तो संख्यात समय तक ही चढ़ेंगे और उन सबके कालका जोड़ अन्तर्मुहूर्त हा होगा अतः अपगतवेद, अक-पाय, सूद्दमसम्परायसंयम और यथाख्यातसंयममे उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय और अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय और अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा । सासादनसम्यक्त्वका जवन्यकाल एक समय है अतः इसमें अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्यकाल एक समय कहा। शेष कथन सुगम है है।

## इस प्रकार उत्कृष्ट कालानुंगम समाप्त हुआ।

\$ १४८. अय जघन्य कालानुगमका प्रवरण है। उसकी उपेचा निर्देश दो प्रकारका है— आंघनिदेश और आदेशनिर्देश। उनमेसे आंवकी अपेचा मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्ति-वाले जीवोका जघन्य सम्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सम्वकाल संख्यात समय है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सम्वकाल सर्वदा है। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकी, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी ये तीन प्रकारक मनुष्य, उयोतिषियोसे लेकर सर्वार्थिसिद्ध तकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचो वचनयोगी, काययोगी, आंदारिक काययोगी, वैकियिक काययोगी, तीनों वेदवाले, कांघादि चारों कपायवाले, आभिनवाधिकज्ञानी, श्रुनज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, विभगज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छद्रापस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, संयतासंयत, चनुदर्शनी, अवधिदर्शनी, पीत आदि तीन लेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, चायिक सम्यग्दृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १४६. त्रादेश निर्देशकी त्रपेता नारिकयोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल त्रावलीके त्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा त्रज्ञचन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है? सर्वदा है। इसी प्रकार पहली पृथिवोके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य देव, भवनवासी, व्यन्तर, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके कहना चाहिये। सातवीं पृथिवीमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्ति

जह० ज० एगसम्त्रो, उक्क० पलिदो० असंखे॰भागो । अज० सन्बद्धा ।

- १४०. तिरिक्ख० मोह० जह० अज० सन्बद्धा । एवं सन्वएड्ंदिय-पुढवि०-वादरपुढवि०-बादरपुढविश्रपज्ज०-सुहुमपुढिव०-पज्जत्तापज्जत्त-आउ०-बादरआउ०-बादर-श्राउश्रपज्ज०-सुहुमश्राउ०-पज्जतापज्जत्त-तेउ०-[बादरतेउ०-]बादरतेउश्रपज्ज०-सुहुमतेउ०-पज्जत्तापज्जत्त-बाउ०-बादरवाउ०-बादरवाउश्रपज्ज०-सुहुमबाउ०-पज्जत्तापज्जत्त-बादर-बणप्फिदिपत्तेय तस्सेव अपज्ज०-सन्बवणप्फिदि-सन्बिणगोद-श्रोरालियमिस्स०-कम्मइय०-मिद-सुदश्रण्णाण-श्रसंजद-तिण्णिले०-अभवसि०-मिच्छादि०-श्रस्ण्णि०-श्रणाहारि ति ।
- १५१. मणुसञ्चपज्ञ० मोह० जह० ज० एगसमञ्जो,उक्क० आवलि० ग्रसंखे०भागो । ग्रज० के० १ जह० खुद्दाभवग्गहणं विसमउणं एगसमग्रो वा, उक्क०
  पिलदो० ग्रसंखे०भागो ।
- § १५२. चत्तारिकायबादरपज्ज०-बादरवणप्फदिपत्ते यपञ्ज० जह० ज० एग-समग्री, उक्क० पछिदो० असंखे०भागो । अज० सन्बद्धा ।

वाले जीवोंका जवन्य सत्त्वकात एक समय है श्रीर उत्कृष्ट सत्त्वकाल परुयोपमका श्रासंख्यानवाँ भाग है। तथा श्राज्यन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल सर्वदा है।

- § १५०. तिर्यचोमं मीहनीयकी जघन्य खोर अजयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीको हा सत्त्वकाल सर्वदा है। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त पृथिवीकायिक, सूक्त पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त पृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक, वादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त जलकायिक अपर्याप्त, अधिकायिक अपर्याप्त, सूक्त अधिकायिक अपर्याप्त, सूक्त अधिकायिक अपर्याप्त, सूक्त अधिकायिक अपर्याप्त, स्राप्त अधिकायिक अपर्याप्त, स्राप्त वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्त वायुकायिक अपर्याप्त, स्राप्त वायुकायिक अपर्याप्त, स्राप्त वायुकायिक अपर्याप्त, स्राप्त वायुकायिक अपर्याप्त, स्राप्त वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, अपर्याप्त, सभी वनस्पतिकायिक, सभी निगाद, औदारिकिमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, कृष्ण आदि तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।
- § १५१ मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जवन्य सत्त्वकाल एक समय है और उत्कृष्ट सत्त्वकाल आवलीका असंख्यातवा भाग है। तथा अजवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सत्त्वकाल कितना है ? जवन्य दो समय कम खुदाभवष्रहण प्रमाण या एक समय है और उत्कृष्ट पल्योपमका असंख्यातवा भाग है।
- § १५२. पृथिवीकायिक आदि चार स्थावरकाय वादर पर्याप्त और बादर वनस्पितकायिक भेत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय है और उत्कृष्ट सत्त्वकाल पल्योपमका असंख्या नवाँ भाग है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिन वाले जीवोंका सत्त्वकाल सर्वदा है।

\$ १५३. वेउव्वियमिस्स० मोह० जह० केव० ? ज० एयसमञ्चो, उक्क० संखेजा समया । अज० ज० अंतोग्रहुत्तं, उक्क० पिलदो० श्रसंखे०भागो । एवग्रुवसम०-सम्मामि० वत्तव्वं । आहार० मोह० जह० ज० एगसमञ्चो, उक्क० संखेज्जा समया । अज० ज० एयसमञ्जो, उक्क० अंतोग्रु० । एवमवगद० श्रक्तसा०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदे ति । श्राहारमिस्स० मोह० जह० [ज०] एगसमञ्जो, उक्क० संखेज्जा समया । अज० ज० अंतोग्रु०, उक्क० अंतोग्रु० ।

११४४. सासण० मो० जह० ज० एगसमत्रो, उक्क० संखेडना समया। अज० ज एगसमत्रो, उक्क० पिट्टो० असंखे०भागो।

## एवं कालागुगमो समत्तो ।

§ १५३. वैक्रियिकमिश्रकाययांगियोंमें मोहनीयकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना सत्त्वकाल है ? जपन्य एक समय श्रोर उत्कृष्ट संख्यात समय है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य श्रन्तमु हूर्त श्रोर उत्कृष्ट पल्यापमका श्रसंख्यातवां भाग है। इसी प्रकार उपशमसम्यग्दृष्टि श्रोर सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके कहना चाहियं। श्राहारककाययांगी जीवोमे मोहनीयकी जवन्य स्थितिविक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट संख्यात समय है। तथा श्रघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तमु हूत है। इसी प्रकार श्रप्तगतंवदी, श्रकपायी, सूचमसांपरायिकसंयत श्रोर यथाख्यातसंयत जीवोंक कहना चाहिये। आहारकमिश्रकाययोगी जीवोमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट संख्यात समय है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट संख्यात समय है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट सत्त्वकाल श्रन्तमु हूर्त है।

§ १५४. सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट सत्त्वकाल संख्यात समय है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य सत्त्वकाल एक समय और उत्कृष्ट पत्योपमक असंख्यातचे भाग प्रमाण है।

विश्रोषार्थ—मोहनीयकी जघन्य सत्त्वस्थित चपक सूच्मसांपरायिक जीवक अन्तिम समयमे प्राप्त होती है। तथा चपकश्रेणी पर चढ़नेका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है, अतः आंघसे जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल संख्यात समय कहा। श्रांघसे श्रजघन्य स्थितिका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। मूलमे दूसरीसे लेकर छठवीं पृथिवी तकके नारकी, मनुष्यत्रिक श्रादि कुछ ऐसी मार्गणाएं गिनाई हैं जिनम जघन्य और श्रजघन्य स्थितिका काल श्रोघके समान बन जाता है। इसके कारण भिन्न भिन्न हैं। दूसरी पृथिवीसे लेकर नारिकयोमें और ज्योतिपियोमें तो यह कारण है कि जो उत्कृष्ट श्रायुके साथ उत्पन्न हों और उत्पन्न हों नेके पश्रात् अन्तर्मुहूर्त कालमे सम्यग्दिष्ट होकर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर लॅं, उनके श्रन्तिम समयमे जघन्य स्थिति होती है। ऐसे जीव मरकर मनुष्योमें ही उत्पन्न होंगे श्रतः उनका प्रमाण संख्यात ही होगा। यही कारण है कि इन मार्गणाश्रोमें जवन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल संख्यात समय कहा। सर्वार्थसिद्धि और वैकियिककाययोगमें भी करीब इसी प्रकारका कारण जानना चाहिये। विभंगज्ञानमें यह कारण है कि चौवीस प्रकृतियोंकी सत्तानाला उपरिम मैवयकका देव यदि श्रन्तिम श्रन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त होता है तो उस

विभागज्ञानीके त्र्यन्तिम समयमें जघन्य स्थिति पाई जाती है। ये मरकर मनुष्योंमें ही उत्पन्न होते हैं, अतः इनके भी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्टकाल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। इनके अतिरिक्त जो शेव मार्गिणाएं गिनाई हैं उनकी जघन्य स्थिति मनुष्य पयायमें ही प्राप्त होती है त्रातः उनमें भी जघन्य स्थितिका जघन्य त्र्यौर उत्कृष्टकाल उक्त प्रमाण कहा । तथा इन सब मार्गणात्रोंमें अजवन्य स्थितिका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। नारिकयोंमें एक जीव की अपेता जयन्य स्थितिका जघन्य और उत्क्रष्टकाल एक समय है। अब यदि इनमें नाना जीव जबन्य स्थितिवाले हों तो कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक आविलके असं-ख्यातवें भागप्रमाणः काल तक ही होंगे अतः इनमें जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उक्कप्टकाल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी आदि मार्गणात्रोंमें जानना चाहिये जिनका निर्देश मूलमें किया ही है। सातवीं पृथिवीमें एक जीवकी श्वपेत्रा जवन्य स्थितिका जवन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्टकाल श्रन्तर्महूर्त है, अतः यहां नाना जीवोंकी ऋपेता जबन्य स्थितिका जबन्यवाल एक समय और उत्कृष्टकाल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण बन जाना है। निर्यंचोंमें जघन्य स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण भी अनन्त है. अतः यहां जघन्य स्थितिका काल सर्वदा कहा। मूलमें सब एकेन्द्रिय आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार समफना चाहिये। यद्यपि उनमें बहुतसी मार्गणओंमें जीवोंका प्रमाण असं-ख्यात है फिर भी वह संख्या बहुत बड़ी है अतः उनमें अजधन्य स्थितिवालोंका काल सर्वदा मान लेनेमे कोई त्रापत्ति नहीं त्राती। लञ्यपर्याप्तक मनुष्योंमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति विभक्तिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक जीवकी अपेत्तासे एक समय है। यदि इनमे नाना जीव जघन्य स्थितिवाले हों तो कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक आविलिके असंख्यातवें भाग कालतक ही होंगे। आतः इनमें जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रावलिके श्रसंख्यातवें भाग कहा । जो एकेन्द्रिय जीव दो विग्रहके साथ लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंमें उत्पन्न हो रहा है उसके प्रथम विग्रहमें त्रजघन्य स्थिति होकर दूसरे समयमे जघन्य स्थिति होगी और विष्रहके दो समय खहाभवष्रहण प्रमाण त्रायुमेंसे कम कर देने पर शेप त्रायका काल भी अजधन्य स्थितिका है त्रात: त्राजधन्य स्थितिका जधन्यकाल एक समय या दो समय कम खुदाभवमहूण प्रमाण कहा है। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य सान्तर मार्गणा है जिसका उत्कृष्ट काल पत्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र है अतः अजघन्य स्थितिका उक्त्रास्काल परुपोपमका असंख्यातवाँ भाग कहा । बादर प्रथिवीकायिक आदि पर्याप्तकोंमें एक जीवकी अपेन्ना जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्त-र्महुर्त है । यदि इनमें नाना जीव जघन्य स्थितिवाले हों तो कमसे कम एक समय श्रीर श्रिधिकसे त्रिधिक परुपापमके त्रसंख्यातवें भाग काल तक होगे त्रतः इनकी जवन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल परुयोपमका असंख्यातवाँ भाग कहा है । वैक्रियिकमिश्रकाययोगयोंमें जवन्य स्थिति चायिक सम्यग्दृष्टि उपशांतमोहसे मरकर सर्वार्थसिद्धिमें उत्पन्न होनेवाले जीवके वैक्रियिकमिश्रकाययोगके त्रान्तिम समयमें होती है । यतः इसना जघन्यकाल एक समय है ऋतः इसका जघन्यकाल एक समय कहा । पर्याप्त मनुष्योंका प्रमाण संख्यात है ऋतः इनमें निरन्तर संख्यातसे अधिक काल तक उत्पन्न नहीं हो सकते अतः इनका उत्कृष्टकाल संख्यात समय कहा। इसी प्रकार उपशम सम्यग्दष्टि, सम्यग्मिश्यादृष्टि, त्राहारककाययोगी, त्राहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, सूद्मसांपरा-रायिक संयत, यथाख्यातसंयत श्रौर सासादनकी प्ररूपणा घटित कर लेनी चाहिये, क्योंकि इन मार्गेणात्रोंमें अन्तिम समयमें ही जघन्य स्थिति विभक्ति होती है। अजघन्य स्थितिके विषयमें हर एक मार्गणाकी जो विशेषता है वह मूलमें दी ही है। इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

१४५. अंतराणुगमो दुविहो—जहण्णस्रो उक्कसस्रो चेदि । उक्कसण् पयदं । दुविहो णिद्दे सो—ओपंण आदेसेण य । तत्थ स्रोघेण मोह० उक्कस्सिटिदिविहित्तियाण-मंतरं के० १ जह० एगसमस्रो, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । स्रणुक० णित्थ अंतरं । एवं सत्तपुद्धवि०-सव्वितिस्वक०-मणुसितय-देव-भवणादि जाव सव्वद्द०-सव्वण्हंदिय-सव्विप्तिलिदियं-सव्वर्णचंदिय-सव्वपंचकाय-सव्वतस-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-स्रोरालि०-ओरालियमिस्स०-वेउ व्विय०-कम्मइय-तिण्णिवेद०-चत्तारिक०-मिद-सुद्म-ण्णाण०-विहंग०-स्राभिणि०-सुद्०-स्रोहि०-मणपज्ज०-संजद०-समाइय-छेदो०-पिरहार०-स्रमंजद०-संजदासंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-स्रोहिदंसण०-छलेस्सा-भवसिद्धि०-[स्रभव०-] सम्मादि०-खइ्य०-वेद्य०-मिच्छादि०-सण्णि-स्रसण्ण-आहारि-स्रणाहारि ति ।

§ १५६. मणुसअपज्ज० मोह० उक्क० ओघभंगो । अणुक्क० [ जह० एगसमओ, उक्क०] पलिदो० असंखेभागो । एवं सासण०-सम्मामि०दिद्दि त्ति ।वेउव्वियमिस्स० मोह० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० एगसमञ्रो, उक्क० वारस मुहुत्ता । आहार०-आहोर-

११५५. अन्तरानुगम दो प्रकारका है- जयन्य और उत्कृष्ट । उनमें से उत्कृष्ट अन्तरानुगमका प्रकरण है । उसकी अपन्ना निर्देश दो प्रकारका है-आयनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमें से आयनिर्देशकी अपन्ना मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीयोंका अन्तरकाल कितना है ? जयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । तथा मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभित्वताले जीयोंका अन्तरकाल नहीं है । इसी प्रकार मानों पृथिवियोंके नारकी, सभी तिर्यंच, सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनी ये तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, सभी पांचों स्थावरकाय, सभी त्रस, पांचों मनोयोगी, पांचों वचन-योगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, ओदारिकमिश्रकाययोगी, विकियककाययोगी, कार्मण्काययोगी, तीनों वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, आभिनियो-धिकज्ञानी, अन्वज्ञानी, अवध्यक्षानी, मनःपययज्ञानी, संयन, सामायिकसंयन, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिविश्विद्धसंयन, असंयन, संयनासंयन, चचुदर्शनी, अचचुदर्शनी, अवधिदर्शनी, छहों लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, सम्यग्दिष्ट, नायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, मिण्य दृष्टि, संज्ञी, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १५६. मनुष्य अपर्याप्तकों में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तित्राले जीवोंका अन्तरकाल आंचके समान हैं। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पत्यके असंख्यातचें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सासादनसम्यग्दिष्ट और सम्यिग्ध्यादिष्ट जीवोंके जानना चाहिये। वैकियिकिमिश्रकाययोगियों में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल अोघके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वारह मुहूर्त है। आहारककाययोगी,

१ मूलप्रतौ विगलिदियपञ्जपंचि इति पाठः।

मिस्स० मोह० उक्क० ओघं । त्र्रणुक्क० ज० एगसमत्रो, उक्क० वासपुभत्तं । एवम-कसा०-जहाक्लादसंजदे त्ति ।

६१५७. अवगद्० मोह० उक्क० ओधं। अणुक्क० जह० एगसमञ्जो, उक्क० इम्मासा। एवं सुहुमसंपराय० वत्तव्वं। उवसम० उक्क० ओघं। अणुक्क० जह० एगसमओ, उक्क० चडवीसमहोरत्ते। अथवा अकसा०-जहाक्खाद०-अवगद०-सुहुम० मोह० उक्क० वासपुधत्तं। उवसम० चडवीसमहोरत्ते० सादि०। सासण० पिट्रो० असंखे०भागो। खड्य० इम्मासा।

# एवम्रुक्कस्सओ अंतराणुगमी समत्ती।

त्रोर आहारकिमिश्र हाययांगी जीवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिबिभक्तियाले जीवोंका अन्तरकाल ब्रांचके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय ब्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्ष पृथक्त्व है। इसी प्रकार अकपायी ख्रोर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

\$ १५७. ऋपगतवेदियोमें मोहनीयकी उत्हृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल आयके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका ज्ञयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। इसी प्रकार सूरमसांपरायिक संयत जीवोंके कहना चाहिये। उपशमसम्यग्टिण्टयोमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल श्रोघके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका ज्ञयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल चोवीस दिन रात है। अथवा, अकपायी, यथाख्यातसंयत, अपगतवेदी और सूरम-सांपरायिकसंयत जीवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षय्यक्त्व है, उपशमसम्यग्टिण्योमें साधिक चोवीस दिनरात है। सासादन सम्यग्टिण्योमें पल्यापमके असंक्यातवें भागप्रमाण है और ज्ञारिक सम्यग्टिण्योंमें छह महीना है।

विशेषार्थ— उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव यदि संसारमें न हों तो कमसे कम एक समय तक खोर खिक से अविक झंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक नहीं होते हैं अतः यहाँ उत्कृष्टस्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण कहा। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं अतः इनका अन्तरकाल नहीं कहा। मृलमें सातों पृथिवियोंके नारकी आदि और जितनी मागणाएँ गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है अतः उनकी प्रकृत्याकों ओघके समान कहा। तथा इनके अतिरिक्त और जितनी मार्गणाएँ हैं उनमें भी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर ओघके समान है अतः उन सबमें उत्कृष्टस्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। हों इन मार्गणाओंमें अनुत्कृष्ट स्थितिका भी अन्तरकाल पाया जाता है जिसका खुलासा निम्न प्रकार है— लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य, सासादन सम्यम्दिष्ट और सम्यग्मिण्यादिष्टिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। वैकियिकमिश्रकाययोगका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वारह मुहूर्त है। आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोगका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वारह मुहूर्त है। आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोगका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वारह मुहूर्त है। इपक अपगतवेद और सूक्तमसंपरायसंयमका जघन्य समतर वर्षपृथकत्व है। इपक अपगतवेद और सूक्तमसंपरायसंयमका जघन्य

§ १५८. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहे सो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण मोह॰ जह० ज० एगसमओ, उक्क० छमासा । श्रज० णित्थ अंतरं । एवं मणुस०-मणुसपज्ज०-पंचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस०-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवि०-कायजोगि०-श्रोगिल०-लोभकसाय-आभिणि --सुद०-श्रोहि०-संजद-सामाइय-छेदो०-चक्ख०-अच-क्खु०-सुक्कले०-भवसि०-सम्मादि०-खइय०-सण्णि०-आहारि चि । णवरि ओहि-णाण० वासपुधर्चा।

१५६. त्रादेमेण णेरइएस जह० त्रज० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो । एवं सत्त पुढवि०-सन्वर्गचिदियतिरिक्ख-देव-भवणादि जाव सन्वद्द०-सन्विवगिलिदिय-पंचिदिय-

अन्तर एक समय और उन्कृष्ट अन्तर छह महीना है, उपराम सम्यक्त्वका जघन्य अन्तर एक समय और उन्कृष्ट अन्तर चोवीस दिनरात है, अतः इन मार्गणाओं में अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल उक्तरमाण प्राप्त होता है। यहाँ पहले जो उपरामश्रेणीका अन्तरकाल कहा उससे मोहसत्कर्मवाले अकपायी और यथाक्यात संयतों का अन्तरकाल लेना चाहिए। यहाँ अथवा कहकर कुछ मार्गणाओं के अन्तरकाल में कुछ फरक बनलाया है। जो मूलमें ही दर्ज है। अकपायी, यथाक्यतसंयत, अपरानवेदी और स्इमसांपरायिक संयतमें मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थिति विभक्तियाले जीव उपरामश्रेणीमें ही होते है और उपरामश्रेणीका उन्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्तव है अतः अथवा कहकर इनका उन्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्तव कहा गया है। परन्तु कुछ आचार्यों का मन यह भी रहा है कि सभी उपराम श्रेणीवालों के मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थिति नहीं होती बहुत कम जीवों के होनी है। अतः उनके मतानुसार अकपायी आदि में उन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट अन्तर श्रोपके समान अंगुलका असंख्यानवां भाग भी कहा है जो संभवतः वीरसेन स्वामीको भी इप्टथा। तथा उन्होंने अथवा कहकर दूसरे मतका भी उन्लेखकर दिया है। इसी प्रकार उपशमसम्यग्दिष्ट, सासादनसम्यग्दि और दायिकसम्यग्दियों में भी मोहनीयकी उन्कृष्ट स्थितिके उन्कृष्ट अन्तरके विपयमें मनभेद जान लेना चाहिये। यह अन्तर मुलमें दिया ही है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

§ १५ म. अय जवन्य अन्तरानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है— अगेवनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेसे ओघकी अपेता मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभित्तवाले जीवोंका जवन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। तथा अजवन्य स्थितिविभित्तवाले जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, असपर्याप्त, पांचों मनायोगी, पांचो वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाय-योगी, लोभकपायी, आभिनवाधिकज्ञानी, अवज्ञानी, अवधिज्ञानी,संयत, सामायिकसंयत, छेदा-पस्थापनासयत, चतुदर्शनी, अचतुदरानी, शुक्ललेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दृष्टि, त्वायिकसम्यग्दृष्टि, संज्ञी और आहारकाके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवधिज्ञानी जीवोंमें मोहनीयकी ज्ञावन्य स्थितिवभित्तवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्तव है।

§ १५६. आदेशनिर्देशकी अपेत्ता नारिकयोंमें जघन्य और अजघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीवोंका अन्तरकात उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंके अन्तरकालके समान है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर अपज्ज०-तसत्रपज्ज०-चत्तारिकायवादरपज्जत्त-[ बादरवणष्फ०परोयपज्ज०-वेउव्विय-कायजोगि-]विहंग०- परिहार०-संजदासंजद-तेउ०-पम्म०-वेदयसम्मादिडि त्ति ।

§ १६०. तिरिक्ख०मोह० जह० अन्नह० णित्थ अंतरं। एवं सञ्वएइंदिय-चत्तारि-काय-तेसिं वादरअपज्ञ०-सुहुम०-पज्जत्तापञ्जत्त-वादरवणप्फदिपत्ते य०-अपज्ञ०—वण-प्फदि-णिगोद०-वादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-त्रोरालियिमम्स०-कम्मइय०-मदि─सुद्र~ अण्णाण-असंनद०-तिण्णिलेस्सि०-अभव०-मिच्छादि०-असण्णि०-ऋणाहारि ति ।

§ १६१. मणुसिणीसु मोह० ज० ज॰ एगसमञो, उनक० वासपुथत्तं । अज० णित्थ अंतरं । एवं मण्पाज्ज० । ओहिदंस० ऋोहिणाणिभंगो । मणुसऋपज्ज० उनक-स्सभंगो । वेउव्वियमिस्स० उनकस्सभंगो । आहार०-ऋाहारिमस्स० उनकस्सभंगो ।

§ १६२. इत्थि०-णवुंस० ज० ज० एगस०, उक्क० वासपुथत्तं । पुरिस० जह० जह० एगसमओ, उक्क० वासं सादिरेयं । अज० तिण्हं पि णत्थि अंतरं ।

सर्वार्थसिद्धितकके देव, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस्थ्यपर्याप्त, पृथिवीकायिक आदि चार स्थावरकाय बादर पर्याप्त, 'बादर वनस्वति प्रत्येकशरीर पर्याप्त, वैक्षियिक काययोगी, विभंगज्ञानी, परिहारविशुद्धिसंयन, संयतासंयत, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके कहना चाहिये।

§ १६०. िर्थेचोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थिति विभक्तिकी अपेत्ता अन्तरकाल नहीं हैं। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, घारों स्थावरकाय, चारों स्थावरकाय बादर, चारों स्थावरकाय बादर अपर्याप्त, चारों स्थावरकाय सूदम, चारों स्थावरकाय सूदम पर्याप्त, चारों स्थावरकाय सूदम अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, बादर वनस्पतिकाय प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सामान्य वनस्पति, निगोद, वनस्पतिकायिक बादर, वनस्पतिकायि बादर पर्याप्त, वनस्पतिकायिक बादर अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक सूदम अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक सूदम अपर्याप्त, वादर निगोद, बादर निगोद पर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, काम्पकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, छुण्ण आदि तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिण्याद छे, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १६१ मनुष्यिनयों में मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवा जे जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके जानना चाहिये। अवधिदर्शनवाले जीवोंके अवधिज्ञानवाले जीवोंके समान अन्तरकाल है। लघ्-यपर्याप्तक मनुष्यों में इनके उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान अन्तरकाल है। वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें इनके उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिविभक्तिवाले जीवोंके समान अन्तरकाल है। तथा आहारकत्रवयोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोमें इनके उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान अन्तरकाल है।

§ १६२. खीवेदी और नपुंसकवेदी जीवोंमें जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य भन्तरकाल एक समय त्र्योर उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व है। पुरुषवेदी जीवोंमें जघन्य स्थिति- श्रवगद् भोहः ज॰ ज॰ एगसमश्रो, उक्क॰ छमासा । एवमजहण्णिट्दीए वि वत्तव्वं । एवं सुहुमसंप० । कोह०-माण०-माय० पुरिस०भंगो । अकसाय० उक्कस्स-भंगो । एवं जहाक्खाद० वत्तव्वं । उवसम०-[सासण् ०- ]सम्मामि० उक्कस्सभंगो । एवमंतराणुगमो समत्तो ।

विभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष है। तथा तीनों ही वदवाले जीवोंमें अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अपगत-विद्योंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। तथा इनके अजघन्य स्थितिविभक्तिकी अपेक्षा भी इसीप्रकार कथन करना चाहिये। इसी प्रकार सूरमसांपरायिकसंयत जीवोंके कहना चाहिये। कोध, मान श्रीर माया कपायवाले जीवोंके पुरुषवेदियोंके समान कहना चाहिये। अकपायी जीवोंके इनके उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान अन्तरकाल है। इसी प्रकार यथाख्यातसंयत जीवोंके कहना चाहिये। तथा उपश्चमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके इनके उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान अन्तरकाल है।

विशेषार्थ - जब एक समयके अन्तरसे जीव चपकश्रेणीपर चढ़ते हैं तब जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल एक समय पाया जाता है और जब छह महीनाके अन्तरसे जीव चपकश्रेणीपर चढ़ते हैं तब जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना पाया जाता है। स्रोघसे अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है यह तो स्पष्ट ही है। सामान्य मनुष्य अपदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमे भी इसी प्रकार अन्तर समभाना चाहिये. क्योंकि चपकश्रेणीमें वे सब मार्गणाएं सम्भव हैं अत: उनमें जघन्य स्थितिका अन्तर श्रोघके समान वन जाता है। श्रौर वे मार्गणाएं निरन्तर हैं अतः उनमें अजधन्य स्थितिका अन्तर नहीं पाया जाता। किन्तु अवधिज्ञानी जीव यदि चपकश्रेणी पर न चढ़ें तो वर्पपृथक्त्व काल तक नहीं चढते हैं ऋत: इनमें जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट ऋन्तर वर्पपृथन क्त्व कहा है। सामान्य नारकी आदि कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर इनकी उत्कृष्ट श्रोर त्र्यनुत्कृष्ट स्थितिके समान है । सामान्य तिर्यंच त्रादि कुछ एसी मार्गणाएं हैं जिनमे जघन्य त्रौर त्रजघन्य स्थितिवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं, त्र्यतः इनमे उनका अन्तर-काल सम्भव नहीं। मनुष्यिनी, मनःपर्ययज्ञानी, स्त्रीवेद त्र्यौर नपुंसकवेद इन मार्गणात्रोमे चपक-श्रेणीका जघन्य अन्तर एक समय स्रोर उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है, स्रतः इनमे जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षश्यकत्व कहा। यही वात अवधिदर्शनकी है। पर इनमें अजवन्य स्थितिका अन्तरवाल नहीं पाया जाता । लब्ध्यपर्याप्तकमनुष्य, वैकियिकमिश्रकाय-योगी, त्राहारककाषयोगी इनकी जघन्य त्रौर त्राजयन्य स्थितिका अन्तर इनकी उत्कृष्ट त्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिके अन्तरके समान है उससे इसमें कोई विशेषता नहीं हैं। पुरुषवेदमें कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक साधिक एक वर्ष तक चपकश्रेणी नहीं प्राप्त होती, अतः इसमें जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय ऋौर उत्कृष्ट ऋन्तर साधिक एक वर्ष कहा हैं। किन्तु इसमें अज्ञज्ञचन्य स्थितिका श्रन्तर नहीं है क्योंकि यह निरन्तर मार्गणा है। मोह सत्कर्मवाले चपक अपगतवेद और चपक सूच्मसम्पराय संयमकी प्राप्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है अतः इनमे जघन्य और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना कहा। कोध, मान और माया कपायका कथन पुरुपवेदके समान है, क्योंकि इन तीनों कपायोंका चपकश्रेणीमे जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक एक वर्ष पाया जाता है। मोहनीयसत्कर्मवाले अकपायी और यथाख्यातसंयत उपशमश्रेणीमें

# १६३. भावाणुगमेण सव्वत्थ ओदइस्रो भावो । एवं भावाणुगमो समत्तो ।

§ १६४. ऋष्पावहुआणुगमो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सा चेदि । उक्कस्से पयदं । दुविधो णिइ सो-ओघेण झादेसंण य । तत्थ ओघेण सव्वत्थावा मोह० उक्कस्स-हिदिविहत्तिया जीवा । ऋणुक्क ० अणंतगुणा । एवं तिरिक्ख-सव्वएइंदिय-सव्ववणष्फदि०-सव्विणञ्चोद०-कायजोगि०-ओराल्यिय०-ओराल्यिमस्स०--कम्मइय०-णवुंस०-चत्तारिकसाय-मिद-सुदअण्णाण०--ऋसंजद-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०- अभवसि०-भिच्छादि०-ऋसण्णि०-आहारि०-ऋणाहारि ति ।

§ १६५. त्रादेसेण णेरइएसु मोह० सव्वत्थोवा उक्क० । त्रणुक्क० असंखेजज-गुणा । एवं सत्तसु पुढवीसु सव्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ञ०-देव-भवणादि जाव अवराइद०-सव्विवितिहिंद्य-सव्वपंचिदिय-चत्तारिकाय−सव्वतस-पंचमण०-पंच-वचि०-वेउव्विय-वेउव्वियमिस्स०-इत्थि०-पुरिस०-विद्ंग०-आभिणि०-सुद०-त्रोहि०-

ही होते हैं खतः इनमें जयन्य ख्रीर अजधन्य स्थितिका अन्तर उत्कृष्ट ख्रीर अनुकृष्ट स्थितिके समान बन जाता है। इसी प्रकार उपशम सम्यक्त्व, सासादन ख्रीर सम्यग्मिण्यात्वमे उत्कृष्ट स्थितिके समान अन्तर जानना, क्योंकि ये तीनो सान्तर मार्गणाएँ हैं अतः इनके जयन्य स्थितिके अन्तरमें उत्कृष्ट स्थितिके अन्तरमें

इस प्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

भावानुगमकी ऋषेचा सर्वत्र ऋौक्षयिक भाव है।

#### इस प्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

§ १६४. अल्पबहुत्वानुगम दो प्रकारका है—जघन्य श्रीर उत्कृष्ट। उनमेसे उत्कृष्ट अल्प-वहुत्वानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघनिर्देश श्रीर आदेशनिर्देश। उनमेंसे श्रोघकी अपेचा माहनीयकी उत्कृष्टस्थितियभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अनुत्कृष्ट स्थितियिभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्च, सभी एकेन्द्रिय, सभी वनस्पितकायिक, सभी निगाद, काययागी, श्रोदारिककाययागी, श्रोदारिकिमश्र-काययोगी, कामणकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, अचनुदर्शनी, कृष्ण श्रादि तीन लह्यावाले, भव्य, अभव्य, मिण्यादृष्टि, असंबी, श्राहारक श्रीर अनारहक जीवोंके जानना चाहिए।

\$ १६५. त्रादेशितदेंशकी त्रपेत्ता नारिकयोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थाड़े हैं। इनसे त्रजुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव श्रसंख्यातगुरे हैं। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य मनुष्य, मनुष्य त्रपर्यात, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर श्रपराजित स्वर्ग तकके देव,सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, पृथिवीकायिक श्रादि चार स्थावरकाय, सभी त्रस, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी,

संजदासंजद-चक्खु०-ओहिदंस०-तिण्णिले०-सम्मादि-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण० सम्मामि०-सण्णि त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०सव्यत्थोवा उक्क० । अणुक्क० संखेज्ज-गुणा । एवं सव्वद्द०-आहार०-त्राहारमिस्स०-त्रवगद०-अकसाय०--मणपज्ज०-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुमसांपरा०-जहाक्खादसंजदे त्ति ।

# एवमुकस्सअप्याबहुगाणुगमो समत्तो ।

§ १६६. जहण्णए पयदं । दुविहो णिइंसो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण जह० अजह० उक्कस्स०भंगो । एवं कायजीगि-ओरालि०-णवंसु०-चत्तारिकसा०-अचक्खु०-भवसि०-आहारि ति ।

१६७. आदेसेण णेरइएसु मोह० जह० अज० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो । एवं सत्तमु पुढवीसु सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइद-सव्व-एइंदिय-सव्विवगलिंदिय-सव्वपंचिंदिय-छक्काय०-पंचमण०-पंचविच०-ओरालियमिस्स०-वेउव्विय०-वेउव्वियभिस्स -कम्मइय०--इत्थि०-पुरिस०-मिद्-सुदअण्णाण-विहंग०--ग्राभिणि०-सुद०--ओहि०--संजदासंजद-ग्रसंजद--चक्कु०--ओहिदंस--पंचलं०--सुक्क०--

वैंकियिकिमिश्रकाययांगी,स्रांवदी,पुरुषवेदी,विभंगज्ञानी, त्र्यामिनियाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी,त्र्यविद्यानी, संयतासंयत, चतुदर्शनी,त्र्यविद्यानी,पीत त्रादि तीन लेश्यावाले,सम्यग्दिष्टि, त्रायिकसन्यग्दिष्टि, वेदक-सम्यग्दिष्टि, उपरामसम्यग्दिष्टि, सासादनसम्यग्दिष्टि, सम्यग्मण्यादिष्टि त्रोर संज्ञी जीवोके जानना चाहिये। मनुष्यप्यात त्रार मनुष्यानेयामें उन्कृत स्थितिविभक्तियाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे त्रमुख्यप्रति स्थितिवभक्तियाले जीव संख्यातगुर्णे हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिके देव, त्राहारक-काययागी, त्र्याहारकिमिश्रकाययागी, त्रप्यत्वेदी, श्रकपायी, मनःप्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत त्रीर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

### इस प्रकार उन्कृष्ट अरुपबहुत्वानुगम समाप्त हुआ।

§ १६६. अब जघन्य अल्पबहुत्वानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रेकारका है—श्रोघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे आघकी अपेक्षा जघन्य और अजघन्य स्थिति-विभक्तिवाले जीवोंका अल्पबहुत्व उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंके अल्पबहुत्वके समान है। इसी प्रकार काययांगी, औदारिककाययांगी, नपुंसकवेदी, कोघादि चारों कपायवाले, अचनुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १६७. आदेशनिर्देशकी अपेचा नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थिति-विभिक्तवाले जीवोंका अल्पबहुत्व उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीवोंके अल्पबहुत्वके समान है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोके नारकी, सभी तिर्यंच, मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर अपराजित स्वर्ग तकके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, छहों कायवाले, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, औदारिक मिश्रकाययागी, वैकियिक-काययोगी, वैकियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, स्थिवेदी, पुरुपवेदी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिनासंयत, असंयत, चचुदशनी, अवधि- त्रभव ०-सम्मादि ०-खइय ०-वेदय ०-उवसम ०-सासण ०-सम्मामि ०-मिच्छादि ०-सण्ण-त्रसण्ण-अणाहारि ति ।

६ १६८. मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वत्थोवा जह० । अजह० सखेज्जगुणा । एवं सव्वद्व०-आहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुमसांपराय०-जहाक्खादसंजदे ति ।

एवमप्पाबहुगाणुगमो समत्तो ।

## एवं चउवीस-अणियोगदाराणि समत्ताणि।

§ १६६. भ्रजगारे तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणादि जाव अप्पावहुए ति । समुक्कित्तणाग्धगमेण दुविहो णिद्दे सो — ओवेण आदेसेण य । तत्थ ओवेण मोह० ग्रत्थि भ्रज०-ग्रप्यद०-अविद्विदित्तिया जीवा । एवं सत्तम् पुढवीस्र सन्वतिरिक्ख-सन्वमणुस्स-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-सन्वएइंदिय-सन्वविगलिदिय-सन्वपंचिदिय-पंचकाय-सन्वतस-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि-ग्रोरालि०—ग्रोरालिय— मिस्स-वेउन्विय०—वेउन्वियमिस्स-कम्मइय-तिण्णिवेद-चत्तारिकसा०-मदि-सुदअण्णाण०-विद्दंग०-असंजद०-चक्खु-अचक्खु०-पंचलेस्सा०-भवसिद्धि०-अभवसिद्धि०-मिच्छादि०-

दर्शनी,कृष्ण त्रादि पांच लेश्यावाले, शुक्तलेश्यावाले, अभव्य, सम्यग्दष्टि, ज्ञायिकसम्यग्द्रष्टि, वेदक-सम्यग्द्रष्टि, उपश्चासस्यग्द्रष्टि, सासादनसम्यग्द्रष्टि, सम्यग्मिण्याद्रष्टि, मिण्याद्रष्टि, संज्ञी, असंज्ञी और त्रानाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १६८. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यितयोमें जवन्य स्थितिविभिक्तवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अजघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीव संख्यानगुणे हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिके देव, आहारककाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छदोपस्थापनासंयत, पिहारविशुद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यात-संयत जीवोंके जानना चाहिये।

इस प्रकार अल्यवहुत्वानुगम समाप्त हुआ। इस प्रकार चौबीस अनुयागद्वार समाप्त हुए। —--%---

§ १६९. मुजगार स्थितिविभक्तिके कथनमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्वनक तेरह अनुयोगद्वार हैं। उनमेंसे समुत्कीर्तनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेचा मोहनीयकी मुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव हैं। इसी प्रकार सातो प्रथिवियोके नारकी, सभी तिर्यंच, सभी मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, पांचों स्थावरकाय, सभी त्रस, पांचों मनायोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकिमिश्रकाययोगी वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी. असंयत, चचुदर्शनी, अचचुदर्शनी, कृष्णादि पांच लेक्सावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादिष्ट, संज्ञी, असंज्ञी,

#### सण्णि-असण्णि-आहारि-अणाहारि ति ।

६ १७०. आणदादि जाव सव्वद्द० मोह० ऋत्थि अप्पद्रविहित्तिया। एवमाहार०— आहारिमस्स-ऋवगद०-ऋकसा०-आभिणि०-सुद्०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०─परिहार०-सुहृमसांपराय०—जहाक्खाद०—संजदासंजद्—ओहिदंस०—मुक्क०— सम्मादि०-खइय०-वेदय०—उवसम०—सासण०—सम्मामि० ।

## एवं समुक्तित्तणाणुगमो समत्तो ।

ई १७१. सामित्ताणुगमेण दुविहो णिइ ेसो—श्रोघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण मोह० भुज० अवद्वि० कस्स ? अण्णद० मिच्छादिद्विस्स । श्रप्पदर० कस्स ? अण्ण०

श्राहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १७०. श्रानत करपसे लेकर सर्वार्थंसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी श्ररूपतर स्थिति-विभक्तियाले जीव हैं। इसी प्रकार श्राहारककाययोगी, श्राहारकिमश्रकाययोगी, श्रपगतवेदी, अकपायी, श्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुनज्ञानी, श्रवधिञ्चानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारावशुद्धिसंयत, सूद्ध्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, श्रवधिदर्शनी शुक्तलेदयायाले, सम्यग्दिष्ट, चायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, उपश्रमसम्यग्दिष्ट, सासादनसम्यग्दिष्ट श्रीर सम्यग्निथ्यादिष्ट जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—भुजगार अनुयागद्वारमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित इन तीनोंका विचार किया जाना है। इसके अवान्तर अधिकार तेरह हैं। जो निम्न हैं समुत्कीर्तना, स्वामित्व, एक जीवकी अपेचा काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेचा मंगिवचय, भागाभाग, परिमाण, चेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पवहुत्व। इनमेसे पहले यहां समुत्कीर्तनाका विचार करते हैं — श्राघसे भुजगारिस्थितवाले, अल्पतर स्थितवाले और अवस्थित स्थितवाले जीव पाय जाते हैं। जो कर्म स्थितिसे अधिक स्थितिको प्राप्त हो उसे भुजगारिस्थितवाला कहते हैं। जो अधिक स्थितिसे कम स्थितिको प्राप्त हो उसे अल्पतरस्थितवाला कहते हैं और जिसकी पहले समयके समान दूसरे समयमें स्थिति रहे उसे अवस्थित स्थितवाला कहते हैं। इस प्रकार श्रोवकी अपेचा इन तीनों प्रकारके जीवोंका पाया जाना सम्भव है। सातों पृथिवींक नारकी आदि प्रायः बहुत सी मार्ग-ए। श्रोमें इसी प्रकारकी स्थिति हैं अतः वहां भी आंघके समान तीनों प्रकारकी स्थितवाले जीव जानना चाहिये, क्योंकि जिन मार्गए। श्रोमें मिध्यादर्शन सम्भव है वहां तीनो विभक्तियां वन सकती हैं। केवल आनतसे लेकर नो प्रवयक तकके देव तथा शुक्ललेश्यावाले इसके अपवाद हैं। किन्तु आनतादि कल्पोमें, शुक्ललेश्यामें और सम्यग्दर्शनसे सम्यन्ध रखनेवाली शेव मार्गणाओंमें पहले समयमें प्राप्त हुई स्थितिसे द्वितीयादि समयोमें स्थिति उत्तरोत्तर घटती जाती है, अतः इनमें केवल एक अल्पतर स्थित ही जाननी चाहिये।

# इस प्रकार समुत्कीर्तनातुगम समाप्त हुत्रा।

§ १७१. स्वामित्वानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—ओविनिर्देश और आदेश-निर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेत्ता मोहनीयकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्ति किसके होती है १ किसी भी मिथ्यादृष्टि जीवके होती है । अल्पतर स्थितिविभक्ति किसके होती है १ किसी भी सम्मादिष्टिस्स मिच्छाइष्टिस्स वा। एवं सत्तसु पुढवीसु तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितय-मणुसितय-देव-भवणादि जाव सहस्सार-पंचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-छोरालि०-छोरालियमिस्स०-वेउिव्वय०-वेउिव्वय-मिस्स०-कम्मइय०--तिण्णिवेद-चत्तारिकसा०-असंजद-चक्खु०-अचक्खु०-पंचलेस्सा-भवसिद्धि०-सण्णि०-आहारि०-अणाहारि ति ।

§ १७२. पंचिदियतिरि०अपज्ञ० मोह० भ्रज० ऋप्पद० ऋबद्दि० कस्स १ अण्णदरस्स । एवं मणुसऋपज्ज०–सब्वएइंदिय–सब्वविगलिदिय–पंचिदियऋपज्ज०– पंचकाय–तसऋपज्ज०-मदि-सुदअण्णाण०–विहंग०-ऋभव०–मिच्छादि०–असण्णि ति ।

\$ १७३. आणदादि जाव उविरमगेवज्जे ति अप्पद्र० कस्स १ अण्ण० सम्मा-दिहिस्स मिच्छादिहिस्स वा। [एवं सुक्क० ।]णगणुद्दिमादि जाव सन्बहे ति अप्पद्र० कस्स१ अण्णद्रस्स सम्भाइहिम्स । एवमाहार०-आहारिमस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद्०-ओहि०-पणपज्ज०- संजद०-सामाइय०-छेदो०-परिहार०-सहुमसीपराय०-जहाक्खाद०संजद०-संजदासंजद्-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदग०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छादिहि ति ।

# एवं सामित्ताणुगमी समतो।

सम्यग्हिण्ट या मिण्याहिण्ट जीवके होती है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंके नारकी, सामान्य तियंच, पंचेन्द्रियतियंचित्रक, मनुष्यित्रक, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनायोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, खोदारिककाययोगी, खोदारिकमिश्रकाययोगी, विकिथिककाययोगी, वैकिथिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों वेदवाल, क्रोधादि चारों कपायवाल, अमंयत, चनुदर्शनवाल, अचनुदर्शनवाल, कृष्णादि पांच लेरयावाल, भव्य, संज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।

§ १७२. पंचेन्त्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोमं मोहनीयकी मुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्ति किसके होती है ? किमी भी जीवके होती है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्त्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, पांचों स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोके जानना चाये।

§ १७३. त्रानत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रेंबेयक तकके देवोंमें श्रल्पतर स्थितिविभक्ति किमके होती है ? किमी भी सम्यग्हिण्ट या मिध्यादृष्टि जीवके होती है । इसी प्रकार शुक्त लेश्यावालोंके कहना चाहिये। नो अनुदिशिमे लेकर सर्वार्थमिद्धि तकके देवोंमें अल्पतर स्थिति-विभिक्त किसके होती है ? किसी भी सम्यग्हिण्ट जीवक होती है । इसी प्रकार श्राहारककाययागी, श्राहारकमिश्रकाययोगी, श्रवगतवदी, श्रकपायी. आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रवज्ञानी, श्रवधिज्ञानी,मनः-प्रयञ्ज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत,परिहारिवशुद्धिसंयत, सूर्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासयत, श्रवधिद्शनवाले, सम्यग्हिष्ट, ज्ञायकसम्यग्हिष्ट, वेदकसम्यग्हिष्ट, उपशासम्यग्हिष्ट, सासादनसम्यग्हिष्ट और सम्यग्मध्याहिष्ट जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ-इस बातका उल्लेख हम पहले कर आये हैं कि मिध्यादृष्टिके मुजगार आदि तीनों १३ § १७४. कालाणुगमेण दुविहो णिइ सी—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण भुज० जह० एगसमञ्चो, उक० चत्तारि समया । अप्पद० जह एगसमञ्चो, उक० तेविहसागरीवमसदं तीहि पलिदोवमेहि अंतोमुहुत्तव्भिहिएहि सादिरेयं। अविहद० जह० एगसमओ, उक० अंतोमु०। एवमचक्खु०-भविमिद्धि०।

स्थिति विभक्तियां सम्भव हैं और सम्यग्दृष्टिके केवल एक ऋत्पतर स्थितिविभक्ति ही सम्भव है। इस श्रुतयोगद्वारमें इसी दृष्टिमे विचार किया गया है। पूर्वोक्त सूचनानुसार सामान्य सिद्धान्त यह निष्पन्न हुन्ना कि सामान्यसे मिश्याहृष्टि जीव तीनों स्थिति विशक्तियोके स्वामी हैं त्रीर सम्य-म्हष्टि जीव केवल एक श्रास्पतर स्थितिविभक्तिके ही स्वामी हैं। श्रादेशकी अपेजा भी विचार करनेका मुल यही है। आनतमे लंकर नो शैवयक तकके देवोंको व शुक्ललेश्यावालोंको छोड़कर शेप जिन मार्गणात्रोमें मिथ्यादर्शन स्रोर सम्यग्दर्शन सम्भव है वहां मिथ्यादृष्टियोंको तीनो स्थितिवि-भक्तियों के स्वामी जानता चाहिये और सम्यग्द्रष्टियोंको केवल एक अल्पतर स्थितिविभक्तिका ही स्वामी जानना चाहिये । ऐसी मार्गणाश्रोके नाम मुलमे गिनाये ही है । इतना विशेष जानना कि यहां सम्यग्दृष्टि पद्मे सामाद्नसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिश्यादृष्टियोंका भी प्रहृण् कर लेना चाहिये, क्योंकि इनके भी एक अल्पनर स्थितिविभक्ति ही होती है। मनुष्य अपर्याप्त आदि कुछ मार्गराएं ऐसी हैं जिनमें एक मिश्यादर्शन ही सम्भव है अतः यहां तीरों स्थितिविभिक्तियोका स्वामी मिथ्यादृष्टि जीव होता है । यद्यपि इस कसायपाहुडके अनुसार इनमें कुछ मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें सासादनसम्यक्त्व भी पाया जाता है पर उसका श्रपेत्तासे यहां पृथक कथन नहीं किया। फिर भी उसकी ऋषेना विचार करने पर एक ऋल्पतर स्थितिविभक्ति ही प्राप्त होती है। अथान ऐसे एकेन्द्रियादि जीव जो सामादनसम्यग्द्दष्टि होगे वे. सासादनसम्यक्त्वके काल तक एक ऋल्पतर स्थितिविभिक्तके ही स्वामी होगे। आनत कल्पसे लेकर नो प्रवियक तकके देवोंक तथा अक्ल-लेरुयावालोंके मिण्यादर्शन और सम्यन्दर्शन दोनों सम्भन हैं किर भी यहां एक अल्पतर स्थिति ही होती है, त्रातः उकत स्थानोमें मिथ्य।हष्टि और सम्यग्हिष्ट जीवको ऋल्पतर स्थितिविभक्तिका ही स्वामी वतलाया है । शेप मार्गग्।श्रोमे अल्पतर स्थितिविभक्तिका स्वामी सम्यग्दृष्टि ही होता है, क्योंकि उनमें मिथ्यादशेन सम्भव ही नहीं है।

## इस प्रकार स्वामित्वानुगम समाप्त हुन्ना ।

§ १७४. कालानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है---ओवनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेता भुजगार स्थितिविभक्तिका जवन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल चार समय है। अन्यतर स्थितिविभक्तिका जवन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल तीन परुप और अन्तर्भु हुत अधिक एकसो बेसठ सागर है। अबस्थितिविभक्तिका जवन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्भु हुत है। इसी प्रकार अवसुदर्शनी और भव्य जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — किसी जीवने एक समय तक भुजगार स्थितिका वन्ध किया खोर दूसरे समयमें वह अन्पतर या अवस्थित स्थितिका वन्ध करने लगा तो भुजगारका जवन्यकाल एक समय प्राप्त होता है। तथा जब कोई एक एकेन्द्रिय जीव पहले समयमें अद्धान्त्रयसे स्थितिको बढ़ाकर बॉधता है, दृसरे समयमें संकेशन्यसे स्थितिको बढ़ाकर बॉधता है, दीसर समयमें मरकर खोर एक विमहसे संज्ञियों उत्पन्त होकर असंज्ञियों के योग्य स्थितिको बढ़ाकर बॉधता है खोर चौथ समयमें अरीरको प्रदेश करके संज्ञीक योग्य स्थितिको बढ़ाकर बॉधता है तब उस जीवके भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल चार समय प्राप्त होता है, इस प्रकार भुजगार स्थितिका जवन्यकाल

एक समय ऋौर उत्कृष्ट काल चार समय समभना चाहिये। इसका विशेष खुलासा इस प्रकार है— यहाँ एक स्थितिके बन्धके यांग्य कालका श्रद्धा कहा है। जो कमसे कम एक समयतक श्रीर अधिक से अधिक अन्तर्मुहून तक होता है। तात्पर्य यह है कि किसी जीवके विवित्ति एक स्थितिका वन्ध हो रहा है तो वह वन्ध कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्म हर्त काल तक होगा। इसके प्रधान वह बदल जायगा ख्रीर तब उससे न्यून या ऋधिक स्थितिका बन्ध होने लगेगा। पर यहाँ भुजगारकी स्थिति विविज्ञत है अतः अधिकका बन्ध कराना चाहिए। पर इस प्रकार ऋद्वाच्यसे बचनेवाली स्थितिम फरक पड़ जानेपर भी न्थितिबन्धके कारएभूत संक्रेशरूप परिस्मामोमें नियमसे बदल होगा ही यह नहीं कहा जा सकता। किसी जीवके ऋद्वाच्चयके साथ संक्लेश्चय हो जाता है और किसी जीवके ऋद्वाचयके पश्चान् भी संक्लंशत्त्रय होता है। केवल अद्धात्त्रयंक होने पर स्थितिमे अधिकसे अधिक वृद्धि पल्यंके असंख्यानवें भागप्रमाण ही हो सकती है अधिक नहीं, क्योंकि एक एक क्रोधादि कपायरूप परिगामखण्ड उक्त प्रमाण स्थितिवन्यका हा कारण होता है। पर संक्लेश चयके हीने पर अधिकसे अधिक मंख्यान समार स्थिति वढ़ सकती है और घट भी सकती है। किन्तु यहाँ भूजगारकी विवता है, इसलिये वृद्धि हा लेनी चाहिये। इस प्रकार जब किसा एकन्द्रिय जीवके पहले समयमें ऋद्वान्तयसे स्थितिमें वृद्धि होती हैं, दूसर समयमें संक्लेशन्यसे स्थितिमें वृद्धि होती है। तब उसके भूजगारके दो समय तो एकेन्द्रिय पर्यायमे प्राप्त हो जाते है। तथा वह जीव यदि तीसरे समयमे मरा और एक मीड़ेके साथ संजियामे उत्पन्न हुआ ता उसके तीसर समयमे असंज्ञीके यांग्य स्थितिका बन्ध होने लगगा आर चीय समयमे शरीरका प्रदेश कर लनके कारण संजीके योग्य स्थितिका बन्य होने लगेगा। इस प्रकार उसी जीवक मुजगारक दा समय संजी पंचेन्द्रिय पर्यायमे प्राप्त हुए । इस तरह भुजगारक छल समय चार हुए । अतः भुजगार हियतिका उत्क्रप्ट काल चार समय कहा । जो जाब एक समय तक अहपतर हियतिका बन्ध करक दूसरे समयमे अजगार या अवस्थित स्थितिका बन्ध करने लगता है उसके अल्पतरका जबन्यकाल एक समयका पाया जाता है। तथा जिस जीवन अन्तम्हित काल तक अल्पतर स्थितिका बन्ध किया। अनन्तर वह तान पर्व्यका आयु लेकर भागभूमिम उत्पन्न हुआ जार वहां ऋायमें अन्तर्म हुने कालके शेर रहने पर उसने सम्यक्तवका श्रहण किया। अनन्तर वह छत्रासठ सागर नक सम्यक्त्वके साथ परिश्रमण करता रहा । तत्पश्चान् अन्तमु हूने काल तक सम्योगमध्यात्वमे रहा त्रीर वहां से पुनः सम्यक्तको प्राप्त करक दूसरी बार छवासठ सागर तक सम्यक्तको साथ परि-श्रमण् करता रहा। तत्पश्चान् मिथ्यात्वम गया श्रोर इकतीस सागरकी त्रायुवाले देवामे उत्पन्न हो गया खोर वहासे च्युत होकर आर मनुष्याम उत्पन्न हाकर अन्तमुं हूर्त काल तक उसने अरूप-तर स्थितिबन्ध किया पश्चात् वह भुजगार स्थितिबन्ध करने लगा । इस प्रकार ऋष्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्यम् हुन त्र्यार तीन पर्वय त्राधिक एक सी त्रेसठ सागर प्राप्त होता है। एक स्थिति-वन्यका जवन्य काल एक समय आर उत्कृष्ट काल अन्तम् हुने हैं । अब यदि कोई जीव स्थिति-मत्त्वक समान स्थितिका बन्ध करता है तो वह कमसे कम एक समय तक और अधिकर्स अधिक अन्तमुं हूर्त काल तक ही ऐसा कर सकगा इसक पश्चान् उसके नियमसे अल्पतर या मुजगार स्थितिका बन्ध होने लगेगा, अतः अवस्थित स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त प्राप्त होता है। अचनुदुशेन आरि भव्य ये दो मार्गणाएं छद्मस्थ जीवके सम्यक्त्व श्रीर मिध्यात्व दानों दशाश्रीमें सर्वेदा रहती है अतः इनमें श्रीच प्ररूपणा वन जाती हैं, श्रीर इसीलिए इनके कथनको स्रोधके समान कहा।

§ १७५ त्रादेसेण ऐरइय० मोह० भ्रज० ज० एगसमत्रो, उक्क० वे समया । अप्रद० जह० एगममत्रो, उक्क० तेत्तीमं सागरोत्रमाणि देसुणाणि । अविदि० ओघ-भंगो । पढमादि जाव सत्तिमि ति भ्रज०-अविदि० णिर०ओघं । अप्र० जह० एग-समञ्रो, उक्क० सगसगुक्कस्मिंदिदी देसुणा ।

§ १७६. तिरिक्ख० मोह० भ्रज० अविह० श्रीघं । अप्पद्० जह० एगसमञ्रो, उक्क० तिण्णि पिल्रदोवमाणि सादिरेयाणि अंतोमुहुक्तेण । पंचिदियतिरिक्ख०-पंचि-तिरिक्खणज्ञ०-पंचि०तिरिक्खजोणिणीसु भ्रज० जह० एगसमञ्रो, उक्क० तिण्णि समया। अप्पद०-अविह० तिरिक्खोघं। पंचि०तिरि०अपज्ञ० भ्रज० ज० एगसमञ्रो, उक्क० तिण्णि समया। अप्पद०-अविह० जह० एगसमञ्रो, उक्क० अंतोमु०। एवं

§ १७५. त्रादेशकी अपेत्ता नारिकयोमं मोहनीयकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। अरुपतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय थ्रार उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। तथा अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल आघक समान है। पहली पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक प्रत्येक नरकमे भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल सामान्य नारिकयोक समान है। तथा अरुपतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट वाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिवभाण है।

विशेषार्थ—नरकमें अद्धात्तय और संक्लेशत्त्रयसे दो मुजगार समय प्राप्त होते हे अतः यहाँ मुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल दो समय कहा। कोई एक असंज्ञी दो विष्ठहसे नरकमें उत्पन्न हुआ और उसक यदि दूसरे विष्ठहमें अद्धात्त्रयसे तिसरे समयमे शरीरको प्रदेश करनेसे तथा चौथे समयमे संक्लेशत्त्रयस भुजगार स्थितिवन्य हुआ तो इस प्रकार नरकमे भुजगार स्थितिके तीन समय भी प्राप्त हो सकते हैं पर यहाँ पहले कथनकी हो मुख्यता है अतः उत्तरणावृत्तिमें उसीका उत्लेख किया हे। जिस जीवने नरकमें उत्पन्न होनेक परचान् अन्तमें हुर्त कालमें सम्यवत्त्रका प्रहण कर लिया है और जा अन्तमें हुत कालके शेष रहने पर मिध्यात्वमें गया उसके नरकमें अत्पत्तर स्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम ततीस सागर पाया जाता है। शेष कथन ओवक समान घटित कर लेना चाहिए। इसा प्रकार प्रथमादि नरकोमें भा कथन करना चाहिये। किन्तु वहा अल्पतर स्थितका उत्कृष्टकाल कुछ कम अपनी अपना उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण जानना चाहिये। यद्यपि पहले नरकमें सम्यग्दाप्ट जीव भा उत्पन्न होता हे और उसके अल्पतर स्थिति हो पाइ जाती है। किन्तु ऐसा जीव पहले नरककी उत्कृष्ट स्थितिके साथ नही उत्पन्न होता अतः पहले नरकमें भी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम एक सागरप्रमाण पात्र होता है।

§ १७६. तिर्यक्कोमे माहनीयकी मुजगार खाँर अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल खाँघके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जवन्य काल एक समय खाँर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्त अधिक तीन पत्य है। पंचेन्द्रियतियञ्च, पंचेन्द्रियतिर्यञ्चप्यातक खाँर पंचेन्द्रियतिर्यञ्चपानिमती जीवोमे मुजगार स्थितिविभक्तिका जवन्य काल एक समय खाँर उत्कृष्टकाल तीन समय है। तथा अल्पतर खाँर अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल सामान्य तिर्यञ्चांक समान है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च खपर्याप्तकोमें मुजगार स्थितिविभक्तिका जवन्य काल एक समय खाँर उत्कृष्ट काल तीन समय है। तथा अल्पतर खाँर अवस्थित स्थितिविभक्तिका जवन्य काल एक समय खाँर उत्कृष्ट काल तीन समय है। तथा अल्पतर खाँर खारे अवस्थित स्थितिविभक्तिका जवन्य काल एक समय खाँर उत्कृष्ट

पंचिं० ऋपज्ज० ।

\$ १७७. मणुसतिय० भ्रज०-अविदि० णिरओघं । अप्पद्० जह० एगममस्रो, उक्क० तिष्णि पिलदोवमाणि पुन्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि । मणुसिणीसु अंतो-मुहुत्तेण सादिरेयाणि । मणुसअपज्ज० भ्रज० जह० एयसमश्रो, उक्क०वे समया । अप्पद०-अविद० जह० एगसमस्रो, उक्क० अतोमुहुत्तं ।

े १७८ देवेसु भुज०-अविडि० णिरस्रोघं । अप्पद्० जह० एगसमस्रो, उक० काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक जीवों के जानना चाहिए।

विशोपार्थ—ितस तिर्यंचने पूर्व पर्यायमे अन्तर्मु हूर्त तक अस्पतर स्थितिका वन्ध किया। परचात् मरकर तीन पर्यकी आयुके साथ उत्तम भोगभूमिमें उत्पन्न हो गया उसके अस्पतर रिथितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हूर्त अधिक तीन पर्य पाया जाता है। सामान्य निर्यचोमें शेप कथन खोचके समान है। यदि कोई अन्य इन्द्रियवाला जीव पंचेन्द्रिय तिर्यचित्रकमें उत्पन्न हुआ तो उमके पहला सभय अद्धान्त्रयसे, हूमरा समय शरीरको महण्ण करनेसे और तीसरा समय संक्लेशन्त्रयसे मुजगार स्थितिका प्राप्त होता है, खातः इनमे भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल तीन समय कहा। शेष कथन सुगम है। पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक और पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक अल्वतर और अवस्थित स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हुर्त कहा। शेष कथन सुगम है।

\$ १७७ सामान्य मनुष्य,पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी इन तीन प्रवारके मनुष्योमें भुजगार श्रोर श्रवस्थित स्थितिविभक्तिका वाज सामान्य नारिक्योंके समान है। श्रव्यतर स्थितिविभक्तिका ज्ञान्य काल एक समय और उन्ह्याट काल पूर्वकांटिके त्रिमागसे अधिक तीन पर्य है। मनुष्यितियोंमें श्रव्यतर स्थितिविभक्तिका उत्ह्याट काल श्रन्तमुं हुन श्रिविक तीन पर्य है। मनुष्य श्राप्तकोंमें भुजगार स्थितिविभक्तिका ज्ञष्य काल एक समय और उत्ह्याट काल दो समय है। तथा श्रव्यतर और श्रव्यक्षित स्थितिविभक्तिका ज्ञष्यय काल एक समय और उत्ह्याट काल श्रम्य है। नथा श्रव्यत्व और श्रव्यक्षित स्थितिविभक्तिका ज्ञष्यय काल एक समय और उत्ह्याट काल श्रम्तमुं हेने हैं।

विशेषार्थ—मामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य खोर मनुष्यिनियोंमेसे एक पूर्वकाटिकी आयुन्याले जिस मनुष्यने त्रिमागके शेव रहनेपर मनुष्यायुका वन्य करके पश्चान् चायिकसम्यन्दर्शनको प्राप्त कर लिया है वह मरकर उत्तम भोगभूमिमें तीन पत्यकी आयुके साथ उत्पन्न होता है। इसके त्रिभागसे लेकर अन्त तक निरन्तर स्थितिसत्त्वसे कम स्थितिका ही वन्य होता रहता है अतः अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल पूर्वकीटिका त्रिमाग अधिक तीन पत्य प्राप्त होता है। किन्तु सम्यग्दिष्ट जीव मरकर स्थिवेदी नहीं होता अतः मनुष्यिनियोंक अल्पतर स्थितिका काल अन्तमु हैते अधिक तीन पत्य ही प्राप्त होगा। यहां अन्तमु हैत्ते पूर्व पर्यायके और तीन पत्यसे उत्तम भागभूमिके अल्पतर स्थितिके कालका प्रहण करना चाहिये। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यका उत्कृष्टकाल अन्तमु हूर्त है, अतः इसके अल्पतर और अवस्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तमु हूर्त कहा। शेव कथन सुगम है।

§ १७८ देवोंमें भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल सामान्य नारिकयोंके

तेत्तीस सागरोवमाणि । भवणादि जात्र सहस्सारे ति एवं चेव । णवरि ऋष्पद० जह० एगसमञ्जो, उक्क० सगुक्कस्सिट्टिदी । भवण०-वाण०-जोदिसि० सगिट्टिदी अंतोमुहुत्तूणा । श्राग्यदादि जाव सन्बद्दसिद्धि ति श्रप्पदर० जह० जहण्णिद्दिदी, उक्क० उक्कस्सिट्टिटी ।

§ १७६. एइंदिय०भ्रज०-अविष्ठ० मणुसभंगो । अप्यद० जह० एगसम्ओ, उक्क० पिलदो असंखे०भागो । एवं वादरेइंदिय-सृहुमेइंदिय-चत्तारिकाय तेसि वादर-सृहुम-वणप्किद-वादरवणप्किद-सृहुमवणप्किद-णिगोद-वादरणिगोद-सृहुगणिगोदे ति । एटेसि पज्जत्ताणमपज्जत्ताणं च एवं चेव । णविर अप्यद० जह० एगसभ्यो, उक्क० सगसगु-कस्सिटिदी ।

§ १८०. विगलिदिय-विगलिदियपज्जत्ताणं भुज०-अविद्यि एइंदियभंगो। अप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० सगमगुकस्सिदिदी। विगलिदियअपज्ज० भुज०-अविद्य

समान है। तथा श्राल्पतर स्थितिविभक्तिका जयन्य काल एक समय और उत्छष्ट काल तेतीस सागर है। भवनवासियोसे लेकर सहस्रार कल्पतक इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्राल्पतर स्थितिविभित्रिका जयन्य काल एक समय और उत्छुष्ट काल अपनी श्रपनी उत्छुष्ट स्थित प्रमाण है। उसमें भी भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतियी देवोके श्रपनी अपनी उत्छुष्ट स्थिति श्रमाण है। उसमें भी भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतियी देवोके श्रपनी अपनी उत्छुष्ट स्थिति श्रम्तमु हूर्त कम कहना चाहिए। श्रान्तसे लेकर सर्वार्थमिद्धि तक्के देवोमें श्रात्मर स्थितिवभक्तिका जवन्य काल श्रपनी श्रपनी जवन्य स्थितिश्रमण्ण और उन्हृष्ट काल श्रपनी अपनी उत्छुष्ट स्थितिश्रमाण है।

विशेषार्थ-भवनवासियोंसे लेकर सहस्तार तकके देवों के तीनो प्रकारकी स्थितियोंका वन्ध होता है। अतः सहस्तार स्वर्गतक अरुपतर स्थितिका जधन्यकाल एक समय और उत्पृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त हो जाता है। पर इतनी विशेषता है कि भवन- त्रिकोंमें सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होता अतः वहां अत्यतरका उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हृतकम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण ही प्राप्त होगा। किन्तु आनतसे सर्वार्थसिद्धितक अल्पतर स्थितिका जधन्य काल जधन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्टकाल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण ही प्राप्त होगा, क्योंकि वहां एक अल्पतर स्थितिका ही वन्ध होता है। होष कथन सुगम है।

\$ १७६. एकेन्द्रियोमे भुजगार ख्रोर अवस्थित स्थितिविभिक्तिका काल मनुष्योंके समान है। तथा ख्रान्यतर स्थितिविभिक्तिका जवन्य काल एक समय ख्रार उत्कृष्ट काल पत्योपमके असंख्यातवें भाग प्रेमाण है। इसी प्रकार वादर एकेन्द्रिय, सूद्रमएकेन्द्रिय, पृथिवीकाधिक ख्रादि चार स्थावरकाय, उनके वादर ख्रीर सूद्रम, वनस्पतिकायिक, वादर वनस्पतिकायिक, सूद्रम वनस्पतिकायिक, निगोद, वादर निगोद ख्रार सूद्रम निगोद जीवोके जानना चाहिय। इन वादर एकेन्द्रिय ख्रादिक जो पर्याप्तक ख्रीर ख्रपर्याप्तक भेद है उनके भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमे ख्रन्यतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय ख्रीर उत्कृष्ट काल अपनी ख्रमी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है।

\$ १८०. विकलेन्द्रिय खौर विकलेन्द्रिय पर्याप्त जीयोंके मुजगार और अवस्थित स्थिति विभक्तिका काल एकेन्द्रियोंके समान हैं। तथा अस्तित स्थितिविभक्तिका जधन्यकाल एक समय

# विगलिंदियभंगो । अप्पद्० मणुसअपज्जत्तभंगो ।

६१८१. पंचिं०-पंचिं०पज्ज० अज०-श्रविद्विः पंचिं०तिरिक्खभंगो । अप्पद० मूलोघं । तस-तसपज्ज० अज०-श्रविद्विः-श्रप्पद० मूलोघं । तसश्रपज्ज० भ्रोघं । श्रप्पद्०-श्रविद्विः जह० एगसमश्रो, उक्क० अंतोम्रु०। एवमीरालियमिस्स० वत्तव्वं । णवरि भुज० उक्क० तिण्णि समया ।

र्श्वार उत्कृष्टकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिष्रमाण् है। विकलेन्द्रिय अपर्याप्तक जीवोंके भुजगार श्वार अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल विकलेन्द्रियोंके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका काल मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है।

विशेषार्थ—एकेन्द्रियों में भी अद्वाचय और संक्रंशचयसे भुजगारके दो समय प्राप्त होते हैं अतः इनमें भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल भी मनुष्यों के समान कहा। तथा एकेन्द्रियके निरन्तर पत्थके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक अल्पतर स्थितिका होना सम्भव हैं, क्यों कि जिम एकेन्द्रियके मंत्री पंचिन्द्रियकी स्थितिका सत्त्व है वह उसे पत्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक घटाता रहता है। अतः एकेन्द्रियों में अत्यत्तर स्थितिका उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। बादरणकेन्द्रिय, सृदम केन्द्रिय तथा पाँचो स्थावरकाय और उनके बादर और सृदम जीवोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति पत्यके असंख्यातवें भागसे अधिक है, अतः इनमें भी एकेन्द्रियों समान काल वन जाता है। किन्तु इन सबके पर्याप्त और अपर्याप्त भेदोंका काल कम है अतः इनमें अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा। इसी प्रकार विकलत्रय पर्याप्त और विकलत्रय अपर्याप्त जीवोंके उत्कृष्ट काल का विचार करके अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल जानना। शेष कथन मुगम है।

\$ १-१. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्तक जीवोके मुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल पंचेन्द्रिय तिर्वचोंके समान है। तथा अन्यतर स्थितिविभक्तिका काल मूलायके समान है। वस और वस पर्याप्तक जीवोके मुजगार, अवस्थिन और अल्पतर स्थितिविभक्तिका काल मूलायके समान है। वस अपर्याप्तकोंके मुजगार स्थितिविभक्तिका काल ओपके समान है। तथा अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका ज्ञान्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त है। इसी प्रकार औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोके कहना चाहिए। इतनी विद्यापता है कि इनके मुजगार रिथतिविभक्तिका उत्कृष्टकाल तीन समय है।

विशेषार्थ-पंचेन्द्रिय श्रोर पंचेन्द्रिय पर्याप्तकों में सब पंचेन्द्रिय जीव श्रा जाते हैं। उनमें पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च भी सम्मिलित हैं अतः पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंक जिस प्रकार मुजगार स्थितिका उन्हृष्ट काल तीन समय घटित करके वतला श्राये हैं उसी प्रकार इनके भी जानना चाहिए। तथा श्रोघसे श्रह्मतर स्थितिका जो उत्कृष्ट काल बतलाया है वह पंचेन्द्रिय श्रोर पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंके ही प्राप्त होता है अन्यके नहीं, श्रतः इनके श्रम्पतर स्थितिका काल श्रोघके समान कहा। श्रोघसे मुजगार श्रादि तीनों विभक्तियोंका जो काल कहा है वह त्रस श्रोर त्रस पर्याप्त जीयोंके श्रविकल बन जाता है, श्रतः इनकी प्रह्मपणाको श्रोघके समान कहा। त्रस श्रमपर्याप्तकोंका उत्कृष्टकाल श्रम्तमुँ हुने है, श्रतः इनके श्रम्पतर श्रोर श्रवस्थित स्थितिवभक्तिका उत्कृष्टकाल श्रम्तमुँ हुने है, श्रतः इनके श्रम्पतर श्रोर श्रवस्थित स्थितिवभक्तिका उत्कृष्टकाल श्रम्तमुँ हुने है, श्रतः इनके श्रम्पतर श्रोर श्रवस्थित स्थितिवभक्तिका उत्कृष्टकाल श्रम्तमुँ कहा। जो एकेन्द्रिय या विकलत्रय पंचेन्द्रिय त्रसोंमें उत्पन्न होता है उसके मुजगार स्थितिके चार समय प्राप्त होते हैं। किन्तु इनमें मुजगारका पहला समय विष्ठह गतिमें हो जाता है श्रोर

§ १८२. पंचमण०-पंचवचि०—वेउव्विय०--वेउव्वियमिस्स० मणुसअपज्ञत्त-भंगो । कायज्ञोगि० भुज०-अविद्वि० ओघं । अप्पद० ज० एगसमओ, उक्क० पिट्ठो० असंखे०भागो । ओराज्ञि० भुज०-अविद्वि० मणुसअपज्ञत्तभंगो । अप्पद० जह० एग-समओ, उक्क० वावीसवस्ससहस्साणि देस्णाणि । आहार० अप्पद० जह० एगसम्ब्रो, उक्क० अंतोस्च० । आहारिमस्स० अप्पद० जहण्णुक्क० अंतोस्च० । कम्मइय० भुज० ज० एगसमओ, उक्क० वे समया । एवमप्पद० । अविद्वि० जह० एगसम्ब्रो, उक्क० तिण्णि समया ।

वित्रहतिमें श्रीदारिकमिश्रकाययोग पाया नहीं जाता, श्रतः इस योगमें भुजगार स्थितिका उत्हृष्ट काल तीन समय कहा जो भव प्रहृण अद्धात्तय श्रीर संक्लेशत्त्रयके कारण प्राप्त होता है।

§ १८२. पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकिमिश्र-काययोगी जीवोंके मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिये। काययोगी जीवोंके सुजगार और अवस्थित स्थितिविभिन्तिका काल आंघके समान है। तथा अल्पनर स्थितिविभिन्तिका जपन्य काल एक समय है और उन्हृष्ट काल पल्यापमके असंख्यात्र्वें भाग प्रमाण है। औदारिक काययोगी जीवोंके भुजगार और अवस्थित स्थितिविभिन्तिका काल मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभन्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्हृष्टकाल कुछ कम बाईस हजार वर्ष है। आहारक काययोगी जीवोंके अल्पतर स्थितिविभन्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्हृष्टकाल अन्तर्मु हुर्त है। आहारकिमिश्रकाययोगी जीवोंके अल्पतर स्थितिविभिन्तिका जघन्यऔर उत्हृष्ट काल अन्तर्मु हुर्त है। कार्मणकाययोगी जीवोंके भुजगार स्थितिविभिन्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्हृष्ट काल दो समय है। इसी प्रकार अल्पतर स्थितिविभिन्तिका काल जानना चाहिये। तथा अवस्थित स्थितिविभिन्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्हृष्ट काल तीन समय है।

विशेषार्थ—गंचों मनोयोग, पांचों वचनयांग, वैक्रियिककाययोग और वैक्रियिकमिश्रकाय-योगमें भुजगार स्थितिविभक्तिका अद्धान्तय और संक्लेशन्तयसे दो समय ही उत्हिप्टकाल प्राप्त होता है तथा अन्यतर स्थितिका उत्हिप्टकाल अन्तर्भु हुर्त ही प्राप्त होता है, क्योंकि इन योगोंका इससे अधिक उत्हिप्टकाल नहीं पाया जाता, अतः इनमें भुजगार आदि स्थितियोंके का तको लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके समान कहा। काययोगमें सब काययोगोंका अन्तर्भाव हो जाता है और भुजगार स्थितिका उत्हिप्टकाल चार समय काययोगमें ही बनता है अतः इसमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके कालको आघके समान कहा। तथा सामान्य काययोगका उत्हिप्टकाल तो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। पर वह एकेन्द्रियके ही पाया जाता है और एकेन्द्रियके अस्पतर स्थितिका उत्हिप्टकाल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा, अतः काययोगमें भी अस्पतर स्थितिका उत्हिप्टकाल उक्त प्रमाण जानना। ओदारिककाययोगका उत्हिप्टकाल अन्तर्भु हूर्त कम वाईस हजार वर्ष है, अतः इसमें अल्पतर स्थितिका उत्हिप्टकाल उक्त प्रमाण कहा। याहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगमें अल्पतर स्थितिका जवन्य और उत्हिप्टकाल जानना चाहिये। कामण्काययोगका जवन्यकाल एक समय और उत्हिप्टकाल तीन समय है, अतः इसमें अवस्थिति स्थितिविभक्तिका तो जवन्यकाल एक समय और उत्हिप्टकाल तीन समय बन जाता

्र १८३. इत्थि० भुज०-अविह० पंचिदियतिरिक्सभंगो । अप्पद० जह० एगसमञ्जो, उक्क० पणवण्णपिल्दोवमाणि देस्णाणि । एवं पुरिस० । णविर अप्पद० जह० एगसमञ्जो, उक्क० तेविद्धसागरोवमसदं तीहि पिल्दोवमेहि अंतोसुहुत्तब्भिहिएहि सादिरेयं । णवुंस० भुज०-अविह० ओघं । अप्पद० ज० एगसमञ्जो, उक्क० तेत्तीस सागरोवमाणि देस्णाणि । अवगद० अप्पद० जह० एगसमञ्जो, उक्क० अंतोसुहुत्तं । एवं अकसाय०-सुहुमसांपरा०-जहाक्खाद० वत्तव्वं ।

# ५१८४. चत्तारिकसाय० श्रोरालियमिस्सभंगो । णवरि भुज० श्रोघं ।

हे, क्योंकि एक स्थितिका तीन समय तक बन्ध होना असंभव नहीं है, क्योंकि एक स्थितिका उन्कृष्ट बन्धकाल अन्तर्मु हर्तप्रसाण पाया जाता है। परन्तु इसमें भुजगार और श्रह्पतर स्थितिका | जबन्धकाल एक समय खीर उन्कृष्टकाल दो समय ही प्राप्त होता है, क्योंकि इसमें अद्धात्त्रय श्रोर | संक्लेशत्त्रय ये दो अवस्थाएं ही सम्भव हैं। अतएव इनमें भुजगार और अल्पतरका अधिकसे उन्धिक दो समय काल ही प्राप्त होगा। शेष कथन सुगम हैं।

§ १८३० स्त्रीवेदमे गुजगार और अवस्थित स्थितिविभिन्नतका काल पंचेन्द्रिय तिर्येचोंके समान है। तथा अन्यतर स्थितिविभिन्नतका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम प्यवन पर्य है। इसी प्रकार पुरुषवेदमें जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके अरुपतर स्थितिविभिन्नका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुँ हुत और तीन पर्य अधिक एकमी बेसठ सागर है। नपुंमकोदमें गुजगार और अवस्थित स्थितिविभिन्नका काल आधिके समान है। तथा अन्यतर स्थितिविभिन्नका जवन्य काल एकसमय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अप्रतिविभिन्नको कि अन्यतर स्थितिविभिन्नका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुं हुन है। इसी प्रकार अरुपायी, सूद्मसांपरायिकमंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके कहना चाहिए ।

विशेषार्थ—देवीकी उत्कृष्ट स्थिति पचवन पत्य है। अब यदि कोई जीव इस आयुके साथ देवी हुआ और जमने अन्तर्मु हुर्नके बाद सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लिया और जीवन भर सम्यग्दृष्टि रहा तो उसके अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम पचवन पत्यप्रसाण प्राप्त होता है। ओघसे अल्पतर स्थितिका जा उत्कृष्टकाल कहा वह पुरुषवेदकी अपेचा ही घटित होता है, अतः पुरुपवेदमें अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल कहा वह पुरुषवेदकी अपेचा ही घटित होता है, अतः पुरुपवेदमें अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हुर्न और तीन पत्य अपिक एकसो बेसटसागर कहा। नपुंत्रकवेदमें अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल सातर्व नरककी अपेचा प्राप्त होगा, अतः इसमें अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल सातर्व नरककी अपेचा प्राप्त होगा, अतः इसमें अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल सातर्व नरककी अपगतवेदमे अल्पतर स्थिति ही पाई जाती है और मोहनीय सत्कमवाले अपगतवेदका जवन्यकाल एक समय तथा उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हुर्न है, अतः इसमे अल्पतर स्थितिका जवन्यकाल एक सभय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हुर्न कहा। अकवायी, सूद्मसाम्पराधिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंकी स्थिति अपगतवेदी जीवोंके समान है अतः इनके भी अल्पतर स्थितिका जवन्य और उत्कृष्टकाल उक्त प्रमाण जानना। है। कथन सुगम है।

\$ १८८, क्रोधादि चार कपायवाले जीवोके औदारिकमिश्रकाययागी जीवोंके समान जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनके भुजगार स्थितिविभक्तिका काल स्रोषके समान् है ।

विशेषार्थ-भुजगार स्थितिके चार समय अपर्याप्त अवस्थामे प्राप्त होते हैं स्रोर उस

\$ १८५. मदि०मुद्ब्रणणाण० भुज्ञ०-अविहि० स्रोघं । अप्पद० जह० एगसमआ, उक्क० एकत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । विभंग० भुज्ञ०-अप्पद०-स्रविह० सत्तमपुढ-विभंगो । णविश्व स्रपट० एकत्तीसमागरो० अंतोमुहुनूणाणि । आभिणि०-मुद्र०-ओहि० अप्पद० जह० अंतोमु०, उक्क० स्राविद्यागरो० सादिरेयाणि । एवमोहिदंस०-सम्माधि०-वेद्यसम्भादिहि ति । णविर वेद्यसम्भादिहीमु स्राविहसागरोवमाणि संपु-ण्णाणि । मणपज्ज० स्रप्पद० ज० अंतोमुहुनं, उक्क० पुन्त्रकोडी देसणा । एवं संजद-परिहाग०-मंजदासंजदा ति ।

समय कोई भी एक कपाय पाई जा सकती है अतः चारों कपायोंमें भुजगार स्थितिका काल श्रोधके समान कहा । एक कपायका उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हुने है अतः शेष कालकी श्रोदारिक मिश्रकाय-योगके साथ समानता घटित हो जाती हैं । शेष कथन सुगम हैं ।

§ १८५. मत्यज्ञानी खोर श्रुताज्ञानी जीवोके भुजगार खोर ख्रवस्थित स्थितिविभिन्तका काल खोवके समान है। तथा ख्रन्यतर स्थितिविभिन्तिका जवन्य काल एक समय और उन्कृष्ट काल साथिक इकर्नास सागर है। विभंगज्ञानी जीवोंके भुजगार, ख्रन्यतर खोर अवस्थित स्थितिविभिन्तका काल सानवीं पृथिवीके नारिक्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके अस्पतर सिथितिविभिक्तिका उत्त्रष्ट काल ख्रन्तमुँ हुन कम इक्तीम सागर है। ख्राभिनिवोधिकञ्चानी, श्रुतज्ञानी खोर ख्रविध्वानी जीवोंक ख्रन्पतर स्थितिविभिक्तिका जवन्य काल ख्रन्तमुँ हुन खोर उत्कृष्ट काल साधिक छ्रयामठ सागर है। इसी प्रकार ख्रविध्विज्ञीनी, सम्यग्हिष्ट और वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंके ज्ञानना चार्टिय । इननी विशेषता है कि वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंमे पूर्व छ्यामठ सागर होते हैं। मनःपर्ययञ्चानी जीवोंके अल्पतर स्थितिविभिक्तिका जवन्य काल ख्रान्यमुँ हुन खोर उत्कृष्ट काल कुळ कम पृत्रकाटि प्रमाग है। इसी प्रकार संवत, परिहारिच छुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंक जानना चार्टिय।

विशेषार्थ-प्रारम्भे दो अलागोल रहते हुए अधिकने अधिक अल्पतर म्यितिविभक्ति नीवें मेनेयकं पार्ड जाती है, अतः मत्यक्तनी और श्रुताल्लानी जीवों में अल्पतर म्यितिविभ- कितका उत्कृष्टकाल माधिक इक्तीम सागर या। यहां साधिकने नीवें मेनेयकं कि लेल भवके अन्तका अन्तमु हुनकाल और अगले एवं प्रारम्भका अन्तमु हुनकाल लेगा चाहिये, क्योंकि इन कालामे भा इन जावक अल्पार स्थितिका पाया जाना सम्भव है। किन्तु विभंगजानमें अल्पतर स्थितिविभाक्तका कान अल्पासु हुने कम इक्तीम सागर ही प्राप्त होता है जो कि उपरिम नोप्र मेंग्यकमें यायश्रीस अवस्थाक अन्तम् हुन कालको कम कर देनेसे प्राप्त होता है। अभिनिवोधिकजान, श्रुतज्ञान, अपधिल्लान, अपधित्रकान और सामान्य सम्यन्दृष्टिका उत्कृष्टकाल माधिक छुना क सागर और बेदक सन्यन्दका उत्कृष्टकाल प्राःह्यास्य सागर है और इनके एक अन्यतर स्थितिका उत्कृष्टकाल उक्त प्रमाण कहा। तथा इन न्याः जवन्य हाल अन्तमु हुन है, अतः इनमें अल्पतर स्थितिका जवन्यकाल अन्तमु हुन कहा। मनः स्थितका जवन्यकाल अन्तमु हुन कहा। मनः स्थितका जवन्यकाल अन्तमु हुन और उत्कृष्ट काल कुछ कम पूचकाट है अतः इसमें अल्पतर । स्थितिका जवन्य काल अल्पत एस्थितिका जवन्य काल उक्त प्रमाण कहा। संयत, पारदारिकालिसंयत और संयत्तिका जवन्य काल उक्त प्रमाण कहा। संयत, पारदारिकालिसंयत और संयत्तासंयत जावोक भा अल्पतर । स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण जान लेना चाहिये।

१८६. सामाइय-च्छेदो० अप्पद० नह० एगस त्रओ, उक्क० पुन्नकोडी देसूणा। असंनद० णवुंसभंगो। णविर अप्पद० उनक० तेनी तं सागरो० सादिरेयाणि। चक्खु० तमपज्जनभंगो। किण्ह०-णीठ० काउ० भ्रुन०-अप्रिट० ओवं। अप्पद० जह० एगसमञ्चो, उक्क० सगिहदी देसूणा। तेउ०-पम्म० भ्रुन०-अविह० सोहम्हभंगो। अप्पद० ज० एगमभओ, उक्क० सगिहदी। सुक्क० अप्प० ज० अंतोम्र०, उक्क० तेनीसं साग० सादिरेयाणि। एवं खड्य० वन्तन्वं।

१८७. अभव०-भिच्छादि० बिद्अण्णाणिभंगो । उत्रसम०-सम्माधि० आहार-निस्समंगो । साराण० अप्पद्० ज० एगसमन्त्रो, उक्क० छावलियात्रो । सिण्ण० भुज० ज० एगसम्बो उक्क० वसगया । अप्पद्०-अविदि० श्रोघं । असिण्ण० भुज० पंचिदियतिरिक्सभंगो । अप्पद्०-अविदि० एईदियभंगो । श्राहारि० भुज०-

\$ १६६ सामायिकसंयत और छेदोपस्थानासंयत जीवों के अल्पतर स्थितिविभक्तिका जवन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। असंयत जीवों के नपुंसक-वेदी जीवों के समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके अल्पतर स्थितिविभक्तिका उन्कृष्टकाल साधिक तेतीस सागर है। चजुद्दांनी जीवों के अस पर्याप्तकों के समान जानना चाहिए। इत्स्मृ, नील और कापीत लेक्सावाले जावों के भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल आंचक समान है। नथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम अपनी अल्की उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अपना अवस्थित स्थितिवभक्तिका काल सोधम कल्पक समान है। तथा अल्पतर स्थितिवभक्तिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियभक्तिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियभक्तिका जयन्यकाल अन्तर्मु हुन और उत्कृष्टकाल साधिक तेतीससागर है। इसी प्रकार चार्यिकसम्यग्रहिट जीवोंक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो अनुत्तर विमानवासी एक समय कम तेतीस सागरकी आयुवाला देव च्युत होतर एक कोटि पूर्वकी आयुवाले मनुष्यों उत्पन्न हुन्या और आयुके अन्तमें संयमको श्राप्त हो सिद्ध हो गया उसके नो अन्तमुं हुन कम पूर्व कोटिकालसे अधिक तेतीम सागर असंवतका उत्कृष्टकाल होता है। अतः असंवतक अहपतर स्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक तेतीम सागर कहा। शुक्ल लेखामें दो अन्तमुं हुने अधिक ३३ सागर जानना चाहिये किन्तु शुक्रलेश्याके कालमें सर्वार्थिसिद्धसे पूर्व और पश्चात् भवके अन्तका और प्रथम अन्तमुं हूर्तकाल सम्मितित करना चाहिये। संज्ञीके सुजगारका उत्कृष्टकाल दो समय अद्धान्त्य और संवत्रेशन्त्रस्थिता होता है। शेष वथन सुगम है।

§ १८७. त्रभव्य त्रोर मिथ्यादृष्टि जीवोंके मत्यज्ञानी जीवोंके समान जानना चाहिये। उग्रामसम्यग्दृष्टि त्रोर सम्यन्त्रिश्यादृष्टि जावाके त्रादारकमित्रकाययोगी जीवोंके समान जानना चाहिए। सामादनसम्यग्दृष्टि जीवाक अस्वतर् स्थितिविभक्तिका जयन्यकाल एक समय त्रोर उत्कृष्टकाल छह त्रावलाप्रमाण है। संबी जीवाक भुजगार स्थितिविभक्तिका जयन्यकाल एक समय त्रोर त्रावस्थित स्थितिविभक्तिका जयन्यकाल एक समय त्रीर उत्रादस्थित स्थितिविभक्तिका काल त्रावस्थित हो। तथा त्रावस्थित क्रीर त्रावस्थित स्थितिविभक्तिका काल त्रावस्थित हो। त्रावसेके सुजगार स्थितिविभक्तिका काल पंचेत्रिय तिर्यक्षोंके समान

अविद्यार अविद्यासिस्सभंगो । ऋष्पद्रु० ज० एयसभओ, उद्धक्र० छोघभंगो । ऋणाहारु० कम्मइयभंगो ।

## एवं कालाणुगकी सवत्ती।

- § १८८. अंतराणुगमेण दुविहो णिह से क्रोघेण आदेसेण य। तन्थ त्रीघेण मोह० सुज०-अविह० अंतरं केविचरं कालादो होदि १ जह० एगसमओ, उक्क० तेविहसागरोवभसदं तीहि पिलद्विविदि अंत मुहुक्कव्मिहिएहि सादिगेषं । अप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० अतोम्रहुक्तं । एवं पंचिविष-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पुरिस०-चक्ख०-अचक्खु०-भविस०-सिण्ण०-आहारि ति ।
- १८६. आदेसेण णेरइएमु भुज०-अविह० ज० एगसमओ, उत्रक तेत्तीस सागरीवमाणि देस्णाणि । श्रप्पद० छोवं । पढमादि जाव सत्तिमि त्ति भुज०-अविह० अंतरं ज० एगसमुत्रो, उक्क० समिद्विदी देसुणा । अप्पद० छोवं ।

है। तथा अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभाक्तका काल एकेन्द्रियोके समान है। आहारक जीवोंके भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल आंदारिकमिश्रकायदोगी। दीवोके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल आंवके समान है। अनाहारक जीवोंके कामंणकाययांगी जीवोके समान है।

#### इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

§ १८८ अन्तरानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है-ओपनिर्देश खोर आदेशनिर्देश। उनमेसे आपेको अपेता मोहनीयकी सुजगार खोर धावस्थित क्थितिविभक्तिका अन्तरकाल किलना है १ जबन्य एक समय खोर उत्कृष्ट तीन पत्य और अन्तर्मु हुने अधिक एकमी सेमट सागर है। अस्पतर स्थितिविभक्तिका जबन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हुने है। इसी प्रकार पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पुरुषवेदी, चत्तुदर्शनी, अचल्दर्शनी, भव्य, संझी और आहारक जीवोंक जानना चाहिये।

विशेषार्थ--एक कालमे एक जीवक भुजगार आदि स्थितियोंमेसे कोई एक ही स्थिति होगी और इन तीनोंका जयन्यकाल एक समय है अनः जयन्य अन्तर भी इनना ही प्राप्त होता है। तथा अल्पनर स्थितिका उत्हृष्टकाल अन्तर्भु हुने और तीन पत्य अधिक एक मी वेसट सागर है और उस समय अन्य दो स्थितियोंका पाया जाना सम्भव नहीं, अतः भुजगार और अवस्थित स्थितिका अन्तरकाल अल्पनरस्थितिक उत्हृष्टकाल प्रमाण कहा। नथा अवस्थितका उत्हृष्टकाल अन्तर्भु हुने कहा। पंचेन्द्रिय आदि जुळ मार्ग- एएओंम यह अन्तरकाल बन जाना है अनः उनके कथनका औषके समान कहा।

§ १८६. त्रादेशकी अपेन्ना नारिकयोमं भुजगार त्रोर अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य त्रान्तरकाल एक समय त्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल बुद्ध कम तेतीस सागर है। तथा अस्पतर स्थिति। वभिन्तका अन्तरकाल ब्रोधके समान है। पहली पृथियीसे लेकर सानवीं पृथियी तक प्रत्येक नरकमें भुजगार और अवस्थित स्थितिधिभिविनका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुद्ध कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिष्माण है। तथा अस्पतर स्थितिविभिन्तका अन्तरकाल औष्टके समान है।

- ६ १६०. तिरिक्ख० भूज०-अबिहि० जह० एगसमुत्रो, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो । अपप० छोषं । पंचि०तिरिक्ख-पंचि०तिरि०पज्ज०-पंचि०तिरि० जोणिणी० भुज०-अबिह० ज० एगसमुत्रो, उक्क० पुन्वकोडिपुत्रचं । अप्पद० श्रोषं । पंचि०तिरि०अपज्ज० भुज०-अप्पय-अबिह० जह० एगसमुत्रो, उक्क० अंतोष्ठ० । एवं मणुस्त्रअपज्ज० । मणुस्तिय० भुज०-अबिह० ज० एगसमुत्रो, उक्क० पुन्वकोडी देस्णा । अप्पद० श्रोषं ।
- १६१. देवेसु भुज०-अविद्या ज० एगसमओ, उक्क० अद्वारस सागरी० सादिग्याणि । अप्प० ओघं । भवणादि जाव सहस्मार ति भुज०-अविद्ये ज० एगमनओ, उक्क० सर्गाहर्दा देसूणा । अप्प० खोघं० । आणदादि जाव सन्ब-होत्ति अप्प० णित्थ अंतरं ।
- § १६०. तिर्यंचोमं भुजगार और अवस्थित स्थितिविभिक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल प्रत्योपमंक असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अल्पतर स्थितिविभिक्तिका अन्तरकाल आंघके समान है। पचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंच पोनिमती जीवोक भुजगार और अवस्थित स्थितिविभिक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उन्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकाटिप्रथक्त्व है। तथा अल्पतर स्थितिविभिक्तिका अन्तरकाल अवस्थित अवस्थित समान है। पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोक भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभिक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भ हुर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक जीवोक जानना चाहियं। सामान्य मनुष्य,पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यिनियोमें मुजगार और अवस्थित स्थितिविभिक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पूर्वकोटिशमाण है। तथा अल्पतर स्थितिविमिक्तिका अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पूर्वकोटिशमाण है। तथा अल्पतर स्थितिविमिक्तिका अन्तरकाल अग्वरं समान है।
- ्र१६५. देवांमं भुजगार श्रीर श्रवस्थित स्थितिविभिक्तका जघन्य अन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रव्यत्रकाल साधिक श्रठारह सागर है। तथा अल्पतर स्थितिविभिक्तका अन्तरकाल श्रावक समान है। भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवांके भुजगार श्रीर अवस्थित स्थितिविभिक्तका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम श्रपनी अपनी उन्कृष्ट स्थितिविभागाए है। तथा श्रव्यतर स्थितिविभिक्तका श्रन्तरकाल श्रोषक समान है। श्रावत कल्पसे लेकर सर्वार्थिसिद्ध तकके देवोंके श्रस्पतर स्थितिविभिक्तका श्रन्तरकाल नहीं है।
- विशेषार्थ--सामान्य निर्यक्तके अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक तीन पर्य बतला आये हैं। पर जिस निर्यक्तके यह काल प्राप्त होना है उमके तिर्यक्त पर्यापके रहते हुए पुनः भुजगार और अवस्थित स्थित नहीं प्राप्त होनी, क्योंकि वह जीव निर्यक्तमम्बन्धी अल्पतर स्थितिके कालको समाप्त करके देवपर्यायमे चला जाना है, अतः एकेन्द्रियोंमे जो अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल बतलाया है वह मामान्य तिर्यक्तके भुजगार और अवस्थितस्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये। निर्यक्त त्रिकं अल्पतर स्थितिका जानना चाहिये। निर्यक्त त्रिकं अल्पतर स्थितिका जल्यस्थ अन्तरकाल माननेपर वही आपत्ति खड़ी होनी ह जो सामान्य तिर्यक्तोके उक्त स्थितियोंके अन्तरकालका स्पष्टीकरण करते समय बतला

१६२. मव्वएइंदिय-सव्विवगलिंदिय-पंचिदियअपज्ञ० पंचि०तिरिक्खअप-ज्जनभंगो । पंचकाय० नसञ्चपञ्ज ० पंचक्षण ० पंचक्षच ० न्यांगिल ० ने उठिवय ० पंचि दियतिरिक्खञ्रपज्जत्तर्गेतो । एवमोरालियभिस्स-वेर्जाव्ययभिस्स० वत्तव्वं । काय-जोगि० मुज०-त्र्यवद्दि॰ ज० एयसमओ, उक्क० पिळडी० त्रमंखे०भागी । अप्पद्० ज० एगसम्ब्रो, उक्का० अंतोम्रहृत्तं । ब्राहार-ब्राहार्रामस्य ब्राप्पदा० णात्थि अंतरं । एवमवगद्०-ऋकसा०-ऋाभिणि०-सुद्०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद्०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहूम०-जहाक्खाद्०-संजदासंजद्०--श्रोहिदंस०-सुक्क०सम्माद्वि०-खइय०-वेद्य०-उवसम०-सम्पामि०-सासरार्शदिहि त्ति । कम्पइय० भूज०-ऋष्पद० रास्थि त्राये हैं त्रातः इतके भुजगार त्रार त्रावस्थित स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्व हाटि पृथवत्वप्रमाण कहा है। कोई मंत्री पंचेन्द्रिय निर्यन्त उन्कृष्ट स्थिति बाँधकर मरा और असंज्ञी पंचेन्द्रिय निर्यन्त्रीमे उत्पन्न हुआ और सेंतालीस पूर्वकांटि तक पंचेन्द्रिय असंज्ञियोंमें ग्रमलकर फिर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च हो गया। इस प्रकार सामान्य निर्यञ्चोमे भुजगार और द्यवस्थितक। उत्दृष्ट अन्तर र्सेतालीस पूर्वकोटि होता है। क्योंकि जिस ऋमंजी जीवके संझी पंचेन्द्रियकी स्थितिका सत्त्व होता है उसको घटानेके लिए सेंतालीस पूर्वकोटिसे भी अधिक काल चाहिये परन्तु असंज्ञी पंचेन्द्रिय नियंक्रमे भ्रमण करनेका उत्कृष्टकाल सेतालीस पूर्वकोटि है अतः उक्त काल कहा। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्रकोमें पन्द्रह पूर्वकोटि चौर योनिमतिमे सात पूर्वकोटि कहना चाहिए। मनुष्यमे असंज्ञी नहीं होते अतः उनमे सम्यक्त्वकी अपेता कुन्न कम पूर्वकोटि काल कहा है मनुष्य त्रिकके यद्यपि अल्पतरका उत्कृष्टकाल माधिक तीन पत्य दवलाया है पर वह इनके भुजगार और अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर नहीं हो सकता। आपींच वहीं आती है जिसका पहले उन्लेख कर आये हैं। अनः इनके भुजगार और खर्वास्थाका उन्ह्रष्ट अन्तरकाल कुट्ट कम पूर्वकोटि प्रमाण जानना चाढिये । कुब्र कममे यहाँ प्रारम्बर आठ वर्षका और अन्तके अन्तर्मु हुने कालका बहुए किया है। देवोमे यराधि अन्यतर स्थितिका उन्ध्रण्डकाल तेतीस सागर बतलाया है। पर भजगार और अवस्थित स्थितियां सहस्रार स्वर्गतक ही होती हैं और सहस्रार कल्पकी उत्कृष्ट स्थिति साधिक अठारह सागर है, यतः इनके भजगार और अवस्थित का उत्कृष्ट त्रान्तर माधिक अठारह मागर कहा । रोप कथन सुगम है ।

§ १८२. समा एकेन्द्रिय, समी विक्रलेन्द्रिय यार पंचान्द्रिय यार्याप्तक जावोक पंचेन्द्रिय तिर्यक्त अपयाप्तकांक समान जानना चाहिये। पाचा स्थायरकांव, जमञ्जप्यप्तिक, पाँचा मनायोगी, पाचा वचनयोगी, श्रींदारिककाययोगी और वैकियिककाययोगी जावोक पंचेन्द्रिय तिर्यक्त अपयाप्तकोंक समान जानना चाहिये। इसी प्रकार औद्धारिकियिक काययोगी और वैकियिकियिक मात्रयायोगी जीवोक कहना चाहिये। काययोगी जीवोके मुजगार आर अवस्थित स्थितिविमक्तिका जयन्य अत्तरकाल एक समय और उन्कृष्ट अन्तरकाल अन्तरकाल नहीं है। व्या अल्पतर स्थितिविमक्तिका जयन्य अन्तरकाल एक समय और उन्कृष्ट अन्तरकाल अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार अपनाववेदी, अक्वायोगी जीवोक अन्तरका स्थानिविमिक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार अपनाववेदी, अक्वायाँगी आसित्वेदियल्जानी, अनुज्ञानी, अवधिकाना, मतःवर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छदोपस्थापनासंयत, परिहारिविद्यद्विस्थित, सूद्मसापरायिकसंयत, यथाख्यात संयत, संयतासंयत, अवधिद्यानी, ग्रुक्तलेदयावाले, सम्यग्टिट, चायिकसम्यग्टिट, वेदकसम्यग्टिट, उपशाससम्यग्टिट, सम्यग्निक्याह है और सासादनसम्यग्टिट जीवोक जानना चाहिये। कार्मण्

# अंतरं। अविद्वि जहण्णुक्क० एगसमओ । एवमणाहारि० ।

ः १६३, वेदाणुवादेण इत्थि॰ भुज०-त्रविष्टि॰ जह० एगसमत्रो, उक्क० पण-वण्ण पलिदोवभाणि देससास्मि । अष्प० त्रोघं । णवुंस० भुज०-त्रविष्टि॰ जह० एग-समग्रो, उक्क० तेत्तीस सागरोवमास्मि देससास्मि । त्रप्रद० त्रोघं । एवमसंजद० ।

१९८ चत्तिकिमाय० मराजोगिभंगो । मदिश्रण्णाण-सुद्श्ररणारा० भुज०-श्रविद् ० ज० एगसम्ब्रो, उक्क० एक्कत्तीस सागरोवमारा मादिरेयारा । श्रव्यद् श्रोघं । बिहंग० भुज०-त्रबहि० ज० एगसमस्रो, उक्क० अंतोस्र० । श्रव्यद् श्रोघं । पंचले० भुज०-त्रविद० ज० एगसमस्रो, उक्क० सर्गाहदी देस्णा । श्रव्यद० श्रोघं । स्रभव०-मिच्छादि० मदिश्रण्णाणिभंगो । स्रमण्णि ० कायजोगिभंगो ।

## एवमंतराणुगयी ममत्तो ।

\$ १६५ गागा नीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविही शिह मी-ओघेण आदेसेण य । तत्य त्रीघेशा भुज० अष्प० अविह० शियमा अत्थि । एवं तिरिक्ख-सम्बर्ण्हंदिय-पुढवि०-काययांगा जीवोकं भुजगार खाँर अन्पतर स्थितिविभिक्तिका अन्तरकाल नहीं है । तथा अवस्थित स्थितिविभिक्तिका जयन्य और उन्हण्ट अन्तरकाल एक समय है । इसी प्रकार अनाहारक जीवोके जानता चाहिये ।

§ १८३. वेद मार्गणाके अनुवादमे स्वीवेदी जीवोके मुजगार और अवस्थित स्थिति विभक्ति। जयन्य अन्तरकाल एक समय खोर उन्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पचवन पह्य है। तथा अस्पतर स्थितिविभक्तिमा अन्तरकाल आवके समान है। नपुंसकवेदी जीवोके मुजगार जोर अवस्थित स्थितिविभक्तिमा ज्ञान्य अन्तरकाल एक समय खोर उन्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। तथा अन्तर स्थितिविभक्तिमा अन्तरकाल खोरके समान है। इसी प्रधार खासेयन जीवोके जानना चाहिये।

९ १६८. चारों कपायवाले जीवोंके सनोबंगी जीवोंके समान जानना चाहिये। मत्यज्ञानी विं अनाज्ञनी जीवोंके भुजगार खोर अवस्थित स्थितिबिभक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय छोर उक्तप्रकाल साधिक इकतीन सागर है। तथा अन्यर स्थितिबिभक्तिका अन्तरकाल ओविक समान है। विभंगज्ञानी जीवोंके भुजगार जोर अवस्थित स्थितिबिभक्तिका जपन्य अन्तरकाल एक समय और उन्हण्ट अन्तरकाल अन्तर्महूर्त है। तथा अहपतर स्थितिबिभक्तिका अन्तरकाल खोवके समान है। उण्ण आदि पाँच लेश्यावाले जीवोंके भुजगार और अवस्थित स्थितिबिभक्तिका अन्तरकाल खोवके समान है। उण्ण आदि पाँच लेश्यावाले जीवोंके भुजगार और अवस्थित स्थितिबिभक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उन्हण्य अन्तरकाल छुळ कम अपनी अपनी उन्हण्य स्थितिबिभक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उन्हण्य अन्तरकाल खोवके समान है। अभ्यय और भिश्याद्यिक जीवोंके समान जीवोंके समान जानना चाहिए। तथा असंज्ञी जीवोंके काययोगी जीवोंके समान जानना चाहिए। तथा असंज्ञी

#### इस प्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

६१८५ नाना जीवोंकी अपेचा भंगविचयातुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—श्रोपनिर्देश श्रोर आदेशनिर्देश । उनमेसे आपकी अपेचा सुजगार, अल्पतर श्रोर श्रवस्थित स्थितिविभक्तिवाले वादरपुढिवि०-वादरपुढिवि० अपञ्च ०-सहुमपुढिवि०-सहुमपुढिविपञ्चत्तापज्जत्त-आउ०-वादर-श्राड०-वादरश्राडअपज्ज०- सहुमश्राड० — सहुमग्राडपञ्चतापज्जत्त-तेड० — वादरतेड० [-वादरतेड०] अपञ्च०-सहुमतेउ०-सहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-वादरवाउ०-वादरवाउ-अपज्ज०-सहुमवाउ०-सहुमवाउ०पज्जतापज्जत्त-वादरवणप्पदिपत्तेय०तम्सेव अप्पज्ज०-सव्ववणप्पदि०-सव्विणिगीद०-कायजीगि-श्रीरालिय० - श्रोगालियमिस्म०-कम्मइय०-णवुंम०-चत्तारिक०-मिद-सुद्अएणाण — असंजद०--श्रवक्ख०- तिएणलेस्सिय-भव०-श्रभव० - मिच्छादि०-असण्ण०-श्राहारि-श्रणाहारि ति ।

\$ १६६. आदेसेण णेरइएस अप्यदं अविहि० णियमा अत्थि । सुज्ञ० भिजयव्वं सिया एदं च भुजगारिवहित्त्रिओ च । सिया एदं च भुजगारिवहित्त्या च २ । धुवे पिक्खनं तिष्णि भंगा । एवं सत्तसु पुढवीसु सन्वर्षीचं०तिरि०-मणुसितय०-देव०-भव-णादि-जाव सहस्सार०-सन्विविगिलिदिय—सन्वर्षचिदिय-वादरपुढवीपज्ञ०-वादर्त्राउ-पज्ज०-बाद्र्वाउपज्ज०-वाद्र्वणप्पदिपत्ते यपज्ज०-सन्वतस०-पंचमण०-पंचविच०-वेउन्विय०-दित्थ०-पुरिस०-विदंग०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सिण्णि ति ।

जीव नियममे हैं। इसी प्रकार सामान्य निर्यक्क, सभी एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सृदम पृथिवीकायिक, सृदम पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सृदम पृथिवीकायिक, सृदम पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सृदम जलकायिक, वादरजलकायिक अपर्याप्त, सृदम जलकायिक, सृदम जलकायिक अपर्याप्त, सृदम अप्तिकायिक, बादर अप्तिकायिक अपर्याप्त, सृदम अप्तिकायिक, सृत्म अप्तिकायिक अपर्याप्त, सृदम अप्तिकायिक अपर्याप्त, सृदम अप्तिकायिक अपर्याप्त, सृदम अप्तिकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक पर्याप्त, सृदम अप्तिकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक पर्याप्त, सृदम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सृदम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, स्वत्म वायुकायिक प्रत्येक शरीर, वादर वास्त्रकायिक प्रत्येक शरीर, वादर वास्त्रकाययोगी, स्वोद्दारिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सभी वनस्पत्तिकायिक, सभी तिगोद, काययोगी, अोद्दारिकामिश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी, कप्त्रमक्वेदी, कांधादि चारों कपायवाले, मन्यज्ञानी, श्रुनाज्ञानी, असंयत, अच्चुवर्यानी, कृष्ण्णदि तीन लेव्यावाले भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंद्दी, आहारक और अनाहारक जीवो ह जानना चाहिय।

§ १८६. त्रादेशकी अपेद्या नारिकयों में त्रल्पतर त्रीर त्रवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। तथा भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव भजनीय हैं। (१) कदाचित् बहुत त्रलपतर त्रीर त्रवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव होते हैं ग्रार एक भुजगार स्थितिविभक्तिवाला जीव होता है। (२) कदाचित बहुत त्रलपतर त्रीर त्रवस्थित स्थितिविभक्तिवाला जीव होते हैं और बहुत मुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव होते हैं। इन दानो भंगोंका प्रुव भंगमें मिला दंनेपर तीन भंग होते हैं। इसी प्रकार सानो पृथिवियोक नारकी, सभी पंचेन्द्रियतिर्यद्ध, मामान्य, पर्याप्त त्रीर मनुष्यनी ये तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्तार करूप तकके देव, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, वादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, वादरजलकायिक पर्याप्त, वादर त्राप्तिकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पति प्रत्येक श्रीर पर्याप्त, सभी त्रस, पाँचों मनोयोगी, पाँचो वचनयागी, वैकियिककाययोगी, स्थिवेदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, चत्रुदर्शनी, पतिलेहयावाले, पद्मलेहयावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

१८७. मणुसञ्चपज्ज० सन्त्रपदा भयणिज्जा। एवं वेचन्त्रियमिस्स०। आणहादि जाव सन्त्रहेत्ति श्रप्पद०णियमा अन्थि। एवमाभिणि०-सुद०-श्रोहि०-मणपञ्ज०मंज्ञह०-सामाइयच्छेदोः—परिहार०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सुक्क०-सम्मादि०म्बद्य०-वेदएति । श्राहार०-श्राहारिमस्स० सिया अप्पदरिवहित्तिओ च सिया श्रप्पदरविहत्तिया च। एवमवगद०-श्रकसा०-सुहुम०-जहाक्खाद०-उवसम०-सम्मामि०-सासणसम्मादिहि ति ।

## एवं णाणाजीवेहि भंगविचओ समत्तो ।

६ १६ द्र. भागाभागाणुगमेण दुविहो िण्हिसो श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ ओघेण भ्रज्ञ॰ सन्वजीव० के० भागो ? श्रमंखे०भागो । अवद्वि० सन्वजी॰ के॰ ? संखे०भागो । श्रप्पद० सन्वजीव० के० भागो ? संखेज्ञा भागा । एवं सत्तस्र पुदवीसु सन्वितिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ञ०-देव-भवणादि जाव सहस्सार-सन्वएईदिय-सन्विविगिलें-

§ १८७. मनुष्य अवर्याष्तकोमं सभी पर भजनीय हैं। इसा प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोत्रे जानना चाहियं। आनत करुमें लेकर सर्वार्थ.सिद्ध पर्यन्त अरुपतर स्थितिविभिक्तवाले जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार मितज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत सामायिक संयत. छेद्रापस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत अवधिद्र्यानी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यव्हि, चायिकसम्यय्हिष्ट और वेदकसम्यय्हिष्ट जीवोके जानना चाहिये। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोमे कदाचित् अत्यत्तर स्थितिविभिक्तवाला एक जीव होता है, कदाचित् अरुपतर स्थितिविभिक्तवाले अनेक जीव होते हैं। इसी प्रकार अपगतवेदी, अक्पायी, सूदमसापराधिकसंयत, यथाक्यातसंयत, उपशाससम्यव्हिष्ट, सम्यिग्मिथ्याहिष्ट और सामादनसम्यव्हिष्ट जीवोके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—आंत्रसे भुजगार प्रत्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले नाना जीव मर्वदा पाये जाते हैं। पर मार्गणाओं में विचार करनेपर कुछ मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें श्रोघ प्रम्पणा वन जाती है। कुछ मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें अल्पतर और अवस्थित स्थितिवाले नाना जीव तो नियमसे हैं तथा भुजगार स्थितिवाला कदाचित एक जीव होता है और कदाचित् अनेक जीव होते हैं। इस प्रकार इन दो अध्रुव भंगों में पहला ध्रुवभंग मिला देनेपर तीन भंग हो जाते हैं। कुछ मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें तीनों पद भजनीय हैं। जैसे लब्धपर्याप्तक मनुष्य आदि। अतः यहां २६ भंग होगे। कुछ मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें एक अल्पतर स्थितिवाले ही जीव होते हैं और कुछ मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें अल्पतर स्थितिवाला कदाचित् एक जीव होता है और कदाचित् नाना जीव होते हैं। जैसे आहारक काययोगी आदि। अतः यहां दो भंग होंगे।

## इस प्रकार नानाजीबोकी ऋपेचा भंगविचयानुगम समाप्त हुआ।

§ १६८. भागाभागानुगमकी ऋषेत्रा निर्देश दो प्रकारका है—-श्रोघनिर्देश श्रोर आदेश-निर्देश। उनमेसे श्रांघकी ऋषेत्रा भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? अमंग्यातवें भाग हैं। श्रवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? संख्यातवें भाग हें। श्रत्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? संख्यात बहुभाग हैं। दिय-सन्वर्षचिदिय-पंचकाय ०-सन्वतस-पंचमण०-पंचवचि ०-काय जोगि०-श्रोरालिय०-ओरालियभिस्स-वेउन्विय०-वेउ०मिम्स०-कम्मइय-तिण्णिवेद०-चत्तारिकसाय-मदि-सुद्अण्णाण-विहंग०-श्रसंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०-भवसि०-अभवसि०-मिच्छादि०-सण्णि०-श्रसण्णि०-आहारि-श्रणाहारि ति ।

११६. मणुसपज्जत्तमणुसिणीसु भुजक सव्वजीव केव भागो १ संखेवभागो । एवमविद्वित् । अप्पद्रक संखेजा भागा । त्राणदादि जाव सव्वद्वा त्ति णित्थ भागाभागं । एवमाहारव-आहारियस्सव-त्रवगद्व-त्रवसाव-आभिणिव-सुद्व-ओहिव-मणपज्जव-संजद्व-सामाइयद्येदोव-परिहारव-सुद्वपव-जहाकस्वाद्व-संजदामंजद्व-ओहि-दस्व-सुक्क-सम्मादिव-स्वइयव-वेद्यव-उवसमव-सासणव-सम्मामिव ।

# एवं भागाभागागुगमां समत्तो ।

§ २००. परिभाणागुगमेण दुविहो णिद्देसी श्रोघेण श्राटेसेण य । तत्थ ओघेण भुज० अप्पद० अविह० केत्ति० ? अणंता । एवं तिरिक्ख-सब्वण्ड्दिय-सब्ववण्प्सिद्-सब्वणिगोद०-कायजोगि०-श्रोगिळि०-ओगिळियिधिम्य-कम्भइय-णवुंस०-चत्तारिकसाय-

इसी प्रकार सातो पृथिवियोके नारकी, सभी तिर्यच, मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवन-वासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकतन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, पांचों स्थावरकाय, सभी त्रमकाय, पांचों मनोयोगी, पांचो वचनयोगी, काययोगी, अोदारिककाय-योगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैकियिककाययोगी, वैकियिकिश्यापी, कार्मणकाययोगी, तीनों वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मन्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, असंयत, चन्दर्शनी, अचन्द्रश्लेनी, दृष्टणादि पांच लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिश्यादृष्टि, संज्ञी, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।

६ १६६. मनुष्य पर्याप्त खोर मनुष्यिनयोमें भुजनार स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग है १ संख्यातवें भाग हैं। इसी प्रकार अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले संख्यातवें भाग है। तथा अप्यार स्थितिविभक्ति ।ले संख्यात बहुभाग है। ख्रानत कत्पसे लेकर सवार्थसिद्धि पयन्त जीवोंके भागाभाग नहीं हैं; क्योंकि वहां एक अल्पतर पद ही पाया जाता है। इसी प्रकार खादारक प्रायोगी, ख्राहारक मिश्रकाययोगी, ख्रपगतवेदी, ख्रकपायी, मित-ज्ञानी, अवज्ञानी, अवध्नानी, मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिक संयत, यथा स्थातसंयत, स्थता संयत, ख्रविद्यांनी, शुक्ल लेदयावाले, सम्यग्हि, ज्ञायिक सम्यग्हि, वेदक सम्यग्हि, उपका सम्यग्हि, सासादन सम्यग्हि ख्रीरोक जानना चाहिये।

#### इस प्रकार भागाभागानुगम समाप्त हुआ।

§ २००. परिमाणानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोपनिर्देश और आदेश-निर्देश। उनमेसे स्रोपका स्रोपत्ता मुजगार, अल्पतर स्रोर अवस्थितस्थितिविमक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यक्क, सभी एकेन्द्रिय, सभी वनस्पतिकायिक, मिद्मुद्अण्णाण ०-- ऋसं जद्-अचक्खु-तिण्णिले ०-भवसि ०-अभवसि ०-मिच्छादि ०-असिण्ण ०-ऋहारि ०-अणाहारि ति ।

२०१. आदेसेण णेरइएसु भुज० अप्पद० अविह० केत्ति०१ असंखेजा । एवं मत्तसु पुढवीसु सञ्वर्षीचं०ितिरक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव--भवणादि जाव सह-म्मार्०-सञ्विवगिलिदिय-सञ्वर्षीचं०-चत्तारिकाय-वादरवणप्फदिपत्तेय०-पज्जत्तापज्जत्त-मञ्जतस०-पंचमण०-पंचविच०-वेउञ्चिय०-वेउञ्चियमिस्स-इत्थि -पुरिस०-विहंग०-चक्ष्यु०-तेउ०- पम्म०-सण्णित्ति ।

१२०२. मणुसपज्ज०-मणुसिणी० भुज० अप्पद० अविह० केति० ?

सखेजा । आणदादि जाव अवराइदत्ति अप्पदर० केति० ? असखेजा ।

एवमाभिणि०-सुद०-अहि०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०
उत्तमम०-सासण०-सम्मामिच्छादिहि ति । सन्वहे० अप्पद० केतिया ? संखेजा ।

एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-भणपज्ज०-संजद०-सामाइयछेदो०

परिहार०-सुह०-जहाक्खाद्मं नदेति । सुक्क० आभिणि०भंगो ।

म्भा निर्माद, काययोगो, ख्रोदारिककाययोगी, श्रोदारिक मिश्रकाययोगी, कामणकाययोगी नपुसक्रेबरी, काधादि चारो कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचनुदर्शनी, कृष्णादि नीन लेश्यावाले, भव्य, स्त्रभव्य, मिश्यादृष्ठि, असंज्ञी, आहारक स्त्रीर अनाहारक जीवोक जानना चाहिए।

२०१. आदेशकी अपेना नारिकयोमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालें जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। इसा प्रकार सातो पृथिवियाक नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तियन्न मानाय मनुष्य, मनुष्य अवर्याप्त, सामान्यदेव, भवनवासियोमें लेकर सहस्रार कल्पतकके देव, मभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, पृथिवाकायिक आदि चार स्थावरकाय, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, सभी त्रम, पांचों मनोयांगों, पांचों वचनयोगां, वेकियिककाययोगीं, वेकियिकिमिश्र-काययोगीं, स्थावेदां, पुरुपवेदां, विभंगज्ञानों, चनुदर्शनीं, पीतलेश्यावालें, पद्मलेश्यावालें स्थोर भेजी जावाके जानना चाहिये।

§ २०२. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोम मुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्ति वाल जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । आनत करपसे लेकर अपराजित करपतकं देवोम अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सा प्रकार मित्रज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिद्ञानी, संयत्नासंयत, अवधिद्र्शनी, सम्यग्द्रष्टि, चायिकसन्यग्द्रष्टि, वेदकसम्यग्द्रष्टि, उपश्चमसम्यग्द्रष्टि, सामादनसम्यग्द्रष्टि, आसादनसम्यग्द्रष्टि, आसादनसम्यग्द्रष्टि, आंत्रां सम्यग्निध्याद्रष्टि जोवोक जानना चाहिये । सर्वार्थसिद्धिम अल्पतर मिथितिवभक्तिवाले देव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसी प्रकार आहारककाययांगी, आहारकिमश्रकाययोगी, अपगतवंदी, अकपायी, मनः नययज्ञाना, संयत, सामायिक संयत, छेदापस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत, श्रीर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये । अक्ललेह्यावाले जोवोका कथन मित्रज्ञानी जीवोंक समान है

## एवं परिमाणाखुगमो समत्तो ।

§ २०३, खेत्ताणुगमेण दुविहो णिद्दे सो ओघेण आदेसेण य । तन्थ ओघेण भुज० अष्पद० अविद्वि केविद्वि खेत्ते ? सव्वलोए । एवं तिरिक्ख०-सव्वएइंदिय-सव्ववणप्पदि-सव्वणिगोद्-कायजोगि-ओरालि०-ओगालियिधस्स-कम्भइय०-णवुंस०-चत्तारिकसाय-मिद्मुद्अण्णाण-अचक्खु०-ितिण्णिल०-भविस०-अभविस०-िमच्छा०-असण्णि०-आदारि०-अणादारि ति ।

इ २०४. आदेसेण णेरइएमु भुज० अप्पद० अविहि० के० खे०? लोग० अमसे० -भागे । एव सत्तमु पुढवीमु सञ्चपितिर्यतिरिक्ख-सञ्चरणुस-सञ्चदेव-सञ्बविगलि-दिय-सञ्चपितिर्यन्तार्यज्ञ०-वाद्ग्ति । एव सत्तमु पुढवीमु सञ्चपितिर्यतिरिक्ख-सञ्चरणुस-सञ्चदेव-सञ्बविगलि-दिय-सञ्चपितिर्य-वाद्ग्ति । प्रज्ञ०-वाद्ग्ति । प्रज्ञ०-वाद्ग्ति । प्रज्ञ०-वाद्ग्ति । प्रज्ञ०-वाद्ग्ति । प्रज्ञ०-वाद्ग्ति । प्रज्ञ०-वाद्ग्ति । प्रज्ञिवयिष्ट । योहिए-आहार्ष । प्रज्ञिवयिष्ट । प्रज्ञिवयिष्ट । योहिए-प्रज्ञिव । प्रज्ञिवयिष्ट । प्रज्

विशेषार्थ-श्रांबमे तीनो स्थितिवभक्तिवालं अनन्त है यह तो स्पष्ट है पर मार्गणात्रों में जिस मार्गणाका ।जतना प्रनाण है उसमें सम्भन्न स्थितिविभिन्तेवालं जीवोका मामान्यस्परे उतना ही प्रमाण जानना चाहिये। अर्थात जिस मार्गणाका प्रमाण अनन्त है उसमें मुजगार, अन्यतर स्रोर अवस्थित स्थितिवालं जावाका प्रमाण भा अनन्त ही है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना। किन्तु जहा एक ही स्थिति हो वहां एक की अपेना ही कथन करना।

#### इस प्रकार परिमाणानुसम समाप्त हुआ।

\$ २०३ चेत्रानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अंग्रंचित्रेश और अदिश्वित्रेश । उनमेसे आधकी अपेचा भुजगार, अस्पनर और अविश्वित्रेश स्थितिविभाक्तिशोल जीव किनने चत्रम रहते हैं ? सब लाकम रहते हैं । इसी त्रकार सामान्य तियक्क, सभी एकेट्रिय, सभी वनस्पतिकायिक, सभी निगाद, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कामणकाययागी, नपुंमकवेदी, कीथादि चारा कपायवाले, सन्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचचुद्देशनी, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य, अमब्य, मिण्यादृष्टि, अमंबी, आहारक और अनाहारक जायाके ज्ञानना चाहिये।

§ २०% आदेशकी अपेदा नारिक्यांमे नुजगार, अहपतर और अवस्थित स्थितिविभक्ति-वाले प्रत्यक जीव कितने तंत्रमे रहते हैं ? लोकके असंख्यात्वे भाग तंत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार साता प्रथित्रियों नारकी, सभी पंचीन्द्रय तिर्बे छ, सभी मनुष्य, सभी देव, मभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचीन्द्रय, बादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुगायिक पर्याप्त, बादर वतस्पतिकायिक प्रत्येकश्रारी पर्याप्त, सभी त्रस, पांची मनोयोगी, पांची वचनयोगी, वैकियिककाययोगी, वैकियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, स्वीवेदी, पुरुपवेदी, अप्रगतित्तो, अक्ताप्ती, विभागज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्यययज्ञानी, स्वत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार- उवसम०-सासण०-सम्माभि०-सण्णि ति । णवरि बादरवाउ०पज्ज० लोग० मंखे०भागो ।

् २०५. पुढवि०-वादरपुढवि०-वादरपुढविश्रपडत०-मुहुमपुढवि०-सुहुमपुढवि०-पडनत्तापडनत्त-आड०-वादरश्चाउ०-वादरश्चाड०अपडन०-सुहुमआड०-सुहुमश्चाड०पज्जता-पडनत्त-तेड०-वादरतेउ०-वादरतेड०अपडन०-सुहुमतेड०-सुहुमतेड०पडनत्तापज्जत्त-वाड० वाद्रवाडश्चपडन०-सुहुमवाड०-सुहुमवाडपडनतापडनत्त-वाद्रवणप्फदिपत्तेयअपडन०-भुन० श्चप्पद० अविष्टि० के० खेरो ? सब्बलोगे ।

## एवं खेताणुगमो समतो।

ः २०६. पोसणाग्रुणमेण दुविहो णिद्देसो ओर्घण आदेसेण य । तत्थ त्रीघेण

विशुद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसयत, संयतासंयत, चत्तुदर्शनी, अवधिदर्शनी, पीत आदि तीन लेश्यावाले, सम्यग्दष्टि, चायिकसम्यग्दिष्टि, वेदकसम्यग्दिष्टि, उपश्रमसम्यग्दिष्टि, सामादनसम्यग्दिष्टि, सम्यग्मिध्यादिष्टि और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि वादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंका वर्तमान चेत्र लोकका संख्यातवाँ भाग है।

विशेषार्थ—श्रांघसे तीनों स्थितिवाले जीव अनन्त है अतः उनका त्रेव सब लांक वन जाता है। पर मागणाश्रांकी अपेत्ता त्रेवका विचार करनेपर दां विकल्प प्राप्त होते हैं। जिन मागणाश्रोमे तीनो स्थितिवालोंका प्रमाण अनन्त है उनका तो सब लांक त्रेव है ही। साथ हा प्रियंक्षिकायिक आदि असंख्यात संख्यावाली कुछ ऐसी मार्गणाएं है जिनमें भी तीनो स्थितिवालोंका त्रेव सब लांक है। तथा इन के अतिरिक्त शेव जितनी मार्गणाएं हैं उनमें अपनी अपनी सम्भव भुजगार आदि स्थितियांकी अपेत्ता लांकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही त्रेव जानना चाहिय। किन्तु वायुकायिक पर्याप्त जीव इसके अपवाद हैं क्यांकि उनके तीनों स्थितियांकी अपेत्ता लांकके संख्यातवें भाग प्रमाण त्रेव पाया जाता है। तात्रय यह है कि मार्गणाश्रोकी अपेत्ता जिस मार्गणाका जो त्रेव हैं बही यहां अपनी अपनी सम्भव स्थितिवभिन्तकी अपेत्ता प्राप्त होता है।

## इस प्रकार ज्ञेत्रानुगम समाप्त हुआ।

§ २०६. स्रर्शनानुगमकी अपेन्ना निर्देश दो प्रकारका है—स्रोचनिर्देश स्रोर स्रादेशनिर्देश

भुज० अष्पद् अविहि० खेत्तमंगो । एवं तिरिक्ख०-णवर्गवज्जादि जाव सन्वह०सन्वएइंदिय-पुढवि -- [ वाद्रपुढवि० ] वाद्रपुढवि० अपज्ज० -मुहुमपुढवि० -सुहुमपुढवि० पज्जत्तापज्जन-आउ० -वाद्रश्राउ० -वाद्रअउअपज्ज० -मुहुमनेउपज्जत्ताआउपज्जत्तापज्जत्त-तेउ० -वाद्रतेउ० -वाद्रतेउअपज्ज० -मुहुमनेउ० -मुहुमनेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ० -वाद्रवाउ० -वाद्रवाउअपज्ज० -मुहुमवाउ० -मुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-वाद्रवणष्पद्वित्रये । वाद्रवणष्पद्विपत्तेयअपज्ज० -- कायज्ञेगि० - अर्गाल० ओरालियमिस्स० -वेउव्वियमिस्स० - आहार्० - आहार्मिस्स-कम्मइय-णवुंस० - अवगद् ० चत्तारिकसाय -अकसा० - मिद्रमुद्अण्णाण० - मणपञ्ज० - मंजद् - समाइयच्छेदो० -परिहार० सहम० - जहाक्खाद् ० - असं जद् ० - अचक्खु० - तिण्णिले० - भवसि० - अमविस० - निच्छाद् ० असण्णि० - आहार्र० - अणाहार्गि नि ।

५२०७. ब्राइंसेण णिरय० भुन० अप्पद० ब्रवहि० केव० खे० पो०? लोग० ब्रसंखे०भागो छ चोइसभागा वा देस्णा। पहमपुढवि० खेनभंगो । विदि-यादि जाव सत्तमि त्ति भुज० अप्पद० ब्रवहि० के० खेनं पोसिदं? लोग० असंखे०भागो एक वे तिण्णि चत्तारि पंच छ चोइस भागा वा देसणा।

§ २०७. छादेशकी अपेन्ना नरकगतिमें नारिकयों में भुजगार, छत्पतर और छवस्थित स्थितिविभिन्नित्वाले जीवोंने कितने तेत्रका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग और जसनालींक चौदह भागों मेंसे छुछ कम छह भागवमाण चेत्रका स्पर्श किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्शन चेत्रके समान है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक प्रत्येक नरकमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभिन्निवाल जीवोंने कितने चत्रका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें

- १२०८. सन्वपंचिं तिस्कित भुज अप्पद् अविष्ठ के खे पो ? होग असंखे भागो सन्वलोगो वा । एवं भगुस्स-प्रन्वितिगिलिदिय-पंचिदिय अपज्ञ -वादरपुढवि० (पज्ज०)-वादर्श्राउ०पज्ज०-वाद्ग्तेउ०पज्ज० वाद्ग्वाउ०पज्ज०-वाद्र-यणप्पदिपत्तेय ०पज्ज०-तसश्रपज्ज० । णविर वाद्ग्वाउपज्ज० लोग० संखे० भागो सन्वलीगो वा ।
- १२०६. देव० भुज० अप्प० अबिह० लोग० असंखे०भागो अहणव चोहस-भागा वा देस्णा । एवं सोहम्भीसाणेषु । भवण० वाण० जोदिसि० एवं चेव । णविर अद्धु ह अह णव चोहसभागा वा,देस्णा । सणक्कुभारादि जाव सहस्सारेत्ति के० खे० पो० ? लोग० असंखे०भागो अहचोहस भागा वा देस्णा । आणदादि जाव अच्चुदेत्ति के० खेतं पो० ? लोग० असंखे०भागो अ चोहसभागा देस्णा ।
- ः २१०. पंचिदिय-पंचि०पज्ञ०-तम-तसपज्ज० भुज० अप्पद० अविट० के० खे० पो० ? लोग अमुखे० भागो अह चोहमभागा देमूणा सब्बलोगो वा । एवं पंच

भाग चेत्रका और त्रमनालीके चोदह भागोमसे कममे कुछ कम एक, कुछ कम दो, कुछ कम तीन, कुछ कम चार, कुछ कम पाँच खोर कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है।

- § २०८. सभी पंचेन्त्रिय तिर्यचोमें भुजगार, अस्ततर और अवस्थित स्थितिविभिन्नति वाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्वलोक प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार सभी मनुष्य, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर प्रधिवीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अधिकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक द्वर्गर पर्याप्त और अस अपर्याप्त जीवोके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोने लोकके संख्यातवे भाग और सर्वलोकप्रमाण जवका स्पर्श किया है।
- \$ २०६. देवांमे भुजगार, अस्पतर खोर खतिस्थत स्थितिविभिक्षतवाले जीवांने लोकके असल्यातवे भाग लेखका तथा बतनाजीक चोत्रह भागामें में कुछ वम खाठ और नो भागप्रमाण लेखका स्पश्च किया है। इसी प्रकार सौधर्म और एंशान स्वर्गक देवोंक जानना चाहिये। भवन-वासी, व्यन्तर खोर ज्योतिषी देवोंक भी इसी प्रकार जानना चाहिये। तनी विशेषता है कि इनके खनीतकालीन स्पर्श ब्रमनालींक चोद्रह भागोमें कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम खाठ और कुछ कम नो भागप्रमाण होता है। सानन्तुमारसे लेकर सहस्तार स्वर्ग तकके देवोंने कितने लेखका स्पर्श किया है १ लोकके खम्मंत्र्यातवे भाग लेबका और ब्रसनालींक चोद्रह भागोमें कुछ कम खाठ भाग लेबका स्पर्श किया है १ खोनतकल्पसे लेकर अच्युतकल्प तकके देवोंने कितने लेबका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका और ब्रमनालींक चोद्रह भागोमें कुछ कम छह भाग लेबका स्पर्श किया है ।
- \$२१०. पंचिन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रम श्रीर त्रम पर्यत जीवोंमें भुजगार, श्रास्पतर वे अंगर श्रामस्थत स्थितिविभिन्तिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके श्रामंख्यातवें भाग चेत्रका, त्रसनालीके चीवृह भागोंमेंसे कुछ कम श्राट भाग चेत्रका श्रीर सर्व लोक चेत्रका स्पर्श

मण०-पंचविच०-इन्थि०-पुरिस०-विहंग०-चक्खु०-सण्णि ति । वेउ व्विय० भुज० अप्प० अविह० के० खे० पो० ? लोग० असंखे० भागी अह तेरह चोहम भागा वा देस्णा।

१२११, त्राभिणी० सुद्र० त्रोहि० श्रप्पद्० के० खे॰ पो० १ लोग० त्रसंखे० भागो श्रष्ट चोहम० देसूणा । एवमोहिदंस०-पम्मले०-सम्मादि०-खड्य०-वेदय०-उव-सम०-सम्मामिच्छादिष्टि त्रि ।

६२१२ संजदासंजद० ऋष्पद० के० खेत्तं पो० ? लोग० ऋसंखे०भागी छ चोद्दम० देमृणा | एवं मुक्क लेम्सा । तेउ० सोहम्मभंगो । सासण० ऋष्पद० के० खे० पो० ? लोग० ऋसंखे०भागो ऋह वारह चोद्दस० देसृणा ।

## एव पोमणाणुगमो समत्तो ।

किया है। इसी प्रकार पांची मनायागी, पांची वचनयोगी, खांबरी, पुरुपबेदा, विभंगज्ञानी, चच्चदर्शनी और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये। वैक्रियिककाययोगी जीवोम भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है? लोकके अमंख्यतातवें भाग चेत्रका तथा त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तरह भाग चेत्रका स्पर्श किया है।

६२११. मितज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें अल्पतर स्थिति विभक्तिवाले जीवोंने कितने तेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग त्त्रका आर त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ भाग तेत्रका स्पर्श किया है ! इसी प्रकार अवधिदर्शनी, पद्मलेश्यावाले सम्यग्दृष्टि, त्वायिक सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्निभ्यादृष्टि जीवोके जानना चाहिये !

§ २१२. संयतासंयतों में अल्पतर स्थितिविभक्तियाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रसनालीके चोंदह भागोमें से कुछ कम छह भाग चेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार शुक्ललंश्यावाले जायों के जानना चाहिये । पीतलेश्यावाले जीवोंके सोधर्मस्वर्गके समान स्पर्श है । सासादनसम्यग्दृष्टि अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रसनालीके चोंदह भागोंमें में कुछ कम आठ तथा कुछ कम बारह भाग चेत्रका स्पर्श किया है ।

विशेषार्थ-श्रोधसे मुजगार, अल्पनर श्रोर श्रवस्थित न्थितिवाज्ञोंका स्त्र सब लोक बतलाया है स्वर्शन भी इतना ही है श्रिनः इनके स्पर्शको स्त्रके समान कहा। इसी प्रकार निर्यंच आदिकमें स्पर्श जाननेकी मूचना की है। इसका यह श्रभिप्राय है कि उन मार्गणाश्रोंमें, जिनका जितना स्त्रे हैं स्पर्श भी उतना ही है। हां, सामान्य नारकी श्रादि कुछ ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनका स्पर्श स्त्रे मिन्न है। श्रतः उनका पृथक् कथन किया। फिर भी जीवहाणके स्पर्शन श्रनुयोग हारमें उन मार्गणाश्रोंमेंसे जिसका जितना स्पर्श बतलाया है वही यहाँ उस उस मार्गणामें भुजगार श्रादि सम्भव पदोंकी अपेक्षा प्राप्त होता है। जो मूलमें बत्तलाया ही है। श्रव श्रमुक मार्गणामें श्रमुक स्पर्श क्यों प्राप्त होता है इसका विशेष खुलासा स्पर्शन श्रनुयोगहारसे जान लेना चाहिये।

इस प्रकार स्पर्शनानुगम समाप्त हुआ।

११३. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ औघेण भ्रुन०-अप्पद०-अविह० केविचरं कालादो होति ? सन्बद्धा । एवं तिरिक्ख-सन्ब- एइंटिय-पुढवि०-बादरपुढविश्रपज्ज०- सुहुमपुढवि०-सुहुमपुढविएज्जत्ता- पज्जत्त-आउ०-बादरश्राउ०-बादरश्राउश्रपज्ज०-सुहुमश्राउश्-सुहुमश्राउपज्जत्तापज्जत्त- तेउ०-बादरतेउश्रपज्जत्-सुहुमतेउश्-सहुमतेउपज्जत्तापज्जत्व-बादर-बाउश्-वादरतेउश्रपज्ज०-सुहुभवाउश्-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जन-बादरवणप्पदिपत्तेय०-बादरवणप्पदिपत्तेय०-बादरवणप्पदिपत्तेय०-बादरवणप्पदिपत्तेयश्रपज्ज०-सन्बन्नपप्पदि- सन्बणिगोद०- कायजोगि-श्रोराल्रिय०- श्रीगिलियभिस्स०-कम्मइय०-णवुंम०-चत्तारिक०-मदि-सुद्श्रण्णा०-श्रसंजद०-श्रचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०-श्रभवसि०-भिच्छादिदी-असण्णि०-आहारि०-अणाहारि ति ।

२१४. आदेसेण णेरइएस भुज० के० ? जह० एयसमत्रो, उक्क० आविष्ठ० अमंखे०भागो । अप्पद०-अविह० के०? सञ्बद्धा । एवं सत्तसु पुढवीसु सञ्वपंचिदियतिरिक्ख०-देत्र-भवणादि जाव सहस्सारे त्ति सञ्जविगिर्लिदिय-सञ्वपंचिदिय-वादरपुढविपज्ज०-वादरआउपज्ज०- बादरतेउपज्ज० - वादरवाउपज्ज० - बादरवणप्पदिपत्तेयपज्ज०सञ्जतम-पंचमण०-पंचविच०-वेउिवय - इत्थि०-परिस०-विद्यंग०-चक्ख०- तेउ०-पम्म०मण्णि ति ।

्२१३. कालानुगमकी अपेत्ता निर्देश दां प्रकारका है—आंघनिदेंश और आदेशनिदेंश। उनमें से अोघकी अपेत्ता मुजगार, अल्पनर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका किनना काल है १ मव काल है। इसी प्रकार सामान्य निर्यच, सभी एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूद्रम पृथिवीकायिक, सूद्रम पृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, सूद्रम पृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूद्रम जलकायिक, सूद्रम जलकायिक अपर्याप्त, सूद्रम जलकायिक, सूद्रम जलकायिक अपर्याप्त, सूद्रम अप्तिकायिक अपर्याप्त, सूद्रम अप्तिकायिक, बादर अप्रिकायिक, वादर अप्रिकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक अपर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक पर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक पर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक पर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक पर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वादर वादर वादरितकायिक प्रत्येक शरीर, वादर वास्पितकायिक पर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वास्पितकायिक पर्याप्त, सूद्रम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वास्पितकायिक पर्याप्त, स्त्रम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वास्पितकायिक प्रत्येक शरीर, वादर वास्पितकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, कार्मण्यत, कार्मण्यत, अप्ताव्यापी, कार्मण्यत, अप्तव्यापी, कार्मण्यत, अप्ताव्यापी, कार्यापी, कार्यापी, कार्यापी, कार्यापी, कार्यापी,

§ २५४. आदेशकी अपेचा नारिकयों में भुजगार स्थितिविभक्तिका कितना काल है १ जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीं के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अल्पनर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका कितना काल है १ मय काल है। इसी प्रकार सातों पृथिवियों के नारिकों, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य देव, भवनवासियों में लेकर सहस्रार करूप तकके देव. सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, वादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, वादर अप्रिकायिक पर्याप्त, वादर अप्रिकायिक पर्याप्त, वादर अप्रिकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, सभी वम्में मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, वैकियिक काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, चच्दर्शनी, पीतलेरयावाले, पद्मलेरवावाले और संज्ञी जीवों के जानना चाहिये।

§ २१५. मगुस० भ्रज० जह० एयसमञ्चो, उक्क० आवलि० श्रमंखे०भागो । मणुसपज्ज०-मगुसिणी० भ्रज० के० १ ज० एगसमञ्चा उक्क० संखेजा समया । मणुसतिएसु अप्पद०-त्रविद्व सन्वद्धा । मणुसत्रपञ्ज० भ्रज० के० १ जह० एगसमञ्चो, उक्क० श्रावलि० असंखे०भागो । त्र्राप०-त्रविद्व के० १ जह० एगस० उक्क० पलिद्वो० असंखे०भागो । एवं वेउन्वियमिस्स० ।

 १२१६. त्र्याणदादि जाव सञ्बद्धसिद्धे ति त्र्यणद्र० के० १ सञ्बद्धा । एवमा-भिणि०-सुद्०-ओहि०-मणपज्ञ०-संजद्० - साथाइय - छेदो० - परिहार० - संजटामंजद०-ओहिदंसण०-मुक्कले०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०दिद्धि ति ।

\$ २१७. आहार०-आहारमिस्म० अप्पद्र० के० ? जह० एगसम्ब्रो, उक० अंतोमुहुत्तं । णविर आहारमिस्स० जहण्यु० अंतोमु० . अवगद० अप्प० के०? ज० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तो । एवमकमा०-मुहुम०-जहाक्याद०संजदे ति । उत्तमम० अप्पद० के० ? जह० अंतोमु०, उक्क० पिलदो असंग्वे०भागो । एवं सम्मामि०-सासण० । णविर सासण० जह० एयसम्ब्रो ।

#### एवं कालाणुगमी सनती।

§ २१५. मनुष्याम भुजगार स्थितिविभक्तिया जघन्यकाल एक समय आर उत्कृष्टकाल आवलीके अमंख्यातवें भागप्रमाण है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यितियोमें भुजगार स्थिति-विभक्तिका कितना काल है ? जबन्य काल एक समय और उत्कृष्ट क ल संख्यात समय है। तथा उक्त तीन प्रकारके मनुष्योमें अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल सर्वदा है। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योमें भुजगार स्थितिवभक्तिका काल कितना है ? जबन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्ति का कितना काल है ? जबन्य एक समय और उत्कृष्ट पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये।

§ २१६ त्रानत कल्पसे लेकर सर्वाथसिद्धि तकके देवोंमे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल हैं ? सर्वकाल हैं। इसी प्रकार आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, स्रवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिविद्याद्धिसंयत, संयतासंयत अवधिदर्शनी, शुक्तलेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, न्नायिकसम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोक जानना चाहिये।

\$ २१७ : आहारककाययोगी और आहारकिमिश्रकाययोगी जीवोंमे अल्पनर न्थितिविभक्ति वाले जीवोका कितना फाल है ? जयन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्भुहूर्त है । इननी विशेषना है कि आहारकिमिश्रकाययागी जीवोके जयन्य और उत्कृष्ट दोनों काल अन्तर्भुहूर्त हैं । अपगतवंदी जीवोंमें अल्पनर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल हे ? जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त है । इसी प्रकार अकपायी, सूद्मसांपरायिकसंयन और यथाख्यातसंयन जीवोंके जानना चाहिये । अपशमसन्यग्दृष्टियोमें अल्पनर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल हे ? जयन्यकाल अन्तर्भुहूर्त और उत्कृष्टकाल पत्यापमके असंख्यातवं भागप्रमाण है । इसी प्रकार सन्यग्दिष्ट और सासादनसन्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषना है कि सासादनसन्यग्दृष्टि जीवोंके ज्ञानना चाहिये । इतनी विशेषना है कि सासादनसन्यग्दृष्टि जीवोंके ज्ञानना चाहिये ।

 ३१८. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्दे सो—- स्रोघेण स्रादेसेण य । तत्थ स्रोघेण स्रुत्त०-स्रप्यद०-अविद्दिः अंतरं केविचरं० ? णित्थ अंतरं । एवं तिरिक्ख०-सब्ब-एईद्यि-पुढवि०-बादरपुढवि०-बादरपुढिविस्रपज्ज०-सुहुमपुढवि०-सुहुमपुढविपज्जता-पज्जत्त-स्राड०-बादरआउ०-बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउ०-सुहुमस्राउपज्जत्तापज्जत्त-

विशोषार्थ-नाना जीवोकी ऋषेद्या कालका विचार करनेपर खोचसे तीनों स्थितिया निरन्तर है, अतः उनका काल सर्वदा कहा । मार्गणाओंमें कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमे ये सर्वदा पाई जाती हैं। जैसे सामान्य तिर्यंच त्रादि। कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें अल्पतर त्रीर त्र्यवस्थित स्थितियां तो सर्वदा पाई जाती हैं पर मुजगार स्थिति सान्तर है, कभी होती ख्रीर कभी नहीं भी होती। यदि होती है तो कमसे कम एक समय तक त्रीर अधिकसे ऋधिक त्रावलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक होती है। जैसे सामान्य नारकी आदि। किन्तु मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनी यं दो मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है, क्योंकि ये दोनो मार्गणाएं ही संख्यातसंख्यावाली हैं। कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमे तीनों स्थितियां सान्तर हैं क्यों कि वे मार्गणाएं स्वयं सान्तर हैं, श्रतः उनमं मुजगारका जयन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल आविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। तथा श्रहरतर और श्रवस्थितका जवन्य काल एक ममय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यहा यह शंका होती है कि ऐसी मार्गणाओका उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और भंगविचय अनुयोगद्वारमें तीना को भजनीय वतलाया है अतः उनमें अल्पतर और अवस्थित का उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण नही वनना चाहिये। सो इसका यह समाधान है कि जब उक्त मार्गणावाले जीव निरन्तर परुयके असंख्यातवे भागप्रमाण काल तक होते रहते हैं तब इनमें कदाचिन् अल्पतर श्रीर श्रवस्थित स्थितियां नाना जीवोंकी ऋषेत्ता उक्त काल तक सर्वदा पाई जा सकती हैं ऋत: इनका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण वन जाता है। कुछ एसी मार्गणाएं है जिनमें निरन्तर अल्पतर स्थिति ही पाई जाती है गनः उनमे अल्पतर स्थितिका काल सर्वदा है। यथा-आनत कल्पब्रादिके देव श्रादि। कुछ ऐसी जागणाए हैं जिनका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूते हैं। तथा जिनमें एक अल्पतर स्थिति ही पाई जाती है, अतः उनमं अल्पतर स्थितिका जवन्य ख्रीर उत्कृष्ट काल उक्त <sup>प्रमाण</sup> जानना । यथा-त्र्राहारकाययोग त्र्यादि । किन्तु त्र्राहारकमिश्रकाययोगका जघन्य त्र्रीर अकृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त है। अतः इसमे अल्पतर स्थितिका जघन्य अोर *उत्कृ*ष्ट काल उक्त प्रमाण ही प्राप्त होता है । तथा कुछ ऐसी मार्गशाएं है जिनका जघन्य काल खन्तर्मु हूर्त और उत्कृष्ट काल गन्यके असंख्यातर्वे भागप्रमाण है ओर इनमे एक अल्पतर स्थिति ही सम्भव है, अतः इनमे अन्यतर स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा। किन्तु इन मार्गणाश्रीमे सासादन सम्यग्दृष्टि मार्गाणा ऐसी है जिसका जबन्य काल एक समय ही है, अतः इसमे ऋल्पतर स्थितिका जवन्य काल एक समय जानना चाहिये।

#### इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

 तेउ०-वादरतेउ०-वादरतेउत्रपज्ञ०-सहुमतेउ०-सहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-वादरवाउ-बादरवाउत्रपज्ज०-सहुमवाउ०-सहुमवाउपज्जतापज्जत्त-वादरवणप्पदिपत्तेय-बादरव-णप्पदिपत्तेयअपज्ज०-वणप्पदि-णिगोद०-कायजोगि०-त्र्योरालि०-त्र्योरालियिमस्स-कम्भइय०-णवुंस०-चत्तारिकसाय०-मदि-सुद्रत्रण्णाण०-त्र्रसंजद०-त्रचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०-न्रभवसि०-मिन्छादि०-ग्रसणिण०-न्राहागि०-त्रणाहारि० त्ति।

\$ २१६. त्रादेसेण णेरइएस स्रज्ञ अंतरं के० १ जह० एगसमझो, उक्क० अंतोस्च । अप्प०-अविदिश एतिथ अंतरं । एवं सत्तसु पुढवीमु सव्वपिचिदयितिरिक्ख-मणुसित्य०—देव०—भवणादि जाव सहस्सार०—सव्विविधिले निव्यल्य निविधिले निविधिले

३२२०, मणुसत्रपण्जन भुजा०-अष्प०-ग्रविद्धः अंतरं के०१ जह० एग-समओ, उक्क० पलिदो असंखे०भागो । एवं वेजीव्वयमिस्स० । णविर उक्क० बारस मुहुत्ता ।

कायिक अपयाप्त, सूद्दम जलकायिक, सूद्दम जलकायिक पर्याप्त, सूद्दम जलकायिक अपयाप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूद्दम अग्निकायिक, सूद्दम अग्निकायिक, सूद्दम अग्निकायिक पर्याप्त, सूद्दम अग्निकायिक, सूद्दम अग्निकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक पर्याप्त, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक श्रारे अपर्याप्त, वनस्पति, निगाद, काययोगी, अौदारिककाययोगी, अोदारिक मिश्रकाययोगी, कामेणकाययोगी, नपुंसकवेदी, काथादि चारों क्यायकाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचलुद्दर्शनी, छप्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञा, आहारक और अनाह्यरक जीवा के जानना चाहिये।

§ २१६. त्रादेशकी अपेचा नारिकयोंमें मुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल कितना है ? जवन्य एक समय ओर उत्हार अन्तर्मुं हूने हैं। तथा अल्पनर और अवस्थित स्थितियिभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सातो प्रथिवियोंके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यक्क, सामान्य, पर्याप्त और मनुष्यती ये तीन प्रकारक मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्त्रार स्वगे तकके देव, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, बादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, वादर अग्निकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पति-कायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, सभी त्रस, पांचों मनायोगी, पांचो वचनयोगी, वैक्तियिककाययोगी, क्रोवेदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, चतुद्शनी, पीनलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंक जानना चाहिये।

§ २२० मनुष्य अपर्याप्तकोमे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल कितना है ? जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार वैकिथिकिमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके उत्कृष्ट अन्तरकाल बारह मुहुर्त है। ् २२१, त्र्राणदादि जाव सव्वहसिद्धि ति ऋष्पद० णित्थि अतरं । एवमा-भिणि०-सुद०-स्रोहि०--मणपञ्ज०-संजद०--सामा (य-छेदो०--परिहार०-संजद।संजद०-स्रोहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०दिहि ति ।

\$ २२२ ब्राहार०-ब्राहारिमस्स० ब्रप्पद० अंतरं के० १ जह० एगममधो, उक्त॰ वासपुथत्तं । एवमकसाय-जहाक्खादसंजदे ति । ब्रवगद० ब्रप्पद० जह० एग-समब्रो, उक्त॰ ब्रम्मासा । एवं सुहुमांपरायसंजदे ति । उवसम० ब्रप्पद० के० १ जह० एगसमब्रो, उक्त० चडवीस ब्राहोरत्ताणि । सासण०-सम्मामि० अप्पद० जह० एग-समब्रो, उक्त० पिटदो० असंखे०भागो ।

### एवमंतराखुनमो समना ।

\$ २२१. आनत कल्पसं लंकर संवार्थासाद्धतकक देवाम अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार आभिनिवाधिक हानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्यय-ज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्रलेश्यावाल, सम्यग्दष्टि, चायिकसम्यग्दिष्टि और वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिये।

§ २२२. आहारककाययोगी और आहारकिमिश्रकाययोगी जीवोमें अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोका अन्तरकाल िकतना है ? जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व है । इमी प्रकार अकपायी और यथाख्यातमंयत जीवोंके जानना चाहिये । अपगतवेदी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक सभय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है । इमी प्रकार सूच्मसांपरायिकसंयत जीवोंके जानना चाहिये । उपशमसम्यग्दृष्टि अल्पतर म्यातीवभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल िकतना है ? जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल चीवीस दितरात है । सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिश्यादृष्टि अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पत्योपमके असंख्यातवे नाग प्रमाण है ।

विशेषार्थ—तीनो स्थितिवाल नाना जीव सर्वदा पाये जाते हैं, अतः ख्रांघसे इनका खन्तर काल नहीं वनता । मार्गण्।ख्रोमें कुछ ऐसी मार्गण्।एं हैं जिनमें तीनों स्थितिवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं, अतः उनके कथनको ख्रोंघ के समान कहा । कुछ ऐसी मार्गण्।एं हैं जिनमें भुजगारका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट खन्तर अन्तमुं हुते हैं तथा अरुपतर ख्रोर खयस्थित स्थितिका खन्तरकाल नहीं हैं । यथा सामान्य नारकी ख्रादि । इसका कारण् यह है कि इनमें केवल मुजगार स्थिति ही सान्तर हैं किर भी नाना जीवोकी ख्रपेचा उसका खन्तरकाल खन्तमुं हुते ख्रें ख्रायक नहीं प्राप्त होता । ख्रागे मनुष्य अपर्याप्त ख्रादि जिननी मार्गण्।ख्रोमें भुजगार ख्रादि मिथितियोंके खन्तरकालका कथन किया है उनमें जिस मार्गण्यका जितना ख्रन्तर काल है उसमें सम्भव स्थितियोंका उतना ख्रन्तरकाल जानना चाहिये । उदाहर्गके लिये लब्ध्यप्याप्त मनुष्योंका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट ख्रन्तरकाल पन्यके ख्रमंत्यात्वे भागप्रमाण् है ख्रतः इसमें भुजगार ख्रादि तीनों स्थितियोंका जवन्य ख्रन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट ख्रन्तरकाल पन्यके असंख्यात्वे भागप्रमाण् कहा । इसी प्रकार ख्रन्य मार्गण्।ख्रोमें भी जानना चाहिए ।

# 

ृ २२४. अप्पावहुगाणुगमेण दुविहो णिह् सो---ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण सव्वत्थोवा भ्रज्ञ विहत्तिया । श्रविह० असंखे ०गुणा । श्रप्यद० संखे ०गुणा । एवं सत्तमु पुढ्वीमु सव्वतिरिक्ख०-मणुस०-मणुमअपज्ञ०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०--सव्वएई दिय--सव्विगिलिदिय--मव्वपं वि०--पंचकाय--सव्वतस--पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-ग्रोरालिय०-ग्रोरालियिमस्स०-वेउव्विय०-वेउ०भिस्स०-कम्मइय०-तिण्णिवेद०-चत्तारिकसाय-मदि-सुद्अएणाण०-विहंग०-असंजद०-चक्ख०-श्रचवखु०--पंचले०-भवसि०-श्रभवसि०-मिच्छादि०-सण्णि०-असण्णि० श्राहारि-अणाहारि ति ।

२२५ मणुसपञ्ज०-मणुसिणीसु सन्त्रत्थे(वा भुज०। अविद्विः संस्वे०गुणा। अप्पद् ए संस्वे०गुणा। अप्पद् जाव सन्प्रहिसिद्धि ति अप्पद् ० णित्थ अप्पावहुगं। एममाहार०-आहार्रामस्म०-अवगद०--अकसा०--आर्मिण०--सुद--ओहि०--मणपज्ज०-संजद०-समाइय-छेदो०-परिहार०-सुदुससांपर(य०-जहारस्वाद०-संजदामंजद-ओहिदंस०-

§ २२४ ऋल्पबहुत्पानुगम की अपेन्ना निर्देश दा प्रकार का है—श्रीवानिर्देश श्रीर श्रादेशनिर्देश। उनमें से श्रीव की अपेन्ना मुजगारिस्थितिविभक्तिशल जीव सबसे थाड़े हैं। इनमें अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव असस्यातगुणे हैं। इनमें अस्पतर स्थितिविभक्ति वाले जीव
संस्थातगुणे हैं। इसी प्रकार सातो प्रथिविश्रों के नारकी, मनी तिर्यंच, सामान्य मनुष्य, लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य, सामान्य देच, भवनवासियां से लेकर सहस्त्रार स्वग तक के देव, सभी एकेन्द्रिय.
सभी विकलेन्द्रिय, सभी पचेन्द्रिय, पांचों स्थायर काय, सभी वस, पांचों मनोयोगी, पांचो वचन
योगी, काययोगी, श्रीदारिक काययोगी, श्रीदारिकिमिश्र काययोगी, वैकियिक काययोगी,
विकियिक मिश्रकाययोगी, कामणकाययोगी, तीनों वेदवाले, कोषादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी,
श्रुनाज्ञानी, विभंगज्ञानी, असंयत, चल्दर्शनी, अचनुदर्शनी, कृष्णादि पांच लेश्यावाले, भव्य,
अभव्य, मिथ्यादिष्टि, मंज्ञी, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवो के जानना चाहिये। ताल्ययं
यह है कि उक्त मागेणाएं अनन्त श्रीर असंख्यात संख्यावाली है खतः इनमें उक्त कम बन
जाना है।

§ २२४. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोम भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। तात्वर्य यह है कि ये मार्गणाएँ संख्यात संख्यावाली हे : सिलये इनमें उक्त कम ही घटित हाता है। आनत कर्यमें लेकर सर्वार्थितिव्र तकके अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले देवोंका अल्पवहुत्व नहीं है। इसी प्रकार आहारककाययांगी, आहारकिभिअकावयांगी, अपगतवेदी अक्षपायी, आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामाधिकसंयत, छेरोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, मूच्मसांपराधिकसंयत, यथाख्यावसंवत, संयतासंवत,

# मुक्क॰-सम्मादिद्वी-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छादिद्वि ति । एवमप्पाबहुगासुगयो समत्तो । एवं भ्रजगार्रावहत्ती समत्ता ।

इ २२६. पद्णिक्खेवे तत्थ इमाणि तिष्णि अणिश्रोगद्दाराणि—समुक्तित्या मायित्तं अप्पाबहुअ चेदि । समुक्तित्तणं दुविहं—जहण्णयं उक्कस्सयं चेदि । तत्थ उक्कम्से पयदं । दुविही णिहे सो—ओघेण आदेमेण य । तत्थ श्रोघेण मोह० श्रित्थ उक्किम्सिया वड्ही उक्क हाणी उक्कस्सम्बद्धाणं च । एवं सत्तसु पुडवीसु मब्बन्तिक्ख-सब्बमणुस-देब-भवणादि जाव सहस्सार०-सब्बएइंदिय-सब्बिवित्य-सब्बन्धिद्य-सब्बन्धित्य-सब्बन्धित्य-सब्बन्धित्य-सब्बन्धित्य-सब्बन्धित्य-सब्बन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सव्वन्धित्य-सब्वन्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्य-सब्वन्य-सब्वन्धित्य-सब्वन्य-सब्य-सब्वन्य-सब्वन्य-सब

ः २२७, आणदादि जाव सव्वद्वसिद्धि त्ति अत्थि उक्कस्सिया हाणि । एव-माहार-[आहार]मिस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि० मणपज्जव०-

त्रप्रधिदर्शनी, शुक्तलेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्रामसम्यग्दृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि त्र्यौर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोके जानना चाहिये। तात्पर्य यह है कि इन मार्गणात्रामों एक अल्पतर स्थिति पार्ड जाती है इसलिये इनमे ऋल्पबहुत्व नहीं पाया जाता।

> इस प्रकार अल्पबहुत्वानुगम ममाप्त दुत्रा । इम प्रकार भुजगार,विभक्ति समाप्त हुई ।

२२६. अब पद्नित्तेषका कथून अधसर प्राप्त हैं। उसके विषयमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं असुरकीर्तना, द्वामित्व ऑर्डिल्यबहुत्व । समुन्कीर्तना दो प्रकार की है—जवन्य और उन्छए। उनमेसे उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है—आंविनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेसे आंविकी अपेत्रा मोडनीय स्थितिविभिन्नकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है। इसी प्रकार सानो पृथिवियोक नारकी, सभी तिर्येच, सभी मनुष्यः नामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सर्द्धार स्थां तकके देव, सभी एकेन्द्रिय, सभी विकलेन्द्रिय नर्मा पंचिन्द्रिय, सभी पांचों स्थावरकाय, सभी वस्त पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी औंदारिककाययोगी, औंदारिककाययोगी, बोकियिकमिश्रकाययोगी जोमण्काययोगी, तीनों वेदवाले, कोधादि चारो क्यायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी. असंयत, चत्त्रदर्शनवाले, अचतुदर्शनवाले, कृष्णादि पांच लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंक जानना चाहिये।

§ २२७. त्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमे मोहनीय स्थितिविभिक्तिकी उन्द्रष्ट होनि हैं। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, आपगतवेदी, अकपायी, आभिनिबोधकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत,

मंजद०- सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद्-श्रोहिदंस०-मुक्कले०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम० -हासण०-सम्मामि० ।

# एवमुवकस्सममुक्कित्तणाणुगमी समत्तो ।

३२२. जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेसी—श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ श्रोघेण मोह० श्रात्थ जहण्णवड्ढी जहण्णहाणी जहण्णमवद्वाणं च । एवं सव्वणिरय-सव्वितिरक्ख-सव्वमणुस-देव-भवणादि जाव सहस्मार०-सव्वएइंदिय-सव्विविग्रितिय-सव्वर्षचिदिय-पंचकाय-मव्वतम०-पंचमण-पंचवचि०-कायजोगी-ओरालिय०-औरालिय-मिम्म-वेउव्विय-वेउ०मिम्स-कम्मइय०-तिण्णिवेद्-चत्तारिकसाय-मिद्-सुदश्रण्णाण-विहंग०-असंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०-भविस०-अभविस०-मिच्छादि०-मण्णि- अमण्णि-श्राहारि०-श्रणाहारि ति ।

६ २२६. त्राणदादि जाव सव्बहसिद्धि त्ति श्चित्थि जह० हाणी । एवमाहार०-त्राहारिमम्म-श्रवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-मंजद०-सामाइय-बेदो०-परिहार०-सुहुमसांप०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-श्रोहिदंस०-सुक०-मम्मा-दिही-खइय०-वेदय०-उवसम०-सामण०-सम्मामि० ।

छेदापस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, सूद्दमसांपरायिकसंयत, यथाख्यानसंयत, संयतासंयत, अविधिदर्शनो, शुक्रललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, मासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोके जानना चाहिये।

## इस प्रकार उत्कृष्ट समुत्कीर्ननानुगम समाप्त हुआ।

§ २२८. श्रव जयन्य समुत्कीर्तनानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेना निर्देश दो प्रकार का है—श्रोघनिर्देश श्रोर श्रादेशनिर्देश। उनमें से श्रोघकी श्रपंत्ता मोहनीय स्थितिविभक्तिकों जधन्य बृद्धि, जधन्य हानि श्रोर जधन्य श्रवस्थान है। इसी प्रकार सभी नारकी, सभी तिर्येच, सभी मनुष्य, सामान्य देव. भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देव, सभी एकेन्द्रिय सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचेन्द्रिय, सभी पांचों स्थावरकाय, सभी त्रस, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, श्रोदारिककाययोगी, श्रोदारिकिमिश्रकाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों वेदवाले, क्रोधादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी असंयत चनुदर्शनयाले श्रचनुदर्शनवाले, कृष्णादि पांच लेश्यावाले, भव्य, श्रमच्य, मिध्यादृष्टि, संज्ञी, त्रसंज्ञी, श्राहारक श्रीर श्रनाहारक जीवोके जानना चाहिये।

\$ २२६. श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीय स्थितिविभक्तिकी जघन्य हानि हैं। इसी प्रकार आहारककाययागी. श्राहारकिमिश्रकाययोगी, त्रपगतवेदी, श्रकपायी, श्राभिनिबोधिकज्ञानी, श्रतज्ञानी, त्रविध्वानी, मनःपययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदो-पस्थापनासंयत, परिहारविद्यद्विसंयत, सृदमसाम्परायिकसंयत यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधि-दर्शनी, श्रुकलेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्मसम्यग्दृष्टि, सासादन-सम्यग्दृष्टि श्रीर सम्यग्निक्यादाष्ट्र जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जहाँ स्थितिकी वृद्धि खोर हानिके अनेक विकल्प सम्भव हैं वहाँ जब बन्ध या सिक्रय द्वारा सबसे अधिक बढ़ाकर स्थिति प्राप्त होती है तब उत्कृष्ट वृद्धि कहलाती है। तथा

# एवं समुक्तित्तणाणुगमो समत्तो ।

६२३० सामित्ताणुगमी द्विहो—जहण्णओ उक्कस्सत्रो च । उक्कस्सए वयदं । दिवही णिइ सो — त्रोघेण त्रादेसेण य । त्रोघेण मोह० उक्कस्सिया वडढी त्र्यण्णदरस्स जो चद्**डाणियजवम**ज्भस्स उवरि अंतोकोडाकोडिहिदिं वंथंतो ब्रन्डिदां हिदिवंधद्धाए पुण्णाए जेण उक्कस्सहिदिसंकिले**सं गदेण उक्कस्सहिदी पवद्धा** तस्स उक्कस्सिया वड्ढी । तस्सेव से काले उक्कस्समवद्वाणं । उक्कस्सिया हाणी करम ? अण्णदरी जो उक्कस्सिटिदिसंतकस्मिओ तेल उक्कस्सिटिदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी । एवं सत्तसु पुढवीसु तिरिक्ख०-पंचिदियतिरिक्ख-पंचि०तिरि०पज्ज०-पंचितिरि • जोणिणी-मग्रसतिय-देव-भवणादि जाव सहस्सार ० - पंचिदिय-पंचि ० पज्ज ० -तम-तमपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-त्रोरालिय०-वेउव्विय०-तिण्जिवेद-स्थितिकाण्डकवात आदिके द्वारा जब सबसे अधिक स्थिति घटाई जाती है तब उच्छट्ट हानि कहलानी है। तथा उत्कृष्ट वृद्धिके वाद जो अवस्थान होता है उसे उत्कृष्ट अवस्थान कहते हैं। त्रांघमे मोहनीय कर्मकी स्थितिमे ये तीनों पद सम्भव हैं अतः 'श्रोघसे मोहनीय कर्मकी म्यितिकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान होता है' यह कहा है। इसी प्रकार जिस जिस मार्गणामें अपने अपने योग्य हाति, वृद्धि और अवस्थान सम्भव हैं उस उस मार्गणामं उसके अनुसार उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अयस्थान जानना चाहिये। किन्तु कुछ ऐसी मार्गणाएँ है जिनमें हानि ही होती है। जैसे आनत आदिक। फिर भी वहाँ म्थितिको हानि एक समय प्रमाण भी होती है और श्रधिक भी होती है। अतः वहाँ उत्कृष्टपदकी अपेता कंवल उत्कृष्ट हानि वनलाई है, उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट अवस्थान ये दो पद नहीं वनलाये । जघन्य वृद्धि श्रादिका भी इसी प्रकार कथन करना चाहिये । तात्पर्य यह है कि जहाँ उन्हुए वृद्धि त्यादि सम्भव हैं वहाँ जवन्य वृद्धि त्यादि भी सम्भव हैं। किन्तु जहाँ उत्हुष्टकी श्रपेत्ता

#### इस प्रकार जघन्य समुत्कीर्तनानुगम समाप्त हुआ।

केवल उत्कृष्ट हानि है वहाँ जवन्यकी अपेचा केवल जवन्य हानि है। कारण स्पष्ट है।

§ २३०. स्त्रामित्वानुगम दो प्रकारका है—जयन्य श्रीर उत्कृष्ट । उनमेंसे पहले उत्कृष्टका प्रकरण हैं । उसकी श्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्राधनिर्देश श्रोर श्रादेशनिर्देश । श्रोधकी श्रपेक्षा माहनीय स्थितिविभित्तिकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होनी हैं १ जो चतुःस्थानिक यवमध्यके अपर श्रम्तःकोड़ाकोड़ी स्थितिको बांधकर स्थित है श्रोर स्थितिवन्धके कालके पूर्ण होनेपर उत्कृष्ट स्थितिके योग्य संक्लेशसे जिसने उत्कृष्ट स्थिति बांधी है ऐसे किसी एक जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती हैं । तथा उसीके तदनन्तर कालमें उत्कृष्ट स्थितिको सत्तावाला है वह जब उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका यात करना है तब उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं । इसी प्रकार सातों पृथिवियोके नारकी, सामान्य निर्यंच, पचेन्द्रिय तियँच, पंचिन्द्रय तियँच पर्याप्त, पंचेन्द्रय तियँच योनिमती, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य श्रोर मनुष्यनी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्नार स्वर्ग तकके देव, पंचेन्द्रय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनायोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनो वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, मत्त्वज्ञानी

चत्तारिकसाय-मदि-सुदश्रण्णाण-विहंग०-श्रसंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०-भवसि०-अभवसि०-भिच्छादि०-सण्णि०-श्राहारि ति ।

\$ २३१. पंचिं०तिरि० अपज्ञ० उनक० वड्ढी कस्स ? जेण तप्पात्रोग्गजहण्णिद्दिदिं वंधमाणेण उनकिम्सया द्विदी पवद्धा तस्स उकिस्सया वड्ढी । तस्सेव से
काले उनकस्सम्बद्धाणं । उनकिस्सया हाणी कस्स ? अण्णदरम्स जो तिरिक्खो मणुस्सो
वा उनकस्सद्धिदसंतकिम्मओ द्विदिघादं करेमाणो पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तपसु उनवण्णो तेण उनकस्सद्धिदिखंडगे हदे तस्स उनकिस्सया हाणी । एव मणुसअपज्ज०—
वादरेइंडियअपज्ज०-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-सन्वविगिलिदिय - पंचिदियअपज्ज० - पंचकायाणं वादरअपज्ज०-सुहुमपज्जतापज्जत्त-[तेउ०-] वादरतेउ०-वादरतेउपज्ज-[वाउ०]
वादरवाउ०-वादरवाउपज्ज०-तसअपज्जते ति ।

§ २३२. त्राणदादि जाव उविष्मगेवज्ञो ति उक्किस्सिया हाणी कस्स ?
त्राण्णदरो जो उक्किस्सिटिस्मंतकिम्मित्रो तेण पढमसम्मत्तं पिडवज्जमाणेण पढमिटिदिस्वंडए पादिदे तस्स उक्कि० हाणी । त्राणुदिसादि जाव सव्वद्टसिद्धि ति उक्कि०
हाणी कस्स ? अण्णदरो जो अणंताणुवंधिचउक्कं विसंजोएमाणो तेण पढमिटिद्खंडए
पादिदे तस्स उक्कि० हाणी ।

श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, त्रासंयत, चत्तुदर्शनवाले, त्राचतुदर्शनवाले, वृष्णादि पांच लेश्यावाले, भव्य त्राभव्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी त्रीर त्राहारक जीवोंक जानना चाहिये ।

§ २३१. पंचेन्द्रिय नियंच अपर्याप्तकोमे उत्कृष्ट युद्धि किसके होती हैं ? नत्यायोग्य जघन्य स्थितिको बांधनेवाले जिस जीवने उत्कृष्ट स्थितिका चन्ध किया है उसके उत्कृष्ट युद्धि होती हैं । तथा उसीके तदनन्तर कालमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं ? मोहनीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिकी सत्तावाला जो निर्यंच या मनुष्य स्थितिकाण्डकता वात करते पर उत्कृष्ट तियंच अपर्याप्तकोंमे उत्पन्न हुआ । फिर वहाँ उसके उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकता चात करते पर उत्कृष्ट हानि होती हैं । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, वादर एकेन्द्रिय अपयाप्तक, मृद्धम एकेन्द्रिय, सूद्धम एकेन्द्रिय पर्याप्तक, सूद्धम एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक, पांचों स्थावरकाय वादर अपर्याप्तक, पाँचों स्थावरकाय वादर अपर्याप्तक, पाँचों स्थावरकाय सूद्धम अपर्याप्तक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक पर्याप्तक और त्रस अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिये।

§ २३२. त्र्यानत करुवसे लेकर उपितम मैंवेयक तकके देवोंमें जिल्ह्य हानि किसके होती है ? जो मोहनीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिकी सत्तावाला प्रथमापशम सम्यक्तको प्राप्त करते समय जब प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करता है तब उसके उत्कृष्ट हानि होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमे उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? त्र्यान्त्रवानुवन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला जो कोई एक जीव जब प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करना है तब उसके उत्कृष्ट हानि होती है।

- १२३३. एइ दिय० उक्कस्सवड्ढि-उक्कस्सश्रवद्याणाणां पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ञत्तभंगो । उक्क० हाणी कस्स ? श्रण्णद्रो जो पंचिदिश्रो उक्कस्सिद्धिघादमकाऊण एइ दिएस उक्कण्णो तेण पढमिद्दिखंडए पादिदे तस्स उक्किस्सिया हाणी ।

  एवं वादरेईदिय-वादरेईदियपज्ञ०-पुढवि० वादरपुढिव-वादरपुढिवपज्ञ०-आउ०-वादरश्राउ०-वादरश्राउपज्ञ०-वणप्फिद् वादरवणप्फिद्दि वादरवणप्फिद्दिपरोयसरीरपज्जत्तश्रमण्णि ति ।
- २३४. ओरालियमिस्स॰ उक्क॰वड्ढि-स्रवद्वा० पंचि०तिरि०अपज्जत्तभंगो । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरो जो देवो णेरइस्रो वा उक्कस्सिटिद्संतकस्मिओ हिटियादमकाऊण ओरालियमिस्सजोगेसु उववण्णो तेण उक्कस्सिटिद्खंडए घादिदे तस्म उक्क० हाणी।
- २३५. वेउव्वियमिस्स० उक्क०वड्ढि-अवट्ठाणाणं पंचि०तिरि०अपज्जत्त-नंगो । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरो जो तिरिक्खो मणुस्सो वा उक्कस्सिद्धिद-मंतकिम्मश्रो द्विदिघादमकादृण वेउव्वियमिस्स० उक्कणो तेण उक्कस्मए द्विदिखंडए पादिदे तम्स उक्क० हाणी । आहार०-आहारिमस्स० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स अर्द्धिदं गलेमाणसंतम्स उक्क० हाणी । एवमकसाय-जहाक्खाद०-सासण०दिद्धि त्ति।
- § २३३. एकेन्द्रियोमे उत्कृष्ट द्वाद्ध श्रार उत्कृष्ट श्रवस्थानकं स्वामित्वका कथन पंचेन्द्रिय नियंच अपर्याप्तकोके समान जानना चाहिये। एकेन्द्रियोमे उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो कोई एक पंचेन्द्रिय नियंच उत्कृष्ट स्थितिका घान न करके एकेन्द्रियोमे उत्पन्न होकर वहाँ प्रथम स्थिति काण्डकका घान करना है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक पर्याप्तक, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्तक, चनस्पनिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पनिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त और असझी जीवोके जानना चाहिये।
- § २३४. श्रोदारिकमिश्रकाययोगियोमे उत्कृष्ट वृद्धि श्रोर उत्कृष्ट अवस्थानके स्वामित्वका कथन पंचीन्द्रय तिर्थच अपर्यान्तकोके समान जानना चाहिये। श्रोदारिकमिश्रकाययोगियोंमें उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? मोहनीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिकी सत्तावाला जो कोई एक देव या नारकी स्थितियान न करके ओदारिकमिश्रकाययागियोमे उत्पन्न होकर वहाँ उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका वान करना है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं।
- § २३५ वैकियिकमिश्रकाययागियोमें उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट अवस्थानके स्वाभित्वका कथन पंचित्त्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिये। वैकियिकमिश्रकाययोगियोमें उत्कृष्ट हानि किमके होती है ? माहनीय कर्मका उत्कृष्ट स्थितिका सत्तावाता जो काई एक तिर्यंच या मनुष्य मिश्रिनियात न करके वैकियिकमिश्रकाययोगियोमें उत्पन्न होकर वहाँ उत्कृष्ट स्थितिखण्डका वात करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोमें उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जा अद्धा स्थितिका निर्जरा करता हुआ विद्यमान है उमके उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार अकवायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्रहिट जीवोंके जानना चाहिये।

६२३७. अवगद० उक्क० हाणी कस्स ? अण्ण० इत्थि-णवुंस०वेदखवगस्स पढमे हिद्खंडए हदे तम्स उक्किस्सिया हाणी। मदि०-मुद०-ओहि० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरो उक्किस्सिहिद्संतकिम्मओ तेण उक्किस्सए हिद्खंडए पादिदे तस्स उक्क० हाणी। एवं ओहिद्स०-मुक्क०-सम्मादि०-वेदय०दिहि ति। मणपज्ज० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स जेण सागरोवमपुश्रत्तमेत्तमुक्कस्सिहिद्खंडयं पादिदं तस्स उक्क० हाणी। एवं मंजद०-सामाइय-छंदो०-खइय०दिहि-परिहार०-संजदामंजद०। सुहुमसांप० उक्क० हाणी कस्स ? अण्ण० खवगस्स चरिमिहिद्खंडए पादिदे तस्स उक्क० हाणी।

६ २३८ उवसम० उक्क० हाणी कस्स ? अण्ण० ऋणंताग्रु०विसंजोयणापढम-

\$ २३६. कार्मणकाययांगियांमं उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती हें ? विष्रहगितमें विद्यमान जो पंचेन्द्रिय संज्ञी जीव तद्योग्य स्थितिसत्त्ववाले कमंके साथ तद्योग्य उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करता है उस कार्मणकाययोगीके उत्कृष्ट वृद्धि होती हैं । उत्कृष्ट हानि किसके होती हें ? जिसके मोहनीयकर्मका उत्कृष्ट स्थितिमत्त्व हें एसा चारो गितिका जीव स्थितिकाण्डकवातको आरम्भ करके दूसरे विष्रह में जब स्थितिसत्तावाले कमंके स्थितिस्वण्डका घान करता है तब उस कार्मणकाययोगी जीवके उत्कृष्ट हानि होती है । उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ? जो एकेन्द्रिय तद्योग्य स्थितिसत्त्व से बढ़ाकर अवस्थित है उसके उत्कृष्ट अवस्थान होता है । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंक जानना चाहिये ।

§ २३७ अपगतविदयोमे उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं १ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका चपक जो कोई एक जीव प्रथम स्थितिम्बण्डका घात करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं । आभिनि-बोधिकज्ञानी, अतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोमें उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं १ मोहनीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिकी सत्तावाला जो कोई एक जीव उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं । इसी प्रकार अवधिद्यंती, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्टिण्ट और वेदकसम्यग्टिण्ट जीवोके जानना चाहिये । मनःपययज्ञानियामें उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं १ जिमने सागरपृथकत्व प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं । इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, चायिकसम्यग्टिष्ट, परिहारिवशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोके जानना चाहिये । सूचमसापरायिक संयतोमें उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं १ जो कोई एक चपक अन्तिम स्थितिकाण्डकका घात करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं ।

§ २३८ उपशमसम्यग्दृष्टियोंमे उत्कृष्ट हानि किसके होती है १ जो कोई एक जीव अनन्तानु-

हिद्संडए पादिदे तस्स उक्क० हाणी । अथवा कसायउवसामगस्स पढमहिद्सिंडए पिद्दे एदं सामित्तं वत्तव्वं, उवसमसम्मत्तकाल्य्यंतरे अणंताणु०विसंजोयणपक्लाण-ट्युवगमादो । अथवा एदं पि जाणिय वत्तव्वं, उवसमसंहीए दंसणितयम्म हिद्याद-संभवाणुवलंभादो । सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स ? अण्ण० उक्कस्सहिद्सिंत-कम्मिम उक्कस्सहिद्स्लंडए पिट्दे तस्स उक्किस्सिया हाणी।

### एवमुकस्ससामित्तं समनं।

२३६. जहण्णए पयदं । दृविहो णिहे सो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण जह वह ही कस्स ? अण्ण जो समऊण उक्षम्मिहिदं वंभगणो उक्षम्मिकिलेसं गंतृण उक्षम्सिहिदं पबद्धो तस्स जह वह ही । जह वहाणी कम्म ? अण्ण व श्रथ- हि।दृक्खण्ण । एगद्रत्थ श्रवहाणं । एवं सत्तमु पुढशीमु सव्वतिग्वित्य-सव्वमणुस-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-सव्वण्हंदिय०-सव्वविगिलिदिय-सव्वपंचिदिय-छकाय-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि-ओगलि०-श्रोगलियमिस्स-वेउव्विय ०-वेउ०मिस्स० कम्मइय-तिण्णिवेद०-चत्तारिकमाय-तिण्णि अण्णाण-अमंजद०-चक्सु०-अचक्सु०-पंचले०-भविस०-अभविस०-मिच्छादि०-सण्णि ०-असण्णि ०-श्राहारि-श्रणाहारि नि ।

वन्धीकी विसंयोजनाके समय प्रथम स्थितिकाण्डकदा चात करता है उसके उन्हृष्ट हानि होती हैं। अथवा कपायकी उपशमना करनेवाले उपशमसम्बन्दिष्ट जीवके प्रथमस्थितिखण्डका चात करनेपर उन्हृष्ट हानिके स्वामित्वका कथन करना चाहिये, क्योंकि उपशमसम्बन्दके कालके भीतर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाका पच स्वीकर नहीं किया है। अथवा इसका भी जान कर ही कथन करना चाहिये, क्योंकि उपशमअणीमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोके स्थितिचातकी संभावना नहीं पाई जानी है। सम्यग्मिण्यादृष्टियोमे उन्हृष्ट हानि किसके हाती हैं १ मोहनीय कर्मकी उन्हृष्ट स्थितिकी सत्तावाला जो कोई एक जीव उन्हृष्ट स्थितिखण्ड हा चात करता है उसके उन्हृष्ट हानि होती है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

§ २३६. अब जबन्य स्वामित्वका प्रकरण है। उमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— आंचिनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेमे आंचकी अपेचा ज्ञचन्य वृद्धि किसके होती है १ जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधता हुआ उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है ऐसे किसी एक जीवके जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती है १ अधः- स्थितिक च्यसे किसी एक जीवके जघन्य हानि होती है। नथा इनमेसे किसी एकमे अवस्थान होता है। इसी प्रकार सानों पृथिवियोके नारकी, सभी निर्यंच, सभी मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर महस्त्रार स्वर्ग तकके देव,सभी एकेन्द्रिय,सभी विकलेन्द्रिय,मभी पंचेन्द्रिय, छहों कायवाले, पाचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों बदयाले, क्रोधादि चारों कपायवाले, तीनों अज्ञानी, असंयत, चनुदर्शनवाले, अचनुदर्शनवाले, कृष्णादि पांच लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्याहिष्ट, संज्ञी, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंक जानना चाहिये।

१२४० ब्राणदादि जाव सव्वहसिद्धि ति जह० हाणी कस्स ? अण्ण० अधिहिद्क्खिएण । एवभाहार०-ब्राहारिमस्स-अवगद्०-अकसा०-आभिणि०-सुद्० ब्रोहि०-मणपज्ज०-मंजद्०-सामाइय - छेट्रो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद्०-संजदा-संजद्०-ओहिदंस०-सुक्क०-सम्माइहि-खइय०-वेद्य०-उवसम०-सासण०-सम्मामि-च्छादिहि ति ।

# एवं सामित्राणुगमा समत्तो ।

् १४१ अप्पावहुअं दुविहं-जहण्णग्रुक्कम्मं च । उक्कम्सं पयदं । दुविहो णिहं सो-श्रोघेण श्राटंसेण य । तत्थ श्रोघेण सन्वत्थोदा उक्किस्सया हाणी । वट्टी श्रवहाणं च दो वि दुन्लाणि विसेमाहियाणि । एवं सत्तम् पुहवीमु तिरिक्ख-पंचि० तिरिक्खिन्यि तिरिक्खिन्याचि । एवं सत्तमु पुहवीमु तिरिक्ख-पंचि० तिरिक्खिन्याचि० निर्माणि । एवं सत्तमु पुहवीमु तिरिक्खिन्याचि० तिरिक्खिन्याचि० निर्माणि । एवं सत्तमु पुहवीमु तिरिक्खिन्य तिरिक्खिन्य तिरिक्खिन्य विच० निर्माणि । प्वं सत्तमु पुहवीमु तिरिक्खिन्य तिरिक्खिन्य तिरिक्खिन्य विच० निर्माणि विच० न

२४२ पंचि०तिरिक्त्वत्रपज्ज० सन्वत्थोवा उक्क० वडढी श्रवद्वाणं च । हाणी संखेजागुणा। एवं पणुसअपज्ज०-सन्विविग्तिर्दय-पंचिद्यअपज्ज०-तसअपज्ज०-श्रोरालि-

§ २४० त्रानत कल्पसे लग्ग्र सर्वार्थीसिद्धतकके देवोंमे जघन्य हानि किसके होती है १ अधःस्थितिके त्यमे किसी एकके होती है । इसी प्रकार आहारककाययोगी. आहारकिमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकपायी. आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अविध्वानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनामंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, सृत्मसांपरायिकसंयत, यथान्यातसंयत, संयतासंयत, अविध्दर्शनवाले, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्द्यष्टि, त्वायिकसम्यग्द्यि, वेदक-सम्यग्द्यि, उपश्रमसम्यग्द्यद्दि, सासादनसम्यग्द्यद्व और सम्यग्निक्यादिष्ट जीवोके जानना चाहिये।

#### इस प्रकार स्वामित्वानुगम समाप्त हुआ।

\$ २४१. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—ज्ञचन्य और उत्कृष्ट । उनमेसे उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंचिनिर्देश और आदेशनिर्देश । इनमेसे आंचिकी अपेचा उत्कृष्ट हानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं । वृद्धि और अवस्थान इन दोनोंवाले जीव समान होते हुए भी उत्कृष्ट हानिवाले जीवोंसे विशेष अधिक हैं । इसी प्रकार सानों पृथिवियोंके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रक, मनुष्यित्रक, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचो वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनो वेदवाले, क्रोधादि चारो कपायवाले, तीनों अज्ञानी, असंयत, चनुदर्शनवाले, अचनुदर्शनवाले, कृष्णादि पाँच लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिश्याहिष्ट, संज्ञी और आहारक जीवोंक जानना चाहिये।

§ २४२. पंचेन्द्रिय निर्यक्व अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानवाले जीव सवसे थोड़े हैं । इससे उत्कृष्ट हानिवाले जीव संख्यातगुरो हैं । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, सभी विकलेन्द्रिय,

# यमिस्स-वेउव्वियमिस्स-असण्णि ति ।

२४३ स्त्राणदादि जाव सब्बद्द० णित्थ अप्पावहुगं । एवमाहार०-आहार-मिस्स०-स्रवगद्०-अकसा०-स्राभिणि०-सृद् --स्रोहि०-मणपज्ज०-संजद्०-सामाइय-ह्रेटो०-परिहार०-सुहुम० - प्रहाक्खाद्०-संजदामंजद०-ओहिटंस०-सुक्क०-सम्माद्दि०--ख्वाद्य०-वेटय०-उवसम०-सामण०-सम्मामिच्छादिद्विति ।

े २४४, एइंटिएसु सब्बत्थेखा वर्डी अवद्याणं च । हाणी असंखेळागुणा । एवं पंचकाय ० । कम्मइय ० सब्बत्थोवमबद्दार्ण । वड्डी असंखेळागुणा । हाणी असंखेळा-गुणा । एवमस्पादार ० ।

## एवमुक्कम्सप्पावहुअं समत्तं ।

२८५. जहण्णए पयदं । दुविहो सिह सी—श्रोघेस श्राटेसेण य । तत्थ ओघेस जहण्णिया बट्टी हाणी श्रवहाणं च तिष्णि वि तुल्लाणि । एवं णेद्व्वं जाव अणाहारए नि । श्राणटादिसु णन्धि श्रप्पावहुअं, एगपटनादो ।

### एवं पदणिक्खेवो समत्तो ।

पंचेिन्द्रय अपर्याप्तक, त्रम अपर्याप्तक, ओटारिकिनिश्रकाययोगी, वैक्रियिकिमिश्रकाययोगी श्रीर असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

् २४३. आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोके अल्पबहुत्व नहीं है। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकिकाययोगी, अपनातवेदी, अक्षायी, आभितिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अपविज्ञानी, मनःपर्ययञ्जानी, संयत, सामाधिकसंयत, छेदीपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, स्त्मसापराधिकसंयत, यथाल्यातसंयत, संयतासंयत, अविदर्शनवाले, शुक्तलेक्यावाले, सम्यग्हिष्ट, जायिकसम्यग्हिष्ट वेदकसम्यग्हिष्ट, उपञमसम्यग्हिष्ट, सामादनसम्यग्हिष्ट और सम्यग्निध्वाहिष्ट जीवोके जानना चाहिये।

्र २४४. सभी एकेन्द्रियोमे उत्कृष्ट पृद्धि और अवस्थानवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे उत्कृष्ट हानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सभी पाँचो स्थावरकाय जीवोके जानना चाहिये। कामण्काययोगियोमे अवस्थानवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे वृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इससे हानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इससे प्रकार अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पवहुत्व समाप्र हुआ।

इस प्रकार पद्नित्तेष समाप्त हुआ।

§ २४६. बहि त्ति तत्थ इमाणि तेरस श्राणियोगद्दराणि—सम्रक्कित्तणादि जाव अप्पाब हुए ति । सम्रक्कित्तणाणु० दुविही णिद्देसी—ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण तिण्णि बही तिण्णि हाणी असंखेजगुणहाणी अवद्दाणं च श्रात्थि । एवं मणुसतिय— पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण्ण०-पंचविंच०-कायजोगि०-श्रोरालि०-तिण्णिवेद-चत्तारिकसाय-चक्खु०-अचक्खु०-भवसि०-सण्णि०-आहारण् ति ।

२४७, आदेसेण णेरइएसु मोह० अत्थि तिष्णि वड्डी तिष्णि हाणी अबद्वार्णं च । एवं सत्तसु पुढवीसु सञ्वतिरिक्ख-मणुमअपज्ज-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचि०अपज्ज०-तसत्रपज्ज०-श्रोरालियमिस्स-वेउन्विय०-वेउ०मिस्स०-कम्मइय-तिष्णि-अण्णाण-असंजद०-पंचले०-अभव०-मिच्छादि०-असण्णि०-श्रणाहारए ति ।

ई २४८ः त्राणदादि जाव सव्वह० माह० श्रित्थ श्रसंखेज्जभागहाणी संखेजभागहाणी। एवं परिहार०-संजदासंजद०-उवसमसम्माइहि ति । एइंदिएसु अत्थि भ्रमखेजभागवड्डी तिष्णि हाणी श्रवहाणं च । एवं पंचकाय०। विगलिदिएसु श्रित्थ दो वड्डी तिष्णि हाणी श्रवहाणं च । श्राहार०-श्राहारमिस्स० अत्थि असंखे०-भागहाणी। एवएकमा०-जहाक्खाद०-सासण०। अवगद० अत्थि श्रसंखेजभागहाणी [संखेजभागहाणी] मंखे०गुणहाणी। एवं सहुमसांप०-वेदय०-सम्मामि०दिहीणं।

\$ २४६ अत्र वृद्धि अनुयोगद्वारका प्रकरण है । उसके कथनमें समुर्कार्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार हैं । उनमेसे समुत्कीर्तनानुगमकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—आंघिनिट्टेंश और आदेशनिट्टंश । उनमेंसे आंघर्का अपेद्या तीन वृद्धि, तीन हानि, असंख्यात-गुणहानि और अवस्थान हैं । इसी प्रकार मनुष्यित्रक, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पांचों मनायागी, पांचों वचनयागी, काययागी, औदारिककाययोगी, तीनों वेदवाले, कांघादि चारों कपायवाले, चत्तुदर्शनवाले, अचतुदर्शनवाले, मन्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ २४७. आदेशकी अपेन्ना नारिकयों में मोहनीय कर्मकी तीन दृद्धियाँ, तीन हानियाँ और अवस्थान हैं। इसी प्रकार सातो पृथिवियों के नारकी, सभी तिर्यक्ष, मनुष्यअपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियों से लेकर सक्तार कल्पतकके देव, पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक, त्रम अपर्याप्तक, आदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्षित्यककाययोगी, वैक्षित्यकाययोगी, वैक्षित्यकामिश्रकाययोगी, कामंणकाययोगी, तीनों आज्ञानी, असंयत, कृष्णादि पाँच लेक्ष्यावाले, अभव्य, मिथ्याददृष्टि, असंज्ञा और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ २४८. आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीय कर्मकी ऋसंख्यात भागहानि और संख्यातभागहानि है। इसी प्रकार परिहारिवयुद्धिसंयत, संयतासंयत और उपशम-सम्यग्टिष्ठ जीवोंके जानना चाहिये। एकेन्द्रियोमें ऋसंख्यातभागवृद्धि, तीन हानियाँ और अवस्थान हैं। इसी प्रकार पाँचों स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये। सभी विकलेन्द्रियोमें दो वृद्धियाँ, तीन हानियाँ और ऋवस्थान हैं। ऋहारक्काययोगी और ऋहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ऋसंख्यातभागहानि है। इसी प्रकार ऋकपायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्टिष्ठ जीवोंके जानना चाहिये। ऋपगतवेदी जीवोंमें असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुण्हानि

आभिणि०-सुद्-त्र्योहि० अत्थि चत्तारि हाणीत्रो । एवं मणपज्ज०-संज्ञद०-सामाइय-द्वेदो०-त्र्योहिदंस०-सुक्कलेस्सि०-सम्मादिही०-खइय० ।

### एवं समुक्तित्तणा समता।

है। इसी प्रकार स्ट्मसोपरायिकसंयत, वेदक्सस्यग्दष्टि और सम्यग्निध्याद्दष्टि जीवोके जानना चाहिये। श्राभितिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोमे चार हानियाँ हैं। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपम्थापनासंयत अवधिद्रशंनवाले, शुक्रलेश्या-वाले, सन्यग्दिष्टि और चायिकमस्यग्दिष्ट जीवोके जानना चाहिये।

विशोपार्थ-पद्निन्नेपमं उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि, उन्कृष्ट त्रायस्थान, जयन्य वृद्धि, जवन्य हानि और जवन्य अवस्थानमा कथन किया जाता है। किन्तु वे उत्कृष्ट बृद्धि आदि एक रूप न होकर अनेकरूप होते हैं । इसका बान पद्निवंपमें न होकर बुद्धि अनुयोगद्वारमें होता है. त्रतः पदनित्रेष विशेषको बृद्धि वहते हैं समुरकार्तना, स्वामित्व, काल, श्रन्तर, नाना जीवोंकी अपेता भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, चेत्र स्पर्जन कान, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व इसके यं तेरह अनुयागद्वार है । इनमेसे पहले समन्कीर्तनाका विचार किया गया है । इसकी अपेजा आघसे श्रमंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धिः, संख्यात गुणवृद्धि ये तीन वृद्धिया; श्रमंख्यात भागहानि, संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि ये तीन हासियां और अपंख्यात गुणहानि तथा इनके अवस्थान होते हैं। विविद्यति स्थितिमें जो वृद्धि या हानि होती है वह जब नक उसके असंख्यातवें भाग प्रमाग रहनी है नव तक उसे श्रमंध्यान भागवीत या श्रमध्यान भागहानि कहते हैं। जब बह बृद्धि या हानि विवक्तित स्थितिके संख्या कि भागप्रमाण हो जाती है तब उसे संख्यात भाग-यदि और मंख्यान भागहानि कहने हैं । तथा जब वह बृद्धि याहानि विविचति स्थितिसे संस्थातगर्गी ादि या हातिरूप हो जाती है तब उसे संख्यात गुणवृद्धि या संख्यात गुणहानि कहते हैं। इसी प्रकार त्रसंख्यात गुण्हानिके सम्बन्धमें भी जानना चात्वि । यह त्र्यसंख्यात गण्हानि देवल अनिवृत्ति-तपकके ही होती हैं, अन्यत्र नहीं। अवस्थान मुगम है। यदि वृद्धियोंके वाद अवस्थान हुआ तो वह युद्धि सम्बन्धी अवस्थान कहलाता है और हानियोंके बाद अवत्थान हुआ तो वह हानि सम्बन्धी अवस्थान कहा जाता है । सनुष्य त्रिक आदि कुछ ऐसी मागगाएँ है जिनसे यह अोघप्र-रूपणा अविकल घटित हो जाती है अतः अकं कथनको औषके समान कहा । नारिकयोमे केवल असंख्यात गुण्हानि सम्भव नहीं, क्यो।क वर्तो अनिवृत्ति च्यक जीव नहीं पाये जाते । शेप सव सम्भव हैं, इसी बकार सातों नरकंक नारकः आदि मुलमें रिगाई हुई और भी मार्गणाएं हैं जिनमें यह व्यवस्था बन जाती है, खनः उनके कथनको सामान्य नार्राक्यो ह समान वहा । अनितकल्पसे लेकर मर्वार्थसिद्धितकके देवोमे उत्कृष्ट स्थिति अन्तःकोड्नकोडी सागर प्रमाण ही होती है और वह वहाँ उत्पन्न होनेके पहल समयसे लेकर उत्तरीत्तर घटनी ही जानी है, जो प्रकृतियोकी अनन्ता-नुबन्बी चतुष्ककी विसंयोजनाके समय संख्यातवें भागप्रमाण घटना है और रोप समयमे असंख्या-त्वे भागप्रमाण ही घटती है। अतः यहा दो हानिया ही कहीं। परिहारिक्शुद्धिसंयत, संयतासंयत् र्श्वार उपरामसभ्यादृष्टि जीवोंके इसी प्रकार जानना । एकेन्द्रियोंमे जघन्य स्थितिवन्य पन्यका असंख्यातवाँ भाग कम एक सागरप्रमाण और अबृष्ट स्थितिवन्ध एक सागर प्रमाण होता है, <sup>अतः</sup> यहां वृद्धिरूपसे असंख्यात भागवृद्धि ही सम्भव है, क्योंकि किसी जीवने यदि जवन्य स्थिति से उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्ध किया तो भी जबन्य स्थितिके स्प्रसंख्यातवें भाग की ही चृद्धि हुई। पर इनके ऋसंख्यात <u>गुणहा</u>निको छोड़ कर *शेष तीनो हानियां सम्भव* हैं, क्योंकि जो **संज्ञी**  \$ २४६. सामित्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो—श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ श्रोघेण तिरिण वड्डी श्रवहाणाणि कस्स ? भिच्छादिहिस्स । तिण्णि हाणीश्रो कस्स ? सम्मादिहिस्स भिच्छादिहिस्स वा । श्रमखे ॰ गुणहाणी कस्स ? आणियहिखवयस्स । एवं मणुसतिय-पंचिदय-पंचि ० पज्ज ० - तस-तसपज्ज ० - पंचमण ० - पंचवि ० - [ काय ० - ] श्रोराल्यि ० - तिण्णिवेद - चत्तारिकसाय - चक्खु ० - श्रचक्खु ० - भवसि ० - सण्णि ० - श्राहारिति ।

्र२५०, ब्रादेसेण णेर६एसु तिरिएए बड्डी अवडा० कस्स ? मिच्छादिहिस्स । तिष्णि हाणी कस्म ? सम्मादिहि० मिच्छादिहिस्स वा । एवं सव्वरिएस्य-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितय-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-वेडिव्वय०-श्रसंजद०-पंचित्सा ति ।

पंचेत्त्रिय जीय एकेन्द्रियामं उत्पन्न होता है उसके तीनो हानिया वन जाती है। पांचो स्थायरकायिक जीवोंमें भी इसी प्रकार जानना। विकलत्रयोंमें जयन्य स्थितिबन्धसे उन्कृष्ट स्थितिबन्ध पत्यके संख्यात्वें भागप्रमाण अधिक है अतः यहाँ बृद्धिरूपसे संख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि ये दो बृद्धियां ही सम्भव हैं, क्योंकि जब कोई विकलत्रय अपनी पूर्व समयमे वंधनेवाली स्थितिसे असंख्यात्वें भाग अधिक स्थितिको बांधता है तब उसके असंख्यात भागवृद्धि होती है और जब वह अपनी पूर्व समयमे वंधनेवाली स्थितिसे संख्यातभागवृद्धि होती है। तथा उनके तीन हा निथोंका खुड़ासा एकेन्द्रियोंके समान कर लेना चाहिये। घाहारककाययांग और आहारकमिश्रकाययांगमं मोहनीयकी स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है और यहाँ स्थितिकाण्डकघात न होकर अधःस्थितिगलनाके द्वारा एक एक निपंकका ही गलन होता है अतः यहां एक असंख्यात भागहानि ही सम्भव है। इसी प्रकार अकपायी, यथाख्यातसंयत और मासादनसम्बन्धि जीवोके जानना चाहिये। अपगतवेदमें असंख्यात भागहानि उपशमक और चत्रक किसी भी जीवके वन जाती है पर संख्यात भागहानि और संख्यात गुण्डानि चपकके ही दन्ती है। इसी प्रकार सूक्तमाम्परायिक संयत और वेदक सम्यव्हिष्ट जीवोक जानना। आमिनिवंधिकज्ञानी आदि जीवोक चारो हानिया सम्भव है यह म्वष्ट ही है।

इम प्रकार समुर्त्कार्तनानुयोगद्वार समाप्त हुआ।

\$ २४६ स्वाभित्यानुनमको अंग्ला निर्देश दो प्रकारका है—अंग्वनिर्देश और आदेश-निर्देश। उनमेसे आंग्रको अपेदा नीन बृद्धिया और अवस्थान किसके होते हैं ? मिण्यादृष्टिके होते हैं। तीन हानियाँ किसके होती है ? मध्यदृष्टि या मिथ्यादृष्टि जावके होती है। असंख्यात-गुणहानि किसके होती है ? अनिवृत्तिकरण्लपकके होती है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिक, पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्यानक, त्रम, त्रस पर्याप्तक, पाँची मनोयोगी, पाँची वचनयोगी, काययोगी, औदारिक-काययोगी, तीनों वेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, चतुदर्शनवाले, अचतुदर्शनवाले, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोके जानना चाहिये।

§ २५०. त्रादेशकी अपेत्रा नारिकयों में तीन वृद्धियां त्रीर त्रवस्थान किसके होते हैं ? मिण्याद्दिष्टिक होते हैं । तीन हानियाँ किसके होती हैं ? सम्बग्दिष्टि या मिण्याद्दिक होती है । इसी प्रकार सभी नारकी, सामान्य निर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यचित्रक, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव, वैकियिककाययोगी, असंयत और छुण्णादि पाँच लेश्यावाले जीवोंक जायना चाहिये।

- ६२५१. पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ञ० तिण्णि वड्डी श्रवद्वाराणि तिण्णि हाणीश्रो कम्स १ श्रण्णदरस्स । एवं मणुसश्रयज्ञ०-पंचिद्यश्रपञ्ज०-तसश्रपञ्ज०-तिण्णि श्रण्णाण-श्रभव-मिच्छादि०-श्रसण्णि नि ।
- २४२, त्राणदादि जाव उविष्मगेवज्ञ० श्रसंखेञ्जभागहाणी कस्स ? श्रण्णदग्म्म सम्मादिहि० मिच्छादिहिम्स वा । संखे०भागहाणी कस्स ? त्रणंतासुवधिचउक्कं विसंजीएंतम्स पढमसम्मत्तं पडिवज्जिमाणस्स वा । असुहिसादि जाव सब्वहिमिद्धि ति त्रसंखे०भागहाणी कम्म ? त्रण्णदग्म्स । सखे०भागहाणी कस्स ?
  त्रसंतापुर्वधिचउक्कं विसंजोएंतम्स ।
- २५३, एइंदिएसु ऋसंग्वेज्ञभागवट्टी निष्णिहाणी अवद्योणाणि कस्स १ ऋण्णद०। एवं पंचण्हं कायाणं। विगलिंदिएसु दो बट्टी निष्णि हाणी अवद्याणाणि कस्स १ ऋण्णद०।
- ् २५४. त्रोरालियिमस्म॰ निष्णिवड्डि-अवद्याणाणि कस्म ? मिच्छादिहिस्स । दोहाणियो कस्म ? मिच्छादिहिस्स । इसंखे॰भागहाणी कस्म ? सम्मादिदि मिच्छा-दिहिस्स वा । एवं वेउव्वियमिस्स०-कम्भइय०-अणाहारि ति । झाहार०-आहार-मिन्म॰ इसंखे॰भागहाणी कस्म ? अर्थाद्वदिं गालयमाणस्स । एवमकसा०-जहा-क्वाद०-सासण०दिहि ति ।
- ९ २५१. पर्चिन्द्रय तिर्थच अपयाप्तकोमे तीन बृद्धिया, अवस्थान और तीन हातियाँ किसके तिती है ? किसी एक जीव है होती है । इसी प्रभार मनुष्य अपर्याप्तक, पर्चिन्द्रिय अपर्याप्तक, बस अपर्याप्तक, तीनो खजानी, अभव्य, भिष्याहिष्ट खोर अजंजी जीवाके जानना चाहिये ।

§ २५३. एकेन्द्रियोमे असंख्यातभाराबृद्धि, तीन हानिया और अवस्थान किसके होते हैं ? किसी भी जीवके होते हैं । इसी प्रकार पांची स्थावरकायिक जीवोंक जानना चाहिये । विकले-न्द्रियोमे दो बृद्धियां, तीन हानियो और अवस्थान किसके होते हैं ? विसी भी जीवके होते हैं ।

§ २५४. श्रीदारिकमिश्रकाययोगियोमे तीन वृद्धियाँ श्रीर श्रवस्थान किमके होते हैं ? मिश्यादृष्टिके होते हैं । दा हानियाँ किमके होती हैं ? मिश्यादृष्टिके होती हैं । असंख्यात भागहानि किमके होती है ? सम्यग्दृष्टि या मिश्यादृष्टिक होती है । उसी प्रकार वैकियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोमे असंख्यात भागहानि किसके होती है ? अधःस्थित गलनाक द्वारा निजरा करनेवाले जीवके होती है । इसी प्रकार अकपायी, यथाख्यातसंयन श्रीर सासाइनसम्यग्दृष्टि जीवोंक जानना चाहिये ।

६२५५ अवगद्० असंखे०भागहाणी कस्स ? अण्णद्रस्स उवसामयस्स खवयस्स वा । संखे०भागहाणी संखे०गुणहाणी खवगस्स । आभिणि०-सुद्०-ओहि० तिण्णि हाणीओ कस्स ? अण्णद० सम्मादिहिस्स । असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्यिदक्खवयस्म । एवं मण्याज्ञ०-[ संजद्-] समाइय-च्छेदो०-ओहिदंस०-सम्माइहि ति ।

२५६ परिहार० असंखेळाभागहाणि-संखेज्जभागहाणीओ कस्स ? ऋण०। एवरि संखेज्जभागहाणी अणंताणुवंधिवियंजोएं तस्स दंसणितयक्खवंतस्स वा । एवं संजदासंजद० । सहुवसांपरा० असंखेळानागहाणी संखेभागहाणी संखेगुणहाणी कस्स ? ऋणादरस्स ।

६२५७. मुक्कले० तिण्णि हाणीओ कस्म ? सम्माद्दि० मिच्छाद्दिस्स वा । असंखे०गुणहाणी कस्म ? अणियद्विस्वययस्म । खइय० असंखेजभागहाणी कस्स ? अण्णद० । संखे०भागहाणी कस्स ? उवसानयस्स खबयस्स वा । संखेज्जगुण-हाणी कस्स ? खबयस्स । असंखेजजगुणहाणी कस्म ? श्रीघं ।

६२५८. उत्रसम० असंखेडजभागहाणी कस्म १ अण्णद०। संखेडज-भागहाणी कस्स १ ऋण्णद् अणंताणुर्वधि० विसंजोएंतस्स कसायोवसामगस्स वा ।

§ २५५. श्रवतानविद्यांमे असंख्यात भागहानि किसके हाता ह ? किसी भी अपशामक या चपक जीवके होती है। तथा संख्यात भागहानि ओर संख्यातगुण्हानि चपक जीवके होती है। श्रामिनविधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी ओर अविवज्ञानी जीवोमे तीन हानियाँ किसके होती हैं ? किसी भी सम्यग्हिए जीवके होती हैं। असंख्यात गुण्हानि किसके होती हैं ? श्रानिवृत्तिकरण चपकके होती हैं। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत सामायिकसंगत, छेदोपस्थापनासंयन, अविद्शानवाले और सम्यग्हिण्ट जीवोके जानना चाहिये।

हु २५६. परिहारविशुद्धिसंयतों मे असंख्यात भागहानि और संख्यात भागहानि किसके होती है। किसी भी जीवके होती है। परन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात भागहानि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले जीवके या तीन दर्शनमाहनीयकी चपणा करनेवाले जीवके होती है। इसी प्रकार संयतासंयत जीवोके जानना चाहिये। सूक्ष्मसांपरायिक संयतों असंख्यात भागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुण्हानि किसके होती हैं? किसी भी जीवके होती है।

§ २५७. शुक्ललेख्यावाले जीवोमं तीन हानियां किसके होती हैं ? सम्यग्हिष्ट या मिथ्याहिष्ट जीवके होती हैं । असंख्यात गुणहानि किसके होती हैं ? अनिवृत्तिकरण ज्ञपकके होती हैं ।
ज्ञायिकसम्यग्हिष्योमें असंख्यातभागहानि किसके होती हैं ? किसी भी जीवके होती हैं । संख्यात
भागहानि किसके होती हैं ? उपशामक या ज्ञपक जीवक होती हैं । संख्यात गुणहानि किसके होती
हैं ? ज्ञपकके होती हैं । असंख्यातगुणहानि किसके होती हैं ? इसका कथन आपके समान है ?
अर्थात् असंख्यातगुणहानि अनिवृत्तिकरण ज्ञपकके होती हैं ।

§ २५≒. उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असंख्यातभागहानि किसके होती है ? किसी भी जीवके होती है । संख्यातभागहानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीको विसंयोजना करनेवाले या वेटय॰ असंखेडनभागहाणी संखेडनगुराहासी कस्स ? ऋण्यद्रस्म । संखेडनभाग-हाणी कस्स ? असीताणुर्वधि० विसंजीस्तम्य दंसणितयं खर्वेनस्स वा । सम्पापि० तिष्णिहाणीश्रो कस्म ? ऋण्यद० ।

# एवं मामिनागुगमा समनो ।

२५६. कालाणुगमेण द्विहो णिहे मो-श्रोघेण श्रादेमेण य । तत्थ श्रोघेण विश्वि बहुँ। केविचरं कालादो होंति ? जह० एगसमश्रो, उक्कः वे समया । ध्वमंबे० भागहाणी केविच० ? जह० एयसमश्रो, उक्कः तेविहसारुरोशमसदं अंतोमुहुत्तवभिहयं पिलिहो० असंखे०भागे० सादिरेगं । संखे०भागहाणी केव० ? जह० एगसमश्रो, उक्क० उक्कम्समंखेडजं दुरुवृणं । दो हाणी केव० ? जह० एगसमश्रो । अविह० ज० एगसमश्रो, उक्क० अंतोमु० । एवसचक्षु०-भविम०-तस-तमपज्ज० ।

कपायोका उपशम करनेवाले किसी भी जीवके होती है। देवकसम्बन्धियोभे अपंख्यातभागहानि और संख्यातमुग्रहानि किसके होती है ? किसी भी जायके होती है। संख्यात भागहानि किसके होती है ? अनन्तानुवन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले जीवके या तीन दर्शनमोहनीयका चय करनेवाले जीवके होती है । सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोभे तीनो हानिया किसके होती है ? किसी भी जीवके होती हैं।

#### इस प्रकार स्वासित्वानुगम समाप्त हुया ।

§ २५६, कालानुगमकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका है— स्रोविनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमें स्रोविकी अपेदा तीन बृद्धियोका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय स्रोर उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागडानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय स्रोर उत्कृष्ट काल अनुर्मुहर्न स्रोर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक एक सो जेसठ सागर है। सख्यात भगदानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दा कम उत्कृष्ट संख्यात साग प्रमाण है। संख्यातगुण्हानि और असंख्यातगुण्हानि इन दो हानियोका कितना काल है ? जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। इसी प्रकार अच्चुदर्शनवाल, सन्य, त्रस स्रोर त्रम पर्याप्तक जीवोके जानना चाहिये।

विशोषार्थ-जब कोई जीव अद्वाचय या सक्लेशन्यसे सक्तमके उपर एक समय तक असंख्यातवे भाग, संख्यातवें भाग या संख्यात्मुणी स्थितिको बहाकर बांधना है और दूसरे समयमे अल्पतर या अवस्थित स्थितिको प्राप्त करता है तब उसके असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। जब कोई एक जीव पहले समयमे अद्धान्त्रयसे और दूसरे समयमे संक्लेशन्यमे असंख्यात्वे भागप्रमाण स्थितिको बहाकर बांधता है तथा तीमरे समयमे अल्पतर या अवस्थित स्थितिबन्य करने लगता है तब उसके अमंख्यातभागवृद्धिका उन्हर काल दो समय प्राप्त होता है। जब कोई एक द्वीन्द्रिय जीव संक्लेशन्यमे एक समय तक संख्यात्वे भागप्रमाण स्थितिको बहाकर बांधता है और दूसरे समयमे मरकर तथा ब्रीन्द्रियोमें उत्पन्न हाकर पूर्व स्थितिको बांधता है

**९२६० ऋादेमेण णेरइएमु असंखे**ज्जभागवट्टी केव० ? जह० **एगस**मऋो, तब संख्यात भागग्रिक्ष हा उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त हाता है । अथवा जो तेशिक्ष्य जीव स्वस्थानमे संक्लेशचयसे एक समय तक संख्यान भागवृद्धि करके श्रौर दूसरे समयमे भरकर तथा चोइन्द्रियोंम उत्पन्न हांकर चौइन्द्रियोंके यांग्य जवन्य स्थितिबन्ध करता है उसके संख्यात भागवृद्धिका उन्द्रष्ट काल दो समय पाया जाता है। तथा जो एकेन्द्रिय एक मोड़ा लेकर मंज़ियोंमें उत्पन्न होता है उसके पहले समयमे ऋमंज्ञीके याग्य स्थिति बन्ध होता है जो कि एकेन्द्रियके स्थितिसत्त्रसे संख्यातगणा है स्त्रीर दूसरे समयने शरीरको महुण करके संज्ञोंके यांग्य स्थितवन्ध होता है जो कि श्रसंज्ञीके योग्य स्थितिबन्धसे संख्यानगुणा है अतः संख्यात गुणबृद्धिका उत्कृष्ट काल दी समय कहा है। ऋमंख्यान भागहानिका जबन्य काल एक समय है क्योंकि समान स्थितिको बांधनेवाले जिस जीवने एक समय तक पूर्व स्थितिसे असंख्यातवें भाग कम स्थितिका वन्ध किया और दूसरे समयमे पुनः सत्त्वके समात स्थितिका बन्ध करने लगा उसके असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय पाया जाना है। तथा ऋसंख्यान भागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्न और पत्यके असंकतात्रवें भाग व्यधिक एक सो बेसठ सागर है। उसका खुलासा इस प्रकार है-कोई मिथ्या-हृष्टि भागभूभिया, त्रायुमे परुयोपमका असंख्यातवाँ भाग शेप रहने पर उपशम सम्यवत्व की बहुए। कर संख्यात भागहानि कर, निध्यात्वको प्राप्त हो गया । उस समयगे असंध्यात भागहानि प्रारंभ हो गई। आयुके अन्तमे वह वेदक सम्यग्हिए हो गया और छवासठ सागर तक वेदक सम्यक्तिके साथ रहा । पुनः अन्तमु हूर्त वाल तक सम्यग्मिश्यात्यके साथ रहा और तदनन्तर वह पुनः वेदक सम्यग्हिष्ट हो गया और छ्यासठ सागर तक वेदक सम्यक्त्वक साथ रहा तथा अन्तमे इकतीस मागर की आयुवाले देवोमे उत्पन्न होकर मिध्यादृष्टि हो गया। तद्गन्तर वहांमे चयुत होकर मनच्योमें उपन्न हुन्या न्यार एक न्यन्तम् हुर्नके बाद मुजगार स्थितिका प्राप्त हो गया। इस प्रकार इस जीवके असंख्यात भागहानिका उत्कृष्टकाल श्रन्तर्सु हुर्न और पत्योपमके असंख्यातवें भागसे अधिक एक मी बेसठ मागर पापा जाता है। मुख्यातभागदानिका जबन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो कम उत्कृष्ट संख्यात समय प्रमाण है। इसका खुनासा इस प्रकार है-दर्शनमोहनीयशी चपुणामे या अन्यन्त्र जब पन्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकका पात होता है तब संख्यात भागहानिका जघन्य काल १व. समय पाया जाता है। तथा सुद्मसापरायिक जपकरे अन्तिम दो समय कम उत्कृष्ट संख्यात समय प्रमाण काल तक संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल जानना चाहिये । जो जीव सत्तर कोइ।कोड़ी प्रमाण स्थितिके संख्यात बहुभागका बात करता है उसके तथा अन्यत्र अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यात गुणहानि पाई जाती है अतः संख्यात गुणुहानिका जबन्य त्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा त्र्यनिवृत्तिकरणुत्तपक त्र्यनि-वात्तकरण गुणस्थानके संबंद भागमे स्थितिकांडक की अंतिम फालिक पतनके समय असंख्यात गुणहानि होती है, अतः अमंख्यात गुणहानिका भी जवस्य और उन्कट काल एक समय कहा । तथा अवस्थित स्थितिका जयन्य काल एक समय और उन्ह्रष्ट काल अन्तर्मु हुर्न है, क्योंकि, जो जीव एक समय तक अवस्थित स्थितिको प्राप्त होकर दृसरे समयमे भूजगार या ऋलातर स्थितिको प्राप्त हो जाता है उसके अवस्थित स्थिति एक समय तक ही पाई जाती है नथा जो लगातार श्रन्तर्मु हूर्त काल तक अवस्थित स्थितिके साथ रहकर मुजगार या अल्पतर स्थितिको प्राप्त होता है उसके अवस्थित स्थितिका अन्तर्सुहूर्त काल पाया जाता है । अचनुदर्शती, भव्य, त्रस बीर त्रसपर्याप्तक जीवों के यह त्र्याच प्रकारणा त्र्यविकल वन जाती है, त्र्यनः उनके कथनको त्र्याचके

§ २६०. आदेशकी अपेत्ता नारिकयोंमें असंख्यातभागवृद्धिका कितना काल है ? जघन्य

उक्क० वे समया । दो बड्डी० दो हाणी० केव० ? जहण्युक्क० एगसमञ्चो । असंखे०भागहाणी के० ? ज० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरीवमाणि देस्णाणि । अर्वाद्द० के० ? जह० एगसमञ्चो, उक्क० अंतोमुहृत्तं । एवं सञ्चणेरइ० । णविर असंखेज्जभागहाणीए उक्कस्स० सगसगुक्कस्सिंहिदी देसूणा ।

२६१, तिरिक्खंसु तिष्णि वड्ढी संखेजनगुणहाणी अविहि० ओघं । असंखे० भागहाणी ज० एगममओ, उक्कः तिष्णि पिट्टिश्विमाणि सादिरेयाणि । दंखेजज-भागहाणी जहएणुक्क० एगममओ। एवं पंचिदियतिरिक्खतियस्म । णविर संखेजज-थागबिट्टि-संखेजजगुणबट्टीणं जहण्णुक्क० एगसमुखो । पंचिदियतिरिक्ख्यप्रज्ज० विष्णिबिट्टि-दोहाणि-अबिटिदाणं णिरस्रोयभंगो । असंखेजजभागहाणी के० १ जह० एगसमुखो, उक्क अंतोसुहुनं । एवं मणुसुत्रपञ्ज० । मणुमतिय० पंचिदियतिरिक्ख-वियमंगो । णविर संखेजजभागहाणी असंखे०गुणहाणी अर्थां।

करा एक समय और उत्कृष्ट वाल दो समय है। दो वृद्धियों और दो हानियोंक कितना काल है ? जवन्य खाँर उत्कृष्ट काल एक समय है। अमंख्यातभागद्दानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय छो। अमंख्यातभागद्दानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट कात कुछ कात अन्तर्भु हुते हैं। अवस्थितिकार सभी नारिक्यों के जानना चालिये। तनी विशेषना है कि सर्वत्र असंख्यातभागद्दानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण होता है।

§ २६४. तियँचोमे नीन बृद्धियो संख्यानगुण्हानि और अवस्थितविभक्तिका काल श्रोधके समान है। असंख्यातभागहानिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पर्ण है। तथा संख्यातभागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार पचेन्द्रियतियँच विकंक तानना चाहिये। इतनी विजेतता है कि इनके संख्यातभागदृद्धि श्रोर संख्यात गुण्युद्धि का जवन्य और उत्कृष्ट कान एक समय है। पंचेन्द्रिय तिर्यच अपयाप्तिकों में तीन रिद्यों, हो हानियों और अस्थितियभिक्तिका काल सामान्य नारिक्योंक समान है। तथा असंख्यातभागहानिका कितना काल है १ जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्भृहृत है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकों के जानना चाहिये। तथा मनुष्य विकंक पंचेन्द्रिय तिर्यच विकंक समान काल है। इतनी विशेषता है कि इनके संख्यात भागहानि श्रोर असंख्यातगुण्हानिका वाल खोच समान है।

विशोपार्थ— असंख्यान भागवृद्धि अद्वाचय और संक्लेशचय दोनो से प्राप्त हो सकती है किन्तु संख्यानभागवृद्धि और संख्यान गुण्यृद्धि केवल संक्लेशचयमे ही प्राप्त होती है अतः नारिकयों असंख्यात भागवृद्धिका जयन्य काल एक समय और उन्कृष्ट काल दो समय तथा अन दो वृद्धियोंका जयन्य और उन्कृष्ट काल एक समय वन जाता है। इसी प्रकार संख्यात भागदानि और संख्यातगुण्हानि अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय ही होती है अतः इनका जयन्य और उन्कृष्ट काल एक समय कहा। नरकम असंख्यात भागहानिका जयन्य काल एक समय आयक समय आयक समय आयक समय विति कर लेना चाहिये। जिस नारकीने नरकमे अन्त्र होनेके अन्तर्भ हुने काल वाद वेदक समयवन्य को प्राप्त कर लिया है और जब आयुमे अन्तर्भ हुने काल

 ९ २६२. देव० तिण्णि वट्टी दो हाणी अविद्याल णिरश्रोधं । अमंखे०भागहाणी के॰ १ ज० एगसमञ्रो, उक्क॰ तेत्तीमं सागरोवर्यााण । भवण०-वाण०-जोइसि० एवं चेव । णवरि असंखे॰भागहाणी के०? ज० एगसमओ, उक्क॰ सगुक्कस्स-हिटी देमुणा । सोहम्बादि जाव सहस्सार् नि एवं चेव । णवरि असंखे०भागहाणी के० ? जह० एगसमञ्जो, उक्क० सग०द्विदी | त्र्याणदादि जाव उवरिमगेवज्ज त्ति त्र्यसंखेज्जभागहाणी के० ? ज० अंतोमु०, उक्क० सगक्कस्सिट्टिद्रो । संखेज्जभागहाणी के० ? जहण्णुक्क० एगसमओ । ऋणुहिसादि जाव सव्वद्दसिद्धि त्ति एवं चेव ।

समओ, उक्क व समया। असंखेजनभागहाणी के० ? जह एगसमओं, उक्क०

होत्र रह गया तब उसका त्याग किया है उसके अपसंख्यात भागहानिका उल्हुष्ट काल छुछ कम तैनीस सागर पात्रा जाना है। अप कथन सुगम है। प्रथमादि नरकोंमें असंख्यानभागहानिकं उत्कृष्ट कालको छोड्कर शेप कथन इसी प्रकार जानना । किन्तु असंख्यानभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण जानना । यहां कुछ कमसे भवके प्रारम्भका श्चन्तम् हित काल जेना चाहिये । जो नियच तीन पत्यकी श्रायुके साथ उत्तम भोगमूमिमे उत्पन्न होना है उसके असंख्यातभागहानिका उत्क्रप्ट काल साधिक तीन पत्य प्राप्त होता है। पंचेन्द्रिय तियँच त्रिककं संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धि संक्लेशच्यसे ही प्राप्त होगी ऋतः यहां इनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। लब् यपयात्र पंचेद्रिय नियंचका उत्कृष्ट काल अन्तर्भु हुन वहा । श्रोघसे संय्यान भागहानि श्रोर असंख्यान गुणहानिका जो उन्हुष्ट काल कहा है वह मनुष्य पर्याय में ही बनता है अतः मनुष्यत्रिक के उक्त दो हानियंका काल आधिक समान कहा। इस प्रकार श्रोपकरपणाका श्रोर नरकादि तीन गतियोका जो खुलासा किया है उमीमें आगे भी मार्गणाओं में जहाँ जिननी हानि और बुद्धियाँ मम्बन हो उनके कालका खलामा हो जाता है अत. आगे नहीं लिया जाता है। हो जहाँ कुछ विशेषता होगी वहाँ अवस्य निदंश कर देगे।

६२६२ देवोमे तीन वृद्धियो, दो हानियो श्रोर श्रवस्थितविभक्तिका काल सामान्य नारिकयोक समान है। तथा असंख्यातभागहानिका कितना काल है १ जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल तेसीस सागर है। भवनवासी, ज्यन्तर श्रीर ज्योतिषी देवोके भी इसी प्रकार जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनके ज्यसंख्यातभागहानिका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम ऋपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । सीधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतक भी इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यात भागहानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। आनत कल्पसे लेकर उपरिम प्रैंबेयक तक के देवोमे असंख्यात भागहानि का कितना काल है ? जयन्य काल अन्तर्महर्त आँर उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थित-प्रमार है। संख्यातभागहानिका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। श्रनुदिशमें लंकर मर्वार्थमिद्धितकके देवोके इसी प्रकार जानना चाहिये

🖔 २६३. इन्द्रिय मार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोमें ऋमंख्यात भागवृद्धिका कितना काल हैं ? जबन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय है । श्रसंख्यात भागहानिका कितना पलिदो॰ असंखे०भागो । दो हाणी केव० ? जहएणुक्क० एगसमओ । अविह० श्रोगं । एवं बादरेइंदिय-बादरेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-मृहुमेइंदिय-सृहुमेइंदियपज्जत्ता-पज्जत्ताणं । स्विरि असंखे०भागहाणी के० ? जह० एगसमश्रो, उक्क० बादरे-इंदिय-सृहुमेइंदिएसु पलिदो० असंखे०भागो । वादरेइंदियपज्जत्तेसु संखेज्जाणि वस्स-सहस्साणि । अण्णत्थ अंतोसुहुत्तं ।

१६४. विगलिटिएसु असंखेजनभागवड्ढी खोघं। संखे॰भागवड्ढी दो हाणी॰ अविद्वाणं िएरख्रोघभंगी। असंखेजनभागहाणी केव॰ ? जह॰ एगसमओ, उक्त॰ सगिटिदी। पंचिदिय॰-पंचि॰पज्न॰ मणुसभंगो। एावरि असंखे॰भागहाणी॰ खोघं। पंचिदियअपज्न॰-तसग्रपज्न॰ पंचिदियितिरिक्खअपज्नतभंगो। एावरि तसग्रपज्न॰ संखे॰भागवट्ढी संखे॰गुणवट्ढी॰ खोघं।

३२६५. पंचकाय-वादर-सुहुमारामेइंदियभंगो । तेसिं पज्जत्तापज्जत्ताणमेवं चेव । एवरि असंखे०भागहाराणि० के०१ ज० एगसमश्री, उक्क० सगहिदी ।

काल है १ जधन्य काल एक समय ऑर उन्कृष्ट काल पत्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। हो हानियोंका कितना काल है १ जबन्य ओर उन्कृष्टकाल एक समय है। तथा अवस्थितविभक्तिका काल आधिके समान है। इसी प्रकार वाहर एकेन्द्रिय, वाहर एकेन्द्रिय पर्याप्त, वाहर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूच्म एकेन्द्रिय, सूच्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, सूच्म एकेन्द्रिय, सूच्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, अर्थ एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातभागहानिका कितना काल है १ जयन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल वाहर एकेन्द्रिय और सूच्म एकेन्द्रियोंमें पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बाहर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंमे संख्यात हजार वर्ष है तथा इनके अतिरिक्त शेष वाहर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूच्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोमें अन्तर्मुहर्त काल है।

§ २६४. विकलेन्द्रियोमे श्रमंत्यात भागवृद्धिका काल श्रोघके समान है। संख्यात भागवृद्धि, दो हानि श्रोर श्रवस्थितविभक्तिका काल मामान्य नारिक्यों के समान है। तथा असंख्यातभागहानिका कितना काल है? जवन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल श्रपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण् है। पंचिन्द्रिय श्रोर पंचेन्द्रिय पर्याप्रकों के मनुष्यों के समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातभागहानिका काल ओघके समान है। पंचेन्द्रिय अपर्याप्रक श्रोर त्रस श्रपर्याप्रकों के पंचेन्द्रिय निर्यक्ष श्रेपर्याप्रक श्रोर त्रस श्रपर्याप्रकों के पंचेन्द्रिय निर्यक्ष श्रेपर्याप्तकों के समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि त्रस श्रपर्याप्रकों के संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातगुण्वृद्धि का काल श्रोधके समान है।

§ २६५ पांचों स्थावरकाय, पाँचो स्थावरकाय वादर और पाँचो स्थावरकाय सून्म जीवोके एकंन्द्रियोके समान जानना चाहिये। तथा पाँचों स्थावरकाय वादर श्रीर सून्मोंके जो पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त भेद हैं उनके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यात भागहानिका काल कितना है ? जवन्य काल एक समय श्रीर उन्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। २६६. पंचमण०-पंचवचि० असंखेज्ञभागहाणी० अविट० के० १ जह० एगसम्आ्रो, उक्क० अंतोमु० । संखे०भागहाणी० ओघं । संसा० मणुसभंगो । कायजोगि० तिण्णि बही० तिण्णि हाणी० अविट० ओघं । असंखे०भागहाणी एइंदियमंगो । ओराल्ठि० मणजोगिभंगो । णविर असंखे०भागहाणी० के० १ जह० एगसम्ओ, उक्क० वावीसवस्समहस्साणि देस्णाणि । ओराल्ठियमिस्स० संखे०भागवट्टी अविट० ओघं । संखे०गुणवट्टी तिण्णि हाणी पंचि-दियअपज्जतमंगो । वेउव्वियकायजोगि० तिण्णि बट्टी तिण्णि हाणी अविट० णिर-ओघं । णविर असंखेजभागहाणी जह० एगसम्ओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । एवं वेउव्वियमिस्स० । आहार० असंखे०भागहाणी के० १ जह० एगसम्ओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । एवमकसाय० - जहाक्खाद० । आहारमि० असंखे०भागहाणी के० १ जह० एगसम्ओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । एवमकसाय० - जहाक्खाद० । णविर संखेजभागहाणी जहरण्युक्क० अंतोमुहुतं । एवमकसाय० - जहाक्खाद० । णविर संखेजभागहाणी जहरण्युक्क० एगस० । कम्मइय० दो वट्टी दो हाणी के० १ जहण्युक्क० एगसमओ । असंखे०भागवट्टी हाणी ज० एगसमओ, उक्क० वे समया । अविट० ज० एगसमओ, उक्क० तिण्णि समया ।

<sup>§</sup> २६६. पाँचों मनोयोगी और पाँची वचनयोगी जीवोंमे असंख्यातभागहानि श्रीर श्रवस्थितका काल कितना है ? जबन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु इत हैं । तथा संख्यातभागहानिका काल ओवके समान है। तथा शेवका काल मनुष्यों के समान है। काययोगी जोबोमे तीन बृद्धियां, तीन हानियां और अबस्थितविमिक्तिश काल स्रोबके समान है। तथा श्चमंख्यातभागहातिका काल एकेन्द्रियोके समात है। श्रोदारिककाययोगियोंके मनोयोगियोंके समान जानना चाहिये । इतनी विशवता है कि उनके असंख्यातभागहानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट कात कब कम वाईम हजार वर्ष है। औदारिक्रीमश्रकाययो-गियोंमे संख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका काल आंघके समान है। तथा संख्यानगुराबद्धि स्रोर नीन हानियोंका काल पंचेन्द्रिय स्रपर्याप्तकोंके समान है। वैक्रियिककाययोगियोमे तीन बृद्धियो, तीन हानियों त्र्योर त्र्यस्थितविभक्तिका काल सामान्य-नारिकयों के समान है। इतनी विजेपना है कि इनके असंख्यात भागहानिका जबन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुन है। इसी प्रकार येकियिकमिश्रकाययोगियोक जानता चाहिये। श्राहारककाययांगियोमे श्रमंख्यातनागहानिका कितना काल है। जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काज त्र्यन्तर्म हुर्न है। इस्ना प्रकार अकपायी त्र्यीर यथाख्यानसंयत जीवों के जानना चाहिये। आहारकमिश्रकाययांगियांमे असंख्यातमागहानिका कितना काल है १ जघन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हुर्त है। इसी प्रकार उपक्रमलम्यग्दृष्टियांकं ज्ञानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके संख्यातमागहानिका जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। कार्मणकाययोगियोंमें दो बुद्धियों और दो हानियोंका कितना काल है ? जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा त्रसंख्यानभागवृद्धि और त्रसंख्यानभागवृत्तिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। तथा अवस्थितविभक्तिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है।

- १२६७. वेदाणुत्रादेण इत्थि॰ तिण्णि बहुी० दो हाणी० अविष्ठि णिरस्रोघं। असंखे०भागहाणी के॰ १ ज० एगसमस्रो, उनक० पणवण्णपिलदोवमाणि देमूणाणि। असंखे०गुणहाणी के॰ १ जहण्णुक्क॰ एगसम्भो। एवं पुरिस०। णविर स्रमंखे०भागहाणी ओघं। णवुंस० तिण्णि वड्ढी संखेज्जगुणहाणी स्रमंखे०गुणहाणी अवद्वा० स्रोघं। संखे०भागहाणी जहरुणुक्क० एगसम्भ्रो। असंखे०भागहाणी० जह० एगसम्भ्रो, उनक० तेत्तीसं सागरोवमाणि देमूणाणि। स्रवगद० असंखे०भागहाणी के० १ जह० एगसम्भ्रो, उनक० वेतीसं अगरोवमाणि देमूणाणि। स्रवगद० असंखे०भागहाणी
- ६२६=. चत्तारिकसा० तिष्णि वड्ढी तिष्णि [हाणी] असंखेज्जगुणहाणी श्रवहाणं णवुंसगमंगी। णविर श्रसंखे०भागहाणी के०१ जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। टोभकमाय० असंखे०भागहाणी श्रोघं।
- २६६. मदि-सुद्त्र्यण्णाण० तिष्णि वर्डी तिष्णि हाणी अवटा० तिरिक्खोघं। णविर श्रमंखे०भागहाणी जह० एयसमञ्चो, उक्क० एक्कत्तीमं सागरात्रमाणि सादि-रेयाणि । [एवं निच्छाइटीणं ।] विद्दंग० सत्तनपुढविमंगी । णविर श्रमंखे०भागहाणी जह० एगसमञ्चो, उक्क० एक्कत्तीसं सागरावमाणि देमुणाणि ।
- \$ २६७. वंदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रोवंदियोमं तीन पृद्धियों, दां हानियो और अवस्थित विभक्तिक काल सामान्य नारिकयों के समान है। तथा असंख्यात भागहानिका कितना काल है ? जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। तथा असंख्यातगुणहानिका कितना काल है ? जवन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। इसी प्रकार पुरुपंवदियों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यात भागहानिका काल ओषके समान है। नपुंमकवेदियों तीन बृद्धियों, संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि और अवस्थितिभक्तिक काल ओषके समान है। तथा संख्यातभागहानिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा असंख्यातभागहानिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम तेनीस सागर है। अपगतवेदियों असंख्यातभागहानिका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्भु हूर्त है। तथा संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिक। काल श्रोषके समान है।
- § २६८ कोषादि चारो कवायवाले जोबोंमें तीन बृद्धियों, तीन हानियों, असंख्यात गुण्हानि और अवस्थितविभक्तिका काल नपुंमकवेदियोंक समान है। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातभागहानिका कितना काल हैं १ जबन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्त हैं। तथा लोभकपायवाले जीबोंके असंख्यातभागहानिका काल ओबके समान है।
- § २६६. मत्यज्ञानी त्रोर श्रुताज्ञानी जीवोके तीन वृद्धियों, तीन हानियों श्रोर श्रवस्थित-विभक्तिका काल सामान्य तियञ्जोंक समान हैं। इतनी विशेषा हैं कि इनके असंख्यातथाग-हानिका जवन्य काल एक समय श्रोर उन्छ्य काल साधिक इक्तीस सागर है। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टियोंके जानना चाहिये। विभएज्ञानियोंके सातवीं पृथिवीके समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके श्रसंख्यातभागहानिका जवन्य काल एक समय श्रोर उत्छ्य काल कुछ कम इक्तीस सागर है।

§ २७०. त्राभिणि०-सुद्०-त्रोहि० अमंखे०भागहाणी के० १ ज० अंतोसुहुत्तं, उक्क० छाविहमागरी० देम्र्णाणि । तिण्णि हाणी त्रोघं । एवमीहिदंस०सम्मादि० । मणपज्ज० असंखे०भागहाणी जह० एयसमत्रो, उक्क० पुत्रकोडी
देम्र्णा । तिण्णि हाणी ओघं । एवं संजद० । सामाइय-छेदो०मंजदाणमेवं चेव ।
एविर संखेजभागहाणीए कालो जहण्णुक्क० एगसमत्रो । परिहार०-संजदासंजद०
असंखे०भागहाणी जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगिहिदी । संखे०भागहाणी० जहण्णुक०
एगसमओ । सुहुम० अवगद्वेदमंगो । असंजद० णवुंसयभंगो । णविर असंखेजभागहाणीए कालो जह० ए०समत्रो, उक्क० तंत्तीसं सागरी० सादिरेयाणि ।
असंखे०गुणहाणीवि० एत्थि । चक्खु० तसपज्जत्तभंगो । णविर संखे०भागवड्ढी
जहण्णुक्क० एगसमत्रो ।

इ २७१. किण्ड-णील-काउले० असंजदभंगो । एवरि असंखे०भागहाणीए जह० एगसम्ब्रो, उक्क० सर्गाहदी देस्णा । तेउ० से।हम्मभंगो । पम्म० सणक्कुमार-भंगो । सुक्क० असंखे०भागहाणीए जह० एगसम्ब्रो, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादि-रेयाणि । तिष्णि हाणी ओर्घ । एवं खड्य० । णवरि असंखे०भागहाणी ज०

§ २००. स्यामिनवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और स्रविधिज्ञानी जीवोंके स्रसंख्यात भागहानिका कितना काल है ? जवन्य काल स्रन्तमुं हुन स्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम स्रयासठ मागर है। तथा तीन हानियोंका काल स्रांघके समान है। इसी प्रकार स्रविधर्शनी और सम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके स्रसंख्यातभागहानिका जवन्य काल एक समय स्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। तथा तीन हानियोंका काल स्रांघके समान है। इसी प्रकार संयन जीवोंके जानना चाहिय। सामायिकसंयत और छेडोपस्थापनामंयत जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके संख्यातभागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। परिहारविशुद्धसंयत और स्रवनी स्थिति-प्रमाण है। तथा संख्यान भागहानिका जवन्य काल स्रवनी हिंदी तथा संख्यान भागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सूद्म-सांपरायिकसंयन जीवोंके अपगतेबोंद्याक समान जानना चाहिये। स्रसंयतोंके नपुंसक्वेदियोंके समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके स्रसंख्यातभागहानिका जवन्य काल एक समय स्रार उत्कृष्ट काल साधिक वेतीस सागर है। स्रस्यताके स्रसंख्यातगुणहानि नहीं पाई जाती है। चनुर्शनवाले जीवोंक त्रसंपर्याप्तकोंक समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके संख्यातभागवृद्धिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

६ २०१. ऋष्ण, नील स्रोर कापोत लेश्यावाले जीवोके स्रसंगतोके समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके स्रसंख्यातभागहानिका जपन्य काल एक समय खोर उत्कृष्ट काल कुत्र कम स्रपनी स्रपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पीतलेश्यावाले जीवोंके सीधर्म करूपके समान जानना चाहिये। शुक्त लेश्यावाले जीवों के स्रसंख्यातभागहानिका जपन्य काल एक समय स्रोर उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। तथा तीन हानियोंका काल स्रोपके समान है। इसी प्रकार चायिकसम्यग्रहिष्ट

१२७२ सासण० असंखे०भागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० छ आवितिन्याओ । सम्मामि० असंखे०भागहाणी जह० एयसमुत्रो, उक्क० अतोमुहुत्तं । वे हाणी० वेदयभंगो । सिण्ण० पंचिदियभंगो । असिण्ण० दो वह्ही संखे०गुणहाणी० अविहि० श्रोघं । संखे०गुणवह्ही संखे०भागहाणी जहएणुक्क० एगसमओ । असंखे०भागहाणीए एइंदियभंगो । अभव० मिद्द०भंगो । आहारि० दो वह्ही चत्तारि हाणी अविह० ओघभंगो । संखे०गुणवह्ही जहएणुक्क० एगस० । अणाहारि० कम्मइय०भंगो ।

### एवं कालाणुगमी समन्तो ।

६ २७३. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्दे सो — ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण असंखीजभागवड्ढी० अविदिश अंतरं केव० १ ज० एगसमओ, उक्क० तेविद्दिसागरी-वमसदं अंतोमुहुत्तव्भिहियतीिद्द पिलदोवमेदि सादिरेयं । दो वड्ढी० दो हाणी० जह० एयसमओ अंतोम्०, उक्क० अणंतकालमसंखीजा पोग्गलपरियद्दा । असंखे०भाग-

जीवोके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जवन्य काल अन्तमु हूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। वेदकसम्यग्दाप्ट जीवों के असंख्यात भागहानिका काल आभिनिवाधिकज्ञानियोंक समान है। तथा संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

इ २७२. सासादनसम्यग्दिण्ट जीवोके असंख्यात भागह।निका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आवली है। सन्यग्मिण्यादृष्टि जीवोके असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुँ हूर्त है। तथा दो हानियोंका काल वेदकसम्यग्दृष्टियोंके समान है। संज्ञी जीवोंके पंचेन्द्रियोंके समान जानना चाहिये। असंज्ञी जीवोंके दो वृद्धियों, संख्यात गुणहानि और अवस्थितविभक्तिका काल श्रोधके समान है। तथा संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और असंख्यात भागहानिका काल एकेन्द्रियोंके समान है। अभव्य जीवोंक मत्यज्ञानियोक समान जानना चाहिये। आहारक जीवोंक दो वृद्धियों, चार हानियो और अवस्थितविभक्तिका काल श्रोधक समान है। तथा संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनाहारक जीवों के कार्मण काययोगियोंके समान जानना चाहिये।

#### इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

हु २७३. अन्तरानुगमकी अपेचा निर्देश दा प्रकारका है—आंघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेचा असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका अन्तरकाल कितना है ? जयन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मु हूर्त और तीन पत्योंसे अधिक एक सो त्रेसट सागर है। तथा दो वृद्धियों और दो हानियोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय और अन्तर्मु हूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्तात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण

हाणी० जह० एयसमञ्जो, उक्त० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० जहण्णुक० अंतो-मृहुत्तं । एवमचक्त्यु०-भवसि० ।

है। तथा श्रमंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल श्रन्तमु हूर्न है। तथा असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमु हूर्त है। इसी प्रकार अचनदर्शनवाले और भव्य जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ-जव अमंन्यातभागवृद्धि और अवस्थित स्थितिके मध्यमे एक समय तक <del>त्रान्य स्थितिविभक्ति प्राप्त हो जाती है तव इनका जघन्य त्र्यन्तरकाल एक समय प्राप्त होता है ।</del> तथा असंख्यात भागहानि और संख्यातभागहानिका मिला कर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुत और तीन परुष अधिक एक सो त्रेसठ सागर है, अतः असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितका उस्कृष्ट श्चःतरकाल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। जब कोई दो इन्द्रिय जीव पहले समयमे संख्यातभागवृद्धि करता है, दूसरे समयमे अवस्थित स्थितिको प्राप्त होता है और तीसरे समयमें मरकर तथा तेइन्द्रियोमे उत्पन्न होकर पुनः संख्यातभागवृद्धि करता है तव संख्यातभागवृद्धिका त्र्यतः संख्यात भागवृद्धिका जवन्य जघन्य श्रन्तर काल एक समय प्राप्त होता है, अन्तरकाल एक समय कहा। जो एकेन्द्रिय जीव दो मोड़ा लेकर मंत्री पंचेन्द्रियोमें उत्पन्न होता है उसके पहले मोड़के समय संख्यातगुणवृद्धि होती है। दूसरे मोड़के समय ऋन्य स्थिति होती है और नीमर समयमें पुनः संख्यातगुण्युद्धि होती है अतः संख्यातगुण्-बुद्धिका जधन्य अन्तर काल एक समय कहा। जिस जीवके स्थिति काण्डककी चरम फालिके पतनके समय संख्यातभागहानि हुई पुन. अन्तुमु हुन कालके बाद अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातभागहानि होती है अतः संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्म हुर्त कहा । तथा उसी जीवके दरापक्रष्टि प्रमाण स्थितिके उपरिम द्विचरम स्थिति काण्डककी अन्तिम फालिक पतनके समय संख्यात्गुण्हानि होता है। पुनः अन्तर्सुहते कालक बाद अन्तिम स्थितिक।ण्डककी अन्तिम फालिके पतनक समय संख्यातगुण्हानि होती है अतः संख्यात गुणुहानिका जबन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हुने कहा । तथा उक्त दानी वृद्धिया श्रीर दोनी हानियोंका उत्कृष्ट अन्तर काल असंख्यात पुरुगल परिवर्तन प्रमाण पाया जाता है, क्योंकि जिस जीवने संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यायमे उक्त दो वृद्धियां और दी हानिया की पुनः जी भरकर एकेन्द्रियोमे उत्पन्न हुआ और वहां अमंध्यात पुद्गल परिवर्तन काल तक परिश्रमण करता रहा। तत्पञ्चान बहांसे निकलकर जो संज्ञियोमे उत्पन्न हुआ। श्रीर संज्ञी पर्यायमे जिसने पुनः दो बृद्धिया और दो हानियां की उसके उक्त दो वृद्धियों त्यार दो हानियोका उत्कृष्ट अन्तर काल असंख्यात पुरुगल परिवर्तन प्रमाण पाया जाता है। एक समयके अन्तरसे असंख्यातभागहानिका होना सम्भव है, श्रतः त्रसंख्यातभागदानिका जवन्य त्र्यन्तर एक समय कहा। तथा त्र्यवस्थित स्थितिका उत्क्रष्ट ठाल अन्तर्मु हुर्त है। अब यदि असंख्यात भागहानिका अवस्थित स्थितिसे अन्तर्म हुत काल तक श्रन्तरित कर दिया जाय तो असंस्थातभागहानिका उत्कृष्ट श्रन्तर काल श्रन्तमुँ हुने प्राप्त हो जाता है। अनिवृत्तिकरण चपकके संवेद भागमें स्थिति काण्डककी अन्तिम फालिक पतनके समय असंख्यातगुणहानि होती है पुनः अन्तर्मु हूतंके बाद दूसरे स्थिति काण्डकर्का अन्तिम फालिक पतनके समय असंख्यातगुणहानि होती हे, अतः असंख्यातगुणहानिका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूते प्राप्त होता है। अचलुदर्शन और भव्य मार्गणामे यह आघ प्रस्तपणा बन जाती है. अतः इनके कथनको स्रोधके समान कहा।

§ २७४. ब्रादेसेण णेरइय॰ असंखे०भागवड्ढी अविह० जह० एगसमओ। दो वड्ढी० दो हाणी० जह० अंतोमु॰, उक्क० तेत्तीससागरो० देसूणाणि। असंखे०भागहाणी० ब्रोघं। पढमादि जाव सत्तिमि त्ति एवं चेव । णविर सगसगुक्कस्सिहिदी देसूणा।

१२७५. तिरिक्खेसु असंखेजाभागवृही अविहि० जह० एगसम्त्रो, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो । दो बहु०-दोहाणी० असंखे० भागहाणी० श्रोयं । पंचि० तिरिक्खित्यिम्म असंखे०भागवृही० अविह० ज० एगसम्भो । दो बहुी० संखे० गुणहाणी ज० अंतोमुहुत्तं । उक्क० सब्वेसि पि पुष्वकोडिपुभत्तं । असंखेजभागहाणी० आयं । संखे०भागहाणी ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तिरिण पिलदोवमाणि अंतोमुहुत्तव्मिहयाणि । एवं मणुसतिय०। णविर जिम्ह पुष्वकोडिपुभत्तं तिम्ह पुष्वकोडी देसूणा । असंखे०गुणहाणी० ओयं। पंचि०तिरिक्खअपज्ज० असंखे०भागवृही० हाणी० अविह० जह० एगसम्त्रो । दो बहुी० दो हाणी० जह० अंतोमु०। उक्क० सब्वेसिमंतोमुहुत्तं । एवं मणुसअपज्ज०-पंचि०अपज्ज०-तसअपज्ज०-विहंग०। णविर तसअपज्ज० दोबही० जह० एगसम्त्रो ।

§ २७४ त्रादेशकी अपेचा नारिकयोंके त्रसंख्यानभागवृद्धि त्रोर अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय तथा दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। तथा उपर्युक्त सभीका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। तथा असंख्यान भागहानिका अन्तरकाल ऋषांघक समान है। पहली पृथिवीसे लेकर सातवी पृथिवी तक इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये।

इ २०५ तिर्यक्चोंमें असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पत्यांपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। तथा दो वृद्धियों, दो हानियों और असंख्यातभागहानिका अन्तरकाल आंवके समान हें। पंचेन्द्रियतिर्यक्चित्रिकमं असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय तथा दो वृद्धियों और संख्यातगुण्हानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तरकाल पृवंकोटिप्रथक्त है। असंख्यात भागहानिका अन्तरकाल आंवके समान है तथा संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त अधिक तीन पत्य है। इसी प्रकार मनुष्यित्रकंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यक्चित्रकं जहाँ पूर्वकोटि पृथक्त कहा है वहाँ मनुष्यित्रकंक कुछ कम पूर्वकोटि कहना चाहिये। तथा असंख्यातगुण्हानिका अन्तरकाल ओघके समान है। पंचेन्द्रिय तिर्यक्च अपर्याप्तकोंके असंख्यातभागवृद्धि, आसंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। तथा उक्त सभीका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक, त्रस अपर्याप्तक और विभगजानियोंक जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि त्रस अपर्याप्तकोंके दो इद्धियोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है।

§ २७६. देव॰ असंखेजजभागवड्ढी० अविद्वि० जह० एगसमश्रो, दो बहुी० संखेजगुणहाणी० जह० अंतोम्रहुत्तं, उक० अद्वारस सागरीवमाणि सादिरेयाणि । संखेजमागहाणी० जह० अंतोम्र०, उक्क० एकत्तीमं सागरी० देखणाणि । असंखे० मागहाणी० जह० एयसमञ्जो, उक्क० अंतोम् ०। भवणादि जाव सहस्सार ति एवं चेव। णविर सगसगुकस्सिटिदी देखणा। आणदादि जाव उविरमगेवज्जे ति असंखे० भागहाणीए जहण्णुक० एगसमञ्चो। संखे०भागहाणीए जह० अंतोम् ०, उक्क० सगिटिदी देखणा। अणुहिसादि जाव सन्वद्देति असंखे०भागहाणी० जहण्णुक० एगसमञ्जो। संखे०भागहाणी० जहण्णुक० एगसमञ्जो। संखे०भागहाणी० जहण्णुक० एगसमञ्जो। संखे०भागहाणी० जहण्णुक० एगसमञ्जो। संखे०भागहाणी० जहण्णुक० एगसमञ्जो।

ह र७६. देवांमं असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा दो वृद्धियो और संख्यात गुण्हानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। तथा संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। तथा असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। भवनवासियोसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देवोके इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थित कहनी चाहिये। आनत कल्पसे लेकर उपरिम मैवेयक तकके देवोंमें असंख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। तथा संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हुर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंके असंख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अपनि अन्तर्मु हुर्त है।

विशेषार्थ-नरकमें स्वस्थानकी अगेचा संख्यातभाग वृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि संक्लेश चयसे एक समय तक होती है श्रोर पुनः इनका होना अन्तर्मु हूर्न कालके बिना सम्भव नहीं है, श्रतः इनका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तमु हूर्न कहा । तथा नरकमे श्रसंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है, अतः असंख्यातभागहानिको छोड़कर शेपसवका उत्कृष्ट अन्तर काल उक्त प्रमाण कहा । तिर्यचोंम असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल यदापि साधिक तीन पत्य है पर ऐसे जीवके निर्यंच पर्यायके रहते हुए। अपंख्यानभागवृद्धिका उत्कृष्ट अन्तरकाल सम्भव नहीं किन्त तिर्यचोमं एकेन्द्रियोंके जो श्रमंख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल परुयके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया है वही इनके अमंख्यात भागवृद्धिका उन्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये । तिर्यंचित्रकमं स्वस्थानकी ऋपेत्रा संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुरावृद्धि एक समय तक हांकर पुनः ऋन्त-र्म हर्त कालक विना नही हो सकती हैं अतः इन दोनोका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्म हर्त कहा। तथा तिर्यंच त्रिकके ऋसंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल यद्यपि साधिक नीन परुष वतलाया है किन्तु ऐसा जीव मरकर पुनः तिर्यंच पर्यायमे नहीं ऋाता, ऋतः तिर्यंच त्रिकके ऋसंख्यात भाग-हानिका जो उत्कृष्ट काल है वह तीन वृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर-काल नहीं हो सकता किन्तु इनके संज्ञी अवस्थामें उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होकर असंज्ञयोंमें उत्पन्न हो जानेसे असंख्यातभागहानि प्रारंभ हो जाती है। पुनः असंज्ञयोंमें अपने अपने असंज्ञियोग्य उत्कृष्ट काल तक, जो क्रमशः ४६,<sup>५</sup>४ व ७ कोटि पूर्व भ्रमण किया । तथा वहाँ त्रपनी त्रपनी असंक्षी पूर्यायके

६२७७. एइंदिएस असंखे॰भागवड्ढी॰ हाणी॰ अविद्या जह० एयसमस्रो, उक्क० अंतोमु० । दो हाणी० णित्थ अंतरं। एवं पंचकायाणं। विगलिंदिएस असंखे०भागवड्ढी हाणी॰ अविद्या जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। संखे०भागवड्ढी० संखे०भागहाणी० जहण्णुकक अंतोमुहुत्तं। रांखे०गुणहाणी॰ णित्थ अंतरं।

प्रारम्भमें उक्त तीन वृद्धियां, संख्यात गुणहानि श्रीर अवस्थित स्थितिका अन्तर करके उक्त पूर्व कोटि प्रथम्त्व काल तक असंख्यात भागहानिके साथ रहा । श्रीर संज्ञियोमें उत्पन्न होकर पुनः तीन वृद्धियां, संख्यातगुण हानि त्र्योर अवस्थित स्थिति प्राप्त हो गई तब जाकर इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण ही प्राप्त होता है । जिस तिर्यंचने प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करते समय संख्यातभागहानि की । पुनः मिध्यात्वमं जाकर और अन्तम् हुर्त कालके वाद जो तीन पत्यकी ऋायुके साथ उत्तम भोगभूमिमें उत्पन्न हुआ। और जीवनमे अन्ते मुंहूर्त कालके शेप रह जाने पर जिसने पुनः प्रथमोपशम सम्यक्तवका प्राप्त करके संख्यात भागहानि की उसके संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्म हुर्ने अधिक तीन परुय प्रमाण पाया जाता है। मनुष्यत्रिकके त्रसंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल तिर्यंच त्रिकके समान ही है पर इनके भी त्रसंख्यात भागवृद्धि श्रादिका उत्कृष्ट अन्तरकाल नत्प्रमाण नहीं हो सकता क्योंकि तिर्यचित्रकके समान यहां भी वहीं बाधा त्यानी है। अब यदि कहा जाप कि जिस प्रकार तिर्यंच त्रिक के इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटि प्रथक्त प्रमाण बनला आये हैं उसी प्रकार मनुष्योंके भी घटिन हो जायगा सो भी बात नहीं है. क्योंकि मनुष्योंमें असंज्ञी न होनेके कारण सम्यक्त्व की अपेन्ना भूजगार और अवस्थित स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पूर्वकोटि प्रमाण वतलाया है अतः यहां असंख्यात भागवृद्धि आदिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पूर्वकांटि प्रमाण ही कहा है। जो पंचेन्द्रिय तिर्थेच अपर्याप्त स्थितियात करता है उसके एक काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातभाग-हानि या संख्यातगुणहानि हुई। पुनः अन्तर्भु हूर्तकालक बाद दूसरे काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यान भागहानि या संख्यान गुणहानि होगी ऋतः पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमं इनका जघग्य त्र्यन्तरकाल त्र्यन्तम् हुर्त कहा । किन्तु त्रस अपर्याप्तकोंमें विकलत्रय भी सम्मिलित हैं, त्रातः इनके संख्यातभागवृद्धिका जयन्य त्रान्तर काल एक समय भी बन जाता है। देवोंमें बारह्वें स्वर्गके वाद असंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि, संख्यात ग्राग्वद्धि. गुणहानि और अवस्थित स्थिति नहीं पाई जानी श्रतः इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक श्रठारह सागर कहा । तथा नौ प्रवेयकके देव सम्यग्दर्शनको प्राप्त करके पुनः मिण्यात्वमें और मिण्यात्वसे सम्यक्त्वमें जा सकते हैं श्रीर इस प्रकार उनके पुनः श्रनन्तानुवन्धीका सत्त्व श्रीर उसकी विसंयोजना हो सकती है, अतः सामान्य देवोके संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर कहा। शेप कथन सुगम है।

§ २७७. एकेन्द्रियोमें असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागद्दानि और अवस्थितविभक्तिका जयन्य अन्तरकाल एक समय ध्योर उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। तथा दो हानियोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये। विकलेन्द्रियोंमें असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागद्दानि और अवस्थितविभक्तिका जयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागद्दानिका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। तथा संख्यात गुग्रह्दानिका अन्तरकाल नहीं है।

विशोपार्श-एकेन्द्रियोमें असंख्यात भागहातिका उत्कृष्ट काल जो पत्यके असंख्यातवें

§ २७८. पंचिंदिय-पंचि०पज्ज० श्रमंखे०भागवही० अविट० अंतरं के० ? जह॰ एगसमओ, उक्क० तेबिटसाकरोवमसदं अंतोमुहुत्तव्मिहियतीहि पिलदोवमेहि सादि-रेयं। असंखे०भागद्याणि० अंतरं ज० एगसम०, उक्क० अंतोमु०। दोवड्ढी-दोहाणीणं ज० अंतोमु०, उक्क० तेबिटसागरोवमसदं सादिरेयं। असंखे०गुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। एवं तस-तमपज्जत्ताणं। णविर दो वड्ढी० जह० एगसमओ।

भागप्रमाण वनलाया मां इनने काल तक असंख्यान भागहानि उन एकेन्द्रियोके पाई जाती हैं जिनकी स्थित एकेन्द्रियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवन्धसे बहुत ही अधिक होती है और इसलिये ऐसे जीवके असंख्यात भागवृद्धि. या अवस्थित या इनका अन्तरकाल यह कुछ भी सम्भव नहीं। किन्तु असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि या अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल उन एकेन्द्रियोंके पाया जाता है जिनका स्थितिसत्त्व एकेन्द्रियोंके स्थितिवन्धके योग्य रह जाता है अरेर इस प्रकार इनका जधन्य अन्तरकाल एक समय तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हुने प्रमाण बन जाता है। तथा जिस संज्ञी पंचेन्द्रियने संख्यात भागहानि या संख्यात गुणहानिका प्रारम्भ किया है वह यदि स्थितिकाण्डकके उत्कीरण कालको समाप्त वरनेक पहले मरकर एकेन्द्रियों अत्यन्न हो जाय तो उस एकेन्द्रिय जीवके संख्यात भागहानि या संख्यात गुणहानि पाई जाती है अतः एकेन्द्रियके इनका अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता। यिकलत्रयोंमें संख्यात भागवृद्धि भी सम्भव है अतः इनके अपने स्थितिबन्धके योग्य स्थितिके रहते हुए भी संख्यात भागहानि हो सकती है पर इस प्रकार संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानि अन्तर्मु हुनेक पहले नहीं होती, अतः इनका जयन्य और उन्दृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हुने कहा। शेष कथन सुगम है।

§ २७८. पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोमं असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित-विभक्तिका अन्तरकाल कितना है ? जयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकात अन्त-मुँहते और तीन पर्य अधिक एकमी त्रेमठ सागर है । असंख्यात भागहानिका जयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहर्न हैं । दो वृद्धियो और दो हानियोका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्न और उत्कृष्ट अन्तरकाल माधिक एकमी त्रेमठ मागर है तथा असंख्यान गुण्हानिका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहर्न हैं । इसी प्रवार त्रस और त्रम पर्याप्तक जीवोके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनके दो वृद्धियोका जयन्य अन्तरकाल एक समय है ।

विशेषार्थ-पंचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवके संस्थान भागवृद्धि, संख्यान गुणवृद्धि, संख्यान भागवृद्धि, संख्यान गुणवृद्धि, संख्यान भागवृद्धि, संख्यान गुणवृद्धिन अहिं संख्यान गुणवृद्धिन अहिं सामय वतलाया है सो यहा दोनों वृद्धियां और संख्यान गुणवृद्धिनके अन्तरकालका कथन करने समय साधिकसे तीन पल्य और अन्तर्भु हुर्त कालका प्रहण करना चाहिये तथा संख्यान भागव्यक्ति अन्तरकालका कथन करने समय साधिकसे पल्यके असंख्यानचे भागप्रमाण कालका प्रहण करना चाहिये, क्योंकि पहले असंख्यान भागव्यक्ति जो पल्यका असंख्यानचां भाग अधिक एकसों त्रेसठ सागर प्रमाण उत्कृष्ट काल बतला आये हैं वह यहां संख्यान भागवृद्धि, संख्यान भागवृद्धि और संख्यान गुणवृद्धि अहिन्ति प्रमाण वत्त्वाया है सो इसका कारण यह है कि स्वस्थानकी अपेना उक्त स्थिति

६ २७६, पंचमण०-पंचवचि० ऋसंखे०भागवड्ढी० ऋविष्ठ० अंतरं के० १ ज० एगसमञ्जो, उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० ज० एगसगञ्जो, उक्क० अंतोमु०। संसदोवड्ढी-तिण्णिहाणीएां एत्थि अंतरं। एवमोरालियकायजोगीएां।

इ २८० कायजोगीस असंखो०भागवड्ढी० अविष्ठ० ज० एगसमओ, उक्क० पिलदो० असंखो०भागो । असंखो०भागहाणी० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। दोवड्ढी-दोहाणीणं जह० एगसमओ अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेळा पोग्गलपरियद्दा । असंखो०गुणहाणी० रात्थि अंतरं । श्रीरालियमिस्स० असंखो०भागवड्ढी० अविष्ठ० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। असंखोळभागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। संखे०भागवड्ढी जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। दोहाणी० संखो०गुणवड्ढी० जह० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु०। वेउव्विय० असंखो०भागवड्ढी० हाणी० अयि अपित्र असंखो०भागवड्ढी० हाणी० अयि अपित्र असंखो०भागवड्ढी हाणी० अविष्ठ० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। संसदोवड्ढी-दोहाणीणं रात्थि अंतरं। वेउविययि सस्य असंखो०भागवड्ढी हाणी० अविष्ठ० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। संसदोवड्ढी-दोहाणीणं रात्थि अंतरं। वेउविययि एत्या असंखो०भागवड्ढी हाणी० अविष्ठ० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। संसपदेशु णित्थ अंतरं। कम्मइय० अविष्ठ० ज० उ० एगसमओ। विस्तिक्याका इसस्य क्रम्म अन्तरकाल नहीं पाया जा सकता है। तथा त्रस और त्रस पर्याप्त जायाक संख्यात भागवृद्धि और सख्यात गुणवृद्धिका जवत्य अन्तरकाल जो एक समय वत्लाया है सो यह परस्थात क्रांचा जानना चाहिय जिसका खुलाला श्रांच प्रक्ष्वणाक समय कर श्राये हैं।

\$२७६. पाँचा मनायागी आर पाचा वचनयाना जावामें असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितिभीकेका अन्तरकाल कितना है ? जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमु हूत है। असंख्यात भागद्यातेका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमु हूते है। वया शेर दा वृद्धिया आर तान हानियाका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार ओदारिककाययामी जावाक जानना चाहिय।

§ २८०. काययागयाम अमंख्यात मागृहिद्व और अवस्थितविमक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय आर उत्कृष्ट अन्तरकाल परवारमक असंख्यात भागप्रमाण है। असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय आर उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमृहृत है। दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय आर अन्तमुहृत तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तरकाल है जो असंख्यात पुर्गल परिचतन प्रमाण है। असंख्यात गुण्हानिका अन्तरकाल नहीं है। ओदारिकामश्रकाययोगियाम असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। तथा दो हानियों और संख्यात गुण्वृद्धिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। तथा दो हानियों और संख्यात गुण्वृद्धिका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। तथा दो हानियों और संख्यात भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। वैक्रियिकिकाययोगियोमें असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि। तथा शेष पदोक्का अन्तरकाल एक समय है। तथा भागवायोगियोमें अवस्थितविभक्तिका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। तथा

सेसपदाणं णित्थ अंतरं । आहार०-आहारिमस्स० अमंखे०भागहाणी० णित्थ अंतरं । एवमकसा०-जहाक्याद०-सामण० । अणाहारीणं कम्मइयमेगो ।

्रदश्. इत्थिवेद० असंखे०भागवड्ढी० अविह० ज० एगसमयो । दो वड्ढी-दोहाणीणं जह० अंतोपु० । उक्क० पणवण्णपिळदोवमाणि देसूणाणि । असंखे०भागहाणी-असंखे०गुणहाणीणमोघभंगो । पुरिस० पंचिदियभंगो । णवुंस० असंखे०भागहाणी-अविहिदाणं णिरओवं। संसपदाणमोघभंगो । एवमसंजद० ।

होप पदोका अन्तरकाल नहीं हैं। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोमें असंख्यात भागहानिका अन्तरकाल नहीं हैं। इसी प्रकार अकपायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोके जानना चाहिए। अनाहारक जीवोंके कार्मणकाययोगियोंके समान जानना चाहिए।

विशेषाध-पांचों मनायागों और पांचों वचनयोगोंका तथा एकेन्द्रियोंको छोड़कर शेप जीबोंके ख्रोदारिक काययांगका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है ख्रोर विविचत किसी एक योगके रहते हुए संख्यात भागवृद्धि आदि तथा संख्यान भागहानि च्यादि दो बार सम्भव नहीं ऋतः इनके संख्यात आगवृद्धि श्रीर संस्थात गुणवृद्धि इन दो वृद्धियोंका तथा संस्थात भागहानि, संस्थात गुणहानि श्रीर श्रसंख्यातगुण्हानि इन तीन हानियोका अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता। काययोगमे असंख्यात माग हानिका जो उत्कृष्ट काल पन्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाल वतलाया है वही यहा ऋसंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये। कोई एक त्रस जीव है उसने काययांगके रहते हुए संख्यात भागवृद्धि की । पुनः वह काययोगके सन्ध मर गया और एकेन्द्रियोमे उत्पन्न होकर श्रनन्त काल तक वमता रहा । तद्नन्तर वह त्रस हुआ और वहा उसने पुनः संख्यात भागवृद्धि की। इस प्रकार इस जीवके सरूपान भागवृद्धिका उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार संख्यात गुण्युद्धि ख्रीर दी हानियोका उत्कृष्ट ब्यन्तरकाल यथायांग्य रीतिमें घटित कर लेना चाहिये। स्रोदारिकमिश्रकाययोगका उत्कृष्ट काल अन्तम् इर्त है इसलिये इसमें सम्भव सब पदोका उन्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्म हनेप्रमाण ही प्राप्त होता है। वैकियिक काययागका उत्कृष्ट कात अन्तर्सहर्न है और एक योगक रहते हुए संख्यात भागवृद्धि श्रीर संख्यात गुण्युद्धि इस दी वृद्धियोका तथा सण्यात भागहानि श्रीर संख्यात गुणुहानि इन दी हानियोंका दी दी बार हीना सम्भव नहीं अतः वैक्रियिककाययोगमे इनका अन्तरकाल नहीं बनलाया । यही वान वैक्रियिकमिश्रकाययागके सम्बन्धमे जानना चाहिये । वार्मणकाययागमे स्रव-स्थित पदका ही उत्कृष्ट काल तीन समय वनलाया है। ख्रव यदि किसी कार्मणकाययोगीने पहले श्रीर तीसरे समयमं अवस्थित स्थिति की तो उसके अवस्थितका जवन्य और उ कुछ अन्तरकाल एक समय पाया जाता है। यहा क्षेत्र पदांका अन्तरकाल सम्मव नहीं। यही बात अनाहारकोके जानना चाहिये। रोप कथन सगम है।

§ २८१. स्त्रीवेदी जीयोम असंख्यात भागष्टिद्व ख्रीर ख्रवस्थित विभक्तिका जघन्य अन्तर-काल एक समय ख्रीर दी बृद्धियो और दी हानियोका जघन्य खन्तरकाल खन्तमुं हूर्त है। तथा उक्त सभीका उत्कृष्ट खन्तरकाल कुछ कम पचयन पत्य है। तथा ख्रसंख्यात भागहानि ख्रौर ख्रसंख्यात गुण्हानिका खन्तरकाल ख्रोचक समान है। पुरुपवेदियोंक पंचेन्द्रियोंक समान जानना चाहिये। नपुंसकवेदियोंमे ख्रसंख्यात भागष्टिद्व ख्रीर ख्रवस्थितविभक्तिका खन्तरकाल सामान्य नारिकयोंके समान है। तथा शेव पदोका खन्तरकाल ख्रोचक समान है। इसी प्रकार असंयत णवरि असंखे०गुणहाणी णत्थि । अवगद० असंखे०भागहाणी जहण्णुक्क० एग-समुत्रो । दोहाणीण जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवं सुहुक्सांपराय० ।

६ २८२. चत्तारिकसाय० तिष्णि बड्ढी० असंखेजभागहाणी० अविटि॰ जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० | संखे०भागहाणी-संखे०गुणहाणी-असंखेजगुणहाणीणं जहण्णुक० अंतोमु० |

्र २⊂३. मदि-सुद्अण्णाणीसु ऋसंखेज्जमागवड्ढी [ऋवढि०] जढ० एगसमश्रो, उक्क० एक्कत्तीस सागरो० सादिरेयाणि । सेसमेोघ । एवमभव०-मिच्छादिहि त्ति ।

र २८४, आभिणि० - सुद० - ओहि० असंखे०भागहाणी जहण्णुक्क० एग-समुत्रो । संखे०भागहाणी जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० छाविहसागरे विमाणि देमुणाणि ।

जीवोकं जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असख्यात गुणहानि नहीं है। अपगतवेदियों में असंख्यात भागहानिका जबन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। तथा दो हानियोंका जबन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। इसी प्रकार सूदमसांपरायिकसंग्रत जीवोंके जानना चाहिये।

§ २=२. क्रोधादि चारों कपायवाले जीवोंमं तीन वृद्धियो, असंख्यात भागहानि आरं अवस्थितविभक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय आरं उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। तथा संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि और असंख्यात गुणहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है।

विशेषार्थ—देवीकी उत्कृष्ट आयु पचवन पत्यकी है । अय यदि किसी देवीने उत्पन्न होनेके अन्तर्म हुने बाद सम्यग्दर्शनको प्राप्त कर लिया और जीवनमें अन्तर्म हुने कालके रोप रहने पर वह मिण्यादृष्टि हो गई तो उसके इतने काल तक असंख्यात भागहानि ही पाई जायगी अतः स्नीवेदमें असंख्यात भागृष्टृष्टि, संख्यात अस्य सम्यक्त्वको प्रद्र्ण करनेक पूर्व और वादमें सम्भव हैं । असंख्यात गुण्युष्ट्रित अनिवृत्ति चपकरे ही होती है अतः असंयत जीवके इसका निपंघ किया । अपगतवेदमें असंख्यात भागृष्ट्रित जव संख्यातभागृष्ट्रित या संख्यातगुण्युष्ट्रितिमें एक समयके लिये अन्तरित होजाती है तब असंख्यात भागृष्ट्रितिक। अन्तरकाल पाथा जाता है जो कि जवन्य और उत्कृष्ट रूपसे एक समय प्रमाण् ही होता है । तथा यहां संख्यात भागृष्ट्रितिक। संख्यात भागृष्ट्रितिक। चाहिये । किन्तु वहां जो जवन्य अन्तरकाल वत्ताया है वही यहां जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये । अपगतवेदसे सूद्रमभाग्यर्थिक संयतक कोई विशेषता नहीं अतः उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये । अपगतवेदसे सूद्रमभाग्यर्थिक संयतक कोई विशेषता नहीं अतः उत्कृष्ट अन्तरकाल अवगतवेदके समान जानना चाहिये । चारों कपायोंका उत्कृष्ट काल अन्तमु हुत्तं है अतः इनमें सम्भव पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहृते प्रमाण्य वन जाता है । शेष कथन सुगम है ।

§ २८३ मत्यज्ञानी और श्रुनाज्ञानी जीयोम श्रसंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितका जवन्य श्रन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक इकतीस सागर है। हो। क्येन ओघके समान है। इसी प्रकार अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीयोके जानना चाहिये।

§ २-४. श्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रोर श्रविधज्ञानी जीवोमें श्ररांख्यात भागहानिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक समय है। संख्यात भागहानिका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तर्मु हूर्त एवं संखे जागुणहाणीए । णविर छाविहिमागरी० सादिरेयाणि । असंखे०गुणहाणी० श्रोघं । एवमोहिद्ंस०-सम्मादिहीणं । मरापण्ज० असंखे०भागहाणी० जहण्णुक० एग-समश्रो । संखे जाभागहाणी० जह० अंतोम्०, उक्क० पुन्वकोडी देसूणा । दोहाणी० जहण्णुक० अंतोमु० । एवं संजद०-मामाइय-छंदो०संजदे त्ति ।

६ २८५. परिहार०-संजदासंजद० अमंखे०भागहाणी-संखे०भागहाणीएं मण-पज्जयभंगो । चक्खु० तसपज्जत्तभंगो । णवरि संखे०भागवर्डी० ज० अंतोम० ।

श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल गुळ कम छियासठ सागर है। इसी प्रकार संख्यान गुण्हानिका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसका उन्कृष्ट श्रन्तरकाल साधिक छ्यासठ सागर है। तथा श्रम्संख्यान गुण्हानिका श्रन्तरकाल श्रोषके समान है। इसी प्रकार श्रवधिदशेनवाले श्रोर सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानियोंमे श्रमंख्यात भागहानिका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक समय हैं संख्यात भागहानिका जवन्य अन्तरकाल श्रम्म श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल छुळ कम पूर्वकोटि है। तथा दो हानियोका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रम्तरकाल श्रन्तमुं हुन है। इसी प्रकार संयन, सामायिकसंयन श्रोर छेदोपस्थापनासंयन जीवोंके जानना चाहिये।

§ २८५. परिहारविशुद्धिमंयत श्रोर संयत्तासंयत लीवोक्ति श्रमंख्यात भागहानि श्रोर मंख्यात भागहानिका श्रन्तरकाल मनःपर्ययञ्चानियोक्ते समान है । चबुद्र्शनवाले जीवोके त्रसपर्याप्तकोके समान जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनके मंख्यात भागवृद्धिका जबन्य श्रन्तरकाल श्रन्तमुक्ति है ।

विशेषार्थ-किसी एक मिण्यादृष्टि मनुष्यने असंख्यात भागवृद्धि या अवस्थित न्थितिको किया । श्रानन्तर वह असंख्यात भागहानिको प्राप्त होकर उन्कृष्ट आयुके साथ नीवें श्रेवेयकमे उत्पन्न हो गया और वहां से च्युत होकर वह पुनः असंख्यात भागवृद्धि या अवस्थित स्थितिको प्राप्त हन्त्रा। इस प्रकार मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीबोके उक्त दो परोका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक इकतीस सागर पाया जाता है। ऋार्मिनियोधिकज्ञानी, शुतज्ञानी और ऋविधज्ञानी जीवोंके ऋसंख्यात भागहानिके सम्भव रहते हुए जब अन्य पद एक समयके लिये प्राप्त हो जाते है तभी इनके ऋसंख्यात भागहानिका अन्तरकाल प्राप्त होता है श्रतः इतके असंख्यात भागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय प्रमाण कहा । संख्यात भागहानि अनन्तानुबन्धीकी विसर्याजनाके समय श्रादिमें हुई और ६६ सागर के अन्तिम अन्तमुहूर्तमें दुर्शन मोहकी चपणाक समय हुई अतः इसका अन्तरकाल अन्तम् हर्त कम ६६ सागर होता है । संख्यात गुणहानि वेदक सम्यक्त्वके प्रथम समयमे हुडे। फिर वेदक सम्यक्त्वमे ३ पूर्वकोटि ४२ सागर काल तक रह कर चरियह सम्यग्हिष्ट हो २४ सागर व १ पूर्वकोटिके अन्तिम अन्तमु हुर्त में चत्रकश्रेणांक कालमें संख्यातगुणहानि हुई इस प्रकार इसवा ब्लुब्ड अन्तर अन्तर्भु हुर्न कम चार पूर्वकोटियोंसे अधिक छयासठ सागरोपम होता है । मनःपर्यमञ्जानी, परिहारियशुद्धि व संयत्तासंयतका उत्कृष्ट काल कुछ कम पूर्वकोटि है । श्रतः जिसने इस कालके प्रारंभमें श्रतन्तानुबन्धीकी विसंयोजना श्रीर श्रन्तमें दुर्शनमोहकी चपणा की उसके संख्यातभागहानिका उक्तार अन्तर कुछ कम अर्थान्, प वर्ष, ३८ वर्ष व प वर्ष कम पूर्व कोटि होता है। शेप कथन सुगम है।

§ २८६. किण्ह - गील - काउ० तिण्णि वड्ही० अविट० जह० एगसमओ, दोहाणी० ज० अंतोमु० | उक्क० सन्वेसिं सगिंदिदी देसूणा | ऋसंखे०भागहाणी० ओघं | तेउ० सोहम्मभंगो | पम्म० सहस्सारभंगो | सुक्क० असंखे०भागहाणी० जहएणुक्क० एगसमञ्चो | संखे०भागहाणी० जह० अंतोसु०, उक्क० ६कत्तीस साग० देसूणाणि | संखे०गुणहाणी जहण्णुक्क० अंतोसु० | असंखे०गुणहाणी० ऋोघं |

् २८७. खर्य० अमंखे०भागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । तिण्णि हाणी० जहण्णुक्क० अंतोम्र० । णवरि संखे०भागहाणी० उक्क० तेत्तीमं सागरोवनाणि सादि-रेपाणि । वेद्य० दो हाणीणं छोधिभंगो । संखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं । उवसम० अमंखे०भागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । संखे०भागहाणी० जहण्णुक्क० अंतोम्र०। सम्मामि० असंखे०भागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । दो हाणी० णत्थि अंतरं ।

२८८. [ सर्णाणं पंचिदियभंगो | ] असण्णीसु असंखे०भागवड्डी० अविहि० जह० एगसमञ्चो, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो । संखे०भागहाणी श्रोघं । संखे०भागवड्डी ज० एगसमओ, संखे०गुणवड्डी-दोहाणीणं ज० अंतोग्रु०। उक्क० सब्बेसिमणंतकालममंखेजा पोग्गलपरियद्दा।

§ २५६. कृष्ण, नील, और कापीन लेश्यावाले जीवोमे तीन वृद्धियों और अवस्थित-विभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और दो हानियोका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुँ हूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा असंख्यात भागहानिका अन्तरकाल ओघंके समान है। पीनलेश्यावाले जीवोंके सौधर्म स्वर्गके समान और पर्मलेश्यावाले जीवोंके सहस्वारस्वगके समान जानना चाहिये। तथा शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें अमंख्यात भागहानिका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। संख्यात भागहानिका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हुने और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। तथा म्याच्यात गुग्गहानिका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हुत और असंख्यात गुग्गहानिका अन्तरकाल ओघंके समान है।

§ २८०. द्यायिकसम्यग्हियोमें अस्वस्यात भागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय तथा तीन हानियोंका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहृतं है। इतनी विशेषता है कि संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेतीम सागर है। वेदकसम्यग्हिएयोंमें दो हानियोंका अन्तरकाल अवधिज्ञानियोंके समान है। तथा संख्यातगुणहानिका अन्तरकाल नहीं है। उपशासम्यग्हिएयोंमें असंख्यात भागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। तथा संख्यात भागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहृतं है। सम्यग्मिथ्याहृष्टि जीवोंमें असंख्यात भागहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। तथा दो हानियोंका अन्तरकाल नहीं है।

§ २८६. संजी जीवोंमं पंचेन्द्रिगोंके समान भंग है। श्रसंही जीवोंमें श्रसंख्यात भागवृद्धि श्रीर अवस्थितविभक्तिका जवन्य अन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल पल्यापमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यात भागद्दानिका श्रन्तरकाल श्रांचके समान है। संख्यात भागवृद्धि का जवन्य अन्तरकाल एक समय तथा संख्यात गुणवृद्धि श्रीर दो द्दानियोका जवन्य श्रन्तरकाल श्रन्तमुंहूर्त है। तथा उक्त सभीका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रनन्तकाल है जो कि श्रसंख्यात पुदलपरिवर्तनप्रमाण है।  ६ २८९. त्राहारि० असंखे०भागवड्डी हाणी० अविष्ठ० स्रोघं । संखे०गुणवड्डी दोहाणी० जह० अनोमु० । संखे०भागवड्डी० ज० एगसमस्रो, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । स्रमंखेजगुणहाणी० स्रोघं ।

## एवमंतराणुगमी समत्तो ।

\$२८ आहारक जीवोके असंस्वात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित-विभक्तिका अन्तरकाल खोवके समान है। संख्यानगुणवृद्धि और दो हानियोका जघन्य अन्तरकाल अन्तमु हूर्त है तथा संख्यात भागवृद्धिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा असंख्यात गुणहानिका अन्तरकाल ओवके समान है।

#### इस प्रकार ऋन्तरानुगम समाप्र हुऋा।

\$ २६० नाना जीयोंकी अपना भंगविचयानुगमसे निदंश दो प्रकारका हे—अोघनिदेंश और आदेशिनदेंश। उनमसे आघकी अपना असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। शेप पद भजनीय हैं। भंग दोसो ब्यालीस होते हैं। इसी प्रकार सामान्य नियंच, सभी एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूच्म पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूच्म पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूच्म पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक अपर्याप्त, सूच्म जानकायिक, सूच्म अग्निकायिक पर्याप्त, सूच्म अग्निकायिक अपर्याप्त, सूच्म वायुकायिक, वादर वायुकायिक पर्याप्त, सूच्म वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूच्म वायुकायिक, वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, सूच्म वायुकायिक अपर्याप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक, वादर निगोद पर्याप्त, वादर निगोद अपर्याप्त, सूच्म निगोद, सूच्म निगोद पर्याप्त, सूच्म निगोद, वादर निगोद अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर अपर्याप्त, वादर निगोद प्रतिष्ठित, वादर निगोद वादर निगोद स्त्रिक करिये निगोद वादर निगोद वादर निगोद वादर निगोद वादर निगोद वादर निगोद वादर निगोद

अवज्ज०-कायजोगि०-ओरात्तिय०--त्र्योरालियमिस्स०-कम्मइय०-णवु'स०-चत्तारि-कसाय-पदि-सुदत्रप्रणाण०-ग्रमंजद०-अचक्खु०-तिण्णिते०-भवसि०-त्र्यभवसि०-मिच्छादि०-त्र्यसण्णि०-आहारि-अणाहारि त्ति । एविरि भंगा जालिय वत्तव्वा ।

प्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर अपर्याप्त, काययोगी, खोदारिककाययोगी, खोदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नषुंसकवेदी, कंधादि चारों कपायवाले, मत्यझाती, श्रुनाझनी, असंयत, अचचु-दर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेरयावाले, भव्य, अभव्य, मिण्यादृष्टि, असंझी, आहारक और अना-हारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके भंग जान कर कहना चाहिये।

विशेषार्थ—मोहनीय कमकी स्थितिमें असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धि ये तीन वृद्धियां, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि ये चार हानियां तथा अवस्थित इस प्रकार आठ पद पाये जाते हैं। इनमेसे असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागविद्धि, अ

- १ घुव भंग
- २ संख्यातभागवृद्धिके एक ऋौर नाना जीवोंकी अपेजा
- ३ दुल जोड़
- ६ संख्यातभागवृद्धिके प्रत्येक श्रोर संख्यातगुरा-वृद्धिके साथ एक श्रोर नाना जीवोंकी श्रपन्ना संयोगी भंग
- ६ कुल जोड़
- १८ संख्यात भागहानिके प्रत्येक व पूर्वोक्त दो पदों-के साथ संयोगी भंग
- २७ कुल जाड़
- पुत्र संख्यातगुणहानि के प्रत्येक व पूर्वोक्त तीन पदोंके साथ संयोगी भंग
- **८१ कुल जोड़**
- १६२ असंख्यातगुण्हानिक प्रत्येक व पूर्वोक्त चार पदोंक साथ संयोगी भंग

### २४३ कुल जोड़

मृलमें ध्रुव भंगको सम्मिलित न करके केवल भजनीय पदोंके २४२ भंग कहे हैं श्रीर ध्रुव भंगको श्रलग वतलाया है। श्रव यदि इन २४२ भंगोमें ध्रुव भंग भी मिला दिया जाता है तो छल भंगोंका जोड़ २४३ होता है जैसा कि हमने पूर्वमें घटित करके वतलाया ही है। श्रागे सामान्य § २६१. त्रादेसेण णेरइएस असंखे०भागहाणि-ग्रवहाणाणि णियमा अतिथ । सेसपदा भयणिजा । भंगा वादालीसृत्तरदुसदमेत्ता २४२ । एवं सत्तमु पुढवीसु सन्वपंचिदियातिस्वत-मणुस-मणुसपज्ञ०-मणुसिणी-देव० - भवणादि जाव सहस्सार०-सन्वविगलिदिय-सन्वपंचिदिय-वादरपुढवीपज्ज० - वाद्रग्राउपज्ज०-वाद्रतेउपज्ज०-वाद्रवण प्रदिपत्तेयपज्ज०-वाद्रियण्गोदपदिदिदपज्ज०-सन्वतस०-पंचमण०-पंचवचि०-वेउन्विय०-इत्थि०-पुरिस०-विहंग० - चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि ति ।

तिर्यंच श्रादि मार्गणाश्रोमें जो श्रोघके समान कथन करनेकी सूचना की है सो उसका मतलव यह है कि उन मार्गणाश्रोमे जहां जितने सम्भव पद हैं उनमेंसे श्रारंच्यात भागहानि, श्रसंच्यात भागगुढि श्रोर श्राद हन तीन पदोकी श्रापेचा एक श्रुव भंग है और श्रेद पद भजनीय है। विशेष खुलामा इस प्रकार है—मूलमें गिनाई हुई मार्गणाओं मेसे काययोग, श्रोदारिककाययोग, चारों कपाय, श्राचनुर्वजन, भव्य, आहारक श्रोर नपुंसकवेद ये मार्गणाएं ऐसी है जिनमें अविकल श्रोध-प्रमुख्या घटित हो जाती है, श्राद २४३ मंग प्राप्त होते हैं। मामान्य तिर्यच, श्रोदारिकसिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, श्रमंज्ञी, श्रनाहारक, मिथ्यादृष्टि, श्रमव्य श्रोर हप्त्यादि तीन लेश्यावाले ये मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमें असंख्यात गुण्हाति नहीं पाई जाती श्राद भजनीय पद चार रह जाते हैं श्रोर इमलिय इगमें श्रुव भंगके साथ कुल भंग ५९ होते हैं। तथा इनके श्रीतिरक्त जो एकिन्द्रिय श्रीर उनके भेद तथा पाच स्थावरकाय श्रीर उनके भेद वतलाये हैं। उनमें संख्यातभागगुद्धि, संख्यातगुण्हानि श्रोर श्रमंख्यातगुण्हानिक विना एक वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रवस्थित ये पांच पद ही पाय जाते है। सो इनमेंसे श्रमंख्यात भागवृद्धि, श्रमंख्यात भागवृद्धि, श्रमंख्यात पर की अपेचा एक श्रुव मंग ही प्राप्त होता है। श्रव भजनीय पद दो रह जाते हैं, श्रतः इनमें श्रुव भंगके साथ कुल हो भंग ही प्राप्त होता है। श्रव भजनीय पद दो रह जाते हैं, श्रतः इनमें श्रुव भंगके साथ कुल हो भंग होते हैं।

§ २८१. आदेशकी अपेसा नार्राक्योमं असंख्यात मत्त्रहानि और अवस्थित विभक्तिवालं जीव नियमसे हैं। तथा शेष पद भजनीय है। संग दोरों व्यालीस होते हैं। इसी प्रकार सातों प्रथिवियोंक नारकी, सभी पंचिन्द्रिय तिर्यच, नाभान्य भसुष्य, मसुष्य पर्यावद, मसुष्यनी, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर महस्त्रार कत्य तकके देव, सनी विकलेन्द्रिय, सभी पंचिन्द्रिय, वादर प्रथिवीकायिक पर्याव, वादर जलकायिक पर्याव, वादर आग्वकायिक पर्याव, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शर्मेष्ठ शरीरपर्याव, वादर सिगोद्यतिष्ठित व्यवेकशर्रीर पर्याव, सभी वस, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, बैकियिककायकोगी, स्वविदी, पुरुपवेदी, विभंगज्ञानी, चतुदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पदालेश्यावाले और संज्ञी जीवोक जानना चाहिये।

विशोपार्थ—नारिकयोमे असंख्यात शुणहानिको छोड़कर सात पद हैं पर उनमें असंख्यात भागहानि और अवस्थित ये दो पद प्रुव है तथा शेष पांच पद भजनीय हैं, अतः यहां भी भजनीय पदोंके २४२ भंग और एक घ्रुव भंग इस प्रकार कुल २४० भंग प्राप्त होते हैं। आगे सातों तरहके नारकी आदि कुड़ और मार्गसाओं को सामान्य नारिक्यों समान कथन करनेकी सूचना की है सो उसका यह मतलब है कि जहां जितने सम्भव पद हैं उनमें में पारंख्यात भागहानि और अवस्थित इन दो पदोंकी अपेचा एक घ्रुव भंग है और शेष पद भजनीय हैं। विशेष खुलासा इस

ु २६२ मणुस्सञ्चपज्ज० सव्भपदा भयणिज्जा । एवं वेउव्वियमिस्स०-त्रवगद०-सुहुम०-सम्मामि० । एवरि भंगा जाणिय वत्तव्या ।

१२६३ त्राणदादि जाव सव्वद्वसिद्धि ति त्र्यसंखेजनभागहाणी णियमा त्रित्य । सिया एदे च संखेजनभागहाणिविहत्तित्रो च । सिया एदे च संखेजभागहाणिविहत्तिया च । धुवसिद्दा तिण्णि भंगा । एवं परिहार०-संजदासंजद० ।

§ २६४. त्र्याहार०-आहार्रामस्स० मिया त्र्रासंखेज्जभागहाणिविहत्तिओ, सिया अमंखे०भागहाणीविहत्तिया एवं दोण्णि भंगा २ । एवमकसा०-जहाक्खाद०-सासण० । आभिणि०-सुद०-ओहिणाणीसु अमंखेजजभागहाणी णियमा अत्थि । सेस-

प्रकार है—मूलमं गिनाई हुई मार्गणाओं मेसे सातों नरकके नारकी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य देव, भवनवासियों से लेकर सहस्रार कल्पनकके देव, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, वैक्रियिककाय-यांगी, विभंगज्ञानी, पीनलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले ये मार्गणाएं एसी हैं जिनमे सामान्य नार-कियों के समान प्रस्पणा वन जाती है, अतः इनमें ध्रव मंग सिंहत कुल मंग २४३ होते हैं। सामान्य मनुष्य, पर्याप्त गनुष्य, मनुष्यती, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पाचो वचनयोगी, स्त्रीवद्याले, पुरुपवद्याले, चत्तुर्शिती और संज्ञी ये मार्गणाएं ऐसी हैं जिनमे अमंख्यात गुणहानि और पाई जाती है, अतः कुल आठ पदोमसे भजनीय पद ६ हो जाते हैं अतः यहां प्रुच मंगके साथ कुल मंग ७२६ हो जाते हैं। विकलत्रयोंमे असंख्यात-भागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि तथा तीन हानि और अवस्थित इस प्रकार छह पद हैं। इनमेसे चार अध्व व है. अतः यहां घ्रव भंगके साथ कुल मंग ५१ होते हैं। अव शेप रहीं प्रथिवीकायिक पर्याप्त आदि मार्गणाएं सा उनमें असंख्यात भागवृद्धि, तीत हानि और अवस्थित इस प्रकार पांच पद हों। इनमेसे तीन अध्व व हैं, अतः यहां घ्रव मंगके साथ कुल मंग २७ होते हैं।

§ २६२. मनुष्य अपर्यातकांके सभी पद भजनीय हैं। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, अपगनवेदी, सूर्ममांपरायिकसंयत और सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके भंग जानकर कहना चाहिये।

विशेषार्थ-लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंके त्रासंख्यात गुगाहानिके सिवा सात पद पाये जाते हैं त्रीर ये सब भजनीय है, अनः बहां ध्रुव भंगके बिना कुल भंग २१=६ होगे। इसी प्रकार बैकियिक-मिश्रकाययोगमे २१=६ भंग जानना चाहिये। अपगत्येदो, सूच्मसांपरायिकसंयत और सम्यग्मिण्या-दृष्टिके असंख्यातभागदानि, संख्यातभागहानि, और संख्यातगुगाहानि ये तीन पद है तथा ये तीनों भजनीय है, अतः यहां २६ भंग होगे।

§ २६३. ञ्रानतसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितकके देवोंमे अमंख्यात भागहानिवाले जीव नियमसे हैं। तथा कदाचित् असंख्यात भागहानिवाले ज्ञानेक जीव हैं और संख्यातभागहानिवालो एक जीव हैं। कदाचित् असंख्यातभागहानिवाले अनेक जीव हैं। इसी प्रकार परिहारिवशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये।

§ २८४. आहारककाययोगी और अहारकिमिश्रकाययोगी जीवोमें कदाचित असंख्यात भाग-हानिवाला एक जीव है और कदाचित् असंख्यातभागहानिवाले अनेक जीव हैं। इस प्रकार दो भंग हैं। इसी प्रकार अकपायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्टिए जीवोंके जानना चाहिये। आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें असंख्यात भागहानिवाले जीव नियम पदा भयणिङ्जा । एवं गणपङ्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-स्रोहिदंस०-सुक्क०-सम्मा-दि०-खइय०-वेदय०दिहि चि । उबसय० दो हाणी भयणिङ्जा ।

# एवं गाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमो समत्तो ।

प्रशेषण अमंग्वेश्मागायाणुगमेण दुविही णिद्देसो—अघेण आदेसेण य।
श्रोधेण अमंग्वेश्मागायट्टी स्वजीवाणं केविडियो भागो ? असंग्वेश्मागायट्टी सव्वजीवाणं केविडियो भागो ? मंग्वेडज्ञश्मागो । असंग्वेश्मागायाणी सव्वजीव के ? संग्वेडजा भागा । सेमपदा सव्वजीवा के ? अणंतिमभागो । एवं तिरिक्ख - सव्वप्रदेश्च - वणप्पदि - वाद्रवणप्पदि - वाद्रवणप्पदि प्रजत्ताप जत्त - सुहुम्यणप्पदि - सुहुम्यणप्पदि - वाद्रवणप्पदि - वाद्रवणप्पदि - वाद्रवणप्पदि - वाद्रवणप्पदि - वाद्रवणप्पदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पादि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्णपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्णपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्णपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्यपदि - वाद्रवण्यपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्पपदि - वाद्रवण्यपदि - वाद

विशेषार्थ - स्राभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर स्रविधिज्ञानी जीवोंके स्रसंख्यात भागहानि की स्रोपेता एक श्रुवपद है स्रोर संख्यातमागहानि, संख्यातमुण्हानि स्रोर स्रसंख्यात गुण्हानि ये तीन पद स्रश्रुव है स्रवः यहां श्रुव भंगके साथ कुल भंग २० होंगे। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी; संयत, सामायिकसं गत, छेदापस्थापनासंयत, स्रवधिवकारी, क्षुक्ललेह्यावाले सम्याहिष्ट स्रोर चायिकसम्यग्हिष्ट जीवोके असंख्यात गुण्हानि नहीं होती, स्रवः यहां एक श्रुवपद स्रोर दो अजनीय पद हुए स्रोर इसलिये छुत भंग नी होंगे। उपक्षमसम्यग्हिष्ट जीवोंके असंख्यात भागहानि स्रोर संख्यात भागहानि ये दो पद ही होते हैं। किन्तु दोनों भजनीय हैं स्रवः यहां छुत्त भंग स्राठ होगे।

इस प्रकार नाना जीवोकी अपेत्रा भंगविचयानुगम समाप्त हुआ।

इस्थ. भागाभागानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है - ख्रांचिनिर्देश खोर आदेशिनिर्देश । उनमेसे ख्रांचिकी अपेचा असंख्यात भागष्टि वाले जीव सब जीवोके कितने भाग हैं ? ख्रसंख्यात भाग हैं । ख्रवस्थितिकाले जीव सब जीवोके कितने भाग हैं ? संख्यात वे भाग हैं । असंख्यात भागहानिवाले जीव सब जीवोके कितने भाग हैं । इसी प्रकार सामान्य तियच, सभी एवं न्द्रिय, वनस्पतिकायिक, वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक ख्रप्याप्त, सूच्म विगोद प्याप्त, सूच्म विगोद ख्रप्याप्त, काययोगी, ओदारिक काययोगी, ख्रोदारिक स्थिकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, काथादि चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, ख्रच्च्यूर्शनवाले, कृष्णादि

अभवसि०-भिच्छादिहि०-असिण्ण०-आहारि०-ऋणाहारि ति ।

२६६. आदेसेण णेरइएमु अर्वाह० सव्वजी० के० १ संखंज्जिदिभागो । असंखे०भागहाणी० सव्वजी० के० १ संखंजा भागा । सेसपटा सव्वजीवाणं के० १ असंखे०भागो । एवं सत्तसु पुढवीमु सव्वपंचिदियतिरक्त-भणुस्स-मणुसअपज्जत्त-देव-भवणादि जाव सहस्सार० सव्वविगित्विदिय-सव्वपंचिदिय-चन्गारिकाय-वादर—सहुम-पज्जतापज्जत्त-वादरवणण्पदि०पत्तेय०-सव्वतस०-पंचमण०-पंचविच०-[वेउव्वि०-] वेउव्वियमिस्स०-इत्थि-पुरिस०-विहंग०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सिण्णि ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु असंखे०भागहाणी० सव्वजी० के० १ संखेजा भागा । सेसपटा संखेजिदिभागो । एवभवगद०-मणुपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-सहुम०संजदे ति ।

६ २६७ आसदादि जाव अवगइदे ति स्रसंखे०भागहासी० सन्धजी० के० ? स्रमंखेज्ञा भागा । संखे०भागहासी० सन्बजी० के० ? स्रमंखे०भागो । एव-तीन लेश्यावाले, भन्य, स्रभन्य, मिथ्यादृष्टि श्रसंज्ञी, श्राहारक खोर स्रमाद्दारक जीवो के जानना चाहिये।

विशेषार्थ-यहां तिर्यंच छादि अन्य मार्गग्। ओमें जो छोष्यके समान भागाभाग जाननेकी सूचना की सो उनका यह अभिप्राय नहीं कि इन सब मार्गग्। ओमें सब परोंबी छापेचा छोषके समान भागाभाग बन जाता है। किन्तु इसका इनना ही छामिषाए है कि जलां जितने पद सम्भव हों उनकी अपेचा। भागाभाग ओषके समान ही जातना। नथा जहां जो पद न हो उसकी अपेचा भागाभाग कामना चाहिये।

\$ २८६ . प्रादेशनिर्देशकी श्रिपेचा नारिक्यों में श्रविस्थितियां जीव सभी नारिक्यों के किनने भाग हैं ? संख्यातवें भाग हैं । असंख्यान भागहानिवालें जीव सभी नारिक्यों के किनने भाग हैं । संख्यात बहुभाग है । होन पदवालें जीव सभी नारिक्यों के किनने भाग हैं । इसी प्रदार सानी प्रथिवियों के नार्स्की, सभी पंचित्त्रियतियंच, सामान्य सनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियों से लेकर सहस्थार करूपनक्के देव, सभी विकलेन्द्रिय, सभी पंचित्रिय, प्रथिवीकाथिक श्रादि चार स्थायरकाय तथा इनके बादर श्रोर सूच्म नथा बादर और सूच्मोक पर्याप्त श्रोर श्रवपाप्त, बादर बनस्पतिकाथिक प्रयोक्तशरीर, सभी त्रम, पांचो भनोयोगी, पाचो दचनयोगी, बीकिथिककाययोगा, बीकिथिकमिश्रकायथोगी, स्त्रीवद्याले, पुरुपवेदवाले, विभगचानी, चतुद्रश्तवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले श्रोर मंज्ञी जीवों के जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्तक श्रोर मनुष्यवियोंमें श्रमेष्यात भागहानिवाले जीव उक्त सभी जीवों के किनने भाग हैं । संख्यात बहुभाग है । तथा श्रेष पद्यालें जीव संख्यातवें भाग हैं । इसी प्रकार श्रप्यातवें साम हैं । इसी प्रकार श्रप्यातवें स्वतालें जीव संख्यातवें भाग हैं । इसी प्रकार श्रप्यातवें स्वतालें जीवों के किनने भाग है । संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत श्रोर सूच्मसांपरायिक संयत जीवों के जानना चाहिये ।

§ २६७ द्यानत कन्पसे लेकर द्यपराजित तक हे देवोमे असंख्यात भागहानिवाले जीव उक्त सभी जीवोके कितने भाग प्रमाण हैं ? त्रसंख्यात बहुभाग हैं । संख्यात भागहानिवाले जीव उक्त सभी जीवो कितने भाग हैं, असंख्यातवें भाग हैं । इसी प्रकार उपशमसम्यग्दष्टि और संयतासंयत मुत्रसम०-संज्ञदासंजदार्सं । सन्बहे ब्रसंखे०भागहासी० सन्बजी० के० ? संखे०भागा । संखे०भागहासी० सन्बजी० के० ? संखे०भागो । एवं परिहार० ।

ृ २६⊏् त्राभिणि०-मुद०-श्रोहि० असंखे०भागहाणी० सव्वजी० के० १ असंखेज्जा भागा । सेसपटा असंखे०भागो । एवभीहिदंस०-मुक्क०-सम्मादि०-स्वइय०-वेदय०-सम्मामिच्छादिष्टि चि । आहार०-आहारमिस्म०-अकसा०—जहाक्खाद०-सासणसम्मादिष्टीणं सुत्थि भागाभागं ।

# एवं भागाभागाणुगमा समत्तो ।

\$ २६६ पिरमाणाणुनमेण दुविद्दो णिदेसो-श्रोघेण आदेसेण य । तत्थ-ओघेण असंखे०भागवड्डी हाणी० अविद्धि० केत्तिया १ अणंता । दोवर्ड्डी० दोहाणी० के० १ असंखेजा । असंखे०गुणहाणी० केत्ति० १ संखेजा । एवं कायजीगि०-ओराल्डि०-एवं स०-चत्तारिकसाय-अचक्खु०-भविद्यि०-आहारि ति ।

३०० आदेसेण णेरइएमु सब्बपदा केति० १ असंखेजा । एवं सब्बणेरइयसब्बपंचिदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-सब्बितलिदिय-पंचिदियअपज्ज०-चत्तारिकाय-बाहरवणप्फटिपनेय०-तस्सेव पज्जतापज्ज०-

जीवोकं जानना चाहिये। सर्वाथिसिद्धिके देवोमे ऋसंख्यात भागहानिवाले जीव उक्त सभी जीवोके कितने भाग हैं ! संख्यात बहुभाग है। संख्यात भागहानिवाल जीव उक्त सभी जीवोके कितने भाग हैं ? संख्यातवें भाग हैं । इसी प्रकार परिहारविद्युद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिये।

§ २६८. आभिनियाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और श्रुविधिज्ञानी जीयां में असंख्यात भागद्दानियालें जीय उक्त सभी जीयांके कितने भाग है ? असंख्यात बहुभाग है । तथा राप पद्याले जीव असंख्यातयें भाग हैं । इसी प्रकार अविदिशंतयाले, श्रुक्तलेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, त्वायि इसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिण्यादृष्टि जीयोंक जानना चाहिये । आहारकाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, अक्षायों, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्दृष्टियोंक भागाभाग नहीं है ।

## इस प्रकार भागाभागानुगम समाप्त हुआ।

ू २६६. परिमाणानुगमकी यपेचा निर्देश दो प्रकारका है—स्रोचित्देश स्रोर स्रादेशनिर्देश। उनमेंसे स्रोचकी स्रपंचा स्रसंख्यात भागवृद्धि, स्रसंख्यात भागवृद्धि, स्रसंख्यात भागवृद्धि, स्रसंख्यात भागवृद्धि, स्रसंख्यात भागवृद्धि, स्रसंख्यात हों। क्वितने हें १ स्रसंख्यात हों। तथा असंख्यात गुणहानिवाले जीव कितने हें १ संख्यात हें। इसी प्रकार काययोगी, स्रोदारिक काययोगी. नपुंमकवेदवाले, कोधादि चाने कवायवाले, स्रच्चुदर्शनवाले, भव्य स्रोर स्राहारक जीवोंके जानना चाहिये।

\$ २००. श्रादेशकी अपेदा नारिकयोमे मर्भा पदवाले जीव किनने हैं ? असंख्यान हैं । इसी प्रकार सभी नारकी, सभी पचेन्द्रिय निर्यंच, सनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, सभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, पृथिवीकायिक आदि चार स्थावर

तसत्रपञ्ज० -वेउव्यय० -वेउव्ययमिस्स-विद्ंग० -तेउ० -पम्मलेस्से ति ।

- ६ २०१. तिरिक्ता श्रोघं । णवरि असंखे०गुणहाणी णित्थ । एवमेइंदिय-सन्ववणप्फदि०-श्रोरालियमिस्स०-कम्मइय०-मिद-सुद्अण्णाण०-श्रसंजद०-तिण्णले०-अभव०-मिच्छादिष्टि-असिण्ण-त्राणाहारि ति ।
- ृ ३०४. मणुस्सेसु णिरश्रोघं । णवरि असंखे∘गुणहाणी० संखेजा । एवं पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सिण्णि ति । मणुस्सपज्ज०-मणुस्सिणीसु सव्वपद्० के० १ संखेज्जा । एवं सव्वट०-अवाद०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सहुमसांपराय० ।
- ६ २०२. आणदादि जाव अवराजिदा त्ति असंखे०भागहाणी संखे०भागहाणी केत्ति० ? असंखेज्जा । [एवं संजदासंजद० | आहार०-] आहार०िमस्स० असंखे०भाग हाणी० केत्ति० ? संखेज्जा । एवमकसाय०-जहाक्खाद०त्ति ।
- ३ ३०४. त्राभिणि०-सुद्०-ओहि० तिष्णि हाणि० केत्तिया १ असंखेज्जा ।
  त्रसंखे०गुणहाणी० संखेजना १ एवमोहिदंस०-सुक्क०-सम्मादिहि ति ।

काय, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर तथा इनके पर्याप्त ख्रोर श्रपर्याप्त, ब्रस ख्रपर्याप्त, वैकियिककाययोगी, वैकियिकमिश्रकाययोगी, विभंगज्ञानी, पीनलेश्यावाले ख्रोर पद्मलेश्यावाले जीयोके जानना चाहिये।

- ६ ३०१. तिर्यचोंमे असंख्यातमागवृद्धि आदिकी अपेचा संख्या ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमे असंख्यात गुण्हानि नहीं है। इसी प्रकार एकेन्द्रिय, सभी वनस्पतिकायिक, ऑदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण्वाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, छप्णादि तीन लेश्यायाले, असन्य, मिण्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।
- \$ २०२. मनुष्योमे असंख्यात भागवृद्धि आदिकी अपेत्ता संख्या सामान्य नारिकयोंके समान है । इतनी विशेषता है कि इतमें असंख्यात गुण्हानिवाले जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार पंचित्रिय, पंचित्रिय पर्याप्त, त्रम, त्रमपर्याप्त, पाचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, स्त्रविद्वाले, पुरुपवेदवाले, चत्तुदर्शतवाले और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्तक और मनुष्यतियों में सभी पद्वाले जीव कितने है १ संख्यात है । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिके देव, अपगतवेदवाले, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत छेदापस्थापनासंयत, परिहारविश्चिद्धसंयत और सूचम-सांपरायिकसंयत जीवोके जानना चाहिये ।
- \$ २०३. त्र्यान करपसे लेकर अपराजित तकके देवों में असंख्यात भागहानि और संख्यात भागहानिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इभी प्रकार संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी और आहारकिमश्रकाययोगियोमें असंख्यात भागहानिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात है। इसी प्रकार अकपायी और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

§ ३०५ खइय० असंखेजनभागहाणी० के० ? असंखेजना । संसपदा संखेजना ।
वेदग० तिष्णि हाणी० के० ? असंखेजना । उवसम० दो हाणी० असंखेजना ।
सासण० असंखे०भागहाणी० केत्ति० ? असंखेजना । सम्भामि० तिष्णि हाणी०
वेदय०भंगो ।

## एवं परिमाणाणुगमो समत्ता ।

- \$ ३०६ खेलाणुगमेण दुविहो णिहं सा त्रीयेण श्रादेसेण य । तत्थ ओघेण असंखे०भागवड्ढी हाणी अविह० केविह खोत्ते ? सब्बळोगे । सेसपदा केविह खोत्ते ? लोग० असंखेजज०भागे । एवमणंतरासीणं ।
- \$ २०७. पुढवी-वादरपुढवी-वादरपुढवीख्रपज्ञ०-सुहुमपुढवी-मुहुमपुढवीपज्जत्ता-पज्जत्त-आउ०-वादरख्राउ०-वादर श्राउद्यपज्ञ०-सुहुमआउ०-सुहुमखाउपज्जत्तापज्जत्त० तेउ०-वादरतेउ०-वादरतेउद्यपज्ज०-सुहुमतेउ०-मुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-वादर-वाउ०-वादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त० अमंखेज्जभागवड्ढी-हाणी अवद्वि० केविड खेत्ते ? मव्वलोगे । संसपदा० के० ? लोग० असंगोज्ज०भागे । सेससंगोज्जासंगोजजरासीणं सव्वपदा लोगस्स असंगो०भागे । एविर वादरवाड-

§ ३०५. त्वायिकसम्यग्द्दष्टियोमे असंख्यात भागहानिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। तथा शेष पदवाले जीव सख्यात हैं । वेदकसम्यग्दिष्टियोमें तीन हानिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात है। उपशमसम्यग्दिष्टियोमें दो हानिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात है। सासादनसम्यग्दिष्टियोमें आसंख्यात भागहानिवाले जाव कितने हैं ? असंख्यात है। सम्यग्मिण्यादृष्टियोमें तीन हानिवाले जीवोका प्रमाण वेदकसम्यग्दृष्टियोके समान है।

### इस प्रकार परिमाणानुगम समाप्त हुआ।

§ ३०६. देत्रानुगमकी अपेद्धा निर्देश दो प्रकारका है— खांवनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे खांवकी अपेद्धा असंस्थान भागवृद्धि, असंस्थान भागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने चेत्रमे रहते हैं १ लोको खस्त्रमे रहते हैं १ लोको खस्त्रमान भाग चेत्रमें रहते हैं १ लोको खस्त्रमान भाग चेत्रमें रहते हैं १ व्यास्थान स्थायाली राशियोंक कहना चाहिये।

§ २०७. पृथिवीकायिक, वादरपृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूच्मपृथिवीकायिक, सूच्मपृथिवीकायिक पर्याप्त, सूच्मपृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक, वादर जलकायिक अपर्याप्त, सूच्म जलकायिक, यादर जलकायिक अपर्याप्त, सूच्म जलकायिक अपर्याप्त, अग्निकायिक अपर्याप्त, सूच्म जलकायिक अपर्याप्त, सूच्म अग्निकायिक व्यपर्याप्त, सूच्म अग्निकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक अपर्याप्त, सूच्म वायुकायिक, सूच्म वायुकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक अपर्याप्त, सूच्म वायुकायिक, सूच्म वायुकायिक पर्याप्त, वार्म वायुकायिक, सूच्म वायुकायिक पर्याप्त, वार्म वायुकायिक अपर्याप्त, क्रांचे अप्याप्त भागवृद्धि, अर्थाय्यात भागवािक छोर अविभिन्न विभक्तिवाले जीव फिनने चेत्रमे रहते हैं १ सव लोकमे रहते हैं । तथा शेप पदवाले जीव किनने चेत्रमे रहते हैं १ लोकके अर्थास्वा सभी पदवाले जीव

# पज्ज॰ अमंखे॰भागवड्ढी हाणी अविह॰ लोगस्स संखोज्जिदिभागे । एवं खोत्ताणुगमी समत्तो ।

§ ३०८ पोसणाणुगमेण दुनिही णिहे सी — श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ श्रोघेण श्रासंखेज्ञभागवड्ढी-हाणी-अविड० केविडयं खेनं पोसिदं १ सन्बलोगी । दोवड्ढी-दोहाणी० के० खे० पो० १ लोग० श्रसंखे०भागो श्राह—चोहसभागा देसूणा सन्बलोगो वा । असंखेज्जगुणहाणी० के० खे० पो० १ लोग० श्रसंखे०भागो । एवं कायजोगि०-चत्तारिकसा०-श्रचक्खु०-भवसि०-आहारि ति ।

लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण त्त्रमे रहते हैं। इतनी विशेषता है कि बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि स्रोर अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका त्तेत्र लोकका संख्यातवां भाग है।

विशेषार्थ-श्रोघसे असंख्यानभागवृद्धि, श्रसंख्यातभागद्यानि श्रीर श्रवस्थित स्थिति-वाले जीव अनन्त है यह परिमाणानुयागद्वारमे वतला ही त्राये हैं और अनन्त संख्यावाली राशियोका स्वस्थानकी अपेन्ना भी सब लोक नेत्र बन जाता है, अतः इन तीन पदवाले जीबोंका त्र्यायसे सब लाक त्रंत्र कहा । किन्तु शेष पांच पदवाले जीव बहुत स्वरूप है, क्योंकि उन पदोंका अधिकतर त्रसोसे ही सम्बन्ध है। दो हानिया एसी है जो स्थावरोक भी पाई जाती है पर जो त्रस स्थितिकाण्डकचातके द्वारा संख्यात भागहानि श्रीर संख्यात गुणहानिको कर रहे हैं ऐसे त्रस यदि मर कर एकेन्द्रियोमे उत्पन्न हो तो उन स्थावरोंके ही वे दो हानियां पाई जाती हैं, खतः शेप पदवालोंका जेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण ही वनता है। जितनी भी अनन्त संख्यावाली मार्गणाएं हैं उनमे भी ऋषने ऋषने सम्भव पदोंकी ऋषेचा इसी प्रकार चेत्र जानना चाहिये। तथा सामान्य प्रथिवीकायिक त्र्यादि क्रज त्र्यसंख्यात संख्यावाली एसी मार्गणाएं है जिनका सब लोक जेब बन जाता है ऋतः उनमे भी अपने सम्भव पदोकी ऋपेचा ऋबिकल स्त्रोय प्ररूपणा घटित हो। जाती है। पर इनसे ऋतिरिक्त जितनी भी असम्यात या संख्यात संख्यावाली मागणाएं हैं उनमे सभी सम्भव पदोकी अपेदा चेत्र लोकक असख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि उन मार्गणावाले जीवोका ज्ञेत्र ही लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण है। किन्तु वायुकायिक पर्याप्त जीव इस व्यवस्थाके अपपादमूत है, क्योंकि उनका चेत्र लाकके संख्यातवें भागप्रमाण है अतः उनमें असंख्यात भागहानि, असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितवालों हा त्रेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण जानना ऋौर हो। पदाकी ऋषेता लाकके ऋसंख्यातवे भागप्रमाण जेत्र जानना ।

इस प्रकार चेत्रानुगम समाप्त हुत्रा ।

६ ३०=. स्पर्शनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंधनिर्देश खोर आदेशनिर्देश। उनमेंसे आंधकी अपेचा असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने चंत्रका सार्श किया है ? सर्वलोकका स्पर्श किया है । दो वृद्धि और दो हानिवाल जीवोंने कितने चंत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवे भाग चंत्रका, त्रसनालीक चौदह भागोम से कुछ कम आठ भागप्रमाण चंत्रका और सर्वलोक प्रमाण चंत्रका स्पर्श किया है । असंख्यातगुण्हानिवाले जीवोंने कितने चंत्रका स्पर्श किया है ? लोकके अस्ख्यात्वे भाग चंत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार काययोगी, क्रोधादि चारों कपायवाले, अचनुदर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ ३०९ ब्रादेसेण णेरइएस सन्वपदा के० खे० पो० ? लोग० ब्रासंखेभागो छ चोइस० देस्एा। पढमपुढिव० खेत्तभंगो। विदियादि जाव सत्तिमि ति सन्वपदाणं विहत्तिएहि के० खे० पो० ? लोग० ब्रासंखे०भागो एक वे तिण्णि चत्तारि पंच छ चोइसभागा देसुणा।

§ ३१०़ तिक्खि० श्रसखे॰भागवट्टी-हाणी०-अविटि० के० ? सव्वलोगो । दोवट्टी-दोहाणी० के० खे० पो० ? लोग० श्रसंखे०भागो सव्वलोगो वा । एवमो-रालियमिस्स०-कम्मइय०-तिण्णिले०-असण्णि०-अणाहारि ति ।

विशेषार्थ-श्रोघसे श्रमंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि और श्रवस्थित पदवालोंका स्पर्श सब लोक वतलानेका कारण यह है कि इन पदवाले जीवोंका प्रमाण श्रमन्त है श्रोर वे सब लोकमें पाये जाते हैं। संख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, संख्यात भागहानि श्रोर संख्यात गुणहानि इन पदवालोंका स्पर्श तीन प्रकारका वतलाया है। लोकका श्रमंख्यातयां भाग स्पर्श वर्तमान कालकी श्रपेचा वतलाया है। कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु प्रमाण स्पर्श विहार, वेदना श्रादि की अपेचा वतलाया है, क्योंकि उक्त पदवालोंका नीचे दो राजु श्रीर ऊपर छह राजु तक गमनागमन पाया जाता है। श्रोर सब लोक प्रमाण स्पर्श मारणान्तिक समुद्धात श्रोर उपपादपदकी श्रपेचा बतलाया है। तथा श्रमंख्यात गुणहानिवालोंका स्पर्श लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण वतलानेका कारण यह है कि इस पदको नोवें गुणस्थानवालों जाव ही प्राप्त होते हैं। पर नोवें गुणस्थानवालोंका स्पर्श लोकके श्रसंख्यातवें भागसे श्रधिक नही है। कुछ मार्गणाएं भी एसी है जिनमे यह श्रोव-प्रस्पणा श्रविकल वन जाती है। जैसे काययोगी श्रादि, श्रतः इनके कथनको श्रोघके समान कहा।

३०६. आदेशनिर्देशकी अपेद्या नारिकयों मं सभी पदवाले जीवोने कितने देलका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण देलका और त्रसनालीके चोदह भागों में से कुछ कम छह भाग प्रमाण देलका स्पर्श दिया है। पहली पृथिवीमें स्पर्श देलके समान जानना चाहिये। दूसरी पृथिवीसे लेकर सानवीं पृथिवी तक सभी पदवाले जीवोने कितने देलका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण देलका और त्रसनालीके चोदह भागों में से छुछ कम एक, इछ कम दो, इछ कम तीन, कुछ कम चार, इछ कम पाच और इछ कम छह भागप्रमाण देलका स्पर्श किया है ।

विशेषार्थ—नरकमे सामान्य नारिकयोंका और प्रत्येक नरकके नारिकयोंका जो स्पर्श बतलाया है वही यहां सब पदवालोका स्वश्चे हैं उससे इसमें कोई विशेषता नहीं हैं। कारण यह है कि सब नारिकी संज्ञी पचेन्द्रिय होते हैं अतः सबके सब पद सम्भव है और इसोलिय यहां प्रत्येक पदकी अपेना वही स्वश्चे प्राप्त होता है जो सामान्य नारिकयोंक या उस नरकके नारिकयोंक बतलाया है।

§ ३१०. तिर्यचोंमें असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित विभक्तिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है १ सवलो क चेत्रका स्पर्श किया है। तथा दो वृद्धि और दा हानिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग और सर्वलोकप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार ऑदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, इटणादि तीन लेश्यावाले, असंक्षी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ ३११. सन्त्रपंचिं वितिरेक्ख सन्त्रपदा के वेसं पो १ शेलोग अपंखे ०- भागो सन्त्रलोगो वा । एवं मणुस्स अपउत्त ०-सन्त्रविगिलिदिय-पंचिदियअपउत्त ०- बादरपुढविपज्त ०-वादरआउपउत्त ०-वादरपुढविपज्त ०-वादरआउपउत्त ०-वादरवाउपज्त -वादरवाणप्पदिपत्तेय पज्त ०-तसअपज्ञ ते ति । ए। यि वादरवाउपज्जत्त ए हि असंखे ज्ञभागवड्ढा । न्यापि अविदि के ० खे ० पोसिदं १ लोग ० संखे ० भागो सन्त्रलोगो वा । मणुसतिय ० पंचि ० तिरिक्ख भंगो । णविर असं ० गुणहाणीए ओघभंगो ।

§ ३१२. देवेसु सव्वपदाणं वि० के० खे० पोसिदं १ लोगस्स असं०भागो ऋहणव चोइस० देसूणा । एवं सोहम्भीसाणे । भवण०-वाण०-जोइसि० सव्वपदा० के० खे० पो० १ लो० ऋसंखे०भागो ऋइधुट-णवचे।इसभागा वा देसूणा । सणक्कुमारादि जाव सहस्सारो त्ति सव्वपदा० के० खे० पो० १ लोग० असंखे०भागो भटचोइस०

विशेषार्थ—ितर्यचोमं ऋसंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और ऋवस्थितपदवाले जीव सव लांकम पाय जाते है अतः इन तीन पदवालांका स्पर्श सव लांक वतलाया है। संख्यात भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, सख्यात भागहानि और संख्यात गुणहानि विभक्तिवाले तिर्यंच जीव पाये तो लांकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रमें ही जाते हैं किन्तु मारणानितक और उपपादपदकी ऋपेचा अतीत कालमें इन्होने सव लांकका स्पर्श किया है इसलिये इनका लांकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सव लांकप्रमाण स्पर्श वनलाया है। औदारिकमिश्रकाययोग आदि मूलमें गिनाई गई कुछ और ऐसी मार्गणाएं हैं जिनका स्पर्श तिर्यंचोंके समान है अतः उनके कथनका तिर्यंचोंके समान कहा।

§ ३११. सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमं सभी पदवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्वलोकप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, मभी विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, वादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, वादर अग्निकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त और अस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। इतनो विशेषता है कि बादर वायुकायिक पर्याप्तकोंमे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके संख्यातवें भाग और सर्वलोकप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । मनुष्यिकके पंचेन्द्रिय तियेचोंके समान स्पर्श जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यात गुणहानिकी अपंचा स्पर्श औष्ठकं समान हं।

§ ६१२. द्वांम सभी पद्वाले जावाने कितने चेत्रका स्तर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और जसनालीके चौदह भागामें से कुछ कम आठ आर कुछ कम नी भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार सौधर्म और एशान स्वगंके देवोंके जानना चाहिये। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें सभी पद्वाले जीवाने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चंत्रका और जसनाली ह चौदह भागामें से कुछ कम साढ़े तीन भाग और कुछ कम नी भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सनत्कुनारसे लेकर सहस्त्रार स्वर्गतकके देवों में सभी पद्वाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और जसनाली के चौदह भागोमें से कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। आनत, प्राण्त, आरण्

देस्रणा । त्राणद-पाणद-आरणच्खुद० सव्वपदा० के० खेर्त्त पोसिदं० १ लोग० असंखे०-भागो अचोइसभागा वा देम्रणा । उविर खेत्तभंगो । एवं वेउव्वियमिस्स०-आहार०-स्राहारमिस्स० - स्रवगद० - स्रकसा० मणपज्ज० - संजद० - सामाइय-छेदो०-परिहार०-स्रहुम०-जहाक्यादमंजदे ति ।

 १३१३. सन्वेइंदिय॰ असंखेजनभागवड्डी-हाणी-अव्रहा० के० खे० पो० ? सन्व-लोगो । संसपद० वि० के० खे० पो० ? लोग॰ असंखे०भागो सन्वलोगो वा । एवं पुढवी०-बादरपुढवी० - वादरपुढवीअपज्ज॰ - सुहुमपुढवी०-सुहुमपुढवीपज्जत्तापज्जत्त-

त्रोर त्राच्यात करपके देवोमे सभी पदवाले देवोन कितने जेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रमनालीके चौदह भागोमें से कुछ कम छह भागप्रमाण चैत्रका स्पर्श किया है । सोलहवें करपके ऊपर स्पर्श चेत्रके समान जानना चाहिये । इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकिकाययोगी, आपगतवेदी, अकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, सूच्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यात संयत जीवोके जानना चाहिये ।

विशोपार्थ-सत्र प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यंचोका वर्तमानकालीन त्रोर कुछ अन्य पदोकी अपेदा श्रतीत कालान स्पर्श लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण तथा मारणान्तिक श्रोर उपपादपदकी अपेदा त्रवीतकालोन स्पर्श सब लोक बतलाया है। तथा सब प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके त्र्रसंख्यात गुणहानिको छोड़कर सब पद संभव है अतः सब प्रकारके तिर्यवीम सब पदवालोका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक वहां है। मुलमे गिनाई गई मनुष्य अपर्याप्तक आदि सब मार्गणाओमें भी ऋपने ऋपने पदोकी ऋपेचा इसी प्रकार स्पश्च प्राप्त होता है ऋतः उनके कथनको पंचेन्द्रिय तिर्यचोके समान कहा है । किन्तु बादर वायुकायिक पर्याप्त जीबोके ऋसंख्यात भागवृद्धि, अमंख्यात भागहानि अोर अवस्थित परकी अपेत्ता छुत्र विशेषता है। बात यह है कि इन जीवोने वर्तमानमे लोकके संख्यातवें भागप्रमाण चंत्रका और ऋतीत कालमे सब लोक चंत्रका स्परा किया है अतः उक्त तीन पदोकी अपेन्ना इनका स्पर्श उक्त प्रमाण ही प्राप्त होता है। जिन कारणोंसे पंचेन्द्रिय तिर्यचोका स्पर्श लोकके ऋमंख्यातवें भागप्रेमाण या सब लोक प्राप्त होता है वे ही कारण मनुष्यत्रिकके भी समभाना चाहिये अतः इनमे पंचेन्द्रियतियँचोके समान स्पर्श वनलाया है । किन्तु मनुष्योंके नोंवां गुणस्थान भी होता है ऋतः यहां ऋस्ख्यातगुणहानि सम्भव है । फिर भी ऋसंख्यात गुणहानिवालोका जो स्पर्श स्रोघसे कह स्राये हैं वही उक्त पदकी स्रपंत्ता मनुष्योंक जानना चाहिये क्योंकि यह पद मनुष्योंके ही होता है। देवोमें जिसका जितना स्पर्श है सब पदोकी अपेना उसका उतनाही स्पर्श प्राप्त होता है अतः यहां उसका विशेष खुलासा नहीं किया । 'एवं' कह कर मुलमें जो জুজ वैक्रियिकमिश्रकाययोग आदि मार्गणाएं गिनाई है वहा एवं' का यही अर्थ है कि जिस मार्ग-एका जितना स्पर्श है अपने सम्भव पद्दोकी अपना उस मार्गणाका उतना ही स्पर्श प्राप्त होता है।

§ ३१३ सभी एकेन्द्रियोमें असंख्यात भागद्यद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित विनक्तियाले जीवोन कितने द्वेत्रका स्पदा किया है ? सर्वतांक चेत्रका स्पर्श किया है । तथा शेष पदवाले जीवोने कितने द्वेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और सर्वलोक चेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूदम पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूदम पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूदम पृथिवीकायिक अपर्याप्त,

आड॰-[-बादरश्राड०-] बादरआडअपज्ञ० - मुहुमशाउ० - सुहुमश्राउपज्जत्तापज्जत्त-तेउ०-वादरतेउ० - वादरतेउश्रपज्ज० - सुहुमतेउ० - मुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-शाउ०-बादर-वाउ०-वादरवाउअपज्ज० सुहुमवाउ० - सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त - वणप्कदि०-वादरवण-प्कदि० - वोदरवणप्कदिपज्जत्तापज्जत्त - सुहुमवणप्कदि - सुहु ववणप्कदिपज्जत्तापज्जत्त-णिगोद०-वादरणिगोद०-बादरणिगोदपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमणिगोद०-सुहु पणिगोदपज्जत्ता-पज्जत्त-वादरवणप्कदिपत्तेय०-वादरवणप्कदिपत्तेयश्रपज्जते ति ।

े ३१४. पंचिद्यि - पंचि ० पड़्ज - तम० - तसपड़ ज ० सव्वपद्वि ० के० खे० पो० १ लोग० असंखे०भागो अहचोइम० देसूणा सव्वलंगो या । णविर असंखेडज - गुणहाणी ० ओघं । एवं पंचमण०-पंचविष्ठ - इस्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि ति ।

ज लकायिक, वादर जलकायिक, वादर जलकायिक अपयाप्त, सूच्म जलकायिक, सूच्म जलकायिक पयाप्त, सूच्म जलकायिक अपयाप्त, अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, शादर अग्निकायिक अपयाप्त, सूच्म अग्निकायिक, सूच्म अग्निकायिक अपयाप्त, सूच्म अग्निकायिक अपयाप्त, सूच्म अग्निकायिक अपयाप्त, सूच्म वायुकायिक वादर वायुकायिक अपयाप्त, सूच्म वायुकायिक अपयाप्त, वास्प्रतिकायिक अपयाप्त, वास्प्रतिकायिक अपयाप्त, वास्प्रतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक, सूच्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म वनस्पतिकायिक अपयाप्त, सूच्म विगोद, अप्याप्त, यादर वनस्पतिकायिक अपयोप्त, सूच्म विगोद, अप्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक अपयोप्त अप्ताप्त सूच्म विगोद अपयोप्त, वादर वनस्पतिकायिक अपयोप्त अप्ताप्त अपयोप्त जीक्षोक जानसा चादिष्य।

विशेषार्थ—जैमा कि आघमे घटित करके वतला आये हैं तद्गुनार असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदवालोका वर्तमान और खानि दंग्नों प्रकारका स्पर्श सव लोक एकेन्द्रियोमे ही पाया जाता है खतः एकेन्द्रियोमे उक्त पदवालोका स्पर्श सव लोक प्रमाण वत्ताया। किन्तु एकेन्द्रियोमे हीप पद सबके नहीं पाये जाते हैं किन्तु जो पंचित्द्रियोमें आकर एकेन्द्रिय होने हैं उन्हांके पाये जाते हैं किन्तु ऐसे जीव स्वस्त होने हैं अतः इनका वर्तमान कालीन स्पर्श तो लोकके खरंख्यानवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है हां अतीन कालीन स्पर्श पय लोक बन जाता है अतः इनमें केप पदीकी अपेता वर्तमान कालीन स्पर्श लोकके अस्ख्यानवें भागप्रमाण कहा और अतीनका नीन स्पर्श सब लोक कहा। मुलमे जो पृथिवी आदि दूसरी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी उक्त प्रमाण स्पर्श उन्ती कमसे बन जाता है खतः उनके कथनका एकेन्द्रियोक समान कहा। इसी प्रकार आगे और जितनी मार्गणाओमें अपने अपने पदीकी अपेता स्पर्श वत्त्वाया है वह उन उन मार्गणाओं से स्पर्श अनुसार वन जाता है। अतः जिस मार्गणाका जितना स्पर्श है खपने सम्भव पदीकी अपेता उपना उपना स्पर्श जानना चाहिये जिसका निर्देश मूलमें किया ही है।

\$ ५१४. पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रम ख्रोर त्रस पर्याप्त जीवोमें सभी पदवाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लॉकके ख्रसंख्यातवें भाग चेत्रका, त्रसनालीके चोदह भागोमेसे कुछ कम ख्राठ भाग चेत्रका श्रोर सब लोक माण चेत्रका स्परा किया है। इतनी विशेषता है कि इनके ख्रसंख्यातगुणहातिका स्पर्शन ख्रोष्ठके समान है। इसी प्रकार पाचों मनोयोगी, पांचों बचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, चतुदर्शनवाले और संज्ञो जीवोके जानना चाहिये। वैकिथिक- वेउन्विय० सन्वपद्वि० के॰ खे० पो० ? लोग० असंखे०भागो श्रह-तेरहचोइस० देसूणा । श्रोरालि० तिरिक्खोधं । एवं णवुंस० ।

\$ ३१५. मदि-सुद्रअण्णा० श्रोघं । णविर श्रमंखेडजगुणहाणी णित्थ । एवम-संजद्०-श्रमव०-मिच्छादिहि ति । विद्दंग० पंचिदियमंगो । णविर असंखेडजगुण-हाणी णित्थ । श्राभिणि०-मुद्द०-श्रोहि० तिण्णि हाणी० के० खे० पो० १ लोग० असंखे०भागो अहचोद्दम० देस्णा । श्रमंखे०गुणहाणी ओघं । एवमोहिदंस०सम्मादिहि ति । एवं वेद्य० । णविर श्रमंखेडजगुणहाणी णित्थ ।

\$ ३१७. खइय॰ असंखे॰भागहाणी॰ के॰ खे॰ पो॰ ? लो॰ ग्रसं॰भागी। अहचोदम॰ देसूणा। सेसपदाणं खेत्तमंगो। उबसम॰ असंखे॰भागहाणी॰ संखे॰-भागहाणी॰ के॰ खे॰ पो॰ ? लोग॰ असंखे॰भागो ग्रहचोहस॰ देसूणा। सासण०

काययोगियोंमे सभी पदवाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रस नालीके चीदह भागोमेसे कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। औदारिककाययोगियोके स्वर्श सामान्य निर्यक्षोके समान जानना चाहिये। इसी प्रकार नपुंसकवेदी जीवोके जानना चाहिये।

§ ३१५. मत्यज्ञानी श्रीर श्रुताज्ञानी जीवोंके श्रांघक समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातगुण्हानि नहीं पाई जाती है। इसी प्रकार असयत, अभव्य और मिण्यादृष्टि जीवोंक जानना चाहिये। विभंगज्ञानियोंके पंचेन्द्रियोंके समान स्पर्श है। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातगुण्हानि नहीं पायी जाती है। आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें तीन हानियाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग वेत्रका और असनालींके चोदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा इनके असंख्यातगुण्हानिकी अपेदा स्पर्शन कोषके समान है। इसी प्रकार अवधिद्दौनवाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। दशनी विशेषता है कि इनके असंख्यातगुण्हानि नहीं पाई जाती है।

\$ 3.75. पीतलेश्यावालोंक सोधर्म कल्पक समान स्पर्शन है। पद्मलेश्यावालोंके सहस्नार कल्पके समान स्पर्श है। तथा छुक तलेश्यावालोंमें तीन हानिवाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है। लांकके अमंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा इनके असंख्यातगुणहानिकी अपेचा स्पर्शन श्रोधके समान है।

६३१७. चायिकसम्यन्दिष्योमे असंख्यातभागहानियाले जीवोने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रसनालीके चीदह भागोंमें से जुछ कम आठ भागप्रमाण वेत्रका स्पर्श किया है। तथा इनके रोप पदोकी अपेचा स्वर्शन चेत्रके समान है। उपकासस्यन्दिथामे असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातभागहानि कौर कोर असर कमाने से जुड़ कम

त्रप्तसंखेजनभागहाणी० के० खे० पो० ? लोग० असंखे०भागो अह-वारहचोइस० देखणा । सम्मामि० वेदय०भंगो ।

## एवं पोसणाणुगमो समत्तो ।

§ ३१६. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसी—श्रोघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण असंखो०भागवड्डी-हाणी-अवट्ठा० केविचरं ? सम्बद्धा । दोवड्डी० दोहाणी० के० ? ज० एगसमओ, उक्क० श्राविल० असंखो०भागो । असंखो०गुणहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० संखोज्जा समया । एवं कायजोगि०-ओरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-अचक्खु०-भवसि०-आहारि ति ।

आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सासादनसम्यग्दृष्टियोमे असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातचे भाग चेत्रका तथा जसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम बारह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सम्यग्मिण्यादृष्टियोंके वेदकसम्यग्दृष्टियोंके समान स्पर्श जानना चािव्य ।

#### इस प्रकार स्पर्शनानुगम समाप्त हुआ।

इनसे से खांघकी खपंचा क्यंचा निर्देश दो प्रकारका है—खांचिनिर्देश खोर खादेशनिर्देश । उनसे से खांघकी खपंचा खसंख्यात भागवृद्धि, खसंख्यात भागवानि आंर अवस्थितविभक्तिवाले जीवोका कितना काल है ? सर्वकाल है । दो वृद्धि खाँर दो वानिवाले जीवोका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल खावलीं के असंख्यात में भागप्रमाण है । तथा असंख्यात गुणवानिवाले जीवोंका जवन्य काल एक समय खाँर उत्कृष्ट काल सख्यात समय है । इसी प्रकार काययांगी, खाँदारिककाययांगी, नपुंसकवेदवाले, कांधादि चारो कपायवाले, अचचु-दर्शनवाले, भव्य खाँर खाहारक जीवोंक जानना चाहिये।

विशोषार्थ—यहां नाना जीयोकी अपेला कालका विचार किया जा रहा है। तदनुसार खोघले असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और प्रवस्थित स्थितिवाले जीव अनन्त है अतः इनका सद्भाव सर्वदा पाया जाता है। संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुण्वृद्धि तथा संख्यात भागहानि असंख्यात गुण्वृद्धि तथा संख्यात आविके असंख्यात गुण्वृद्धि तथा संख्यात आविके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। तथा असंख्यात गुण्वृद्धिन अनिवृत्ति च्यकके ही होती है और अनिवृत्ति च्यकके इसके निरन्तर प्राप्त होनेका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है, अतः असंख्यात गुण्वृद्धिनका जघन्य और उत्कृष्ट काल तत्यमाण्य वतलाया। यह अपेष प्रस्त्यणा काययोगी आदि कुछ मार्गण्याओं में अविकल वन जाती है, अतः उनकी कथनी स्थोषके समान कही।

- § २२०. त्रादेमेण णेरइएसु अमंखेजामागहाणी स्रविह० के० १ सव्बद्धा । सेसंपदा० के० १ जह० एगसमओ, उक्क० त्राविह्य त्रमेखे०भागो । एवं सत्तसु पुढवीमु सव्वपंचिदियतिरिक्ख-देव०भवणादि जाव सहस्सार०-पंचि०अपज्ञ०-सव्व-विगलिदिय-वादरपुढिवपज्ञ०-वादरस्राउपज्ञ० वादरतेउपज्ञ० वादरवाउपज्ञ०-बादर-वणफ्फदिपत्तेयपज्ज०-तमअपज्ञ०-वेउव्विय०-विह्ना०-तेउ०-पम्मलेस्से त्ति ।
- ४३२१. तिरिक्खा स्रोघं । णविर असंखे०गुणहाणी णित्थ । एवमोरालिय-मिस्म० - कम्पइय० - मिद्-सुद्ऋण्णा०-य्रसंजद० - तिण्णिलेस्सा०-ऋभव०-भिच्छादि०-ऋसण्णि०-अणाहारि चि ।
- ६ ३२२. मणुस० पंचि०तिरिक्तसंगी । णवरि असंखे०गुणहाणी० ओघं । एवं पंचि०-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचमचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि ति । मणुसपञ्ज०-पणुसिणी० एवं चेत्र ? णवरि जम्हि ब्रावलि० ब्रसंखे०-
- ह ३२०. आदेशिनदेंशकी अपेत्ता नारिकयोमें असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति-वाले जीवोंका कितना काल है ? मर्च काल है । तथा हो र पदवालोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार सानां पृथिवियोंके नारकी, सभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्तार स्वगंतकके देव, पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक, सभी विकलेन्द्रिय, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, त्रम अपर्याप्त, वेकिशिककाययोगी, विभंगजानी, पीतलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—नारिकयों में असंख्यात सागहाति और अवस्थित स्थित ये दो श्रुव पद हैं अतः यहां इनका सर्वदा काल कहा। इसी प्रकार आगे भी जानना। तथा हो। पद अश्रुव है फिर भी यदि वे तिरस्तर रहें तो कम से कम एक समय तक और अधिक से अधिक आवित्र असंख्यातवें भाग काल तक निरस्तर पाये जाते हैं अतः होच पदोंका जयन्य काल एक समय और उत्हुट काल आवित्र असंख्यातवें भागपनाण कहा। सातों नरकके नारकी आदि कुछ ऐसी मागेणाएं है जिनमें उक्त प्रस्पणा अविकल बन जाती है, अतः इनमें सब सम्भव पदोंका काल सामान्य नारिकयों के समान कहा।

६ ३२१ सामान्य तिर्यचोके खोयके मनान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यात गुणहानि नहीं पाई जाती है। इसी प्रकार खोदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताञ्चानी, असंयत, ऋष्णदि तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिश्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोके जानना चाहिये।

§ ३२२. सामान्य मनुष्यों के पंचेन्द्रिय तियंचो के समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यात गुण्हानिका काल योगके समान है। इमी प्रकार पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, व्रम, व्रम पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, स्त्रीवदवाले, पुरुपवेदवाले, चचुदर्शनवाले ख्रौर संज्ञी जीवों के जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त ख्रौर मनुष्यिनयों के भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि पहले जहाँ आवली के असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है वहाँ इनके

भागो तम्हि संखेजा समया। णविर संखे०भागहाणी० जह० एयसमञ्जो, उक्क० आविरु० असंखे०भागो। मणुसञ्चपज्ज० असंखे०भागहाणी-अविद्वि० के० ? जह० एगसमञ्जो, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। सेसपदवि० के० ? जह० एगसमञ्जो, उक्क० आविरु० असंखे०भागो। एवं वेउव्वियमिस्स०।

संख्यात समय काल कहना चाहिये। तथा ईतनी श्रीर विशेषता है कि इनके संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्टकाल त्रावलीके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। मनुष्य श्रपर्यान्नकोमें श्रसंख्यातभागहानि श्रीर श्रविधित विभक्तिवाले जीवोंके कितना काल है १ जघन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्टकाल पत्थोपमके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा शेष पदवाले जीवोंका कितना काल है १ जघन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्टकाल श्रावलीके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार वैक्रियिकसिश्रकाययोगी जीवोंक जानना चाहिये।

विशोषार्थ-तिर्यचोंका प्रमाण अनन्त है, अतः उनके सब पदोंका काल स्रोघके समान बन जाता है। किन्तु इनके असंख्यातगुणुहानि नहीं हाती, क्योंकि यह पद अनिवृत्तिज्ञपकके ही पाया जाता है। ऋोदारिकमिश्रकाययोग ऋादि बुद्ध ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें उक्त प्ररूपणा बन जाती है त्रातः इनमें सब सम्भव पदोंका काल सामान्य तिर्थंचों के समान कहा । मनुष्योके ऋौर सब पदोंका काल तो पंचेन्द्रिय तिर्थवोंके समान है, क्योंकि इनके घ्रव और अघ्रव पद पंचेन्द्रिय तिर्थवोंक समान पाये जाते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातगुणहानि और पाई जाती है। पर यह पद मनुष्योंके ही होता है क्योंकि अनिवृत्ति ज्ञपक गुरास्थान मनुष्य गतिको छोड़कर अन्य गतिवाले जीवोंके नहीं पाया जाता। अतः सामान्य मनुष्योके इम पदका काल आंघके समान वन जाता है। पंचेन्द्रिय ऋादि कुछ ऐसी मार्गणाएं है जिनमें उक्त प्ररूपण वन जाती है अतः उनमें सम्भव सब पदोका काल सामान्य मनुष्योंके समान कहा । मनुष्यपर्याप्त श्रीर मनुष्यनी संख्यान होते हैं, श्रतः इनके संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, श्रीर संख्यात गुणहानिका उत्कृष्ट काल आविलके ऋसंख्यातवे भागप्रमाण प्राप्त न होकर संख्यात समय प्राप्त होता है। किन्तु उक्त दोतो सार्यणावालोका प्रमाण संख्यात होते हुए। भी इनके संख्यातभागहानिका उन्क्रष्ट काल आविलके असंख्यानवें भागप्रमाण वन जाना है, क्योंकि पहले एक जीवकी अपेत्रा संख्यातभागहानि हा उत्कृष्ट काल दो कम उन्कृष्ट संख्यात समय प्रमाण वतला आये हैं। अब यदि किसी एक पर्याप्रमनुष्य या मनुष्यनीने संख्यातभागहानिका प्रारम्भ किया त्रीर वह संख्यात भागहानिके उत्कृष्ट काल तक उसके साथ रहकर जिस समय समाप्त करता है उसी समय किसी उक्त मार्गणावाले अन्य जीवने उसका प्रारम्भ किया तो इस प्रकार निरन्तर संख्यातभागहानिकी प्रवृत्ति त्रावितके त्रसंख्यातवें भागप्रमाण काल तक पाई जाती है त्रातः उक्त मार्गणात्रोमें इसका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा । मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है अतः इस मार्गणाका जो उत्कृष्ट काल है वही यहां ऋसंख्यानभागहानि ऋोर ऋवस्थित पदका उत्कृष्ट काल जानना । किन्तु अन्तरकालके बाद जब नाना जीव इस मार्गणाकां प्राप्त होते हैं तब वे यदि एक समय तक असंख्यानभागहानि या अवस्थित पदके साथ रहे और दूसरे समयमें अन्य पदको पाष्त हो गये तो इनके उक्त दो पदोंका जघन्यकाल एक समय पाया जाता है। वैक्रियिकमिश्रकाययोग यह मार्गेणा भी सान्तर है, अत: यहां भी लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंके समान सम्भव सब पदींका काल बन जाता है।

§ ३२३. श्चाणदादि जान अनराइद त्ति असंखे०भागहाणी० के० ? सन्बद्धा । संखे०भागहाणी० जह० एगममओ, उक्क० आवित्य असंखे०भागो । एवं संजदा-संजद० । सबहे असंखे०भागहाणी० के० ? सन्बद्धा । संखेजभागहाणी ज० एगस०, उक्क० संखेआ समया । एवं परिहार० ।

\$ २२४. सब्बएइंदिएसु असंखे॰भागवड्डी-हाणी-अविद्या तिरिक्खोघं। सेस-पद्वि० के० ? जह० एगममओ, उक्क० आवित्रि॰ असंखे०भागो। एवं पुढवि०-बाद्र-पुढवि०-वाद्रपुढविअपज्ञ०-मुहुमपुढवि०-मुहुमपुढवि०-मुहुमपुढवि०-नाद्रआउ०-वाद्रआउ०-वाद्रआउ०-वाद्रआउ०-वाद्रआउ०-काद्रआउ०-मुहुमकाउ०-सुहुमआउपज्ञत्तापज्जत्त-तेउ०-[-बाद्रतेउ०-] वाद्रतेउ-अपज्ञ०-मुहुमतेउपज्जतापज्जत-वाउ०-वाद्रवाउ०-बाद्रवाउअपउज०-मुहुम-वाउ०-मुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-वणप्पद्वि०-वाद्रवणप्पद्वि-वाद्रवणप्पद्विज्ञत्तापज्जत्त-सुहुमवणप्पद्वि० — मुहुमवणप्पद्विण्जत्तापज्जत्त — वाट्रवणप्पद्वित्तेयसरीर० — तस्सेव अपज्जते ति।

§ ३२३. त्रानत कल्पसे लेकर त्रापराजित कल्पतकके देवों स्थासंख्यातभागहानिवालें जीवोंका कितना काल है ? सब काल है । संख्यातभागहानिका ज्ञावन्यकाल एक समय छोर उत्कृष्टकाल ज्ञावलीके असंख्यातवें भागप्रमाए हैं । इसी प्रकार संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये । सर्वार्थ सिद्धिमें असंख्यातभागहानिवालें जीवोंका कितना काल है ? सर्व काल है । तथा संख्यातभागहानिवालें जीवोंका ज्ञावन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है । इसो प्रकार परिहारविद्यद्धिसंयत जीवोंक जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—आनत करपमें लेकर अपराजित तक्के अत्येक स्थान के देवींका प्रमाण असंख्यात है अतः यहाँ मंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल आवलिक असंख्यात में भागप्रमाण बन जाता है। पर सर्वार्थमिद्धिमें देवींका तथा परिहारिवशृद्धि स्वतोका प्रमाण संख्यात है, अतः यहाँ मंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही प्राप्त होता है। रोप कथन सुगम है।

६ ३२५. आहार० ऋसंखे०भागहाणी० जह० एगसमञ्चो, उक्क० अंतोष्ठ०। एवम-कसा०-जहाक्ष्वाद्संजदे ति । आहारमिस्स० ऋसंखो०भागहाणी० जहण्णुक्क० अंतोष्ठ०। ऋवगद० असंखो०भागहाणी के० ? जह० एगसमञ्चो, उक्क० अंतोष्ठ०। सेसपदा० मणुसपङ्जत्तभंगो। एवं सुहुमसांपरा०।

§ ३२६. आभिणि०-सुद्०-श्रोहि० श्रसंखे०भागहाणी० के० १ सबदा। संसपदा० पंचिंदयभंगो । एवमीहिदंस०-सुक्क०सम्मादिष्टि त्ति । मणपज्ज० श्रसंखे०भागहाणी० के० १ सन्बद्धा । संसपदा० के० १ जह० एगसमश्रो, उक्क० सांखेज्ञा समया। णगरि संखे०भागहाणी० उक्क० श्रावित्र असंखे०भागो । एवं संजद०-सामाइय-छेदोव०-खइय० । णगरि सामाइय-छेदोव० संखेजनभागहाणी० उक्क० संखेजना समया।

६ ३२७. वेदय० असंखेजाभागहाणी० के० ९ सव्बद्धा । सेसपद० आभिणि०-

§ ३२५. आहारककाययागियामे असंख्यातभागहानिवाले जीवोका जघन्य काल एक समय खोर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अकपायी और यथाख्यातसंयत जीवोके जानना चाहिये। आहारकमिश्रकाययोगियोमें असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अपगतवेदियोमें असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा इनके शेव पदोंकी अपेन्ना काल मनुष्य पर्याप्रकोंके समान जानना चाहिये। इसी प्रकार सूच्मसांपरायिकसंयतो के जानना चाहिये।

विशेषार्थ—आहारककाययांग,विविच्ति प्रकरण्मे अकषाय और यथाख्यातसंयतका जघन्य काल एक समय और उन्छुष्ट काल अन्तर्मु हुन है, अतः यहाँ असंख्या भागहानिका जघन्य और उन्छुष्ट काल उक्तप्रमाण कहा । किन्तु आहारकमिश्रकाययांगका जघन्य काल भी अन्तर्मु हूर्त है, अतः इसमें असंख्यातमागहानिका जघन्य और उन्छुष्ट काल अन्तर्मु हुन है। प्राप्त होता है । अपगतवेद और सृत्ममागपरायका जघन्य काल एक समय और उन्छुष्ट काल अन्तर्मु हुन है अतः इसमें असंख्यात भागहानिका जघन्य और उन्छुष्ट काल उक्तप्रमाण वन जाना है। तथा अपगतवेद अवस्था सृत्म साग्यरायसंयत मनुष्योके भी होती है, अतः इनमें सम्भव शेष पर्शेका काल मनुष्य पर्याप्तकोंके समान बन जाना है।

§ ३२६. श्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रोर श्रवधिज्ञानियोंमें श्रमंख्यातभागहानिवाले जीवोंका कितना काल है ? सर्वेकाल है । तथा शेष पदोक्ती श्रपेत्ता काल पचेन्द्रियोंके समान जानना चाहिये । इसी प्रकार श्रवधिद्दर्शनवाले, शुक्ललंद्यावाले श्रोर सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । सनःपर्ययज्ञानियोमे श्रसंख्यातभागहानिवाले जीवों का कितना काल है ? सर्वकाल है । तथा शेष पदवाले जीवोंका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिवाले जीवोंका उत्कृष्ट काल आवलींके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है । इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत श्रोर ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंक जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि सामायिकसंयत श्रोर छेदोपस्थापना संयतोंमें संख्यातभागहानिवाले जीवोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है ।

§ ३२७. वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें असंख्यातभागहानियाले जीवोंका कितना काल है ? सर्वकाल

भंगो । उत्तसम० अमंखे॰भागहाणी० के॰ ? जह० अंतोग्रहुत्तं, उक्क० पिट्ठिवे॰ असंखे॰भागो । मंखे॰भागहाणी॰ जह० एगममञ्चो, उक्क० आवलि० अमंखे॰भागो । सासण॰ अमंखे॰भागहाणी॰ के॰ ज॰ एगसमओ, उक्क० पिट्ठिवे॰ असंखे॰भागो । सम्मामि० असंखे॰भागहाणी॰ जह॰ एगममञ्चो, उक्क० प्रत्टेवे॰ असंखे॰भागो । संसपदाणमोहिभंगो ।

## एवं कालागुगमी समत्तो ।

§ ३२ द्रं अंतरासुगमेस दुविहो णिहेसो—श्रोघेस आदेसेस य । तस्थ श्रोघेस असंखे०भागवट्टी-हासी-श्रविह० पत्थि अंतरं । दो बट्टी-हासी० अंतरं के० १ जह० एगसमश्रो, उक्क० अंतोम्र० । असंखे०गुणहासी० अंतरं के० १ जह० एगसमश्रो, उक्क० झ मासा । एवं कायजोगि० - श्रोराल्ठ० - सब्चित्र चत्तारिक० - अवक्खु० - भवसि० - आहारि ति । सविरे सबुं सयवेदे असंखे०गुणहासी० उक्क० अंतरं वासपुधत्तं । कोध-माण-माया-लोभाणं वार्स मादिरेयं ।

है। तथा इनके रोप पदांकी अपेचा काल अभिन्यां धिकज्ञानियों क समान है। उपशमसम्यग्दृष्टियों में असंख्यातभागहानियाले जीवोंका कितना काल है ? जवन्य काल अन्तमुं हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागभमाण है। तथा संख्यातभागहानियाले जीवोंका जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलींके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सासादनसम्यग्दृष्टियों में असंख्यातभागहानियाले जीवोंका कितना काल है ? जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यग्मिण्यादृष्टियों में असंख्यातभागहानियाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा रोप पदोंकी अपेचा काल अवधिज्ञानियों के समान है।

#### इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुन्त्रा।

§ ३२८. श्रम्तरानुगमकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और श्रादेशनिर्देश। उनमसे श्राघकी अपेना असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृति और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोका अन्तरकाल नहीं है। दो वृद्धि और दो हानिवाले जीवोका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है। तथा असंख्यातगुण्हानिवाले जीवोंका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। इसी प्रकार काययोगी, ओदारिककाययोगी, नपुंसकवदवाले, क्रांधादि चार कपायवाले, अचनु-दर्शनवाले भव्य और, आहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है नपुंसकवदमें असंख्यातगुण्हानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथकत्व हे और क्रोध, मान, माया और लोभमें असंख्यातगुण्हानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष है।

विशेषार्थ—असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है अतः इनका अन्तरकाल नहीं पाया जाता। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि ये कमसे कम एक समयक वाद और अधिकसे अधिक अन्तमुँ हूर्त कालके वाद नियमसे प्राप्त होती हैं, अतः इनका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमु हूर्त कहा। तथा असंख्यातगुणहानि च्रापकश्रेणीमे ही होती है और इसका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः एक समय और अह महीना प्रमाण है, अतः असंख्यातगुणहानिका जघन्य

§ ३३० तिरिक्खा० श्रोघं । णवरि श्रसंखेज्जगुरणहासी पत्थि । एवमोरालिय-मिस्स०-कम्मइय०- मदि-सुद्श्रण्णा०-असंजद०-किण्ह-णील-काउ०-श्रभव०-मिच्छा०-असण्णि०-श्रसाहरि ति ।

§ ३३१ मणुस० णिरत्रोघं। णविर असंखे०गुणहाणी० स्रोघं। एवं पचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवित्र-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि ति । मणुसपञ्ज०-मणुसिणी० एवं चेव । एविरि इत्थि०-मणुस्सिणी० स्रसंखेऽजगुणहाणी० वासपूथत्तं। पुरिसवेद० वासं सादिरेयं।

अन्तर एक समय और उन्हृष्ट अन्तर छह महीना प्रमाण कहा। काययांगी आदि छुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमे यह स्रोघ प्ररूपणा बन जाती है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा। किन्तु इतनी विशेषता है कि यदि नपुंसकवेदी जीव चपकश्रेणी पर न चढ़े तो अधिक से अधिक वर्षप्रथक्त्व कात तक नहीं चढ़ता है अतः इसके असंख्यातगुणहानिका उत्तृष्ट अन्तरकाल वर्ष प्रथक्त्व प्रमाण कहा। तथा कोधादि कपायवाल जीव यदि चपकश्रेणी पर न चढ़ें तो अधिक से अधिक साधिक एक वर्ष तक नहीं चढ़ने हैं, अतः इनके असंख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष प्रमाण कहा।

§ ३२६ त्रादेशितर्देशकी त्रापेक्षा नरकगितमे असंख्यातभागहानि और अवस्थितिभिक्ति वाले जीवाका अन्तरकाल नहीं है। तथा इनके शेष पदोंकी अपेक्षा अन्तरकाल कितना है ? जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हुन है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंके नारकी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, अस अपर्याप्त, वैकियिककाययोगी. विभंगज्ञानी, पीतलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये।

§ ३३०. तिर्यंचोंके अन्तरकाल खोघके समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातगुण्हानि नहीं होती है। इसी प्रकार खोदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, कृष्णलेश्याचाले, नील रियावाले कार्पातलेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी खोर अनाहारक जीवोंक जानना चाहिये।

\$ २३१ मनुष्यों में अन्तरकाल सामान्य नारिकयां समान जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असख्यातगुणहानिकी अपेचा अन्तरकाल ओघक समान है। इसी प्रकार पंचीन्द्रय, पंचीन्द्रय पर्याप्त, अस प्रयाप्त, पांचों मनोयोगी, पांचो बचनयोगी, स्त्रीवदवाले, पुरुपवेदवाले, चचुदर्शनवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनीके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवदवाले और मनुष्यनीके अमंख्यातगुणहानिकी अपेचा अन्तरकाल वर्षपथक्त है। तथा पुरुपवेदवाले जीवोंक साधिक एक वर्ष है।

६ ३३२ आणदादि जाव अवराइद ति असंखे०भागहाणीए णित्थ अंतरं। संखे०भागहाणि॰ अंतरं के० ? जह० एगसमओ, उक० सत्त रादिदियाणि वासपुथत्तं। सन्वहे असंखेजजभागहाणीए स्मात्थ अंतरं। असंखे०भागहासि० अंतरं के० ? जह० एगसमभो, उक्क० पिलिदो० असंखे०भागो।

विश्रोपार्थः-नरकर्गातमं असंख्यातभागहानि और अवस्थित ये दां पद निरन्तर पाये जाते हैं अतः इनका अन्तरकाल नहीं बनता । तथा यहां सम्भव होष पदोंका अन्तरकाल ऋोषमे जिस प्रकार घटित करके लिख आये है उसी प्रकार यहा भी जानना। सातों नरकके नारकी ऋादि छुद्र मार्गणाएं ऐसी है जिनमें नरकगतिके समान अन्तरकालकी प्रस्परणा बन जाती है. अतः उनके कथनको सामान्य नारिकयोके समान कहा । तिर्यंचोके असंख्यातभागहानि, असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित ये तीन पद निरन्तर पाये जाते हैं अतः इनमे अन्तर प्ररूपणा अावके समान कही । किन्तु निर्यचाके असंख्यानगण्हानि नहीं होती, क्योंकि यह पद अनियृत्तिच्वके ही पाया जाता है। श्रीदारिकमिश्रकाययांग आदि कुछ और भी मार्गणाएं है जिनमें सम्भव पदोका श्रम्तरकाल मामान्य तियंचोंके समान वन जता है, श्रतः उनकी प्रह्मपणा सामान्य तियचोंके समान कही। मनुष्योंमे असंख्यानमागहानि खोर अवस्थित ये दो पद ही निरन्तर पाये जाते है. ऋतः इनमें अन्तर प्रस्तवणा सामान्य नारिकयोकं समान कही । किन्तु इनके ऋसंख्यातगुणुहानि भी पाई जाती है जो मनुष्य पर्यायम ही सम्भव है, अतः मनुष्योके असंख्यातगुणुहानिका अन्तर-काल ब्रोघके समान कहा। पचेन्द्रिय आदि कुछ और ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमे अन्तरकाल सामान्य मनुष्योके समान है, अतः उनकी प्ररूपणा सामान्य मनुष्योके समान कही । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यनीके चपकश्रेणीका उत्हृष्ट अन्तरकात वर्षपृथकत्व प्रमाण है, अतः स्त्रीवेद और मन्ष्यनांके असंप्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल वपप्थकत्व प्रमाण कहा। तथा पुरुपवेदमे चपकश्रेणीका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष प्रमाण पाया जाता है, अतः पुरुप-वेद्मे असं्यातगुणुहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष प्रमाण कहा ।

§ ३३२ मनुष्य अपर्याप्तकोमे सभी पदवाले जीवोंका अन्तरकाल कितना है ? जचन्य
अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पत्थोपमके असंख्यानवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ-नव्यवर्यात मनुष्योका जवन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः इनके सम्भव सब पदोंका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण कहा।

§ ३३३ श्रानत करुपसे लेकर श्रपराजित तकके देवोंके श्रसंख्यातभागहानिकी श्रपेस श्रम्तरकाल नहीं है। संख्यातभागहानिवाल उक्त देवोंका श्रम्तरकाल कितना है ? जघन्य श्रम्तरकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रम्तरकाल सात दिन रात और वपगृथद्य है। सर्वार्थसिद्धिमें श्रसंख्यात भागहानिकी श्रपेसा श्रम्तरकाल नहीं है। तथा संख्यातभागहानिवाले उक्त देवोंका श्रम्तरकाल कितना है ? जवन्य श्रम्तरकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रम्तरकाल पत्योपमके श्रसंख्यातचें भाग प्रमाण है।

\$ २३४. एइंदिएसु सन्वपदाणं तिरिक्खोधं। एवं पुढिवि-बादरपुढिवि०-वादरपुढिविश्रपज्ञ०-सुहुमपुढिवि० — सुहुमपुढिविपज्जत्तापज्जत्त—आउ० —बादरश्राउ० — वादरआउश्रपज्ज० -सुहुमश्राउ० - सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त—तेउ० —बादरतेउ० —वादर — तेउअपज्ज० —सुहुमतेउ० -सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त -वाउ० -वादरवाउ० -वादरवाउअपज्ज० -सुहुमवाउ० —सुहुमताउपज्जत्तापज्जत्त —बादरवणप्फदिपत्तेय० —तस्सेव अपज्ज० -वण्ण-प्फदि० -वादरवणप्फदि -बादरवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त -सुहुमवणप्फदि ० --सुहुमवणप्फदि -पज्जत्तापज्जत्त -णिगोद० -बादरणिगोद-बादरिणगोदपज्जत्तापज्जत्त -सुहुमिणिगोद० -सुहुम-णिगोटपज्जत्तापज्जते ति।

१३३५ सन्विविश्तांतिय० सन्वपदाणं पचिदियतिरिक्सभंगो । एवं वाद्रपुढविपज्ज०-वाद्र्याउपज्ज०-वाद्रतेउपज्ज०-वाद्रवाउपज्ज०-वाद्रवराष्प्रादे-पत्तेयसरीरपज्जता ति ।

१३३६ वेउव्वियमिम्स० सव्वपदाणमंतरं जह० एगसमञ्रो, उक्क० वारस मृहुत्तं । आहार०-आहारमिस्स० असंखे०भागहाणि० अंतरं के० ? ज० एगसमञ्जो, उक्क० वासपुधत्तं । एवमकसाय-जहाक्खाद्मंजदे ति ।

§ ३३४ ण्केन्द्रियोमे सभी पदोक्षी अपेत्ता अन्तरकाल सामान्य तिर्यंचोके समान हैं। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, वादर पृथ्वीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, स्त्म पृथिवीकायिक, स्त्म पृथिवीकायिक पर्याप्त, स्त्म पृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक अपर्याप्त, स्त्म अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक, स्त्म अग्निकायिक अपर्याप्त, स्त्म अग्निकायिक अपर्याप्त, स्त्म वायुकायिक, स्त्म वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, स्त्म वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकार्योत, वादर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, स्त्म वानस्पतिकायिक, स्त्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त, स्त्म वनस्पतिकायिक, स्त्म वनस्पतिकायिक, स्त्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त, स्त्म वनस्पतिकायिक, स्त्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त, स्त्म वनस्पतिकायिक, स्त्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त, स्त्म वनस्पतिकायिक, स्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, वादर निगाद, वादरिकायिक, अपर्याप्त, वादरिकायिक अपर्याप्त, स्त्म निगाद, आपर्याप्त, जीवोके जानना चाहिय।

§ ३३५. सभी विकलेन्द्रियोमे सभी पदोंकी अपेत्ता अन्तरकाल पंचेन्द्रिय तिर्यचोके समान जानना चाहिये। इसी प्रकार बादर प्रथिबीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्नि-कायिक पर्याप्त, बादर बायुकायिक पर्याप्त और बादर बनस्पितकायिक प्रत्येक श्रीर पर्याप्त जीबोके जानना चाहिये।

§ ३३६. वैकियिकमिश्रकाययोगियोमे सभी पदवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वारह मुहूर्न है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोमे असंख्यानभागहानिवाले जीवोंका अन्तरकाल कितना है? जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथकत्व है। इसी प्रकार अकपायी और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

§ ३३७ अवगद० तिण्णि हाणि० जह० एगसमञ्जो, उक्क० छम्मासा । एवं सुहुमसांपरा०।

§ ३३८. त्राभिणि०—सुद०—ओहि० त्रसंखे०भागहाणि० णित्थ अंतरं। संखे०भागहाणि०—संखेगुणहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० चउनीस अहोरत्ताणि। असंखे०गुणहाणी० ओघं। एनमीहिदंस०—सम्मादिष्टि ति। णनिर त्रोहिणाणि०-त्रोहिदंसणी० त्रसंखे०गुणहाणि० उक्क० नासपुधत्तं। मणपज्ज० असंखे०भागहाणि०-संखे०भागहाणि० ओहि०भंगो। दोहाणि० अंतरं ज० एगसमओ, उक्क० नासपुधत्तं।

§ ३३६. संजद०—सामाइय-छेद० असंखेज्जभागहाणी० णात्थि अंतरं । संखे० भागहाणि० मणपज्जवभंगो। दोहाणि॰ जह॰ एगसमत्रो, उक्क० छ मासा । परिहार०-संजदासंजद० असंखे०भागहा०-संखे०भागहाणी० त्राभिणि०भंगो ।

§ ३४०. मुक्कले० असंखेजनभागहाणि० एत्थि अंतरं । सेसपदा० स्रोघं । खइय० संजदभंगो । णवरि संखेजनभागहाणी० उक्क० छम्मासा । वेदय० सव्व-पदाणमाभिणि०भंगो । उवसम० असखे०भागहाणी० जह एगसम्ब्रो, उक्क० चडवीस अहोरत्ताणि ।

§ ३३७. अपगतविदियोंमं तीन हानिवाले जीवोका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। इसी प्रकार मुद्दमसांपरायिक संयत जीवोके जानना चाहिये।

§ ३३८. आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और श्रवधिज्ञानियोमें श्रसंख्यातभागहानियाले जीवोंका श्रन्तरकाल नहीं है। संख्यातभागहानियाले श्रीर संख्यातगुणहानियाले जीवोंका ज्ञयन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल चौवीस दिनरात है। तथा श्रसंख्यात गुण्हानियाले जीवोंका श्रन्तरकाल श्रीयके समान है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनवाले श्रीर सम्यग्दृष्टि जीवोंके ज्ञानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि श्रवधिज्ञानी श्रीर श्रवधिदर्शनी जीवोंके श्रमंख्यात गुण्हानिकी श्रपंत्वा उत्कृष्ट श्रन्तरकाल वर्षपृथकत्व है। मनःपर्ययज्ञानियोमे श्रसंख्यातभागहानि श्रीर संख्यातभागहानिवाले जीवोंका अन्तरकाल श्रवधिज्ञानियोके समान है। तथा दो हानिवाले जीवोंका जवत्य श्रन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल वर्षपृथकत्व है।

§ ३२६. संयत, मामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयतोमें ऋसंख्यातभागहानिवाले जीवोका ऋन्तरकाल नहीं है । संख्यातभागहानिवाले जीवोका ऋन्तरकाल मनःपर्ययद्वानियांके समान है। तथा दो हानिवाले जीवोका जयन्य ऋन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। परिहारविद्युद्धिसंयत और संख्यातभागहानिवाले जीवोका ऋन्तरकाल आभिनिवाधिकज्ञानियोके समान है।

§ ३४०. शुक्तलेश्यावालोमं असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। तथा शेष पदींकी अपेद्धा अन्तरकाल आंघक समान है। द्धायिकम्यग्दृष्टियोंमें स्थतोके समान जानना चाहिये। इननी विशेषता है कि संख्यातभागहानिवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सभी पदोकी अपेद्धा अन्तरकाल आभिनिष्धाधिकज्ञानियोंके समान है। उपशम सम्यग्दृष्टियोंमे असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस दिनरात है। ः ३४१. जइवसहाइरियो उत्रमममम्माइहिकालम्मि अणंताणुवंधिविसंजीयण-मिच्छिद् तम्साहिष्पाएणसंखे०भागहाणीलमिद् सा एत्य कत्य वि वृत्ता कत्य वि ण वृत्ता तेण थप्पं काऊण एत्य संखेजजभागहाणी वत्तव्या । अथवा उवसमसेहीए दसणितयस्स हिदिघादगंभवपक्खर्भास्सयृण उवसमसम्बाइहिम्मि सव्यत्य संखेजजमागहाणी णिव्विसंकमणुगंतव्या । सासण० असंखे०भागहा० ज० एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं सम्मानि० । एवरि पदभेदो अत्थि ।

## एवमंतराणुगमो समत्तो ।

३४२. भावाणुगमेण सन्वत्थ सन्वपदाएां को भावो १ ओदइओ भावो ।
 एवं भावाणुगमें। समत्तो ।

६ ३४३, ऋषावहुगाणुगमेण दुविहो णिहेसी—ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण सम्बन्धोया असंखे ०गुणहाणि विहत्तिया जीवा । संखे ०गुणहाणि विह० जीवा असंखो ०गुणा । संखे ० भागहाणि वि० ज वा संखे ०गुणा । संखे ०गुणविह वि० जीवा असंखो ज्ञगुणा । संखे जनभागविह वि० जीवा संखे ज्ञगुणा । असंखे जनभागविह ० जीवा अणंतगुणा । अविह द्वि० जीवा असंखे ०गुणा । असंखे ०भागहाणि विह त्तिया

§ ३४१ यतिष्यम आचार्य उपशमसम्बग्हिके कालमे अनन्नानुबन्धीकी विसंयोजना स्वीकार करते हैं, अतः इनके अभिप्रायमे उपशमसम्बग्हिखोंके संख्यानभागहानि प्राप्त होती हैं। वह यहाँ कही पर कही गई है और कहीं पर नहीं कही गई है, इसलिये इसे स्थिगत करके यहाँ पर संख्यानभागहानि कहनी चाहिये। अथ्या उपशमक्रीणमें तीन दर्शनमाहनीयका स्थितियात संभव है, अतः इस पत्त्रा आश्रय करके उपशमसम्बग्हिके सर्वत्र संख्यानभागहानि निःशंक जाननी चाहिये। सासादनसम्बग्हियोंमें असंख्यातभागहानिवाले जीवोका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उन्कृष्ट अन्तरकाल पत्यापमके असंख्यातभागहानिवाले जीवोका जवन्य अन्तरकाल एक समय और उन्कृष्ट अन्तरकाल पत्यापमके असंख्यातभाग है। इसी प्रकार सम्यिगक्याहिष्ट जीवोके कहना चाहिये। इनता विशेषता है कि इनके पद विशेष पाये जाते हैं। अर्थात् सासादनमं असंख्यातभागहानि पद हैं और सम्यग्गिक्यात्यों असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि अर्थे तीन पद हैं।

#### इस प्रकार अन्तरान्गम समाप्त हुआ।

§ ३४२. भावानुगमकी अपेता सर्वत्र सभी परोंकी अपेता क्या भाव है। औदयिकभाव है। इस प्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

§ ३४३, अल्पबहुत्वानुगमकी ऋषेत्ता निर्देश दो प्रकारका है। स्रोधनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमें से स्रोधकी ऋषेत्ता स्रमंख्यातगुण्हानिवाले जीव सबसे थाड़े हैं। इनसे संख्यातगुण्हानिवाले जीव स्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुण्हानिवाले जीव स्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे स्रसंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे स्रसंख्यातभागवृद्धिवाले जीव स्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे स्रमंख्यातभागवृद्धिवाले जीव स्रसंख्यातगुणे

जीवा संखे व्याणा। एवं कायजो ि ०-णवुंस० - चत्तारिकसाय ० - अचक्खु -- भवसि० - अवारि ति ।

§ ३४४. आदेसेण णेरइएसु सन्वत्थोवा संखे०गुणहाणिवि० जीवा। संखे०गुणविहृवि० जीवा विसेसाहिया। संखे०भागविहृ-संखे०भागहाणिविहित्तया जीवा
दो वि सिरसा संखे०गुणा। असंखे०भागविहृवि० जीवा असंखे०गुणा। अविदिवि०
जीवा असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिवि० जीवा संखे०गुणा। एवं पढमाए पुढवीए
सन्वयंचि०तिरिक्ख-मणुसअपज्ञ-देव०-भवण०-वाण०-पंचिद्यअपज्ञने ति। विदियादि
जाव सत्तिमि त्ति सन्वत्थोवा संखे०गुणविहृ-हाणिवि० जीवा दो वि सिरसा। संखेजभागविहृ-हाणिविह० जीवा दो वि सिरसा संखे०गुणा। असंखेजभागविहृवि०
जीवा असंखे०गुणा। अविदिव्यि० जीवा असंखे०गुणा। अमंखे०भागहाणिवि०
जीवा संखे०गुणा।

ः ३४५. तिरिक्या श्रोघं । एवरि सब्बन्थावे। मंग्वेज्जगुणहाणिविद्द० जीवे। त्ति वत्तव्वं । एवमोरालियगिस्स०-कम्मइय०-मदि-सुद०-असंजद०-किण्ट-णील-काउ०-अभव०-मिच्छा०-असरिएा-ऋणाद्दारि ति ।

\$ २४६. मणुम्सेमु सन्वत्थोवा अभांग्ने०गुणहाणिवि० जीवा । सांग्ने०गुण-हैं। इनसे असंख्यातभागहानियाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार काययागी, नपुंसक्वेदवाले कांधादि चारों कपायवाले, अचनुदर्शनवाले, भन्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ ३४४ आदेशकी अपेना नारिकयांम संख्यातगुण्हानिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुण्छद्विवाले जीव विशेष अधिक हैं। इनसे सख्यातभागगृद्वि और संख्यातभागग्गानिवाले जीव समान हं ते हुए भी संख्यातभुणे हैं। इनसे असंख्यातभागगृद्वि चले जीव असंख्यातभागग्गा हैं। इनसे असंख्यातभागग्नानिवाले जीव संख्यात गुणे हैं। इसमें असंख्यातभागग्नानिवाले जीव संख्यात गुणे हैं। इसी प्रकार पहली पृथ्वीके न रकी, सभी पंचित्तिय त्रियं मुख्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासी, व्यक्तरदेव और पंचित्त्रिय अपर्याप्तकोक जानना चाहिय। दृसरा पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक संख्यातगुण्वृद्धि और संख्यातगुण्वृति इन दोनो पदवाले जीव समान होते हुए भी सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुण्वृद्धि और संख्यातगुण्वृद्धियार भागविद्यातभागविद्याले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणे हैं।

§ ३४५. निर्यचोंमें अल्पबहृत्व श्रोबिक समान है। इननी विशेषता है कि इनमें संख्यात-गुणहानिवाले जीव सबसे थोड़े हैं ऐसा कहना चाहिये। इसी प्रकार श्रोदारिकमिश्रकाययांगी, कार्मणकाययांगी, मत्यज्ञानी, श्रृताञ्चानी, श्रमंयन, ऋष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कार्पातलेश्या-वाले, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी श्रोर अनाहारक जीवोंक जानना चाहिये।

🖇 ३४६. मनुष्योमें ऋसंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे थोड़ हैं । इनसे संख्यातगुणहानि-

हाणिवि॰ जीवा श्रसंखे॰गुणा । संखे॰गुणविश्वि॰ जीवा विसेसाहिया । संखे॰-भागविश्व-हाणिवि॰ जीवा सिरसा संखे॰गुणा । श्रमंखे॰भागविश्वि॰ जीवा श्रमंखे॰-गुणा । श्रविद्विवि॰ जीवा श्रमंखे॰गुणा । असंखे॰भागहाणिवि॰जीवा संखे॰गुणा । एवं पंचि॰-पंचि॰पज्ज॰-इत्थि-पुरिस॰-सण्णि त्ति । मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु एवं चेव । णविर जिम्म श्रसंखे॰गुणं तिम्म संखेज्जगुणं कायव्वं ।

§ ३४७. जोइसियादि जाव सहस्सारे ति विदयपुरुविभंगो । आणदादि जाव अवराइदं ति सन्वत्थोवा संखे०भागहाणिवि० जीवा । असंखे०भागहाणिवि० जीवा असंखे०गुणा । एवं संजदागंजदाणं । सन्वद्दे सन्वत्थोवा संखे०भागहाणिवि० जीवा । असंखे०भागहाणिवि० जीवा संखे०गुणा । एवं परिहार० ।

\$ ३४ = . एइंदिएस सब्बत्थावा संखे०सणहाणिवि० जीवा । संखे०भागहाणिवि० जीवा संखे०गुणा । असंखे०भागविद्वि० जीवा अर्णातगुणा । अविद्वि० जीवा अर्मखे०-गुणा । असंखे०भागहाणिवि० जीवा संखे०खुणा । एवं सब्वएइंदिय-वणप्फदि०-वादर-वणप्फदि०-वादर-वणप्फदि०-वादरवणप्फदि०-जावापज्ञत्त-सुहुमवणप्फदि०-सुहुभवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त-णिगोद० - वादरणिगोदपज्जतापज्जत्त - सुहुमणिगोद - सुहुमणिगोद-पज्जत्तापज्जत्ता ति ।

वालं जीव श्रसंख्यातगुणं हैं। इनसे संख्यातगुण्यृद्धिवालं जीव विशेष श्रिधिक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृति इन दानो पदवालं जीव समान होते हुए भी संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रसंख्यातभागवृद्धिवालं जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थितविभीक्तवालं जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रमंख्यातभागवातिवालं जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रमंख्यातभागवातिवालं जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, स्त्रीवेदवालं पुरुपवेदवालं श्रोर संज्ञी जीवोके जानना चाहिये। मनुष्यपर्याप्त श्रोर मनुष्यनियोमे इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि जहां श्रसंख्यातगुणा है वहा इनके संख्यातगुणा करना चाहिये।

§ ३४७. ज्योतिपियोसे लेकर सहस्रारतक दूमरी पृथिवीके समान भंग है। आनत कल्पसे लेकर अपराजित तक संख्यातभागहानिवाले जीव सबसे थाड़ हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुरू है। इसी प्रकार संबनासंबताके जानना चाहिये। सर्वार्थसिद्धिमें संख्यातभागहानिवाले जीव सबसे थाड़ है। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुरू हैं। इसी प्रकार परिहारविश्विद्धसंयतोके जानना चाहिये।

§ ३४८. एकेन्द्रियों में संख्यातगुणहानियाले जीव सबसे थोड़ हैं। इनसे संख्यातभागहानि-वाले जीव संख्यातगुण हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव अनन्तगुण हैं। इनसे अवस्थित-विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुण हें। इनसे असंख्यातभागहानियाले जीव संख्यातगुण हैं। इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय, वनस्यतिकायिक, वादरवनस्यतिकायिक,वादर वनस्यतिकायिक पर्याप्त,बादर वनस्यतिकायिक अपर्याप्त, सूदम वनस्यतिकायिक, सूदम वनस्यतिकायिक पर्याप्त, सूदम वनस्पति-कायिक अपर्याप्त, निगोद; बादर निगोद, वादर निगोद पर्याप्त, वादर निगोद अपर्याप्त, सूदम निगोद, सूदम निगोद पर्याप्त और सूदम निगोद अपर्याप्त जीवोक जानना चाहिये।

- ् ३४९. सव्वविगिलिदिएमु सव्वत्थीवा संखे०गुणहाणिविहत्तिया जीवा। संखे०भागविहु-हाणिवि० जीवा दो वि गुल्ला संखेजजगुणा। असंखे०भागविहुवि० जीवा असंखे०गुणा। अविहद्वि० जीवा असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिवि० जीवा संखे०गुणा। चदुण्हं कायाणमेईदियभंगो। णविर जिम्म असंखे०गुणं कायव्वं। तस०-तसपज्जत्ताणमोधभगो। णविर जिम्म असंखे०गुणं कायव्वं। तस०-तसपज्जत्ताणमोधभगो। णविर जिम्म असंखे०गुणं। एवं तस०अपज्ज०। णविर असंखे०गुणहाणी णित्थ।
- \$ ३५०, पंचमण०-पंचवचिक सन्वत्थावा अवंखेवगुणहाणिविव जीवा | सेसं विदियपुढविभंगो | एवसोरालिक | एगोरि जम्मि अयंखेवगुणं तम्मि अणंतगुणं कायन्वं । वेउन्वियक विदियपुढविभंगो | वेउन्वियमिस्सक पढमपुढविभंगो | आहारक-आहारमिस्सक-अकसाठ-जहाकखादक उचमभठ-सामणक णन्धि अप्पायहुअं |
- ६३५१ त्र्यवगद० सन्वत्थोवा संखे॰गुणहाणि०जीवा। संखे०भागहाणि० जीवा संखे०गुणा । असंखेजभागहाणि० जीवा संखे०गुणा । एवं सुहुवसांपरा० ।
- ६ ३५२ त्र्याभिणि०-सुद्द०-ओहि० सव्वत्थोवा त्र्यसंखेज्जगुणहाणि० जीवा । सखेज्जगुणहाणि० जीवा असंखे०गुणा।संखे०भागहाणि० जीवा संखे०गुणा। श्रसंखे०
- § ३४६. सभी विकलेन्द्रियोमे संख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यात-भागवृद्धि और संख्यातभागहानि इन दोनो पदवाले जीव परस्पर समान होते हुए संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जाव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यात-गुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। चारो कायवाले जीवोक एकेन्द्रियोके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियोके जिस स्थानमे अनन्तगुणा कहा है वहां इनके असंख्यातगुणा करना चाहिये। जस और जसपर्याप्त जीवोके आवके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि आवमे जहा अनन्तगुणा है वहा इनके असंख्यातगुणा करना चाहिये। इसी प्रकार जस अपर्याप्तकोके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके असंख्यातगुणाहीन नहीं है।
- § ३५०. पांचो मनोयोगी और पांचों वचनयोगी जीवोमे असंख्यातगुण्हानिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। हो र कथन दूसरी पृथिवीके समान है। इसी प्रकार औदारिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। उननी विद्योगा है कि मनोयोगी और वचनयोगियोमे जहाँ असंख्यातगुणा है वहाँ औदारिककाययोगियोंके अनन्तगुणा करना चाहिये। वैक्रियककाययोगियोमे दूसरी पृथिवीके समान भंग है। वैक्रियकिसश्रकाययोगियोम पहली पृथिवीके समान भंग है। आहारककाययोगी, आहारकिसश्रकाययोगी, अकवायो, यथाख्यातसंयन, उपश्रमसम्यग्दृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोके अस्पवहुत्य नहीं है।
- § २५१ अपगतवेदियोंमें संख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे थे। हे हैं। इनसे संख्यात-भागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सूदमसांपरायिकसंयत जीवोंक जानना चाहिये।
- \$ ২५२ आभिनियोधिकझानी, श्रुतझानी ऋोर ऋवधिझानी जीवोमें ऋसंख्यातगृणहानियाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानियाले जीव ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभाग-

भागद्याणिविह० जीवा असंखो०गुणा । एवमोहिदंसण०-सुक्कले०-सम्मादिहि ति । मणपउजव० एवं चेव । णवरि जिम्म असंखो०गुणं तिम्म संखो०गुणं कायव्वं । एवं संजद०-सामाइय-छेदो० ।

- २५२, चक्खु० सञ्बन्धोवा असंग्लेडजगुणहाणिविहत्तिया जीवा। संग्ले० गुणहाणिवि॰ जीवा असंग्ले०गुणा। संग्ले०गुणविहृति० जीवा वि**से**साहिया। संग्लेडज-भागविहृ-हाणिवि० जीवा दो वि तुल्ला संग्लेडजगुणा। असंग्ले०भागविहृ० जीवा असंग्ले०गुणा। अविह० जीवा असंग्लेडजगुणा। असंग्ले०भागहाणिवि० जीवा संग्ले० गुणा। विसंग०-तेड०-पम्म० विदियपुढविभंगो।
- ३५४. खइय० मणपज्जवभगे(। एवरि असंन्धे०भागहाणि ० असंन्धे०गुणा चि वत्तव्वं । वेदय० सन्वत्थोवा संन्धे०गुणहाणिवि० जीवा । संन्धे०भागहाणिवि० जीवा संन्धे०गुणा । असंन्धे०भागहाणिवि० जीवा असंन्धे०गुणा । एवं सम्भामि० ।

## एवं वर्ड्डासमत्ता ।

३५५. संपित द्वाणपरूवणे कीरमाणे सत्तरिसागरीवमकोडाकोडीओ समयूणदुममयूणादिकमेण ब्रोदारेयव्वाब्रो जाव णिव्वियण्यअंतोकोडाकोडि नि । तदो
हानिवाले जीव संख्यातगुरे हैं। इनसे असंख्यातमाग्रहानिवाल जाव ब्रासंख्यातगुर्ग है। इसी
प्रकार ब्राविदर्शनवाले, शुक्ललेश्यावाले ब्रोर सम्यन्द्रि जीवाक जानना चाहिय। मनःपययज्ञानियोके इसी प्रकार जानना चाहिय। पर उनके इननी विशेषता है कि प्रामिनिवाधिकज्ञानी ब्रादिके
जहां असंख्यातगुर्गा है वहाँ इनके संख्यातगुर्गा करना चाहिय। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत
स्थार छेदोषस्थापनासंयत जीवोके जानना चाहिय।

§ ३५३ चत्तुदशनवालोमं श्रामंख्यातगुण्हानिवाणं जीव सबसे थोड़ है। इनसे संख्यातगुण्हानिवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यातगुण्हानिवाले जीव विशेष श्राप्ति हैं। इनसे संख्यातगागृहित्र श्रोर संख्यातभागहानि इन दोनो पदवानं जीव परस्पर समान होते हुए भी संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रावस्थित जीव श्रास्थातगुणे हैं। इनसे श्रावस्थित विभिन्नवाले जीव श्रास्थातगुणे हैं। इनसे श्राम्थातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। विभगज्ञानी,पीतलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले जीवसंख्यातभागहानिवाले जीवसंख्यातगुणे हैं। विभगज्ञानी,पीतलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले जीवसंस्थातभागहानिवाले समान भंग हैं।

\$ १५४. चायिकसम्यग्दिष्योमं भनःपर्ययद्यानियोकं समान संग है। इतनी विशेषता है कि इनमें असंख्यातभागहानियाले जीव असान्यातगुणे हैं ऐसा कहना चाहिये। वेद्छमम्यग्दिष्योमें साख्यातगुण्डानियाले जीव सबसे थोड़ हैं। इनमें साख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सम्यग्निथ्यादिट जीवोंके जानना चाहिये।

## इस प्रकार दृद्धि अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

् ३५५. स्थानकी प्ररूपणा करते समय एक समय कम, दो समय कम इस कमसे सत्तर कोडाकोडी सागरप्रभाण स्थितिके निविकल्प अन्तःकोडाकोडी सागरप्रमाण प्राप्त होने तक कम धुविद्विष हदसमुष्पित्तियं कादृण णिरतरमोदारेदव्यं जाव एइंदियधुविद्वि ित्त । नदो एइंदियधुविद्विद्वित्तिसमणियद्विख्वविद्विस्तिकम्मं घेत्तृण सांतरणिरंतरकमेण स्रोदारेदव्यं जाव मुहुमसांपराइयचरिमसभयम्मि एगा द्विदि ति । एवमोदारिदे मूळ-पयिद्विणाणि सव्वाणि समुष्पण्णाणि होति ।

## एवं मूळपयडिहिदिविहत्ती समता।

! करना चाहियं। तदनन्तर ध्रुव स्थितिकी हतसमुत्पत्ति करके एकेन्द्रियोंकी ध्रुव स्थिति प्राप्त होने तक कम करते जाना चाहियं। तदनन्तर एकेन्द्रियोकी ध्रुवस्थितिक समान अनिवृत्तिकरणचपककी सत्तामं स्थित स्थितिका प्रहण करके सान्तर-निरन्तर कमसे इसे सूद्मसांपरायिक गुणस्थानके अन्तिम सक्यमे प्राप्त होनेवाली एक स्थितिके प्राप्त होनेतक कम करते जाना चाहिये। इस प्रकार प्रारम्भसे स्थितिक उत्तरोत्तर कम करने पर सभी मूलप्रकृतिस्थितस्थान प्राप्त हो जाते हैं।

इस प्रकार मूलप्रकृति स्थितिविभक्ति समाप्त हुई।

#### उत्तरपयडिडिदिविहत्ती

# 🕸 उत्तरपयडिद्विदिविहत्तिमणुमग्गइस्सामो |

ः ३५६. एदं ज्इवसहाइरियस्स पइज्जावयर्णः । ण चेसा पइज्जा णिष्फला, सिस्साणं प्रह्मविज्जमाणअहियारावगमराफलक्तादो । अहियारो किमिदि जाणाविज्जदे? सिस्समणोगयसंदेहविणासणहः ।

# अ तं जहा । तत्थ ऋदुपदं─एया द्विदी द्विदिविहत्ती ऋणेयाओ द्विदीओ दिदिविहत्ती ।

२३५७. परूविज्ञमाणिहिद्विहत्तीए एदमहपदं जङ्बसहाइरिएण किमहं
परूविदं ? हिद्विहत्तिसरूवावगमणहं । एया कम्मस्स हिदी एया हिदी णाम ।
कथमणेयाणं पदेमभेदेण भिण्णाणं हिदीणमेयत्तं ? ण, पयडिभावेण सव्वपदेमाणमेयत्तु वर्त्तंभादो । चरिमणिसेयहिद्पिरमाण्डणं सव्वसिं कालभस्सिद्ण सिर्सत्तदंसणादो वा एयत्तं । एसा एगा हिदी हिद्विहत्ती होदि । समयूण-दुसमयूणादि-

#### उत्तरप्रकृतिस्थितिविभक्ति

## अब उत्तरप्रकृति स्थितिविभित्तिका विचार करते हैं।

§ ३५६. यह यतिवृपभ आचार्यका प्रतिज्ञावचन है। यदि कोई कहे कि यह प्रतिज्ञा निष्फल है मो भी बात नहीं है, क्योंकि शिष्योंको कहे जानेवाले अधिकारका ज्ञान कराना इसका फल है। कौका—अधिकारका ज्ञान क्यों कराया जाता है १

समाधान-शिष्योके मनमे उत्पन्न हुए सन्देहको नष्ट करानेके लिये अधिकारका ज्ञान कराया जाता है।

# जो इस प्रकार है। उसके विषयमें यह अर्थपद है—एक स्थिति भी स्थितिविभिक्ति है और अनेक स्थितियाँ भी स्थितिविभिक्ति हैं।

§ ३५ . शंका — कही जानेवाली स्थितिविभक्तिका यह अर्थभद यतिष्टपभ आचार्यने किसलिए कहा १

समाधान—स्थितिविभक्तिके स्वम्ब्यका ज्ञान करानेके लिये यतिवृत्तभ आचार्यने यह अर्थपद कहा है।

कर्मकी एक स्थितिका एक स्थिति कहते हैं।

शंका - पदेशोंके भेदसे भेदको प्राप्त हुई अनेक स्थितियोंमे एकत्व कैसे वन सकता है ?

समाधान — नहीं, क्योंकि प्रकृति सामान्यकी ऋषेत्ता सभी प्रदेशोंमें एकत्व पाया जाता है। अथवा अन्तिम निषेक्की स्थितिको प्राप्त हुए सब परमाणुओंमें कालकी अपेद्धा समानता देखी जाती है, अतः उनमें एकत्व बन जाता है।

यह एक स्थिति भी स्थितिविभक्ति होती है, क्योंकि एक समय कम और दो समय कम

हिदीहिंतो भेदृवलंभादो । अथवा मृहुमसांपराइयचरिनसमयपरमाणुपोग्गलक्खंधकालो एया हिदी णाम । तम्म एगसमयणिप्पण्णत्तादो । एसा वि हिदी हिदिविहत्ती होदि, दृसमयादिहिदीहिंतो पुधभूदत्तादो । तन्थेव भिष्णपरमाणुहिदसमएहिंतो अप्पिद-कालसमयम्स पुधभाग्रवलंभादो वा सगाहारपरमाणुम्मि पोग्गलक्खंधे वाविहृद-तिकालगोयराणंतपज्ञण्हितो एदिम्मे हिदीए पुधभावदंसरणादो वा विहत्तित्तं जुज्जदे । दृव्वहियण्यमिम्मद्रण एसा पस्वरणा कदा । उक्कस्म-सम्बर्णुक्कस्स-दुसमञ्जुक्कस्सा-दिभेदेण अणेयात्रो हिदीश्रो तात्रां वि हिदिविहत्ती होंति, समाणासमाणहिदीहिंतो परमाणुपोग्गलभेदेण च भेद्वलंभादो । एदमहपदं पज्जविद्यसिस्साणुगाहहं कदं ।

्र ३५ = ता हिटी णाम ? कम्मसस्त्रेण परिणदाणं कम्मइयपोग्गलक्खंधाणं कम्म-भावमछंडिय अच्छणकाला हिटी णाम । उत्तरपयडीणं हिटी उत्तरपयडिहिटी। का उत्तरपयडी ? मृलपयडीए अवांतरपयडीओ । कथं मिट्-मुद-ओहि-मणपज्जव -केवलणाणावरणीयाणं पुधभूदणाणेमु वावदाणं पयडीणमेयत्तं ? ण, णाणसामण्णेण सञ्चेसिं णाणाणमेयत्तमुवगयाणमावरणाणं पि एयत्ताविरोहादो ।

आदि स्थितियांमे इसमें भेद पाया जाता है। अथवा सूद्दमसांपरायिक गुण्स्थानंक अन्तिम समयमे पुद्रगल परमाणुओंके स्कन्धका जो काल है वह एक स्थिति कहलाती है, क्योंकि वह काल एक समय निष्वन्न है। यह स्थिति भी एक स्थितिविभक्ति होती है, क्योंकि यह दो समय आदि स्थितियोंसे भिन्न है। अथवा उसी सुद्रमसांपरायिक गुण्स्थातके अन्तिम समयमे भिन्न परमाणुओं में स्थित समयोंसे विविद्यत कालसमय पृथक पाया जाता है। अथवा अपने आधारभूत परमाणुओं में या पुद्रगलस्कन्धमें अवस्थित त्रिकानकी विषयभूत अनन्त पर्पायोंसे यह स्थिति पृथक देवी जाती है, इसलिये इसमें विभक्तिका वन जाता है। यह कथनी द्रव्यार्थिकनयकी अपेद्यासे की है। नथा जो उत्कृष्ट, एक समय कम उत्कृष्ट और दो समय कम उत्कृष्ट आदिके भेदमे अनेक स्थितियों है वे भी स्थितिविभक्ति कहलाती है, क्योंकि इनमें समान और प्रसमान स्थितियोंकी अपेद्या तथा पुद्रगलपरमाणु योंके भेदकी अपेद्या भेद पाया जाता है। यह अथपद पर्यायार्थिक वृद्धिवाले शिष्योंक उपकारक लिये किया है।

§ ३५न. शंका - स्थित किसे कहते हैं ?

समाधान—कर्मरूपमे परिग्गत हुए पुदगलकर्मस्कन्धोंके कर्मबनेको न छोड़कर रहनेके कालक स्थिति कहते हैं।

उत्तर प्रकृतियोकी स्थितिको उत्तर प्रकृतिस्थिति कहते हैं। कांका -- उत्तर प्रकृति किसे कहते हैं १

समाधान - मूल प्रकृतिकी अवान्तर प्रकृतियोको उत्तरप्रकृति कहते है।

शंका — भिन्न भिन्न ज्ञानोमें व्यापार करनेवाले मितज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, त्र्यवधि-ज्ञानावरण, मनः त्र्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरणक्ष प्रकृतियोंने एकपना कैसे वन सकता है १

समाधान - नहीं, क्योंकि ज्ञानसामान्यकी अपेत्रा सभी ज्ञान एक हैं, अतः उनकोत्रावरण

## **ॐ एद्रेण ऋहपद्रेण** ।

३५६. एदमहपद कादृण उत्ररिभचउत्रीसञ्चिणयोगदारेहि हिदिविहत्तीए अणुमं कस्सामी । तेमि चउत्रीसण्हमणिश्रोगदाराणं चुण्णिसुत्तम्म पुट्यं परूविदाणं वालजणाणुग्गहृष्ठं पुणरिव णामिणिद्रेसी कीरदे । तं जहा— अद्धाछेदो सव्विहिदिविहत्ती जोस्व्यहिदिविहत्ती अक्ष्रम्मिहिदिविहत्ती अणुक्कम्मिहिदिविहत्ती जहण्णहिदिविहत्ती अज्ञाहण्णहिदिविहत्ती आण्यादियविहत्ती भूगिदिविहत्ती अह्षुविहिदिवहत्ती एयजीवेण सामिनं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भगविचञ्चो भागाभागो परिमाणं खेतं पोसणं कालो अंतरं सिण्णयासो भावो अप्यावहुअं चेदि २४ । अजगार-पदिणक्षेव-विहृ-हाणाणि ति एदाणि चत्तारि अणियोगदाराणि, एदेहि विहिदिविहत्ती परूविज्ञिद् । अहावीस अणियोगहामिण किण्ण होति ति वृत्ते ण, चउत्रीमयणिओगहारेगु चेव एदेसिमंत्रभावादो । तं जहा-अजहण्णाणुक्कस्स-हिदिविहत्तीम् अजगारिवहत्ती पविहा तत्थ उक्कम्सणोसक्षणविहाणपरूवणादो । अजगारिवहत्तीम् अजगारिवहत्ती पविहा तत्थ उक्कम्सणोसक्षणविहाणपरूवणादो । अजगारिवसेसे पदिणक्षेवेन विसेसो बहुी, विहृहाणीणं भेदपरूवणादो । यिद्विविसेसो हाणं, तत्थतण्यवांतर-भेदपरूवणादो । तदी हिदिविहत्तीए चउत्रीम चेव अणियोगदागणि होति ति सिद्धं। करनेवाले कर्मीकां भी एक माननेमें काई विरोध नहीं चाता है ।

## \* इस अर्थपदके अनुसार स्थितिविभिक्तका अनुगम करने हैं ।

§ ३५६. इस अर्थपदका आलम्बन लेकर आगे कहे जानेवाल चोबीस अनुयोगद्वारोंके द्वारा स्थितिविभक्तिका अनुगम करते हैं। ये चोबीम अनुयोगद्वार चृिष्णितृत्रमें पहले कहे जा चुके है फिर भी बालजनोंके उपकारके लिये उनका फिरसे नामानिर्देश करते हैं। जो उम प्रकार है— अद्धान्छेद, सर्वस्थितिविभक्ति, नामर्वस्थितिविभक्ति, उन्द्रप्टिशितिविभक्ति, अनुत्कृष्टस्थितिविभक्ति, ज्ञाचन्यस्थितिविभक्ति, आजपन्यस्थितिविभक्ति, आजपन्यस्थितिविभक्ति, आजपन्यस्थितिविभक्ति, अनादिस्थितिविभक्ति, अनादिस्थितिविभक्ति, आवस्थितिविभक्ति, आप्रवास्थितिविभक्ति, आप्रवास्थितिविभक्ति, अन्तर, नाना जीबोकी अपेन्ना भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, न्नेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, सन्निकर्ष, भाव और अल्पबहुत्व।

शंका—भुजगार, पदनित्तेष, वृद्धि और स्थान ये चार अनुयोगद्धार स्रोर हैं, क्योंकि इनके द्वारा भी स्थितित्रिभक्तिका कथन किया जायगा, अतः अट्टाइंस अनुयोगद्वार क्यों नहीं होते हैं १

समाधान —नहीं, क्योंकि चौवीस अनुयोगद्वारोंमें ही इनका समावेश हो जाना है। यथा—अजघन्य और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तियोंमें भुजनार स्थितिविभक्तिका अन्तर्भाव हो जाना है, क्योंकि उसमें उद्भिष्ण और अवकर्षण विधिका कथन किया गया है। तथा भुजगार विशेषका पद नित्तेष कहते हैं,क्योंकि उसमें जयन्य और उद्धृष्टक्ष दृद्धि और हानिका कथन किया गया है। पदान्तेष का एक विशेष दृद्धि हैं, क्योंकि इसमें दृद्धि और हानिक भेदोंका कथन किया गया है। तथा दृद्धिका एक विशेष द्यान हैं,क्योंकि इसमें स्थानगत अवान्तर भेदोंका कथन किया गयाहै। इसलिये स्थितिविभक्तिके चौबीस ही अनुयोगद्वार होते हैं यह सिद्ध हुआ।

### 🕸 पमाणाणुगमो ।

§ ३६० कीरदे इदि एत्थ अज्भाहारो कायव्वो, अण्णहा सुत्तहासुववत्तीदो । चववीसअणियोगदारेमु ताव उत्तरपयडीस्मान्नान्ने भणामि ति वृत्तं होदि । पढम-मद्भान्नेदो चेव किमद्वं वृत्त्वदे ? ण, अस्तवगयअद्भान्नेदस्स उवरिमअस्तियोगदाराणं परूवसासुववत्तीदो ।

## भिच्छत्तस्स उक्कस्सिट्टिविहत्ती सत्तिरिसागरोवमकोडाकोडीत्रो पिडव्रिक्षणात्रो ।

### **\* अव प्रमाणका अनुगम करते हैं ।**

§ ३६०. 'पमाणाणुगमा' इस सूत्रमें 'कीरदे' क्रियाका ऋष्याहार कर लेना चाहिये, श्रन्यथा सूत्रका ऋर्य नहीं बन सकता है। चोबीस अनुयोगद्वारोमिसे पहले उत्तर प्रकृतियोके अद्धान्छेद ऋर्यात् कालका कथन करते हैं यह उक्त सृत्रका ऋभिप्राय है।

शंका—सबसे पहले ऋद्धाच्छेदका ही कथन किसलियं किया जा रहा है ?

समाभान — नहीं, क्योंकि ऋद्धाच्छेदका ज्ञान किये विना ऋ।गेके ऋतुयागद्वारोंका कथन नहीं वन सकता है, अतः सबसे पहले ऋद्धाच्छेदका कथन किया जा रहा है।

### # मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्त पूरी सत्तर कोडाकोडी सागर है।

६ ३६१. यह ऋद्वाच्छेद एक समयप्रबद्धकी ऋषेत्। कहा है नाना समयप्रबद्धोंकी ऋषेत्ता नहीं, क्योंकि नाना समयप्रबद्धोंकी अपेता ऋद्वाच्छेदके कथन करने पर तीन भंग प्राप्त होते हैं।

शंका - यह स्थिति एक समयप्रवद्धकी है यह किस प्रमाण्से जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि जो कार्मणवर्गणास्कन्ध अकर्मरूपसे स्थित हैं वे मिथ्यात्वादि कारणोसे मिथ्यात्वकर्मरूपसे एक साथ परिणत होकर जब सम्पूर्ण जीव प्रदेशोंमें सम्बद्ध हो जाते हैं तब उनकी एक समय अधिक सात हजार वर्षसे लेकर समयोत्तरादि कमसे निरन्तर सत्तर कोड़ा कोड़ी सागर प्रमाण स्थिति देखी जाती हैं। इससे जाना जाता है, कि यह स्थिति एक समय-प्रगद्धकी है।

शंका — जिस समयप्रबद्धमें निष्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण कर्मस्कन्ध हैं वहाँ प्रथम समयसे लेकर सात हजार वर्ष प्रमाण स्थितिविशेपोंमें एक भी कर्मस्कन्ध नहीं है यह किस प्रमाण मिच्छत्तस्स सत्तवाससहस्साणि उक्कस्सिया आवाहा आवाहूणिया कम्मिटदी कम्मि णिसेओ ति महावंधसुत्तादो । ए च सन्त्रासु हिदीसु सत्तवाससहस्साणि चेव आवाहा होदि ति णियमो; एगावाहाकंद्यमेत्तिहिदीसुत्तिणियसुवलंमादो । आवाहाकंदएएएए-उक्कस्सिटिदीए समयूणसत्तवाससहस्साणि आवाहा होदि ति एवं जाणिद्शा णेयव्वं जाव धुविहिद नि ।

\* एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं । णवरि त्रंतोसुहुत्तृणाओ ।

से जाना जाता है ?

समाधान — 'मिध्यात्वकी उत्कृष्ट त्राबाधा सात हजार वर्ष प्रमाण है त्रीर त्राबाधासे न्यून कर्मिस्थात प्रमाण कर्मनिषेक हैं महावन्धक इस सूत्रसे जाना जाता है कि जिस समयप्रबद्धमें मिध्यात्वकी उन्कृष्ट स्थिति प्रमाण कर्मस्कन्ध हैं वहाँ प्रथम समयसे लेकर सात हजार वर्ष प्रमाण स्थितिक भेदोंमें एक भी कर्मस्कन्ध नहीं है।

यदि कहा जाय कि समस्त स्थितियोंम सात हजार वर्ष प्रमाण ही आवाधा होती है ऐसा नियम है सो भी वात नहीं है, क्योंकि एक आवाधाकाण्डक प्रमाण स्थितियोंमें ही उक्त नियम देखा जाता है, अतः आवाधाकाण्डकसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिकी एक समय कम सात हजार वर्ष प्रमाण आवाधा होती है ऐसा समक्षता चाहिये। आगे भी इसी प्रकार जानकर ध्रुवस्थित तक ले जाना चाहिये।

अ इसी प्रकार सम्यक्त प्रकृति और सम्यग्निध्यात्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थिति है। पर इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्भेहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है।

. § ३६२ चूं कि ये दोनों ही कर्म बंधते नहीं हैं, इसलिये उनकी उत्क्रप्ट स्थिति अन्तर्मु हूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर होती है।

शंका \_वन्धके नहीं होने पर इन दोनों प्रकृतियोंकी खोर उनकी ब्ल्कुण्ट स्थितिकी उत्पत्ति कैसे हो सकती है ?

समाधान — मिण्यात्वका संक्रमण होकर इन दोनों प्रकृतियोंकी और उनकी उत्हृष्ट स्थिति की उत्पत्ति होती है। उसका खुलासा इस प्रकार है—तीन करण परिणामोंके द्वारा जिसने प्रथमापशम सम्यक्त्वके प्रह्ण करनेक पहले समयमें सत्तामें स्थित मिण्यात्व कर्मको तीन भागोंमें बांट दिया है ऐसा अद्वाईस प्रकृतियोंकी सन्तावाला मिण्याद्य जीव जब उत्कृष्ट स्थितिके स्मथ मिण्यात्व कमेका बांधकर उत्कृष्ट स्थिति बन्धके योग्य उत्कृष्ट संक्लेश्वपरिणामोंसे निवृत्त होनेमें लगनेवाले अन्तर्मु हुर्त प्रमाण कालके द्वारा पुनः सम्यक्त्वके प्रहृण करनेके प्रथम समयमें ही उक्त ग्गहणपढमसमए चेत्र पिटग्गहकालंग्यूणसत्तिरमागरीवमकोड।कोडीमेत्तिभच्छत्तिहिदीए सम्मत्तसम्मामिच्छत्तेमु मंकामिदाए सम्भत्तसम्मामिच्छात्ताणमुकस्मग्रद्धाछेदो होदि,तेण बंधाभावे वि दाण्हं पयडीणं तदृकस्सिहिदीणं च अन्थितं सिद्धं । पिडहग्गकालो एग-दु-तिसमइओ किण्ण होदि ? ण, संकिलंसादो छायरिय विमोहीए अंतोमुहृत्ताबहाणेण विणा सम्मत्तस्म गहणाणुववत्तीदो ।

प्रतिभग्नकाल अन्तर्मु हुर्नप्रमाणसे न्यून सत्तारकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण मिण्यात्वकी स्थितिको सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वमे संकान्त कर देता है तव सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वका उत्कृष्ट अद्धान्छेद होता है, अतः वन्धके नहीं होने पर भी दोनों प्रकृतियोंका और उनको उत्कृष्ट स्थितिका अस्तित्व सिद्ध होता है।

शंका - प्रतिभग्न कालका प्रमाण एक, दो और तीन समय क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वमे आकर श्रीर उत्कृष्ट स्थितिबन्धके कारणभृत संक्लेशसे च्युत होकर श्रीर विशुद्धिका प्राप्त करके जब तक उसके साथ जीव मिथ्यात्वमे श्रन्त-मुद्दितकाल तक नहीं ठहरता है तब तक उसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती है, इसीलिये प्रतिभग्न कालका प्रमाण एक, दो श्रीर तीन समय नहीं होता ।

विशेषार्थ-सम्यक्त और सम्यग्निध्यात्व ये दोनों प्रकृतियां वन्धसे सत्त्वका नहीं प्राप्त होतीं किन्तु मिण्यात्व का इन दोनो प्रकृतियों रूप में संक्रमण होता है और इसीलिय मोहनीय की बन्ध प्रकृतियां २६ तथा उदय और सत्त्व प्रकृतियां २८ मानी गई है। यद्याप एक सजातीय प्रकृति का दूसरी सजातीय प्रकृतिरूप से संक्रमण दूसरी प्रकृतिक वन्यकाल में ही होता है ऐसा नियम है पर यह नियम बन्ध प्रकृतियामें ही लाग होता है। सम्बक्त्व और सम्बारमध्यात्व इन दोनों प्रकृतियोंमें नहीं, क्योंकि ये दोनो बन्ध प्रकृतिया। नहीं है । इनके सम्बन्धमें। तो यह नियम है कि जब कोई एक २६ प्रकृतियों की सत्तावाला मिण्याद्यंष्ट जीव प्रथमोपदाम सम्यक्त्व का प्राप्त होता है तब वह प्रथमावशम सम्बन्ध्वका प्रहण करने के पहले समयम मिण्यात्वके तीन भाग कर देता है जिन्हें क्रमसे मिथ्यात्व, सम्याग्मथ्यात्व श्रोर सम्बक्त्य संज्ञा प्राप्त होती है । पर ऐसे जीवके श्रायु कमें को छोड़ कर रोप सान कर्मोका उत्कृष्ट स्थितिसस्य अन्त.कोड़ाकोड़ी सागरमे अधिक नहीं होता है इसलिये ऐसे जीवके सम्बक्त्व श्रीर सम्योग्मणात्व कर्मोका उत्बृष्ट स्थितिसत्त्व सम्भव नहीं। श्रतः ऐसा जीव जब मिध्यात्व में चला जाता है आर वहां संक्लेशकृप परिएामों के द्वारा मिण्यात्वका उस्कृष्ट स्थितिका बन्ध करक तदनन्तर अन्तमुहूर्त वालके परचान् पुनः वदकसम्यग्दृष्टि हो जाता है तब उसक मिण्यात्वका व्यन्तम् हून कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिका सम्यक्त्व अं।र सम्याग्मध्यात्वरूपसं सक्रमण हा जाता हं ओर इस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तमु हूनक्रम सत्तर कोड़ाकोड़ा सागरप्रमाण प्राप्त होती है। यहा इतना विशेष सममता चाहिये कि मिध्यात्वमे जाकर जिस जावने मिध्यात्व की उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध किया है उसे सम्यक्त्वक योग्य विश्चद्धता प्राप्त करनेके लिये अन्तमु हूते से कम काल नहीं लगता है इसलिये यहा मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिम से अन्तमुं हूर्त काल कम किया है। तथा ऐसा जीव वेदकसम्यक्त्वको ही प्राप्त कर सकता है प्रथमीपशम सम्यक्त्वको नहीं, क्योंकि प्रथमापशम सम्यक्त्वको प्राप्त करनेवाले जीवके अन्तःकोड्।कोडी सागर से अधिक स्थिति नहीं होनी चाहिये ऐसा नियम है।

 # सोलसण्हं कसायाणमुक्कस्सिंदिविहत्ती चत्तालीमसागरोवम-कोडाकोडीओ पडिबुण्णाको।

१३६३. कुदा ? मिच्छाइहिणा उक्तम्समंकिलिहे ण वद्धकम्मइयवग्गणक्लंथाणं स्मोलसकसायसस्वेण परिणयाणं सयलजीवपदेमुवगयाणं समयाहियचत्तारिवाससहस्स-मादि काद् जाव चालीमसागरीवमकोडाकोडीक्री त्ति कम्मभावेण अवहाणुव-लंभादी । एदेसि कम्माणं मिच्छत्तुकस्सहिदीए समाणाहिदी किण्ण जादा ? ण, दंसण-चरित्तवरोहीणं पथडीणं सत्तीए समाणत्तिवरोहादो । अविरोहे वा एगा चेव पयडी होजा; तासि भेदकारणाभावादो । ण च एवं; कोहमाणमायालोहादिकञ्जभेएण पयडीणं पि भेदसिद्धीदो ।

### \* एवं णवणोकसायाणं । णवरि आवलिकणाओ ।

६३६४, कुदो, सोलसकसायाणमुक्कस्सिट्टिंद् वंधिय वंघावलियकालं वोलाविय ब्राविलयूणचालीयसागरोवमकोडाकोडीमेत्तलोभकसायिटिदीए णवणोकसाएसु संकताए

\* सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थित विभिक्त पूरी चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है।

§ ३६३. शंका—सोलह कपायोंकी उन्हाप्ट स्थिति पूरी चालीस कोइ।कोड़ी सागर क्यों है ? समाधान—जब कोई एक मिश्याहिष्ट जीव उत्हार संक्रोशक्षप परिणामोंके द्वारा कार्मण-वर्गणास्कन्धोंको बांधकर सोलह कपायक्षपम परिणान करके समस्त जीवधदेशोंने प्राप्त कर लेता है तब एक समय अधिक चार हजार वर्षमें लेकर चालीस कोइ।कोई। सागर तक उन सोलह कपायोंका कमक्ष्यमें अवस्थान पाया जाता है, इससे सिद्ध होता है कि सोलड कपायोंकी उन्हार स्थिति चालीस कोइ।कोई। सागर है। तात्पर्य यह है कि सोइल कपायोंका उन्हार स्थितिवन्ध चालीस कोइ।काई। सागर प्रमाण होता है।

शंका—इन कर्मोकी उत्कृष्ट स्थिति मिण्यात्यकी उत्कृष्ट स्थितिके समान क्यों नहीं होतो हैं ?

सभाधान—नहीं, क्योंकि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय परस्पर विरोधी प्रकृतियों
है, अतः उनकी शिक्तकों समान माननेमें विरोध आता है। यदि इनमें अविरोध माना जावे तो वे दोनों एक ही प्रकृति हो जायगी, क्योंकि अधिरोध मानने पर उनमें भेदका कोई कारण नहीं रहता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि क्रोध, मान, माया और लोभ आदि रूप कार्यक भेदमे प्रकृतियोंमें भी परस्पर भेद सिद्ध है, अतः मिल्यान्यकी उन्कृष्ट स्थितिके समान सोलह क्यायोकी उन्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती है।

# इसी प्रकार नो नोकपायांकी उत्क्रष्ट स्थिति है। किन्तु इतनी विशेषता है कि (नकी उत्क्रष्ट स्थिति एक आवलीकम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है।

§ ३६४. शंका—नों नोक्नायोंकी उत्छ्रष्ट स्थिति एक आवर्लीकम चालीस कोइ।कोई। सागर
प्रमाण क्यों है ?

समाधान—मोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर श्रीर बन्धाविल प्रमाण कालको विनाकर एक श्रावली कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण लीभ कपायकी स्थितिके नी नोकपायों तेसिमाविष्ठयूणकसायुक्तस्मिहिदिदंसणादो । णवुंसयवेद-अरिद-सोग-भय-दुगुंछाणमुक्कस्ससंकिलेसेण वंधपाओग्गाणं सोलसकसायाणं व चत्तालीससागरोवमकोडाकोडीमेत्तो हिदिवंधो किएण होदि १ ण, कसायणोकसायाणं पुधभूदजादीणं हिदिभेदे संते
विरोहाभावादो । इत्थि-पुरिस-हस्स-रदीणं पिडहग्गकालिम्म बज्भमाणाणं कथमाविलयूणा कसायाणमुक्कस्मिहिदी होदि १ ण, पिडहग्गपहमसमए चेव वज्भमाणेसु चदुसु
कम्मेसु वंधाविल्यादिक्कंतकसायकम्भवस्तंधाणमाविल्यूणजक्कस्मिहिदीणं संकंतिदंसणादो । एदाणि चत्तारि वि कम्माणि जक्कस्समंकिलेसेण किण्ण वज्भाति १ ण,
साहावियादो ।

में संक्रान्त हो जाने पर नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थिति एक त्र्यायली कम चार्ल स कोड़ाकोड़ी सागर देखी जाती है, श्रतः नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति उक्त प्रमाण वन जाती हैं।

शंका—उत्ऋष्ट संक्लेशमे वंधनेके योग्य जो नपुंसकथेद, ऋरति, शांक, भय और जुगुष्सा प्रकृतियां है उनका उत्ऋष्ट स्थितिबन्ध सोलह कपायोंके समान पूरा चालीस कोइकोड़ी सागर क्यो नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कपाय खोर नोकपाय ये पृथक जातिकी प्रकृतियाँ हैं, इसलिये इनके स्थिति भेदके रहनेमें कोई विरोध नहीं खाता है।

शंका—प्रतिभग्न कालमे वंधनेवाली स्त्रीवेद, पुरुपवेद, हास्य त्रीर रित इन प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थित एक त्रावली कम कपायोंकी उत्कृष्ट स्थित प्रमाण कैसे हो सकती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रतिभग्न कालके पहले समयमे ही वंधनेवाली इन चार प्रकृतियोंमें बन्धावलिके सिवा रोप कमस्कन्धोंकी एक आवली कम उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण देखा जाता है, अतः इनकी उत्कृष्ट स्थिति एक आवली कम कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण हो जाती है।

शंका-ये स्नीवंद आदि चारो कर्म उत्कृष्ट संक्लेशसे क्यों नहीं वंधते है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट संक्लेश्से नहीं बंधनेका इनका स्वमाव है।

विशेषार्थ-वन्धसे स्वीवदर्का १५ कोड़ाकोड़ी सागर, ऋरति, शोक, भय, जुगुण्सा और नपुंसकवेदकी २० कोड़ाकोड़ी सागर तथा हास्य, रित और पुरुपवेदकी १० कोड़ाकोड़ी सागर उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है किन्तु जब कपाया की उत्कृष्ट स्थितिका नी नोकपायरूपसे संक्रमण होता है नव इनकी उत्कृष्ट स्थिति एक आवित्वकम ४० कोड़ाकोड़ी सागर हो जाती है। तत्काल वये हुए कर्मका एक आवित्व काल तक संक्रमण नहीं होता अतः ४० कोड़ाकोड़ी सागरमें से एक आवित्व कम कर दी गई है! किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट संक्लेशसे होनेवाल कपायकी उत्कृष्ट स्थितिवन्धक समय नपुंसकवद, अराते, शोक, भय और जुगुण्सा इन पांच प्रकृतियोंका ही बन्ध होता है, ऋतः वन्धकालक भीतर ही इनमें एक आवित्क परचाद कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण प्रारम्भ हो जाता है। तथा स्वावद, पुरुपवेद, हास्य और रितका वन्ध उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामोंसे नहीं होता अतः कपायकी उत्कृष्ट स्थिति बन्धक उपरत होने पर एक आवित्क परचात् इनमें कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण होता है क्योंकि उत्कृष्ट संक्लेश परिणामोंके निवृत्त होने के पहले समयसे ही इन स्वीवद आदि चार प्रकृतियोंका बन्ध होने लगता है और इसलिये एक

### \* एवं सन्वासु गदीसु णेयन्वो ।

§ ३६६ तं जहा—सत्तण्हं पुढवीणं तिरिक्ख-पंचिद्यितिरिक्ख-पंचि०तिरि०-पज्ज०-पंचि०तिरिक्खजोणिणी-मणुसतिय०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिदय-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवि०-कायजोगि०-ओरालिय० - वेउिव्य०-तिण्णिवेद०-चत्तारिकसाय-मदि-सुद्ग्रण्णाण-विहंग०-असंजद०-चक्खु०-ग्रचक्खु०-पंचलेस्सा०-भवसिद्धि०-अभवसिद्धि०-मिच्छाइ०-सण्णि-ग्राहारीणमोधभंगो ।

६३६७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुकस्स-

आविलके पश्चान् इनमें कपायकी उत्कृष्ट स्थितिके संक्रियत होने में कोई वाधा नहीं आती है। यहां इतना और विशेष जानना चाहिए कि बन्धाविलके वाद यदापि कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका नौ नोक-पायरूपसे संक्रमण तो होता है पर उदयाविलप्रमाण निपंकोको छोड़कर ऊपरके निपंकोंमे स्थित कर्मपरमाणुका ही संक्रमण होता है। इस प्रकार बन्धाविल और उदयाविल इन दो अविलिप्रमाण निपंक अमंक्रियत ही रहते हैं। इसिलिये संक्रमणुकी अपंत्रा नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति दो आविलकम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण और सत्त्वकी अपंत्रा एक आविलकम चालीस कंडाकोड़ी सागरप्रमाण और सत्त्वकी अपंत्रा एक आविलकम चालीस कंडाकोड़ी सागरप्रमाण पाई जाती है, क्योंकि जिस समय कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण् होता है उस समय उदयाविलयमाण निपंकोको छोड़कर शेपका होता है। पर नौ नोकपायोंकी सत्ता संक्रमण्के पहले भी थी अतः पूर्वमत्ताके उदयाविल प्रमाण् निपंकोको मिला देने पर एक आविलकम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण् स्थिति प्राप्त हो जाती है।

### इसी प्रकार सभी गतियोंमें जानना चाहिये ।

§ ३६५. जिस प्रकार खांचसे मोहनीयकी अट्टाईम प्रकृतियोंका अद्धाच्छेद कहा है उसी प्रकार सभी गतियोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार यितृपम आचार्यने जो मम्पूर्ण मार्गणाओंमें उत्कृष्ट स्थितिका प्रमाण सूचित किया है जिसका कि प्रकृपण उच्चारणाचार्यने मन्द्वुद्धिजनीके अनुप्रहके जिये इसी प्रकरणमें किया है उसे बताते हैं।

§ ३६६. वह इस प्रकार है—सातों नरक, सामान्य निर्यंच, पंचेन्द्रिय निर्यंच, पंचेन्द्रिय निर्यंच पर्याप्त. सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गनकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, त्रीनों वेदवाले, चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, श्रुसंयत, चचुदरानी, श्रचचुदर्शनी, कृष्णादि पांच लेर्यावाले, भव्य, स्रभव्य, मिण्यादृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोंक श्रोपके समान भंग है। श्र्यान् श्रोवसे जिस प्रकार मोहनीयकी श्रद्धांस्त प्रकृतियोंकी स्थितिका कथन कर श्रायं हैं उसी प्रकार इन पूर्वोक्त मार्गणाओंमें भी जानना चाहिये।

§ ३६७. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोमं मिध्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्व कर्मकी

हिदिश्रद्धांछेदो सत्तरि सागरीवमकोडाकोडीश्रो अंतोम्रहुत्त णाश्रो । सोलसकसाय-णव-णोकसायाण उक्तम्सश्रद्धांछेदो चत्तालीसमागरीवमकोडाकोडीश्रो अंतोमुहुत्त णाश्रो । एवं मणुसअपज्ञ-वादरेइंदियश्रपज्ञ०-मृहुमेइंदियपज्ञत्तापज्ञत-सञ्ज्ञविगलिदिय-पंचिदिय-श्रपज्ञ०-वादरपुढविअपज्ञ० - मृहुमपुढिविपज्ञत्तापज्ञत्त - बादरश्राउअपज्ञ० - सुहुमश्राउ-पज्जत्तापज्जत्त-सञ्ज्ञविश्वपज्ञ०-वादर्वणप्पदिवत्तेयमरीरअपज्ञ०-सुहुमवणप्पदि०-पज्जत्तापज्जत्त-सञ्ज्ञणियोद-तसश्रपज्ञ०-आभिणि०-सुद०-श्रोहि०-श्रोहिदंस०-सुक्कलेस्सा-सम्मादि०-वेदय०-सम्पामिन्छ।दिहि नि ।

्र ३६⊏. त्रारादादि जाव सन्वद्द० सन्वपयडीणमुक्क० अद्धाछेदो अंतोकोडा-कोडी० | एवमाद्दार०-त्राद्दारमिम्स०-अघगद०-अकसा०-मणपज्ञ०-मंजद-सामाइय-छेदो०-परिद्दार०-सुद्दुमसांपराय० - जद्दाक्खाद० - संजद्≀संजद-खइय-उवसम० - सासणसम्मा-दिटि त्रि ।

उत्कृष्ट स्थिति अन्तमु हूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। तथा सोलह कपाय और नौ नोक-कपायोगी उत्कृष्ट स्थिति अन्तमु हूर्त कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, सृदम एकेन्द्रिय एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, सृदम एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, स्व विक्रलेन्द्रिय अपर्याप्तक, वादर प्रथिवीकायिक अपर्याप्तक, सृदम पृथिवी-कायिक, सृदम पृथिवीकायिक अपर्याप्तक, वादर जलकायिक अपर्याप्तक, सृदम जलकायिक स्वपंप्तक, सृदम जलकायिक अपर्याप्तक, सृदम जलकायिक, स्व अप्रिक्त, स्व वादर वनस्पति प्रत्येक शरीर अपर्याप्तक, सृदम वनस्पति, सूदम वनस्पति पर्याप्तक, सूदम वनस्पति, सूदम वनस्पति पर्याप्तक, सूदम वनस्पति अपर्याप्तक, स्व वादर अपर्याप्तक, स्व वादर वनस्पति पर्याप्तक, स्व अपर्याप्तक, स्व वनस्पति अपर्याप्तक, स्व वनस्य विक स्व वनस्य विक स्व विक स्व

§ ३६८. स्त्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सभी ५कृतियोकी उत्कृष्ट स्थिति स्त्रान्तःकोड़ांकोड़ी सागर प्रमाण होती हैं। इसी प्रकार स्त्राहारककाययोगी, स्त्राहारकिमिश्रकाययोगी, स्त्रपगतवेदी, स्रकपायो, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार-विशुद्धिसंयत, सूद्दमसांपरायिकसंयत, यथान्यातसंयत, संयतासंयत, द्वायिकसम्यग्दृष्टि, उपश्चमसम्यग्दृष्टि और सामादनसम्यग्दृष्टि जीवोके जानना चाहिये।

\$ ३६६. एकेन्द्रियोमें मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। सम्यक्त्व, सम्यिग्धियात्व और नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति स्रोचके समान है। तथा मोलह कपायोकी उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त,

### स्रोरालि०-वेउव्वियमि०-कम्मइय०-असण्णि०-स्रणाहारि ति । एवमुकस्सिहिदिअद्धान्नेदो समत्तो ।

बादर वनस्पति प्रत्येकशरीर पर्याप्त, श्रौदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मण् काययोगी, श्रसंज्ञी श्रौर श्रन!हारक जीवोंके जानना चाहिये।

निश्लोषार्थ - यहाँ पहले खोच के खनुसार जिन मार्गणा खोंमें २८ प्रकृतियोंका अद्धाच्छेद है उनका मलमें उल्लेख करके जिन मार्गणात्रोमें विशेषता है उनका ऋलगसे निर्देश किया है। खुलासा इस प्रकार है — जिसने मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है वह एक अन्तर्भु हूर्तके बाद ही स्थितिघात किये बिना पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हो सकता है, अतः पंचेन्द्रिय तिर्यक्ष लब्ध्यपर्याप्तकके मिश्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म अन्तर्म हतेकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर कहा है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक्षके सम्बक्तव और सम्य-ग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति ब्रन्तर्मु हुर्तकम सत्तर कोइ।कोड़ी सागर जाननी चाहिये, क्योंकि जिस जीवने मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके वेदक सम्यक्तवको प्राप्त किया है वह जीव जब श्रति लघुकालके द्वारा लौट कर मिश्यात्वमें स्त्राना है स्त्रौर स्थितिचान किये बिना मरकर पंचेन्द्रिय तिर्यं च लब्ध्यपर्याप्तकमें उत्पन्न होता है तब उसके पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक अवस्थामें सम्यक्त्व त्रौर सम्यग्मिथ्यात्वकी त्रान्तम् इर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति देखी जाती है। यहां मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिवन्धमे लेकर पुनः मिथ्यात्वमें आकर पंचेन्द्रिय तिर्थेच लब्ध्यपर्याप्तकमे उत्पन्न होने तकके कालका जोड़ अन्तम है ते ही लेना चाहिये तभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकके सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यान्वकी उत्कृष्ट स्थिति उक्त प्रमाण बन सकती है। तथा पंचेन्द्रिय तिर्येच लब्ध्यपर्याप्तक जीवके जिस प्रकार मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति घटित करके लिख आये हैं उसी प्रकार मोनह कपाय और नौ नोकपायोंकी उन्कृष्ट स्थिति अन्तर्मु हर्तकम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर घटित कर लेनी चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सोलह कषायों की उत्कृष्ट स्थित वन्धकी ऋषेचा और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थित संक्रमकी ऋषेचा घटित करनी चाहिये । मुलमें मनुष्य अपर्याप्तक आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार सब कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति जाननी चाहिये। किन्तु सम्यग्दर्शनसे सम्बन्ध रावनेवाली आभिनिशेधिकज्ञानी त्रादि जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं (उनमें सम्यक्त्व, सम्यग्निध्यात्व श्रीर नी नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति कहते समय वेदकसम्यक्त्वसे पुनः मिथ्यात्वमें नहीं ले जाना चाहिये 🛚 किन्तु वेदकसम्यक्त्वके प्राप्त होनेके पहले समयमें ही उनके सब कमेकि उत्कृष्ट स्थित कहनी चाहिये । हां सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके वेदकसम्यक्त्वसे ऋतिशीध सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त कराके पहने समयमें सब कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये । आनतादि चार फल्पोमें यदि अविरती उत्पन्न होता है तो द्रव्यिलिंगी मुनि ही उत्पन्न होता है। यही बात नी प्रैवेयकोंकी भी है, अतः इनके सब कर्मीकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरसे अधिक नहीं होती। मूलमें आहारककाय-योगी त्रादि त्रीर जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें उत्कृष्ट स्थित अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरसे अधिक नहीं होती यह स्पष्ट ही है। हां सूच्मसाम्परायिक और यथाख्यातसंयतके जो उत्कृष्ट स्थिति अन्तःकोडाकोडी सागर वतलाई है वह उपज्ञामककी अपेदा जाननी चाहिये। जिसने मिध्यात्व या सोलह कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध किया है वह दूसरे समय में मर कर मूलमें कही गई एकेन्द्रियादि मार्गणात्रोमें उत्पन्न हो सकता है अतः उक्त मार्गणाओंमें मिध्यात्वकी एक समय कम सत्तर कांडाकोडी सागर और सोलह कवायों की एक समय कम

### 🕸 एसो जहण्णयं।

### § ३७०. एदम्हादो उवरि जहण्णयमद्धाच्छेदं वत्तइस्सामो ति मंदमेहाविजण-

चालीस कोड़ाकोड़ी सागर उत्कृष्ट स्थिति वन जाती है। किन्तू एकेन्द्रियसे लेकर बादर वनस्पति प्रत्येक शरीर पर्याप्त तक मार्गणाओंमें त्रीर असंज्ञी मार्गणामें देव पर्यायसे च्यत हुए जीवको उत्पन्न कराकर उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। श्रोदारिक मिश्रकाययोगमें देव श्रोर नारक पर्यायसे च्युत द्वुए जीव को स्त्यन्न कराकर उत्क्रुष्ट स्थिति कह्नी चाहिये। वैकियिकमिश्रकाययोगमें मनुष्य श्रीर तिर्यं च पर्यायसे च्युत हुए जीवको नरकमें उत्पन्न कराकर उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। कार्मणकाययोग और अनाहारकमें उत्कृष्ट स्थिति कहते समय चारों गतिसे मरे हुए जीवको तियंच श्रीर नारिकयोंमें उत्पन्न कराकर उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। तथा इतनी श्रीर विशेषता है कि इन सब मार्गणात्रोंमें भवके पहले समयमें ही उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व होगा। तथा एकेन्द्रियसे लेकर बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक पर्याप्तक तक उपर्युक्त मार्गणात्रोंमें त्रौर असंज्ञी मार्गणामें सम्यक्त्य श्रीर सम्यग्मिश्यात्वका उक्कष्ट स्थितिसत्त्व इस प्रकार घटित कर लेना चाहिये कि भवनित्रक व सौधर्म कल्पतक के किसी एक जीवने मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अन्तर्म हुत कालके पश्चात वेदक सम्यक्त्व प्राप्त किया । पुनः श्राति लघु कालके द्वारा वह मिथ्यात्वमे गया श्रोर वहां क्रान्तर्म हर्त काल तक रह कर सम्यक्त्व और सम्यमिध्यात्वका स्थित काण्डकचात किये विना एकेन्द्रियादिक उक्त मार्गणात्रोंमें से किसी एकमें उत्पन्न हो गया तो उसके उत्पन्न होनेके पहले समय में सम्यकत्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्त्वका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व प्राप्त होता है। इसी प्रकार श्रीदारिकमिश्रकाययोगमें सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्निश्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व कहना चाहिये। किन्त इतनी विशेषता है कि देव और नारक पर्यायसे वेदकसम्यकत्वके साथ आकर जो ओदारिक-मिश्रकाययोगी होता है उसके ही भवके पहले समयमें सम्यक्त और सम्यमिण्यात्वका उत्क्रष्ट स्थितिसत्व होता है । वैक्रियिकमिश्रकाययोगमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वका उत्कृष्ट स्थिति-सत्त्व कहते समय मनुष्य और तिर्यं च पर्यायसे नारिकयोंमें उत्पन्न कराकर भवके पहले समयमें ही कहना चाहिये। किन्तु ऐसे जीवको निर्यं च ऋौर मनुष्य पर्यायमें रहते हुए वेदकसम्यक्त्व उत्पन्न कराकर मिश्यात्वमें ले जाना चाहिये और तब नरकमें वैकियिकमिश्रकाययोगके साथ उत्पन्न कराना चाहिये। तथा कार्मणकाययोग अोर अनाहारक मार्गणामें सम्यक्त और सम्मिष्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व त्रीदारिकमिश्रकाययांगके समान घटित कर कहना चाहिये। तथा नो नाकपायों का उत्क्रष्ट स्थितिसत्त्व मिथ्यात्व त्रीर सोलह कपायोके उत्क्रप्ट स्थितिसत्त्वके समान घटिन करके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि नौ नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व उस मार्गणा में भवके पहले समयसे लंकर एक आविलकाल तक प्राप्त हो सकता है; क्योंकि जिस जीवने सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति बांधकर एक आविल कालके पश्चात् मरण किया उसके भवके पहले समयमें नौ नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व प्राप्त होगा और जो दूसरे समयमें मर गया उसके एक आवलिकालके पश्चान् उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व प्राप्त होगा । इसीप्रकार एक समयसे लेकर श्रावलितकके मध्यम विकल्प जानने चाहिये।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्थिति अच्छ। च्छेद समाप्त हुआ।

इसके आगे जघन्य स्थिति ऋद्धाच्छेदको बतलाते हैं।

§ २७०. इस उत्कृष्ट स्थिति श्रद्धाच्छेदके आगे जघन्य स्थिति अद्धाच्छेदको बतलाते हैं।

संभालणहं परूविदमेदं।

# मिच्छत्त-सम्माभिच्छत्त-बारसकसायाणं जहण्णद्विदिविह्ती एगा
 हिदी दुसमयकालद्विदिया ।

§ ३७१. द्वदो ? असंजदसम्मादिहिप्पहुि जाव श्राप्यम्तसंजदो ति एदे दंसणमोहक्खवणाए पाओग्गा। एदेसि चदुण्हं गुण्डाणाणमण्णदरेण पुव्वमेव खिवद्रश्रणंताणुवंधिच उक्केण दंसणमोहक्खवणाए श्रव्यहिदेण अधापवत्तकरणाद्धाए श्राणंतग्रणाए विसीहीए विद्वृग्वगएण श्रप्यसत्थाणं कम्माणं समणंतरादीदअणुभागवंधं पड्ड बद्धअणंतगुणहीणाणुभागेण पसत्थाणं कम्माणमणंतर।दीदश्रणुभागवंधादो बद्धअणंतगुणाणुभागेण हिदिश्रणुभागखंडयधादिवविज्ञिएण दंसणमोहणीयक्खवणाए गुणसेहिपदेसणिज्ञकम्मुक्केण अपुव्वकरणाद्धाए पढमसमए श्राहत्तिहित्रश्रुभागखंडयधादेण तत्थेवाहत्तपदसगुणसेहिणिज्ञरेण वंधविरहिदश्रप्यसत्थिमच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणमाढत्तगुणसंकमेण
श्रपुव्वकरणाद्धाए संखेज्ञसहस्सिहिदिर्बद्धयाणि हिदिकंडएहितो संखेज्जगुण।णुभागकंडयाणि च पाडिय संखेज्ञसहस्सिहिदिवंधोसरणाहि आसरिय गुणसेहिणिज्जराए कम्मक्खंघे गालिय श्रणियहिकरणं पविद्देण तत्थ वि श्रणियहिश्रद्धाए हिदिकंडयअणुभागयह स्त्र मन्द्बद्धि जनांकं सम्हालनेकं लियं कहा है।

# मिध्यात्व, सम्यग्निध्यात्व और वारह कवायोंकी एक स्थिति ज्ञचन्य स्थितिविभिनेत होती है, जिसका स्थितिकाल दो समय है।

§ ३७१. **शंका**— उक्त मिथ्यात्वादि कर्मोको दो समय कालवाली एक स्थिति जघन्य स्थितिविभक्ति क्यो होती है ?

समाधान—असंयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रभत्तसंयत तक ये चार गुण्स्थानवर्ती जीव दर्शनमंहनीयकी च्राग्य होते हैं। इनमेसे पहले जिसने अनन्तानुबन्धी च्रुष्ठका च्रय कर दिया है ऐसा इन चार गुण्स्थानों रहनेवाला काई एक जीव जब दर्शनमंहनीयकी च्राण्य लियं उद्यत होता है तब वह अधः प्रवृत्तकरण्के कालमें अनन्तगुणी विशुद्धिके द्वारा वृद्धिका प्राप्त होता हुआ अप्रशस्त कमिक अनुभागका अपने पूर्वसमयवर्ती अनुभागवन्धकी अपेचा अनन्तगुणा हीन वायता है और प्रशस्त कमाक अनुभागका अपने पूर्व समयवर्ती अनुभागवन्धकी अपेचा अनन्तगुणा इति वायता है। पर इसके यहाँ स्थितिकाण्डकघात आर अनुभागकाण्डकघात नहीं होते हैं और न दशनमंहिनीयकी च्रुप्णमं होनेवाली गुण्येणी कमसे कर्मप्रदेशाकी निर्जरा ही होती है। तथा जब वह अपूर्वकरण्को प्राप्त होता है तब वह उसके पहले समयमे ही स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघातका आरम्भ कर देता है। तथा यहीस कमप्रदेशोंकी गुण्येणी निर्जरा चाल हा जाती है और जिनका बन्ध नहीं होता ऐसे मिध्यात्व और सम्यग्मध्यात्व इन दो अप्रशस्त कर्माका गुण्यसंकम प्रारम्भ हो जाता है। तथा इस जावके अपूर्वकरण्के कालमं संख्यात हजार स्थितिकाण्डकघात आर स्थितिकाण्डकघातोसे संख्यातगुणे अनुभागकाण्डकघात हाते है तथा संख्यात हजार स्थितिवन्धायसरण् होते हैं। इस प्रकार यह जीव गुण्येणी निर्जराके हारा कर्मस्कन्धोका नाश करता हुआ अनिवृत्तिकरण्ये प्रवेश करता है। वहाँ अनिवृत्तिकरण्ये

कंडयसहस्साणि घादिय समयं पिड असंखेज्जगुणाए सेटीए कम्मक्खेषे गालिय अणि-यिष्टअद्धाए संखेजेसु भागेसु गदेसु मिच्छत्तचरिमफालिं पिलदोवमस्स असंखेज्जदि-भागमेत्तमुद्दयाविलयादो वाहिरिल्लयं घेतूण सम्मत्तसम्मामिच्छत्तेसु संकामेंतेण उच्चरा-विदसमऊणुद्याविलयमेत्तिदिदीसु थिउकसंकमेण संकमंतीसु मिच्छत्तेयणिसेयणिसेय-दिदीए दुसमयकालिदिदीए उवलंभादो । कथमणंताणं परमाणुणं टिदिववएसो १ ण, आहारे आहेओवयारादो । कथमेयत्तं १ ण, दुसमयकालावद्वाणेण समाणाणमेयत्ता-विरोहादो ।

\$ ३७२. एवं सम्मामिच्छत्तवारसकसायाणं पि वत्तव्व । एवरि ऋष्पष्पणो चिरमफालीओ परसरूवेण मंछुहिय उदयाविलयपविद्यासियदिदीओ थिवुक्कसंकमेण संकामिय एयणिसेयदिदीए दुसमयकालाए सेसाए जहण्णदिदिविहत्ती होदि ति वत्तव्वं । एदेसि सव्वकम्माणं सगसगञ्जणियदिश्चद्वागु संखेळ्ये सु भागेसु गदेसु चिरमफालीओ पदंति । अएंताणुवंधिचउक्कस्म पुण र्ळाएयदिश्चद्वाए चरिमसमए चरिमफाली पददि

कालमें भी यह जीव हजारों स्थितिक।ण्डक और अनुभागक।ण्डकोंका घात करके प्रतिसमय असंख्यातगुणी श्रेणी रूपसे कर्मस्कन्धोंका नाज करता है और इम प्रकार जब यह जीव अनिपृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभागको व्यतीन कर देता है तब वह पत्योपमके असंख्यातयें भाग
प्रमाण मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको उदयाविलके बाहरसे प्रहण करके सम्यक्त और सम्यिमध्यात्वमें संकानत करता है और उदयाविलप्रमाण जो निपंक शेप रहे हैं उनमेसे एक समय कम
उदयाविलप्रमाण स्थितिकों भी स्तिवुकसंकमणके द्वारा (सम्यक्त्यप्रकृतिमं ) संकानत कर देता है।
तब इस जीवके मिथ्यात्वके एक निपंककी दो समयप्रमाण निपंकस्थित प्राप्त होती है।

शंका-अनन्त परमाणुत्रोंको स्थिति संज्ञा कैसे प्राप्त होती हैं ?

समाधान - आधारमे आधेयके उपचारसे ग्रानन्त परमाणुओंको स्थितिसंज्ञा प्राप्त हो जाती हैं ?

शंका- - ये एक कैसे हो सकते हैं ?

समाधान — नहीं क्योंकि दो समय काल तक रहनेके कारण इनमें समानता है, इसलिये इनको एक माननेम कोई विरोध नहीं है।

§ ३७२. जिस प्रकार मिध्यालकी एक जवन्य स्थिति दो समय प्रमाण कही उसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्व और बारह कपायोकी भी कहनी चाहिये। इतनी विशेषता हैं कि अपनी अपनी अनित्तम फालिको पररूपसे संक्रभित करके तथा उद्यावित्तमें स्थित निपेकोंकी स्थितिको स्तिवुक संक्रमणके द्वारा संक्रामित करके जो दो समय प्रमाण एक निषेककी स्थिति शेष रहती हैं वह उक्त कर्मोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती हैं प्रकृतमें ऐसा कथन करना चाहिये। इन सभी कर्मोंकी अपने अपने अनिष्टत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभाग व्यतीत होने पर अनितम फालियोंका पत्तन होता है। परन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनितम फालिका पत्तन अनिवृत्तिकरणके कालके

त्ति घेत्तव्यं । क्रदो ? साहावियादो । सम्मामिच्छत्तस्स उव्वेल्छणाए वि जहण्णिहिदि-विहत्ती होदि । चरिमुव्वेल्छणकंडयचरिमफाछीए पदिदाए तत्थ वि दुसमयकालेग-णिसेगिहिदीए उवलंभादो ।

\* सम्मत्त-लोइसंजलण-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णिदिविह्त्ती एगा
 हिदी एगसमयकालिदिया ।

§ ३७३. सम्मत्तस्स एगा हिदी एगसमयकालपमाणा जहण्णहिदिविहत्ती होदि त्ति जं सुत्ते भणिदं तस्स विवरणं कस्सामो । तं जहा-सम्मामिन्छत्तचरिमफालियाए सम्मत्तिम संकामिदाए सम्मत्तस्स अहवस्सिहिदिसंतकम्मं होदि । पुणो एवविहिहिदि-संतकम्ममंतोमुहुत्तमेत्तिहिदिकंडयपमाणेण घादयमाणो सम्मत्तस्स अणुसमयओवृहणं च कुणमाणो ताव गन्छिदि जाव संखे जिहिदिकंडयसहस्साणि गदाणि ति । तदो तेसु गदेसु सम्मत्तचरिमफालियागाएंतो कद्करिणज्ञकालमेत्ताओं हिदीश्रो मोत्तूण आगाएदि । पुणो तं घेत्तूण गुणसेहिणिकखेवेण णिक्षिक्तो अणियहिकरणं समप्पदि । तदो अणुसमय-मावृहणं करेमाणो उदयाविलयपविहिद्दिश्यो ताव गालेदि जाव एगा हिदी एगसमय-कालपमाणा उदयमिम हिदा त्ति । ताथ सम्मत्तस्स जहण्णहिदिविहत्ती होदि । सम्मा-

ऋन्तिम समयम प्राप्त होता है एसा यहां प्रहण करना चाहिये, क्योंकि इनका ऐसा स्वभाव है। तथा सम्यग्मिश्यात्वकी उद्वेलनामें भी जघन्य स्थिति विभक्ति होती है, क्योंकि ऋन्तिम उद्वेलना-काण्डककी ऋन्तिम फालिके पतन होने पर वहां भी एक निपेककी दो समय प्रमाण स्थिति पाई जाती है।

\* सम्यक्त्व, लोभसंज्वलन, स्त्रीवेद श्रीर नपुंसकंवेदकी एक स्थिति जघन्य स्थिति विभक्ति होती है, जिसका स्थितिकाल एक समय है।

§ ३७३. सम्यक्त्वका एक स्थित एक समय प्रमाण काल तक रहनेवाली जयन्य स्थिति विभक्ति होती है, इस प्रकार जो सूत्रमं कहा है, ऋव उसका विवरण करेंगे। जो इस प्रकार है—जब सम्यिग्ध्यात्वकी ऋन्तिम फालिका संक्रमण सम्यक्त्वमं होता है तब सम्यक्त्वका ऋाठ वर्ष प्रमाण स्थिति सत्कर्म होता है। पुनः यह जीव सम्यक्त्वके इस प्रकार स्थित स्थिति स्वक्ष्म होता है। पुनः यह जीव सम्यक्त्वके इस प्रकार स्थित स्थितिस्वक्षमका ऋन्तमुं हूर्न प्रमाण स्थितिकाण्डकके द्वारा घात करता हुआ और प्रत्येक समयमें ऋपवतना करता हुआ तब तक जाता है जब जाकर सख्यात हजार स्थितिकाण्डक व्यतीत हो जाते हैं। तदनन्तर उन सख्यात हजार स्थितिकाण्डकों के व्यतीत होने पर यह जीव सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिको प्राप्त होता हुआ। उसमेंसे कृतकृत्यवेदकके काल प्रमाण स्थितियोंको छोड़कर शेपको ष्रहण करता ह। पुनः इसके कृतकृत्यवेदक कालप्रमाण स्थितियोंको छोड़कर और शेपको ष्रहण करके उनका गुण्श्रेणीरूपसे नित्तेप कर देने पर ऋनिवृत्तिकरण समाप्त होता है। तदनन्तर उनका प्रत्येक समयमे अपवर्तन करता हुआ उदयाविलमें स्थित स्थितियोंकी तब तक निर्जरा करता है जब जाकर उदयमें स्थित एक स्थित एक समय काल प्रमाण प्राप्त होती है। और इसी समय सम्यक्त्वकी जयन्य स्थिति विभक्ति होती है।

मिच्छत्तादीणं जहण्णंहिदी एगसमयकालपमाणा ति किण्ण परूविदं ? ण, मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-वारसकसायाणं सम्मत्तस्येव सोट्एए क्ववणाभावादो ।

§ ३७४. संपिंद लोहसंजलणस्स जहण्णिंदिरी बुचदे । तं जहा-अप्पणो वादर-किटीओ वेदिय तदो तिद्यिकिट्टिं वेद्यमाणो सुहुमसांपराइयअद्धाए संखेज्जे भागे गंतूण लोमचरिमफालिमागाएंतों सुहुमसांपराइयअद्धाए मेमं सगद्धाए संखेज्जिदिभागं मोत्तूण आगाएदि । पुणो तं चरिमफालिद्व्वं घेत्तूण गुणसंदिकमेण उद्यादि णिक्खिवय तदो जहाकमेण संसगोवुच्छाओ गालिय एगिहदीए उदयगदाए एगसमयकालपमाणाए संसाए लोभसंजलणस्स जहण्णिदिदिविद्यती होदि ।

§ ३७५. इत्थिवेदस्स एगा हिदी एगसमयकालपमाणा जहण्णहिद्विहत्ती हं।दि ति जं भणिदं तस्स विवरणं कस्सामो । तं जहा—इत्थिवेदादएण खवगसेहिं चिडिय तदो विदियहिदीए हिदमित्थिवेदचरिमफालिं दुचरिमसमयसवेदएण घेन् ए पुरिसवेद-सह्रवेण संकामिदे सवेदियचरिमसमयम्मि एगा हिदी एगसमयकालपमाणा सुद्धा स्वविद्दिद ताथे इत्थिवेदस्म जहण्णहिदिविहत्ती होटि ।

§ ३७६, संपहि णवुंसयवेदस्स वृच्चदे । तं जहा—णवुंसयवेदोदएण जो खवग-

शंका—सम्यग्मिण्यात्व आदिककी जघन्य स्थिति एक समय कालप्रमास क्यो नहीं कही ?
समाधान—नहीं, क्योंकि मिण्यात्व, सम्यग्मिण्यात्व और बारह कपायोंका सम्यक्त्वके
समान स्वाद्यसे चप्ण नहीं होता, इसलिये उनकी जघन्य स्थिति एक समय कालप्रमास
नहीं कही।

हु ३०४ अब लोभसंज्वलनकी जयन्य स्थिति कहते हैं। वह इस प्रकार हे—लाभसंज्वलन-वाला जीव अपनी बादर कृष्टियोका वेदन करके तदनन्तर तासरी कृष्टिका वेदन करता हुआ सूद्दमसांपरायिकगुणस्थानक कालमें संख्यात बहुमागश्रमाण कालका व्यतीन करक लोभकी आन्तम फालिको महण करता हुआ सूद्दमसंगरायके कालम अपने कालक अर्थान् लाभकी अन्तिम फालिक कालके संख्यातवें भागश्रमाण निपंकाको छोड़कर रोप निपंकाको महण करता है। पुनः उस अन्तिम फालिके द्रव्यका महण करक और उसे गुणश्रेणीकमसे उदय कालसे लेकरक निचिन्न करके तदनन्तर यथाकमसे रोप गोपुच्छको गलात। है तब जाकर उदय शान्न एक स्थितिकी एक समय कालश्रमाण स्थितिक रोप रहने पर लोभसंज्वलनकी जवन्य स्थितिविभक्ति हाता है।

§ ३७५. अब स्नीवंदकी एक स्थिति एक समय कालप्रमाण जघन्य स्थितिविभक्ति होती है यह जो पहले कह आये हैं उसका विवरण करेगे। वह इस प्रकार हं—

स्त्रीवेदके उदयसे ज्ञापकश्रेणी पर चढ़कर तदनन्तर सर्वेदक जीवके द्वारा द्विचरम समयमें द्वितीय स्थितमें स्थित स्त्रीवेदकी त्रान्तिम फालिका पुरुग्वेदरूपसे संक्रमण कर देने पर जब सर्वेद भागके अन्तिम समयमें एक समय कालश्रमाण एक स्थिति शुद्ध शेष रहती है तब स्त्रीवेदकी ज्ञाचन्य स्थितिविभक्ति होती है।

। ३७६, श्रव नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति कहते हैं । वह इस प्रकार है-जो नपुंसकवेदके

सेढिमारूढो तेण सवेदियदुचिरमसमए इत्थिणवुंसयवेदचिरमफालीसु सव्वसंक्रमेण पुरिसवेदे संकामिदासु तदो सवेदियचरिमसमए णवुंसयवेदस्स एगा हिदी एगसमय-कालपमाणा पत्तोदया सुद्धा चिहदि । ताथे णवुंसयवेदस्स जहण्णहिदिविहत्ती होदि ।

\* कोइसंजलणस जहण्णद्विदिविहत्ती वे मासा अंतोमुहुत्तूणा |

§ ३७७. कुदो ? चिरत्तमोहक्खण्ण कोधसंजलणवेकिटी आ खेविय कोधतिद्यिकिटिं खवेमाणेण तिस्से पढमिटिदीए समयाहियाविल्याए सेसाए कोधसंजलणस्स
जहण्णवंधे संपुण्णवेमासमेने पबद्धे ताधे समयूणदोश्राविल्यमेत्ता समयपबद्धा सुद्धाः
कोहस्स चिट्ठंति । तिम्म समए उप्पादाणुच्छेदेण कोहिचराणसंतकम्मचिरमफालीए
णिस्सेसिविणासुवलंभादो । तदो बंधाविल्याए विद्क्तंताए समऊणाविल्यमेत्तफालीसु
परसक्ष्वेण संकामिदासु दुसमयूणदोआविल्यमेत्तसमयपबद्धे हु णिस्सेसं परसक्ष्वेण
गदेसु ताधे समयूणदोआविल्याहि ऊणवेमासमेत्ता कोधचिरमसमयपबद्धस्स हिद्धः
थक्कदिः ताधे कोधसंजलणस्स जहण्णिहिद्दंसणादो । समयूणदोआविल्याहि ऊणवेमासमेत्ता कोधजहण्णिहिद्विहत्ती होदि ति अभिणय वेमासा अंतोमुहुत्रूणा ति
भिणदं कथमेदं घडदे ? ण, वेमासअब्भंतरआवाहाए अंतोमुहुत्तपमाणाए कम्मिणसेगा-

उदयसे चपकश्रेणी पर चढ़ा है वह जब सबेद भागके द्विचरम समयमे स्त्रीवेद श्रीर नपुंसकवेदकी श्रम्तिम फालियोंका सर्वसंक्रमण्के द्वारा पुरुपवेदमें संक्रमण कर देता है तब सबेद भागके श्रन्तिम समयमें नपुंसकवेदकी उदयगत एक स्थित एक समय कालब्रमाण शुद्ध शेष रहती है और तभी नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति विभक्ति होती है।

% क्रोधमंज्यलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति अन्तमु हूर्त कम दो महीना है। § २०००. शंका—कोधसंख्यलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति अन्तमु हूर्त कम दो महीना क्यों है?

स्माधान—चारित्रमोहनीयके च्यके साथ कोधसंज्यलनकी दो छृष्टियोंका चय करके कोधकी तीसरी छृष्टिका चय करते हुए उसकी प्रथम स्थितिके एक समय अधिक आवली प्रमाण शेप रहने पर कोधसंज्यलनका जयन्य वन्ध पूरा दो महीना होता है और उस समय काधके केवल एक समय कम दो आवली काल प्रमाण समयप्रवद्ध शेप रहते हैं। तथा उसी समय उत्पादानुच्छेद की अपेचा कोधकी प्राचीन सत्तामें स्थित अन्तिम कालिका पूरा विनाश प्राप्त होता है। तदनन्तर वन्धावलिके व्यतीत होने पर एक समय कम आविल प्रमाण कालियोंके पररूपसे संक्तित होने पर तथा दो समय कम दो आवली प्रमाण समयप्रवद्धोंके पूरी तरह पररूपसे प्राप्त होने पर उस समय एक समय कम दो आवलियोंसे न्यून दो महीना प्रमाण क्रांधके अन्तिम समयप्रवद्धकी स्थिति शेष रहती हैं; क्योंकि उसी समय क्रोधसंज्यजनकी जयन्य स्थित देखी जाती है।

शंका—क्रोधसंज्वलनकी एक समय कम दो आविलयोंसे न्यून दो महीना प्रमाण जघन्य स्थिति होती है ऐसा न कहकर जो अन्तर्मु हूर्त कम दो महीना जघन्य स्थिति कही है सो यह कैसे बन सकती है ?

१ बप्रतौ दुसमय्णादो इति पाठः । २ श्रप्रतौ शिस्तेणं इति पाठः ।

भावेण अंतोमुहुत्त ्यां वेमासत्तु ववत्तीदो । कथं णिसेयाणं हिदिववएसो १ ण, णिसेयादो पुथभूदकालाभावेण णिसेयायां हिदित्ताविरोहादो । एत्थ कालो पहाणो किण्ण कदो १ ण, कम्मपरूवणाए कालस्स पहाणत्ताभावादो । जहा सम्मामिच्छत्तस्स एगा हिदी दुसमयकालपमाणा जहण्णहिदिविहत्ती होदि ति भणिदं तहा एत्थ वि अंतोमुहुत्तूण-वेमासभेत्तिहिदीओ समयूणवेआवित्त उणवेमासकालपमाणात्रो ति किण्ण परूविदं १ ण, चिरमणिसेयं मोत्तूण सेसणिसेयाणमेम्महंतकालाभावादो । उवदेसेण विणा वि णिसेयाणं कालो अवगम्मदि ति वा सुत्ते ण भणिदो ।

### \* माणसंजलणस्म जहण्णहिदिविहत्ती मासो अंतोमुहुत्तूणो ।

्र ३७८. कुदो १ माणवेकिटीओ खिवय तिदयिकिटि वेदयमाणस्स तिस्से तिदयिकिटीपटमिटदीए समयाहियाविलयसेसाए माणचिरमिटिदिबंघो मासमेत्तो । तत्तो उविर समऊणदोत्राविलयमेत्त द्धाणे चिटिद चिरमसमयपबद्धिटिदीए अंतोग्रहुत्त ूणमास-मेत्तिणसेगाणग्रुवलंभादो । जिद ि्रासेगिटिदीओ चेव घेत्त ूण जहण्णिटिदिविहत्ती बुच्चिद

समाधान—नहीं, क्योकि दो मास प्रमाण स्थितिके भीतर अन्तर्मु हूर्तप्रमाण आबाधा-कालमे कर्मनिषेक नहीं होनेसे जयन्य स्थिति अन्तर्मु हूर्तकम दो महीना बन जाती है।

शंका-निपंकोंकी स्थित संज्ञा कैसे हो सकती है ?

समाधान—नहीं, वयोंकि निपंकोसे काल पृथम्भूत नहीं पाया जाता है अतः निपेकोंकी स्थिति संज्ञा होनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

शंका-यहाँ पर कालको प्रधान क्यों नहीं किया है ?

ममाधानं - नहीं, क्योंकि कर्मोंकी प्ररूपणामें कालको प्रधानता नहीं प्राप्त होती है।

श्रं का — जिस प्रकार सम्यग्मिण्यात्वकी दो समय कालवाली एक स्थिति जघन्य स्थिति विभक्ति होती है ऐसा कहा है उसी प्रकार यहाँ भी अन्तमु हुर्त कम दो महीना प्रमाण स्थितियाँ एक समय कम दो आविलियोंसे न्यून दो महीना काल प्रमाण होती है ऐसा क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, वयोंकि अन्तिम निपेकको छोड़कर शेप निपेकोंका इतना बड़ा काल नहीं पाया जाता है। अथवा उपदेशके विना भी निपेकोंका काल जाना जाता है इसलिये सूत्रमें नहीं कहा है।

\* मान संज्वलनकी जवन्य स्थितिविभक्ति अन्तर्मुहूर्त कम एक महीना है। १३७५ शंका—मानसंज्वलनकी जवन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त कम एक महीना क्यों हैं?

समाधान—मानकी दो कृष्टियोंका त्तय करके तीसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले जीवके उस तीसरी कृष्टिकी प्रथम स्थिति एक समय अधिक आवलीप्रमाण शेप रहने पर मानका अन्तिम स्थितिबन्ध एक महीना प्रमाण होता है। तदनन्तर एक समय कम दो आवली प्रमाण स्थान जाने पर अन्तिम समयप्रबद्धकी स्थितिके निपेक अन्तिमुँ हुत् कम एक महीना प्रमाण पाये जाते हैं।

तो चरिमसमयमाणवेदयम्मि जहण्णसामित्तं किण्ण परूविज्ञदिः अंतीमुहुत्त् एतं पिट विसेसाभावादो ? ए, तत्थ समयाहियश्राविलयमेत्ति एसेगिहिदीणं पढमिहिदीएं उवलं-भादो । पढमिहिदिणिसेगेसु गालिदेसु किएए। दिज्जदे ? ए, तत्थ हेहा बद्धकम्माएं चरिमसमयहिदिबंधादो हेहा वि तिएएसेगाएसुवलंभादो । तम्हा समयूएदोश्राव-लियमेत्तद्धाणं गंतूए। चेव जहण्णहिदिविहत्ती होदि ।

### \* मायासंजलणस्म जहरणहिदिविहत्ती अद्यमासो अंतोसहत्तुणो ।

§ ३७९. जेण मायासंजलणचरिमिटिदिवंधस्स णिसेया अंतोम्रहुत्तूणा ऋद-मासमेत्ता तेण समऊणदोश्राविलयमेत्तपचग्गसमयपबद्धेसु गालिदेसु अंतोमुहुत्तूणद्ध-मासमेत्तिणसेयिटिदीश्रो लब्भंति तम्हा तत्थ जहण्णिटिदिविहत्ती होदि । सेसं सुगमं, कोधमाणसंजलणेमु परूविद्तादो ।

# धुरिसवेदस्स जहण्णिद्दिविहत्ती अद्वयसाणि अंतोम्रहृत्तूणाणि । ३८०० इदो ? चरिमसमयसवेदण्ण वंधजहण्णिद्दिवंधो अद्वयसमेनो ।

शंका—यदि निपेकोंकी स्थितिको यहण करके जघन्य स्थितिविभक्ति कही जाती है तो मान वेदनके अन्तिम समयमे जघन्य स्थितिका स्वामित्व क्यों नहीं कहा, क्योंकि दोनों जगह दो महीनामें अन्तमुं हूर्त काल कम है इसकी अपना दोनो जगह कोई विशेषता नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मानवेदनके अन्तिम समयमें प्रथम स्थितिके निषेकोंकी भी एक समय अधिक आवलीप्रमाण स्थिति पाई जाती है, अतः वहाँ मानकी जघन्य स्थिति नहीं हो सकती है।

**शंका**—तो फिर जिसने प्रथम स्थितिके निपेकोंको गला दिया है वह जघन्य स्थितिका स्वामी क्यों नहीं माना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ पहले वंथे हुए कर्मीकी ऋषेचा ऋन्तिम समयमें जो स्थिति वन्य होता है उसके नीचे भी उनके निषक पाये जाते हैं। ऋतः एक समय कम दो ऋावली प्रमाण स्थान जाकर ही मानकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है।

### भ मायासंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति अन्तर्म हुर्त कम आधा महीना है।

६ ३७६. चूँ कि मायासंज्वलनके अन्तिम स्थितिवन्धके निषेक अन्तर्मु हुर्त कम आधा महीना प्रमाण होते हैं, इसलिये एक समय कम दो आवलीप्रमाण नृतन समयप्रबद्धोंके गला देने पर अन्तमे निषेकोंकी स्थितियाँ अन्तर्मु हुर्त कम अर्धमास प्रमाण प्राप्त होती हैं, इसलिये वहाँ जघन्य स्थितिविभक्ति होती हैं। शेष कथन सुगम हैं, क्योंकि उसका कथन कोध और मान संज्वलनकी जघन्य स्थितिका कथन करते समय कर आये हैं।

अपुरूपवेदकी जघन्य न्थितिविभक्ति अन्तमुहूर्त कम आठ वर्षप्रमाण होती है। १३८०. शंका—पुरुप वेदकी जघन्यस्थिति अन्तपु हुते कम आठ वर्षप्रमाण क्यों होती हैं? समाधान—क्योंकि संवद्भागके अन्तिम समयमें पुरुपवेदका जघन्य स्थितिबन्ध आठ वर्षप्रमाण णिसेयिदितिओ पुण अंतोमुहुत्त णअद्दिष्समेत्ताओः अंतोमुहुत्त गासियरयणा-भावादो । पुणो समयृणदोआविष्यमेत्तमद्भाणमुविर गंत्ण अंतोमुहुत्त एअद्दिस्समेत्त-णिसेयिदिदीणमुवलंभादो । सत्तिरसागरोवमकोडाकोडीणं जदि सत्तवाससहस्समेत्ता-बाहा लब्भिद तो अद्दण्हं वस्साणं किं लभामो ति पमाणेणिच्छागुणिदफले स्रोविद्दि जेण एगसमयस्स स्रसंखेजिदिभागो आगच्छिद तेण स्रदृष्णं वस्साणमावाहा अंतो-मुहुत्तमेत्ता ति ण घडदे ? ण एस दोसा, संसारावत्थ मोत्त्ण खवगसेढीए एवंविह-णियमाभावादो । तं पि कुदो एाच्वदं ? अद्द्वस्साणि अतीमुहुत्त णाणि पुरिसवेदस्स जहण्णदिदिविहत्ती होदि त्ति सुनादो । एदमत्थपदमण्णत्थ वि वन्तव्यं ।

### 🕸 छण्णोकसायाणं जहण्णहिद्विहत्ती संखेजाणि वस्माणि ।

\$ ३८१. एटस्स अत्थो बुच्चदे, अण्णदरवेदकसायाणमुदएण खनगसेढि चिडिय तदो जहाकमेण णवुंसयवेदमिन्थिवेदं च खितय नदो छण्णोकसायखनएकालचिरम-समए चरिमिटिदिकंडयचरिमकाठीए मंखेज्जनम्सपमाणाए सेसाए छण्णोकसायाणं जहण्णिटिदिविहत्ती होदि ।

होता है। परन्तु निपेकोकी स्थितियाँ अन्तर्मु हुर्त कम ब्राट वर्षप्रमाण ही होती हैं, कारण कि अन्त-र्मु हुर्त प्रमाण त्रावाधामे निपेकोंकी रचना नहीं पाई जाती है। पुनः एक समय कम दो ब्रावली प्रमाण काल ऊपर जाकर निपेकोंकी स्थितियाँ ब्रान्तर्मु हुर्तकम ब्राट वर्ष प्रमाण पाई जाती हैं।

श्रंका—सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिकी यदि सात हजार वर्ष प्रमाण आवाधा पाई जाती है तो आठ वर्षप्रमाण स्थितिकी कितनी आवाधा प्राप्त होगी, इस प्रकार जैराशिक विविके अनुमार इन्छाराशिमे फलराशिको गुणित करके उसमें प्रमाणराशिका भाग देने पर चूँ कि एक समयका असंख्यातवां भाग आता है, इसलिये आठ वर्षकी आवाधा अन्तर्मु हुर्त प्रमाण होती है यह कथन नहीं बनता है ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि संसार अवस्थाको छोड़कर चपदश्रेणींमें इस प्रकारका नियम नहीं पाया जाता है।

शंका-यह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—'पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति अन्तर्मुहर्न कम आठ वर्ष प्रमास् है' इस सूत्रसे जाना जाना है।

यह ऋर्थपद अन्यत्र भी कहना चाहिये।

\* बह नोकपार्योकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यात वर्षममाण होती है।

। ३८१. श्रव इस सूत्रका श्रर्थ कहते हैं-िकसी एक वेद श्रीर िकसी एक कपायके उदयसे चपकश्रेणी पर चढ़कर तदनन्तर यथाक्रमसे न्युंसकवेद श्रीर स्त्रीवेदका चय करके तदनन्तर छह नोकपायोंके चय करनेके श्रन्तिम समयमे उनके श्रन्तिम स्थितिकाण्डककी श्रन्तिम फालिकी संख्यात वर्ष प्रमाण स्थितिके होप रहने पर छह नोकपायोंकी ज्ञायन्य स्थितिविभक्ति होती है।

### 🕸 गदीसु अणुमिगदव्वं ।

६ ३८२. गदीस्र त्ति देसामासियवयणं । तेण गदियादिस्र चोहसमग्गणहाणेस्र अणुमिगद्व्यमिदि भणिदं होदि । एवं जइवसहाइरिएण स्विद्स्स अत्थस्स उचारणा-इरिएण परूविद्वक्खाणं भणिस्सामो । उचारणोघो जहवसहोघेण समाणो त्ति ण तत्थ वत्त्व्यमित्थ ।

६ ३८३. मणुस०-मणुसपज्ज०-पंचिदिय-पंचि०पज्ज-तस-तसपज्ज०-पंचमण-पंच-वचि०-कायजोगि०-ओरालिय०-लोभकसाय-आिण०-सुद०-ओहि०-संनद०-चक्खु०-अचक्खु०-ओहिदंस०-सुक्क०-भविसिद्धि०-सम्मादिष्टि-सण्णि-आहारीणमोघभंगो । णविर मणुसपज्ज० इत्थिवेद० जह० अद्धाच्छेदो पलिदो० असंखे०भागो । लोभकसाय० दोण्हं मंजलणाणं जह० द्विदिश्रद्धा०जहाकमेण अद्व वस्साणि चचारि मासा च अंतोमुहुच्चूणा ।

§ ३८४. त्रादेसेण णेग्इएंसु मिच्छत्त-वारसकसाय-भय-दुर्गुद्धाणं जहण्णहिदि-विहत्ती सागरीवमसहस्सस्य सत्त सत्ताभागा चत्तारि सत्ताभागा पिळदेशे० संखे०भागेण उ.णा । तं जहा —मिच्छत्तास्स ताव उचदे । असण्णिपंचिदिओ हदसमुप्पत्तियकमेण हिदिघादं काद्ण कयजहण्णमिच्छत्तिहिसंतकम्मो विग्गहगदीए णेरइएसु उववण्णो

### \* इसी प्रकार गतियोंमें धनुसंधान करके समभाना चाहिये।

§ ३५२ सूत्रमे आया हुआ 'गदीमु' यह वचन देशामयंक है, इसलिये गति आदिक चौदह मार्गणास्थानोमें अनुसन्धान करके सममना चाहिये यह उक्त सूत्रका अभिप्राय होता है। इस प्रकार यितवृषम आचार्यके द्वारा सूचित अर्थका उच्चारणाचार्यके द्वारा जो व्याख्यान किया गया है उसे कहेंगे। उसमें भी उच्चारणाका आव यितवृषमके आवके समान है अतः उच्चारणाके आवका कथन नहीं करेंगे।

§ ३५३. उसमें भी सामान्य मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, खोदारिक हाययोगी, लोभकपायी, खाभिनिवाधिक हानी, खुन्छानी, ख्रवधिक होनी, ख्रवधिक होनी, ख्रवधिक होनी, ख्रवधिक होनी, ख्रवधिक होने ख्रोदिक समान भंग है। इननी विशेषता है कि मनुष्यपर्याप्तके स्त्रीवेदका जवन्य स्विकाल पल्यापम के ख्रसंख्यानवें सागप्रमाण है और लोभकपायवाले जीव के दो संज्यलनों हा जवन्य स्थितिकाल कमसे ख्रान्य हम ख्रादे कम खाठ वर्ष ख्रोद ख्रान्य हुं हर्तक मचार माम है।

§ २८४. आदेशकी अपेना नारिकयोंने मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्ति हजार सागरके यात भागोंमेंसे पत्यापमके संख्यातवें भागपे न्यून सातो भागपमाण है और वारह कााय, भय तथा जुगुष्माकी जवन्यस्थितिविभक्ति हजार सागरके सात भागमि से पत्यका संख्यातवाँ भग कम चार भागप्रमाण है। न्युनामा इस प्रकार है। उसमें पहले मिण्यात्वकी जवन्य स्थिति कहते हैं—जिसने हतसमुत्यित्ति ककमसे स्थितिवात करके मिण्यात्वका जवन्यस्थिति सत्कमें कर लिया

१. १म्र०पतौ श्रमंखे, इति पाठः।

तस्स विदियसमये णेरइयस्स सागरोवमसहस्सस्स सत्त मन्ताभागा पिलदो० संखे०-भागेण ऊणा जहण्णिद्दिश्रद्धां छेदो होदि । णेर्रेह्य्रो सिण्णिपंचिदित्रो संतो अंतोकोडा-कोडिद्दिद्दिं निच्छत्तस्स किण्ण वंधदि ? सरीरे गहिदे पढमसमयण्पहुडि अंतोकोडा-कोडिद्दिदिं चेव वंधदि, कि तु विग्गहगदीए अमिण्णिद्दिदिं चेव वंधदि, पंचिदियपाओग्ग-जहण्णिद्दिदीए तत्थ संभवादो असिण्णिपंचिदियपच्छायद्त्तादो वा ।

§ ३८५. एवं वारसकसाय-भय-दुगुंछाणं पि वत्तव्वं। णविर सागरोवमसहस्सस्स चत्तारि सत्तभागा पिलदोवमस्स संखे०भागूणा। एवं सत्तणोकसायाणं।
इत्थिवेदस्स जहण्णदाछेदो ताव वृच्चदे। तं जहा —जो असण्णिपंचिंदिओ
हदसमुप्पत्तियकमेण कयतत्थतणजहण्णिद्धिसंतकम्भे तेण वंधावित्यादिक्कंतकसायद्विदिसंतकम्मे सागरोवमसहस्सस्स चत्तारि सत्तभागमेते पिलदो० संखे०भागेणुणे
इत्थिवेदिम्म संकाभिय णेरइयेमुप्पण्णपदसम् इत्थिवेद्वंधवोच्छेदे कदे कसायद्विदी
इत्थिवेदिम्म ण संकमिदः वंधाभावेण पिडग्गहत्ताभावादो। तदो अंतोमुहृत्तकालं पुरिसदे ऐसा कोई एक असंज्ञा पंचेन्द्रिय जीव जब विब्रह्मितसे नारिक्योमें उत्पन्न होता है तब उस
नारकीके दूसरे समयमे हजार सागरके सात भागोंमेंसे पत्थके संख्यातवें भागसे न्यून सातों भाग
प्रमाण जघन्यस्थिति होती है।

श्रंका—नारकी संज्ञी पंचेन्द्रिय है, अतः वह मिथ्यात्वकी अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिको क्यों नहीं बाँधता है ?

समाधान-नारकी जीव शरीर ष्रहण करने पर प्रथम समयसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण स्थितिको ही वाँधता है किन्तु वह विष्रहगितमें असंज्ञीकी स्थितिको वाँधता है, क्योंकि पैचेन्द्रियके योग्य जवन्य स्थितिका पाया जाना नरककी विष्रहगितमें संभव है। अथवा वह असज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यायसे लौटकर आया है, इसलिये भी वहाँ असंज्ञीके योग्य जवन्य स्थिति पाई जाती है।

§ ३-४. इसी प्रकार वारह कपाय, भय और जुगुप्साका भी कथन करना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनकी जबन्य स्थिति हजार सागरके सात भागोंमें से पत्यका संख्यातवाँ भाग कम चार भाग प्रमाण होती है। इसी प्रकार शेप सात नोकपायोंकी जबन्य स्थिति होती है। इनमेंसे पहले स्त्रीवेदकी जबन्य स्थिति कहते हैं। वह इस प्रकार है—जिस असंज्ञी पैचेन्द्रियने हतसमुत्पत्तिककमसे असंज्ञी के योग्य जबन्यस्थिति सत्कर्मको प्राप्त कर लिया है वह बन्धाविलके व्यतीत होने पर हजार सागरके सात भागोंमें से पत्योपमके संख्यातवें भागसे न्यून चार भागप्रमाण कपायके स्थितिसत्कर्मका स्त्रीवेदमें संक्रमण करके नारिकयोंमें उपन्न हुआ और वहाँ उत्पन्न होने पर पहले समयमें स्त्रीवेदकी बन्धव्युच्छित्ति होनेसे उसके कपायकी स्थितिका स्त्रीवेदमें संक्रमण नहीं होता, क्योंकि स्त्रीवेदका बन्ध नहीं होनेसे उसमें प्रतिग्रह शक्ति नहीं रहती। ऐसा जीव तदनन्तर अन्तर्मु हूर्त काल तक पुरुपवेदका बन्ध करके पुनः अन्तर्मु हूर्त

१. श्र॰प्रतौ गोरइएसु इति पाठः।

वेदं वंधिय पुणो अंतोम्रहुत्तकालं णवुंसयवेदं बंधित । णवुंसयवेदवंधगद्धाचरिमसमए इत्थिवेदस्स जहण्णद्धाच्छेदो होदि। एवं पुरिसवेद-एावुंसयवेद-हस्स-रिद-अरिद-सोगाणं। णविर असिणचरिमसमए इच्छिदणोकसायं वंधाविय तत्थेव वंधवोच्छेदं कादूण णेरइ-एसुप्पण्णपदमसमयप्पहुि अंतोम्रहुत्तकालपिडविक्खपयडीओ वंधाविय पडिवक्खपयडि-वंधगद्धाचरिमसमए इच्छिदणोकसायस्स जहण्णअद्धाच्छेदो होदि।

§ ३८६. एत्थ पिडवक्खपयिडवंथयद्धाणं माहप्पजाणावणद्दं णोकसायद्धाण-मप्पावहुगं उचदे । तं जहा—सन्वत्थोवा पुरिसवेदवंधगद्धा २ । इत्थिवेदवंधगद्धा संखेळगुणा४ । हस्स-रिदवंधगद्धा संखे०गुणा १६ । ऋरिद-सोगवंधगद्धा संखे०गुणा ३२ । णवुंसयवेदवंधगद्धा विसेसाहिया ४२ । तिरिक्खगइ-मणुस्सगईसु देव-णिरय-गईसु च एसी अद्धप्पावहुआलावो वत्तव्वो । एसो उच्चारणाइरियाणमिहप्पास्रो ।

इत्७. अण्णे पुण वक्ताणाइरिया एवं भणंति—ओघणाबहुआलावो तिरिक्ख-मणुसगईस चेव होदि । णिरयगईए पुण अएणहा । तं जहा—सञ्वत्थोवा पुरिस-वंथगद्धा० ३ । इत्थि०वंथगद्धा संखे०गुणा ६ । इस्स-रिद्वंथगद्धा विसे० ११ । णावुंसयवंथगद्धा संखे०गुणा २२ । अरदि-सोगवधगद्धा विसेसाहिया २३ । देवगईए णिरयग्रइभंगो । हेिंद्रमवंथगद्धमुवरिमवंथगद्धिम सोहिद्दे सुद्धसेसं विसेसपमाणं होदि । काल तक नपुंसकवेदका बन्ध दरता हं, अतः उसके नपुंसकवेदके बन्ध हानेकं अन्तिम समयमें स्त्रीवंदकी जधन्य स्थिति होती है । इसी प्रकार पुरुपवंद, नपुंसकवेद, हास्य, रित, अरित और शाककी जधन्य स्थिति कहनी चाहिये । परन्तु इतनी विशेषना है कि असंज्ञीके अन्तिम समयमें इच्छित नोकपायका बन्ध कराकर और वहीं उसकी बन्धव्युच्छिति कराके नारिकयोंमें उत्पन्न होनेके पहले समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक प्रतिपन्न प्रकृतियोंका बन्ध कराकर प्रतिपन्न प्रकृतियोंके बन्धकालके अन्तिम समयमें इच्छित नोकपायकी जधन्य स्थिति कहनी चाहिये ।

§ २८६. अब यहाँ प्रतिपत्त प्रकृतियों के बन्ध कालके दीर्घत्वका ज्ञान कराने के लिये अर्थान् उत्कृष्ट बन्धकाल बतलाने के लिये नोकपायों के कालके अल्पबहुत्वको कहते हैं। वह इस प्रकार है— पुरुपवेदका बन्धकाल सबसे थोड़ा २ है। इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा ४ है। इससे हास्य और रितका बन्ध काल संख्यातगुणा ४६ है। इससे अरित और शोकका बन्धकाल संख्यातगुणा ३२ है। इससे नपुंसक बेदका बन्धकाल विशेष अधिक ४२ है। जिनकी अंकसंदृष्टि कमशः २, ४, १६ ३२ और ४२ है। यह अल्पबहुत्व तिर्यचगित, मनुष्यगित, देवगित और तरकगिनमें कहना चाहिये। यह उद्यारणचार्यका अभिष्याय है।

§ ३८७. परन्तु अन्य वयास्यानाचार्य उम प्रकार कथन करते हैं—श्रोध अस्पबहुत्वालाप निर्यंचगित श्रीर मनुष्यगितमें ही होता है। परन्तु नरकगितमें अन्य प्रकारसे होता है। वह इस प्रकार है—पुरुषवेदका बन्धकाल सबसे थोड़ा ३ है। इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा ६ है। इससे हास्य और रितका बन्धकाल विजेप अधिक ११ है। इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा १२ है। इससे अरित श्रीर शोकका बन्धकाल विशेप अधिक २३ है। जिनकी श्रंकसंदृष्टि कमशः ३, ६, ११, २२ श्रीर २३ है। तथा देवगितमें नरकगितिके समान भंग है। यहाँ नीचेके बन्धकाल को अपरके बन्धकालमेंसे घटा देने पर जो शेप रहता है वह विशेषका प्रमाण है। ये

### एदात्रो बंधगद्धात्रो चदुगदिजहण्णत्रद्धाच्छेदस्स साहणीत्री होति ।

§ २== सम्मन-सम्मानिच्छत्त-अणंता शुवंशिच उकार्या श्रोधभंगो। स्वित्त सम्मत्तं सिर्म्मुप्पण्णकद्वर्गण्जस्स चरियसम्मप् जहर्ण्यां होति । सम्मामिच्छत्तमुक्वेन्लस्म वन्त्वं । एवं पहणाए भवण्य-वाल्य । स्वत्रात्ति भवण्यासिय-वाल्यंतरेसु सम्मत्तस्स सम्मामिच्छत्तभंगो । विदियादि जाव छि ति भिच्छत्तस्स जहण्णिहिद्श्रिद्धाच्छेदे भण्ण-माणे मिच्छाइही अण्णप्पर्यो स्तिर्मसु उप्पत्तिय पज्जत्तयदो होदृश्च अपंतासुवंधि-च वक्तरं विमंजोपभाणेण जेस्स उक्तरं हिद्धादो कदो, पुलो अंत्रासुहृत्तं गंतृस्य अणंतासुवंधि-च वक्तरं विमंजोपभाणेण जेस्स उक्तरं श्री । हिद्धादो कदो तम्म सगमगुक्तस्सा उअमेतिहिद्शियो अथाहिद्गित्रसार्थाए गालिय मगाउभवित्यसम्म वह्नसार्थस्म अंत्रोकोहाकोही-सागरीवभमेत्तिहिद्शियो मिच्छत्तस्स जहण्णभो अद्याच्छेदो । एवं इत्थि-स्त्रु सयवेदाणं । सम्भत्त-सम्भामिच्छत्त-अणंताणुवंधिच उक्तरार्थायभंगो । स्तर्थार सम्भत्तस्य भवण्यभंगोः उक्तत्त्वणाए जहण्ण अद्याच्छेद्ग्यहणादो । वार्सकसाय-पत्तणोक्तमायाणं उवस्त प्रमत्ति-स्माहणकाले सन्त्रकस्सयं हिदिधादं कादृण पुणो अस्त्रासुवंधिच उक्तरम् विमंजोयसं

बन्धकाल चारों गतियोंके जपन्य कालके साधक होते हैं। यर्थान इनसे चारों गतियोंका जपन्य स्थितिश्वद्वांछेद निकाला जाता है।

🖔 ३८८. नारकियोमे सस्यक्त्व, सस्याग्मिश्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति। त्रोधके समान है। पर इतनी जिशेषता है कि नारिक्योंमें अपन्न हुए कृतकृत्यवेदकके अन्तिम समयमं सम्यक्त्वकी जधन्य स्थिति होती है । तथा समयग्मिण्यात्वकी उद्वेलनाके समय जघन्यस्थिति कहनी चाहिये । इसी प्रकार पहली पृथिशी है नारकी, भवनवासी और व्यन्तरोंक कथन करना चाहिये। पर इननी विशेषता है कि अवनवासी और व्यन्तरींके सम्यक्तवकी जबन्यस्थिति। सम्य-रिमध्यात्वके समान हाता है | दुबर नरकसे लेकर छुटे तरक तक मिध्यात्वका जवन्य स्थितिके अद्वा-च्छेदका पायन करनेपर जो मिण्याहाष्ट्रजीय अपने अपने नरको उत्पन्न हुआ और वहाँ पर्याप्त होकर जिसने उपरामसम्बन्धका ग्राण करने हुए मर्थस उत्कृष्ट स्थितियान किया पुनः अन्तर्मा हर्तकाल व्यतीत करके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजनाके हेत् जिसने उत्कृष्ट स्थितिघात किया वह अपनी श्रपनी उत्क्रष्ट स्थितिप्रमाण स्थितियांका श्रधःस्थितिगलनांक द्वारा गलाना हुआ जब श्रपनी श्चायके स्यन्तिम सनयमें विश्वमान रहता है। तब उत्तर अन्तःकाङ्कोङ्गं नागरतमाण । मिध्यात्वका जबन्यस्थिति अद्वाच्छेद् होता है। इसी अकार स्त्रीनेव और स्पुंसक्षेदका जबन्यस्थिति कान कहना चाहिये । सम्यस्त्र, सम्यग्मिण्यात्य योर जनन्तानुबन्धा चतुष्कका भग आयहे समान है। इतनी विशेषता है कि सम्पक्तकों। जपन्य स्थिति भवनवाभियोक समान है, क्योंकि यहाँ उद्वंलनांक द्वारा प्राप्त हानेवाले जघन्य स्थिति प्रद्वाच्छे रका महण किया है। उपशमसम्यवस्वके श्रहण करने के समय संगीरकृष्ट स्थितियात करके पुतः श्रमनतानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना

१. ऋ॰प्रतो ऋइहिदि- इति पाठः ।

कुणमाणद्धाए वि सन्बुक्तस्तयं द्विदिधाः वाद्ण पुणो उक्तस्साउत्रमणुपालिय णिपिय-माणसम्माइद्विचरिमसमए अंतोकोडाकोडीसागरोवममेत्तद्विदीश्रो जहण्णअद्धान्छेदी । णविर णवुसयवेदं मोत्तृण अप्णासि सन्वपयडीणं परोदएण जहण्णश्रद्धन्देशे वत्तन्त्रो । कुदो ? उदयद्विदीए थिवुक्तसंकमेण गदाए जहण्णत्तु ववसीदो ।

\$ ३८६. एवं सत्तमाए वि वत्तव्य । णवरि भिच्छत्तस्स जहण्णअद्धाच्छेदे भण्णमाणे पढमसम्मत्तरगहणेण ऋणंताणुवंधिचउक्कविसंयोजणाए च सव्युक्कस्सयं हिदिघादं काद्ण सम्मत्तेण सह तेत्तीसमागराज्यमणुपालिय तदो अंतोम्रहुत्तावसेसे आउए भिच्छत्तं गंतूण अंतोम्रहुत्तकालं संतस्स हेटा वंधिय पुणो संतसमाणिहृदिं वंध-माणचरिमसमए अंतोकोडाकोहिसागरावसमेत्तिहिदीच्यो येत्तृण जहण्णअद्धाच्छेदो होदि । एवं सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं । सत्तणोकसायाणं (प एवं चेव । णवरि भिच्छत्तं गंतूण जहण्णहिदिसंतममाणवंघे संजादे अप्पष्पणो पिडवनस्ववंधगद्धाओ वंधाविय तासि वरिमसमए जहण्णऋद्धाछेदो वत्तव्यो ।

करनेके समय भी सर्वेन्छ्रष्ट स्थितियान करके पुनः उत्क्रष्ट आयुका पालन करके जो सम्यग्द्रष्टि नरकसे निकलना चाहना है उनके नरकसे निकलनके आन्तिम समय में बारह कपाय और सान नोकपायोका अन्तः कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण जधन्यस्थिति अद्धान्छेद होता है। इतनी विद्योपना है कि निष्ठं नकवेदरों छोड़कर अन्य सभी प्रकृतियोका परोद्यमें जघन्य स्थितिअद्धान्छेद कहना चाहिये, क्योंकि स्तियुक्ष्मंकमण्के द्वारा उदयस्थितिके कम हो जाने पर जपन्यपना वन जाना है।

§ ३८६. इसी प्रकार मात्यी पृथ्वीमें भी कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिका कपन करने समय जो प्रथम नम्यक्त्वका प्रहेण करनेसे छोर अनन्तानुवन्धी चतुष्कका विसंयोजना करनेसे सर्वीत्कृष्ट स्थितिचात करके सम्यक्त्वके साथ तेतीस सागर आयुका पालन करके तद्नन्तर आयुके अन्तमु हत कालप्रमाण क्षेप रहने पर मिण्यात्वको प्राप्त होकर सत्तामें स्थित कर्मसे क्ष्म स्थितिकों कर्मका बन्ध करके पुनः सत्तामें स्थित कर्मके समान स्थितिवाले कर्मका बन्ध करता है उसके अन्तिम समयमें अन्तःकोड़ाकोड़ी मागरप्रमाण स्थितिको अपेत्ता जधन्यस्थित अद्यान्छेद होता है। इसी प्रकार सोलह कपाय, भय और जुगुण्याका जबन्यस्थित अद्यान्छेद कहना चाहिये। तथा इसी प्रकार सात नोकपायोका भी कहना चाहिये। इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वको प्राप्त होकर जधन्य स्थिति सत्त्वके समान बन्धके होने पर अपनी अपनी प्रतिपन्न प्रकृतियोका बन्ध कराके उनके बन्धकालके स्थितम समयमें सान नोकपायोंका जथन्यस्थिति अद्यान्छेद कहना चाहिये।

विशोषार्थ— जो असंज्ञी जीव मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साके जघन्य स्थिति सत्त्वके साथ नरकमे उत्पन्न हुया है उसके विष्रहकं दूसरे समयमे उक्त कर्मीकी जघन्य स्थिति विभक्ति होती हैं। विष्रहगतिके दूसरे समयमे कहनेका कारण यह है कि शरीरष्रहण करनेके परचात् इसके संज्ञी पंचेन्द्रियके योग्य स्थितिका बन्ध होने लगता है। किन्तु विष्रहगतिमें ऐसा जीव असंज्ञीके योग्य स्थितिका ही बन्ध करता है। मिण्यात्वादिकी जघन्य स्थिति मूलमें बतलाई

ही है। सात नोकपायोंकी यद्यपि जघन्य स्थिति एक हजार सागरके सात भागोंमेंसे पल्यके संख्यातवें भाग कम चार भागप्रमाण ही प्राप्त होती है पर यह स्थित विष्रहके दूसरे समयमें न प्राप्त होकर अन्तर्म हर्त कालके पश्चान प्राप्त होती है। यथा -वेद तीन हैं और ये प्रतिपत्त प्रकृतियाँ हैं। इतमेसे किसी एकका बन्ध होते समय शेप दोका बन्ध नहीं होता। अब यदि कोई श्रमंज्ञी जीव स्त्रीवेदके जघन्य स्थिति सत्त्वके साथ नरकमें उत्पन्न हुआ श्रीर वहाँ उत्पन्न होनेके पहले समयसे लेकर पुरुपवेदका बन्ध करने लगा। पुनः पुरुपवेदके स्थानमे अन्तम् हर्तकाल तक नपुंसकवेदका बन्ध करने लगा तो उस नारकीके नपंसक्षवेदके बन्ध होनेके अन्तिम समय तक खीवेदकी उक्त प्रमाण जघन्य स्थितिके ऋन्तर्भ हुते प्रमाण अधस्तन निपेकोंका और गलन हो जायगा किन्तु स्थितिमें वृद्धि नहीं होगी. अतः नरकमे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसत्त्व नपुंसकवेदके बन्धके त्रान्तिम समयमें प्राप्त हुआ । तथा पुरुपवेद, नपुंस वेद, हास्य, रति, अरित और शोकके विषयमे इसी प्रकार जानता चाहिये। किन्त हास्यादिकी जघन्य स्थिति एक अन्तर्म हर्तके पश्चात कहनी चाहिये, क्योंकि इनकी प्रतिपत्तभत एक एक प्रकृतियाँ होनेसे एक अन्तम् हर्तके बाद पुनः इनका बन्ध होने लगता है। किन्तु इननी विशेषता है कि इनमेंसे जिनका जघन्य स्थितिसत्त्व कहना हो उनका असंज्ञीके अन्तिम समयमें बन्ध कराकर नरकमे उत्पन्न होने पर उनकी प्रतिपद्मभृत प्रकृतियोंका अन्तर्म हर्तकाल तक बन्ध कहना चाहिये और इस अन्तर्म हर्तके अन्तिम समयमें उस उस प्रकृतिका जघन्य स्थितिसत्त्व कहना चाहिये। तथा सम्यक्त्वको जघन्यस्थिति एक समय श्रीर सम्यग्मिथ्यात्व तथा त्रानन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थिति दो समय त्रोधके समान नरकमें भी बन जाती है, क्योंकि जो कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव नरकमें उत्पन्न हत्रा है उसके कृतकृत्य-वेदकके अन्तिम समयमे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति पाई जाती है । तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति विसंयोजना करनेवाले नारकीके अनिवृत्तिकरणहर परिणामोंके अन्तिमःसमयमें बन जाती है। किन्त सम्यग्मिथ्यात्वकी जघरय स्थिति दो समय सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्गेलनामे ही बनेगी, क्योंकि सम्यग्मिण्यात्वकी चपणा मनुष्यगतिको छोडकर अन्यत्र नहीं होती। सामान्य नारिकयोंके जो मिध्यात्वादि कर्मोंकी जघन्य स्थिति कही है इसी प्रकार पहले नरकके नारकी, भवनवासी ऋौर व्यन्तर देवोंके भी जानना चाहिये. क्योंकि इनमें भी असंज्ञी जीव मर कर उत्पन्न होते हैं। किन्तु भवनवासी और व्यन्तरोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव मर कर नहीं उत्पन्न होते, अतः इनके सम्यक्तवकी जघन्य स्थिति एक समय न कहकर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिके समान दो समय कहनी चाहिये. क्योंकि उद्देलताकी अपेता इनके सम्यक्त्वकी जवन्य स्थिति दो समय बन जाती है। द्वितीयादिक पाँच नरकोंमें न तो असंज्ञी जीव मरकर उत्पन्न होता है और न सम्यग्दृष्टि ही एत्पन्न होता है, अतः वहाँ मिश्र्यात्व आदि कर्मोकी जयन्य स्थिति उपर कहे अनुसार नहीं बन सकती। फिर वह किस प्रकार बनती है आगे इसीका खुलासा करते हैं-कोई एक जीव द्वितीयादिक नरकोंमें अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुके साथ उत्पन्त हुन्त्रा और पर्याप्त होनेके परचात् वह उपराम सम्यक्तवको प्रहरा करना चाहता है। ऐसी हालतमे उसने मिथ्यात्वकी स्थितिका उत्कृष्ट स्थितिघात किया और उसे इतनी रखी जो उपशम सम्यक्त्वको प्रहण करनेवालेके कमसे कम हो सकती है। पुनः उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करके उसने अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजनाके साथ उत्कृष्ट स्थितिचात किया। यहाँ वेदकसम्यक्तको श्रहण कराकर विसंयोजना इसलिये नहीं कही, क्योंकि वेदकसम्यक्त्वको त्र्यनन्तानुबन्धीकी **।** करनेवालेके स्थितियात करनेका कोई नियम नहीं है। पुनः वह जीवन भर सम्यग्दष्टि प्रकार मिध्यात्त्रकी अधःस्थितिके एक रहा श्रीर इस एक

§ ३९०. तिरिक्खेसु भिच्छत्त-बारसक्तमाय-णवणोकसायाणं जहण्णिदिश्रद्धाछेदो सागरोवमस्स[सत्त]सत्तभागा चत्तारि सत्तभागा पिट्टदो० श्रसंखे०भागेण ऊरणया ।
सम्मत्त-सम्मामि० झणंताणुवंधिचउकाणमोधं । पंचि०तिरिक्ख-पंचि०तिरि०पज्ञ०पंचि०तिरिक्खजोिणणीसु मिच्छत्त-वारसकसाय-भय-दुगुंछाणं जहण्ण० सागरोवमसहस्सम्य सत्त सन्तभागा चत्तारि सत्तभागा वे सत्तभागा पिट्टदो० असंखे०भागेण
ऊरणया । सत्तणोकसायाणं सागगेवमस्स चत्तारि सन्तभागा पिट्टदो० असंखे०भागेण
पिट्टवक्खवंधगद्धाहियऊणया । सेसं तिरिक्खोधं । एविर जोणिणीसु सम्मत्त० सम्मामिच्छत्तभंगो । पंचि०तिरि०अपज्ञ० पंचि०तिरि०जोणिणीभंगो । एविर अर्णताणु०४
वागसक्रभंगो ।

रहा। इस प्रकार अपनी आयुक्ते अन्तिम समयमे उसके मिण्यात्वर्का जवन्य स्थिति होगी। इसी प्रकार स्वीवद और नपुंसकवेदकी जवन्यस्थिति कहनी चाहिये, क्योंकि सम्यन्द्रष्टिके इन दोनों वेदोंका बन्ध नहीं होना. अतः इनकी उक्त प्रकारसे जवन्य स्थिति बन जाती है। तथा इनके सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थिति दो समय होती है जिसका खुजामा भवनवासियोक्ते इनकी जवन्यस्थिति कहते समय कर आये हैं। तथा मातवें नरकमें जो विशेषता है उसका खुजामा मनमें ही कर दिया है।

\$ ३६० नियचोमे मिण्यात्यका जवन्य स्थितिश्रद्धाच्छेद एक सागरके सात भागोंमेंसे पत्योपमके असंख्यातवें भागसे न्यून सात भागप्रमाण है। वारह कपाय और तो नोकपायोंका एक सागरके सात भागोंमेंसे पत्योपमके संख्यातवें भागसे न्यून चार भागप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्याच और अतन्तात्वन्धी चतुष्कका जयन्य स्थितिकाल ओवके समान है। पंचेन्द्रियतियंच पंचेन्द्रियतियंच योनिस्ती जीवोंमे मिण्यात्वका जयन्यस्थिति सत्त्वकाल एक हजार सागरके मात भागोंमेंसे पत्योपमके संख्यातवें भागसे न्यून सात भागप्रमाण है। बारह कपायोंका जवन्यस्थिति सत्त्वकाल एक हजार सागरके मात भागोंमेंसे पत्योपमके संख्यातवें भागमे न्यून चार भागप्रमाण है और भय तथा जुगुष्माका जयन्यस्थिति सत्त्वकाल एक हजार सागरके सात भागोंमेंसे पत्योपमके संख्यातवें भागमे न्यून चार भागप्रमाण है। सात नोकपायोंका जवन्यस्थिति सत्त्वकाल एक सागरके सात भागोंमेंसे अपनी प्रतिपत्त प्रकृतियोंके वन्धकालसे आरे पत्यक असंख्यातवें भागमे न्यून चार भागप्रमाण है। होप कथन सामान्य तियंचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि योनिमती तिर्यचोंमे सम्यक्त्वका मंग सम्यग्मिण्यात्वके समान है। पंचेन्द्रियतियंच अपर्याप्तकोंमें पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमतीके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुवन्धी चतुष्कका मंग वारह कपायोंके समान है।

विशेषार्थ—तियंचों में एकेन्द्रिय भी सिमालित हैं, श्रतः एकेन्द्रियोंकी जो जघन्य स्थिति है वही यहाँ मिथ्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी सामन्य तिर्यंचोंके जघन्यस्थिति जाननी चाहिये, किन्तु अनन्तानुबन्धीको विसंयोजना संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त ही करना है, अतः अनन्तानुबन्धी चतुष्यकी जघन्य स्थिति ओघके समान हो समय जानना। सम्यक्त्व की जघन्य स्थिति कृतकृत्यवेदक सम्यन्द्रिके समान एक समय जानना। किस कर्मकी कितनी जघन्य स्थिति है यह मूलमे बतलाया ही है। पंचेन्द्रियतिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रियतिर्यंच योनिमती जीवोके मिथ्यान्य और बारह वपायकी जघन्य स्थिति असंज्ञिकी जघन्य स्थितिके

§ ३६१ मणुसिणि० सबुंसयवेद० जहण्ण० पलिदो० असंखे०भागो । पुरिस० जह० संखेजजासि वस्साणि । समपयडीसमोघभंगो । मस्युसअपज्ज० पंचि०तिरि०-अपज्जत्तभंगो ।

समान जानना । भय श्रोर जुगुप्साकी जघन्य स्थिति हजार सागरके सात भागोमेसे पत्यके संख्यातवें भाग कम दो भागप्रमाण होती है। इसका कारण यह है कि ये दोनों प्र वबन्त्रिनी प्रकृतियाँ हैं। अब यदि कोई एकेन्द्रिय जीव उक्त तीन प्रकारके तिर्यचीमें उत्पन्न हुआ और वहाँ उसने पहले समयमें असंज्ञीके याग्य जघन्य स्थितिका बन्ध किया तो उसके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति उक्त प्रमाण ही प्राप्त होगी। यदि कहा जाय कि इस जीवके उस समय सोलह कपायोंकी जघन्य स्थिति भय और जुगुप्सारूपमे संक्रमित हो जायगी, अतः भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति भी सोलह कपायोकी जघन्य स्थितिके समान प्राप्त हो जायगी मो भी बात नहीं है. क्योंकि नवीन वन्धका एक आवलिके बाद ही अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता है और यह जीव एकेन्द्रिय पर्यायसे त्राया है, त्रातः इसके सोलह कपायोंकी त्रासंज्ञीके योग्य जवन्य स्थिति उसी समय प्राप्त हुई है. अतः उसका संक्रमण नहीं हो सकता । तथा सात नोकपाय प्रतिपन्न प्रष्टृतियाँ हैं अतः जो एकेन्द्रिय उक्त तीन प्रकारक तिर्यचोंने उत्पन्न हुआ है उसके सात नोकपायोकी जघन्य स्थिति एकेन्द्रियोंकी जघन्य स्थितिके समान होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि उनकी जघन्य स्थिति कहते समय अपनी अपनी प्रतिपत्त प्रकृतियोंके बन्धकालको ऋौर घटा देना चाहिये. क्योंकि प्रतिपत्त प्रकृतियोंका वन्ध होते समय क्षेत्र सजातीय प्रकृतियोंका वन्ध होता त्र्यौर उसके अधःस्थितिगलनारूपसे प्रतिपत्त प्रकृतियोंके वन्धकाल प्रमाण निषेक गल जाते हैं। तथा अनन्तानुबन्धी चतुरक, सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थिति सामान्य तिर्थेवोंके समान कमसे दो समय, एक समय और दो समय प्रमाण बन जाती है। खुलासा सामान्य नारिकयोके समान जानना । किन्त योनिमती निर्यचोमें कतकत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न नहीं होता त्र्यतः यहाँ सम्यक्त्वकी जचन्य स्थिति एक समय नहीं वनती। त्र्यतः जिस प्रकार उद्वेलनाकी ऋषेत्ता सम्यग्मिश्यात्वकी दो समय जवन्य स्थिति कही उसी प्रकार योनिमितयोंके सम्यक्त्यकी जघन्य स्थिति कहनी चाहिये। पंचेन्द्रियतिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके श्रानन्तानुबन्धी चतुष्कको श्लोडकर शेप सब कर्मोकी जघन्य स्थिति यांनिमती निर्यंचोंके समान बन जाती है। किन्त अनन्ताबन्धी चतुष्कर्का जघन्य स्थिति शेप बारह कपायोंकी जघन्य स्थितिके समान होती है, क्योंकि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना नहीं होती।

§ ३६१. मनुष्यिनयोमें नपुंसक्वेदका जघन्यस्थिति सत्त्वकाल पल्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है। पुरुपवेदका जघन्यस्थिति सत्त्वकाल संख्यात वर्ष है। तथा द्योप प्रकृतियोंका ऋोघके समान है। मनुष्य ऋपर्याप्तकोंमें पंचेन्द्रियतिर्यंच ऋपर्याप्तकोंके समान भंग है।

विशेषार्थ-मनुष्यनियोंके नपुंसकवेद और पुरुपवेदको छोड़कर सब कर्मौकी जवन्य स्थिति श्रोधके समान बन जाती हैं, क्योंकि इनके चायिक सम्यग्दर्शन श्रोर चपकश्रेणीकी प्राप्ति सम्भव है। किन्तु इनके चपकश्रेणीमें जिस समय नपुंतकवेदकी द्वितीय स्थितिके श्रान्तिम काण्डककी श्रान्तिम फालिका पुरुपवेदमें संक्रमण होता है उस समय उसकी पत्यके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण स्थिति पाई जाती है, श्रातः इनके नपुंतकवेदकी जवन्य स्थिति पत्यके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण जाननी चाहिये। तथा इनके पुरुपवेदकी जवन्य स्थिति संख्यात वर्ष प्रमाण होती है, क्योंकि मनुष्यनियोंके पुरुपवेदका चय छह नोकषायोंके साथ होता है, इसलिये जब यह जीव पुरुपवेदके साथ छह नोकपायोंके श्रान्तिम काण्डककी श्रान्तिम फालिका संक्रमण क्रोधसंज्वलनमें

करता है उस समय पुरुपवेदकी द्वितीय स्थितिम स्थित ऋन्तिम फालिकी स्थिति संख्यात वर्षे प्रमाण पाई जाती है। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योके सब कमोंकी जघन्य स्थिति पंचेन्द्रिय तिथैच लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान बतानेका कारण यह है कि जो एकेन्द्रिय जीव ऋपने स्थिति बन्धके याग्य स्थितिके साथ लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योमें उत्पन्न होता है उसके यथायोग्य समयमें सब कर्मोकी लब्ध्यपर्याप्तक तिथैचोंके समान जघन्य स्थिति बन जाती है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यिग्ध्यात्वकी जघन्य स्थिति दो समय उद्देलनाकी ऋपेचा कहनी चाहिये।

§ ३६२ देवोमें सामान्य नारिकयोंके समान जयन्य स्थिति है। ज्योतिषियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग हैं। साधर्म स्वर्गसे लेकर उपरिम मैंवयक तक दूसरी पृथिवीके समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि जो दो बार उपशमश्रेणी पर चढ़कर खोर उत्कृष्ट स्थितिघात करके पुनः उत्तर कर खोर दर्शनमीहनीयका स्थ करके उत्कृष्ट आयुवाले विविद्यत देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके वहाँसे निकलनेके अनितम समयमें बारह कपाय और नौ नोकपायका जयन्य स्थिति सत्त्वकाल कहना चाहिये। सम्यक्त्वका सामान्य देवोंके समान जयन्य स्थिति सत्त्वकाल है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थमिद्धितक भी इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिण्यात्वका स्थितिसत्त्वकाल मिण्यात्वके समान है।

विश्रापार्थ-सामान्य देवोमं सामान्य नारिकयोंके सामान जयन्य स्थिति कहनेका कारण यह हं कि श्रमंज्ञी जीव भी देवोंमें उत्पन्न होते हैं, त्रातः इस अपेज्ञासे देवोंमें नारिकयोंके समान मिध्यात्व, वारह कवाय और नौ नोकवायोंकी जवन्य स्थिति घटित हो जायगी। तथा विसंयो-जनाकी अपेता अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी, उद्देलनाकी अपेता सम्यग्मिभ्यात्वकी और कृतकृत्यवेदक सम्यक्तवकी ऋपन्ता सम्यक्तवकी जवन्य स्थिति भी नार्कियोंक समान देवोंके वन जाती है। तथा उयोतिषियोंमें असंज्ञी जीव मर कर उत्पन्न नहीं होता अतः इनके दूसरी पृथिवीके समान मिध्या-त्यादिककी जयन्य स्थिति घटित करके कहनी चाहिये। विशेषता इतनी हं कि इनके अपनी उक्कष्ट अायुका विचार करके ही कथन करना चाहिये । यद्यपि सोधर्म स्वर्गसे लेकर नौ प्रैवयक तक मिध्या-त्वादिककी जबन्य स्थिति दूसरी पृथिवीके समान बन जानी है पर सीधमादिक स्वर्गीमें सम्यग्दष्टि जीव भी उत्पन्न होता है, अतः यहां द्वितीय पृथिवीके नारिकयोक जयन्य स्थितिक कथनसे कुछ विशेषता है जो मूलमे बतलाई है, श्रतः उसके श्रमुसार इनके जघन्य स्थिति घटित करके जानना चाहिये। किन्तु यहां कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव भी उत्पन्न होता है अतः यहां सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति द्वितीय नरककं समान न जानकर सामान्य नारिक्योंके समान जाननी चाहिय। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थ(सिद्धि तक सम्यग्दृष्टि ही उत्पन्न होते हैं, अतः इनके सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थित दो समय नहीं बन सकती है और इसलिय इनक सम्याग्मध्यात्वकी जवन्य स्थिति मिष्यात्वकी जवन्य स्थितिके समान जाननी चाहिये । तथा शेष कर्मौकी जवन्य स्थिति सींधर्मादिक स्वगाके समान जानना ।

§ ३६३. एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-एावणोक० जह० सागरोवमस्स सत्त सत्तभागा चत्तारि सत्तभागा पिलदो० असंखे० भागेण ऊणा । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तं० जह० एया द्विदी दुसमयकाला । एवं सव्वएइंदिय-पंचकाय-त्रोरात्तियमिस्स०-कम्मइय०-मदि-सुदअण्णा०-तिणिएात्तेस्सा०-अभव०-भिच्छा०-असण्णि०-अणादारि ति । णवरि ओरालियमिस्स०-कम्मइय०-काउत्तेस्सा-अणादारि० सम्मत्तमोवं । तिसु तेस्सासु अणंताणुवंधिचजक्कमोवं ।

§ ३६४. विगलिंदिएसु मिच्छत्त-सोलमक०-भय-दुर्गुछा॰ ज० पणुवीससाग-राखं पण्णारससागराणं सदसागराणं सत्त सत्तभागा चत्तारि सत्तभागा वे सत्तभागा पिलदोवमस्स संखेजिदिभागेण ऊणा । सत्तणोकसायाणं ज० सागरोवयस्स चत्तारि

\$ ३६३ एकेन्द्रियोमं (मध्यात्वका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल एक सागरके सात भागोमेसे पल्योपमके असंख्यातवें भागसे न्यून सात भागवमाण है। सोलह कपाय और नो नोकपायोंका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल एक सागरके सात भागोंमेंसे पल्योपमके असंख्यातवें भागसे न्यून चार भागवमाण है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी एक स्थितिका जवन्य सत्त्वकाल दो समय है। इसी प्रकार सव एकेन्द्रिय, पाँचों स्थावरकाय, औदारिक्रिमश्रकाययांगी; कार्मणकाययांगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, कृष्णादि तीन लेक्यावाले, अभव्य, सिध्यादृष्टि, असंज्ञी और ब्यनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि आदारिक्रिमश्रकाययांगी, कार्मणकाययोगी, कपातलेक्यावाले और अनाहारक जीवोंमें सम्यक्त्यका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल श्रोषके समान है। तीन लेक्याश्रोमे अननतानुन्धी चतुष्कका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल श्रोषके समान है। तीन लेक्याश्रोमे अननतानुन्धी चतुष्कका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल श्रोषके समान है।

विशेषार्थ — एकेन्द्रियादिक मार्गणात्रोमें जो मिश्यात्व, मोलह कपाय श्रोर तो नोकपायोंकी जघन्य स्थिति वतलाई है वह वहां सम्भव जघन्य स्थितिसत्त्वकी श्रपेत्तासे जानना । तथा सम्यस्त्व श्रोर सम्यमिश्यात्वकी जघन्य स्थिति दो समय उद्वेलनाकी श्रपेत्ता जानना । किन्तु श्रोदारिक मिश्रकायोगी, कार्मणकाययोगी, कार्पात लेश्यावाले श्रोर श्रनाहारक इन मार्गणात्रामे छत्तकृत्यवेदक सम्यग्दिष्ट भी उत्पन्न हो सकता है श्रोर इनक रहते हुए उसका काल भी पृरा हो सकता है, श्रातः इन मार्गणात्रोमे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति श्रोघके समान एक समय भी वन जाती है। तथा छुण्णादि तीन लेश्यात्रोमे रहते हुए श्रनन्तानुवन्धी चतुष्ककी विसंयोजना भी होती है श्रतः इन तीन लेश्यात्रोमे श्रनन्तानुवन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति श्रोघके समान दो समय वन जाती है।

§ ३६४. विकलेन्द्रियोमे मिथ्यात्वका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल दोइन्द्रियोमें पच्चीस सागरके सात भागांमे पल्योपमक संख्यातवें नागसे न्यून सात भागप्रमाण, तीन इन्द्रियोमें पचास सागरक सात भागमिस पल्योपमक संख्यातवें नागसे न्यून सात भागप्रमाण और चौइन्द्रियोमें सौ सागरक सात भागमिस पल्योपमक संख्यातवें नागसे न्यून सात भागप्रमाण है। सोलह कपायोंका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल दोइन्द्रियोमे पच्चीस सागरके तेइन्द्रियोमे पचास सागरके और चौइन्द्रियोमे सौ सागरके सात भागमिसे पल्योपमके संख्यातवें भागसे न्यून चार भागप्रमाण है। तथा भय और जुगुप्साका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल दो इन्द्रियोमे पच्चीस सागरके, तेइन्द्रियोमे पचास सागरके और चौइन्द्रियोमे सौ सागरके सात भागोमेसे पल्योपमके संख्यातवें भागसे न्यून

१. श्र॰प्रतौ सम्मामिच्छाइई।॰ इति पाठः ।

सत्तभागा पिलदी॰ त्रसंखे॰ भागेण ऊणा । सम्मत्त-सम्माभिच्छत्त० एइंदियभंगो । पंचिदियअपज्ज० पंचि॰ितिरि०ग्रपज्जत्तभंगो । तसत्रपञ्ज० वेइंदियत्रपञ्जत्तभंगो ।

े ३६४. वेउव्यि० सव्बद्धभंगी । स्वार सम्म०-सम्मामि० जोदिनिय०भंगी । वेउव्वियमिस्स० मिच्छत्त-सालसक०-भय-दुगुंछ० जह० अंताकोडाकोडीमागगविमाणि । सम्मत्त-सम्मामि० सोहम्मभंगो । सत्तपोक० जह० सागरोवनसहस्सस्स चत्तारि सत्तभागा पलिदोवमस्स संखेळिदिभागेस उला। ब्राहार०-आहारभिस्स० सव्वपयडीसं जह० अंतोकोडाकोडीसागरोवमाणि ।

वं भागप्रमाण है। सात नोवपायोका जबन्य स्थितिभन्तवताल एक सागरके सात भागोंमसे पत्योपमके असंख्यातवे भागेने न्यून चार भागप्रमाण है। तथा सम्यक्त्य और सम्यिमिश्यात्वका एकेन्द्रियोके समान भंग है। पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोमे पंचेन्द्रियतिर्यंच अपर्याप्तकोके समान भंग है।

विशेषार्थ—जब कोई एक एकेन्द्रिय जीव विकलत्रयों में उत्पन्न होता है तो वह वहां उत्पन्न होने के पहले समयमें ही कमसे कम विकलत्रयों के योग्य जयन्य स्थितिका बन्ध करने लगता है, खतः विकलत्रयके मिध्यात्व, सोलह कपाय तथा भय खोर जुगुष्साकी जयन्य स्थिति मूलमें बतलाये खनुसार ही प्राप्त होगी। किन्तु सात नोक्याय प्रतिपन्तभूत प्रकृतिया है, खतः विकलत्रयों के इनकी जयन्य स्थिति एकेन्द्रियों के समान भी बन जाती है। तथा सम्यक्त्व खोर सम्यग्मिध्यात्वकी जयन्य स्थिति उद्देलनाकी खपेता एकेन्द्रियों के समान दें। नगव जातनी चाहिये। पंचेन्द्रिय अपयोप्तकों के पंचेन्द्रिय अपयोप्तकों के समान जयन्य स्थिति जाननेकी जो मूलमें सूचना की सो उसका कारण स्थि ही है।

§ ३८५. बैकियिककाययोगियोमें सर्वार्थसिद्धिके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि उनमें सम्दक्त और सम्यग्मिथ्यात्वका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल ज्योतिषियोंके समान है। वैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुष्साका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल सौधर्मके सभान है। तथा सात नोकपायोका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल एक हजार सागरके सात भागोमें से पन्योपमकं संख्यातवें भागसे न्यूत चार भागप्रमाण है। आहारककाययोगी और आहारकिमिश्रकाययोगी जीवोकं सभी प्रष्टुतियोका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर है।

विशेषार्थ —देव वैकियिककाययांगी भी हाते है अतः वैकियिककाययांगमें सर्वाथिसिद्धिके मगान यव कर्मोकी जवन्य स्थिति वन जाती है। किन्तु वैकियिककाययांगमें कृतकृत्यंवद्क सम्यहत्व नहीं पाया जाता, अतः इसमें सम्यवत्य और सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य स्थिति ज्योतिषियांके समान दो समय जानना। ऐसा नियम है कि दारीर यहण करनेके परचान् संज्ञी जीव पंचिन्द्रियक योग्य स्थितिका ही वन्ध करता है अतः वैकियिकमिश्रकाययोगमं मिण्यात्व, संलह कपाय, भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर कहीं है। किन्तु सात नोकपाय सप्रतिपत्त-भूत प्रकृतियां हैं। इनका वन्य एक साथ नहीं होता, अतः वैकियिकमिश्रकाययोगके रहते हुए भी इनकी जवन्य स्थिति असंज्ञीक योग्य प्राप्त हो जाती है जो मूलमें वनलाई ही है। तथा वैकियिक मिश्रकाययोगमें कृतकृत्यवेदक सम्यवत्व भी पाया जाता है, अतः इसमें सम्यवत्वकी जवन्य स्थिति

§ ३६६. इत्थिवदे मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-वारसक०-इत्थिवदाणमोघं । णवुंस० ज० पिलदो० त्रसंखे०भागो । सत्तणोक०-चत्तारिसंजल० संखेजाणि वास-सहस्साणि । एवं णवुंस० । णविर इत्थि० जह० पिलदो० त्रसंखे०भागो । पुरिस० इत्थि-खवुं सयवद० ज० पिलदो० असंखे०भागो । पुरिस-चत्तारिक० जह० संखेजाणि वस्साणि । सेसं मूलोघं । अवगद० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अद्वक०-इत्थि-णवुं स० जह० अंतोकोडाकोडीसागरोवमाणि । सत्त्रणोक०-चत्तारिसंज० ओघं ।

एक समय और उद्वेलनाकी अपेका सम्यागिण्यात्व की जवन्य स्थिति दो समय बन जाती है जो '
सोधर्म स्वर्गमं भी सम्भव है। छठे गुएएस्थानमें सोलह कपाय और नो नोकपायोंकी जवन्य स्थिति
अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाए होती है, अतः आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगमें
इनकी जवन्य स्थिति उक्त प्रमाए कही है। तथा आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके
रहते हुए दर्शनमाहनीयकी चपएएका प्रारम्भ नहीं होता है और जिसने दर्शनमाहनीयकी चपएएका
प्रारम्भ किया है उसकेउक्त दोनों योग नहीं होते, अतः उक्त दोनों योगोंमे तीन दर्शन मोहनीयकी
जवन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाए ही होती है।

\$ २६६. स्त्रीवेदमे मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्गिण्यात्व, वारह कपाय और स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल स्रोघकं समान है। नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल पत्योपमके स्रसंख्यातवें मागप्रमाण है। तथा सान नोकपाय और बार संज्वलनोंका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल संख्यात हजार वर्ष है। इसी प्रकार नपुंसकवेदमे जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसमें स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल पत्योपमके स्रसंख्यातवें मागप्रमाण है। पुरुषवेदमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जयन्य स्थितिसत्त्वकाल पत्योपमके स्रसंख्यातवें मागप्रमाण है। पुरुषवेदमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जयन्य स्थितिसत्त्वकाल संख्यात वर्ष है। तथा शेष मूलोघके समान है। स्रपगतवेदमें मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, आठ कपाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जवन्य स्थितिसत्त्वकाल अन्तःकाड़ाकोड़ी सागर है। तथा सात नोकपाय और चार संज्वलनोंका जयन्य स्थितिसत्त्वकाल स्रोघकं समान है।

त्रिशेषार्थ — स्त्रींबदेक उदयक रहते हुए मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, वारह कपाय और स्त्रींबदकी चपणा सम्भन्न है, अतः स्त्रींबद्दिक इपणा भी हो जाती है पर जिम समय एसे जीवके नपुंसक्वंदिक उदयके रहते हुए नपुंसक्वंदिकी चपणा भी हो जाती है पर जिम समय एसे जीवके नपुंसक्वंदिक अन्तिम काण्डक्रकी अन्तिम फालिका पुरुपंवंद रूपसे संक्रमण होता है उस समय उसकी जबन्य निपेक स्थिति पल्यके असंख्यात्वें भागत्रमाण पाई जाती है, अतः स्त्रींवदीके नपुंसक्वंदिकी जबन्य स्थिति उक्तप्रमाण कही है। तथा जिस समय स्त्रींवदिका प्रथम स्थितिमें विद्यमान अन्तिम निपंक स्वाद्यंते च्यको प्राप्त होता है उस समय सात नांक्याय और चार संज्ञलनका जबन्य स्थितिसद्य सख्यात हजार वर्ष प्रमाण पाया जाता है, अतः स्त्रींवदीके उक्त प्रकृतियोंकी जबन्य स्थिति उक्तप्रमाण कही है। नपुंसक्वंदीक भी इसी प्रकार सम्प्रमतियोंकी जबन्य स्थिति जानना। किन्तु चारक नपुंसक्वंदी जीव अपने उपान्त्य समयम स्त्रींवदिके अन्तिम काण्डक्की अन्तिम फालिका पुरुपंवदिरूपसे संक्रमण करता है और उस समय अन्तिम फालिकी जबन्य स्थिति पल्यके असंख्यात्वें भागप्रमाण पाई जाती है, अतः नपुंसक्वंदीके स्त्रींबदकी जबन्य स्थिति पल्यके असंख्यात्वें भागप्रमाण पाई जाती है, अतः नपुंसक्वंदिक स्त्रींबदकी जबन्य स्थित उक्त प्रमाण कही है। तथा पुरुपंवदीके जन स्त्रांवद और नपुंसक्वंदिक स्त्रींबदकी जवन्य स्थित उक्त प्रमाण कही है। तथा पुरुपंवदीके जन स्त्रांवद और नपुंसक्वंदिक

३९७ कोथ० चत्तारिक० जह० चत्तारि वस्साणि । सेसं मूलोघं । एवं
माण० । णविर तिण्णि० संज० जह० वे वस्साणि । सेसमोघं । एवं माया० । एविर
दो संज० जह० वस्सं । सेसमोघं । श्रकसा० सव्वपयडीणं ज० अंतोकोडाकोडी ।
एवं जहाबस्वाद० ।

अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रमण द्वारा पुरुपवेदक्रपसे संक्रमण होता है उस समय उन अन्तिम फालियोंकी जघन्य ितपेकस्थिति पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण पाई जाती है, अत: परुपवेदीके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति उक्तन्रमाण कही है। पुरुपवेदके अन्तिम समयमें चार संज्वलनोंकी स्थिति संख्यात वर्षप्रमाण पाई जाती है, अतः पुरुषवेदीके चार संज्वलनोंकी जवन्य स्थिति उक्त प्रमाण कही है। तथा पुरुपवेदीके शेप प्रकृतियोंकी जवन्य स्थिति श्रोचके समान प्राप्त होती है, श्रतः उनकी जवन्य स्थिति श्रोचके समान कही है। तथा जो द्वितीयो-पशम सम्यक्त्वसे उपशमश्रेणी पर चढ़ा है उसीके अपगतवेदके रहते हुए मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्यात्व, मध्यकी आठ कपाय स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका सत्त्व पाया जाता है। किन्तु उपश्रमश्रेणीमें सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थिति ऋतःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होती है, अतः अपगतवदीके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ीसागर प्रमाण कही है। तथा सात नाकपाय और चार संज्वलनका सत्त्व चपक श्रपगतवेदीके भी होता है. श्रतः श्रपगतवेदीके इनकी जघन्य स्थिति त्रोघके समान कही है। अपगतवेदीके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका सत्त्व ती हाता ही नहीं, अतः इसके अनन्तानुबन्धी चनुष्ककी जघन्य स्थिति नहीं कही। हां जिन आचार्योंके मतसे अनन्तानुबन्धीकी विना विसंयोजना किये भी जीव उपशमश्रेणी पर चढ़ सकता है उनके मनानुसार अपगतवेदीके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति अन्तःकोडाकोडी सागर प्रमाण होगी जिसका यहां उल्लेख न करनेका कारण यह है कि कपायप्राधनक मतानसार ऐसी जीव उपशमश्रेणिपर आरोहण नहीं करता।

§ ३६७. क्रोधमें चार कपायोंका जघन्य स्थिति सत्त्वकाल चार वर्ष है। शेष मूलोघके समान है। इसी प्रकार मानमें जानना चाहिय। इतनी विशेषता है कि इसके तीन संज्वलनका जघन्य स्थिति सत्त्वकाल दो वर्ष है। तथा शेष ओघके समान है। इसी प्रकार मायामें जानना चाहिये। पर इतनी विशेषता है कि इसके दो संज्वलनोंका जघन्य स्थिति सत्त्वकाल एक वर्ष है। तथा शेष खोघके समान है। खकपायी जीवोमें सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल खन्तः-कोड़ाकोड़ी सागर है। इसी प्रकार यथाल्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — क्रोधकपायीके क्रोध कपायके वेदन करनेके अन्तिम समयमे चार संज्वलनोंकी जघन्य स्थिति चार वर्ष प्रमाण होती हैं। मानकपायीके मान कपायके वेदन करनेके अन्तिम समयमें मानादि तीन संज्वलनोंकी जघन्य स्थिति दो वर्षप्रमाण होती हैं। तथा मायाकपायीके माया कपायके वेदन करनेके अन्तिम समयमें माया क्रायि दां संज्वलनोंकी जघन्य स्थिति एक वर्ष प्रमाण होती हैं, अतः इन क्रोधादि कपायवाले जीवोके उक्त कपायोंकी जघन्य स्थिति उक्त प्रमाण कही हैं। इनके शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति ओघके समान जानना, क्योंकि इनमेसे किसी भी कपायके उदयके रहते हुए दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी चपणा सम्भव हैं, अतः इन कपायवालोंके शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति ओघके समान वन जाती हैं। उपशान्त-कपाय गुणस्थानमे अक्षपायी जीवोके अनन्तानुवन्धी चतुष्कको छोड़ कर शेष सब प्रकृतियोंका सत्त्व सम्भव हें और उपशामक्रेणीमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरमं

 ३६८ विहंग० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० ज० अनोकोडाकोडीसागरो-वमािखा । सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियभंगो । म्रापज्ज० त्र्योघं । स्वार इत्थि०-स्वार्थक ज० पलिदो० त्रसंखे०भागो ।

§ ३६६. सामाइय-छेदो० श्रोघं। एवरि लोभमंज० ज० अंतोमुहुत्तं। परिहार० सम्मत्तः मिच्छत्त०-सम्मामि०-अणंताणु० आयं। सेमाणं सोहम्मभगो। एवं तेष-पम्म-संजदासंजदाएां। सुहुमसंप० लोभ० ज० एया हिदी एयममइया। सेसाणमकसाइभंगो। श्रमंजद० तिरिक्खोयं। णवरि मिच्छत्तस्मोघभंगो।

कम नहीं होती, त्रातः त्राकापायी जीवोके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति त्रान्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण कही हैं। तथा अकषाथी जीवोंके समान यथाख्यातसंयत जीवोंके भी सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति घटित कर लेनी चाहिये।

§ ३६ द. विभंगज्ञानियोंमे मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंका जघन्य स्थिति सत्त्वकाल श्रम्तःकोड़ाकोड़ी सागर है। तथा सम्यक्तव श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थिति सत्त्वकाल एकेन्द्रियोंके समान है। मनःपययञ्जानमें श्रीघके समान है। पर इननी विशेषता है कि इसमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य स्थिति सत्त्वकाल पत्योपमके श्रसंख्यातवें भागप्रमास है।

विशेषार्थ — विभंगज्ञान संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवके पर्याप्त अवस्थामे ही होता है और पर्याप्त अवस्थामें संज्ञी मिण्यादृष्टि जीवके अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरसे कम जबन्य स्थितिसत्त्व नहीं होता, अतः विभंगज्ञानियों के मिण्यात्व, सोलह कपाय और नी नोकपायों की जबन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण कही है। नथा विभंगज्ञाना भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उद्धलना करते हैं, अतः इनके उक्त दो प्रकृतियोकी जबन्य स्थिति एकेन्द्रियों ते समान दो समय कही है। यद्यपि मनः-पर्ययज्ञानके रहते हुए ज्ञायिक सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति और ज्ञप्तक्षेणी पर आरोहण बन सकता है, अतः इसके स्थिवेद और नपुंसकवेदको छोड़ कर शेष सब प्रकृतियोकी जबन्य स्थिति शोषक समान बन जाती है। किन्तु स्थीवेदी और नपुंसकवेदी जीवक मनःपर्ययज्ञानकी प्राप्ति सम्भव नहीं, अतः जिम प्रकार पुरुषवेदी जीवके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जबन्य स्थिति पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण घटिन करके बनला आये हैं उसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानीके भी जानना।

§ ३६६. सामायिक और छेदोपस्थापना संयममें खोघक समान है। पर इतनी विशेषता है कि इनके लोभसंज्वलनका जयन्य स्थिति सत्त्वकाल अन्तर्मु हुर्न है। परिहारियशुद्धिसंयतके सम्यक्त्व, मिध्यात्व, सम्यम्भिध्यात्व अंत अन्तनानुबन्धी चतुष्कका जयन्य स्थितिसत्त्वकाल श्रोषके समान है। तथा शेषका सीधर्मक समान है। इसी प्रकार पीत, पद्म लेश्यावाले श्रोर संयतासंयतोके जानना चाहिये। स्दमसांपरायिकसंयतोके लोभकी एक स्थितिका जयन्य काल एक समय है। तथा शेषका अकपायी जीवोंके समान भंग है। असंयतोमें सामान्य तियंचोंके समान भंग है। पर इतनी विशेषता है कि इनके मिध्यात्वका खोषके समान भंग है।

विशेषार्थ— सामायिक संयम और छेदोपस्थापना मंयमके रहते हुए भी दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी चपणा होती हैं, अतः इनके संज्वलन लोभको छोड़कर शेप सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थित आवके समान कही है। किन्तु ये दोनों संयम नौवें गुणस्थान तक ही पाये जाते हैं और चपक नौवें गुणस्थानके अन्तमें लोभकी जवन्य स्थिति अन्तर्मु हूर्तप्रमाण होती हैं, अतः इन दोनों संयमोंमें लोभकी जवन्य स्थिति अन्तर्मु हुर्त कही है।

परिहारिवशुद्धि संयमके रहते हुए दर्शनमोहनीयकी चपणा श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना सम्भव है, अतः इसके इन प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति श्रोधके समान कही। तथा यह संयम सातवें गुणस्थान तक ही होता है स्त्रीर सातवें गुणस्थानमें शेप कर्मीकी जघन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण पाई जाती है, अतः इसके शेष कर्मोंकी जघन्य स्थिति सौधर्म करपके समान कही। यहां सौधर्म करपके समान जवन्य स्थिति कहनेसे यह प्रयोजन है कि जिस प्रकार सोधर्म स्वर्गमें उक्त कर्मोकी जधन्य स्थित प्राप्त करनेके लिये विशेषताका कथन किया है उसी प्रकार यहां भी जानना । तथा पीत और पद्म लेश्यावाले तथा संयतासंयतोंके परिहारविशुद्धि संयतोंके समान जघन्य स्थितिका कथन करना चाहिये । चपक सूच्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तमें सूचम लोमकी जघन्य स्थिति एक समय रह जाती है जो उस समय उदयहप होती है, अतः इस संयमवालेके लोभकी जघन्य स्थिति एक समय कही। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कको छीड़ कर शेष प्रकृतियोका सत्त्व सूद्म साम्पराय गुणुस्थानमें उपशमश्रेणीकी अपेद्मासे पाया जाता है, श्रतः जिस प्रकार अकपायी जीवोंके शेव प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति वतला आये उसी प्रकार सूदमसंपराय संयमवाले जीवोंके जानना । ऋसंयतोंमें एकेन्द्रिय तिर्यंच मुख्य है और उन्होंके मिथ्यात्वको छोड़कर शेप सब प्रकृतियोकी ऋसंयतोंकी अपेद्धा जवन्य स्थिति सम्भव है, ऋतः ऋसंयतोंके मिध्यात्वके बिना रोप सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति सामान्य तिर्थेचोंके समान कही । किन्तु असंयत मनुष्य भी होते हैं त्रीर मनुष्य त्रसयत दर्शनमोहनीयकी चपणा भी करते हैं त्रात: असंयतोंके मिध्या-त्वकी जघन्य स्थिति स्रोघके समान एक समय कही।

§ ४००. चायिकसम्यग्दृष्टियोके इक्कीस प्रकृतियोंका ऋषिके समान भंग है। वेदक सम्यग्दृष्टियोंके परिहारिवशुद्धिसंयतोंके समान भंग है। उपशमसम्यग्दृष्टियोंके अकपायी जीवोंके समान भंग है। सम्यग्मिण्यात्वमें सोलह कपाय, नौ नोकपायोंका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल अन्तः कोड़ाकांड़ी सागर है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वका जघन्य स्थितिसत्त्वकाल सागर पृथक्त्व है। सासादनसम्यदृष्टियोंके अकपायी जीवोंके समान भंग है।

विश्रोपार्थ—्सायिकसम्यग्दृष्टिके २१ प्रकृतियां ही पाई जाती हैं और सपक श्रेणीका श्रधिकारी यही है अतः इसके २१ प्रकृतियोंकी जघन्य स्थित आघके समान बन जाती हैं। वेदकसम्यग्दृष्टियोमं विशुद्धिकी अपेसा परिहारविशुद्धिसंयत मुख्य है अतः इनके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति परिहारविशुद्धिसंयतोंके समान कही। इसी प्रकार उपशम सम्यग्दृष्टियोंमें अकपायी जीव मुख्य हैं, अतः इनके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति श्रकपायी जीवोंके समान कही। किन्तु इनके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति श्रोघके समान जाननाः, क्योंकि यहां पर विसंयोजना संभव हैं। सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवके सोलह कपाय श्रोर नो नोकषायांकी जघन्य स्थिति अन्तः कोझकोड़ी सागर प्रमाण ही होती हैं। किन्तु जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वका जघन्य स्थितिसत्व सागरपृथक्त्व है वह मिण्यादृष्टि जीव भी सम्यग्मिण्यात्व गुण्स्थानको प्राप्त हो सकता है, अतः सम्यग्मिण्यादृष्टिके इन दोनोकी जघन्य स्थिति प्रथक्त्व सागर कही। तथा जो अकपायी जीव श्राकर सासादनसम्यग्दृष्टि होना है उसके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति श्रन्तःकोड़ाकोड़ी

### एवमद्धाञ्चेदो समत्तो ।

\$ ४०२. उक्कस्स०विहत्ति-अणुक्कस्स०विहत्तिअणुगमेण दुविहो० । ओघे० सन्वु-क्कस्सिट्टिदी उक्कस्सिटिदिविहत्ती । तद्णमणुक्कस्सिटिदिविहत्ती । उक्कस्सिटिदिविहत्ति-सन्बिटिदिविहत्तीणं को भेदो ? ण, सन्बिणसेगिटिदीणं समुदात्रो सन्बिटिदिविहत्ती णाम । उक्कस्सिटिदिविहत्ती पुण उक्कस्सकालुबलिखओ चिरमिणसेत्रो एको चेव । तेण दोण्हमित्थ भेत्रो । उक्कस्सिटिदिणिसेयविदिरित्तसन्बिणसेया अणुक्कस्सिटिदिविहत्ती णाम । सन्बिणसेयिटिदीसु अण्णदरिणसेगे अविणदे सेसिटिदीओ णोसन्बिटिदिविहत्ती णाम । तेण ए प्रणक्तदोसो ति सिद्धं । एव णेद्व्वं जाव अणाहारए ति ।

४०३ जहण्ण-अजहण्णिद्दिद् द्वि० । ओघे० सन्वजहण्णिद्दि जहण्णिद्दिद्
 विहत्ती तदुवरि अजहण्णिद्दिदिविहत्ती । उक्तस्मअद्धाळेदे उक्तस्सिद्दिविहत्ती किण्ण

सागर प्रमाण होते हुए भी कमसे कम पाई जाती है, अतः सामादनसम्यग्द्रष्टियोके सब प्रकृति-योंकी जघन्य स्थिति अकपायी जीवोंके सामान कही।

#### इस प्रकार ऋद्धान्छेद समाप्त हुआ।

§ ४०१ सर्वस्थितिविभक्ति अाँर नांसर्वस्थितिविभक्ति अनुगमकी अपेद्या निर्देश दां प्रकारका है—आंघनिर्देश और आदेश निर्देश उनमेंसे आंघकी अपेद्या सब स्थितियां सबस्थिति-विभक्ति हैं और सब स्थितियांसे न्यून स्थितिया नांसर्वस्थितिविभक्ति हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक ले जाना चाहिये।

§ ४०२ उत्कृष्टस्थितिविभक्ति स्रोर स्रमुत्कृष्टस्थितिविभक्ति अनुगमकी स्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध निर्देश स्रोर स्रादेश निर्देश। उनमेसे स्रोधकी स्रपेत्ता सबसे उत्कृष्ट स्थिति उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति है और इससे न्यून स्रमुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति है।

शंका--उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति, त्रीर सर्वस्थितिविभक्तिमे क्या भेद हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सब निपेकोंकी स्थितियोंके समुदायका नाम सर्वेस्थितिविमक्ति हैं परन्तु उत्कृष्ट स्थितिविमक्तिउत्कृष्ट कालसे उपलक्षित एक अन्तिम निपेक कहलाता है, अतः इन दोनोमें भेद हैं।

चत्कृष्ट स्थितिवाले निपेकोंके सिवा दोर सब निपेक अनुकृष्ट स्थितिविभक्ति कहलाते हैं। तथा सब स्थितिवाले निषेकोंमें से किसी एक निपेकके निकाल देने पर दोर स्थितियां नोसर्वस्थिति-विभक्ति कहलाती हैं। इस लिये इनके कथनमें पुनरुक्त दोप नहीं है यह सिद्ध होता है। इसी प्रकार अनाहार मार्गणातक जानना चाहिये।

§ ४०३ जवन्य स्थितिविभक्ति और अजवन्य स्थितिविभक्ति अनुगमकी ऋपेचा निर्देश दो प्रकारका है-स्रोचनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे खोचकी ऋपेचा सबसे जचन्य स्थितिका जचन्य स्थितिविभक्ति कहते है और इसके ऊपर श्रजचन्य स्थिति विभक्ति होती है। श्रद्धाच्छेदी पुरा उकस्सकालुवलिक्षयएगणिसेगाविणाभाविसव्बणिसेयकलाओ तेण [ण]पविसदि ति घेत्तव्वं । एवं जहण्णदिदि-जहण्णदिदिअद्धाछेदाणं पि भेदो परू-वेदव्वो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारए ति ।

६ ४०४ सादि-अणादि-धुन-श्रद्धु वाणुगमेण दुविहो णिहेसो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ त्रोघेण मिच्छत्त-वारसक०-णवणोक० उक्क० श्रयुक्क० जह० किं सादि०४। सादि श्रद्धु वं । श्रजह० किं सादि०४ १ श्रणादिश्रो धुवो अद्ध वो वा । सम्मत्त-पविस्सदि १ एा, उक्कस्सिटिदिविहती एगम उक्कस्सकालुवलक्षियएगिएसेगो उक्कस्स-

शंका-उत्कृष्ट अद्धान्छेदमे उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिका अन्तर्भाव क्यो नहीं हाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट कालसे उपलचित एक निपेकको उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति कहते हैं परन्तु उत्कृष्ट अद्धान्क्रेद तो उत्कृष्ट कालसे उपलचित एक निपेकके अविनाभावी समस्त निपेकोके समुदायका नाम है, इसलिये उत्कृष्ट अद्धान्छेदमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका अन्तर्भाव नहीं होता है ऐसा यहण करना चाकिये। इसी प्रकार जघन्य स्थिति और जघन्य स्थिति अद्धान्छेदके भेदका भी कथन करना चाहिये। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिये।

विशोषार्थ-किसी एक मनुष्यके चार बंट हैं। उनमेसे सबसे बड़ा बटा ज्येष्ठ या उत्कृष्ट, शेव अनुत्कृष्ट, सबसे छोटा बटा लघु या जघन्य और शेव अजधन्य बेटे कहं जायंगे। यही बात स्थितिक विषयमे भी जाननी चाहिये। अर्थान् उत्कृष्ट स्थितिसे सबसे अन्तिम निपेककी स्थिति ली जायगी। अनुत्कृष्ट स्थितिसे अन्तम निपंककी स्थितिको छोड़कर शेप सब निपेकोंकी स्थितियां ली जायगी। जवन्य स्थितिसे सबसे कम स्थिति ली जाती है तथा ऋजवन्य स्थितिसे सबसे कम स्थितिको छोड़ कर शेप सब ।स्थितियां ली जाती हैं ।इस प्रकार इस कथनसे यह भी जाना जाता है कि इन चारों प्रकारके स्थिति भेदोंमें अवयवकी मुख्यता है समुदायकी नही । अतः सर्व स्थितिमें समुदायरूपसे सब स्थितियोंका प्रहण हो जाता है और नोसर्वस्थितिमें अविविद्यति किसी एक या एकसे अधिक निपंकोंकी स्थितियोकां छोड़ कर शेप स्थितियोंका प्रहण हो जाता है। यहां यह शंका की जा सकती है कि यदापि उत्हृष्ट स्थिति अवयव प्रधान है अतः उससे सर्वस्थिति भिन्न सिद्ध हो जाती है पर अनुस्कृष्ट और अजधन्य स्थितिसे नामर्व स्थित कैसे भिन्न सिद्ध हो सकती है, क्योंकि इन तीनोमें ऊन स्थितियों को ही महण किया। गया है। पर ठीक तरहसे विचार करने पर यह शंका निमूल हो जाती है, क्यांकि जिस प्रकार अनुत्कृष्ट स्थितिमें केवल उत्कृष्ट स्थितिका श्रीर श्रजयन्य स्थितिमें केवल जयन्य स्थितिका श्रभाव इष्ट है वह बात नोसर्वस्थितिकी नहीं है किन्तु इसमें अधिवित्तित किसो भी निपेककी स्थितिक श्रभाव इष्ट है। उदाहरएके लिये ऊपरके मनुष्यसे कहा जाय कि तुम अपने कुछ वेटोको बुलाखा तो यह किसी भी बेटेको बुलानेसे छोड़ सकता है। यहा बात नासर्व स्थितिक थिपयम जानना चाहिय । इस प्रकार आंघ और आदेशकी त्र्यपत्ता जहां जो स्थिति सम्भव हो, जानकर उसका कथन करना चाहिये ।

§ ४०४ सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव अनुगमकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है— भोषनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओषका अपेना मिण्यात्व, वारह कपाय और नी नोक-पायोंकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जधन्य स्थिति विभक्ति क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है १ सादि और अध्रुव है। अजधन्य स्थितिविभक्ति क्या सादि है, क्या सम्मामि॰ उक्क॰ अणुक्क॰ जह॰ अजह॰ किं सादि०४१ सादिश्री श्रद्धुवो। [ अणंताणुवंधिचउक्क॰ उक्क॰ अणुक्क॰ जह॰ किं सादि०४१ सादि अद्धुवं ] अज॰
किं सादि०४१ सादिओ अणादिश्रो वा धुवो अद्ध्वे वा। एवमचक्खु॰ भवसि०।
णविर भवसिद्धिएसु धुवं एत्थि। सेसाणं मग्गणाणं उक्क॰ अणुक्क॰ जह० अजह०
किं सादि०४१ सादिया अद्ध्वे वा।

श्रनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रव है ? श्रनादि, ध्रुव श्रोर श्रध्रुव है। सम्यक्त श्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट, श्रमुत्कृष्ट, जधन्य और श्रज्ञघन्य स्थितिविभक्ति क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है ? सादि श्रोर श्रध्रुव है । अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट, श्रमुत्कृष्ट श्रोर जबन्य स्थितिविभक्ति क्या सादि है, क्या श्रमादि है, क्या श्रुव है या क्या श्रुव है या क्या श्रुव है ? सादि श्रोर श्रध्रुव है । श्रज्ञघन्य स्थितिविभक्ति क्या सादि है, क्या श्रमादि है, क्या श्रमादि है, क्या ध्र्य है या क्या अध्रुव है ? सादि, श्रमादि, ध्रुव श्रोर श्रध्रुव है । इसी प्रकार श्रचसुदर्शनवाल श्रोर भव्योंके जानना चाहिये । पर इतनी विशेषता है कि भव्योंके ध्रुवभंग नहीं होता है । श्रेप मार्गणाश्रोमें उत्कृष्ट श्रमुत्कृष्ट, जघन्य श्रोर श्रज्ञघन्य स्थितिविभक्ति क्या सादि है, क्या श्रमादि है , क्या श्रुव है या क्या श्रमुव है ? सादि श्रोर श्रमुव है ।

विशेषार्थ-मोहनीयकी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रौर अनुत्कृष्ट स्थिति कादाचित्क है तथा जघन्य स्थिति अपने अपने चय कालके अनितम समयमें ही प्राप्त होती है, अतः ये तीनों स्थितियाँ सादि स्रौर स्रध्नव हैं। किन्तु सब प्रकृतियोंकी श्रज्ञघन्य स्थितिके विषयमे विशेषता है जिसका खुलासा निम्न प्रकार है—यह तो हम पहले ही बतला आये हैं कि जघन्य स्थितिको छोड़कर शेप सब स्थितिविकल्प अजघन्य कहे जाते हैं, क्योंकि जघन्यके प्रतिपेध मुखसे श्रजघन्यमें जघन्यको छोड़कर शेप सबका प्रहण हो जाता है। प्रकृतियोंके विपयमे दूसरी यह बात ज्ञातच्य है कि मोहनीयकी अट्टाईस प्रकृतियोंमेंसे मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नांकपायोका न्नय होनेके पहले तक निरन्तर सत्त्व पाया जाता है श्रीर न्नय होनेके बाद पुनः इनका बन्ध नही होता । अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अनादि मिथ्यादृष्टिके तो निरन्तर सत्त्व है किन्तु जिसने सम्य-ग्दर्शनको प्राप्त कर लिया है उसके इसकी विसंयोजना भी हो जाती है और ऐसा जीव जब मिध्यात्वमें त्राता है तो पुनः उनका वन्य होने लगता है। तथा सम्यक्त्व त्रीर सम्यग्मिध्यात्व सादि ही हैं यह स्पष्ट ही है। इन सब विशेषतात्र्योंको ध्यानमें रखकर जब इन प्रकृतियोंकी श्रजघन्य स्थितिके सादित्व श्रादिका विचार करते हैं तो मिध्यात्व, बारह कपाय श्रोर नी नोकपायोंकी अजधन्य स्थिति अनादि ध्रुव और अध्रुव प्राप्त होती है, क्योंकि अनादि कालसे इनकी अजघन्य स्थिति चली आरही है इसलिये अनादि है। तथा भन्योंकी अपेना अध्व और अभव्योंकी अपेत्रा ध्रुव है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अजघन्य स्थिति सादि. अनादि, ध्रुव और अध्रुव चारो प्रकारकी प्राप्त होता है, क्योंकि विसंयोजनासे जघन्य स्थितिके प्राप्त होनेके पहले तक वह अनादि है। विसंयाजना के पश्चात् पुनः वन्ध होनेपर सादि है तथा अभव्योंकी श्रपेत्ता ध्रुव श्रीर भव्योंकी श्रपेत्ता श्रध्रुव है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्व ये दोनों प्रकृतियाँ मूलतः ही सादि हैं अतः इनकी अजघन्य स्थिति भी और स्थितियोंके समान सादि और अध्रव हैं। अचन्नदर्शनमार्गणा छदास्थ अवस्थाके रहने तक और भव्य मार्गणा संसार अवस्थाके रहने तक निरन्तर पाई जाती है, अतः इसमें उक्त अधिप्ररूपणा वन जाती है। किन्तु भव्योंके ध्रव

### एवं अद्वाणुगमी समत्ती।

### **% एयजीवेण सामित्त**ं।

# मिच्छत्तस्स उक्कस्सिट्टिदिविहत्ती कस्स ? उक्कस्सिट्टिद्वं वंधमाणस्म ।

४०६. एदस्स जइवसहाइरियमुहकमलविणिग्गयस्स सामित्तमुत्तस्स अत्थपरू-वणं कस्सामो । तं जहां, भिच्छत्तस्से ति णिइसो संसपयडिपडिसेहफलो । उकस्स-हिदिविहत्तिणिइसो संसिद्धिदिविहत्तिपडिसेहफलो । कस्से ति पुच्छा सयस्स कनारत्त-पडिसेहफला । उक्कस्सिद्धिदं बंधमाणस्से ति वयण अणुक्कस्सिद्धिदंबंधेण सह उक्कस्स-हिदिसंतपडिसेहफलं । अणुक्कस्सिद्धिए वज्भमाणाए वि उक्कस्सिद्धिणिसेयाण-मधिद्धित्वला एत्थि ति उक्कस्सिद्धिदिविहत्ती किण्ण होदि ? ण, चरिमणिसेयस्स उक्कस्सकालुवलिखयस्स उक्कस्सिद्धिस्णिदस्स अधिद्धिगलणाए एगदिदीए

विकल्प नहीं बनता। इन दो मार्गणात्रोंके अतिरिक्त राप जितनी मार्गणाएं हैं उनमे चारों प्रकारकी स्थितियां सादि और अधुव हैं, क्योंकि एक तो मार्गणाएं परिवर्तनशील है और दूसरे सब मार्गणात्रोंमें यथायोग्य ओघ उत्कृष्ट स्थिति आदि न प्राप्त होति है।

इस प्रकार अधुवानुगम समाप्त हुआ।

### अ अब एक जीवकी ऋषेत्रा स्वामित्वानुगमको कहते हैं।

§ ४०५. स्वामित्वानुगमकी ऋषेचा स्वामित्व दो प्रकारका है-जयन्य और उत्कृष्ट । उनमेंसे पहले उत्कृष्ट स्वामित्वका प्रकरण है । उसकी ऋषेचा निर्देश दो प्रकारका है-ऋष्य और ऋष्देश । उनमेंसे ऋष्यकी ऋषेचा उत्कृष्ट स्वामित्वको कहते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञासृत्र सरल है ।

\* मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है ? उत्कृष्टस्थितिको बाँधनेवाले जीवके होती है।

§ ४०६ अब यतिष्ठपम आचार्यके मुख्यसे निकले हुए इस स्वामित्वसूत्रके अर्थका कथन करते हैं जो इस प्रकार है— सूत्रमें मिश्यात्व पदके देनेका फल शेप प्रकृतियोंका निपेध करना है। उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति पद देनेका फल शेप स्थित विभक्तियोंका निपेध करना है। किसके होती हैं इस प्रकार प्रकृशका आश्य स्वकृष्ट त्यका प्रतिपेध करना है। उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले जीवके इस बचनकं देनेका फल अनुन्कृष्ट स्थितिबन्धके साथ उत्कृष्ट स्थितिसन्त्यका प्रतिपेध करना है।

शका-श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होते हुए भी उत्कृष्ट स्थितिके निषेकोंका श्रधःस्थितिगलन नहीं होता है, अतः अनुत्कृष्ट स्थितिवन्धके समय उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति क्यों नहीं होती है।

समाधान-नहीं, क्योंकि जिसकी उत्कृष्ट स्थिति यह संज्ञा है ऐसे उत्कृष्ट कालसे उपलिखत

गलिदाए वि उक्कस्सिटिदिविहत्तिविणासादो । अहवा उक्कस्सिटिदिश्रद्धाछेदस्स एदं सामित्तं, सो च काल्लिमेगपहाणो, तेण अणुक्कस्सिटिदि वंधमाणस्स उक्कस्सिटिदि-विहत्ती ण होदि किं तु उक्कस्समंकिलेसेण उक्कस्सिटिदि वंधमाणस्स चेवे ति।

#### **\* एव**ं सोलसकसायाणं।

\$ ४०७. जहा मिच्छत्तस्स उक्कस्ससामित्तं परूविदं तहा सोलसकसायागं पि परूवेदव्वं; मिच्छादिहिम्मि तिव्वसंकिलेसिम्मि उक्कस्सिहिदं वंधमाणिम्म चेव एदे-सिमुक्कस्सिहिद्विहत्तीए संभवादो ।

स्थितिक निषंककी अधःस्थिति गलनाके द्वारा एक स्थितिक गलित होजानेपर भी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका विनाश हो जाता है, अतः अनुत्कृष्ट स्थितिवन्धके समय उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति नहीं होती है एसा सममना चाहिये। अथवा यह उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका स्वामित्व न होकर उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका स्वामित्व न होकर उत्कृष्ट स्थितिवश्रक्षाच्छेदका स्वामित्व है और वह कालिनपेक प्रधान होता है, अतः अनुत्कृष्ट स्थितिको वाँधनेवाल जीवके उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति नहीं होती है किन्तु उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाल जीवके दिन्दृष्ट स्थितिवभक्ति होती है।

# \* इसी प्रकार सोलह कपायोंका उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिये।

§ ४०७. जिस प्रकार मिण्यात्वका उत्कृष्ट स्वामित्व कहा है उसी प्रकार सोजह कपायोंका भी कहना चाहिये, क्योंकि तीव्र संक्लेशवाले और उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेवाले मिण्यादृष्टि जीवके ही उन सालह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति संभव है।

विशोषार्थ-चृश्लिस्त्रमें यह बतलाया है कि उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवके ही मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। इसपर शंकाकारका कहना है कि जो प्रथमादि समयोंमें उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर द्वितीयादि समयोंमें अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करने लगता है उसके उत्कृष्ट स्थितिके निषेकोंका अधःस्थिति गलन नहीं होता अतः अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धके समय भी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। इस शंकाका वीरसेन स्वामीने दा प्रकारसे समाधान किया है। पहले समाधानका तात्पर्य यह है कि जिस ऋन्तिम निपंककी सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थित पड़ी है उस निपंककी उत्कृष्ट स्थिति संज्ञा है किन्तु द्वितीयादि समयोंमें उस निपंककी सत्तर कोड़ाकांड़ी सागर प्रमाण स्थिति न रहकर एक समय, दां समय श्रादि रूपसे कम हो जाती है, अतः अनुत्कृष्ट स्थिति बन्धके समय उत्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती किन्तु जिस समय उत्कृष्ट स्थित बन्ध होता है उसी समय उत्कृष्ट स्थित होती है। इस समाधानपर यह शंका होती है कि जब स्थिति निपंकप्रधान होती है और द्वितीयादि समयोमें उत्कृष्ट स्थितिसंज्ञाबाले निपेकोंका गलन ही नहीं हुआ तब अनुन्कृष्ट स्थितिबन्धक समय उत्कृष्ट स्थिति क्यों न मानी जाय ? इस शंकाका विचार करके वारसेत स्वामी ने दूसरा समाधान किया है। उसका सार यह है कि उत्कृष्ट स्थिति कालकी प्रधानतासे कही गई है निपकोंकी प्रधानतासे नहीं. अतः अनुतकृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके उत्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती, क्योंकि उस समय उत्कृष्ट काल सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरमेसे एक, दो आदि समय कम हो जाते हैं। इसी प्रकार सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके सम्बन्धमें भी जानना चाहिये।

- \* सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्क्स्सिद्दिविहत्ती कस्स ?
- § ४०८. सुगममेदं पुच्छासुत्तं।
- \* मिच्छत्तस्स उक्कस्सिद्धिदं वंधिद्ण अंतोमुहुत्तद्धं पिक्षभग्गो जो द्विदिघादमकाद्ण सन्वल्रहुसम्भत्तं पिडवण्णो तस्स पढमसमयवेदयसम्मा-दिहिस्स ।
- \$ ४०९. जिंद वि एन्थ अद्वावीसमंतकिम्पयगहणं ए। कदं तो वि अद्वावीससंतकिम्मओ ति णव्वदे; वेदगसम्मत्तगहणणहाणुववत्तीदो । सो वि भिच्छादिहि ति
  एव्वदे; अण्णगुणहाणिम्म भिच्छत्तस्य वंधाभावादो । सो तिव्वसंकिलेसो ति उक्कस्सहिदिवंधण्णहाणुववत्तीदो एव्वदे । एदम्हादो चेव ए। सत्तो जग्गंतो ति णव्वदे,
  सुत्तिम तव्वंधासंभवादो । उक्कस्सिहिदिं वंधंतो पिडह्ग्गपढमादिसमएसु सम्मत्तं ण
  गेण्हिद ति जाणावएहमंतोमुहुत्तद्धं पिडभगो ति भिणदं । पिडभगो उक्कस्सिहिदिवंधुक्कम्ससंकिलेसेहि पिडणियत्तो होद्गा विसोहीए पिडदो ति भिणदं होदि । हिदिघादं
  काद्ण वि वेदगसम्भत्तं के वि जीवा पिडवज्ञति तप्पिडसेहह हिदिघादमकाउँ ए। ति
- जिसे उत्कृष्ट स्थितिको वांधकर जिसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके कारणभूत उत्कृष्ट संक्लेश परिणामोंसे निष्टत्त हुए अन्तर्भहूर्त हो गया है और जो स्थितिका चात न करके अतिशीघ सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उस वेदक सम्यग्हिष्टके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है।

\$ ४०६ यद्यपि सूत्रमें 'अट्टावीसमंतकिम्मय' पदका प्रहण नहीं किया है तो भी ऐसा जीव अट्टाइंस प्रकृतियोंकी सत्तावाला होता है यह जाना जाता है, क्योंकि अन्यथा वेदकसम्यक्त्वका पहण नहीं वन सकता है। और वह भी मिण्यादृष्टि ही होता है यह जाना जाता है, क्योंकि अन्य गुणस्थानमें मिण्यात्वका वन्ध नहीं हो सकता है। तथा वह मिण्यादृष्टि भी तीव्रसंक्लेशवाला होता है यह जाना जाता है, अन्यथा मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध नहीं हो सकता है। इसीसे वह जीव सोता हुआ नहीं है किन्तु जागता हुआ है यह वात भी जानी जाती है, क्योंकि सोते हुएके मिण्यात्वका उत्कृष्ट वन्य नहीं हो सकता। उत्कृष्ट स्थितिका बांधनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिवन्धसे च्युन होकर प्रथमादि समयोंमें सम्यक्त्वका प्रहण नहीं करना है इस वातका ज्ञान करानेके लिये 'जिसे उत्कृष्ट स्थितिवन्धसे निवृत्त हुए अन्तर्मु हूर्त हो गया है' ऐसा कहा है। प्रतिभन्न शब्दका अर्थ उत्कृष्ट स्थिति बन्धके याग्य उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामोंने प्रतिनिवृत्त होकर विद्युद्धिको प्राप्त हुआ होता है। कितने ही जीव स्थितिका घात करके भी वेदक सम्यक्त्वका प्राप्त करते हैं अतः इसके प्रतिपेध करनके लिये सूत्रमें स्थितका घात न करके यह कहा है। बहुतसे जीव ऐसे हैं जो स्थितियात

भिणदं । हिदिघादमकुणमाणा वि दीहकालेण सम्मन्तं पिडवज्जंता श्रात्थि तप्पिडसेहर्डं सव्वलहुग्गहणं कदं । विदियादिसमण्सु अधिहिदगलणाण् गलिदेसु उक्कस्सिहिदिसंतं ण होदि ति पढमसमण् वेदगसम्मादिहिस्से ति परूविदं । मिच्छाइहिणा अद्वावीससंत-किम्मण्ण तिव्वसिकलेसेण सागार-जागारजवज्जतेण बद्धामच्छत्तु क्कस्सिहिदिसंतकम्मण् तत्तो परिविदय अंतोष्ठहुत्तद्धं तप्पाओग्गविसोहीण् अविदियेण अकदिहिदिघादेण सव्व—लहुण्ण कालेण वेदगसम्मत्तग्गहणपढमसमण् मिच्छत्तु क्कस्सिहिदीण् सम्मत्तसम्माभिच्छत्तेषु संकामिदाण् सम्मत्तसम्माभिच्छत्तेषु संकामिदाण् सम्मत्तसम्माभिच्छत्ताणप्रक्कस्सिहिदिविहत्ती जायदि ति भणिदं होदि। अवंधपयडीसु बंधपयडी कथं संकमइ १ एए एस दोसो; बंधपयडीणं चेव वंधे थक्के पिडग्गहत्तं फिट्टि णावंधपयडीणं, अण्णहा अवंधपयडीण् सम्मत्तादीणमभावो हेज्ज। ए च एवं मोहणीयस्स अहावीसपयडिसंतुवण्सेण सह विरोहादो।

नहीं करके दीर्घकालके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं, अतः इसका प्रतिपेध करनेके लिये स्वमें सर्वलघु पदका ग्रहण किया है। सम्यक्त्व ग्रहण होनेके अनन्तर दूसरे आदि सम्योमें अधः-स्थिति गलनाके द्वारा स्थितिके गलित हो जाने पर उत्कृष्ट स्थितिका सत्त्व नहीं रहता है, अतः स्वमें वेदकसम्यग्दिष्टिके पहले समयमे ऐसा कहा है। जो मिण्यादृष्टि जीव अद्वाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला है, जो जायत रहते हुण साकार उपयोगसे उपयुक्त है, जिसने नीव्र संक्लेशसे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति बांधकर उसकी सत्ता प्राप्त करली है वह जब तीव्र संक्लेशस्य परिणामोंसे न्युत होकर अन्तर्मु हूर्त काल तक सम्यक्त्वके योग्य विश्वद्विके साथ अवस्थित रहता हुआ स्थितिघात न करके सबसे लघु कालके द्वारा वेदक सम्यक्त्वका प्राप्त करके उसके पहले समयमें मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वमें संक्रमण कर देता है तब उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वमें संक्रमण कर देता है तब उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वमें संक्रमण कर देता है तब उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वमें संक्रमण कर देता है तब उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वमें हि यह उक्त स्वा अभिप्राय है।

शंका-बन्धप्रकृति अबन्ध प्रकृतियोंमें संक्रमणको कैसे प्राप्त होती है ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि वन्ध प्रकृतियोंके ही बन्धके रुक जाने पर उनमें प्रतिप्रहशक्ति नष्ट हो जाती है अवन्ध प्रकृतियोंकी नहीं, अन्यथा सम्यक्त्वादिक अवन्ध प्रकृतियों का अभाव हो जायगा। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ऐसा मानने पर उक्त कथनका मोहनीयकी अद्वाईस प्रकृतियोंके सत्त्वके प्रतिपादक उपदेशके साथ विरोध आता है। अतः जिन प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता किन्तु जो संक्रमण द्वारा ही अपने सत्त्वको प्राप्त होती हैं उनमें बन्ध प्रकृतिका संक्रमण हो सकता है इसमें कोई दोष नहीं है।

विशोषार्थ—ऐसा नियम है कि जिस समय किसी प्रकृतिका बन्ध होता है उसी समय अन्य सजातीय प्रकृतिका उस बंधनेवाली प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता है, क्योंकि तभी वह बंधने वाली प्रकृति प्रतिग्रह या पतद्ग्रहरूप होती है। और इसीका नाम परप्रकृति संक्रमण है। यह संक्रमण मूल प्रकृतियोंमें और चारों आयुओंमें परस्पर नहीं होता। तथा इस प्रकारका संक्रमण दर्शनमोहनीयका चारित्रमोहनीयमें और चारित्रमोहनीयका दर्शनमोहनीयमें भी नहीं होता। तथा इस प्रकारका संक्रमण होते समय संक्रमित होनेवाली प्रकृतिका स्थितिघात या अनुभागघात नहीं होता। और निस्थित तथा अनुभागमें वृद्धि ही होती है, क्योंकि स्थितिघात और अनुभागघात-

# \* णवणोकसायाणमुक्तस्सिट्टिबिह्त्ती कस्स ?

§ ४१० सुगममेदं ।

## \* कसायाणमुक्त्सिद्धिद्ं वंधिदृण आवित्यादीदस्स ।

३ ४११ किमद्दमाविष्यादीदस्युकस्समामित्तं दिज्जिदि १ एः; अचलाविष्यमेत्त-कालं वद्धसोलसकसायाणमुक्कस्सिद्दिगिए छोकसाएसु संकमाभावादो । कुदी एसो

का सम्बन्ध अपकर्पणसे नथा स्थितिवृद्धि और अनुभागवृद्धिका सम्बन्ध उत्कर्पण**से है और** त्रप्रकर्पण तथा उत्कर्पण एक ही शृक्षतिके कर्म परमाणुत्रोंमें परस्पर होते हैं। इस नियम<mark>के</mark> त्रानुसार यहां शंकाकारका यह कहना है कि सम्यक्त्व त्र्योर सम्यग्मिण्यात्व बन्धरूप प्रकृतियां नहीं होनेंसे उनमें प्रतिग्रहपना नहीं पाया जाता, ऋतः मिथ्यात्वका सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रमण नहीं होना चाहिये। इस शंकाका वीरमेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका सार यह है कि जो वैधनेवाली प्रकृतियां हैं उनका यदि बन्ध नहीं हो रहा है तो अवन्धकालमें उनमें ही प्रतिग्रहपना नहीं रहता है। उदाहरण के लिये जब साताका बन्ध होता है तभी वह प्रतिग्रहरूप है और तभी उसमे असावारूप कर्मपुंज संक्रमणुको। प्राप्त होता है। किन्तु जब स्नाताका बन्ध नहीं होना तब उसका प्रतिप्रहपना नष्ट हो जाता है श्रीर ऐसी हालतमे असातारूप कर्मपुंज सातारूपसे संक्रमणको नहीं प्राप्त होता। किन्तु सम्यक्त्व स्रोर सम्यग्मिश्यात्व ये दोनों स्रबन्ध प्रकृतियां हैं, अतः इतके विषयमे संक्रमणुका उक्त नियम लागू नहीं है । इतमे तो प्रतिप्रहपना बन्धके विना भी पाया जाता है और इसलिये इनमें मिथ्यात्वके कर्मपुंजके संक्रमण होनेमें कोई आपत्ति नहीं है। पर इतनी विशेषता है कि सम्यग्दृष्टि जीवके ही मिध्यात्वका कर्मपुंज इन दो प्रकृतियोमें संक्रमित होता है। अब यहां इन दोनों प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थिति वतलाना है, अतः अष्टाईस प्रकृतियोंकी यत्तावाले जिस मिथ्यादृष्टि जीवने मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध करके श्रीर संक्लेशपरिणामोंसे निवृत्त होकर तथा मिथ्यात्वका स्थितिकाण्डकवात किये विना अन्तर्म हूर्त कालमें वेदकसम्यक्त्व को प्राप्त कर लिया है उसके बेदकसम्यक्त्वके प्राप्त करनेके पहले समयमें अन्तर्माहर्त कम मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिथ्यात्वमे संक्रमण हो जाता है, श्रतः उस समय सम्यक्त्व और सम्यम्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है। शेप वातोंका खुलासा मूलमे किया ही है।

#### \* नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्त किसके होती है।

§ ४१०. यह सूत्र मुगम है।

\* जिसने कषायोंकी उत्कृष्ट स्थित बांधकर एक आवलीप्रमाण काल व्यतीत कर दिया है उसके नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभिवत होती है।

शंका-जिसने कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति बांधकर एक आवली प्रमाण काल व्यतीत कर दिया है वही नो नाकपायोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका अधिकारी क्यों है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बंधी हुई सालह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका अचलावली कालतक नो नोकपायोंमें संक्रमण नहीं होता है, अतः सोलह कपायोंके उत्कृष्ट स्थितिबंधके बाद एक आवली काल न्यतीत होने पर ही नो नोकपायोंका उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है। णियमो ? साहावियादो । जिंद णोकसायाणमण्णेसि कम्माणमाविष्ठिजणुक्कस्सहिदिसंक्रमेण उक्कस्सिहिदिविहत्ती होदि तो भिच्छत्त क्कस्सिहिदि सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिपमाणं णोकसाएस संकामिय उक्कस्सिहिदिविहत्ती किण्ण परूविज्ञदे ? ण,
दंसणमोहणीयस्स चरित्तमोहणीयसंकमाभावादो । कसायाणं णोकसाएस णोकसायाणं च कसाएस क्रुदो संकमो ? ण एस दोसो, चरित्तमोहणीयभावेण तेसि पच्चासित्तसंभवादो । मोहणीयभावेण दसणचिर्त्तमोहणीयाणं पच्चासत्ती अत्थि ति अण्णोण्णेस
संकमो किण्ण इच्छिदि ? ण, पिडसेन्नभमाणदंमणचिरत्ताणं भिएणजादित्ताणेण तेसि
पच्चासत्तीए अभावादो । एवं जइवसहाइरियपह्विदउक्कस्ससामित्तं देसामासियभावेण
सिचदादेसं भणिय संपित उच्चारणाइरियवक्खाणं पुराहत्त्तभएण ब्रोध मोत्तूण आदेसविसयं वत्तइस्सामो ।

§ ४१२. सत्तसु पुढवीसु तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०-

शंका-विविच्चित समयमे बंधे हुए कर्मपुंजका अचलावली कालके अनन्तर ही पर प्रकृतिरूप से सकमण होता है ऐसा नियम क्यों है ?

समाधान-स्वाभावसे ही यह नियम है।

शंका-यदि अन्य कर्मोंकी एक आवली कम उत्कृष्ट स्थितिके संक्रमण्से नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति होती है तो सत्तारकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण् मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको नोकपायोंमें संक्रमित करके उनकी उत्कृष्ट स्थिति आविलकम सत्तारकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण् क्यों नहीं कही जाती है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि दर्शनमोहनीयका चारित्रमोहनीयमें संक्रमण नहीं होता है।

शंका-कपायोंका नोकपायोंमें श्रीर नोकपायोंका कपायोमें संक्रमण किस कारणसे होता है ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि व दानों चारित्रमोहनीय हैं, अतः उनकी परस्पर-में प्रत्यासत्ति पाई जाती है इसलिये उनका परस्परमें संक्रमण हो सकता है।

शंका—दर्शनमोहनीय श्रीर चारित्रमाहनीय ये दोनों माहनीय हैं। इस रूपसे इनकी भी प्रत्यासत्ति पाई जाती है, श्रतः इनका परस्परमें संक्रमण क्यों नहीं स्वीकार किया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि परस्परमें प्रतिपेध्यमान दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के भिन्न जाति होनेसे उनकी परस्परमें प्रत्यासित्त नहीं पाई जाती है, इसिलये उनका परस्परमें संक्रमण नहीं होता है।

इस प्रकार जिसके द्वारा देशामर्पक भावसे आदेशकी सूचना मिलती है ऐसे यतिवृषभ-भाचार्यके द्वारा कहे गये उत्कृष्ट स्वामित्वको कहकर अब पुनरुक्त दोपके भयसे उच्चारणाचार्यके द्वारा व्याख्यात श्रोघ स्वामित्वको छोड़कर आदेशविषयक स्वामित्वको कहते हैं—

§ ४१२. सातों पृथिवियोंके नारकी, सामान तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच

तिरि०जोणिणी-मणुस्सतिय०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस०-तसपज्ज०-पंचमण०--पंचवि०-कायजोगि-ओरालि०-वेउव्वि०-तिण्णिवेद-चत्ता-रिक०-स्रसंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचलस्सा-भवसिद्धि०-सिण्ण-स्राहारीणमोधमंगो।

ः ४१३ पंचि०तिरि०अपज्ञ० मिच्छत्त-मोलसक०-एवरागेक० उक्क० कस्स १ अण्ण० जो तिरिक्खो मणुस्सो वा उक्कस्सिहिदिं वंधिदृण हिदिघादमकादृण पंचिं०-तिरिक्खाअपज्ञत्ताएस पढमसमयउववण्णो तस्स उक्कस्सिहिदिविह्ती । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० कस्स १ अण्ण० तिरिक्खो मणुस्सो वा उक्कस्सिहिदिं वंधिदृण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पिड्अण्णो सम्मत्तेण सह सन्वलहुं कालमिच्छय मिच्छत्तं गदो मिच्छत्तेण हिदिघादमकाऊण पंचिं०तिरि० अपज्ञत्तएस उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्म उक्कस्महिदिविह्ती । एवं मणुसअपज्ञ०-बादरेइंदियअपज्ञ०-सुहुमेइंदियपज्ञत्ता-पज्ञत्त-सन्वविग्णिदिय-पंचि०अपज्ञ०-वादरपुढवि०अपज्ञ०-सुहुमपुढविय्ज्ञत्तापज्ञत्त-वादरआउअपज्ञ०-सुहुमअाउ०पज्ञत्तापज्ञत्त-वादरतेउ०पज्ञत्तापज्ञत्त-सुहुमतेउपज्ञत्ता-

पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्थंच योनिमती, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्यिनी, सामान्य देव, भवन-वासियोसे लेकर सहस्रार कन्पतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, त्रोदारिक काययोगी, वैकियिक काययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कपायवाले, असंयत, चनुदर्शनवाले, अचनुदर्शनवाले, कृष्णादि पाँच लेश्यावाले, भन्य, संसी और आहारक जीवोंके भोषके समान संग है।

विशेषार्थ-- ऊतर जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उतमें मिथ्यात्व स्रादि सब कर्मांकी उत्कट स्थिति स्रायके समान बन जाती हैं, स्रातः इनकी प्रकृषणाकां स्रोधके समान कहा है।

§ ४१३ पंचेन्द्रिय नियंच लब्यप्यांप्तकोंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय त्रीर नी नोकपायोंकी उत्हृष्ट स्थितिविभक्ति किसके हाती है ? जो कोई एक नियंच या मनुष्य उत्हृष्ट स्थिति बॉधकर त्रोर स्थितियात न करके पंचेन्द्रिय तियंच लब्यप्यांप्तकोंमें उत्पन्न हुत्रा है उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमें उक्त कमींकी उत्हृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। सन्यक्त्व त्रीर सम्यिण्ध्यात्वकी उत्हृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो कोई एक नियंच या मनुष्य उत्हृष्ट स्थिति बाँधकर अन्तुमुं हूर्तकालके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हुत्रा नथा सम्यक्त्वके साथ त्रतिलघु कालतक रहकर मिध्यात्वका प्राप्त हुत्रा। पुनः मिध्यात्वके साथ रहते हुए स्थितियान न करके पंचेन्द्रिय तियंच लब्ध्यप्यांप्तकोंमें उत्पन्न हुत्रा। उसके उत्पन्न होनेक पहले समयमे सम्यक्त्व और सम्योग्मध्यात्वकी उत्हृष्ट स्थिति होती है। इसी प्रकार लब्ज्यप्यांप्तक मनुष्य, बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूद्दम एकेन्द्रिय, सूद्दम एकेन्द्रिय प्रयांप्तक, सूद्दम एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, सूद्दम प्रथिवीकायिक, सूद्दम प्रथिवीकायिक अपर्याप्तक, सूद्दम प्रथिवीकायिक, सूद्दम उत्विवीकायिक अपर्याप्तक, सूद्दम प्रथिवीकायिक अपर्याप्तक, क्षादर जलकायिक अपर्याप्तक, क्षादर अप्रकायिक प्रयांप्तक, सूद्दम अप्रकायिक अपर्याप्तक, सूद्दम अप्रकायिक अपर्याप्तक, सूद्दम अप्रकायिक प्रयांप्तक, सूद्दम अप्रकायिक, सूद्दम अप्रकायिक प्रयांप्तक, बादर अप्रकायिक, सूद्दम अप्रकायिक, सूद्दम अप्रकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक पर्याप्तक, बादर वायुकायिक पर्याप्तक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक पर्याप्तक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक पर्याप्तक, स्वत्म वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक पर्याप्तक, स्वत्म वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक, सूद्दम वायुकायिक पर्याप्तक,

पज्जत्त-बाद्रवाउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमवाउ०पज्जत्तापज्जत्त-बाद्रवण्फिद्पित्तेय०श्रपज्ज०-सुहुमवणप्फद्दि०पज्जत्तापज्जत्त-सव्वणिश्रोद्-तसश्रपज्जता ति ।

§ ४१४. त्राणदादि जावुत्रिरमगेवज्जो ति मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक० णवणोक० उक्क० ? अण्ण० जो द्व्विलांगी तप्पात्रोग्गुक्कस्सिटिदिसंतकिम्म्यो पढम-समयउववण्णो तस्स उक्कस्सिटिदिविह्त्ती । अणुद्दिसादि जाव सव्वटिसिद्धि ति सव्व-पयडीणमुक्क० कस्स ? श्रण्ण० जो वदय०दिटी तप्पाओग्गउक्कस्सिटिदिसंतकिम्मओ पढमसमयउववण्णो तस्स उक्कस्सिटिदिविह्ती ।

§ ४१५. एइंदिएसु मिच्छत्त-सोळसक० उक्क० कस्स १ अण्ण० जो देवी उक्कस्स-द्विदिं बंधमारोो एइंदिएसु पढमसमयउववण्णो तस्स० उक्क० विहत्ती । सम्मत्त०

सूद्रम वायुकायिक अपर्याप्तक, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्तक, सृद्रम वनस्पति-कायिक, सूद्रम वनस्पतिकायिक पर्याप्तक, सूद्रम वनस्पतिकायिक अपर्याप्तक, सव निगाद और ब्रस अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जिस मनुष्य या तिर्यंचने मिध्यात्व या सोलह कपायोंका उत्कृष्ट स्थितिवंध किया है ऐसा जीव अन्तर्मु हूर्त कालक परचान उस उत्कृष्ट स्थितिक साथ मर कर पचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकों उत्पन्न हो सकता है, अतः पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकों भवक पहले समयमें मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मु हूर्तकम सत्तर को झांकोड़ी सागर और सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मु हूर्तकम चालीस को झांकोड़ी सागर कही है तथा नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति उस लब्ध्यपर्याप्तक तियंचक होती है जिसने पूर्व भवमें सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति वस करके और एक आवित्क परचान् उसका नो नोकपायरूपसे संक्रमण करके परचान् अन्तर्मु हूर्तकालके बाद पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंमें जन्म लिया है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका खुलासा मूलमें ही किया है। मूलमें और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना।

§ ४१४. त्रानत कल्पसे लेकर उपरिम प्रैवेयकतक मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलइ कपाय त्रोर नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति किसके होती है ? त्रानतादिके योग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला जो कोई एक द्रव्यिलेगी मुनि मरकर त्रानतादिकमें उत्पन्न हुत्रा उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमे उक्त कर्मोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवाके सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है ? अनुदिशादिकके योग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला जो कोई एक वेदकसम्यग्दृष्ट जीव अनुदिश आदिमे उत्पन्न हुत्रा उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है।

\$ ४१५. एकेन्द्रियोंमें मिध्यात्व श्रोर सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती हैं ? उत्कृष्ट स्थिति बाँवनेवाला जो कोई एक देव एकेन्द्रियोमें उत्पन्न हुन्ना उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमे उक्त कर्मोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं । सम्यक्तव श्रोर सम्यग्निध्यात्व- सम्मामि० उक्क० कस्स० ? अण्ण० जो तिगदिश्रो उक्कम्सिटिदिं बंधिद्ण अंतोमुहुत्त-पिंडरगो संतो वेदगसम्मत्तं पिंडवण्णो तेण सम्मत्तेण सह सव्वल्रहुअमंतोमुहुत्तद्धमिन्छय मिन्छत्तं गदो । तदो मिन्छत्तंण टिदिघादमकादृण पहमसमयएइंदिश्रो जादो तस्स उक्क० विहत्ती । यावयोक० उक्क० कस्स ? अण्णदरस्स जो देवो उक्कस्सिटिदिं वंधमायो कालं कादृण एइंदिश्रो जादो पडमसमयमादिं कादृण जीव श्रावित्यउव-वण्णस्स तस्स उक्क० टिदिविहत्ती । एवमेइंदियवज्ञ०-वादरएइंदिय-बादरेइंदिय-पज्ज०-पुटवि०-वादरपुटवि०-वादरपुटविपज्ज०-श्राउ०-वादरश्राउपज्ज०-वण्पदि०-वादरपुटवि०-वादरपुटविपज्ज०-श्राउ०-वादरश्राउपज्ज०-वण्पदि०-वादरवणप्पदि०-वादरवणप्पदि०-वादरवणप्पदि०-वादरवणप्पदि०-वादरवणप्पदि०-वादरवणप्पदि-पत्तेयपञ्ज०-श्रादग्वा ति । श्रोरालियमिस्स० एवं चेव । णविर देव णेरइयपच्छा-यदाणं काद्व्वं ।

की उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है ? तीन गतियोंका जो कोई एक जीव मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बॉधकर अन्तर्म हूर्त कालमे अतिभग्न होकर तथा सम्यक्त्वके योग्य विद्युद्धिको प्राप्त होकर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः अतिलयु कालनक वेदकसम्यक्त्वके साथ रहकर मिण्यात्वको प्राप्त हुआ। तदनन्तर मिण्यात्वके साथ स्थितियात न करके एकेन्द्रिय हुआ। उसके उत्पन्न होनेक पहले समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। नो नाकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो कोई एक देव कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर मरा और एकेन्द्रिय हुआ। उसके उत्पन्न होनेक पहले समयसे लेकर एक आवली प्रमाण कालके भीतर नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार एकेन्द्रिय पर्याप्तक, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक, व्यवस्थितिवभक्ति होती है। इसी प्रकार एकेन्द्रिय पर्याप्तक, बादर पर्याप्तक, बादर पर्याप्तक, बादर पर्याप्तक, बादर पर्याप्तक, बादर पर्याप्तक, वादर पर्याप्तक, वादर पर्याप्तक, वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्तक शरोर पर्याप्तक और असंही जीवोंके जानना चाहिये। आदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि जो देव और नारक पर्यायसे वापिस आकर औदारिक मिश्रकाययोगी हुए हैं उनके उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति कहनी चाहिये।

विशेषार्थ — मूलमें एकेन्द्रिय आदि ऐसी मार्गणाएं गिनाई हैं जिनमें देव पर्यायसे आकर जीव उत्पन्न हो सकते हैं, अतः इन सबमे एकेन्द्रियों के समान सब प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थित बन जाती हैं। किन्तु औदारिकिमिश्रकाययागमें उन्कृष्ट स्थिति कहते समय देव और नारक पर्यायसे आकर जो औदारिकिमिश्रकाययोगी हुए हैं उनके सब प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थिति होती हैं। यहां यह शंका की जा सकती हैं कि जो उक्त मार्गणाओं में देव पर्यायसे आकर उत्पन्न हुए हैं और औदारिकिमिश्रकाययोगमें देव या नारक पर्यायसे आकर उत्पन्न हुए हैं उन्हीं के उत्कृष्ट स्थिति क्यों प्राप्त होती हैं जो तिर्यं च या मनुष्य पर्यायसे आकर उक्त मार्गणाओं में उत्पन्न हुए हैं उनके उत्कृष्ट स्थिति क्यों नहीं प्राप्त होती हैं। सो इसका समाधान यह हैं कि अतिसंकलेशसे मरा हुआ तिर्य च और मनुष्य नारक पर्यायमें उत्पन्न होगा अतः यहां देव और नारक पर्यायसे यथायोग्य उत्पन्न कराकर ही उक्त मार्गणाओं उत्कृष्ट स्थिति कहीं हैं।

\$ ४१६. वेउवियमिस्स॰ मिच्छत्ता-सोलसक० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो तिरिक्लो मणुस्तो वा उक्कस्सिटिदिं वंश्वमाणो मदो णेरइएसु पढमसमयउव-वण्णो तस्स उक्क०विहत्ती । सम्मत्त-सम्मामि॰ पंचिं०तिरिक्खश्रपज्जत्ताभंगो । एव-णोक० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो तिरिक्लो मणुस्सो वा उक्कस्सिटिदिं बंधिद्ण कालं गदो णेरइएसु उश्वणणो पढमसमयमादिं काद्ण जाव आश्रतियउववण्णस्स तस्स उक्क०विहत्ती ।

४१७ त्राहार० सन्वपयडीणग्रुक्क० कस्स ? त्र्रयण० जो वेदय०दिही उक्कस्सहिद्सितकम्मित्रो पढमसमयपज्जत्तयदो तस्स उक्क०विहत्ती। एवमाहारमिस्स०। णवरि
पढमसमयआहारमिस्सयस्स ।

§ ४१८. कम्मइय० मिच्छत्त-सोलसक० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो चदुगिद्यओ उक्कस्सिटिदिं बंधमाणो कालं गदो समयाविरोहेण तिरिक्ख-णेरइएसु पढमसमयकम्मइय-कायजोगी जादो तस्स उक्क०विहत्ती । मम्मित्त०-सम्मामि० ओरालियमिस्सभंगो । णविर चदुसु गदीसु सम्मत्तं दादव्यं । णवणोक० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो चदुगिद्दिश्रो उक्क०ढिदिं० वंधमाणो कालं गदो जहासंभवं तिरिक्ख-णेरइएसु पढमविद्यसमयउव-

§ ४४६. वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोमें मिध्यात्व और सोलह कपायोकी उत्कृष्ट स्थिति-विभक्ति किसके होती हैं ? जो कोई एक नियंच या मनुष्य उत्कृष्ट स्थितिको बॉध कर मरा और नारिकयोमें उत्पन्न हुआ। उसके उत्पन्न होनेके पहले समयमे उक्त कर्मोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं। सम्पक्त्य और सम्यग्मिध्यात्यका भंग पंचेन्द्रिय तियँच अपर्याप्तकोके समान हैं। नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती हैं ? जो कोई एक नियंच या मनुष्य उत्कृष्ट स्थितिको बॉधकर मरा और नारिकयोंमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होनेके पहले समयसे लेकर एक आवलीप्रमाण कालके भीतर नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं।

§ ४१७. त्राहारककाययोगियोमं सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है १ उत्कृष्ट स्थितियभक्ति कार्वा कार्इ वंदकसम्यग्दिष्ट जीव त्र्याहारककाययोगी हुत्रा उसके पर्याप्त होनेके पहले समयमे सब कर्मोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार त्र्याहारकमिश्रकाययोगी जीवोके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषना है कि आहारकिमिश्रकायथोगके पहले समयमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४१८. कार्मणकाययंगियोमे मिण्यात्व और संालह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती हैं ? उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति वांधनेवाला जो काई चार गतिका जीव मरा और यथानियम तियंच और नारिक्योमे उत्कृष्ट हिंथतिविभक्ति होकर कार्मणकाययोगी हो गया उसके पहले समयमें उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वका मंग औदारिकिमश्रकाययोगियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका चारों गतियोंमे देना चाहिये। अर्थात् उसकी उत्कृष्टिथिति विभक्ति चारों गतियोंमें कार्मणकाययोगियोंके होती है। नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती हैं ? उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति कार्मे एक चारों गतियों वांधनेवाला जो कोई एक चारों गतियोका जीव मरा और यथायोग्य तिर्यंच तथा नारिक्योंमें पहले और दूसरे समयमे उत्पन्न

#### वण्णो तस्स उक्क विहत्ती।

६ ४१६. अवगद० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक० उक्क० कस्स १ अण्ण० जो उक्कस्सिहिद्सितकिम्मिश्रो पढमसमयश्रवगद्वेदो जादो तस्स उक्क० विहत्ती । एवमकसा०-सुहुम०-जहाकखादसंजदे ति ।

ः ४२०. मदि-सुदअण्णा० मिच्छत्त-मोलसक०-एविश्वोक्त० श्रीघर्भगो । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो मिच्छत्त उक्कस्सिटिदि विधिय अंतोम्रहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । पुणो सम्मत्तेण सव्बलहुअमेतोमुहुत्तद्धमिच्छय मिच्छत्तं गदी तस्स पढम-समए उक्क०विहत्ती । एवं विहंग० ।

ं ४२१. त्राभिणि०-सुद्०-त्रोहि० सन्।पयडीणमुक्क० कस्स १ अण्ण० जो मिन्छाइही देवी णेरइत्री वा उक्क॰हिदिं वंधिद्ण हिदिघादमकादृण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स पढमसमयसम्माइहिस्स उक्क० विहत्ती । एवमोहिदंस०-सम्मादि० वेदय०दिहि ति । मणपज्जव० सन्वपयडि० उक्क० कस्स १ अण्ण० वेदय०-दिही उक्कस्सहिदिसंतकम्मित्रो तस्स पढमसमयमणपज्जवणाणिस्स उक्कस्सिहिदि-विहत्ती । एवं संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजदे ति ।

हुआ उसके उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है।

'१६ श्रपगतवेदमे मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, बारह कपाय और नी नोकपायोको उन्कृष्ट स्थितिविभाक्ति किसक होती है १ उन्कृष्ट म्थितिमत्कमेवाला जो कोई जीव श्रपगतवेदवाला हो गया उसके पहले समयम उक्त कमोकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति होतो है। इसी प्रकार श्रकपायी, सूद्भसांपरायिकसंयत और यथास्यातसंयतके जानना चाहिये।

४२० १ मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोमं मिण्यात्व, सोलह कपाय और ना नोक(पायोंकी उन्कृष्ट स्थितिविभक्ति स्रोपके समान है। सम्बत्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उन्कृष्टि स्थितिविभक्ति किमके होती हैं? जो कोई जीव मिण्यात्वकी उत्कृष्टि स्थितिका बाँधकर अन्तर्मु हूर्त कालके द्वारा सम्यक्तवको प्राप्त हुआ। पुनः सम्यक्तवके साथ सबसे लघु अन्तर्मु हुर्त काल तक रह कर मिण्यात्वमे गया उसके पहले समयमे उक्त कर्मोकी उन्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार विभेगज्ञानियोके जानना चाहिये।

§ ४२१ त्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुनज्ञानी त्र्योर अवधिज्ञानी जीवोमें सब प्रकृतियों की उत्कृष्टिस्थिनि विभक्ति किसके होती हैं ? जो कोई भिश्यादृष्टि देव या नारकी जीव उत्कृष्ट स्थितिको वाधकर त्र्योर स्थितिचान न करके त्र्यनमुईदूर्त कालमे सम्यवन्त्रको प्राप्त हुत्रा उस सम्यवद्धि जीवके पहले समयमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं । इसी प्रकार त्र्याधद्यनी, सम्यवदृष्टि त्रीर वेदकसम्यव्दृष्टि जीवोंक जानना चाहिये । मनःप्रययज्ञानी जीवोमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति कि नके होती हैं ? उत्कृष्ट स्थितिस्कर्मवाला जो कोई वेदक सम्यव्दृष्टि जीव है उसके मनःपर्ययज्ञानको प्राप्त होनेके पहले समयमे उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं । इसी प्रकार संयन, समायिकसंयत, छेदापस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत और संयतासंयतके जानना चाहिये ।

§ ४२२. सुक्कले० मिच्छत्त-सोलसक०-एविणोक० उनक० कस्स १ अण्ण० जो मिच्छाइद्दी उक्कस्सिद्धित बंधिय द्विदिघादमकाऊण लेस्सापराविचां गदो तस्स उनक० विहत्ती । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० कस्स० १ अण्ण० जो मिच्छाइद्दी उक्क०दिदिं वंधिय अंतोमुद्दुनेण सम्मत्तं पिडवण्णो । पुणो अंतोमुद्दुनेण लेस्सापराविचां गदो तस्स पढमसमए उन्क०विहत्ती ।

\$ ४२३ - अभिवय० देवोघं । णविर सम्म० सम्मामि० णित्थ । खड्य० बार-सक०-णविर्णोक० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो उक्क० दिदिसंतकिम्मित्रो पदमसमय-खीणदंसणमोहणीत्रो जादो तस्स उक्क० विहत्ती । उवसम० सव्वपयिड० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो उक्क० दिदिसंतकिम्मित्रो पदमसमय उवसंतदंसिणमोहणीत्रो जादो तस्स उक्क० विहत्ती । सासण० सव्वपयिड० उक्क० कस्स ? अण्ण० तस्सव पदम-सम्यसासणं गदस्स तस्स उक्कस्स० विहत्ती । सम्मामि० मिच्छत्त-सोलसक०-णविर्णोक० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो मिच्छा इटी उक्क० दिदं वंधिद्ण दिद्घाद-मकाऊण अंतोमुहुनेण सम्मामिच्छनं पिटवण्णो तस्स उक्क० विहत्ती । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० कस्स ? अण्ण० जो मिच्छत्त उक्कस्सिटिदं वंधिद्ण दिदिघादमकाऊण

<sup>\$</sup> ४२२ शुक्ललंश्यामं मिण्यात्य, सांलह कपाय श्रीर नी नांकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके हाती है ? जां मिण्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट स्थितिका वांधकर श्रीर स्थितिचात न करके लेश्या-परावृत्तिसे शुक्ललंश्याको प्राप्त हुआ है उसके उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। सम्यक्व और सम्यिमण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जां कोई मिण्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट स्थितिको बांध कर अन्तर्मु हूर्त कालके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है। पुनः श्रम्तर्मु हूर्त कालके द्वारा लेश्यापरावृत्तिसे शुक्ललंश्याको प्राप्त हुआ है उसके पहले समयमें उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति हांती ह।

<sup>§</sup> ४२३ अभव्योंके सामान्य देवोंके समान कथन जानना चाहिये। पर इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व और सन्यग्मिण्यात्व कर्म नहीं होते हैं। चायिक सम्यग्दृष्टियोंमें वारह कपाय और नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। उपश्रमसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति होती हैं। उपश्रमसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति होती हैं। उपश्रमसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। इत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सासादन सम्यग्रहृष्ट्योंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सासादन सम्यग्रहृष्ट्योंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सम्यग्मिण्यादृष्ट्योंमें सम्यग्निवभक्ति क्षां और विश्वातिवभक्ति होती हैं। सम्यग्मिण्यादृष्टियोंमें मिण्यात्व, सोलह कपाय और नो नोकापायोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सम्यग्मिण्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति बांधकर और स्थितिघात न करके अन्तर्भु हूर्त कालके द्वारा सम्यग्मिण्यात्वको प्राप्त हुआ है उसके उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति होती हैं। सम्यक्ष्य और सम्यग्मिण्यात्वको उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सम्यक्ष्य और सम्यग्मिण्यात्वको उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सम्यक्ष्य और सम्यग्मिण्यात्वको उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। इत्थातिवभक्ति क्षां करकृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। सम्यक्ष्य और सम्यग्मिण्यात्वको उत्कृष्ट स्थितिवभक्ति किसके होती हैं। इत्थातिवभक्ति क्षां करकृष्ट स्थितिवभक्ति होती हैं। स्थात्विभक्ति क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति किसके होती हैं। स्थात्विभक्ति क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति होती हैं। स्थात्विभक्ति क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति किसके होती हैं। स्थातिवभक्ति क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति किसके होती हैं। स्थात्विभक्ति क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति करकृष्ट स्थातिवभक्ति किसके होती हैं। स्थात्विभक्ति क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति किसके क्षां करकृष्ट स्थातिवभक्ति किसके स्थातिवभक्ति क्षां स्थातिवभक्ति किसके स्थातिवभक्ति स्थातिवभक्त

सम्मत्तं पिडवण्णो सम्मत्तेण सन्वलहुअमद्धमिन्छय हिदिघादमकाऊण सम्मामिन्छत्तं । गदो तस्स पढमसमयसम्मामिन्छादिहिस्स उक्किन्वहत्ती । अणाहारीणं कम्मइयभंगो ।

# एवमुकस्समामित्तं सगत्तं।

## **ॐ एत्तो जहण्णय**ं।

§ ४२४. जहण्णसामिनं भणामि ति सिस्ससंभालणं कदमेदेण सुनोण । तस्स
दुविहो णिदेसो—श्रोघेण श्रादेसेण य चेदि । तत्थ ओघेण परूवणहं जइवसहाइरिश्रो
उत्तरसुनं भणदि—

मिच्छत्तस्म जहण्णद्विदिविहत्ती कस्स ?

§ ४२५ सुगममेदं

# मणुसस्स वा मणुसिणीए वा खिवज्जमाणयमावितयं पविष्ठं जाये
 दुसमचकालिदिवं सेसंताये।

न करके सम्यक्त्वका प्राप्त हुन्ना है। पुनः सम्यक्त्वके साथ अतिलघु काल तक रहकर और स्थिति-घात न करके सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुन्ना है उसके सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके पहले समयमे उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति होती है। अनाहारकोंका कार्मण्काययोगियोंके समान स्वामित्व जानना चाहिये।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुन्त्रा ।

## \* इसके आगे जघन्य स्वामित्वको कहते हैं।

§ ४२४ अब जघन्य स्वामित्वको कहते हैं। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा शिष्योंकी सम्हाल की है। इस जघन्य स्वामित्वकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे आंघके कथन करनेके लिये यतिवृषभ आचार्य आगेका सृत्र कहते हैं—

# मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ?

§ ४२५ यह सूत्र सुगम है।

\* मनुष्य या मनुष्यिनीके उदयाविलमें प्रविष्ट होकर त्त्रयको प्राप्त होता हुआ जो मिथ्यात्व कर्म है उसकी जब दो समय प्रमाण स्थिति शेप रहती है तब जयन्य स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४२६ सूत्रमें मनुष्य ऐसा कहने पर उससे पुरुपवेद और नपुंसकवेदके उदयवाले मनुष्यों का महण होता है। मनुष्यिनी ऐसा कहने पर उससे स्त्रीवेदके उदयवाले मनुष्य जीवोंका महण होता है। जिस प्रकार अप्रशस्त वेदके उदयके साथ मन:पर्ययज्ञानादिकका होना संमव नहीं है ३१ संभवो तहा दंसणमोहणीयक्खवणाए तत्थ किं संभवो अत्थि णत्थि ति संदेहेण घुलंतहियस्स सिस्ससंदेहविण।सणद्दं मणुस्सस्य मणुस्मणीए वा ति भणिदं । खिक्जमाणयं ति बुने मिच्छत्तस्य ग्रहणं, अण्णस्सासंभवादो । आविज्ञयं ति बुने उदयाविलयाए ग्रहणं; मिच्छत्तचिरमफालियाए प्रसक्ष्वेण ग्रदाए उदयाविलयपविद्यणिसेगे मोत्तूण
अण्णेसिमवद्याणाभावादो । एत्थ जमाविलयं पविद्वं खिक्जमाणयं मिच्छत्तं अधिदिगलणाए गलिय जाधे तं दुसमयकालिदियं सेसं ताधे तस्स जहण्णदिदिविहत्ती होदि
ति संबंधो कायव्वो । कथं सुत्तम्मि असंताणं पदाणमञ्भाहारो कीरदे १ ण, सुत्तस्सेव अवयवभूदाणं सुग्रमत्त्रणेण तत्थ अणुचारिज्जमाणाणं तत्थ अभावितरोहादो ।

इसी प्रकार अप्रशस्त वेदके उदयमें दर्शनमोहनीयकी चपणा क्या संभव है या नहीं है इस प्रकार सन्देहसे जिसका हृदय घुल रहा है उस शिष्यके सन्देहको दूर करनेके लिय सूत्रमें 'मणुस्सस्स मणुस्सलीए वा' यह पद कहा है। सूत्रमें 'खिविज्जमाण्यं' ऐसा कहने पर उससे मिथात्वका श्रहण करना चाहिये, यहां अन्यका श्रहण नहीं हो सकता है। सूत्रमें 'आविलयं' ऐसा कहने पर उससे उदयाविलका श्रहण करना चाहिये, क्योंकि मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके पररूपसे संक्रमित हो जाने पर उदयाविलमें प्रविष्ट हुए निपेकोंको छोड़कर अन्य निपेकोंका सद्भाव नहीं पाया जाता है। यहाँ पर जो उदयाविलमें प्रविष्ट होकर चयको प्राप्त होनेवाला मिथ्यात्व कर्म है वह अधःस्थिति-गलना रूपसे गलित होकर जब दो समय काल स्थितिप्रमाण शेप रहता है तब उसकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है ऐसा सम्बन्ध कर नेना चाहिये।

शंका-जो पर सूत्रमें नहीं है उनका अध्याहार कैसे किया जा सकता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि जो सूत्रके ही अवयवभूत हैं पर मुगम होनेसे जिनका वहां उचारण नहीं किया है उनका अस्तिस्त्र यदि वहाँ नहीं स्वीकार किया जाता है तो विरोध आता है।

विशेपार्थ-यद्यपि ऐसा नियम है कि स्त्रीवेदवाले और नपुंसकवेदवाले मनुष्यके मनःपर्ययक्षान, परिहारिवशुद्धिसंयम, आहारककाययोग और आहारकिमिश्रकाययोगकी प्राप्ति नहीं
होती फिर भी चायिकसम्यक्त्व और चायिकचारित्रकी प्राप्ति तीनों वेदोंके रहते हुए हो सकती
है, इसी बातका झान करानेके लिए सूत्रमे मनुष्य और मनुष्यिनी इन दानों पदोंका प्रहण किया
है। यहां मनुष्य एरसे पुरुपत्रेदी और नपुंसकवेदी मनुष्योंका प्रहण करना चाहिये और मनुष्यिनी
पदसे स्त्रीवेदी मनुष्योंका प्रहण करना चाहिये। इस प्रकार जब इन तीन वेदवालों मेंसे कोई एक
वेदवाला मनुष्य दर्शनमोहनीयकी चपणा करता हुआ मिण्यात्वकी प्रथम स्थितिमें स्थित उदयाविलप्रमाण निषेकोंको गलाता हुआ अन्तमें हो समय स्थितिवाला एक निषेक शेप रखता है तब उसके
मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति होती है। मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिके प्रतिपादक उक्त चूर्णिसूत्रका
समुदायार्थ कहते समय वीरसेन स्वामीने 'अधिट्ठिदिगलणाए गलिय' इतना पद और जोड़ा है। इस
पर शंकाकारका कहना है कि ये पद पूर्ववर्ती सूत्रोंमें तो पाये नहीं जाते, अतः यहां इनका अध्याहार
कैसे किया जा सकता है, क्योंकि अध्याहार तो उन्हीं पदोंका होता है जो पूर्ववर्ती सूत्रोंमें
आ चुके हैं। इस शंकाका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका सार यह है कि कोई
पद यदि पूर्ववर्ती सूत्रोंमें न आया हो तो भी उसका अध्याहार करनेमें कोई आपित्त नहीं, क्योंकि

## 🟶 सम्मत्तस्य जहण्णद्विदिविहत्ती कस्स ?

🛭 ४२७. सुगममेदं ।

#### **\* चरिमसमयअक्लीणदं सण्मोहणीयस्स |**

\$ ४२८. चरिमसमय अन्स्वीण सम्मत्तसं ति वत्तव्वं तेणेत्थ श्रहियारादो ण चरिमसमय अन्स्वीण दंसणमीहणीयस्से ति १ ण एस दोसी, मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ते खइय पच्छा सम्मत्तं खिवज्जिदि ति कम्माण क्यवणकमजाणावण हुः चरिमसमय- अन्स्वीण दंसणमीहणीयस्से ति णिहेसादो । मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तेसु कं पुव्वं खिवज्जिदि १ मिच्छत्तं । कुदो, अच्चसहत्तादो । असुहस्स कम्मस्स पुव्वं चेव खवणं होदि ति कुदो णव्वदे १ सम्मत्तस्स लोहसं जलसस्स य पच्छा स्वयण्णहाणुवत्तीदो ।

एसा कोई नियम नहीं है कि जो पद पूर्ववर्ती सूत्रोमे आये हो उन्हींका केवल अध्याहार किया जा सकता है । किन्तु सरल होनेसे जो पद सूत्रमें नहीं कहं गये हों पर जिनके कथन करनेसे अर्थ बोधमे सुगमता जाती हो ऐसे पदोंका उपरसे भी जोड़ा जा सकता है, क्योंकि अध्याहारका अर्थ भी यही है कि जिम वाक्यका अर्थ अस्पष्ट हो उसे शहरान्तरकी कल्पना द्वारा स्पष्ट कर देना चाहिये। अब यदि ऐसे पद पूर्ववर्ती सूत्रोंमे मिल जाते हैं तो अच्छा ही है और यदि नहीं मिलते हैं तो कल्पनाद्वारा उन्हें उपरसे भी जोड़ा जा सकता है।

अ सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती हैं ?

६ ४२७ यह सूत्र सुगम है।

\* जिसने दर्शनमोहनीयका त्तय नहीं किया है ऐसे जीवके दर्शनमोहनीयके क्षय होनेके अन्तिम समयमें सम्यक्तकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४२५ शंका—सूत्रमं 'जिसने दर्शनमोहनीयका चय नहीं किया है ऐसे जीवके अन्तिम
समयमें' यह न कहकर 'जिसने सम्यक्त्वका चय नहीं किया है ऐसे जीवके अन्तिम समयमें' ऐसा
कहना चाहिये, क्योंकि सम्यक्त्वका यहां अधिकार हैं ?

समाधान—यह कोई दोव नहीं है, क्योंकि मिध्यात श्रौर सम्यग्मिध्यात्वको चय करके अनन्तर सम्बद्ध का चय करता है इस प्रकार कर्मीके चपणके क्रमका झान करनेके लिये 'जिसने दर्शन मोहनीयका चय नहीं किया है ऐसे जीवके श्रन्तिम समयमे' यह कहा है।

शंका-मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वमं पहले किसका त्तर होता है ?

समाधान-पहले मिथ्यात्वका च्य होता है।

शंका-पहले मिध्यात्वका चय किस कारणसे होता है ?

समाधान-क्योंकि मिथ्यात्व अत्यन्त अशुभ प्रकृति है।

शंका-अञ्चभ कर्मका पहले ही चय होता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-श्रन्यथा सम्यक्त्व श्रीर लोभ संज्वलनका पश्चात् चय वन नहीं सकता है, इस प्रमाणसे जाना जाता है कि श्रशुभ कर्मका चय पहले होता है।

- \* सम्मामिच्छत्तस्स जहरणिहिदिविहत्ती कस्स ?
- § ४२६ सुगममेदं।
- \* सम्माभिच्छत्तं खविज्जमाणं वा उव्वेल्लिज्जमाणं वा जस्स दुसमय-कालिद्दियं सेसं तस्स ।

§ ४३०. खर्वेतस्स वा उच्वेन्लंतस्स वा जस्स दुसमयकालिहिदियं सम्मामिच्छत्तं सेसं तस्सेव जीवस्स जहण्णसामित्तं होदि ति वयणेण संससम्मामिच्छत्तसंतकिम्मयाणं पिंडसेहो कदो । एवकारेण विणा कथमेसो णियमो अवगम्मदे १ ण एस दोसो, एवकाराभावे वि तदहो तत्थ अत्थि ति सावहारणअवगमुष्पत्तीए विरोहाभाषादो । एगसमयकालिहिदियमिदि किण्ण वृचदे १ ए, उद्याभावेण उदयणिसेयिहिदी परसह्वेण गदाए विदियणिसेयस्स दुसमयकालिहिदियस्स एगसमयावहाणिविरोहादो । विदियणिसेयो सम्मामिच्छत्तसह्वेण एगसमयं चेव अच्छिद उवरिमसमए मिच्छत्तस्स सम्मत्तस्स वा उदयणिसेयसह्वेण परिणामुवलंभादो । तदो एयसमयकालिहिदिसेसं

ॐ जिसके चयको प्राप्त होते हुए व उद्दे लन।को प्राप्त होते हुए सम्यग्मिथ्यात्वकी दो समय काल प्रमाण स्थिति शेष रहती है उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति-विभक्ति होती है ।

शंडा-एवकारके बिना यह नियम कैमे जाना जाता है ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं, क्योंकि एवकारके नहीं रहने पर भी एवकार शब्दका अर्थ सूत्रमें अन्तर्निहित है इसलिये अवधारण सहित अर्थके ज्ञानके हानेमें कोई विरोध नहीं आता है।

शंका-सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति एक समय काल प्रमाण क्यों नहीं कही जाती है।

समाधान—नहीं, क्योंकि जिस प्रकृतिका उदय नहीं होता उसकी उदय निपेकिस्थिति उपान्त्य समयमें पररूपसे संक्रमित हो जाती है अतः दो समय कालप्रमाण स्थितिवाले दूसरे निपेककी जधन्य स्थिति एक समय प्रमाण माननेमें विरोध आता है।

शंका—सम्यग्मिश्यात्वका दूसरा निषेक सम्यग्मिश्यात्व रूपसे एक समय काल तक ही रहता है, क्योंकि अगले समयमें उसका मिश्यात्व या सम्यक्त्वके उदय निषेकरूपसे परिणमन पाया जाता है अतः सुत्रमें 'दुसमयकालद्विदिसेसं' के स्थान पर 'एक समयकालद्विदिसेसं' ऐसा कहना चाहिये ?

<sup>\*</sup> सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ?

<sup>§</sup> ४२६ यह सूत्र सुगम है।

ति वत्तव्वं १ रण, एगसमयकालिहिदिए णिसेगे संते विदियसमए चेव तस्स णिसेगस्स अदिण्णफलस्स अकम्मसरूवेण परिणामप्पसंगादो । ण च कम्मं सगसरूवेण परसरूवेण वा अदत्तफलमकम्मभावं गच्छिद, विरोहादो । एगसमयं सगसरूवेणिच्छिय विदियसमए परपयिहसरूवेणिच्छिय तिदियसमए परपयिहसरूवेणिच्छिय तिदियसमए अकम्मभावं गच्छिदि ति दसमयकालिहिदिणिदेसो कदो।

अणंताणुवंधीणं जहण्णादिदिविहत्ती कस्स ?

९४३१ सुगममेदं।

🛷 । 🛞 भ्रांताणुबंधी जेण विसंजोइदं त्रावित्यं पविद्वं दुसमयकालिंदिगं सेसं तस्स ।

समाधान—नहीं, क्यों कि इस निपंकको यदि एक समय काल प्रमाण स्थितिवाला मान लेते हैं तो दूसरे ही समयमें उसे फल न देकर अकर्मरूपमें परिणमन करनेका प्रसंग प्राप्त होता है। आंर कर्म स्वरूपसे या परस्वसे फल बिना दिये अकर्मभावको प्राप्त होते नहीं, क्यों कि ऐसा माननेमें विरोध आता है। किन्तु अनुदय रूप प्रकृतियों के प्रत्येक निपक एक समय तक स्वरूपसे रहकर और दूसरे समयमें पर प्रकृतिरूपसे रहकर तीसरे समयमें अकर्मभावको प्राप्त होते हैं ऐसा नियम है अनः सूत्रमें दो समय कालप्रमाण स्थितिका निर्देश किया है।

विशेषार्थ—यहां यह शंका उठाई गई है कि जिस कर्मका स्वोदयसे त्तय नहीं होता उसका श्रान्तिम निषेक उपान्त्य समयमें ही पर प्रकृतिरूप हो जाता है, श्रातः अनुद्रयुरूप प्रकृतिकी जवन्य स्थित एक समय ही कहनी चाहिये। इस शंकाका बीरसेन स्थामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यदापि एसा निषंक उपान्त्य समयमें ही परप्रकृतिरूप हो जाता है पर वह कर्मरूपसे दो समय तक रहता है और तीसरे समयमें ही श्रकम्भावका प्राप्त होता है, श्रातः उस निषंककी जवन्य स्थिति दो समय कहना ही श्रुक्त है। यदि उसकी स्थिति एक समय मानी जाती है तो दूसरे समयमें विना फल दिये उसे अकर्मरूप हो जाना चाहिये। पर ऐसा होता नहीं, क्योंकि कोई भी कर्म फल दिये विना श्रक्त में सकता। इसलिये यही निश्चित होता है कि जो निषंक जितने काल तक कर्मरूपसे रहता है उसकी उतनी स्थिति होती है। स्थितिका विचार करते समय यह नहीं देखा जाता कि वह श्रमुक समयमें श्रन्य प्रकृतिरूप होनेवाला है इसलिये इसकी स्थिति श्रन्य प्रकृतिरूप होनेवाला है इसलिये इसकी स्थिति श्रन्य प्रकृतिरूप होनेवे जितनी स्थिति कही जाती है उस समय उस कर्मरूप परणमें निषंकोंके सद्भावकालको देख कर ही वह स्थिति कही जाती है। श्रव यदि वे निषंक उसी समय या श्रन्य सन्यमें श्रन्य प्रकृतिरूप होते हों तो हो जायं, इससे उस कर्मकी स्थितिका कथन करनेमें कोई बाधा नहीं श्राती।

अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? § ४३१ यह सूत्र मुगम है ।

\* जिसने मनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर दी है और तदनन्तर उदयावलीमें प्रविष्ट होकर जब उसकी दो समय काल प्रमाण स्थिति शेप रहती है तब उसकी ज्ञान्य स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४३२. अणंताणुवंधी जेण खितदं ति अभिणिय जेण विसंजोइदं ति किमदं वुचदं १ ण, जस्स कम्मस्स परसरूवेण गयस्स पुणरूपपत्ती णित्थ तस्स कम्मस्स विणासो खवणा णाम । ण च अणंताणुवंधीणमहकसायाणं व पुणरूपपत्ती णित्थः पुणो वि परिणामवसेण सासणादिसु वंधुवलंभादो । तम्हा अणंताणुवंधी जेण विसंजोइदं ति सुहासियमेदंः तस्स पुणरूपपत्तिजाणावणद्वं परूविदत्तादो । जिद् अणंताणुवंधिचउक्कं विसंजोइदं तो तेण जीवेण अणंताणुवंधिचउक्कं पिह णिस्संतकम्मेण होद्व्वं ण तत्थ जहण्णसामित्तस्स संभवोः अभावे भाविवरोहादो ति? ण एस दोसो, चरिमिहिदिखंडय-चित्मफालियाए परसरूवेण गदाए समाणिदअणियहिकरणस्स विसंजोइदत्ताविरोहादो। अणंताणुवंधिकम्मक्खंधे सेसकसायमरूवेण परिणामेतिओ विसंजोएंतओ णाम । ण च एवंविहा विसंजोयणा आवलियपविद्वणिसेयाणमित्थः तेसि संक्रमाभावादो । तम्हा अणंताणुवंधी जेण विसंजोइदं ति सुहासियमेदं । जसुद्यावित्यपविद्वमणंताणुवंधिचउक्क-मंतकम्मं तं जाधे दुसमयकालिदिदां सेमं ताधे तस्स जहण्णदिदिविहत्ती ।

\$ ४३२ शंका—सूत्रमें 'जिसने अनन्तानुबन्धीका चय कर दिया है' ऐसा न कह कर 'जिसने उसकी विसंयोजना कर दी है' ऐसा किसलिये कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि पररूपसे प्राप्त हुए जिस कर्मको पुनः उत्पत्ति नहीं होती है उस कर्मके विनाशको चपणा कहते हैं। पर जिस प्रकार आठ कपायोंकी पुनः उत्पत्ति नहीं होती उस प्रकार चार अनन्तानुबन्धांकी पुनः उत्पत्ति नहीं होती यह बात तो है नहीं किन्तु परिणामोंके बशसे सासनादिकमें इसका पुनः बन्ध पाया जाना है अतः जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर दी है यह सूत्रमें उचित कहा है क्योंकि उसकी पुनः उत्पत्तिका ज्ञान करानेके लिये एसा कथन किया है।

शंका—यदि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना हो गई तो उस जीव को अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेद्या कर्मरहित हो जाना चाहिये, अतः ऐसे जीवके जघन्य स्वामित्व संसव नहीं है, क्यों कि अभावमें भावके माननेमें विरोध आता है ?

समाधान—यह कोई दोप नहीं है, क्यों कि अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पर-रूप से प्राप्त हो जानेपर अनिवृत्तिकरणको प्राप्त हुए जीवके अनन्तानुबन्धीको विसंयोजित माननेमें कोई विरोध नहीं आता है। अनन्तानुबन्धीके कर्मस्कन्धों को रोप कपायरूप से परिमानेवाला जीव विसंयोजिक कहलाता है। पर इस प्रकारको विसंयोजिता आवली प्रविष्ट कर्मों की तो होती नहीं, क्यों कि उनका संक्रमण नहीं होता है, अतः सूत्रमें 'जिसने अनन्तानुबन्धीको विसंयोजिता कर दी हैं यह योग्य कहा है। जो उदयाविलमें प्रविष्ट अनन्तानुबन्धी चतुष्क सत्कर्म है वह जिससमय दो समय स्थितिप्रमाण शेप रहता है तब उसकी जधन्य स्थितिवभक्ति होती है।

विशेषार्थ-यहां विसंयोजना और चपणामें अन्तर बतलाते हुए यह लिखा है कि पर प्रकृतिरूपसे संक्रमणको प्राप्त हुए जिस कर्मकी पुनः उत्पत्ति नहीं होती उस कर्मके विनाशका नाम चपणा है और जिस कर्मकी पुनः उत्पत्ति हो सकती है उस कर्मके विनाशका नाम विसंयोजना है

सो इसका यह तातर्य है कि जो कर्म स्वोदयसे चयको नहीं प्राप्त होते हैं उनके द्वितीय स्थितिमें स्थित कर्मपुंजका उस समय वंधनेवाली अपनी सजानीय प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता रहता है ऋौर जो कर्मपुंज उद्यावलिमें स्थित है उसके प्रत्येक ऋन्तिम निपंकका स्तिवक संक्रमणुके द्वारा उपान्त्य समयमें उदयगत सजातीय प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता रहता है आर इस प्रकार उस कर्मकी चपणा होती है। चपणाका यह लच्चण परादयसे जिन प्रकृतियोंका चय होता है उनके क्षयमें ही घटित होता है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी चपणा भी इस लच्छमें आ जाती है किर भी उसके चयको चपणा न कहकर विसंयोजना इसलिये कहा है, क्योंकि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी यद्यपि इस प्रकारसे चपणाहो जाती है फिर भी परिणामोंके वक्ससे सासादन श्रीर मिण्यात्व गुणुस्थानमें उसकी पुनः उत्पत्ति देग्वी जानी है। श्रव यहां थोड़ा इस वातका विचार कर लेना भी आवश्यक है कि जिस जीवने अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर ली है ऐसा जीव क्या सासादन गुएस्थानको भी प्राप्त हो सकता है ? जिस जीवने त्र्यनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है किन्तु केवल दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंकी उपशमना की है ऐसा प्रथमापशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादन गुणस्थानको प्राप्त होता है इसमे किसीको विवाद नहीं। हां जिस वेदकसम्यग्दष्टिने अनन्तानवर्त्या चतुरक्की विसंयोजना करके दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंकी उपरामना की है ऐसा द्वितीयोपशमसम्यग्द्रष्टि जीव उपरामश्रेणीसे च्युत होकर सासादन गुणम्यानको प्राप्त हो सकता है इसमें अवश्य विवाद है। धवला बन्धसामित्त विचयखण्डमें बतलाया है कि जिस जीवने अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना की है ऐसा जीव यदि मिथ्यात्व में आता है तो उसके एक आवलिकाल तक अनन्तानबन्धी चतुष्कमेंसे किसी एक प्रकृतिका उदय नहीं होता है। इसका यह अभिप्राय है कि ऐसा जीव यदि मिध्यात्वमे आता है तो उसके पहले समयसे ही यदापि अनन्तानवन्धी चतुष्कका बन्ध होने लगता है और अन्य प्रकृतियोंका असन्तानुबन्धी रूपसे संक्रमण होने लगता है किन्तु बन्धाविल आरे संक्रमाविल करणोंके अयोग्य होती है इस नियमके अनुसार एक आविल बालतक न तो वंधे हुए कर्मीका ही उदय हो सकता है ज्योर न बन्धके साथ संक्रमको प्राप्त हुए कर्मीका ही एक आवलि काल तक उदय हो सकता है। जब मिथ्यात्व गुणस्थानकी यह स्थिति है तब ऐसा जीव सासादन गुणस्थानको कैमे प्राप्त कर सकता है, क्योंकि सासादन गुणस्थान अनन्तान्त्रन्थी चतुष्कमसे किसी एक प्रकृतिकी उदीरणा हुए विना होता नहीं । पर जब अनन्तानुबन्धीका सत्त्व ही नहीं और बन्धके विना अन्य प्रकृतियाँ अनन्तानुबन्धीरूपसे संक्रमणको नहीं प्राप्त हो सकती तथा अनन्तानुबन्धी का वन्ध मिध्यात्व ऋौर सासादन प्राप्त किये बिना हो नहीं सकता। कदाचित् यह मान लिया जाय कि जिस समय ऐसा जीव सासादनको प्राप्त हो उसी समय अनन्तानुबन्धीका बन्ध होने लगे और शेव कपाय और नोकपाय अनन्तानुबन्धीरूपसे संक्रमित होकर उदीरणाको प्राप्त हो जायं तो ऐसे जीवके भी सासादन गुणस्थान वन जायगा सो भी वात नहीं है, क्योंकि जैसा कि हम पहले बनला आये हैं कि इस नियमके अनुसार संक्रमित कर्मपुंज भी एक आ्वलिके परचात् ही उदीरित हो सकता है। त्रातः यह सिद्ध हुत्रा कि पडखण्डागमके श्राभिप्रायानसार ऐसा जीव सासादन गुणस्थानको नहीं प्राप्त होता है। स्वेताम्बरोंके यहां प्रमिद्ध कर्म प्रकृतिमें बतलाया है कि ऐसा जीव सासादन गुणस्थानको भी प्राप्त होता है। पर इसकी टीकामें इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है कि जिन ज्ञाचार्यों के मतसे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उपशमना होती है उनके मनानुसार उपशमश्रेणीसे च्युत हुआ जीव सासादन गुणस्थानको भी प्राप्त होता है। टीकाकारने मुलका इस प्रकार ऋर्थ विठलाया है। किन्तु मुलकारका यही अभिशाय रहा होगा यह कहना जरा कठिन है क्योंकि सी कर्मप्रकृतिके प्रकृतिस्थान संक्रम नामक प्रकरणको देखनेसे मालूम

# अद्वण्हं कसायाणं जहण्णिद्विदिवहत्ती कस्म ? ४३३ सुगममेदं।

अद्वक्तसायक्खवयस्य दुसमयकालिदियस्य तस्स ।

§ ४३४ हिंदी णिसेओ ति एयद्दो, दुसमयो कालो जिस्से सा दुसमयकाला, दुसमयकालिटदी जस्स अहकसायक्ष्ववयस्स सा दुसमयकालिटदियस्स अहकसायाणं जहण्णिदिदिविहत्ती । चारित्तमोहक्षववणाए अब्भुद्दिय अधापवत्तकरण-अप्पुव्वकरण-द्वाओ जहाविदिविसिद्दाओ परिवाडीए गमिय अणियद्दिकरणं पविसिय दिदिअणुभाग-पदेसाणं बहुवाणं घादं काद्ण अणियदिअद्धाए संखे०भागे गदे अहकसायाणं खवण-माहिवय आहत्तपटमसमयादो असंखेज्जगुणाए सेटीए कम्मण्पदेसक्खंधे गाल्यंतेण

होता है कि जिस जीवने अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना की है ऐसा जीव भी सासादन गुणस्थानको प्राप्त हो सकता है। वहां वतलाया है कि इक्कीस प्रकृतिक संक्रमस्थानका इक्कीस प्रकृतिक पत्द्रप्रहमें भी संक्रमण हाता है। विचार करके देखनेसे यह स्थिति सासादन गुणस्थानमें ही प्राप्त होती है, अन्यत्र नहीं, क्योंकि मोहनीयका इक्कीस प्रकृतिक बन्ध सासादनमें ही होता है, अतः यह निश्चित हुआ कि जिस जीवने अनन्तावन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर ली है ऐसा जीव जब सासादनको प्राप्त होता है तब उसके एक आविलकाल तक अनन्तानुबन्धी चतुष्कका संक्रमण नहीं होता है। परन्तु जो बारह कपाय और नो नोकपाय अनन्तानुबन्धीस्पसे संक्रमित होती हैं, उनकी पहले समयसे ही उदीरणा होने लगती है। इस व्यवस्थाको मानलेनेपर संक्रमाविल सकल करणोंके अयोग्य हे यह बात नहीं रहती हैं? कर्मप्रकृतिका यह विवेचन कपायप्राभृतके विवेचनसे मिलता हुआ है। अतः चूर्णिसूत्रकारने भी अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना किये हुए जीवके दूसरे गुणस्थानमें जाने का विधान किया है।

\* अगठ कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ?

§ ४३३ यह सुत्र सुगम है।

अत्राठ कपायोंका त्तय करनेवाले जिस क्षपक जीवके दो समय कालप्रमाण स्थिति शेष रह गई है उसके उनकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४३४ स्थिति श्रोर निपेक ये दोनों एकार्थवाची शब्द हैं। जिस स्थितिको दो समय काल है उसको दो समय कालवाली स्थिति कहते हैं। श्राठ कपायोंकी चपणा करनेवाले जिस जीवके दो समय कालप्रमाण स्थिति होती हैं वह दो समय काल प्रमाण स्थितिवाला कहलाता है। उसके श्राठ कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है।

कोई जीव जिसने चारित्रमोहनीयकी चपणाका प्रारम्भ किया श्रान्तर जिसने जिसकी जैसी विशेषता बतलाई है उसके अनुसार श्राधः प्रवृत्तकरण श्रोर अपूर्वकरणके कालको क्रमसे व्यतीत करके श्रानिवृत्तिकरणमें प्रवेश किया श्रोर वहां बहुतसी स्थिति, श्रानुभाग श्रोर प्रदेशोंका घात करके श्रानिवृत्तिकरणके संख्यातवें भाग कालके ब्यतीत होने पर आठ कषायोंके च्यका प्रारम्भ करनेके प्रथम समयसे लेकर

संखेज्जिहिदि-अणुभागखंडयसहस्साणि पादिदाणि । एवं पादिय अहकसायाणं चरिम-हिदिअणुभागकंडयाणि घेत्रुमाढत्ताणि । तेसिं चरमफालीसु णिविदिदासु उदया-विव्यव्भंतरे समयुणाविष्ठयमेत्ता णिसेया लव्मंति;उदयाभावेण पढमणिसेयस्स परसक्त्रेण गद्स्स अहकसायसक्त्रेण अभावादो । तेसु णिसेगेसु जहाकमेण अश्वहिदीए गलमाणेसु जाघे जस्स एया हिदी दुसमयकाला सेसा ताघे तस्स जहण्णहिदिविहत्ती; होदि ति घेत्तव्यं । एसो पिंडत्थो ।

- \* कोधसंजलणस्य जहण्णहिदिविहत्ती कस्स १
- ६ ४३५. सुगममेदं।
- खवयस्स चरिमसमयअणिल्लेविदे कोइसंजङ्गे।
- ६ ४३६. खवयस्से ति ण वत्तव्वं, पहिसेज्भाभावादो । णोवसामय-पहिसेहहं; तस्म कोहसंजलणस्म णिल्लेवत्ताभावादो । तम्हा चिरमसमयअणिल्लेविदे कोहमंजलणे ति एत्तियं चेव वत्तव्वं ? ण एस दोसो, कोहसंजलणस्स णिल्लेवस्रो खबओ चेव ए उवसामस्रो ति जाणावणहं खबयस्मे ति णिदेसादो । ए। च सुत्तमंतरेण

असंख्यातगुणी श्रेणीके द्वारा कर्मप्रदेशस्कन्धाका गालन करता हुआ हजारों स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकों का पतन किया। इस प्रकार हजारों काण्डकोंका पतन करके आठ कपायोंके अनित्म स्थिति और अनुभाग काण्डकोंक घात करने का प्रारम्भ किया और इस प्रकार उनकी अनित्म फालियोंका पतन हो जाने पर उद्यावलिक भीत्र एक समय कम आवली प्रमाण निपेक प्राप्त होते हैं, क्योंकि उदय न होनेके कारण प्रथम निपेक परम्कृतिस्व हो जाता है अतः उसका आठ कपायस्व्यसे अभाव हो जाता है। अनन्तर उन उद्यावलीमें प्रविष्ट निपेकोंका यथा कमसे अधःस्थितिक द्वारा गलन होते हुए जिस समय एक स्थिति दो समय कालप्रमाण रोप रहती है उस समय उसके जयन्य स्थितिविभक्ति होती है ऐसा यहाँ प्रदृण करना चाहिये। यह उक्त सूत्रका समुदायार्थ है।

\* क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ?

§ ४३५. यह सूत्र सुगम है।

\* क्रोधसंज्वलनकी सत्त्वच्युच्छितिके अनितम समयमें विद्यमान त्तपक जीवके क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभिक्त होती है।

§ ४३६. शंका—सूत्रमें 'त्तपकके' यह नहीं कहना चाहिये, क्योंकि प्रतिषेध करने योग्य कोई खोर दूसरा नहीं है। यदि कहा जाय कि उपशामकका प्रतिषेध करनेके लिये उक्त पद दिया है सा भी बात नहीं है, क्योंकि उपशामकके कोधसंज्यलनका ऋभाव नहीं होता है। अतः 'चरिमसमयऋष्णिस्लेविदे कोहसंजलएं' इतना ही कहना चाहिये ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि कोधसंज्वलनका अभाव करनेवाला चपक ही होता है उपशामक नहीं। इस बातका ज्ञान करानेके लिये सूत्रमें 'ख़बयस्स' पदका निर्देश किया एसौ अत्थो णव्यदेः तहाणुवलंभादो । चिरमसमयअणिल्लेविदस्सेवे ति किमदं बुचदे ? ण, दुचिरिमादिसमएस वंधिदिदीणं गालणद्वं तदुत्तीदो । कोहसंजलणं चिरमसमयअणिल्लेविदे संते जो खबओ ताए अवत्थाण वद्दमाणो तस्स जहण्णदिदिविहत्ती होदि ति संबंधो कायव्वो । वे मासा अंतोमुहुत्तूणा ति जहण्णदिदिवमाणमेत्थ किण्ण पक्षविदं ? णः जहण्णदिदिअद्धाच्छेदे पक्षविदस्स पक्षवणाए फलाभावादो ।

#### **\* एवं माण-मायासंजलणाणं ।**

§ ४३७. जहा कोहसंजलणस्स जहण्णसामित्तं वुत्तं तहा माणमायासंजलणाणं वत्तव्वं । चरिमसमयत्राणिल्लेविदे माणसंजलणे जो खबत्रो तस्स माणसंजलणनहण्णहिदिविहत्ती । चरिमसमयत्र्राणिल्लेविदे मायासंजलणे जो खबत्रो तस्स मायासंजलणजहण्णहिदिविहत्ति ति भणिदं होदि । अंतोम्रहुत्तू ग्रामासद्धमासहिदिषमाणपरूबणा
एत्थ ण कायव्वा । इदो ? श्रद्धाच्छेदपरूवणाए तत्थ वावारादो ।

हैं। परन्तु सूत्रके बिना यह श्रर्थ जाना नहीं जाना है, क्योंकि सूत्रके बिना इस प्रकारके ऋर्यका क्रान होना शक्य नहीं।

शंका-सृत्रमें 'चरिमसमयत्र्याण्लिविदस्स' यह किसलिये कहा है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि द्विचरम आदि समयोंमें बन्धस्थितियोंके गालन करनेके लिये 'चरिमसमयऋणिल्लेबिदस्स' यह पद कहा है।

क्रोधसंज्वलनकी सत्त्वव्युच्छित्तिके अन्तिम समयके प्राप्त हानेपर जो चपक उस अवस्थामें विद्यमान है उसके जवन्य स्थितिविभक्ति होती है इस प्रकार उक्त सूत्रका सम्बन्ध करना चाहिये।

शंका-यहाँ पर जघन्य स्थितिका प्रमाण ऋन्तमु हिर्त कम दो महीना है ऐसा क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि जबन्य स्थितिके प्रमाणका जबन्य स्थिति अह।च्छेद प्रकरणमे कथन कर आये हैं, अतः यहाँ उसका पुनः कथन करनेसे काई लाभ नहीं है।

\* इसी प्रकार उस द्वापकके संज्वलन मान और संज्वलन मायाकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है ?

§ ४३७. जिस प्रकार क्रोधसंज्यलनका जघन्य स्वामित्व कहा है उसी प्रकार मान स्रोर माया सञ्चलनका जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये। जो चपक मान संज्यलनकी सत्त्वव्युच्छित्तिक स्रान्तिम समयमें विद्यमान है उसके मान संज्यलनकी जघन्य स्थिति विभक्ति होती है। तथा जो चपक मायासंज्यलनकी सत्त्वव्युच्छित्तिके अन्तिम समयमें विद्यमान है उसके माया संज्यलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है, यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है।

यहाँ पर मानसंज्वलनकी अन्तर्म हूर्त कम एक महीना और मायासंज्वलनकी अन्तर्म हूर्त कम स्राधा महीना प्रमाण स्थितिका कथन नहीं करना चाहिये, क्योंकि उसे अद्धाच्छेदकी शरूपणा-में बतला आये हैं।

- श्रेहसंजलणस्स जहण्णिद्विदिचिह्ती कस्स ?
   १४३८. सगमपेदं।
- # खवयस्स चरिमसमयसकसायस्स ।

§ ४२९. दुचरिमादिसमयपिडसेहरों चरिमसमयसकसायणिहें सो । किमहं तप्पिडसेही कीरदे ? दोतिष्णिआदिणिसेगेसु हिदेसु जहण्णहिदिविहत्ती ण होदि ति जाणावणहं । चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स अधिहिदिगलाणाए गालिददुचरिमाहि-णिसेयस्स हिदिकंडयदादेण घादिद।सेसउवरिमहिदिणिसेयस्स एगोदयणिसेगे वद्टमाणस्स जहण्णहिदिविहत्ति ति भणिदं होदि ।

- \* इत्थिवेदस्स जहण्णिहिदिविहत्ती कस्स ?
  - ६ ४४०. सुगमं० ।
- चरिमसमयइत्थिवेदोद्यखवयस्स ।
  - ९ ४४१<sub>.</sub> दुचरिमसमयसर्वेदो किण्ण जहण्णहिदिसामिओ १ ण, पढमहिदीए
- लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ?
- ्रिश्नः. यह सूत्र सुगम है।
- \* कपायसहित चपक जीवके अन्तिम समयमें लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थिति-विभक्ति होती है।

९ ४३६. द्विचरमसमय आदिका निषेध करनेके लिये सूत्रमें 'चरिमसमयसकसायस्स' पदका निर्देश किया है।

शंका-द्विचरमसमय आदिका निपेध किसलिये किया है ?

समाधान-दो, तीन आदि निपेकोंके स्थित रहनेपर जघन्य स्थितिविभक्ति नहीं होती हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये द्विचरमसमय आदिका निपेध किया है।

जिसने द्विचरम आ द निपेकोंको श्रधःस्थिति गलनाके द्वारा गालित कर दिया है, जिसने स्थितिकाण्डकघातके द्वारा ऊप्रके समस्त स्थितिनिपेकोंका यात कर दिया है और जो एक उदय-रूप निपेकमें विद्यमान है उस सूद्रमसांपराधिकसंयत जीवके अन्तिम समयमें जघन्य स्थिति-विमक्ति होती है यह उक्त सूत्रका अभियाय है।

- \* स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होतीहै ?
- § ४४०. यह सूत्र सुगम है।
- चपक जीवके स्त्रीवेदके उदयके अन्तिम समयमें स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति-विभिक्त होती है।
- ुँ ४४२. **शंका**—द्विचरम समयवाला सवेद जीव जवन्य स्थितिका स्वामी क्यों नहीं होता है ?

दोण्हिमित्थिवेदिणिसेयाणं विदियिदिदीए वि पिलदोवमस्स असंखेज्जिदिमागमेत्त-णिसेयाणं चित्रमफालिसरूवेण श्रविद्वाणं तत्थुवलंभादो । श्रण्णवेदोदयक्खवयस्स जहण्णसामिनं किण्ण दिज्जदे ? ण, उदयाभावेण पढमिदिदिविरिहयस्स विदियिदिदीए चेव अविद्वदस्स पिलदो० श्रसंखेज्जिदिभागमेत्तिणिसेगेस इत्थिवेदस्स चित्रमफालीए अवद्वाणुवलंभादो । एगाए णिसंगिदिदीए उदयगदाए सुद्धपुच्युत्तरासेसिणिसेगाए वद्द-माणो जहण्णदिदिसामि ति भणिदं होदि ।

- # पुरिसवेदस्स जहण्णहिदिविहत्ती कस्स ?
- § ४४२. सुगमं० ।
- # पुरिसवेदस्ववयस्स चरिमसमयअणिल्लेविदपुरिसवेदस्स ।

§ ४४३ जस्स पुन्त्रमेत्थेव भवे पुरिसवेदो उदयमागदो सो जीवो पुरिसवेदो; साहचज्जादो । तस्स पुरिसवेदक्खवयस्स चरिमसमयत्राणिल्लेविदपुरिसवेदस्स जहण्ण-सामिचं होदि; तत्थ अंतोम्रहुनूणअद्वयस्समेत्तिद्दीए उवलंभादो । इत्थिवेदस्स भण्ण-

समाधान -नहीं, क्योंकि द्विचरम समयमें स्त्रीवेद सम्बन्धी प्रथम स्थितिके दो निषेक पाये जाते हैं ख्रोर द्वितीय स्थितिके भी ख्रान्तिम फालिरूपसे परुशोपमके ख्रसंख्यातवें भाग प्रमाण निषेक पाये जाते हैं ख्रतः द्विचरम समयवाल। संबद्द जीव जवन्य स्थितिका स्वामी नहीं होता है।

शंका—अन्य वेदके उदयमं स्थित त्तपक जीयको स्त्रीवेदकी जवन्य स्थितिका स्वामी क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि ऐसे जीवके स्त्रीवदका उदय नहीं होता ऋतः उसकी प्रथम स्थिति नहीं पाई जाती किन्तु केवल द्विनीय स्थिति ही पाई जाती है पर उसकी ऋन्तिम फालिके निपेकों का प्रमाण पत्यके ऋसंख्यातवे भाग प्रमाण होता है, ऋतः ऋन्य वेदके उदयमें स्थित चपक जीव स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका स्वामी नहीं हो सकता।

जो स्त्रीवेदी चपक जीव स्त्रीवेदके पूर्वोत्तार सब निपेकोंसे रहित है स्रौर उदय प्राप्त एक निषेक स्थितिमें विद्यमान है वह स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका स्वामी होता है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है।

\* पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ?

६ ४४२. यह सुगम है।

\* जिसके पुरुषवेदका अभाव नहीं हुआ है ऐसे पुरुषवेदी क्षपक जीवके अन्तिम समयमें पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४४३ जिसके पहले इसी भवमें पुरुपवेद उदयको प्राप्त हुआ है वह जीव पुरुषवेदके साहचर्यसे पुरुपवेदी कहलाता है। उस पुरुपवेदी चपक जीव के पुरुपवेदके सत्त्वके अन्तिम समयमें जघन्य स्वामित्व होता है, क्योंकि वहाँ पर अन्तमु हूर्त कम आठवर्ष प्रमाण स्थिति पाई जाती है।

माणे जहा इत्थिवेदोदयखवगस्से ति परूविदं तहा पुरिसवेदोदयक्खवगस्से ति किण्ण परूविदं ? ए, अवगदवेदकालव्भंतरे दुसमऊणदोआवलियमेत्तकालं गंतूएा हिदजहण्ण-हिदिसामियस्स सवेदत्तविरोहादो ।

- अण्वंसयवेदस्स जहण्णाद्विदिविहत्ती कस्स ?
- § ४४४. **सुगमं** ।
- \* चरिमसमयणवुंसयवेदोदयक्ववयःस
- ः ४४५, कुद्राः ? चरिमसमयणवुं सयवेदस्सः गालिददुचरिमादिसयलगुणसेढि-णिसेयस्स सवेदियदुचरिमसमए इत्थिवेदचरिमफालीए सह परसङ्ख्येण संकामिदणवुंसय-वेदविदियदिदिसयलणिसेयस्स एगुद्यगोवुच्छ्वालंभादो ।
  - \* इण्णोकसायाणं जहण्णाद्विदिविहत्ती कस्स ?
    - § ४४६<sub>.</sub> सुगमं० ।
  - स्ववयस्स चिम्मे द्विदिखंडए वहमाणस्स

शंका-स्त्रीवेदका जघन्य स्वामित्व कहते समय जिस प्रकार स्त्रीवदक उदयको प्राप्त चपकको उसको उसको प्राप्त चपकको पुरुपवेदके उदयको प्राप्त चपकको पुरुपवेदको जघन्य स्थितिका स्वामी क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि चपगतवेद कालके भीतर दो समय कम दा आवली श्रमाण काल जाकर जो पुरुपवेदकी जबन्य स्थितिका स्वामी विद्यमान हे उसे सवेद कहनेमें विरोध चाता है।

- # नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभिक्त किसके होती है ?
- § ४४४. यह सूत्र मुगम है।
- अ जपक जीवके नपुंसकवेदके उदयके अन्तिम समयमें नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है।

§ ४.५. श्रंका-त्तवक जीवके नपुंसकवेदके उदयके अन्तिम समयमें नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति विभक्ति क्यों होती हैं ?

समाधान-जिसने नपुसकवेद सम्बन्धी द्विचरम आदि सम्पूर्ण गुण्श्रेणीके निपंकोंको गला दिया है और जिसने सबेद भागके द्विचरम समयमें स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिके साथ द्वितीय स्थितिमें स्थित नपुंसकवेदके समस्त निपंकोका पररूपसे संक्रमण कर दिया है उसके अन्तिम समयमें एक उद्यरूप गोपुच्छ पाया जाता है, अतः नपुंसकवेदके उदयक अन्तिम समयमें उसकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है।

- § ४४६. यह सूत्र सुगम है।
- अब्ह नोकपायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकमें विद्यमान चपक जीवके उनकी जपन्य स्थितिविभक्ति होती है।

६ ४४७, द्भदो ? तत्थ संखेजजवाससहस्समेत्तचरिमफालिहिदीए उवलंभादो ।

६ ४४८ एवं मगुस०-मगुसपज्ञ०-पंचिदिय०-पंचि०पज्ञ०-तस०-तसपज्ञ०-पंचमगा०-पंचविच०-कायजोगि० ओरालिय०-लोभकसाय०-चक्खु०-अचक्खु०-सुक्कले०-भवसि०-त्राहारए ति । ग्रविर मगुसपज्ञ० इत्थिवेद० जण्णहिदिविहत्ती खत्रगस्स चरिमहिदिखंडगे वट्टमाणुस्म ।

- श्विरयगईए ऐरइएसु सम्मत्तस्य जहण्णिद्विविहत्ती कस्स ।
   ४४६ सुगमं० ।
- \* चरिमसमयअक्लोणदंसणमोहणीयस्स।

६ ४४७. **शंका**—अन्तिम स्थितिकाण्डकमें विद्यमान चपक जीवके छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति क्यों होती हैं १

समाधान—क्योंकि वहाँ पर ऋन्तिम फालिकी संख्यात हजार वर्ष प्रमाण जवन्य स्थिति पाई जाती है।

§ ४४८- इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचो मनायोगी, पाँचो बचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, लोभकपायी, चनुदर्शनवाले, त्र्यचनुदर्शनवाले, शुक्रलेलेश्यावाले, भव्य और आहारकक जानना चाहिये। पर इतनी विशेषता है कि मनुष्यपर्याप्तमें स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति स्त्रीवेदके अन्तिम काण्डकमें विद्यमान चुपक जीवके होती है।

विशेषार्थ-मृलमे जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमे श्रांघक समान प्ररूपणा वन जाती है, अतः उनके कथनका ओघके समान कहा है। किन्तु मनुष्यपर्याप्तके स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति एक समय नहीं होती, क्योंकि जो जीव स्त्रीवेदके उदयके माथ चपकश्रणी पर चढ़ता है वही जीव स्त्रीवेदके उदयके श्रान्तिम समयमे एक सययवाली जघन्य स्थितिका स्त्रामी होता है। किन्तु जो पुरुपवेद श्रोर नपुंसकवेदके उदयके साथ चपकश्रेणी पर चढ़ता है वह जीव जब स्त्रीवेदके श्रान्तिम काण्डककी श्रान्तिम फालिका पुरुपवेदस्थिते संक्रमित करता है तब उसके स्त्रीवेदकी पर्यक असंख्यात्रवें भागप्रमाण जघन्य स्थितिवभक्ति होती है इससे कम नहीं श्रोर इसलिये मनुष्य पर्याप्तको स्त्रीवेदकी अन्तिम स्थितिवभक्तिक होती है इससे कम नहीं श्रोर इसलिये मनुष्य पर्याप्तको स्त्रीवेदकी अन्तिम स्थितिवभक्तिका स्वामी कहा है।

- नरकगतिमें नारिकयोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभिक्ति किसके होती है ।
   ४४६ यह सूत्र सुगम है ।
- अ जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय नहीं किया है उसके दर्शनमोहनीयके चय करनेके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति होती है।
- ्र ४५०. शंका—दशंन मोहनीयकी चपणाके अन्तिम समयमे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति-विभक्ति क्यों होती हैं १

बद्धारियाउत्रस्स पच्छा तिन्थयरपादम्लम्भवणिय सम्मनं घेन ण अंतोम्रहुत्तावसेसे आउए अधापवत्तापुच्वाणियद्दिकरणाणि काद्ण मिच्छत्तसम्मामिच्छत्ताणि अणियद्दिकरणाणि काद्रण मिच्छत्तसम्मामिच्छत्ताणि अणियद्दिकाल्यकांतरे खिवय अणियद्दिकरणद्धाए चरिनसमयम्मि सम्मत्त वरिमद्दिखंडयचरिम-फालि घेत्रण उदयादिगुणसेदिसक्ष्वेण घेत्तिय द्विदस्स कदकरणिज्जे ति सण्णा कयाः सेसदंमणमोद्दक्खवणाविसयकज्ञत्तादो । तस्स काउलेस्सं परिणमिय पदमपुदवीए उप्पज्ञिय अधिदिदिसल्याए चरिनगोवुच्छं मोत् ण गलिदासेसगोवुच्छस्स एगसमय-कालेगदिदिदंसणादो ।

\* सम्मामिच्बत्तस्स जहण्णद्विदिविद्ती कस्स ?

§ ४५१. सुग्मं० ।

अवश्मसमयउठवेळ्ळमाणस्स ।

४४२, कुदो ? सम्मादिहिणा मिच्छत्तं गंतृण अंतोम्रहुत्तमिच्छय सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमुञ्चेल्लणमाढिवय पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तिहिद्खंडयाणि
जहाकमेण पाडिय उच्चेल्लिद्सम्मनेण पुणो सम्मामिच्छत्तस्स पितदो० असंखे०भागमेत्तिहिद्कंडए पादिय चरियमुञ्चेल्लाणकंडयस्स चरिमफालीए पादिदाए समऊणा-

समाधान—जो मिण्यादृष्टि मनुष्य जीव तीत्र आरम्भरूप परिणामों के द्वारा नरकगतिके साथ नरकायुका वन्ध करनेके अनन्तर तीर्थंकरकं पादमूलको प्राप्त होकर और सम्यक्त्वको प्रहण् करके आयुके अन्तमुं हूर्त होप रहने पर अधःप्रवृत्तकरण्, अपूर्वंकरण् और अनिवृत्तिकरण्रूप परिणामोंको करके तथा अनिवृत्तिकरण्रूप परिणामोंको करके तथा अनिवृत्तिकरण्के कालके भीतर मिण्यात्व और सम्मिग्भथात्वका च्रय करके अनिवृत्तिकरण्के कालके अन्तिम समयमे सम्यक्त्वकी अन्तिम स्थिति काण्डककी अन्तिम फालिको प्रदण् करके और उदयसे लेकर गुण्येमण्यात्वकी जन्तम सिव्यत्व करके स्थित है उसे कृतकृत्य यह संज्ञा प्राप्त होती, है क्योंकि इसका कार्य होप दशनमाहनीयकी चपणा है। अनन्तर जिसने कार्पातलेहयासे परिण्त होकर और पहली पृथिवीमें उत्पन्त होकर अधःस्थित गलनाके द्वारा अन्तिम गांपुच्छको छोड़कर वाक्षीके समस्त गांपुच्छका गला दिया है उसके एक समय कालप्रमाण एक स्थिति देखो जाती है। अतः प्रतीत होता है कि नारकीके दर्शनमाहनीयकी चपणाके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है।

नारिकयोंमें सम्यग्गिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभिक्ति किसके होती है ?
 १४५१ यह सूत्र सुगम है।

 \* सम्यग्गिथ्यात्वकी उद्दे लानाके अन्तिम समयमें सम्यग्गिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभिक्त होती हैं ।

§ ४५२. शंका-उद्वेलनाके अन्तिम समयमे जवन्य स्थिनिविभक्ति क्यों होती है ?

समाधान-कोई एक सम्यग्दिए मिश्यात्वको प्राप्त हुआ और वहां अन्तमु हूर्त काल तक रहकर उसने सम्यक्त और सम्यग्निध्यात्वकी उद्देलनाका आरम्भ करके पत्योपमके असंख्यात्वे भाग प्रमाण स्थितिकाण्डकोंका यथाक्रमसे पतन करके सम्यक्त्वकी उद्देलना कर ली। पुनः उसके सम्यक्त्वकी उद्देलना कर ली। पुनः उसके सम्यग्निध्यात्वे पत्योपमके असंख्यात्वे भाग प्रमाण स्थिति काण्डकोंका पतन करके अन्तिम

विष्ठयमेत्तगोवुब्बाब्रो चिद्वंति । पुणो तासु दुसमऊणाविष्ठयमेत्तासु श्रघदिदिगल-णाए गालिदासु दसमयकालेगणिसेयदिदिदंसणादो ।

- \* अणंताणुवंधीणं जहण्णहिद्विहत्ती कस्स ?
  - § ४५३ सुगमं० ।
- जस्स विसंजोइदे दुसमयकालदिदियं सेसं तस्स ।
- § ४५४, सुगममेदं; श्रोधिम्म परूविदत्तादो ।
- # सेसं जहा उदीरणाए तहा कायव्वं।

§ ४५५. एदस्स अत्थो वृचदे-मिच्छत्त-वारसकसाय-भय-दुगुंछाणं जहण्णिहिदि-विहत्ती कस्स ? जो असण्णिपंचिदिओ सागरोवमसहस्समेत्तउकस्सिहिदिवंधादो पिलदो-वमस्स संखेज्जिदिभागेण जहा उणं होदि उकस्सिहिदिमंतकम्मं तहा घादिय जहण्णिहिदि-संत करिय पुणो जहण्णसंतादो हेटा अंतोमुहुत्तकालं संखे०भागहीणं पुट्वं वंधमाणो अच्छिदो जहण्णिहिदिसंतकद्समए चेव जहण्णिहिदिसंतसमाणं वंधिय तदो से काले जहण्णिहिदिसंतं बोलेदूण वंधिहिदि त्ति ताविणियरगदीएदुसमयविग्गहं काऊण णेरह-एसुगवण्णो तत्थ दोसु वि विग्गहसमएसु असण्णिपंचिदियहिदिं चेव वंधिद् असण्णि-उद्वेलना काण्डककी अन्तिम कालिक पतन करने पर एक समय कम आविलिश्माण गापुच्छ शेष रहते हैं। पुनः उसके दो समय कम आविलिश्माण उन गोपुच्छोंके अधःस्थितिगलनाके द्वारा गला देने पर एक निपंककी दो समय कालप्रमाण स्थिति देखी जाती है। इससे प्रतीत होता है कि अपनी उद्वेलनाके अन्तिम समयमें सम्यिग्मध्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है।

\* नारिकयोंमें अनन्तानुविध्यतुष्ककी जघन्य स्थितिविभिक्त किसके होती है ?

§ ४५३ यह सूत्र सुगम है।

\* विसंयोजना करने पर जिस नारकीके अनन्तानुबन्धीकी दो समय काल प्रमाण स्थिति शेष है उसके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिविभिक्त होती हैं।

§ ४५४ यह सूत्र सरल है, क्योंकि इसका कथन आंध्रप्रह्मपणामें कर आये हैं।

नारिकयोंके उपर्युक्त प्रकृतियोंके अतिरिक्त शेष प्रकृतियोंकी जघन्य
 स्थितिविभिक्त जिस प्रकार उदीरणामें होती है उस प्रकार कहनी चाहिये।

§ ४५५ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुण्साकी जघन्य स्थितिविभक्ति किस नारकांक हाती हैं ? जो असंझी पंचेन्द्रिय जीव हजार सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिवन्धमें से पत्योपमका संख्यातवाँ भागप्रमाण कम जिस प्रकार हात उस प्रकार उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मका घात करके जघन्य स्थिति सत्कर्मको प्राप्त करता है। तथा जघन्य स्थिति सत्कर्मके नीचे पहले अन्तर्मु हूर्त कालत र पत्योपमके संख्यातवें भाग प्रमाण कम स्थितिको बांधता हुआ स्थित है पुनः जघन्य स्थितिसत्त्वके होनेके समय ही जघन्य स्थितिसत्वके समान स्थितिको वांधकर उक्षके अनन्तर कालमे जब जघन्य स्थितिसत्वको उत्लंघकर बांधेगा तब दो समयका विमह करके नरकगतिमें नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। पर वहां विमहके दोनों ही समयोंमें असंझी

पंचिदियपच्छायदस्स सिण्णपंचिदियपज्जत्तएस उप्पक्तिय अगहिदसरीरस्स अंतोकोडाकोडिहिदिवंधणसत्तीए अभावादो । तत्थ दोसु विग्गहसमएस असिण्णपंचिदियजहण्णहिदिसंतादो सिरसमिहयम्णं पि बंबिद । तत्थ एसो जहण्णहिदिसंतदो हेहा बंधावेदच्वो । एवं वंधिय विदियविग्गहे वद्दमाणस्स मिच्छत्त-वाश्सकसाय-भय-दुर्गुङ्घाणं जहण्णहिदिविहत्ती । स्पत्रिर मिच्छत्तस्स सागरोवमसहम्सं पिलदो० संखे०भागेसूर्णा । सरीरे
गिहिदे जहण्णसामिनं किण्ण दिज्जदि ? स्प, तत्थ अंतोकोडाकोडिसागरोवममेत्तिहिदबंधुवलंभादो । सत्त्रणाक्षमायाणमेवं चेव । स्पत्रिर असिण्णपंचिदियचरिमसमए सागरोविमसहस्सस्स चत्तारि सत्तभागो पिलदो० संखेज्जदिभागेसूर्णो बंधाविष्यादिक्कंतसमए चेव कसायहिदिमंतकम्मं असिण्णपंचिदियपाओग्गजहण्णे पिडिच्छय पुर्णो तत्थेव
वंधवीच्छेदं करिय सिरएसपण्णपदमसमण्पहुडि पिडवक्खपयडीओ वंधाविय पुणो
अप्पष्पणो पिडवक्खपयडिवंधगदाओं तिरिक्खेम चेव गालिय णेरइएसप्पण्णपदमसमण्

पर्चेन्द्रियकी स्थितिका ही बांधता है क्योंकि जो असंज्ञी पर्चेन्द्रिय पर्यायसे आकर संज्ञी पंचेन्द्रियोमें उत्पन्न होता है उसके शरीर शहण करनेके पूर्वसमय तक अन्तःकोड़ाकोड़ी. स्थितिके बन्य करनेकी शक्ति नहीं पाई जाती है। किर भी वहां विश्वहके दो समयोमें असंज्ञी पंचेन्द्रियके जयन्य स्थितिसत्वके समान या उससे हीन या अधिक स्थितिका भी बन्ध करता है पर इसके जयन्य स्थितिसत्वके समान या उससे हीन या अधिक स्थितिका भी बन्ध करता है पर इसके जयन्य स्थितिसत्त्वसे हीन स्थितिका बन्ध कराना चाहिये। इस प्रकार बांधकर जो दूसरे विश्वहमें स्थित है उस नारकीके मिध्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जयन्य स्थितिविभक्ति होती है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वकी जयन्य स्थितिविभक्ति पत्यके संख्यानवें भागसे न्यून हजार सागरप्रभाण होती है। तथा शेष कमेंकी हजार सागरके सात भागोंमसे पत्यापमक संख्यानवे भागसे न्यून चार भागप्रमाण होती है।

शंका--जिस नारकीने शरीरको यहण कर लिया है उसे जघन्य स्थितिका स्वामी क्यों नहीं कहा ?

समाधान--नहीं, क्योंकि नारकीयोंके शरीरके यहण करने पर अन्तः कोड़ाकोड़ी सागर-प्रमाण स्थितिबन्ध पाया जाता है।

सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति इसी प्रकार होती है। किन्तु इतनी विशेषता है जिसने असंज्ञी पर्यायके रहते हुए एक हजारके सात भागोंमंसे पर्यापमके संख्यातवें भागसे न्यून चार भाग प्रमाण कपायकी जघन्य स्थितिका बन्ध किया। पुनः बन्धाविष्ठमाण कालके व्यतीत होनेके परचान तदनन्तर समयमें ही असंज्ञी पंचेन्द्रियके योग्य कपायके जघन्य स्थितिसत्कर्मका विविज्ञत नोकपायमें संक्रमण किया पुनः जो उस विविज्ञत प्रकृतिकी वहीं असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यायके अन्तिम समयमें बन्धव्युच्छित्ति करके नारिकयोमें उत्पन्न हुआ। वह यदि वहाँ उत्पन्न होनेके पन्ले समयसे लेकर प्रतिपन्न प्रकृतियोंको बाँधता है तो उसके अपनी-अपनी प्रतिपन्न प्रकृतियोंके बन्धकालके अन्तिम समयमें जघन्य स्थितिविभक्तिका स्वामित्व प्राप्त होता है।

शंका-तिर्यचगित सम्बन्धी प्रतिपत्त प्रकृतियोंके बन्धकालको तिर्यचोंमें ही बिताकर जो

जहण्णिदिसामित्तं किण्ण दिज्जिदि ? ए., तिरिक्खगइपिडविक्खवंगद्धाहितो शिरयगइपिड-वक्खवंधगद्धार्यां बहुवत्तादो । तेसिं बहुअतं कुदो एाव्वदे ? एदम्हादो चेव जहण्ण-सामित्तु चारणादो । एवं पढमपुढिव-देव०-भवरा०-वार्ण ०देवे ति । णविर भवण०-वाण० सम्मत्तस्स सम्मामिच्छत्तभंगो ।

## 🛞 एवं सेसासु गदीसु अणुमग्गिद्व्वं ।

४५६. एवं जइवसहाइरिएए स्विद्अत्यस्स उचारणाइरियवक्षाणं वत्त इस्सामो । श्रोघो ण वुचदे चुण्णिसुत्तेग्ग परूविद्तादो भेदाभावादो च ।

§ ४४७ विदियादि जाव छिट ति मिच्छत्त-वारसकसाय-एवरणोक० ज० कस्स ? अण्णदरस्स जो उक्कस्साउिहदीए उववण्णो अंतोमुहुनेण पढमसम्मनं पिड-विज्ञय पुणो अंतोमुहुनेण ऋणांताणुविधिचउक्कं विसंजोइय सम्मनेणेव ऋण्प्पणो उक्कस्साउऋमणुपालिय चरिमसमयणिष्पदमाणसम्मादिटी तस्स जहण्णदिदिविहत्ती । सम्मामि०-अणंताणु०४ णिरुश्रोघं । सम्मत्तस्स सम्मामिच्छन्तभंगो ।

नारकियोंमें उत्पन्न होता है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके पहले समयमे ही विविच्चत प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका स्वामित्व क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि तिर्यंचगति सम्बन्धी प्रतिपत्त प्रकृतियोंके बन्धनकालसे नरकगति सम्बन्धी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका बन्धक काल बहुत है।

शंका—नरकगति सम्बन्धी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका बन्धकाल बहुत है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान--इसी जघन्य स्वामित्वसम्बन्धी ब्चारणसे जाना जाता है।

इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि भवनवासी और व्यन्तर देवोंमे सम्यक्त्वका भंग सम्यग्-मिध्यात्वके समान है। श्रर्थात् भवनवासी और व्यन्तर देवोंके सम्यक्त्वकी उद्घेलनाके अन्तिम समयमें उसकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है।

#### 🙉 इसी प्रकार शेप गतियोंमें विचार कर समभाना चाहिये।

§ ४५६. इस प्रकार यितवृषभ त्राचार्यके द्वारा सृचित त्र्यर्थका जो उच्चारणाचार्यने व्याख्यान किया है, उसे बताते हैं फिर भी यहाँ पर उच्चारणाचार्यके द्वारा कहे गये त्र्याचका कथन नहीं करते हैं, क्योंकि उसका कथन चृणिसूत्रके द्वारा किया जा चुका है तथा उससे इसमें कोई भेद भी नहीं है।

§ ४४.९ दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतक मिध्यात्व, बारह कपाय श्रीर नो नोकषायों की जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो उत्कृष्ट आयुको लेकर द्वितीयादिक पृथिवियोंमें उत्पन्न हुत्रा है श्रीर श्रन्तमु हूर्त कालके द्वारा प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः श्रन्तमु हूर्त कालके द्वारा श्रम्य सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः श्रन्तमु हूर्त कालके द्वारा श्रम्यन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसयोजना करके सम्यक्त्वके साथ ही श्रपनी-श्रपनी उत्कृष्ट श्रायुका पालन करके नरकसे निकला है उस सम्यग्दृष्टिके नरकसे निकलनेके श्रन्तिम समयमें जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। सम्यग्मिध्यात्व श्रीर श्रमन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति सामान्य नारिकयोंके समान है। तथा सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिध्यात्वके समान है।

१४५८. सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्त-बारसक० जह० कस्स ? अण्ण० जो उक-साउद्दिदिं बंधिय सत्तमाए उववएणो । पुणो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पिडविज्ञिय श्रवरेण अंतोमुहुत्तेण अणंताणुवंधिचउक्कं विसंजोइय थोवावसेसे जीविए मिच्छतं गदो। मिच्छ-त्रोण जावदि सक्कं तावदियकालं दिदिसंतकम्मस्स हेद्दो बंधिय समिद्दिदं बोलेहिद त्ति तस्स जहण्णदिदिविहत्ती । भयदुगुं छाणमेवं चेव । एविर समिद्दिदं बंधिय आविष्ठ-याह्ककंतस्स तस्स जहण्णदिदिविहत्ती । सत्त्रणोक० एवं चेव । णविर पिडवक्लवंधगदाश्रो बंधाविय तेसिं चरिमसमए वद्टंतस्स जहण्णदिदिविहत्ती । सम्मत्त०-सम्मामि०-अण-ताणु० छउक्काणं विदियपुदविभंगो ।

ई ४५९, तिरिक्खेसु मिच्छन्त-वारसकः जिल्कास ? अण्णः जो बादरण्इंदिओ जहासत्तीण हिदियादं काद्ण जावदियं सक्कं तावदियं कालं हिदिसंतकम्मस्स हेटा बंधिय समिदिदिबंध से काले वोलेहिदि हिः तस्स जहण्णिदिदिविह्नी । भय-दुर्गुछाणमेवं चेव । णविर समिदिदिबंधादो आविलयाइक्कंतस्स । सन्तणोकसायः जहः कस्स ? अण्णः जो बादरेइंदिओ समिदिद्वंधमाणकाले पंचिदियतिरिक्खेसु उववण्णो दीहपिट-वक्खवंधमद्धाणचिरमसमप्

<sup>§</sup> ४५८. सातवी पृथिवीमें मिण्यात्व श्रोर वारह कपायोकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो उत्कृष्ट श्रायुको वॉधकर सातवी पृथिवीमे उत्पन्न हुश्रा हैं। पुनः श्रन्तमुं हूर्त कालके हारा सम्यक्त्वको प्राप्त होकर एक दृसरे श्रन्तमुं हूर्तके हारा श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करके जीवितके थोड़ा होप रहने पर मिण्यात्यका प्राप्त हुश्रा। पुनः मिण्यात्यमे जितने कालतक शक्य हो उतने कालतक स्थितिसत्कर्मसे कम स्थितिका बन्ध करके जा श्रगले समयमें सत्त्वस्थितिसे श्रिषक बन्धस्थित करेगा उसके जयन्य स्थितिविभक्ति होती है। भय श्रीर जुगुप्साकी इसी प्रकार जाननी चाहिये। इतनी विशेषता है कि समान स्थितिको बॉधकर एक आवलीप्रमाण कालको श्रितकान्त करनेवाले जीवके जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। सात नोकपायोंकी इसी प्रकार जाननी चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है प्रतिपच्च प्रकृतियोक बन्धक कालतक उन्हें बँधाकर उनक श्रितिम समयमें रहनेवाले जीवके जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। यहाँ सम्यक्त्व, सम्यिमण्यात्व और श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग दृसरी पृथिवीके समान है।

<sup>\$</sup> ४५६. तिर्यचोमें मिध्यात्व स्रोर वारह कर्पायोकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो कोई बादर एकेन्द्रिय जीव शक्त्यनुसार स्थितिचात करके जितने कालतक शक्य हो उतने कालतक स्थितिसत्कमसे हीन नवीन स्थितको वाधकर स्थानन्तर समयमें समान स्थितिबन्धको उल्लंघन करेगा उसके जवन्य स्थितिविभक्ति होतो है । भय स्रोर जुगुप्साकी इसी प्रकार जाननी चाहिय । किन्तु इतनी विशेता है कि समान स्थितिबन्धके बाद जिसने एक स्थावली काल व्यतीत कर दिया है उसके जघन्य स्थितिविभक्ति होती है । सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो कोई एक बादरएकेन्द्रिय जीव स्थितिसत्त्वके समान स्थितिबन्धके होनेके समय पंचेन्द्रिय तियँचोमें उत्पन्न हुन्ना। पुनः दीर्घ प्रतिपत्त बन्धक कालप्रमाण स्थितियोंको गलानेके लिये स्थन्तमु हूर्त कालतक स्थनने-स्थने प्रतिपत्त बन्धककालों रहकर प्रतिपत्त बन्धककालन

जो वद्टमाणी तस्स जहण्णदिदिविहत्ती । सम्मत्त-सम्मामि०-त्र्यर्णताणु०चउक्काणं णिरओघं।

§ ४६०. पंचिदियतिरिक्ख - पंचि०तिरिक्खपज्ञत्त - पंचि०तिरि०जोणिणीमु मिच्छन्-बारसक०-भय-दुगुंछाणं ज० कस्म? अण्ण० जो वादरेइंदिय्रो हदसमुष्पत्तिय-कम्मेण पंचिदियतिरिक्खमु उववण्णो तस्स पढमविदियविग्महे वद्दमाणस्स जहण्ण-दिदिवहत्ती । सम्मत्त०-सम्मामिच्छन्०-अणंताणु०चउक्काणं तिरिक्खोदं । सत्तणोक० क० कस्स? अण्ण० जो वादरेइंदिओ हदसमुष्पत्तियकम्मेण पंचिदियतिरिक्खेसु उव-वण्णो एवमुववज्ञिय अंतोमुहृत्तमिच्छय से काले अष्पणो वंधमादिवहदि ति तस्स जहण्णदिदिवहत्ती । एवति पंचिदियतिरिक्खकोणिणीमु सम्मत्तस्स सम्मामिच्छन्-भंगो । पंचि०तिरि०त्रपञ्च० पंचि०तिरि०जोणिणीभंगो । णवरि अणंताणु०चउक्कस्स मिच्छन्भंगो । एवं मणुसग्रपञ्च०-सन्वविग्रिटिय-पंचि०त्रपञ्च०-तमग्रपञ्चने ति ।

§ ४६१. मणुसिणीसु अटणोक॰ ज॰ कस्स ? अण्ण॰ अणियद्विखवयस्स चरिमद्विदिखंडए वटमाणस्स जहण्णद्विदिविहत्ती । सेसमीवं ।

\$ 8६२. जोइसि० विदियपुढिविभंगो । सोहम्मादि जाव उविरमगेवज्जो रि मिच्छरा० ज० कस्स ? अण्ण० जो दी वारे कसाए उवसापेदूण च उवीससंतकिमश्रो के श्रान्तिम समयमे जी विद्यमान है उसके जवन्य स्थितिविभक्ति होती हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मि-ध्यात्व श्रीर श्रान्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थितिविभक्ति सामान्य नार्यक्रयोके समान है।

§ ४६० पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच प्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंच थानिमती जीवोंमं मिध्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थितिविभक्ति किसंक होती है ? जो कोई एक बादर एकेन्द्रिय जीव हतसमुत्पत्ति कर्मके साथ पंचेन्द्रिय तिर्यंचोम उत्पन्न हुआ। पहले और दूसरे विश्रहमें विद्यमान उस जीवके उक्त कर्मोकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है । सम्यक्त्व, सम्यिमध्यात्व और अनन्तानुक्त्यी चतुष्कर्का जवन्य स्थितिविभक्ति सामान्य तियंचोंके समान है । सात नोकपायोंकी जवन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो कोई एक बादर एकेन्द्रिय जीव हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ पंचेन्द्रिय तियंचोमे उत्पन्न हुआ। वहाँ इस प्रकार उत्पन्न होकर और अन्तर्मु हूते कालतक वहाँ रहकर तदनन्तर कालमे अपने वन्धका आरम्भ करेगा उसके जवन्य स्थितिविभक्ति होती है । इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय योनिमती तिर्यंचोंमें सम्यक्त्व प्रकृतिका भंग सम्यिग्मध्यात्वके समान है । प्वेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतीके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिध्यात्वके समान है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सव विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और अस अपर्याप्तकों के जानना चाहिये।

§ ४६१. मनुष्यिनयोंमे आठ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? अन्तिम स्थितिकाण्डकमें विद्यमान किसी अनिष्टत्तिकरण चपकके होती है। शेप कथन आघके समान है। § ४६२. ज्योतिपियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। सौधर्म कल्पसे लेकर उपरिम भैवेयक तकके जीवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? दो बार कषायोंको उक्कस्साउिहिदिएसु अप्पप्पणो विमाणेसु उवविज्ञय चिरमसममयणिप्फिद्माणो तस्स जहण्णिहिदिविहत्ती। सम्मत्त-सम्मामि०अणंताणु०चउक्काणं णिरश्रोधभंगो। बारसक०-णवणोक० ज० कस्स ? अण्ण० जो संजदो जहामंभवेण उवसमसेहिं चिहय हेहा स्रोयिरिय दंसणमोहणीयां खविय उक्कस्माउएण अप्पप्पणो विमाणेसु उववण्णो तस्स चिरमसमयणिष्किदमाणस्स जहण्णिहिदिविहत्ती। अणुिहसादि जाव सन्वहे ति एवं चेव। णविर सम्मामि० मिन्छत्तभंगो।

४६३. एइंदिएसु मिच्छत्त-वारसकसाय-भय-दुगुं छा-सम्मामिच्छत्ताणं निरिक्खोयं । श्रणांताणु चउक गिच्छित्तभंगो । सत्तणोक जि कस्स १ जो एइंदिश्रो हदसमुष्पत्तियं काद्ण समिद्धिदं वंधिय अंतोमुहुत्तमिच्छय से काले श्रप्पष्णो वंथमाहवेदिद ति तस्स जहण्णिद्धिदिवहत्ती । सम्मत्त सम्मामिच्छत्तभंगो । एवं सन्वएइंदिय-पंचकाए ति ।

§ ४६४. त्रोरालियमिस्स० तिरिक्खोघं। णविर त्रणंताळु०चउक्क० भिच्छत्तभंगो । वेउव्विय० सोहम्मभंगो । णविर सम्पत्तस्य सम्मामिच्छत्तभंगो ।

🖇 ४६५ वेडव्यियमिस्स० मिच्छत्त० ज० कस्स 📍 अण्ण० जो जहासंभवेण

उपशमा कर जो कोई जीव चोंबीस कर्मोकी सत्तावाला होता हुआ उत्कृष्ट आयुका लकर अपने श्रमने विमानोमे उत्पन्न हुआ उसके वहांसे निकलनेके अन्तिम समयमें जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। सम्यक्तव, सम्यम्मिश्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति सामान्य नारिकयोंके समान है। बारह कपाय और नी नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है? जो कोई संयत यथासंभव उपशमश्रेणी पर चढ़कर और नीचे उत्तर कर तथा दर्शनमाहनीयका चय करके उत्कृष्ट आयुके साथ अपने अपने विमानोमं उत्पन्न हुआ उसके वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमे जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितक इसी प्रकार कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यिग्मिश्यात्वका भंग मिश्यात्वके समान है।

§ ४६३ एकेन्द्रियों मिण्यात्व, वारह कपाय, भय, जुगुष्सा और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सामान्य तियंचोंके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भेग मिण्यात्वके समान है। सात नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो एकेन्द्रिय हतसमुत्पत्तिक होकर, समान स्थितिको बांधकर और अन्तर्मुहून काल तक रह कर तदनन्तर समयमे अपने अपने बन्धको आरम्भ करेगा उसके जघन्य स्थिति विभक्ति होती है। सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिण्यात्वके समान है। इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय और पांच स्थावरकाय जीवोंके जानना चाहिये।

§ ४६४ श्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जवन्य स्थितिविभक्ति सामान्य तिर्यचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके श्रानन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिण्यात्वके समान है। वैक्रियिक काययोगमे सौधमके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इसमें सम्यक्त्वका भंग सम्यिग्मिष्यात्व के समान है।

§ ४६4. वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती

उनसमसेिं चिडिद्ण देवेसु उववण्णो से काले सरीर पज्जितां गाहिदि ति तस्स जहण्ण-हिदिविहत्ती । अणंताणु०चउक्क० ज० कस्स ? अण्ण० जो अद्दावीससंतकिम्मओ संजदो देवेसुववण्णो से काले सरीरपज्जितां गाहिदि ति तस्स जहण्णदिदिविहत्ती । बारसक०-भय-दुगुंछ० मिच्छत्तभंगो । एविर खइयसम्माइद्दी देवेसु उप्पाएदच्यो । सम्मत्त-सम्माभि०-सत्तरणोक० पढमपुढिविभंगो ।

§ ४६८, वेदाणुवादेण इत्थिवेद मणुस्सिणीभंगो । एवरि सत्तणोक०-चत्तारि है ? जो यथासभव उपशमश्रेणी पर चढ़कर देवाम उत्पन्न हुआ और तदन्तर कालमे शरीर पर्याप्ति को प्राप्त हागा उसके जयन्य स्थितिविभक्ति होती है । अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जयन्य स्थिति विभक्ति किसके होती है ? अष्टाइस सत्कर्मवाला जो कोई एक संयत जीव देवोमे उत्पन्न होकर तदन्तर समयमें शरीरपर्याप्तिको प्राप्त होगा उसके जयन्य स्थितिविभक्ति होती है । इनके बारह कपाय, भय और जुगुष्माका भंग मिण्यात्वके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनकी जयन्य स्थितिविभक्ति कहते समय चार्यिक सम्यग्दिष्ट जीवका देवोमें उत्पन्न कराना चाहिये । तथा सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और सात नोकपायोंका भंग पहली पृथिवीके समान है ।

§ ४६७ कार्मण काययोगियोमें मिश्यात्व, सीलह कपाय और नौ नीकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जा कोई एक बाहर एकेन्द्रिय जीव हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ द्वितीय विष्रहको प्राप्त हुआ है उसके जघन्य स्थितिविश्तिक होती है। इसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति खोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति उद्देलनामे कहनी चाहिये।

§ ४६= वेद मार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदमें मनुष्यनीके समान भंग है। किन्तु इतनी

संजलण जह कस्स ? अण्ण अणियहिखवयस्स सवेदचरिमसमए वहमाणस्स जहण्णहिदिबिहत्ती । एवं णवुं स० । एवरि इत्थिवेद चिरमिहिदिखंडए वहमाणस्स । पुरिस० पंचिंदियभंगो । एवरि चत्तारिसंजलण—पुरिस० ज० कस्स ? अण्ण० सवेदचिरमसमए वहमाणस्स जहण्णहिदिबिहत्ती । इत्थि-एवुं स० ज० कस्स ? अण्ण० अणियहिखवयस्स चरिमिहिदिखंडए वहमाणस्स । अवगद० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ज० कस्स ? अण्ण० जो चउवीससंतकम्मित्रो उवसमसेहिमारुहिय अयेयरमाणो से काले सवेदो होहदि ति तस्स जहण्णहिदिबिहत्ती । एवमहकसाय-इत्थि०-णवुंस० । णविर खइय०दिहिस्स वत्तव्वं । सत्त्रणोक०-चत्तारिसंज० ओघं ।

§ ४६९. कसायाणुवादेण कोधक० ओघं। एवरि अणियहिम्मि चरिमसमय-कोधकसायम्मि चदुण्णं संजल्ाणाणं जहण्णहिदिविहत्ती। एवं माण०। एवरि तिण्हं संजलणाणं चरिमसमयमाणवेदयस्स जहण्णहिदिविहत्ती। एवं माय०। णवरि दोण्हं संजलणाणं चरिमसमयमायवेदयस्स जहण्णहिदिविहत्ती। अकसा० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० जह० क० १ अण्ण० चरवीससंतकम्मिश्रो जो सं कालो सकसाओ

विशेषता है कि सात नोकपाय और चार संज्वलनकी जयन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? सवेह भागके अन्तिम समयमं विद्यमान अन्यतर अनिवृत्तिकरण दापकके जयन्य स्थितिवभक्ति होती है । इसी प्रकार नपुंसकवेदीके जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अन्तिम स्थितिकाण्डकमें विद्यमान जीवके स्त्रीवेदकी जयन्य स्थितिविभक्ति होती है । पुरुपवेदकी पंचेन्द्रियके समान मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि चार संज्वलन और पुरुपवेदकी जयन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? सवेद भागके अन्तिम समयमं विद्यमान किसी जीवके जयन्य स्थितिविभक्ति होती है । स्थितिवभक्ति होती है । अन्तिम स्थितिकाण्डमें विद्यमान अन्यतर अनिवृत्तिकरण च्यकि जयन्य स्थितिवभक्ति किसके होती है ? अन्तिम स्थितिकाण्डमें विद्यमान अन्यतर अनिवृत्तिकरण च्यकि जयन्य स्थितिवभक्ति किसके होती है । अपगतवेदमें मिध्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मध्यात्वकी जयन्य स्थितिवभक्ति किसके होती है ? चौवीस सत्कर्म याला जो कोई जीव उपशामश्रेणी पर चढ़कर और उतरता हुआ तदनन्तर कालमें सवेदी होगा उसके जयन्य स्थितिवभक्ति होती है । इसी प्रकार आठ कपाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जयन्य स्थितिवभक्ति जाननी चाहिये । किन्तु इननी विशेषता है कि इनकी जयन्य स्थितिवभक्ति चायिकसम्यग्दिष्ठके कहनी चाहिये । तथा सात नोकपाय और चार संज्वलनकी जयन्य स्थितिवभक्ति स्थायके समान है ।

§ ४६६ कपायमार्गणाके अनुवादसे कोधकपायमें जघन्य स्थितिविभक्ति श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनिवृत्तिकरणमें काध कपायके अन्तिम समयमें चार संज्वलनों की जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार मानकपायमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि मानवेदकके अन्तिम समयमें तीन संज्वलनोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार माया कपायमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि मायावेदकके अन्तिम समयमें दो संज्वलनोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। अकपायी जीवमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यिगिध्यात्वको जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। अकपायी जीवमें मिथ्यात्व, विशेषत्व और सम्यिगिध्यात्वको जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है। जो कोई एक जीव चौबीस

होहिद त्ति तस्स जह० द्विदिविहत्ती । एव वारसक०-एावणोक० । एविर खइय०दिहीसु वत्तव्वं । एवं जहाक्खाद० ।

§ ४७० मदि-मुद्अण्णाणीणं तिरिक्खोघं। एवरि सम्मन्त-त्राणंतासु०चउनक० एइंदियभंगो । एवपसिण्ण० । विहंगसाणीसु मिन्छन्त०-सोलसक०-एवरोकि० ज० कस्स १ अण्णद० जो उवरिमगेवज्जम्मि मिन्छन्तं गदो चरिमसमयणिष्पिद्माणओ तस्स जहण्णिदिदिविहती । सम्मन्त०-सम्मामि एईदियभंगो ।

६ ४७१, त्र्याभिणि०-सुद०-त्र्रोहि० त्रीघं । णवरि सम्मामि० जह० स्ववणाए दायव्वं । एवं संजद०-द्योहिदंस०-सम्मादिहि ति । मण्यज्जव० एव चेव । णवरि इत्थि०-णवुंस० पुरिस०भंगो ।

§ ४७२ सामाइय-छेदी० स्रोहिभंगी। णविर लोहसंजल० जह० कस्स ? अण्ण० चिरमसमयिम अण्णियद्विक्खवयस्स । परिहार० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-त्र्रणंता-णु०च उक्क० स्रोहिभंगो। वारसक०-एविएो क० जह० क० ? जो खइयसम्मादिद्दी जहासंभवेण उवसमसेढिं चिढिय भोयरिय परिणामपचएण परिहार० जादो से काले सक्कमंवाला तदनन्तर कालमें सक्वार्या होगा उसके उक्त कर्मोकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार वारह क्याय श्रोर नो नोकपयोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति जाननी चाहिये। इननी विशेषता है कि इनकी जघन्य स्थितिविभक्ति चायिकसम्यन्दृष्टियोंके कहनी चाहिये। इसी प्रकार यथाख्यातसंयतोंके जानना चाहिये।

\$ ४७० मत्यज्ञानी त्रौर श्रुताज्ञानीके सामान्य तिर्युचोंके समान जघन्य स्थितिविभक्ति होती है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व त्रोर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति एकेन्द्रियोंके समान होती हैं । इसी प्रकार असंज्ञी पचेन्द्रियके जानना चाहिये । विभंगज्ञानियोंमें मिध्यात्य, सोलह कपाय त्रोर नी नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती हैं ? जो कोई एक उपरिमर्थवेयकमे मिध्य त्वको प्राप्त हुआ है उसके वहांसे निकलनेके अन्तिम समयमें उक्त कर्मीकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती हैं । सम्यक्त्व और सम्यिग्मध्यात्वका मंग एकेन्द्रियोंके समान है ।

§ ४७१ त्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी त्रोर त्रविध्ञानी जीवोंके त्रोधके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति केवल चपकके कहनी चाहिये। इसी प्रकार संयत, अवधिदर्शनवाले त्रोर सम्यग्टिष्ट जीवोंके जानना चाहिये। मनः पर्ययज्ञानमें भी इसी प्रकार कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके स्त्रांवेद त्रौर नपुंसकवेदका मंग पुरुषवेदके समान है।

§ ४७२ सामायिक और छेदोपस्थापना संयममें अविधिज्ञानके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? किसी अतिवृत्ति-करण चपक जीवके अन्तिम समयमें लोभ संज्वलनकी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है। परिहार विशुद्धिसंयममें मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यन्मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति अविध्ञानियोंके समान होती है। तथा बारह कपाय और नो नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो चायिक सम्यन्यदृष्टि जीव यथायोग्य उपश्चमश्रेणी पर चढ़कर और उतरकर परिणामोंके अनुसार परिहारविशुद्धिसंयत हो गया और तदनन्तर कालमें चपक

खबगसेढिअभिष्ठहो होहदि चि तस्स जहण्णिटिदिविहची । एवं संजदामंजद०। णबिर से काले संजमं पिडविज्जिद्गा अंनोष्ठहुचेण सिज्भिहिदि चि तस्स जहण्णिटिदि-विहची । सुहुमसांपराइय० त्रकसाइभंगो । णबिर लोभसंजल० त्रोघं । त्रमंजद० निरिक्खोघं । एबरि मिच्छच०-सम्मामि० और्यः ।

६ ४७३, तिरिगाले० तिरिक्खोधं । णविर किण्ह-गीललेस्सासु सम्मत्त० सम्मामिच्छत्तभंगो । अर्ग्यताणु०चउक० स्रोघं । सेसलेस्सार्ग परिहार०भंगो । स्रभव० इब्बीसपयडीणं मदिअण्णाणिभगो ।

ृ ४७२ वह्य० एक्कवीस० श्रोहिमंगो । वेदयसम्मादि० मिच्छत्त-सम्मामि० अणंताणु०चउक्कं श्रोयं । णवरि सम्मामि० उच्वेल्छणाए णस्थि । सम्मत्त-वारसक०-णवणोक० ज० कस्स ? अण्ण० चरिमसमयश्रक्क्वीर्णादंसरणमोहणीयस्स ।

ई ४७५ . उनसम० भिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० जह० क० ? अण्णा० जहासंभवेण उनसमसेहिं चिडिय सच्चुक्कस्समंतीमुहुत्तद्भमिच्छय से काल वेदमं पिडियिजिहिद ति तम्स जहण्णिहिदिविहत्ती । अणाताणु०चिउक० ज० श्रेणीं के सन्मुख होगा उस परिहारियिछुद्धिसंयतके जघन्य स्थितियिभक्ति होती हैं । इसी प्रकार संयत्तासंयत्तोके जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि जो संयत्तासंयत तदनन्तर कालमें संपमको प्राप्त होकर अन्तर्मुहर्त कालके द्वारा सिद्ध होगा उसके जघन्य स्थितिविभक्ति होती हैं । स्ट्सिसांपरायिक संयत्त जीयोंक कपायरहित जीयोंक समान जवन्य स्थितिविभक्ति होती हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके लोभसंख्यलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति खोषके समान हैं । अस्य त्याये स्थितिविभक्ति खोषके समान हैं । अस्य त्याये स्थितिविभक्ति खोषके समान हैं । अस्य त्याये स्थितिविभक्ति खोषके समान हैं । इसी विशेषता है, कि इनके मिण्यात्व खोर सम्यिग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति खोषके समान हैं ।

\$ ४०२. कृष्णादि तीन लेश्यात्रोंमे सामान्य तिर्यक्कोके समान जबन्य स्थितिविभक्ति होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नीजलेश्यामे सम्यक्त्यका मंग सम्यग्मिण्यात्वके समान है। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जबन्य स्थिति आंचके समान है। शेष लेश्यात्रोंमे जधन्य स्थितिविभक्ति परिहारविशुद्धि संयमके समान है। अभव्योंमे छव्यीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति मत्यज्ञानियोंके समान है।

§ ४७४ न्वायिकसम्यग्दृष्टियोमे इक्कीस प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिविभक्ति अविधिज्ञानियोंके समान है। वेदकसम्यग्दृष्टियोमे मिथ्यत्व, सम्यग्मिथ्यत्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति आंघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति उद्देलनामें नहीं होती, क्योंकि यहाँ उसकी उद्देलना संभव नहीं है। सम्यक्त्य, बारह् कपाय और नो नाकपायोकी जवन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है १ जिसने दर्शनमाहनीयका चय नहीं किया है ऐसे किसी जीवके दर्शनमोहनीयके चय होनेके अन्तिम समयमे उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति होती है।

कस्स ? अण्ण० दंसणमोहउवसामयस्स से काले वेदयं पडिवज्जहिदि ति तस्स ज० हिदिविहत्ती । अधवा विसंजोएमाणस्स एयहिदिदुसमयकालमेरो सेसे ।

\$ ४७६ सासण वस्त्रपयडीणं जहण्ण कस्स ? अण्ण जो चारित्तमोहउव-सामश्रो सामणं पडिवण्णो से काले मिच्छत्तं गाहदि ति तस्स ज॰ हिदिविहत्ती । सम्मामिच्छा । मिच्छत्त-वारसक । न्यायाक ज कस्स ? अण्ण व चवीससंतक मियस्स सम्मामिच्छत्तं पडिवण्णस्स चरिमसमयसम्माभिच्छादिहिम्स । सम्मत्त-सम्माभि जह ० कस्स ? अण्ण । सागरीवमपुधत्तसंतक मेण सम्मामिच्छत्तं पडिविज्ञिय जो चरिमसमय-सम्मामिच्छादिही जादो तस्स । जह ० विहत्ती । श्रणंताणु ० च उक्क । ज ० कस्स ? अण्ण । श्रहावीसमंतक मिश्रो चरिमसमयसम्मामिच्छादिही तस्स ज ० विहत्ती । मिच्छादि ० एइ दियमंगो । अणाहारि ० कम्मइयमंगो ।

## एवं सामित्ताणुगमो समत्तो।

# ॐ [कालो ।]

१७७ कालाणुगमेण दुविही शिद्देसो—श्रोघेण आदेसेश य। तत्य श्रोघेश—

उसके जवन्य स्थितिविभक्ति होती है। अनन्तानुबन्धां चतुष्ककी जवन्य स्थितिविभक्ति किसके होती हैं? दर्शनमोहनीयका उपशामक जो कोई जीव तदनन्तर कालमें बेदक सम्यक्त्वको प्राप्त होगा उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है। अथवा विसं-योजना करनेवाले जीवके एकस्थितिके दो समय कालप्रमाण होप रहनेपर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थितिविभक्ति होती है।

\$ ४७६. सासादन मध्यक्त्वमं सब प्रकृतियोंकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? चारित्रमाहनीयकी उपशमना करनेवाला जो कोई जीव सासादनको प्राप्त हुआ है और तदनन्तर समयमे मिण्यात्वको प्राप्त होगा उसके सब प्रकृतियोकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति होती है । सम्यग्निण्यात्वमे मिण्यात्व बारह कपाय और नी नोकपायोकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो कोई चौबीस प्रकृतियोकी सत्तावाला सम्यग्निण्यात्वको प्राप्त हुआ है उसके सम्यग्निण्यात्वके अन्तिम समयमे उक्त कर्मोकी ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति होती है ? सागरप्रथक्तप्रमाण सत्कर्मवाला जो कोई जीव सम्यग्निण्यात्वको ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? सागरप्रथक्तप्रमाण सत्कर्मवाला जो कोई जीव सम्यग्निण्यात्वको प्राप्त होकर जो अन्तिम समयवर्ती सम्यग्निण्यात्वको प्राप्त होकर जो अन्तिम समयवर्ती सम्यग्निण्यात्वको ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति होती है । अनन्तानुवन्धी चतुष्कका ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति किसके होती है ? ब्राट्टाईस प्रकृतियोकी सत्तावाला जो कोई जीव सम्यग्निण्यात्वके अन्तिम समयमे अनन्तानुवन्धी चतुष्कको ज्ञावन्य स्थितिविभक्ति होती है । मिण्यादृष्टिके एकेन्द्रियोक समान भंग है । अनाहारकोके कार्मणकाययोगियोके समान भंग है ।

#### इस प्रकार स्वामित्वानुगम समाप्त हुआ।

## 🛞 कालका ऋधिकार है।

्र ४७७ कालानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे आंघकी अपेचा—

# 🕸 मिच्छत्तस्स उक्कस्सिडिदिसंतकम्मिओ क विचरं कालादो होदि ?

्र ४७८, एत्थ मिच्छत्ताग्गहणेण संसपयडिपडिसेही कदो । उक्कस्सग्गहणेण जहण्णहिदिपडिसेही कदो । सेसं सुगमं ।

# 🕸 जहण्णेण एगसमओ ।

१४७६ कृदो १ एगसमयमुकस्सिहिदं वंधिय विदियसमए पिंडहग्गस्स उकस्सहिदीए एगसमयकालुवलंभादो । विदियममए हिदिखंडयघादेण विणा कथमुकस्सत्तं
फिहिद १ ए अधिहिदिगलणाए एगसमए गलिदे उकस्सत्ताभावादो । उकस्सिहिदिसमयपवद्धस्स एगो वि णिसंगा ए। गलिदो; सत्तवाससहस्ममेत्तआबाहाए उविर तस्स
अवहाणादो । गलिदिणिसंगो वि विराणसंतकम्मस्स । तम्हा जाव हिदिखंडओ ए। पदि
ताव उकस्सिहिदिमंतकम्मेण होदव्यमिदि १ ण एस दोसो, जहण्णहिदिश्रद्धान्नेदो
णिसंगपहाणो । तं कथं एव्यदे १ कोधसंजलणस्स जहण्णहिदिश्रद्धान्नेदो वेमासा
अंतोमुहृत्तूणा त्ति सुत्तणिहेमादो । उकस्मिहिदी पुण कालपहाणा तेण णिसेगेण
विणा एगसमए गलिदे वि उकस्सत्तं फिहिद । तदो जहण्णकालस्स सिद्धमेगसमयत्तं ।

# अ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थित सत्कमवाले जीवका कितना काल है ?

§ ४७८ यहाँ सृत्रमे मिथ्यात्र पदके प्रहण करनेसे रोप प्रकृतियोका निषेध कर दिया है। उत्कृष्ट पदके प्रहण करनेसे जघन्य स्थितिका निषेध कर दिया है। रोप कथन सृगम है।

#### अ जघन्य काल एक समय है ।

§ ४७६. शंका-जिपन्य काल एक समय क्यो है।

समाधान—क्योंकि एक समयतक उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर दूसरे समयमें उत्कृष्ट संक्लेशसे च्यत प्राप्त हुए जीवके उत्कृष्ट स्थितिका एक समय प्रमाण काल पाया जाता है।

शंका — दूसरे सभयमें स्थितिकाण्डकवं। तके विना स्थितिके उत्कृष्टत्वका नाश कैसे हो जाता है ? समाधान—नहीं, क्योंकि अधःस्थितिगलनाके द्वारा एक समयके गल जाने पर स्थितिमे उक्तप्टत्व नहीं रहता हैं।

शंका — उत्कृष्टिस्थितिप्रमाण समयप्रवहका एक भी निषेक नहीं गला है, क्योंकि सान हजार वर्षप्रमाण आवाधाक बाद निषेक पाया जाता है और जो निषेक गला भी है वह सत्तामें स्थित प्राचीन सत्कर्मका है अत: जबनक स्थितिकाण्डकका पनन नहीं हाता है नवतक उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म होना चाहिये ?

समाधान-यह कोई दांप नहीं हैं, क्योंकि जधन्य स्थितिऋद्धान्छेद निपेकप्रधान है। शंका-यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—कांध संज्ञलनका जवन्य स्थिति श्रद्धाच्छेद श्रन्तर्मु हुर्त कम दो महीना प्रमाण है इस सूत्रके (नेदेशसे जाना जाता है। किन्तु उत्कृष्ट स्थिति कालप्रधान है, इसलिये निषंकके बिना एक समयके गल जाने पर भी उत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्टत्वका नाश हो जाता है, श्रतः उत्कृष्ट स्थितिक। जयन्यकाल एक समय है यह बात सिद्ध होजाती है।

# \* उक्कसेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४८०. कुदो ? दाइदिदिं वंधमाणो उकस्सदाहं गंतृण उकस्सदिदिं वंधिदः तिस्से वंधकालस्स उकस्सेण अंतोमुहुत्तपमाणत्तादो ।

#### \* एवं सोलसकसायाणं।

६ ४=१. मिच्छत्तस्सेव सोलसकसायाणमुकस्मदिदिकालो जहण्णेण एगसमञ्जो,

विशेपार्थ-यहां मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थित जघन्य रूपसे कितने काल तक पाई जाती है इसका विचार किया है। बात यह है कि जब कोई एक जीव मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके दूसरे समयमें उन्कृष्ट स्थितिके बन्धके योग्य उन्कृष्ट संक्लेशरूप परिएामोंसे च्युत होकर विशुद्धि की प्राप्त होने लगता है तो उसके उत्क्रष्ट स्थितिका सत्त्व एक समय तक देखा जाता है: क्योंकि दूसरे समयमें उसमेसे एक समय कम हो जाता है, इसलिये उसमे उत्कृष्ट स्थितिपना नहीं रहता है। इस विषयमे शंकाकारका कहता यह है कि एक तो स्थितिकाण्डकघातसे स्थिति कम होती है श्रीर दूसरे प्रथमादि निपेकोके गल जानेसे स्थिति कम होती है। किन्तु मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्ध होनेके दूसरे समयमें न तो उसका स्थितिकाण्डकवात ही होता है; क्योंकि बन्धावलि सकल करणोंके श्रयोग्य होती है ऐसा नियम है और न प्रथमादि निषेक ही गलते हैं, क्योंकि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका त्रावाधाकाल सात हजार वर्ष है त्रोर त्रावाधाकालमे निषेक रचना नहीं होती, अनः सात हजार वर्षकं समयोंका छोड़ कर ही प्रथमादि निषेकों का सदभाव पाया जाता है। यद्यपि उत्कृष्ट स्थितिबन्धकं समय और वादमें निपंक गलते हैं पर व नवीन स्थितिबन्धकं न होकर प्राचीन सत्कर्म के होते हैं, अतः जिस समय मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होता है उम समय उसकी उत्कृष्ट स्थितिका न तो स्थितिकाण्डक घात ही हो रहा है आरे न प्रथमादि निपेक ही गलते हैं यह सच है, फिर भी उत्कृष्ट स्थिति निपंकप्रधान न होकर कालप्रधान होती है, अतः दुसरं समयमं सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर मे से एक समय कम होजानेके कारण उसमे उत्कृष्ट स्थितिपना नहीं रहता । हां जघन्य स्थिति अवश्य निपंकप्रधान होती है, यदि ऐसा न माना जाय तो क्रोधसंज्यलनकी जघन्य स्थिति श्रन्तमुँ हुर्त कम दो महीना नहीं बन सकती है; क्योकि यह क्रोधसंब्बलनके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिकी स्थिति है जो कि उसी समय मान संज्वलररूपसे संक्रमित हो जाती हैं। अतः कालकी अपेद्मा वह क्रांधरूप एक ही समय रही पर उस समय उस अन्तिम फालिमें ं निपेक अवस्य अन्तमु बहुर्त कम दो माहके समय प्रमाण होते हैं और इसलिये इस अन्तिम फालिकी जघन्य स्थिति अन्तम् हुर्त कम दो माह कही जाती है। उक्त कथनका सार यह है कि उत्कृष्ट स्थितिमें कालका प्रधानता है और जघन्य स्थितिमें निपेकोकी। स्रतः सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरमें से एक समयके घट जाने पर भी मिध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थिति नहीं रहती।

# **\* उत्कृष्ट काल अन्तमु** हूर्त है।

§ ४८०. **शंका**-अकृष्ट काल अन्मु हूर्न क्यों है ?

समाधान-क्योंकि, दाहस्थितिको बॉधनेवाला जीव उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करता है तब उस उत्कृष्ट स्थितिके वन्धकालका उत्कृष्ट प्रमाण अन्तमु हूर्न है।

\* इसी प्रकार सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका काल जानना चाहिये ।

§ ४८१. मिध्यात्वके समान सोलह कपायोंकी डःक्ट स्थितिका जघन्यकाल एक समय

उकस्सेण अंतोम्रहुत्तमेत्तोः परवयडीदो संकंतिहदीए विला सगुकस्सवंभं चेव अस्सिद्ण उकस्सिहिदिग्गहणादो ।

अण्वुंस्यवेद-ऋगदि-सोग-भय-दुगुंद्राणभेवं चैव ।

४ = २. एगसमयमेत्तं जहण्णकालेण अंतोमु हुत्तमेत्तुकस्सकालेण च सोलसकसाएहिंतो भेदाभावादो । कसायउकस्सिंदिए वंयाविलय।दिक्कंताए अप्पप्पणो उत्ररि
संकंताए उकस्सिंदिदं पिडवज्जिमाणाणं णीकसायाणं कथं कालेण समाणदा ? ए,
उकस्सवंयेण सह अविरुद्धवं वाणं वंधकमेणेव पिडिच्छिदउकस्सिंदिदिसंतकम्माणं कोलेण
समाणताविरोहादो ।

त्र्यार उत्कृष्टकाल त्रान्तर्मु हूतप्रमाण है; क्योंकि यहा पर प्रकृतिसे संक्रमण हाकर प्राप्त होनेवाली स्थितिको छोड़कर अपने उत्कृष्ट बन्धकी ऋपेत्ता ही उन्कृष्ट स्थितिका प्रहण किया है।

विश्रापार्थ पहले मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट कालका निर्देश करते समय जां टीकाम दाह शब्द आया है वह संक्लेशक परिणानोंके अर्थमें आया है। दाहका मुल्पार्थ ताप या संताप होता है, जो कि संक्लेशक होने पर होता है, अतः यहाँ दाहसे संक्लेशक परिणामों का महण किया है। उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक प्रयोज्ञक ऐसे संक्लेशक परिणाम अधिकसे अधिक अन्तर्मु हूर्त कालतक ही होते हैं अतः उत्कृष्ट स्थितिका काल अन्तर्मु हूर्त कहा है। चूँ कि उत्कृष्ट संक्लेशक परिणाम कम से कम एक समय तक और अधिक से अधिक अन्तर्मु हूर्त काल तक होते हैं, अतः सोलह कापायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्यकाल एक समय ओर उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हूर्त कहा है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि मिण्यात्व और संलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थिति बन्धसे ही प्राप्त होती है संक्रमणसे नहीं, क्योंकि मिण्यात्वमें संक्रमित होनेवाली सम्यवत्व और सम्यिग्यथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति यदि सत्तर कांड़ाकांड़ी सागर हो और सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थित चाल स कांड़ाकांड़ी सागर हो तो संक्रमणसे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थित सत्तर कांड़ाकांड़ी सागर हो और सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थित चालीस कोंड़ाकांड़ी सागर श्रीर संतर्म हो स्थित होती है, अतः इन मिण्यात्व आदिककी बन्धकी अपना ही उत्कृष्ट स्थित जाननी चाहिये।

अन्युंसकवेद, अरित, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिका काल इसी मकार होता है।

§ ४=२. क्यांकि एक समय प्रमाण जघन्य काल और अन्तर्मुहूर्न प्रमाण उत्कृष्ट कालकी अपेना सोलह कपायोंसे इनके कालमें कोई भेद नहीं हैं।

शंका—कपायोंकी उत्रुष्ट स्थिति वन्यावितकां व्यतीत करके नौ नौकपायोंमें संकानत होती है अमेर तब जाकर नौ नौकपाएँ उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त होती हैं अतः इनकी कालकी अपेचा कपायोंके साथ समानता कैसे हो सकती हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट वन्यके साथ जिनका बन्ध अविरुद्ध है नथा वन्धक्रमसे ही जिन्होंने उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मको प्राप्त कर लिया है उनकी कालकी अपेन्ना कपायोंके साथ समानता माननेमें कोई विरोध नहीं आता है। \* सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुकस्सिद्धिदिविद्त्तीत्रो केवचिरं कालाक्षे होदि ?

§ ४८३. सुगमं।

\* जहण्णुक्कस्सेण एगसमञ्जो ।

§ ४८४. कुदो ? यहावीससंतकिमण्ण मिच्छादिहिणा तिव्वसंकिलेसेण चउहाणियज्ञवमञ्भस्म उविर अंतोकोडाकोडिमेचदाहिदिं वंधमाणेण उकस्सिहिदिं वंधिय अंतोमुहुचपडिभग्गेण वंदगसम्बचे गहिदे तग्गहणपद्यममण् चेव सम्मच-सम्मा-मिच्छचाणमुकस्सिहिदिदंसणादो ।

ॐ इस्थिवेद-पुरिसवेद-हस्स-रदीगमुक्कस्सिद्धिदिविहत्तीत्रो केविचरं कालादो होदि ?

विशेषाथ—भय श्रार जुगुप्सा ना घ्रु वर्यान्धनी प्रकृतियाँ हैं, अतः उनका वन्ध तो सर्वदा होता रहता है। किन्तु नपुंमकंपद, अरित श्रीर शोक, इन नोकपायोंका वन्ध अन्य समयमें हाता भी हैं और नहीं भी हाता है परन्तु उन्कृष्ट स्थितिवन्धके समय श्रवश्य होता है। अब किसी जीवने कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय तक वन्ध किया श्रीर वह जीव कपायकी उत्कृष्ट स्थिति वन्धके पश्चान् एक श्रावित कालतक इन पांच नोकपायोंका वन्ध करता रहा तो उमके एक स्थावितके पश्चान् कपायोंकी वह उत्कृष्ट स्थिति पांच नोकपायोंमें संक्रमित हो जाती है और इस प्रकार उक्त पाँच नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति एक समय काल तक पाई जाती है। तथा किसी अन्य जीवने अन्तर्मु हूर्त काल तक सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति वाँची श्रीर वह जीव कपायोंकी उत्कृष्ट स्थित वन्धक पश्चान् एक आवित कालतक उक्त पाँच नोकपायोंका वन्ध करता रहा तो उसके कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिवन्धक प्रारम्भ होनेके एक श्रावित कालसे लेकर वन्ध समाप्त होनेके एक श्रावित काल तक सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितियांच नोकपायोंमें संक्रमित होती रहती है श्रीर इस प्रकार पांच नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका श्रवस्थानकाल कपायोंके समान श्रन्तमु हूर्त प्राप्त हो जाता है।

- 🌣 मन्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिबिभक्ति वालेका कितना काल है ?
- ९ ४=३ यह सूत्र सुगम है।
- . 🟶 जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है ।
- § ४८४ शंका—इनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय क्यों हं ?

समाधान—जो ऋहाईस कर्मोकी सत्तावाला है और जा तीव्र संक्लेशरूप परिणामोके कारण चतुःस्थानिक यवमध्यके ऊपर ऋन्तः कोड़ाकोड़ी प्रमाण दाहस्थितिका वन्ध कर रहा है ऐसा कोई मिध्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर और उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामोंसे निवृत्त होकर ऋन्तर्मु हूर्न कालनक विद्युद्धिको प्राप्त होता हुआ जब वेदक सम्यक्त्यको स्वीकार करता है नब उसके वेदक सम्यक्त्यके मह्ण करनेके प्रथम समयमे सम्यक्त्य और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति देखी जाती है। ऋतः इन दोनोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है।

\* स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिविमक्तिवालेका कितनः काल है ?

६ ४८५. सुगमं।

## **\* जहण्णेण एगसमञ्जो**।

§ ४८६. क्कदो ? कसायाणमेगसमयमाबिष्ठयमेत्तकालं वा उकस्सिटिदिं बंधिय पडिहग्गपढमसमए पडिहग्गाविष्ठयाए वा इच्छिदणोकसायं बंधाविय गिलदसेसकसा-युकस्सिटिदीए तत्थ संकिमदाए एदासिं चदुण्हं पयडीणमुकस्सिटिदिकालस्स एगसमय-दंसणादो ।

## **\* उक्कस्सेण आवलिया ।**

§ ४८७. कुदो ? पडिहरगकाले चेत्र एदासिं चदुण्हं पयडीणं वंश्रणियमादो । उकस्सिटिदिवंशकाले एदाश्रो किण्ण वज्मति ? श्रचसुहत्ताभावादो साहावियादो वा । श्रिहियो कालो किण्ण लब्भिदि ? स्म, वंश्रगद्धाचरिमाविलयाए बद्धसमयपबद्धाणं चेव तत्थुकस्सत्तुवलंभादो ।

§ ४**≒४** यह सृत्र सरत है ।

\* जघन्य काल एक समय है।

§ ४८६. शंका—इनका जघन्य काल एक समय क्यों है ?

समाधान—क्योंकि जिसने कपायोंकी एक समय तक अथवा एक आवलीप्रमाण काल तक उत्कृष्ट स्थितिको बांधा है उसके प्रतिभान होनेक पहले समयमे अथवा प्रतिभान होनेके आवली प्रमाण कालके भीतर इन्छित नोकपायका बन्ध कराकर अनन्तर गलकर शेप रही कपायकी उत्कृष्ट स्थितिके इन्छित नोकपायमे संक्रमण कराने पर इन चारो प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका काल एक समय देखा जाता है।

अ उत्कृष्ट काल एक त्रावली है।

् ४८७. शंका — उत्हृष्ट काल एक आवली क्यों हैं ?

समाधान-क्योंकि प्रतिभग्न कालके भीतर ही इन चार प्रकृतियोंके बन्धका नियम है। शंका-- उत्कृष्ट स्थितिके वन्धकालमे ये चारों प्रकृतियां क्यों नहीं वंधती है ?

समाधान-क्योंकि ये प्रकृतिया छत्यन्त अश्चम नहीं हैं इसलिये उस कालमें इनका बन्ध नहीं होता। अथवा उस समय नहीं बंधनेका इनका स्वभाव है।

शंका-3त्मृष्ट काल अधिक क्यों नहीं पाया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बन्धककालकी अन्तिम आवर्लामें वंधे हुए समयप्रबंद्धोंकी ही इन चारों प्रकृतियोमें संक्रमण होनेके कालमे उत्कृष्टना पाई जाती है, इसलिये इनकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल एक आवर्लासे अधिक नहीं हो सकता।

विशेषार्थ-स्त्रीवेद, पुरुषवंद, हास्य और रितर्का उत्हृष्ट स्थिति एक आवलीकम चालीस को इंकिंड्स सागर है और इनका वन्ध कपायोंकी उत्हृष्ट स्थितिवन्धके समय होता नहीं, किन्तु जिस समय उत्हृष्ट संक्लेशरूप परिणामोंसे जीव निवृत्ता होने लगता है उसी समयसे होता है, अतः इनकी उत्हृष्ट स्थितिका जयन्य अवस्थान काल एक समय और उत्हृष्ट

# 🛞 एवं सच्वासु गदीसु ।

§ ४८८. जहा ओघम्मि उकस्सिटिदिकालपरूवणा कदा तहा सव्वासिं गदीण-मोघम्मि परूवणा कायव्वा रा श्रादेसम्मिः, तत्थ ओघादो विसंसदंसणादो ।

§ ४८९, एवं चुण्णिसुत्तपरूवणं काऊरण संपिह एदेण सूचिदत्थजाणावरणट-मुचारणाइरियवक्रवाणमाघादो चेव भणिस्सामो ।

§ ४९० काळाणुगमेण दुविहो णिहेसो-म्रोघेण त्रादेसेण य । तत्थ त्रोघेण मिच्छत्त-सोळकसायाणमुक्क० जह० एगसमत्रो, उक्क० अंतोमुहुत्तं । पंचणोकसायाण-मुक्क० जह० एगसमञो, उक्क० अंतोमु० । कुदो १ सोलसकसाय-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुर्गुद्धाणं सिर्सं मंकिलेसं पूरेदृण उक्कस्पिटिदिं वंधिद । ताधे कसायाण-

अवस्थान काल एक आविल प्राप्त होता है, क्योंकि जो एक समय तक कपायोंकी उत्छष्ट स्थिति बांधकर और दूसरे समयसे इन स्रावेद आदिका वन्ध करने लगता है उसके एक आविल परचान एक आविलकम कपायकी उत्छष्ट स्थिति स्त्रीवेद आदि रूपसे संक्रमित हो जाती है। तथा जो एक आविल या एक आविलसे अधिक काल तक कपायकी उत्छष्ट स्थिति वांध कर परचान स्त्रीवेद आदिका वंध करने लगता है उसके एक आविलके परचान एक आविल काल तक ही एक आविलकम कपायकी उत्छष्ट स्थिति स्त्रीवेद आदि रूपसे संक्रमित होती है। इसके परचान वांधी हुई कपायकी उत्छप्ट स्थिति का स्त्रीवेद आदिमें संक्रमण होने पर भी उसमें एक एक समय उत्तरोत्तर कम होता जाता है, अतः इनकी उत्छष्ट स्थिति जघन्य रूपसे एक समय तक और उत्कृष्ट रूपसे एक आविलो कालतक पाई जाती है।

## क इसी प्रकार सभी गतियोंमें ानना चाहिये।

§ ४८८ जिस प्रकार ऋोषमें उत्कृष्ट स्थितिके कालकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार सभी गतियों की प्ररूपणा ऋोषमें ही करनी चाहियं आदेशमें नहीं, क्योंकि आदेशमें आपकी ऋपेचा विशेषता देखी जाती है।

विशेषाध्य-यहां चृर्णिस्त्रकारने सव गतियों में काल सम्बन्धी श्रोधप्ररूपणाको स्वीकार किया है। इसका यह तात्पर्य है कि कालसम्बन्धी उपर्युक्त ब्रोधप्ररूपणा चारों गितयों में बन जाती है, श्रातः चारों गितयों में कालसम्बन्धी प्ररूपणा श्रोधप्ररूपणा ही है। श्रादेशप्ररूपणा ता वह है जिसमे श्रोधसे कुछ विशेषता हां, किन्तु चारों गितयों में कालसम्बन्धी प्ररूपणा श्रोधप्ररूपणासे कुछ भी विशेषता नहीं रखती, श्रातः चारों गितयों में कालसम्बन्धी प्ररूपणा भी श्रोध प्ररूपणा ही है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है।

§ ४६० कालानुगमकी ऋषेचा निर्देश दो प्रकारका है, ऋोचनिर्देश और ऋषेद्रानिर्देश ! उनमेंसे श्रोचकी ऋषेचा मिध्यात्व और सालह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्म हूर्त है। नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय और जुगुप्सा इन पांच नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्म हूर्त है, क्योंकि समान संक्लेशका प्राप्त होकर जीव सोलह कपायोंकी तथा नपुंसकवेद, अरित, शोक,

मुकस्सिटिदिविहत्तीए आदी होदि। णवुंस॰-अरिद-सोग-भय-दुगुंद्धाणं पुण तत्तो आविष्यमेत्तकाले गदे उकस्सिटिदिविहत्ती होदि; कसायाणमुकस्सिटिदीए असंकंताए एट्रासिमुकस्सत्ताभावादो। तदो सञ्वेसिमुकस्मिटिदिवंधकालं सिरेसं गंतूण सोलस-कसायाणमुकस्सिटिदिवंधो थकदि। तदो तिम्म थनके वि आविष्यमेत्तकालं पंचणोकसा-याणमुक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि। पुणो इमं पिच्छमाविलयं घेत्तूण पुच्युत्ताविल्डजण्डकस्स-टिदिवंधकालम्मि पिन्खंने कसायाणमुक्कसिटिदिकालमेत्तस्स पंचणोकसायाणमुक्कस्स-टिदिकालस्स्यवलंभादो। इत्थि-पुरिस-हस्स-रदीणं पुण उक्क० जह० एगस०, उक्क० एगाविलया; पिडहम्माविल्याए चेव एदासिमुकस्सिटिदिदंसणादो।

§ ४६१ भिच्छत्त-सोलकसायाणमणुक्क० जह० अंतोमुहुत्त**ं णवणोक० जह०** 

भय और जुगुष्साकी उत्कृष्ट स्थितिकां बाँधता है। उस समय कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका धारम्भ होता है और नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय और जुगुष्साकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्ति इससे एक आविल कालके जाने पर होती हैं, क्योंकि जवतक कपायोंकी रिकृष्ट स्थितिका इनमें संक्रमण नहीं होता तबक इनकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती, अतः सभीकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धकाल समान जावर संलह वपायोंका उन्कृष्ट स्थितिवन्ध क्क जाता है और मोलह कपायोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्ध के एक जाने पर भी एक आवली कालतक पांच नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति होती है, अतः इस पीछेकी आवलीको ग्रहण, करके इन पाँच नोकपायोंके पूर्वोक्त एक आविलकम उत्कृष्ट स्थितिवन्धकालने मिला देने पर कपायोंके उत्कृष्ट स्थिति वन्धकाल प्रमाण पांच नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिकाल हो जाता है। स्त्रीवद, पुरुपवद, हास्य और रितकी उन्कृष्ट स्थिति विभक्तिक। जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक आविल है, क्योंकि प्रतिभन्नाविकालमें ही इनकी उन्कृष्ट स्थिति देगी जाती है।

विशेषार्थ-सोलह कपायोंके उत्हृष्ट स्थितिवन्यके साथ नपुंसकवेद आदि पांच नोकपायोंका ही बन्ध होता है यह बात पहले ही बनला आये हैं। अब यदि किसी एक जीवने सोलह कपायोंका उन्हृष्ट स्थितिवन्ध अन्तर्भु हृत काल तक किया तो उसके उत्हृष्ट स्थिति बन्ध के प्रारम्भ होनेके एक आवली कालसे लेकर मोलह कपायोंकी एक आविल कम उत्हृष्ट स्थितिवन्ध के आरम्भ होनेके एक आविल कालतक उक्त पांच नोकपायोका और बन्ध करिता रहे तो उस समय भी कपायोंकी उत्हृष्ट स्थितिवन्ध के बाद एक आविल कालतक उक्त पांच नोकपायोका और बन्ध हुई प्रकृतिक निपेकोंका एक आविलके बाद अन्य प्रकृतिक विशेष होता रहेगा, क्योंकि बन्ध हुई प्रकृतिक निपेकोंका एक आविलके बाद अन्य प्रकृतिक विशेष होता रहेगा, क्योंकि बन्ध हुई प्रकृतिक निपेकोंका एक आविलके बाद अन्य प्रकृतिक विशेष होता है ऐसा नियम है। इस नियम अनुसार जो व्यन्तिम आविलमें कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति वँधी है उसका संक्रमण एक आविलके बाद पांच नोकपायोंमे एक आविलों कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति वँधी है उसका संक्रमण एक आविलके बाद पांच नोकपायोंमें एक आविलों कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिक पांच नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिक वन्ध कालमेंसे घटा देने पर और इस अन्तिम आविलक जोड़ देने पर पांच नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिक सत्त्व कालके समान प्राप्त हो जाता है। शेष कथन मुगम है।

§ ४६१ मिथ्याच स्रोर सालह कपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल स्रन्तर्मु हूर्त ३५ एगसमओ, उक्क० सव्वासिमणंतकालमसंखेजाः पोग्गलपरियद्दाः । सम्मत्त-सम्मामिच्छ-त्ताणमुक्क० जहण्णुककस्सेण एगसमओ । अग्रुक्क० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० वेद्घावद्दि-सागरोवमाणि सादिरेयाणि । एवं अचक्खु०-भवसि० ।

है तथा नौ नोकपायोंकी अनुःकृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है और सभी प्रकृतियोंकी अनुन्कृष्ट स्थिति का उन्कृष्ट काल अनन्त काल है जिस का प्रमाण असंख्यात पुर्गल परिवर्तन है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उन्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उन्कृष्ट काल एक समय है तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तर्भु हुर्त है और उन्कृष्ट काल साधिक एकसौ वनीस सागर है। इस प्रकार अचनुद्र्यनिवाले और भव्य जीवोक जानना चाहिये।

विशोषार्थ-जो जीव उत्कृष्ट स्थितिके वन्धके कारणभूत उत्कृष्ट संक्लेश परिणामोसे निवृत्त हो गया है उसे पुनः उन परिणामोंको प्राप्त करनेमें कमसे कम अन्तर्म हुर्न काल लगता है और इस मध्यके कालमें इस जीवके मिथ्यात्व और सोलह कवायोकी अनुन्कृष्ट स्थितिका ही वन्ध होगा, ऋतः इनकी अनुस्क्रष्ट स्थितिका जधन्य काल अन्तम् हुन कहा । यदि वोई जीव एकेन्द्रिय पर्यायमें निरन्तर परिश्रमण करता रहे तो वह वहां श्रमन्त काल तक रह मकता है और एकेन्द्रियके मिध्यात्व और सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध नहीं होता, इसलिये इसके नो नोकपायोंकी भी उत्कृष्ट स्थिति नहीं पाई जा सकती, अतः उक्त २६ प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अनन्त काल कहा। जब कोई एक जीव एक एक समयके अन्तर वे क्रोधादिककी एक समय आदि कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है खोर उसका उमी प्रकारसे नो नोकपायोंसे मंकमण करता है तब नो नोकपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। जो जीव सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्नि-थ्यात्वकी सत्ताको प्राप्त करके अन्तर्मु हर्तमे उनकी चपणा कर देना है उसके उक्त दोनो प्रकृतियोंकी श्चनन्कष्ट स्थितिका जवन्य काल अन्तम् इतं होता है। तथा जो जीव उद्वेलना कालके अन्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त होता है और छ्यासठ सागर तक सम्यक्त्वके साथ रह कर पुनः मिश्यात्वमे जा कर उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उद्वेलना करने लगता है तथा उद्वेलनाके अन्तिम समयमं सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः एक आविलकम छ्यामठ सागर तक सम्यक्त्वके साथ रहता है तथा <del>ब्रान्तमें मिथ्यात्वमें जाकर उक्त</del> दोनों प्रकृतियोकी इंडेलना करता है उसके सम्यक्तव स्रोर सम्यग्मिथ्यात्वकी श्रनत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल माधिक एकसौ वत्तीस सागर पाया जाता है। चिर्णसत्रोंमे चारों गतियोमें उत्कृष्ट स्थितिकी काल प्ररूपणा श्रोपके समान कही है श्रीर उचारणामें चोरों गतियोंको त्रादेश प्ररूपणाम ले लिया है। इसका कारण यह है कि उचारणामें उत्कृष्ट स्थितिके कालके साथ अनुत्कृष्ट स्थितिका काल भी सम्मिलित है, अतः यहाँ चारों गतियोंमें आच प्ररूपणा नहीं वनती । यही कारण है कि उच्चारणामें चारों गतियोंको आदेश प्ररूपणामें परिगणित किया है । किन्तु उच्चारणाकी स्रोध प्ररूपणा अचत्तदर्शन स्रोर भव्य मार्गणामें घटित हो जाती है, अतः उच्चारणामे इनकी प्ररूपणाको अधिक समान कहा है। यद्यपि इन दोनों मार्गणात्रोंमें चूर्णिसूत्रोंकी त्रोच प्ररूपणा भी वन जाती है फिर भी चूर्णिसूत्रका 'एवं सन्वास् गदीसु' यह वचन देशामर्पक हैं, अतः वहां अन्य मार्गणाएं नहीं गिनाई हैं।

§ ४६२. त्रादेशकी अपेत्ता नारिकयों निष्यात्व, मोलह कपाय त्रीर नो नोकपायोंकी इत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इतनी अणुक्क० जह० एगसमओ, उक्क० सगुक्कस्सिटिदी। कत्थ वि देसूणा ति भणंति; तत्थ पविसिय अणुक्कस्सिटिदीए आदिकरणादी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० [ एगसमओ। अणुक्क० ] जह० एगसमओ, उक्क० सगिटिदी। पटमादि जाव सत्तमा ति एवं चेव। णविर सगसगुक्कस्सिटिदी वत्तन्वा।

विशेषता है कि स्त्रीवंद, पुरुपंवंद, हास्य श्रीर रितकी उत्कृष्ट स्थितिक। उत्कृष्ट काल एक श्राविल प्रमाण है। तथा उक्त सब प्रकृतियोंकी अनुन्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल नारिकयोंकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। कही पर जुद्ध श्राचार्य नारिकयोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रपनी उत्कृष्ट स्थितिको कुछ कम है ऐसा कहते हैं सो वहाँ पर नरकमें प्रवेश कराके श्रानुत्कृष्ट स्थितिका प्रारम्भ किया है ऐसा जानना चाहिये। सम्यक्त्व श्रीर सम्यिम-ध्यात्कि उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। पहली पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक इसी प्रकार कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सब कर्मोंकी श्रमुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कहते समय श्रपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण कहना चाहिये।

विशेषार्थ-मिण्यास्य त्रादि सब कर्मीकी उत्कृष्ट स्थितिके जघन्य त्रीर उत्कृष्ट कालका ज्वलासा जिस प्रकार श्रोधमें कर आये हैं उसी प्रकार नारिकयोंके कर लेना चाहिये। तथा जिसने अपने भवके उपान्त्य समयमें मिध्यात्व और मालह कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके त्रनितम समयमें त्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्य किया उस नारकीके मिध्यात्व त्रीर सीलह कपार्यो की अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा जो पूरी पर्यायमे अनुत्कृष्ट स्थितिका बांधता है उसके मिथ्यान्व और सालह कपायांकी अनुस्क्रप्ट स्थितिका उत्क्रप्ट काल नरककी उत्क्रप्ट स्थिति प्रमाण पाया जाता है। तथा जिस नारकीने भवके उपान्त्य समयमें एक समयतक नो नोकपायोंमें सोलंह कपायोंकी एक त्यावालिकम उत्कट स्थितिका संक्रमण किया है उम नारकीके भवके आन्त्रम समयमे नो नोकेपयोंकी अनुस्कृष्ट स्थितिका अधन्य काल एक समय पाया जाना है। अथवा जिस प्रकार आवमे नौ नोकपायोका जवस्यकाल घटित किया है उसी प्रकार यहा भी जानना चाहिये। तथा जिसके पूरी पर्यायमे मिध्यात्व ख्रीर सीलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति का वन्ध नहीं हुआ और न पूर्व पर्यायमें मरने समय एक आविल कालके भीतर उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध हुआ उस नारकीं नो नोकपायोकी अनुतकृष्ट स्थितका उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिष्रमाण पाथा जाता है। यहां मृलमे मिध्यात्व, सोलह कपाय और नौ नाकपायोंकी श्र**तुत्कृष्ट** स्थितिका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनो उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है सो इसका कारण यह बताया है कि नरकमे प्रवेश कराके अनुस्कृष्ट स्थितिका प्रारम्भ कराना चाहिये । जो मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके अन्तमु हुर्तमे बंदकसम्यक्त्वका प्राप्त करता है उसके वेदकसम्यक्त्वका प्राप्त करनेके प्रथम समयमे सम्यक्तव श्रीर सम्यग्मिण्यात्वका उत्कृष्ट स्थिति देखी जाती है, श्रतः यहाँ इन दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य स्रोर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। जो जीव नरकमें उत्पन्न होते ही सम्यक्त्व या सम्यग्निध्यात्वकी उद्वेलना कर लेता है उसके नरकमें सम्यक्त त्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी त्रमुत्कृष्ट स्थितिका जबन्यकाल एक समय पाया जाता है। तथा जो प्रारम्भके श्रीर अन्तके श्रन्तमुं हुर्त कालको छोड़कर जीवन भर वदक सम्यक्त्वके साथ रहा है। या जिसने सम्यक्त श्रोर सम्यग्मिण्यात्वकी उद्वेलना होनेके मध्य या श्रन्तमें पुनः पुनः यथायोग्य सम्यक्त्वको मान किया है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल नरककी

\$ ४६३ तिरिक्खग्दीए तिरिक्खेसु मिच्छत्त-सीलसक० उक्क० जह० एग-समझो, उक्क॰ अंतोमुहुत्तं । अणुक्क० ज० एगसमझो, उक्क० अणतकालमसंखेजा पोग्गलपरियद्दा । णवणोक॰ उक्क० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० एगावलिया । अणुक्क० ज० एगसमओ, उक्क० अणंतकालमसंखे० पोग्गलपरियद्दा । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमओ । अणुक्क० ज० एगममओ, उक्क० तिण्णि पत्तिदोबमाणि सादिरेयाणि ।

ब्लुष्ट स्थितिप्रमाण पाया जाना है। इसी प्रकार प्रथमादि पृथिवियोम सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितियोंका काल कहना चाहिये। किन्तु सब प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रपने स्थपने नरककी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिये।

\$ 88.३ विर्यचगितमे वियचे।मे मिश्यात्व श्रोर सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुँ हुर्न प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रानन्त काल है जो श्रासंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय है श्रोर नपुंभक्तवेद श्रादि पाँचका उत्कृष्ट काल श्रन्तमुँ हूर्त श्रोर स्त्रीवेद श्रादि चारका उत्कृष्ट काल एक श्राविल प्रमाण है। तथा नो नोकपायोंकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट अनन्त काल है जो श्रासंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। सम्यक्त्य श्रोर सम्यिमध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल साधिक तीन पर्य है।

\$ ४६४. पंचेन्द्रियतियेच, पंचेन्द्रियतियच पर्याप्त और पंचेन्द्रियितयेच योनिमितियोमं मिध्यात्व, संलह कपाय और नो नोकपायोक्षी उत्कृष्ट स्थितिका काल आपके समान है। तथा उक्त सब प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्यिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पस्य है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनीके जानना चाहिये।

विशोपार्थ—तियंच गतिमं सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य कोर उत्कृष्ट काल स्रोचके समान घटित कर लेना चाहिय । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल जिस प्रकार नारिक्योंमें घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिय । हाँ अनुत्कृष्ट स्थिति के उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है । तिर्यंच पर्यायमें निरन्तर रहनेका उत्कृष्टकाल असंख्यात पुद्गल परिवर्तन है, अतः मिण्यात्व, सालह जपाय और नो नाकप्रयोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल भी इतना ही प्राप्त होता है । तथा सन्यक्त्व और सभ्यिमण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक तीन पत्य है, क्योंकि पंचेन्द्रिय तिर्थचोंमें रहनेका उत्कृष्ट काल प्रथक्त्व पूर्वकोटि अधिक तीन पत्य है अतः उस कालमें पुनः पुनः सम्यक्त्वके होनेसे सम्यक्त्व व सम्यग्निध्यात्वका

६ ४६५ पंचि ०तिरि० अपज्ञ ० भिच्छत्त-सीलसक ० णवणीक ० उक्क ० जहण्णुक्क ० एगसमञ्जो । अणुक्क ० ज० खुद्दा भवग्गहण समऊणः; उक्क ० अंतोमु० । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क ० जहणुक्क ० एगम । अणुक्क ० जह० एगस०, उक्क ० अंतोमु० । एवं मणुसअपज्ञ ० पंचि ० अपज्ञ ० तसअपज्जताणं ।

सत्त्व बना रहता है। अतः सन्यक्त्व व सम्यग्निश्यात्वकं। अनुन्छष्ट स्थातिका उत्कृष्ट काल प्रथक्त्व पृर्वकोटि अधिक तीन पत्य कहा है। पंचेत्त्रियपर्याप्त और पंचेत्रिय तिर्वव योनिमती जीवोंके सव कमें की अनुन्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट कालको छोड़कर केर सब कान पृर्वपत्त है। किन्तु मिश्यात्व, सोलह कपाय और नो नोकपायोकी अनुःकृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट कान अपनी-अपनी उन्कृष्ट स्थितिष्रमाण है। यहाँ पंचेत्रिय तिर्यचाकी पचानवे पूर्वकोटि अधिक तीन पत्य, पंचेत्रिय तिर्यच पर्याप्तककी मेंतालीस पृर्वकोटि अधिक तीन पत्य और पंचित्रिय तिर्यच पर्याप्तककी संतालीस पृर्वकोटि अधिक तीन पत्य उत्कृष्ट कायस्थिति जानना चाहिये। नथा सम्यक्त्व और राम्यग्मिश्यात्वका अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल माधिक तीन पत्य है जिसका खुलामा पहले किया ही है। सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्यान और मनुष्यनीके इसी प्रकार कथन करना चाहिये। किन्तु इनके मिश्यात्व आदिकी अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कहना चाहिये।

\$ ४६५ पंचेन्द्रिय तिर्थंच ऋषयांप्तकोमे मिथ्यात्क, सांलह कपाय ख्रोर नौ नोकपयोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य ख्रोर उत्कृष्ट कान एक समय है तथा अनुन्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समयकम खुद्दाभवयद्ग्ण्यमाग्ण् ख्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्प्रकृत्व ख्रीर सम्यग्निभ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य ख्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुन्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय ख्रोर उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य ख्रप्यात्न, पंचेन्द्रिय अपर्यात्न ख्रोर जम ख्रपर्यात्न जीवोके जानना चाहिय।

विशेषार्थ—जो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मिण्यात्व स्रोर सोलह कपायों की उन्कृष्ट स्थिति वाँधकर और स्थितिवात न करके स्थान हुन काल के परचान पंचेन्द्रिय तिर्यच लव्ध्यप्याप्तकों में उन्म होता है उसके पहले समयमें उक्त प्रकृतियों की उन्कृष्ट स्थिति हाती है स्थाः पंचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध्यप्याप्तकों में उक्त प्रकृतियों की उन्कृष्ट स्थितिका जयन्य स्थार उन्कृष्ट काल एक समय कहा है। इसी प्रकार नो नो कपायों की उन्कृष्ट स्थितिका जयन्य स्थार उन्कृष्ट काल एक समय जानना चाहिये पर यह सक्तमणसे पात होता है। तथा इस एक समयकों हो इक्त शेप खुदाभवमहण् प्रमाण काल उक्त सब प्रकृतियों की स्थानकृष्ट स्थितिका जयन्य काल है स्थार लब्धप्रयाप्त स्थानस्थान में रहनेका उन्कृष्ट काल स्थान सुद्धित हो। स्था दिन का उन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल स्थान में रहनेका उन्कृष्ट काल स्थान उन्कृष्ट कालनक उसने वह पर्याय न बदली, पुनः पुनः उसीमें उत्पन्न होता रहा तो उसके उक्त सब प्रकृतियों की स्थानकृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल स्थान प्रकृतियों अनुन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल स्थान प्रकृतियों की स्थान समयमें सम्यक्त स्थार सम्यिभ्यात्वकी उन्कृष्ट स्थितिका जयन्य स्थार उन्कृष्ट काल एक समय चिंदत कर लेना चाहिये। तथा स्थानकृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय उद्धेलनाकी अपेचा स्थार प्रकृत स्थार सार्यों इत्कृष्ट स्थितिकी स्थान चाहिये। सूनमें स्थार जितनी मागेणाएँ गिनाई है उनमें भी इसी प्रकार सम प्रकृतियोंकी उन्कृष्ट स्थितिकी स्थानना चाहिये। सूनमें स्थार जितनी मागेणाएँ गिनाई है उनमें भी इसी प्रकार सम प्रकृतियोंकी उन्कृष्ट स्थातिका ज्ञानना चाहिये।

\$ ४९६. देवेसु णिरश्रोघं । भवणादि जाव सहस्सार ति एवं चेव । णविर श्रण्पणो उनकस्सिहिदी वत्तवा । श्राणदादि जाव उविरमगेवज्जे ति मिच्छत्त— बारसक०-णवणोक० उकक० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० जह० सगसग्जहण्णा- उवं समऊणं, उक्क० सगसगुक्कस्सिहिदी । श्रणंताणुवंधिचउक्क० उक्क० जह- एणुक्क० एगस० । श्रणुक्क० ज० अंतोमु० एयसमश्रो वा, उक्क० सगिहिदी । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमओ । [ श्रणुक० जह० एगससओ ] उक्क० सगिहिदी । अणुदिसादि जाव सबहे ति मिच्छत्त-सम्मामि०-वारसक-णवणोक० उक्क० जहण्णुकक० एगसमश्रो । श्रणुक्क० जह० जहण्णाहिदीए समयूणा, उक्क० उक्कस्सिहिदी । सम्मत्त० उक्क० जहण्णुक्क० एगस० । श्रणुक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिहि० । अणंताणु०चउक्क० उक्क० जहण्णुकक० एगस० । श्रणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० सगिहिदी ।

ई ४६६ देवाम सामान्य नारिकयोक समान कथन है। भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देवोंके इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वत्र अनुकृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कहते समय अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण कहना चाहिये। आनत करुपसे लेकर उविरम प्रवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कपाय खीर नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थिति प्रभाग और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है। त्रानन्तानुबन्धी बतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल अन्तर्मु हुर्ने या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्व त्र्योर सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुस्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। अनुदिशसे लंकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंम मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कपाय और नौ नौकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कम जवन्य स्थिति प्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी त्रपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण हैं। तथा सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनन्तानुबन्धां चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल अन्तर्म हर्तप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—सामान्य देव तथा भवनवासियोंसे लेकर सहस्तार करप तकके देवोंमे सव कर्मी-की उत्कृष्ट श्रार श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल सामान्य नारिकयोंके समान है, किन्तु श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कहते समय श्रपने-श्रपने करपकी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण् कहना चाहिये। श्रानतसे लेकर उपिरम श्रेवयक तकके देवोमे भवके पहले समयमे ही मिण्यात्व, बारह कपाय श्रीर तो नाकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है श्रतः उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कम श्रपने-श्रपने करपकी § ४९७. इंदियाणुवादेश एइंदिएसु मिन्छत्त-सोत्तसक० उनक० जहण्णुक्क० एगसमओ । श्रणुक्क० ज० सुद्दाभवग्गहणं, उक्क० अणंतकात्तमसंखेजा पोग्गल-परियद्दा । णवशोक० उक्क० ज० एगस०, उक्क० आविष्ठया । अणुक्क० ज० एयस०, उक्क० श्रणंतकाल्यमंखे० पो०परियद्दा । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमओ । अणुक्क० ज० एयस०, उक्क० पिट्टो० श्रमंखे०भागो । एवं वादरेइंदियाणं । स्वार्थ अणुक्कस्सुक्कस्समंगुलस्स असंखेज्वदि-

जघन्य स्थितिप्रमाण त्रौर उत्कृष्ट काज उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व त्रोंर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थिति भी भवके पहले समयमं हो सकती हं ऋतः इनकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य ऋौर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इन प्रकृतियोंकी अनुस्कृष्ट स्थितिका उरकुष्ट काल अपनी-अपनी उरकुष्ट स्थिति प्रमाण होता **है,** क्योंकि जो अनुस्कृष्ट स्थितिके साथ त्रानतादि कल्पोंमे उत्पन्न होता है। वह पदि सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी उद्वतना नहीं करता है और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना नहीं करता है तो उसके जीवन भर इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति बना रहती है। तथा जा जीव आनतादिकोमे पेदा हुआ और पर्याप्त होकर अन्तर्मु हूर्त कालके भीतर जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर ली उसके अनन्तानु-वन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्यकाल अन्तर्मु हूर्त पाया जाता है। तथा अनन्तानुबन्धी-की विसंयोजना किया हुआ कोई एक देव सासादनमें आया और दूसरे समयमें मरकर अन्य गतिमें चला गया तो उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाना है। तथा सम्यग्मिश्यात्व श्रोर सम्यक्त्वकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कमसे उद्वेलना और कुनकृत्यवदक सम्यक्त्वकी अपेद्या घटिन कर लेना चाहिय । अनुदिशसे लेकर मर्वार्थसिद्धि तकके देव सम्यग्टिप्ट ही होते हैं अतः उनमें अनन्तानुबन्धी और सम्यक्त्वके अहुन्कुष्ट स्थितिके जघन्य कालके कथनमें कुछ विशेषता है । शेप कथन पूर्ववन् ही जानना चाहिये। यात यह है कि यहाँ अनन्तानुबन्धीकी अनुत्कष्ट स्थितिका जघन्यकाल एक समय नहीं बनता केवल भवके प्रारम्भमें जिसने अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर ली है उसके अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल अन्तर्भु हुर्न ही पाया जाता है। तथा जो कृतकृत्य वेदक सम्यन्द्रिः अनुदिशादिकमें उत्पन्न हुआ और एक समयतक सम्यक्त्व प्रकृतिके साथ रहकर दूसरे समयमे चायिक सम्यग्टिष्ट हो गया उसके सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा यहाँ सम्यग्मिश्यात्वके कालका कथेन मिश्यात्व आदिके साथ करना चाहिये, क्योंकि यहाँ इस प्रकृतिकी उद्वेलना सम्भव नहीं है।

§ ४६७. इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोम मिण्यात्व और सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय हो जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन नमाण है। मंग नेक्यायोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवली प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यापमक अमंख्यात्वें भागप्रमाण है। इसी प्रकार वादर एकेन्द्रियोंक जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अंगुलके असंख्यात्वें भागप्रमाण है।

भागो असंखेजाओ ओसिष्णिणउस्सष्पणीओ। वादरेइंदियपज्ज मिच्छत्त-सोलसक०णवणोक उनक एइंदियभंगो। अणुक्क जिल्ले अंतोमु णवणोकसायाणं एगसमओ,
उक्क संखेजाणि वाससहस्साणि। सम्मत्त-सम्माभि उक्क जहण्णुक्क एगसम्आ। अणुक्क जिल्ले एगस०, उक्क सगिष्टिदी। वादरेइंदियअपज्ज सहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्ताणं पंचिदियअपज्जत्तभंगो। णविर सहुमेइंदियपज्जताणं अणुक्क जिल्ले अंतोमुहुनं। सहुम० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क जहण्णुक्क एगस०।
अणुक जह सुद्दाभवग्गहणं सम्पूणं, उक्क असंखेजा लोगा। सम्मत्तसम्मामि० एइंदियभंगो।

है जिसका प्रमाण असंख्यात अवसिपणी और उत्मिषणी होता है। वादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपाशोंकी उत्कृष्ट स्थितिके कालका भंग एकेन्द्रियोंक समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तमुँ हुन है पर नौ नोकपाथोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है और सबका उत्कृष्ट काल संख्यात हज्ञार वर्ष है। तथा सम्यक्त्व और सम्यिमध्यात्व की उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थिति अमाण है। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त सूदम एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंक पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सूद्रम एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंके अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तमुँ हूर्त है। सूद्रम एकेन्द्रियों मिथ्यात्व, सोलह कप य और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कम खुद्दाभव्यक्ष्त प्रमाण और उत्कृष्ट काल एक समय कम खुद्दाभव्यक्ष्त भग एकेन्द्रियोंके समान है।

§ ४६= सब विकलेन्द्रियोमं भिष्यात्व, मोलह कपाय श्रोर नो नोकपायोंकी उत्सृष्ट स्थितिका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कम खुद्दा भवमहण प्रमाण श्रोर एक समय अन्तमु हुने हैं तथा उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थिति प्रमाण है। तथा सम्यक्त श्रोर सम्यग्निष्यात्व की उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थिति प्रमाण है।

विशेषार्थ-एकेन्द्रियोके सिश्यात्व और सोलह कपायकी उक्टस्ट स्थिति भवके पहले समयमें ही होती है अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जपन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। पर यह उत्कृष्ट स्थिति पर्याप्त एकेद्रियोंके ही प्राप्त होती है और इस अपेद्वासे लक्ष्यपर्याप्तकोंके उक्त कर्मोंकी सब स्थिति अनुन्कृष्ट कही जाती है, अतः सामान्य एकेन्द्रियोंके उक्त प्रकृतियोंकी अनुन्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल न्युद्दा भद्यहण प्रमाण कहा। तथा एकेन्द्रिय पर्यायमें जीव असंख्यात पुद्गल परिवर्तन काल तक लगातार रह सकता है और ऐसे जीवके बीचमें उक्त

६ ४६६. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज० भिच्छत्त-सोलसक०-णवाणोक० उनक० ज० एगस०, उकक० अंतोग्रु० एगाविलया । ऋणुकक० ज० एगस० उकक० सगसगुकस्सिट्टिदी । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगस० । ऋणुक्क०

प्रकृतियोंकी उत्कष्ट स्थिति प्राप्त नहीं हो सकती, अतः अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल असंख्यात पदगल परिवर्तन प्रमाण कहा। जो देव सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय तक वन्धकरके एक आवली कालके भीतर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ हं उसके नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है और जो देव एक आवली या इससे अधिक काल तक सोलह कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अनन्तर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुन्या है उसके नों नोकरायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल एक श्राविल प्रमाण पाया जाता है। तथा जिस देवने सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध किया और एक आवलीमें एक समय शेप रहने पर वह मर कर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुन्ना उसके भवके पहले समयमे तो नोकपायोंकी त्रानुत्कृष्ट स्थिति श्रीर दसरे समयमें उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है, अतः नी नोकपायोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय कहा । तथा नो नाकपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल मिथ्यात्व आदिके समान जानना चाहिये. ) सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिनका उत्कृष्ट काल भवके पहले समयमें होता है अतः एकेन्द्रियोंमे इन दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उन्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा एकेन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेके पहले समयमे जिसने सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर ली है उसके सम्यक्तव और सम्यग्मिथ्यात्वकी ऋनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय कहा। तथा उद्वेलनाके कालकी अपेन्ना एकेन्द्रियोमें सम्यक्त्व और सम्य-ग्मिथ्यात्वकी ऋतुत्कुष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल पत्यके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण कहा। बादर एकेन्द्रियोंके भी इसी प्रकार सब प्रकृतियोंकी उत्हुष्ट और अनुकुष्ट स्थितिका काल जानना। किन्तु एक जीवका निरन्तर वादर एकेन्द्रिय पर्यायमें रहनेका उत्कृष्ट काल त्रंगुज़के त्रामंख्यातवें भागप्रमाण है अतः इनके मिश्यात्त्र मोलह कपाय और नो नोकपायोंकी अनुऋष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल त्रांगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण वहा । वादर एकेन्द्रिय प्याप्तकोके त्रापनी पर्यायमे रहनेका जघन्य काल अन्तम् हर्न और उत्कृष्ट काल मंख्यात हजार वर्ष है अतः इस अपेद्वासे इनके अनुत्कृष्ट स्थितिके जबन्य और उत्कृष्ट कालमें एकेन्द्रियोसे विशेषता आ जाती है। शेष कथन एकेन्द्रियोके समान जानना । बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्यात सूरम एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्यात ख्रौर सूरम एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंके पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान काल कहना चाहिये। किन्तु सूदम एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंके अपनी पर्यायमें रहनेका जवन्य काल अन्तर्म हुने हैं अतः इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल अन्तर्म हर्त कहना चाहिये । तथा सूचम एकंन्द्रियोंमें पर्याप्त स्त्रीर ऋपर्याप्त दोनों प्रकारके जीव गर्भित है अतः इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कम खुदा भवप्रहण प्रमाण कहना चाहिये । द्येष कथन सुगम है । इसी प्रकार विकलत्रयोंमें यथा सम्भव उनकी स्थितिका विचार करके उत्कृष्ट ऋौर अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्य ऋौर उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिये।

§ ४६६ पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस श्रीर त्रसपर्याप्त जीवोंमें मिण्यात्व सोलह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल मिण्यात्व श्रीर सोलह कपायोंका अन्तमु हूर्त श्रीर नो नोकपायोंका एक आवलीप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थिति का जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्टकाल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रीर अनुत्कृष्ट काल आंघके समान है। इसो प्रकार पुरुषवेदवाले,

जि॰ एगस॰, उक्क॰ ग्रोधभंगो । एवं पुरिस॰-चक्खु-सण्णि ति ।

१५०० कायाणुवादेण पुढवि०-स्राउ०-बाद्रवणष्किद्यस्तेय० मिच्छत्त-सोलसक०एवणोक० उक्क० एइंदियभंगो । अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं एगसमञ्जो, उक्क०
सगिद्धि । सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियभंगो । वाद्रपुढवि०-वाद्रआउ० एवं चेव ।
णगिर अणुक्कस्सुक्कस्मं सगिद्धि । बाद्रपुढिविपज्ज०-वाद्रआउपज्ज० बाद्रेइंदियपज्जत्तभंगो । एवं वाद्रवणष्किद्देपत्तिपस्तिरपज्जत्ताणं । वाद्रपुढिविअपज्ज०-वाद्रस्राउअपज्ज०-तेउ०-वाद्रतेउपज्जतापज्जत्त-वाउ०-बाद्रवाउगज्जत्तापज्जत्त - वाद्रवणष्कदिपत्तेयमरीरअपज्ज०-िणगोद्०-वाद्रिणगोद्यज्जत्तापज्जत्त-सव्वसुद्वमाणं छव्वीसं पयढीएां उक्क० जहण्णुक्क० एगस० । स्रणुक्क० खुद्दाभवग्गहणमंतोसुद्वृत्तं समऊर्णं,

चत्र्वानवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

\$ ५०० कायमार्गणाके अनुवादमे पृथिवीकायिक, जलकायिक ओर बादर प्रत्येक वनस्पति-कायिक जीवोमें मिण्यात्व, सोलह कपायोंकी उन्हण्ट स्थितिका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्यकाल मिण्यात्व और सोलह कपायोंकी अवेता खुदाभवशहण्यमाण और नो नोकपायोंकी अपेता एक समय है तथा उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा सम्यक्त्य और सम्यग्मिण्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान हैं। बादर पृथिवीकायिक और बादर जलकायिक जीवोंके इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी म्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ-पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस अगर त्रस पर्याप्त जीवों के उद्वेलनाकी अपेचा सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी अनुन्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल एक समय वन जाता है। भय जुगुष्मा, अरित शोक व नपुन्सक वेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल आघके समान अन्तर्मु हुन भी जानना चाहिये। शेव कथन मुगम है। ऊपर पुरुपवेदी आदि और जिननी मार्गणाएँ गिनाई है उनमें भी इमी प्रकार मत्र प्रकृतियाकी उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिका जधन्य और उत्कृष्ट काल घटिन कर लेना चाहिये। तथा पृथिवीकाविक बादर पृथिवोकायिक और बादर पृथिवीकायिक अपयाप्त आदिके अपना-अपनी पर्यायमे निरन्तर रहनेके कालका विचार करके अनुन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट काल कहना चाहिये। शेव कथन मुगम है, क्योंकि इसका पहले अनेक बार खुलामा किया जा चुका है, अतः यहाँ व आगो भी उसका विचार वरके यथासम्भव कथन करना चाहिये।

वादर पृथिवीकायिक पर्याप्त श्रोर वादर जलकायिक पर्याप्त जीवोंका भंग वादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंक समान जानना चाहिये। इमी प्रकार वादर वनस्पतिकायिकप्रत्येकशरीर पर्याप्त जीवोंक जानना चाहिये। वादर प्रथिवीकायिक अपर्याप्त, वादर जलकायिक अपर्याप्त, अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर आग्निकायिक, वादर आग्निकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक पर्याप्त, वादर पायुकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त, वादर पायुकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, निगादर्जीव, वादर्गनगोद, वादर्गनगाद पर्याप्त जीव, वादर्गनगोद अपर्याप्तजीव और सब सूद्भ जीवोंमे छव्वीस प्रकृतियोकी उन्हृष्ट (स्थितिका जवन्य और उत्कृष्टकाल एक समय कम अन्तुसुकृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कम अन्तुसुकृष्ट प्रभाण और एक समय कम अन्तुसुकृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय कम अन्तुसुकृष्ट

उक्कः सगसगुक्कस्सिहिदी । सम्मत्त-सम्मामि० उक्कः० ज्ञहण्णुक्कः० एगस० । अगुक्कः० ज्ञः॰ एगसमञ्जो, उक्कः॰ पिलदो० अमंखेज्जदिभागो । एविरि वादरपुढविद्यादिअपज्जनाणं सुदुमपुढवित्रादिपज्जत्तापञ्जत्ताणं च सगद्विदी वत्तव्वा ।

१५०१ पंचमण०-पंचवचि० मिच्छत्त-सोलसक०-एविणोकसाय० उक० पंचि-दियमंगी । अणुक्क० ज० एगसमञ्चो, उक० अंतोमुहृत्तं । सम्मन्-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमञ्चो । अणुक्क० जह० एगसमञ्चो, उक्क० अंतोमु० । श्रोरालिय० एवं चेव एवरि सगदिदी बत्तव्या ।

५५२. कायजोगि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क० श्रोघं । अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० एइंदियमंगो । सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियमंगो । श्रोरालिय-मिस्म० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क० जहण्णुक० एइंदियमंगो । मिच्छत्त-सोलसक० जह० खुद्दाभवग्गहणं तिसमऊणं । एवणांकसाय० जह० एय-सम्श्रो, उक्क० अंतोमुहृत्तं । सम्मत्त-सम्मामि० पंचिदियअपज्ञत्तमंगो । एवं वेउ-विय० णवरि मिच्छत्त-सोलसक० श्रणुक्क० ज० एगसम्भो उक्क० अंतोमु० । तथा अन्कष्टकाल श्रपना अपना उत्कृष्ट स्थानअमाण हे । तथा सम्यक्त्व श्रां सम्योग्मण्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल पत्योपमके श्रमंख्यातवे भागप्रमाण हे । किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर पृथिवीकायिक श्रादि अपर्याप्त जीवोको तथा सूद्रम पृथिवीकायिक श्रादि पर्याप्त और श्रमुखांत्र जीवोको श्रमुन्हृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थित प्रमाण कहना चाहिये।

१५०१ पांचों मनायागी छोर पांचो वचनयागी जीवोक मिण्यात्य, सोलह कपाय छोर नी नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका भंग पंचेन्द्रियोक समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय छोर उत्कृष्टकाल अन्तमु हूर्त है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य छोर उत्कृष्टकाल एक समय छोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल एक समय छोर उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त है। छोदारिककाययोगी जायाक इसा प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतना विशेषता है कि इनके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल अपना स्थित प्रमाण कहना चाहिये।

विशेषार्थ-पांचो मनोयोग और पांचा बचनयोगाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त तथ। श्रोदारिककाय योगका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहून कम वाईस हजार वप हे, अतः इनक श्रनुसार अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कहना चाहिये। शेर कथन सुगम है।

§ ५०२ काययोगियोमे मिण्यात्व, सोलह कपाय आर ना नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिका काल खोघक समान है। तथा अनुन्कृट स्थितिका जवन्यकाल एक समय खार उत्कृष्ट काल एकेन्द्रियोक समान है। तथा सम्यक्त्व खार सम्यग्मिण्यात्वका भंग एकेन्द्रियाक समान है।

श्रीदारिक मिश्र काययोगियोमं मिश्यात्य, सोलह कपाय श्रीर नी नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्टकाल एकेन्द्रियों के समान है। तथा मिश्यात्व और सोलह कपायोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल नीन समयकम लुद्दाभवप्रहाणप्रमाण है श्रीर नो नोकपायोंका जघन्यकाल एक समय है तथा सवकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल श्रन्तमु हूत है। तथा सम्यक्त श्रीर सम्यिमध्यात्वका भंग पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकों समान है। इस प्रकार वैकियक काययोगी जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मिश्यात्व श्रीर सोलह

वेउव्वियमिस्स० मिच्छत्त० सोलसक० एावणोक० उक्क० एइंदियभंगो । ऋणुक्क० जहण्णुक्क० अंतोम्र० । एावरि णवणोकसाय० ऋणुक्क० जह० एयसमश्रो । सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो । एावरि ऋणुक्क० जह० एयसमश्रो ।

१५०३ आहार० सन्वपयडीणमुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज०
एगसमओ उक्क० अंतोम्रहुत्तं । एवमवगद०-मकसा०-सुहुमसांप०-जहाक्खादमंजदेत्ति ।
आहारिमस्स० सन्वपयडीणमुक्क० जहण्णुक्क० एगम० । अणुक्क० जहण्णुक्क०
अंतोम्र० । एवम्ववसम०-सम्मामि० ।

६ ५०४. कम्मइय० मिच्छत्त-सोलसक०-सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक०
 एगस० । अणुक० ज० एगसमञो, उक्क० तिण्णि समया । एवणोकसाय० उक्क०
 ज० एगस०, उक्क० वेसमया । अणुक० ज० एगसमञो, उक्क० तिण्णि समया ।
 एवमणाहार० ।

कपायोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्न है। वैक्रियक मिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलहकपाय और नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका भंग एकेन्द्रियोंके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि नो नोकपायोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मिथ्यात्वकं समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है। कि

§ ५०३. आहारक काययांगी जीवोमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुं हूर्त हैं। इसी प्रकार अपगतवंद वाले, अकपायी, सूद्मसाम्परायिकसंयत श्रोर यथाख्यात-संयत जीवोंक जानना चाहिये। आहारकमिश्रकाययोगियोम सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल श्रन्तमु हूर्त हैं। इसी प्रकार उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमु हूर्त हैं। इसी प्रकार उत्कृष्ट सम्यग्रहृष्टि श्रोर सम्यग्रहृष्ट जीवोंक जानना चाहिये।

\$ ५०४. कार्मण्काययांगी जावोमे भिष्यात्व, सोलह कपाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिष्यात्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। तथा नौ नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दी समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोके जानना चा हये।

विशेषार्थ-एकेन्द्रियोंके एक काययोग ही होता है, अतः काययोगमें अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल एकेन्द्रियोंके समान जानना चाहिये। औदारिक मिश्रका जधन्य काल तीन समय कम खुद्दाभवमहण प्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तमुं हूर्त है अतः इसमें मिथ्यात्व और सोलह कषाय की अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल तीन समय कम खुद्दाभवमहण प्रमाण और नौ नोकपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय जिस प्रकार एकेन्द्रियोंमें घटित करके लिख आये हैं उसी प्रकार यहां भी जानना। शेर कथन सुगम है। तथा जिस वैक्रियिककाययोगीने वैक्रियिककायोग के उपान्त समयमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया और अन्त समयमें अनुन्कृष्ट स्थितिका बन्ध

५०५ वेदाणुवादेण इत्थिवेदेसु मिच्छत्त-सोलसक०-एवियोक० उक्क० स्रोघं ।
 द्रणुक्क० ज० एगसमस्रो, उक्क० समिद्धी । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्युक्क०
 एगम० । अणुक्क० ज० एगममस्रो, उक्क० पणवण्णपित्दो० सादिरेयाणि ।
 णुवंस० मिच्छत्त०-सोलसक०-एवियोक० उक्क० ओघं । स्रणुक्क० ज० एगस०,

किया उसके मिध्यात्व त्र्योर सालह् कपार्याकी अनुत्कृष्ट स्थितका जबन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा वैकियिककाययागका उत्कृष्ट काल अन्तर्भु हुन है अतः यहां अनुत्कृष्ट स्थितिका उक्तरट काल अन्तर्मु हुर्न पाया जाता है जेव कथन पूर्ववन जानना । बैक्रियिकमिश्रकाययोगका जघन्य त्रार उत्कृष्ट काल अन्तमु हुत है अतः इसमे मिश्यात्व और सालह कपायोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल अन्तर्मु हुर्न तथा ना नाकवाय मिल्यात्व खोर मालह कपत्योकी अनुस्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तमु हुर्त होता है। नो नो क्यायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जबन्य काल पूर्ववन जानना । शेष कथन सुगम है । आहारक काययांगके पहले समयमे ही सब प्रकृतियांकी उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है ऋतः यहां सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य ऋार उत्कृष्ट काल एक समय कहा। जो जीव एक समय तक आहारक काययांगक साथ रहे और दूसरे समयमे मर गये या मूल शरीरमें प्रविष्ट हो गये उनके सब प्रकृतियाकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा त्राहारक कायशंगका उत्क्रष्ट काल अन्तर्मु हूर्त है त्रातः नके सब प्रकृतियोंकी त्रानुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्भु हूर्न कहा। अपगतवंदा, अकपायी, सूचमसाम्पराधिक संयत और यथा ख्यातसंयत जीवोंके आहारककाययां गियोके समान काल जानना । क्योंकि उनशम श्रेगीको अपेता उक्त मार्गगाओंमें उक्त काल वन जाता है। आहारकांमश्रकाययोगीका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुन हे, ऋतः इसमे सब प्रकृतियाक्षी उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ऋौर ऋनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य ऋौर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त वन जाता है। तथा उपशुमसम्यग्दृष्टि ऋौर सम्यग्मिण्यादृष्टि जायोके भा इसा प्रकार कथन करना चाहिये । कार्मणुकाय-यागका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। अतः इसमे नी नोकपायोकी छोड़कर शेष सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और सर्व प्रकृतियोकी अनुस्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय यन जाता है। किन्तु नौ नोकपायाकी उत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट कालमे कुछ विशेषता है। बात यह है कि नौ नोक-पायोकी उत्क्रप्टस्थित अपर्याप्त अवस्थामे एक आवितकाल तक भी पाइ जासकर्ता है पर ऐसा जीव श्रधिकसे अधिक दो विग्रहमें ही उत्पन्न होता है, अतः इसके कार्मणकाययोग दो समय पाया जाता है और इसीलिये कार्मणुकाययागमे नो ना ह्यायाका उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल दो समय कहा हैं। नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय ना स्पर्ट ही हैं। तथा त्रजनाहारक जाबाक इसी प्रकार जानना, क्योंकि संसार अवस्थामे जहां कार्मणकाययोग होता है वहीं श्रनाहारक ऋवस्था पाई जाता है ।

६ ५०४, वेदमार्गणाके अनुवाद से स्त्रीवेदियों में मिथ्यात्व, सोलहकपाय और नौ नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिका काल आंघक समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिष्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक पचपन पत्य है। नपुंमकवेदियों में मिथ्यात्व, सोलहकपाय और नौ नोकपायों की उन्कृष्ट स्थितिका काल औष समान है। नथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल

उक्क० अणंतकालगमंखेजा पोग्गलपरियद्या । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्युक्क० एगस०, अगुक्क० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीमं माग० सादिरेयाणि । असंजद० गाबुंसयभंगो णवरि मिच्छ० मोलसक० अगुक्क० जह० अंतोमु० ।

१५०६ चत्तारि कमाय० यणजीगिभंगो । मदिसुद्त्रणणा० त्रोघं । स्वास्त्र सम्मत्त०-सम्मामि० त्रणुक्क० उक्क० एइंदियभंगो । एवं मिच्छादि० । त्रभव० एवं चेव स्वास्ति सम्मत्त०-सम्मामि० स्वास्ति । विहंग सत्तमपुढिविभंगो । स्वास्ति सम्मत्ति सम्मत्ति ।

एक समय और उत्कृष्ट अनन्त काल हं जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण हे। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। असंयत सम्यन्द-ष्टियोंका भंग तपुंसकोंके समान है। किन्तु विशेषता इतनी है कि इनमें मिण्यात्व और सोलह कपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हुत है।

विशेषार्थ-स्वीवंदका उत्कृष्ट काल मी पन्यपृथक्त है, अतः इसमे उपयुक्त इच्बीस प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण जानना चाहिये। जो अहाईस या चौबीस प्रकृतियोकी सत्तावाला जीव पूर्व पर्यायमें स्त्रीवेदी हैं और वहांसे भरकर तथा अट्टाइस प्रकृतियोकी सत्तावाला मिण्यादृष्टि होकर पचवन पत्यकी उत्कृष्ट त्रायुके साथ देवपर्यायमे स्रोवेदी हुआ उसके साधिक पचवन पत्य तक सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्निश्यात्वकी ऋनुत्कृष्ट स्थिति पाई जासकती है, अतः स्त्रीवद्मे सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिण्यात्वकी श्रानुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक पचवन परुष कहा है। क्षेत्र कथन सुराम है। एक जीव निरन्तर नपुंसकवेदके साथ अपनन काल तक रह सकता है अतः नपुंसकवेदमे मिथ्यात्व आदि छव्वीस प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल असंख्यात पुरुगल परिवर्तन प्रमाण कहा । तथा जो पूर्व पर्यायमे अहाइस प्रकृतियोकी सत्तावाला नपंसकवेदी है और वहां से च्युन होकर तेतीस सागरकी ऋायुवाले नारिकयोमे उत्पन्न हुआ उसके साधिक तेनीस सागर काल नक सम्यग्मि व्यात्वकी सत्ता पाई जा सकती है अतः इन दो प्रकृतियों की अनुस्कृष्ट स्थितिका उरकृष्ट काल साधिक तेतीस सागर कहा है शेप कथन सुगम है। असंबतो का सब बथन नपुसकों के समान है किन्तु भिष्यात्व और सोलह कपायोकी अनुत्कृष्ट स्थितिके जबन्य कालमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि जिस नारकीने भवके उपान्त्य समयमें उक्त प्रकृतियो को उन्कृष्ट स्थिति बांधा अन्तिम समयमें अनुत्कृष्ट स्थिति बाधी उसके नपुंसकवेदमें उक्त प्रकृतियो-की अनुकुष्ट स्थितिका जबन्य काल एक समय बन जाता है पर ऐसा जीव मरकर भी असंयत ही रहता है, ऋतः असंयतके उक्त प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल अन्तर्मु हूर्त कहा है।

्र ५०६. चार कपायवालोका भंग मनोयागियोके समान है। मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानियों के स्राधिक समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्य और सम्योगिष्यात्वकी स्रमुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल एकेन्द्रियोके समान है। इसी प्रकार मिण्यादृष्टिजीयोंके जानना चाहिये। स्रभव्योंक भी इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्रभव्यों सम्यक्त्व और सम्यगिष्यात्व नहीं हैं। विभंगज्ञानियोंका भंग सातवीं पृथिवीके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व औ। सम्यग्मिण्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान है।

विशेषार्थ-एक समय और अन्तर्मु हूर्त सामान्यकी अपेत्ता चारों कपायों और मनोयोगका काल समान है, अतः चारों कषायोमे मनोयोगके समान कथन करनेकी सूचना की। मत्यज्ञानी

६ ५०७. श्रामिणि०-सुद्०-ओहि० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु० च उक्क०-बारसक०-णवणोक० उक्क० जहण्णुक्क० एगसमश्रो । अणुक्क० ज० अंतोमु०, उक्क० छाविहसागरो० सादिरेयाणि । श्रणंताणु०च उक्क० देसूणाणि वा । एवमोहिदंस०-सम्मादि० । वेदय० एवं चेव । एवि सम्म०-वारसक० [णवणोक०] छाविहसाग० पिडवुण्णाणि । सेसाणं देसूगाणि । मणपज्ज० सव्वपयडीण सुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । श्रणुक्क० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुन्वकोडी देसूणा । एवं संजद०-परिहार०-संजदानंजद० । सामाइयछेदो० एवं चेव । एविर च उवीसप० अणुक्क० जह० एगम० ।

त्रांर श्रुताज्ञानी जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्निश्यात्वका सत्त्र पर्लयके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक ही पाया जाता है, अतः इनके उक्त दोनों प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल एकेन्द्रियोंके समान कहा। रोप कथन सुगम है। अभव्योंमें भी इट्वीस प्रकृतियोकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल स्रोपके समान वन जाता है। इनके सम्यक्त्व और सम्यग्निश्यात्वकी सत्ता नहीं होती यह स्पष्ट ही है। विभंगज्ञानमें सातवी पृथिवीके समान स्थांग सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल तो बन जाता है किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्निश्यात्वकी स्रम्यग्निश्यात्वकी स्थानिक स्थानिक उत्कृष्ट काल नहीं वनता, क्योंकि विभगज्ञान मिश्यादृष्टिके होता है और भिश्यादृष्टिके इन दो प्रकृतियोकी सत्ता पल्यके असंख्यानमें भागप्रमाश्य काल तक ही पाई जाती है।

§ ५०७ आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रृतज्ञानी और ज्यवधिज्ञानी जीवोंमें मिण्यात्व, सम्यक्त्व सन्यिमण्यात्व, अनन्तानुवन्धी चतुष्क, वारह कपाय और नो नांकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य काल अन्तर्मु हूर्न और उत्कृष्ट काल साधिक इयासट सागर है अथया अनन्तानुवन्धी चतुष्कका कुछ कम इयासट सागर है। इसी प्रकार अवविद्योंनी और सम्यग्हिष्ट जीवोंके जानना चाहिये। वेदकसम्यग्हिष्ट जीवोंके भी इसी प्रकार ज्ञानना चाहिये। किन्तु इतनी विद्योगना है कि इनमें सम्यक्त्व वारह कपाय और नो नांकपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काज पूरा छ्यासट सागर है शेषका कुछ कम इयासट सागर है। मनःपर्ययज्ञानियोम सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य काल अन्तर्मु हुर्न और उत्कृष्ट काल कुछ कम पूर्वकांटि है। इसी प्रकार संयत, परिहारविशुद्धिसंयत और संयतासंयतोंक जानना चाहिये। सामायिकसंयत और छेदोपस्थापन।संयत जीवोंक इसी प्रकार ज्ञानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता और हेक इनमें चीवीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य काल एक समय है।

विशेषार्थ-सम्यग्दृष्टि जीवक सम्यवत्व प्रहृण करनेक पहले समयमे ही सब प्रकृतियोंकी ब्लुए स्थिति पाई जाती है अतः मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अविधिज्ञानी जीवक सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और ब्लूए काल एक समय कहा। तथा इन मागणाओका जघन्य काल अन्तमुं हूर्त और ब्लूए काल साधिक छ्यासठ सागर है, अतः सबकी अनुन्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तमु हूर्त और ब्लूए काल साधिक छ्यासठ सागर कहा। किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक छ्यासठ सागर कहा। किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कुछ कम छ्यासठ सागर भी प्राप्त होता है, क्यांकि वेदकसम्यक्त्व के क लमे से मिथ्यात्व आदि तीन प्रकृतियोंक चपण कालको घटा देने पर और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके विसंयोजन कालको मिला देने पर देशान छ्यासठ सागर प्राप्त होते हैं। अब यदि

१४०८. किण्ह-णील-काउ० तेउपम्मलेस्सासु मिच्छत्त०-सोलसक०-एवणोक० उक्क० श्रोघं, अणुक्क० जह० एगस०। णविर किण्हणीलकाउ० मिच्छ० सोलस० अतोसु०, उक्क० सगिहिदी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगस०। श्रणुक्क० ज० एगस०, उक्क० सगिहिदी। सुक्कले० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क० जहण्णुक्क० एगम०। अणुक्क० ज० अंतोमु०। श्रणंताणु० एगसमओ वा, उक्क० सगिहिदी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगस०। अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० सगिहिदी।

इसमें प्रारम्भ में हुए उपशम सम्यक्त्वके कालको मिला दिया जाता है तो साधिक छ्यासठ सागर प्राप्त हो जाते हैं और यही सबव है कि अवधिज्ञानी आदि मार्गणाओंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक छ्यासठ सागर भी स्वीकार किया है। अवधिदर्शन अवधिज्ञानका अविनाभावी है अतः अवधिद्र्शनमे अवधिज्ञानके समान व्यवस्था जानना । तथा सम्यग्दृष्टि जीवोंके भी इसी प्रकार जानना । वेदकसम्यक्त्वमें यदापि इसी प्रकार जानना पर इसके सम्यक्त्व और बारह कपाय श्रोर नो नोकपायोंकी अनुन्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल पुरा छयासठ सागर होता है क्योंकि कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्व तक वेदक सम्यक्त्वका काल पूरा छ्यासठ सागर है और उक्त प्रकृतियोंका यहां तक सत्त्व पाया जाता है। इससे यह भी ताल्पर्य निकल आया कि उक्त प्रकृतियोको छोड़ कर वेदकसम्यवत्वमे शेप प्रकृतियोंकी अनुस्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है। मनः पर्ययज्ञानका जयन्य काल अन्तर्मु हुर्ते आर उत्कृष्ट काल देशांन पूर्वकोटि है। अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जबन्य काल अन्तम् हुर्न और उत्कृष्ट काल कुत्र कम एक पूर्वकोटिप्रमाण कहा है रोप कथन सुगम है। ऊपर संयत त्रादि त्रीर जितनी मार्गणाएँ गिनाई है इनमें भी इसी प्रकार जानना । यद्यपि सामायिक ऋौर छेदोपस्थापनामें काल सन्यन्धी उक्त व्यवस्था बन जाती है पर जो जीव उपशमश्रेणीसे उत्तर कर श्रीर नीवें गुणस्था-नमें एक समय तक रह कर मर जाता है उसके सामायिक और छेदोपस्थापना संयममे चौबीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है।

\$ ५० =. कृष्ण, नील कापीन पीन और पद्म लेश्यात्रोमें मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नी नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिकाल श्रोषके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कृष्ण, नील और कापीन लेश्याओंमें मिण्यात्व श्रोर सोलह कपायोकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल श्रन्तमुं हुर्त है और उपर्युक्त सभी लेश्यात्रोंमें उपर्युक्त सभी प्रकृतियोंकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रपनी-श्रपनी स्थितिप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व श्रोर सम्यम्मण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है। शुक्ल-लेश्यामें मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नी नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल श्रन्तमुं हुर्त है। तथा अनन्तानुबन्धीका एक समय श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व श्रोर सम्यम्य स्थान उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ-ऋष्णादि पांच लेश्यात्रोंके रहते हुए मिथ्यात्व और सोलह कपायोंका उत्ऋष्ट स्थितिबन्ध हो सकता है तथा सालह कपायोंकी उत्ऋष्ट स्थितिका नौ नोकपायोंमें संक्रमण हो ६ ५०६. खड्य० बारसक०-णवणोक० [ उक्क० ] जहण्णुक्क० एगस०। ऋणुक्क० ज० अंतोम्र०, उक्क० तेत्तीसं सागरीवमाणि सादिरेयाणि । सासण० सञ्चपयडी० उक्क० जहण्णुक्क० एगस० । ऋणुक्क० ज० एगस०, उक्क० छाविल-यास्रो । अमण्गी० एइंदियभंगी ।

सकता है, अतः इनमे मिण्यात्वादि छव्वान प्रकृतियाका उक्तर स्थातका जवन्य अर्थर उत्कृष्ट काल ऋोघके समान कहा है। जो पीत ऋोर पद्मतेश्यावःला जीव मर कर तिर्यवीमे उत्पन्न होता है यदि वह मरनेके पहले उपान्त्य समयमं भिष्यात्व ऋादिकी उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करके अन्तमें अनुत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त करना है तो उसके पीन और पद्म लंश्यामे अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है । किन्तु बृष्टणादि तीन अध्यम लेश्याएं मरनेके पश्चात् भी एक अन्तर्मु हूर्त काल तक बनी रहती हैं, अतः इनमे उक्त प्रकृतियाकी अनुःकृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तमु हुन ही प्राप्त होता है। तथा पांचो लेहवा योमं उक्त प्रश्वतियोंकी अनुस्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है यह सुगम है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्या-त्वकी उत्कृष्ट स्थिति वेदक सम्यक्त्वके बहुण करनेकं पहले समयमें ही हो सकती है अतः पांचों लेश्यात्र्यामें उक्त दोनों प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय वहा है। तथा उद्वेलनाके अन्तिम समयमें जो कृष्णादि लेश्याओं को प्राप्त होते हैं उनके कृष्णादि लेश्याओं मे सम्यग्मिण्यात्वकी ऋनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है। पर सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय कृष्ण और नील लेश्याम उद्वेलनाकी अपेन्ना और कापोत आदि तीन लेश्यात्रोमें कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वकी ऋपेचा जानना चाहिये। तथा उक्त दोनों प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण् है यह स्पष्ट ही है। शुक्ल लेश्यामें मिथ्यात्त्र त्रादि छन्धीस प्रकृतियोका उत्कृष्ट स्थिति पहले समयमे ही सम्भव है, त्रात: इसमे उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य त्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा शुक्ल लेश्याका जवन्य काल अन्तमु हुर्त है अतः इसमे उक्त छव्वीस प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञवन्य काल अन्तर्मु हूर्त कहा है । तथा अनन्तानुवन्धी चतुष्कर्ती विसंयाजना किया हुआ जो अनललेश्यावाला जाव मिथ्यादृष्टि हो गया आर दूसरे समयम उसकी लेश्या बदल गई उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुस्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय भी पाया जाता है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण हाता हे यह स्वष्ट ही है। तथा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रार उत्कृष्ट काल पूर्ववन् घटित कर लेना चाहिये उससे इसमे कोई विशेषता नहीं है।

§ 106. चायिक सम्यग्दृष्टियोमे बारह कपाय और नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल अन्तर्म हूत और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागरप्रमाण है। सासादन सम्यग्दृष्टियोमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आवलीप्रमाण है। असंज्ञियोमे एकेन्द्रियोके समान भंग है।

विशेषार्थ-चायिक सम्यक्त्वके प्राप्त हानेके पहले समयमें ही बारह कपाय श्रीर नो नाकपायों की उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है अतः इसमें उक्त प्रकृतियों को उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा चायिक सम्यक्त्वका संसारमें जवन्य काल अन्तमुं हूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है अतः इसमें अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तमुं हूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है अतः इसमें अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तमुं हूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर कहा है। सासादन सम्यक्त्वके पहले

९ ५१०, ब्राहारि० मिच्छत्तः सोलसक०-णवणोक० उक्क० औद्यं । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० समहिदी । सम्मत्त सम्मामि० उक्क० जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज० एगसम्ब्रो, उक्क० वेछावहिमागरो० सादिरेयाणि ।

एवमुक्कस्सकालाणुगमी समत्ती।

**\* जहण्णाहिदिसंतक्रमियकालो** 

§ ५११ ऋहियारसंभात्तणवक्कमेदं सुगमं ।

 # मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-सोलसकसाय-तिवेदाणं जहण्णु-क्कस्सेण एगसमओ ।

१ ५१२. कुदो ? जहण्णिहिदिमंतुप्पण्णिविदियसमए चेत्र एदासि पयडीएं जहण्णिहिदीए विणासुवलंभादो । सो वि ए अजहण्णिहिदीएमिएए विणासुवलंभादो । सो वि ए अजहण्णिहिदिगमएए विणासो; विदिय-समयमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । तथा सामादनसम्यक्त्वका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आविल है अतः इसमे अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आविल प्रमाण कहा है । असंज्ञियोमे एकेन्द्रिय प्रधान है अतः असं-ज्ञियोके सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका काल एकेन्द्रियोके समान कहा है ।

§ ५१०. त्राहारकोमे मिण्यात्व, सो नह कपाय श्रीर नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका काल त्रांघक समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उन्कृष्ट काल अपनी स्थितिग्रमाण है। तथा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिण्यात्वकी उन्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय श्रीर अनुन्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल साधिक दो बार छ्यासट सागर है।

विशोषार्थ-मिण्यात्व आदि छव्यीस प्रशृतियोकी आयके सम न उत्कृष्ट स्थिति आहारक जीवोंके ही हो सकती है अतः आहारकोंक उक्त प्रशृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल आयके समान कहा है। जो उपान्त्य समयमे उक्त प्रशृतियोकी उत्कृष्ट स्थिति प्रान करके अन्तसमयमे अनुःकृष्ट स्थितिका प्राप्त करता है और तीसरे समयमे अनाहारक हो जाता है उस आहारकके उक्त छव्यीस प्रकृतियोकी अनुःकृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय होता है। तथा अनुःकृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण हे यह स्पष्ट ही है। शेष कथन सुगम है।

इस प्रकार उत्कृष्ट कालानुगम समाप्त हुआ।

\* अब जघन्य स्थितिसत्कर्मका काल कहते हैं।

§ ५११. अधिकारके सम्हालनेके लिए यह सूत्र वाक्य आया है। जो कि सरल है।

\* मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निथ्यात्व, सोलह कपाय और तीन वेदोंकी जयन्य स्थिति सत्कर्मका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ ५१२. शंका-इनका जघन्य काल एक समय क्यो हं ?

समाधान-जघन्य स्थितिसत्त्वके उत्पन्न होनेके दूसरे समयमें ही इन प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका विनाश हो जाता है। यह विनाश भी अजघन्य स्थितिको प्राप्त करनेसे नहीं होता।

## समए णिस्संतभावुवलंभादो ।

अतोमुदुत्तं ।

६ ५१३ अद्धां वेदो णिसेयपहाणो, तस्स जिंद एमो कालो घेप्पदि तो बण्णोकसायाणं जहण्णिहिदीए कालस्स अंतोम्रहुत्तत्तं जुज्जदे; विदियहिदीए हिद्बर्ण्णोकसायहिदीए चित्मकंडयसरूवेण अवहिदाए चित्महिदिकंडयउकीरणद्धामेत्तकालिम्म
सन्विणिसेयाणं गलणेण विणा अवहाणुवलंभादो । ए जहण्णिहिदीए अंतोम्रहुत्तत्तमुवलन्भदे; तत्थ कालस्स पहाणानुवलंभादो ति ? ए एस दोसो, जहण्णिहिदि-जहण्णहिदिश्रद्धच्छेदाणं जइवसहुचाग्णाइग्पिहि णिसेगपहाणाणं गहणादो । उकस्सिहिदी
उक्कस्सिहिदिअद्धाछे च उक्कस्सिहिद्समयपबद्धिणिसेगे मोत्तूण पाणासमयपबद्धणिसेगपहाणा तेण अंतोम्रहुत्तकालावहाणं छण्णोकसायजहण्णिहिदीए जुज्जिद ति ।
पुव्विल्लवक्स्वाणमेदेण मुत्तेण सह किण्ण विरुक्किदे । सचमेदं विरुक्किदे चेव, किंतु
उक्कस्सिहिदि—उक्कि हिदिअद्धाछेद—जहण्णिहिदि—जिश्विद्धाछेदाणं भेदपरूवणहः
तं वक्स्वाणं क्रयं वक्स्वाणाइिएएहि । चुण्णिमुनुचारणाइित्याणं पुण एसो णाहिप्पाभो;

किन्तु दूसरे समयमे इनका निःमत्त्वभाव पाया जाता है। ऋतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति-का जघन्य काल एक समय कहा।

🜞 छह नोकपायोंके जघन्य स्थिति सत्कर्भका जघन्य ख्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्नुहूर्त है।

§ ५१३. शंका—अद्धान छेद निषंकप्रधान है। उसका यदि यह काल लिया जाता है तो छह नोकपायोकी जयन्य स्थितिका काल अन्तर्मु हुन वन जाता है क्योंकि द्वितीय स्थितिमें स्थित छह नोकपायोंकी स्थितिके अन्तिम काण्डकस्पमे अवस्थित रहनेपर अन्तिम स्थितिकाण्ड∗के उत्कीरण काल प्रमाण कान तक सब निषंकोका गलनेके विना अवस्थान पाया जाता है। पर जवन्य स्थितिका अवस्थान अन्तर्मु हुन तक नहीं वन सकता है, क्योंकि उसमें कालकी प्रधानता स्वीकार की गई है ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि जयन्य स्थिति ख्रौर जयन्य स्थिति ख्रौर जयन्य स्थिति ख्रद्धा-च्छेदको यित्वृपम आचार्य झ्रोर उच्चारणाचार्यने निषेकप्रधान स्वीकार किया है। तथा उत्कृष्ट स्थिति ख्रोर उत्कृष्ट स्थितिख्रद्धान्छेद उत्कृष्ट स्थितियाले समयप्रवद्धके निषेकोकी ख्रपेत्ता न हो कर नाना समयप्रवद्धोके निषेकोकी प्रधाननासे होता है अतः छह नोकपायोकी जयन्य स्थितिका अन्तमुं हुर्तकाल तक ख्रवस्थान यन जाता है।

शंका-पूर्वोक्त व्याख्यान इस सूत्रके साथ विरोधको क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान-यह सच है कि पूर्वोक्त व्याख्यान इस सूत्रके साथ विरोधको प्राप्त होता ही है किन्तु उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट स्थिति श्रदान्छेदमें तथा जघन्य स्थिति और जघन्य स्थिति-श्रद्धान्छेदमें भेदके कथन करनेके लिये व्याख्याताचार्यने वह व्याख्यान किया है। पर चूर्णिसूत्र- खण्णोकसायजहण्णिहिदीए अंतोमृहुत्तकालुवदेमादो । पुन्तिन्तवक्स्वाणं ण भह्यं, सुत्तिविरुद्धत्तादो । ण, वक्साणभेदमंदिरमणहं तप्पवृत्तीदो पिडविक्स्वणयणिरायरण-सुहेण पडत्तण्य्रो ण भह्यो । ण च एत्थ पिडविक्स्विणरायरणमित्थ तम्हा वे वि णिरवज्जे ति घेतव्यं । हिदि-हिदिश्चद्धच्छेदाणं वित्तिसुत्तकत्ताराणमिहिप्पाएण कथं भेदो ? वुच्चदे-सयत्तिणसेयगयकालपहाणो अद्बाछेदो, स्यल्लिसेगपहाणा हिदि ति ण दोण्हं पुणरुत्तदा । एवं चुण्णिसुत्तोघं परूविय संपित जहण्णाजहण्णहिदीणं काल-परूवणहमुचारणाइरियवक्स्वाणं भणिरसामो ।

\$ ५१८ जहण्णए पयदं । दुविही शिह्सी—-श्रोघेशादेसेण य । मिच्छत्त-बारसक०तिण्णिवेद० ज० के० ? जहण्णुक्क० एगसमश्रो । अजहण्ण० केव० ? अणादिअपज्ज० अणोदिसपज्जवसिदा । सम्मत्त-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगसमश्रो ।
अज० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० वे छाविष्टसागरो० सादिरेयाणि । अणंताणु०च उक्क०
[ जह० ] जहण्णुक्क० एगसमश्रो । अजह० केव० ? अणादि अपज्जवसिदा अणादिसपज्जवसिदा सादिमपज्जविसदा । जो सो सादिसपज्जविसदो भंगो तस्म इसो णिहेसोकार श्रोर उच्चारसाचार्यका यह अभिप्राय नहीं हे, क्यांकि उन्होंने छह नोकपायोकी जवन्य
स्थिनिका काल अन्तर्भु हुनै कहा है ।

शंका-पूर्वोक्त व्याख्यान समीर्च:न नहीं है, क्योंकि वह सूत्रविरुद्ध है।

समाधान – नहीं, क्योंकि व्यास्थानसेदके दिखलानेके लिये पूर्विक्त व्याख्यानकी प्रवृत्ति हुई हैं। जो नय प्रतिपन्तनयके निराकरणमें प्रवृत्ति करता है वह समीचीन नहीं होता है। परन्तु यहाँ पर प्रतिपन्न नयका निराकरण नहीं किया है, अतः दोनो उपदेश निदीं है ऐसा प्रकृतमें भ्रहण करना चाहिये।

शंका-नो फिर वृत्तिसृत्रके कर्नाके अभिनायानुसार स्थिति और स्थिति अडिन्छेदमें भेद कैसे हो सकता है ?

समाधान-सर्वेनिषेकगत कालप्रधान अद्धान्छेद होता है और सर्वेनिषेकप्रधान स्थिति होती है इसलिये टोनोके कथनमे पुनस्क दोप नहीं आता हैं।

इम प्रकार चृिण्मित्रकी अपन्ता आपका कथन करके अब जघन्य और अजघन्य स्थितियोंके कालका कथन करनेके लिये उच्चारणाचार्यके व्याख्यानको कहते हैं—

§ ५१९. स्रव जपन्य स्थितिक कालका प्रकरण है। उसकी स्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है-स्रांघिन हैंश स्रोर आदेशनिर्देश। उत्तमें से स्रांघिकी क्रपेत्ता मिण्यात्व, वारह कपाय स्रोर तीन वेदोंकी जघन्य स्थितिका काल कितना है? जपन्य स्रोर उत्तरप्र काल एक समय है। स्रज्ञचन्य स्थितिका काल कितना है? स्रनादि-स्रान्त स्रोर स्थादि-सान्त काल है। सम्यक्य स्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है तथा स्रज्ञचन्य स्थितिका काल स्थान्य काल स्रान्त है। स्रान्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य स्थार उत्कृष्ट काल एक समय है तथा स्रज्ञचन्य स्थितिका काल कितना है १ स्रान्तानुबन्धी की स्रज्ञघन्य स्थितिक कालके स्थादि-स्थानत, स्रादि-सान्त स्थार सादि-सान्त ये तीन विकल्प होते है। इनमें जो सादि-सान्त मंग है उसकी स्रपेत्ता यह प्रकृतमे जहण्ण० अंतोमु॰, उक्क० श्रद्धवोग्गलपरियष्ट् देसूगां। खण्णोकसायागां जह॰ जहण्णुक्क० अंतोमु०। अजह० केव० १ त्रणादित्रप्रज्ञवसिदा अणादिसपज्जवसिदा। एवं भवसि०। णवरि त्रणादिअपज्जव० णित्थ ।

\$ ५१५ आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त०-वार्स०-भय-दुगुंद्धारां ज० जहण्णुक० एगम० । अज० ज० एगस०, उक्क० सगिंदिती । सम्मत्त-सम्मामि० जह० जहरण्णुक० कथन किया जा रहा है। जबन्य काल अन्तमु हृत य्यार उत्कृष्ट काल कुछ कम अधपुद्गलपरिवतन-प्रमाण है। छह नाकपायोंकी जबन्य स्थितिका जबन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त है। तथा अजबन्य स्थितिका कितना काल है ? अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त काल है। इसी प्रकार भव्योंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषना है कि उनके किसी भी प्रकृतिका अनादि-अनन्त काल नहीं है।

विशोषार्थ-मिथ्यात्व, सम्यग्मिश्यात्व, सम्यवत्व, सांलह कपाय त्रौर तीन वंदोंकी जवन्य स्थितिका जघन्य ऋौर उत्कृष्ट काल एक समय है इसका खूलासा पहले किया ही है। तथा सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिश्यात्वको छोड्कर इनकी अजयन्य स्थिति अनादि-स्रनन्त श्रौर अनादि-सान्त होती है. क्योंकि अभव्योंके उक्त प्रकृतियांकी अजधन्य स्थिति अनादि-अनन्त काल तक पाई जाती है। तथा जिन्होंने दुर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी त्तपणा करते हुए उक्त प्रकृतियों की जघन्य स्थितिको प्राप्त कर लिया है उनके उक्त प्रकृतियोकी अजधन्य स्थितिका काल अनादि-सान्त है। किन्तु अतन्तानुबन्धा चतुष्कका काल मादि-सान्त भी पाया जाता है। जिसने सम्यक्त्व और सम्य-ग्मिथ्यात्वकी सत्ता प्राप्त करके अन्तर्मुहृत कालमे उनकी चपणा कर दी है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी अजवन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हुर्न पाया जाना है। तथा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिण्यात्वका उत्कृष्ट सत्त्वकाल परुयके तीन श्रसंख्यातवें भागोंसे श्रधिक एकसी वर्त्तास सागर है, अतः इनकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण समकता चाहिये । अनन्तान-वन्वी चतुष्ककी अज्ञचन्य स्थितिका काल अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त इस तरह तीन प्रकारका पहले बतलाया ही हैं । जो अनादि कालमे अनन्त कालतक मिथ्यात्वमे पड़ा है उसके अनादि-अनन्त दाल पाया जाना है। जिसने अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना करते हुए जघन्य स्थिति प्राप्त कर ली उसके अनादि सान्त काल पाया जाता है। तथा जिसने विसंयोजनाक पश्चान पुनः त्र्यनन्तानुबन्धीका सत्त्व प्राप्त कर लिया उसके सादि-सान्त काल पाया जाता है। इनमें से मादि-मान्त कालकी ऋषेद्या अनन्तानुबन्धीकी अजधन्य स्थितका जधन्य काल अन्तर्मु हर्त है, क्योंकि अनन्तानुबन्धीका सत्त्व प्राप्त होने पर एक अन्तम् हुर्तक भीतर विसंयोजना द्वारा पुनः उसका त्त्रय किया जा सकता है। तथा अनन्तानुबन्धीकी अजधन्य स्थितिका उन्ह्रप्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है यह स्पष्ट हो है। छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहून है यह पहले बतला ही आये हैं। तथा मिण्यात्व आदिक समान छह नोकपार्धोकी अजबन्य (स्थितिका काल अनादि-अनन्त और अनादि-मान्त घटित कर लेना चाहिये। यह सत्र व्यवस्था भव्योंके वन जाती हैं, इसलिये इनके कथनको स्रोघके समान कहा। किन्तु इतनी विशेषता है कि भव्योके सत्र पकृतियोकी अजघन्य स्थितिका अनादि-अनन्त यह विकल्प नहीं पाया जाता।

 ५१९५ ब्रादेशकी अपेचा नारिकयोमे मिध्यात्व, बारह कपाय. भय और जुगुष्साकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा श्रजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी एगम०, अज्ञ० ज० एगम० । उक्क० सगिहदी । सत्तणोक० ज० जहण्णुक० एयस० । अज० ज० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीयं सागरोवमाणि । अर्णताणु० जह० जहण्णुक० एयस० । अज० जह० अंतोमु० एयसमयो वा, उक्क० सगिहदी । एवं पहमाए । णविर सगिहदी ।

जयन्य स्थितिया जयन्य और उत्तृष्ट कात एक समय है। तथा खजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय खोर उत्कृष्ट काल खपनी उत्कृष्ट न्थितिप्रमाण है। सात नाकपायोकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल खपनी उत्कृष्ट न्थितिप्रमाण है। सात नाकपायोकी जयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धी चतुरुक्ती जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और अजयन्य स्थितिका जयन्य काल खपनी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य स्थितिका जयन्य हिथेतिका जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल खपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार पहली पृथिवीम जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ खपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये।

विशेषार्ध-जो असंज्ञी अपने योग्य जघन्य स्थितिके साथ दो मोड़े लेकर नरकमे उत्पन्न होता है उसके दुसरे मोडमें निश्यात्व, बारह क्षाय, भय और जुगुष्माकी जघन्य स्थिति पाई जा सकती है अतः नरकमं उक्त प्रकृतियाकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इसके पहले मोडमे अजवन्य स्थिति पाई जाती है अतः उक्त प्रकृतियोकी अजवन्य स्थितिका जवन्य क ल एक समय कहा है। तथा जो उक्त प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थितिके साथ नरकमें उत्पन्न होता है उसके उक्त प्रकृतियोंकी अज्ञचन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल नरककी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण् पाया जाता है। सम्यक्त्वकी जधन्य स्थिति नारकीके कृतकृत वंदक सम्यक्त्वके श्चन्तिम समयमे और सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थिति उद्वेलनाके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है, श्रतः नारिकयोके सम्यक्त्व और सम्याग्मध्यात्वकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कड़ा है। तथा जिसके छत्कुत्यवेदकके कालमें दो समय शेप हैं ऐसा जीव यदि मरकर नरकमें उत्पन्न होता है तो उसके सम्यक्त्वकी ऋजवन्य स्थितिका जघन्य काल । क समय पाया जाता है। तथा जिसके सम्यग्मिध्यात्वकी उद्देलनामे दो समय जीप हैं एसा जीव यदि मरकर नरकमे बत्यन्न होता है तो उसके सम्यग्मिण्यात्वकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। इन दोनो प्रकृतियोकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल नरकर्का उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण हे यह स्पष्ट हो है। नरकमे सात नोकपायोकी जघन्य स्थिति वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहर्त वालंके परचान एक समयके लिये प्राप्त हो सकती है, अत: सान नोकपायोकी जबन्य स्थितिका जबन्य चौर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इसके पहले अन्तर्भ हुन काल तक अजपन्य स्थिति होती है, अतः सात नोकपायोकी अजधन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हुर्न कहा है । नथा उत्कृष्ट काल नरककी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण होता है यह स्पष्ट ही हैं। अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति विसंयोजनाके अन्तिम समयमें होती हैं, अतः नरकमें इसकी जधन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जिसने विसंयोजनाके परचान् पुनः अनन्तानुबन्धीकी सत्ता प्राप्त कर ली है और अन्तर्मु हुर्न कालके भीतर पुनः उसकी विसंयोजना कर दी है उसके अनन्तानुबन्धीकी ऋजघन्य स्थितिका जघन्य काल ऋन्तर्महृते पाया जाता है। तथा बिसंयोजना किया हुआ जो जीव सासादनमें जाकर ऋौर दूसरे समयमे ऋन्य गतिको प्राप्त हो। जाता है उसके अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थितिका जबन्य काज एक समय भी पाया। जाता। है। तथा उन्कृष्ट काल नरककी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। पहले नरकमें इसी प्रकार

१४६. विदियादि जाव छिट त्ति भिच्छत्त-वारसकः णवणोकः जः जहण्णुकः एगसः । अजहण्णः [ जहण्णुकः ] जहण्णुकः स्मिट्दी कायच्वा । सम्भत्त-सम्मापिः जः जहण्णुकः एगसः । अजः जः एगसः, उक्कः साहिदी । अणंताणुः च उक्कः जहण्णुकः एगसः । अजः जः एगसः, उक्कः साहिदी । अणंताणुः च उक्कः जहण्णुकः एगसः । अजः जः अतोषुः एगसम्यो वा, उक्कः समिट्दी । सत्तमाए मिच्छत्त-बारसकः भय-दुगुं छाः जहः जः एगसः, उक्कः अंतोषुः । अणंताणुः सत्त-जः अंतोषुः, उक्कः समिट्दी । [सम्भत्त-] सम्मामिः णिर्योधं । अणंताणुः सत्त-णोकः जहः जहण्णुकः एगसः । अजः जहः अंतोषुः, उक्कः समिट्दी ।

जानना चाहिए। किन्तु अजवन्य स्थितिका उत्कृष्ट कात कहते समय इसे पहले नरककी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिये।

§ ४१६. दूसरी से लेकर छठी पृथिशी तकके नारिक्यों में मिण्यात्व, वारह कपाय और नौ नोकपायों की जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और अजयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और अजयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुवन्धी चतुष्कर्भी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल चन्त्र स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट न्थिति प्रमाण है। सातवीं पृथिशीम मिण्यान्य, वारह कपाय, भय आर जुनुष्माकी जयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तु हुर्त है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त और उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यवत्य और सम्यमिण्यान्वकी स्थितिका काल सामान्य नारिकयों समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्क और सान नोकपायों की जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तु हुर्त और उत्कृष्ट काल पर्ती उन्कृष्ट स्थिति प्रमाण है।

विशेषार्थ-द्वितीयादि पृथिवियोमे मिण्यात्व, बारह कवाय खोर नो नोकवायोकी जवन्य स्थिति अन्तिम समयमें ही प्राप्त हो सकती है, खतः यहा उक्त प्रकृतियोकी जवन्य स्थितिका जवन्य खोर उत्कृष्ट काल एक समय कहा । पर यह जवन्य स्थिति उसा जीवके होती है जिसने उत्कृष्ट खायुके साथ नरकमें उत्वक्ष होनेक परचान खन्तमें हूंत कालके भातर उपशम सम्यक्त्य प्राप्त कर लिया है खोर अनन्तानुवन्धीकी विसयाजना करके जा जीवन भर वेदक सम्यग्दृष्ट बना रहा है। शेव जीवोके तो उक्त कमाकी अजयन्य स्थिति ही होती है, अतः द्वितीयादि नरकोमे उक्त कमीकी अजयन्य स्थितिका जवन्य काल अपनी अपनी जवन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा । यहां सम्यक्त्य और सम्यग्मिण्यात्वकी जयन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय उद्वेतनाकी अपन्ता घटित कर लेना चाहिये । शेव कथर सुगम हे क्योंकि उसका पहले खुलामा कर आये हैं, उसी प्रकार यहां भी कर लेना चाहिये । सातवी पृथिवींक मिण्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थिति पर्यायके अन्तमे एक समय नक या अन्तमु हूर्त काल तक प्राप्त हो सकती है खतः इसके उक्त प्रकृतियोकी जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय खार उत्कृष्ट काल अन्तमु हूत कहा । अनन्तानुवन्धीकी जवन्य स्थिति विसंयोजनाके अन्तिम समयमे तथा सात नोकपायाकी जवन्य स्थिति भवके अन्तिम अन्तमु हुर्तके भीतर प्रतिवन्न प्रकृतियोंके बन्धकालके

१५१७ निरिक्खेमु मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछा जह० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । अज० ज० एगस०, उक्क० अमंखेळा लोगा । सम्मत्त०-सम्मामि० ज० जहण्णुक्क० एगम० । अज० जह० एगस०, उक्क० निण्णि पितदोवमाणि सादिरेयाणि । अणताणु॰च उक्क० [ज०] जहण्णुक्क० एयस० । अज० ज० अंतोमु० एयसम्ब्रो वा, उक्क० अणंतकालमसंखेळा पोग्गलपरियद्दा । सत्त्रणोक० ज० जह-ण्णुक्क० एगस० । अज० ज० खुदाभवग्गहणं, उक्क० अणंतकालमसंखे० पो०-परियद्दा ।

६ ५१ द्रं पचिदियतिरिक्ख-पंचि०तिरि०पज्ञ०-पंचि०तिरि०जोणिणीसु मिच्छत्त०-बारसक्तसाय-भय-दुगुंछ० जह० ज० एगस०, उक्क० वसमया । अज० ज० खुदाभव-गाहणं [ अंतोमुहुत्तं ] विसमऊणं एयमञ्जो वा, उक्क० तिल्ण पिलदोवमाणि पुव्व-कोडिपुभत्तेणव्यक्तियाणि । सम्मत्त०-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । अज० ज० एगस०, उक्क० सगिहिदी । अणंताणु०चउक्क० जह० जहण्णुकक० एगस०। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० सगिहिदी । एवं सत्तणोकसायाणं । णवरि अणंताणु० अज० ज० एगसमओ वा ।

अन्तिम सभयमं प्राप्त होती हे अतः इन प्रकृतियाकी जवन्य स्थितिका जवन्य त्रार उत्कृष्ट काल एक समय कहा । शेप कथन सुगम है ।

§ ५१७ निर्यचोमं मिश्यात्व, वारह कवाय, भय त्रांर जुगुप्साकी जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूत है तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल असंख्यात लोक प्रमाण है। सम्यक्त्य त्रांर सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय त्रार उत्कृष्ट काल साधिक तीन पर्य है। अनन्तानुबन्धी चतुष्किकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल अन्ति क्रांत असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। मात नोकपायोकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य स्थितिका जवन्य अपेर उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य अपेर उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल खुद्दाभवम्रहण प्रमाण और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुगुद्दल परिवर्तनप्रमाण है।

§ ५९८ पंचेन्द्रियतिर्यं व पंचेन्द्रियतिर्यं च पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यं च योनिमतियों में मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल दो समय कम खुद्दामवप्रहण प्रमाण, दो समय कम अन्तर्म हूते या एक समय और उत्कृष्ट काल पूर्वकांटि पृथवत्व अधिक तीन पत्य है। सम्यक्त्व और सम्यामण्यात्वकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थिति प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तर्म हूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी स्थिति प्रमाण है। इसी प्रकार सात नोकपायोका जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय भी है।

६ ५१६ पंचिदियतिरिक्खअपज्ञ० मिच्छत्त०-सोलसक०-भय-दुगुंछाणं जह० ज० एगस०, उक्क० वे समया । श्रज० ज० खुद्दाभवग्गहणं दुसमऊणं एयसमश्रो वा, उक्क० अंतोमु० । सम्मत्त-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगस० । अज० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । सत्तणो० ज० जहण्णुक्क० एगम० । श्रज० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवं मणुसश्रपज्ञ०-पंचिदियअपज्ञ०-तसअपज्जताणं ।

§ ५१६ पंचेन्द्रिय निर्यञ्च अपर्याप्तकोमें मिण्यात्व, मंगलई कपाय, भय श्रौर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल दो समय कम खुदाभवप्रहरणप्रमाण या एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मु हूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य श्रौर उत्कृष्टकाल एक ममय नथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक ममय नथा अजघन्य स्थितिका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्न है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीयोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ-तियँचोमें मिथ्यात्व, वारः कपाय, भय और जुगुप्माकी जघन्य स्थिति बादर एकेन्द्रियोंने कमसे कम एक समय तक और अधिकमे अधिक अन्तम् हुने काल तक प्राप्त होती हैं, अतः इनमें उक्त प्रकृतियों की जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय ऋौर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्न कहा है। तथा जो तिर्यंच जवन्य स्थितिके पश्चान एक समय तक उक्त प्रकृतियोंकी अजयन्य स्थितिके साथ रहा श्रीर दुसरे समयमें मर कर अन्य गतिमें उत्पन्न हो गया उसके उक्त प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय हाना है। नियंचोंमें उक्त प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थितिके साथ रहनेका उन्कृष्ट काल श्रामंख्यात लोक है, क्योंकि सूदम एके न्द्रियोंमें जघन्य स्थिति नहीं होती और सूद्रम एंक्न्ट्रियोंमें रहनेका उत्कृष्ट कान ऋसंख्यात लोक है, अतः उक्त प्रकृतियोंको त्र्यज्ञचन्य स्थितिका उट्कृष्ट कान त्र्यसंख्यात लोक कहा। सम्यक्त्व और सम्यग्मि-ध्यात्वकी जवन्य और अजवन्य स्थितिका काल नारिकयों के समान जानना । किन्तु अजधन्य स्थितिके उत्कृष्ट कालमें विशेषता है। बात यह है कि सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वके साथ कोई जीव तियँचपर्यायमे अधिकसे अधिक माधिक (पूर्वकोटि पृथकत अधिक) तीन पत्य तक रह सकता है, अतः इनमें उक्त दो प्रकृतियाकी अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक तीन परुय कहा। तियंवपर्यायमें अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थितिके साथ निरन्तर रहनेका काल असंख्यात पुद्गल परिवर्तन है अतः इनमे अनन्तानुबन्बीकी अजवन्य स्थितिका उन्क्रष्ट काल उक्त प्रमाण कहा । अन्तानुबन्धीकी अपेद्धा द्येष कथन सामान्य नारिकयों के समान जानना । जो कपायोंकी जधन्य स्थितिका बन्ध करके पश्चान् प्रतिपत्त प्रकृतियोंका दीघेकाल तक बन्ध करता है उसके प्रतिपत्त प्रकृतियोके बन्धके अन्तिम समयमे सात नोकपायोकी जघन्य स्थिति होती है, अतः सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा । तथा तिर्थंच पर्यायमें रहनेका जघन्य काल खुद्दाभवप्रक्षा प्रमाण और उत्कृष्ट काल असंख्यान पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है, अतः सात नोकपार्याको अजयन्य स्थितिका जयन्य काल खुदाभवयदणप्रमाण श्रीर उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण कहा। पंचेन्द्रिय तियँचित्रकके पहले और दसरे विमहके समय जवन्य स्थिति हो सकती है अतः इनके मिध्यात्व, वारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जबन्य स्थितिका जबन्य कात एक समय त्रोर उत्कृष्ट काल दो समय कहा। तथा

§ ५२० मणुस-मणुपपज्जत्त-मणुस्सिणीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० जह० स्रोघं०। स्रज्ञ ज० खुद्दाभवग्गह्णं अंतोमु०, उक्क० सगिहदी। सम्मत्त-सम्मामि० पंचिदियतिरिक्खपज्जत्तभंगो। अणंताणु०च उक्क० जह० जहण्णुक्क० एगसमओ। स्रजह० ज० अंतोमु० एगसमओ वा, उक्क० सगिहदी। णवरि मणुसपज्ज० इत्थिवेद० स्रण्णोकसायभंगो। मणुसिणीसु अष्टणोक० जह० जहण्णुक्क० अंतोमुहुनं।

§ ५२१ देवाणं णेरइयभंगो । भवण०-वाणवेंतराणमेवं चेव । एवरि सगिंदिरी।

इन दो समयोंको घटा देने पर पचेन्द्रिय तिर्यंचोंके दो समय कम खुद्दाभवप्रदेश प्रमास और शेष दो प्रकारके तिर्यञ्जोंके दो समय कम अन्तमुं हूर्त श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल होता है। तथा जिस पंचेन्द्रियतिर्यंच त्रिकके भवके दृसरे समयमें जघन्य स्थिति हुई उसके पहले समयमें श्रजघन्य स्थिति होती है श्रतः इनके श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय भी सम्भव है। शेप कथन सुगम है। इतनी विशेषता है कि योनिमती तिर्यंचके सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति और श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल उद्घेलनाकी श्रपेक्षा ही घटित करना चाहिये। पंचेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह क्षाय, भय श्रोर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल हियंचोंके समान घटित कर लेना चाहिये। पंचेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्त श्रवस्थामें रहनेका उत्कृष्ट काल श्रन्तमुं हूर्त है, अतः इनमें उक्त प्रकृतियोंकी श्रजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रन्तमुं हूर्त कहा। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिका काल पूर्वमें कहे हुए कालको ध्यानमें रखकर घटित कर लेना चाहिये। मनुष्य श्रपर्याप्त, पंचेन्द्रिय श्रपर्याप्त श्रोर त्रस श्रपर्याप्त जीवोंकी स्थिति श्रोर पर्याय पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान है श्रतः इनमें सब श्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर अजधन्य स्थितिका काल पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान है श्रतः इनमें सब श्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर अजधन्य स्थितिका काल पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान है।

§ ५२० मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनयांमें मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोक-पायोंकी जघन्य स्थिति आंघकं समान हैं। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल सामान्य मनुष्योंमें खुदाभवयहणप्रमाण और रोप दोमें अन्तमुं हूर्न और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका मंग पंचेन्द्रियतिर्यचपर्याप्तकोंके समान हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्न या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्थिवदका मंग छह नोकपायोंके समान है और मनुष्यनियोंमे आठ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त हैं।

विशोषार्थ-सामान्य मनुष्योंका जघन्य काल खुद्दाभवग्रहण प्रमाण तथा पर्याप्त और मनुष्यिनयोंका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्त है, अतः सामान्य मनुष्योंमें मिध्यात्व आदि बाईस प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल खुद्दाभवग्रहण प्रमाण और पर्याप्त तथा मनुष्यिनयोंमें उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्त कहा। तथा मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्वीवेदके अन्तिम काण्डकके रोप रहने पर जघन्य स्थिति प्राप्त होती है, अतः इनके स्वीवेदकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल छह नोकपायोंके समान अन्तर्मु हूर्त कहा। इसी प्रकार मनुष्यिनयोंके आठ कपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त जानना। शेष कथन स्रगम है।

६ ४२१ देवोंमें नारिकयों के समान जानना चाहिये। भवनवासी और व्यन्तर देवोंके भी

जोदिसियादि जाव उवरिमगेवज्ञो ति मिच्छत्त-बारसकः - एवरणोकः जहः जहःणुकः एगसः । अजः जः जहःण्णिद्दिती, उकः उक्षस्सिद्दिती । सम्मत्त-सम्मामिः - अणंताणुः चउक्षाणं देवोधमंगो । एवरि अप्पप्पणो उक्षस्सिद्दिती वतन्वा । अणुहिसादि जाव अवराजिदः मिच्छत्त-सम्मामिः - वारसकः - एवरणोकः जः जहण्णुकः एगसः । अजः जहः जः विद्दी, उकः उक्षस्सिद्दिती कायन्वा । सम्मत्त-अणंताणुः चउकः देवोधं । एवरि अणंताणुः अजः एयसमयो एत्थि । सन्वद्धः मिच्छः - सम्मामिः - वारसकः एवरणोकः जहः जहण्णुकः एयसमयो । अजः जहः तेत्तीसं सागरोवः समऊरणाणि, उकः तेत्तीसं सागरोवः समऊरणाणि, उकः तेत्तीसं सागरोवः ।

इमी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अपनी स्थिति कहनी चाहिये। ज्योतिपियोंसे लेकर उपरिम प्रैवेयकतक के देवोंमे मिध्यात्व, वारह कषाय आरेर ती नोकषायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उन्क्रष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल जधन्य स्थितिप्रमाण श्रीर उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रम ए है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग सामान्य देवोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। अनुदिशिसे लंकर अपराजित तकके देवोंमें मिध्यात्व, सम्यग्मिश्यात्व, बारह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल जयन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण करना चाहिये। सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका काल सामान्य देवोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अजयन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय नहीं है। सर्वार्थिसिद्धिमें मिण्यात्व, सम्यग्मिण्यात्व, बारह कृषाय और नो नोकपायांकी जघन्य स्थितिका जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है तथा अजबन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय कम तेतीस सागर और उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर है। सन्यक्त त्रीर त्रानन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्रज्ञचन्य स्थितिका जवन्य काल सम्यक्त्वका एक समय और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका श्रन्तमु हूर्त श्रोर उत्कृष्ट काल दोनोंका तेतीस सागर है।

विशेषाथ-जिस प्रकार सामान्य नारिकयों के सब प्रकृतियों की जघन्य श्रोर श्रजधन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल बतला आये हैं उसा प्रकार सामान्य देवों के जानता। तथा भवनवासी और ज्यन्तर देवों के भी इसी प्रकार जानना। विशेष बात इतना है कि इनके अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनो-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण जानना चाहिये। ज्योतिषियों से लेकर उपिरम भैवेयक तक के देवों के मिध्यात्व, बारह कपाय और नो नोकपायों का जघन्य स्थिति भवके अनितम समयमें सम्भव है, अतः इनके उक्त प्रकृतियों की जवन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। पर यह जवन्य स्थिति उत्कृष्ट स्थितिवाले सम्यग्दृष्टि देवों के सम्भव है, अतः उक्त कर्मों को अजवन्य स्थितिका जघन्य काल अपनी-अपनी जघन्य स्थितिमाण और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिमाण कहा। शेष कथन सुगम है। अनुदिश आदिकमें इसी प्रकार जानना चाहिये। पर इनके सम्यग्स्थितका जघन्य स्थितिका काल मिध्यात्वके समान घटित करके कहना चाहिये, क्योंकि अनुदिशसे लेकर उपरके सब देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं,

§ ५२२ . एइंदिएसु भिन्छत्त-सोलमक० भय-दुगुं छाणं [जह०] जह० एयसमओ, उक्क अंतोमु । अज व ज एगस , उक्क असंखेजा लोगा । सम्मत्त सम्मामि ज ज जहण्णुक ॰ एगस ०। अज ० ज ० एगस ०, उक्त ० पत्तिदो ० अमंखे ज्ज ० भागो । सत्तरणोक॰ ज० जहण्णुक० एगस०। अज० ज० एगस०, उक० असंखेळा लोगा। एवं सुद्रुमेइंदियाएां । वादरेइंदियाणमेवं चेव । एविर समिडिर्दा । वादरेइंदियपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंद्र० जह० ज० एगस०; उक्क० अंतोमु० । अज० ज० एगस०, उक्क० मंखेजाणि वस्यसहस्साणि । सम्मत्त-मम्मामि० उक्कस्सभंगो । सत्ताणोक॰ जह० जहण्णुक० एगस०। अज० ज० एगस०, उक्क० संखेजाणि वस्ससहस्साणि । वादरेइंदियअपज्ज०-सहमेइंदियपज्जत्तापज्जताणं मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुर्गुद्ध ज ज एगसम्ब्रो, उक्क अंतीयु । अज ज एगसमन्त्रो, उक्क । अंतोम्० । सम्मत्तवन्सम्माभिवन्सत्तरणोक्तव जव जहण्युक्तव एगमगओ । अजव जव त्रातः इनक सम्यग्मिभ्यात्वका उद्वलना सम्भव नही । नथा जा उपश्मसम्यग्दांष्ट्र श्रानन्तानुबन्धीकी विसंयोजनावाला जीव भवक अन्तमे सामादनमे जाता है उसके अनन्तानुबन्धीकी अजघन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है। पर यहाँ कोई भी जीव सम्यक्त्यसे च्युत नहीं होता श्रतः यहाँ अनन्तानुबन्धीकी त्रज्ञचन्य स्थितिका जपन्य काल एक समय सम्भव नहीं। सर्वार्थसिद्धिमे जघन्य और उत्कृष्ट अ।युका भेद नहीं ! तथा वहाँ भवके अन्तिम समयमें मिश्यात्व त्रादि तेइस प्रकृतियोंकी जवन्य स्थिति सम्भव है अतः वहाँ जवन्य स्थिति ।। जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा । तथा इस एक समयका कम कर देने पर अजबन्य स्थितिका जबन्य काल एक समम कम तेतीस सागर प्राप्त होता है । शेव कथन सुगम है ।

§ 1२२ एकेन्द्रियोमं मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय त्रीर जुगुप्साकी जवन्य स्थितिका जधन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूत है। तथा अजबन्य (स्थितिका जबन्य काल एक समय त्रीर उत्कृष्ट काल त्रसंख्यात लाक/माण्ड्। सम्यक्त्व त्रीर सम्याग्याध्यात्व-को जधन्य स्थितिका जघन्य त्रीर उत्कृट काल एक समय तथा त्रजनय स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल परुयोपनके श्रसंख्यातव भागव्रमाण है। सात नांकपायोकी जवन्य स्थिति-का जघन्य ऋौर उत्कृष्ट ठाल एक समय तथा अजवन्य (स्थातका जवन्य काल एक समय ऋौर उत्कृष्ट काल ऋसंख्यात लोकन्रमाण है। इसी प्रकार सूच्म एकेन्द्रियाक जानना चाहिये। बादर एकेन्द्रियोकं भी इसा प्रकार जानना चाहियं। किन्तु इतना विशेषता ह कि अपना स्थिति कहनी चाहियं । बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त धामे मिथ्यात्व, सालह कपाय, भय श्रीर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय ओर उत्कृष्ट काल अन्तमुहूत है। तथा अजवन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वप ह । सम्यक्तव और सम्याग्मध्यात्वका भंग उत्कृष्ट स्थितिके समान है। सात नाकपायाको जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष है। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, सृहत एकेन्द्रिय प्याप्तक ओर सूच्म एकन्द्रिय अपयाप्तकांमे मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल श्रन्तमुं हूर्त है। तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्यात्व त्र्यार सात नाकपायोकी जवन्त्र स्थितिका जवन्य श्रीर **उत्कृष्ट** 

एगसमञ्चो, उक्क० अंतोमु०।

६५२३. सव्वित्रगितिदिय० भिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुर्गु छ० ज० ज० एगसमञ्चो, उक्त० वेसमया । अज० ज० खुद्दाभवग्गहणं अंतीमुहुतं विश्वमञ्जणं एयसमयो वा, उक्त० अप्पप्पणो उक्तस्सिटिदी । सम्पत्त-सम्मामि० जहा जहण्णुक्क० एगस० । अज० ज० एगस०, उक्क० सगिटिदी । सत्त्रणोक्क० ज० जहण्णुक्क० एगस० । अज० ज० अतामु०, उक्क० सगिटिदी ।

४५२४, पर्चिदिय-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज० भिरुक्रत्त-वारसक०-एवर्णाक०

काल एक समय तथा ऋजवन्य स्थितका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूते हैं। विशेषार्थे-एकन्द्रिय, बादर एकन्द्रिय पर्याप्त तथा अपर्याप्त, सुत्तम एकेन्द्रिय श्रीर सूत्तम एकेन्द्रिय पर्याप्त तथा ऋपर्याप्त जीवोंकं ऋपनी ऋपनी उत्कृष्ट स्थितिका विचार करके सब प्रकृतियों की अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल कहना चाहिये। परन्तु एकेन्द्रियोंमे जघन्य स्थिति केवल बादर पर्याप्तके ही होती है सूदमके जवन्य नहीं हाती आर सूदमोका उत्कृष्ट काल असंख्यात लोक है अत: एकेन्द्रियोंमे अजयन्यका उत्कृष्ट काल असंख्यात लोक कहा है। यद्यपि एकेन्द्रियोंमें अजयन्यकी उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात लोक प्रमाण है, फिर भी इनके सम्यक्त्व और सम्याग्मिश्यात्वकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल परुयके ऋसंख्यानवें भागत्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि मिण्यादृष्टि जीवके इसमे अधिक काल तक इनकी सत्ता नहा पाई जाती । तथा इन पूर्वोक्त एकेन्द्रियादि जीवोमें जो जवन्य स्थितिके परचान् एक समय तक अजवन्य स्थितिके साथ रहा और दूसरे ममयमे मर गया उसक सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिथ्यात्वक विना क्षेत्र सघ प्रदृतियोकी अजवन्य हिर्वातका जवन्य काल एक समय प्राप्त होता है। तथा इनक सम्बन्दन और धम्बारमध्यात्वकी जवन्य स्थितिका जवस्य और उत्कृष्ट काल तथा अजयन्य (स्थातका जवन्य काल एक समय उद्वेतनाकी अपैद्या कहा है। तथा मिध्यात्व, सालह कपाय, भय श्रोर जुगुप्ताका जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय त्रार उत्कृष्ट काल अन्तमु हूत तथा सात नाकनायाका जवन्य स्थितिका जवन्य त्रारे उत्कृष्ट काल एक सनय सामान्य तियचाक समान अपना अपना पर्यायमं घाटत करके जानना चाहिये।

§ ५२३. सब विकलेन्द्रियांमं मिण्यात्व, सालह कपाय, भय और जुगुत्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दा समय हं नथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल पर्क रायमं दा समय कम खुद्दाभव्यह्णप्रमाण और पर्याप्तकोंमें दो समय कम खुद्दाभव्यह्णप्रमाण और पर्याप्तकोंमें दो समय कम अन्तमुं हूर्न अथवा एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य निथितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। सात नाकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अपनी स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—विकलत्रयोमं मिध्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय तथा श्रज्ञचन्य स्थितिका जघन्य काल दो समय कम खुदाभवप्रहण प्रमाण और दो समय कम अन्तर्भ हुते या एक समय पेचेन्द्रिय तिथैच विकके समान घटित कर लेना चाहिये। तथा अजयन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट हो है। हो। कथन सुगम है।

§ ५२४. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रस पर्याप्त जीवांमें मिध्यात्व, बारह कपाय

जि॰ त्रोघं । अजि॰ जि॰ खुद्दाभवग्गदृणं अंतोमु॰, उक्क॰ मगदिदी । सम्मत्त-सम्मामि॰ जि॰ जहएणुक्क॰ एगस॰ । अजि॰ जि॰ एगस॰, उक्क॰ वे खावदिसागरे(॰ सादिरेयाणि। त्र्रणंताणु॰चउक्क॰ जि॰ जहण्णुक्क॰ एगस॰ । त्रजि॰ अंतोमु॰ [ एगसमत्रो वा ], उक्क॰ सगदिदी । एवं चक्खु॰-सण्णि त्ति ।

६ ५२५, कायाणुवादेरा पुढिबि०-स्राउ०-तेउ०-त्राउ०-वणप्फदि०-णिगोद०

स्रोर नो नोकपायोकी जघन्य स्थितिका काल स्रोधके समान है तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल पर्याप्तकों के विना रोपम खुद्दाभवग्रह एप्रमाण स्रोर पर्याप्तकों में स्थन्तमुँ हूर्तप्रमाण स्रोर उत्कृष्ट काल स्थानी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य स्थौर उत्कृष्ट काल एक समय तथा स्थजचन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय स्थौर उत्कृष्ट काल साधिक दो स्थानिक सागर है। स्थनन्तानुकन्यी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य स्थोर उत्कृष्ट काल एक समय तथा स्थजचन्य स्थितिका जघन्य काल स्थन्य स्थितिका जघन्य स्थार उत्कृष्ट काल स्थना तथा स्थजचन्य स्थितिका जघन्य काल स्थन्तमुँ हूर्न या एक समय स्थीर उत्कृष्ट काल स्थपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार चनुद्दानवाले स्थीर संज्ञी जीवोके जानना चाहिये।

विशेषार्थ-मिथ्यात्व, बारह कपाय श्रीर नौ नोकपायांकी जघन्य स्थितिका काल जो श्रोघमे कहा है वह पंचेन्द्रियादिकी प्रधानतासे कहा है, श्रतः इन चारोमे उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका काल त्रांघकं समान जानना । तथा पंचेन्द्रिय और त्रसोंमे उक्त प्रकृतियोंकी त्राज्ञचन्य स्थितिका जघन्य काल खुद्दाभवप्रहण प्रमाण ऋोर पंचेन्द्रिय पर्याप्त तथा त्रस पर्याप्तकोंमे उक्त प्रकृतियोक्ती अजघन्य स्थितका जवन्य काल ऋन्तमु हुते हागा। तथा उत्कृष्ट काल अपनी ऋपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण हागा। इनमे पंचेन्द्रियोंका कायस्थिति प्रवकोटिप्रथक्त्व ऋधिक हजार सागर, पंचेन्द्रिय पर्याप्तकाकी कायस्थिति सी प्रथक्त्व सागर, त्रसकायिकोंकी कायस्थिति पूर्वकाटि पृथक्त्वसे अधिक दा हजार सागर अार त्रस पर्याप्तकोकी कायस्थिति दो हजार सागर है। त्रातः इतने काल तक उक्त जीवोंका उक्त प्रकृतियोंके त्राजवन्य स्थितिके साथ रहनेमे कोई वाधा नहीं हैं। सम्यक्त्यकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्टकाल एक समय कृतकृत्य वेदकके ऋन्तिम समयमे हागा । तथा सम्यग्मिध्यात्वकी जवन्य स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट एक समय काल उद्वेलना श्रांर कृतकृत्यवेदक इन दानांकी श्रपंत्ता हा सकता है। तथा इनके सम्यक्त्व स्रोर सम्यग्मिध्यात्वका सत्त्व साधिक एक सो बत्तीस सागर तक रह सकता है ऋतः उक्त दं। प्रकृतियोकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल सायिक एक सी बत्तीस सागर कहा। विसंयाजनाके अन्तिम समयमे अनन्तानुबन्धाका जघन्य स्थिति प्राप्त होती है और उप चारों प्र हारके जीवोंके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना हो सकती हैं अतः इनके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा । जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयाजना की है ऐसा जीव यदि मिथ्यात्वमं जाय ऋार वहां ऋतिलघु काल तक रह कर और पुनः वेदक सम्यक्त्वका प्राप्त करके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर ले ता उसे ऐसा करनेमें अन्तमु हूते काल लगता है श्रतः अनन्तानुबन्धीकी अजवन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्त कहा । परन्तु आयुके अन्तिम समयमें एक समय कालवाला सासदन हुआ और मरकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हानेवालें किसी भी घौबीसकी सत्तावालं पंचेन्द्रिय या त्रसंक अनन्तानुबन्धांकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय भी प्राप्त होता है। तथा उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण होता है यह स्पष्ट ही है।

§ ५२५. कायमार्भणाके ऋनुवादसे सभी पृथिवीकायिक, सभी जलकायिक, सभी ऋग्नि-

#### एहंदियभंगो । एवरि सगसगुक्कस्सहिदी वत्तव्या ।

🐒 ५२६ . पंचमण०-पंचवचि ० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि ०-सोलसक०-रावसोक० जह० त्रोधं। एत्ररि छण्णोक० ज० ज० एगम०, उक्क० अंतोमु० । सन्वेसिमज० ज० एगस०, उक्क० अंतोम्० । स्रोराछि० एवं चेत्र । णवरि सगद्दिरी । एवं वेउब्बिय॰ | णवरि छएणोक० ज० जहण्णक्क० एयस० | कायजोगि० मिच्छत्त– ज॰ मणजोगिर्मगो । सोलसक०-एवएोक० ऋज० ज० श्चणंतकालो । सम्मत्त-सम्माभि० एइंदियभंगो । श्रोरात्तियभिस्स० बादरेइंदिय-श्रपज्जत्तभंगो । एवरि सत्तणोकः अजः जहः अंतोम्रः । वेडव्वियमिस्सः मिच्ब्रत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० ज० जहण्ण्**कक० एगस०** । श्रज७ जहण्णुक्क० अंतोमु॰ । णवरि सम्मत्त सम्मामि० अज॰ ज० एगममत्रो । एवमाहार-मिस्स० । णवरि सम्मत्त-सम्मामि० अत्त० जहण्णुक्क० अंतोमु० । आहार० वेउव्वियभंगी । एवमकसाय-सृहुम०-जहाक्खादसंजदे ति । कम्मइय० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दृगुं छा० कायिक, सभी वायुकायिक श्रीर सभी निगाद जीवोमे एकेन्द्रियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनके अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण कहना चाहिये। तात्पर्ये यह है कि जिस प्रकार एकेन्द्रियोंके सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका काल बतला आये हैं उसी प्रकार इनक यथायाग्य जान लेना चाहिये।

🐧 ५२६. पाँचों मनोयोगी स्रोर पाँचों वचनयांगी जीवोमे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मि-भ्यात्व, सांलह कपाय और नी नांकपायोंकी जघन्य स्थितिका काल श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषना है कि छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है तथा सभी प्रकृतियोकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्म हुते हैं। अौदारिककाययांगी जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ अपनी स्थिति कहनी चाहिये। इसी प्रकार वैक्रियिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि छह नाकपायोकी जधन्य स्थितिका जघन्य स्थीर उत्कृष्ट काल एक समय है। काययोगियोंमे मिथ्यात्व, सोलह कपाय ऋौर नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका मंग मनायागियोके समान है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट अनन्त काल है। सम्यक्तव और सम्यग्मि व्यात्वका एकेन्द्रियों के समान भंग है। औदारिकमिश्रकाय-यागियोमे वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तकांके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सात नोकपायोकी अजबन्य स्थितिका जबन्य काल **ब्रन्तर्मु** हुते है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह् कपाय श्रीर नो नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व स्रोर सम्यग्मिण्यात्वकी स्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय है । इसी प्रकार ऋाहारकमिश्रकाययोगियोमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व त्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी त्रजचन्य स्थितिका जघन्य त्रीर उत्कृष्ट काल त्रान्तर्मु हूर्त <sup>हैं। अ</sup>गहारककाययोगियोंमें वैक्रियिककाययोगियोंके समान भंग है। इसी प्रकार श्रक्रपायी, <sup>मृह्मसांपरा</sup>यिकसंयत त्र्यौर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए। कार्मणकाययोगियोंमें मिध्यात्व, सालह कषाय, भय ऋौर जुगुप्साकी जवन्य स्थिति झौर अजवन्य स्थितिका जघन्य

जहण्णहिदि० अजहण्णहिदि० च जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णि समया । सम्मत्त-सम्मामि०-सत्तणोक० ज० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । अज० ज० एगसमञ्जो, उक्क० तिण्णि समया । एवमणाहारि० ।

काल एक समय त्रोर उत्कृष्ट काल तीन समय है । सम्यक्त्य, सम्यग्मिण्यात्व त्रोर सात नोकपायोकी जयन्य स्थितिका जघन्य त्रोर उत्कृष्ट काल एक समय तथा त्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय त्रोर उत्कृष्ट काल तीन समय हैं । इसी प्रकार त्र्यनाहारकोंके जानना ।

विशेषार्थ-पांचों मनायाग और पांचों वचनयोगों में छह नोकपायों की जधन्य स्थितिका जबन्य काल एक समय तथा सब प्रकृतियोंकी अजबन्य स्थितिका जबन्य काल एक समय योग परिवर्तनकी श्रपेत्ता कहा है। शेप कथन सुगम है। श्रीटारिक काययोगका उत्कृष्ट काल श्रन्तमु हुर्त कम बाईस हजार वर्ष हैं । अतः औदारिक काययोगमे सब प्रकृतियोकी अजबन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण प्रान होता है। शेष कथन मनोयांगके समान जानना। जो देव दो बार उपशम श्रेणी पर चढकर सर्वार्थिमिद्धिमे उत्पन्न होनेवाले भवके अन्तिम समयमे वैक्रियिककाययांगी होता है उसीके वैक्रियिक काययोगमें छह नांकपायोंकी जघन्य स्थिति सम्भव है अतः वैक्रियिककाय-यागमें छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा इसके सम्यक्त्वकी जयन्य स्थिति उद्वेलनासे ही प्राप्त होगी क्योंकि जो कृतकृत्यवेदक सम्यग्रहिष्ट देव या नारिकयोमें उत्पन्न होता है उसके वैक्रियिक मिश्रकाययोगके कालमे ही कृतकृत्यवेदकका काल समाप्त हो जाता है। काययांगका उत्कृष्ट काल असंख्यात पुगदल परिवतन प्रमाण है अतः इसमें मिध्यात्व त्रादि छव्बीस प्रकृतियोंकी त्र्यज्ञघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा । काय-योगमे सम्यक्त्व स्रोर सम्यश्मिध्यात्वकी जवन्य स्रोर स्त्रजवन्य स्थितिका काल एकेन्द्रियोके समान कहा इसका यह तात्पर्य है कि जिस प्रकार एकेन्द्रियोमे सम्यक्त्य और सम्यग्मिश्यात्वकी श्चजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल पत्यके त्रसंख्यातवें भागप्रमाण वन जाता है उसी प्रकार काय-योगमं भी जानना । स्रोदारिकमिश्रकाययोगमे सात रोकपायोकी स्रजवन्य स्थितिक। जवन्य काल एक समय न कहकर ऋन्तमु हुर्न बतलाया है उसका कारण यह है कि यह जबन्य स्थिति उस जीवके होती है जो कोई बादर एकान्य्रय जबन्य स्थिति सत्त्रके साथ पंचेन्द्रिय तिर्वचोंमे उत्पन्न हुआ स्त्रीर -श्चन्तम् हुर्न काल तक श्रपने श्रपने प्रतिपत्त बन्धक कालमे रहकर प्रतिपत्त बन्धक कालके श्रन्तिम समयमे विद्यमान है उसके श्रोदारिकमिश्रमे सात नोकपायोकी जघन्य स्थिति होती है। <del>ऋौदारिकमिश्र</del>का काल प्रतिपत्त प्रकृतिके बन्ध कालसे बहुत अधिक है। जघन्य स्थितिसे पूर्व च परचान् काल अन्तर्मुहर्न हाता है अतः सात नाकपायों की अजयन्य स्थितिका जघन्य काल श्रन्तमु हुर्त कहा है। वैकियिकमिश्रकाययांगमे मिध्यात्व सालह कपाय भय श्रौर जुगुष्साकी जघन्य स्थिति वैक्रियिक मिश्रकाययागके श्रन्तिम समयमे सर्वार्थिसिद्धिमे सम्भव है। सान नांकपायोकी जयन्य स्थिति अपनी प्रतिपत्त प्रकृतियोंके बन्धकालक अन्तिम समयमें प्रथम नरकमे सम्भव हैं तथा सम्यक्त्व और सम्याग्मध्यात्वकी जघन्य स्थिति किसी भी समय सम्भव है, अतः इसमे सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जिस वैक्रियिकमिश्रकाययागीकं दूसरे समयमे सम्यक्व या सम्यग्निश्यात्वकी जघन्य स्थिति होती है उसके सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी अजयन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। शेप कथन सुगम है। त्राहारकमिश्रकाययोगमं इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इनके सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी न तो उद्वेतना होती हैं श्रीर न चप्णा, अतः

इ ५२७ वेदाणुनादेण इत्थिनेदएस भिन्छत्त-अहकसाय-श्रहणोकसाय-चत्तारि-संजलण जह जहण्णुक्क एयस । श्रज ज एगस , उक्क सगिहिदी। एवं णवुंस । णविर जह जहण्णुक्क अंतोस्र । सम्मत्त - सम्मामि जह जहण्णुक्क एगस । श्रज ज एगस , उक्क पणवण्णपिलदोवमाणि सादिरेयाणि। श्रणंताणु ज्व उक्क ज जहण्णुक्क एगस । श्रज ज अंतोस्र । एयसमयो वा, उक्क सगिहिदी।

इनके उक्त दो प्रकृतियोकी अजयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्महते कहा है। तथा इनकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय पर्याप्त योग होनेक पूबवर्ती ममयमें होगा । श्राहारककाययोगमें वैकियिक काययोगके समान सब प्रकृतियोंकी स्थितिका जधन्य और उत्कृष्ट काल जानना चाहिये। मूलमे अकपाय आदि और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। कामैण काययांगका जधन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय है अतः इसमे मिध्यात्व त्रादि उन्नीम प्रश्नतियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण वन जाता है। जो कृतकृत्यवेदक सम्यग्द्दष्टि जीव कार्मणकाययोगके रहते हुए द्वायिक-सम्यग्दृष्टि हो जाता है उसके कार्मणकाययांगमें सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय पाया जाता है। तथा जिसने कार्मणकाययोगमें सम्यग्मिध्यात्वकी उद्वेलना की हं उसके उक्त प्रकृतिकी जबन्य स्थितिका जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय पाया जाता है। सात नोकपायोंकी जबन्य स्थिति कार्मणकाययोगके दूसरे समयमे प्राप्त होती है अतः इनकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा । तथा कार्मण काययोगमें उक्त नौ प्रकृतियोंकी अज्ञचन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय कार्मणकाय-योगके जघन्य श्रीर उन्कृष्ट कालकी अपेचा बन जाता है। मोहनीयकी सत्तावाले जो जीव कार्मणुकाययोगी होते हैं वे ही अनाहारक होते हैं, अतः अनाहारकोंमे सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अज्ञचन्य स्थितिका काल कार्मणकाययागियोके समान कहा।

§ ५२० वंदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रांवदवालों में मिण्यात्व, आठ कपाय, आठ तांकपाय और चार संउवलनकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण हैं। इसी प्रकार नाष्ट्रंसक-वंदका जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्म हूर्त हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यिग्मण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य कोल एक समय और उत्कृष्ट काल स्थितका जघन्य स्थितिका जघन्य के। अनन्तानुयन्थी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्त या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—स्निवेदवाल जीवोंके मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति मिण्यात्वकी त्रपणाके अनितम समयमे और आठ कपायोंकी जघन्य स्थिति आठ कपायोंकी त्रपणाके अनितम समयमें तथा आठ नोकपाय और चार संज्ञ्यलनकी जघन्य स्थिति संवदभागके अनितम समयमें पाप्त होती है अतः इनकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। स्निवेदी जीव जब नपुंसक वेदके अनितम काण्डकका पतन करता है तब उसके नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति होती है पर इसका उत्कीरणकाल अन्तमु हूर्त है, अतः इसके नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त कहा। जो जीव उपशमश्रेणींसे उतर कर एक समय तक स्नीवेदके उदयके साथ रहा और

§ ५२८ पुरिस० मिच्छत्त-बारसक०-पुरिस० ज० जहण्णुक्क० एयस०। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० मगिडदी । सम्मत्त०-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो। अज० ज०एगस०, उक्क० वे छाविडसागरो० सादिरेयाणि । ऋडणोक० ज० जहण्णुक्क० अंतोमु०। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० सगिडदी। ऋणंताणु० जह० जहण्णु० एयस०। अज० जह० अंतोमु० एयसमञ्जो वा, उक्क० सगिडदी।

दूसरे समयमें मरकर देव हो गया उसके उक्त सब प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय पाया जाता है तथा उक्त सब प्रकृतियोंकी ऋजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल ऋपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है यह स्पष्ट ही है। स्त्रीवेदके साथ निरन्तर रहनेका उत्कृष्ट काल सौ पल्यपृथक्त्व प्रमाण है। अतः यहाँ उत्कृष्ट स्थितिसे यही काल लेना चाहियं। जो स्त्रीत्रंदी जीव दर्शनमोहनीय की भ्रपाण कर रहा है उसके अपनी अपनी चपणाके अन्तिम समयमे सम्यक्त्व और सम्यग्मि-ध्यात्वकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है अतः इसके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। इसी प्रकार विसंयोजनाकी अपेचा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य त्रौर उत्कृष्ट काल एक समय जानना । जो द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणीसे उतर कर एक समय तक स्त्रीवेदक साथ रहा श्रीर दूसरे समयमें देव हो गया उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय पाया जाता हैं । एक जीव स्त्रीवेदके रहते हुए निरन्तर वेदकसम्यक्त्वक साथ कुछ कम पचवन पल्य काल तक रह सकता है। ऋब यदि कोई जीव पचवन पल्यकी आयुके साथ देवी हो गया ऋौर वहाँ उसने वेदक सम्यक्त्व प्राप्त कर लिया तो उसके सम्यक्त्व त्र्योर सम्यग्मिश्यात्वकी ऋजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक पचवन पत्य पाया जाता है। जो चौर्वास प्रकृतियोंकी सत्तावाला मिथ्यात्वमें जाकर श्रन्तम् हुर्तके भीतर सम्यग्दृष्टि हो कर पुनः श्रनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर लेता है उसके अनन्तानुबन्धीकी अजधन्य स्थितिका जधन्य काल अन्तर्मु हुर्त पाया जाता है। तथा जो चौबीस ष्ट्रकृतियोंकी सत्तावाला स्त्रीवदी जीव जीवनके अन्तिम समयमे सासादनको प्राप्त होता है ऋौर दसरे समयमं मर कर अन्यवंदी हां जाता है उसके अनन्तानुबन्धीकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा अनन्तानुबन्धीकी अजधन्य स्थितिकी ब्ल्ह्स काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्र नाए है यह स्पष्ट ही है।

§ ५२८. पुरुषवेदवालोमें मिण्यात्व, बारह कपाय और पुरुपवेदकी जवन्य स्थितिक। जवन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिक। जवन्य काल अन्तर्मृहूतं और उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितियमाण है। सम्यक्त्व और सम्यिग्मण्यात्वकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक दो ख्यासठ सागर है। आठ नोकपायोंकी जयन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल प्रकृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजवन्य स्थितिका जवन्य काल अन्तर्मृहूर्त या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य स्थितिका जवन्य काल अन्तर्मृहूर्त या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य स्थितिका जवन्य काल अन्तर्मृहूर्त या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिमाण है।

विशेषार्थ-पुरुषवेदवाले जीवोके मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति मिण्यात्वकी ज्वपणाके अन्तिम समयमें, आठ कपायोंकी जघन्य स्थिति आठ कषायोंकी ज्ञपणाके अन्तिम समयमें तथा चार संज्वलन और पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति सवेदभागके अन्तिम समयमें होती है, अतः इनके उक्त प्रकृतियों- ६ ४२९. णवुंस० भिच्छत्त-अहक०-अहणोक०-चतारिसंजल० ज० जहण्णुक० एगस०। अज० ज० एगस०, उक्क० अणंतकात्तमसंखेज्ञा पो०परियद्दा । सम्मत्त-सम्मामि० जह० जहण्णुक० एगस०। अज० ज० एगस०, उक्क० तेतीसं सागरो० मादिरेयाणि। अणंताणु०चडक्क० जह० जहण्णुक्क० एगस०। अज० ज० अंतोसु०

की जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। कोई मनुष्य उपशमश्रेगीसे उतर कर एक समयके लिये पुरुपवेदी हुआ और दूसरे समयमें मरकर वह देव हो गया तो भी वह पुरुपवेदी ही रहता है अत: पुरुपवेदमें उक्त प्रकृतियोंकी अजधन्य स्थितिका जधन्य काल एक समय नहीं बनता । किन्तु जो उपशमश्रेणीसे उतर कर और पुरुषवेदी हो कर अन्तम हर्तमें चपकश्रेणी पर चढ़कर उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिको प्राप्त कर लेता है उसके उक्त प्रकृतियोंकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल श्रन्तम् हते पाया जाता है। इसी प्रकार श्राठ नोकपायोंकी अज्ञचन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तम् हूर्त घटित कर लेना चाहिये। दर्शनमोहनीयकी चपणा करनेवाले जीवके अन्तिम समयमें सम्यक्तव और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती हं ऋतः इसके सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिश्यात्वकी जपन्य स्थितिका जघन्य ऋौर उत्क्रष्ट काल एक समय कहा । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल जिस प्रकार त्रांघमें घटित करके बतला आये है उसी प्रकार यहाँ घटित कर लेना चाहिये। जो जीव उपशमश्रेगीसे उतर कर और पुरुपवेदी होकर अन्तर्महर्तमे दर्शनमाहनीयकी चपणा कर देता है उसके सम्यक्त श्रीर सम्यग्मिण्यात्वकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मृहर्त पाया जाता है। या जिसने उद्वेलनाके बाद अन्तर्महूर्तमे चायिकसम्यग्दर्शनको प्राप्त किया है उसके भी अजधन्य स्थितिका जवन्य काल अन्तर्महूर्त पाया जाता है। अतः उसे यहाँ प्रहण नहीं करना चाहिये किन्तु उद्देलना करता हुआ जो कोई जीव उपान्त्य समयमें पुरुपवेदा हो गया उसके सम्यक्त्व व सम्यग्मि-ध्यात्वकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय प्राप्त होता है। पुरुपवेदी जीवके आठ नोकपायोकी जघन्य स्थिति अन्तिम काण्डकक समय प्राप्त होती है श्रीर उसका उत्कीरणकाल अन्तर्महर्त है अत: यहाँ आठ नोकवायोकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्क्रष्ट काल अन्तम्हत कहा । विसंयोजनाके ऋन्तिम समयम अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है अतः इसकी जवन्य स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा । चौर्वास प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो पुरुपवेदी जीव मिध्यात्वमे गया और अन्तमंहत में सम्यग्दृष्टि हो कर पुनः अनन्तान-वन्यांका विसंयोजना कर लेता है उसके अनन्तानुबन्धाकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल अन्तमुहृतं पाया जाता है। तथा जो चौबीस प्रकृतियोक्ती सत्तावाला उपश्रमसम्यग्दृष्टि सासादनका शाप्त हुआ और दूसरे समय मे मरकर अन्यवेदी होगया उस पुरुपवेदीक अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय भी पाया जाता है। स्रीवंदमें भी इस प्रकार एक समय काल प्राप्त किया जा सकता है। सम्यवत्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वका छोड़कर शेष सब पक्तियोंकी अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ ५२६ नपुंसकवद्वालोमं मिण्यात्व, त्राठ कपाय, त्राठ नांकपाय श्रीर चार संज्वलनकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रानन्त काल है जो त्रासंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यिमण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य श्राह्म काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्राज्यन्य स्थितिका जघन्य श्राह्म

एगसमत्रो वा, उक्क० अणंतकात्तमसखेज्ञा पो०परियद्दा । इत्थि० जह० जहण्णुक्क० अंतोम्रु० । श्रज० जह० एगसमश्रो, उक्क० श्रणंत०कात्तमसं०पो०परि० । श्रवगदवेद० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक० जह० श्रोघं । श्रज० जह० [ एगस०, ] उक्क० अंतोमु० ।

६ ५३० कसायाणुवादेण सन्वकसाईसु मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-ऋएांताणु०-चउक्क० मणजोगिभंगो । वारसक०-णवणोक० ज० ऋोघं । अज० जहण्णुक्क० अंतोमु०।

श्चन्तर्मुहूतं या एक समय श्रोर उत्कृष्ट अनन्त काल है जो श्रसंख्यात पुर्गल परिवर्तनप्रमाण है। स्त्रीवेरकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्महूर्त तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रनन्त काल है जो श्रसंख्यात पुर्गल परिवर्तनप्रमाण है। श्रपगत-वेदवालोंके मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, बारह कपाय श्रोर नो नोकपायाकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रोपके समान है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्महूर्त है।

सकता है। अब यदि कोई श्रष्टाईस प्रकृतियोकी सत्तावाला नपुसक्रवेदी मिण्यादृष्टि जीव नरकमें उत्पन्न हुन्ना त्रीर वहाँ कुछ कम तेतीस सागर काल तक सम्यग्दशनके साथ रहा तो उसके सम्यक्त श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी श्रजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर पाया जाता है। तथा इनके ऋतिरिक्त शेप प्रकृतियोंकी ऋजयन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरि-वर्तनप्रमाए हैं, क्योंकि नपुंसकवेदका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाए है। यहाँ सब प्रकृतियोंकी जघन्य ऋादि स्थितियोंका रोप काल स्त्रीविदियोंके समान घटित कर लेना चाहिये। इतनी विरोपता है कि स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका काल कहते समय वह नपुंसकवेदीके स्त्रीवेदके अन्तिम काण्ड-कघातके समय प्राप्त होता है जिसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। जो अपगतवेदी जीव उपशमश्रेणी से उतर कर श्रवेदभागके श्रन्तिम समयमें विद्यमान है उसके मिथ्यात्व. सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति पाई जाती है अतः इसके उक्त तीन प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रोघकं रामान एक समय कहा। जा श्रपगतवेदी चायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणीसे उतर कर अपगतवेद्कं अनितम समयमे विद्यमान हैं उसके स्त्रीवेद, नपुंसकवेद श्रीर त्र्याठ कपायोकी जघन्य स्थिति होती है त्र्यतः इसके उक्त प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल त्र्रोघके समान एक समय कहा। तथा जो अपगतवेदी जीव छइ नाकपायोके अन्तिम स्थितिकाण्डकमे तथा पुरुपवेद और चार संज्वलन की चपणाके अन्तिम समयमे विद्यमान है उसके उक्त प्रकृतियोकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल श्रांघके समान पाया जाता है। श्रपगतवेदका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः अपगतवेदमें अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तमहूत प्राप्त होता है।

§ ४३०. कपाय मार्गणाके अनुवादसे सब कपायवालोंमे मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मनायोगियोके समान है। बारह कपाय और नौ नोकपायोकी जघन्य स्थितिका काल श्रोघके समान है। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। १ ५३१ णाणाणुवादेण मदि-सुदश्रण्णा० मिन्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंञ्चा० ज० जह० एयसमञ्जो, उक्क० अंतोस्च० । अज० जह० अंतोस्च०, उक्क० अमंखेज्जा लोगा । सत्तणोक० जह० जहएणुक० एगस०। अज० जह० अंतोसु०, उक्क० अर्णतकोलमसं० पो० परि० । सम्मत्त-सम्मामि० जह० जहण्णुक० एगस०। अज० ज० अतोसु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । विहंग० मिन्छत्त-सोलसक०-णवणोक० जह० जहण्णुक० एगस०। अज० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देम्णाणि । सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियभंगो ।

विश्रोपार्थ — जिस प्रकार मनायोगी जीवक मिध्यात्वादि सात प्रकृतियोकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका काल घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार चारो कपायवाले जीवोके घटित कर लेना चाहिये। जो काधादि कपायवाले जीव आठ कपाय और नो नांकपायोंकी जपला कर रहे हैं उनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति होती है अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति होती है अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल आघके समान कहा। काधकपायींक काधवेदक कालके अन्तिम समयमें तीन संज्वलनोकी, मायाकपायवालेक मायावदककालके अन्तिम समयमें तीन संज्वलनोकी, मायाकपायवालेक मायावदककालके अन्तिम समयमें तीन संज्वलनोकी, मायाकपायवालेक मायावदककालके अन्तिम समयमें हो संज्वलनोकी और लोभकपायवाले जीवक लाभकपायवेदककालके अन्तिम समयमें लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थिति होती है। तथा मानादि कपायवाले जीवोके शेष कपायोकी जघन्य स्थिति अपनी-अपनी ज्वप्याके अन्तिम समयमें होती है, अतः इनके चार संज्वलनोकी जघन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल आघके समान एक समय कहा। तथा कोधादि कपायवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तिमुंहूर्त है, अतः इनके उक्त सब प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तिमुंहूर्त है, अतः इनके उक्त सब प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तिमुंहूर्त है।

\$ ५३१ ज्ञान मार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुष्माकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुं हूर्त हैं। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तमुं हूर्त और उत्कृष्ट काल असंख्यात लोक-प्रमाण है। प्रात नोकपायोकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तमुं हूर्त और उत्कृष्ट अनन्त काल ह जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य स्थितिका जघन्य काल पर्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। विभंगज्ञानियोंमें मिण्यात्व, सोलह कपाय और जै नो नो पायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तैनीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंक समान है।

विशेषार्थ—मत्यज्ञान और श्रुताज्ञान एकेन्द्रियोंसे लंकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तकके सब मिश्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवाके होते हैं। िकन्तु यहाँ जघन्य स्थितिका प्रकरण है अतः सुख्यतः एकेन्द्रियोंकी स्थितिका प्रहण किया है। एकेन्द्रियोंमें भी सबसे कम बादर एकेन्द्रियों की जघन्य स्थिति होती है। जिसका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंके मिश्यात्य, सालह कपाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा। मिश्यात्व गुणस्थानका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है,

६५३२, त्राभिणि०-सुद्०-त्रोहि० उक्कस्सभंगो । एवरि छण्णोक० जह० जहण्णुक० अंतोमु०। एवं संजद० सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-त्रोहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय० । णवरि खवगसेहिम्मि छण्णोक० ज० त्रोघं। मएपज्ज० त्रहणोक० पुरिस०भंगो । सेम० उक्कस्सभंगो ।

अन्तमुहत कहा। तथा सूच्म एकेन्द्रिय पर्यायमे निरन्तर रहनेका उत्कृष्ट काल असंख्यात लाक हें और सूच्म एकेन्द्रियों के मत्यज्ञान और श्रुताज्ञानकी अपेचा उक्त प्रकृतियोंकी अजवन्य स्थिति होती है अतः मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंके उक्त प्रकृतियोंकी श्रजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल असंख्यात लोकप्रमाण कहा । जो वादर एकेन्द्रिय जीव जघन्य स्थितिके वन्धकालमें मरकर पंचेन्द्रियोंमे उत्पन्न हुन्ना उसके अपनी प्रतिपन्न प्रकृतिके बन्धकालके त्र्यन्तिम समयमें सात नौक-पायोंकी जवन्य स्थिति होती है श्रतः मत्यक्तनी श्रीर श्रुताज्ञानी जीवोंक सात नोकपायोंकी जयन्य स्थितिका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा । मिथ्यात्व गुणस्थानका जवन्य काल श्रन्तर्महर्त है श्रीर एकेन्द्रिय पर्यायमे निरन्तर रहनेका उत्कृष्ट काल त्रासंख्यात पुद्गल परिवतनप्रमाण है । त्रब कोई जीव इतने कालतक निरन्तर एकेन्द्रिय पर्यायमे रहा और अन्तमें बादर एकेन्द्रिय हुआ। तथा वहाँ सान नोकपायों की जधन्य स्थितिका बन्ध व सत्त्व करके पंचेन्द्रियों में उत्पन्न हुआ और वहाँ श्रपनी प्रतिपत्त प्रकृतिके बन्धकालके अन्तमें सात नोकपायोंकी जवन्य स्थितिको प्राप्त हुआ। इस प्रकार इस जीवके उक्त काल तक सात नाकपायों की अजवन्य स्थिति पाई जाती है, अतः मत्यज्ञानी श्रीर श्रताज्ञानी जीवके सात नोकपायों की श्रजवन्य स्थितिका जवन्य काल श्रन्तर्मुहूर्त श्रीर उत्कृष्टि काल असंख्यात पुद्गल परिवतनप्रमाण कहा। सम्यक्तव और सम्बग्मिध्यात्वर्का जघन्य स्थिति उद्वेतनाके अन्तिम समयमें प्राप होती है. अतः इनके एक दोनो प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिका जवन्य त्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा । तथा मिध्यात्वमें उक्त दोनों प्रकृतियोंका सत्त्व परुयके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण काल तक ही पाया जाता है, अतः इनके उक्त दानों प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्महर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाए कहा। जो उपरिम मैंवेयकका जीव स्निन्तम समयमें सासादनका प्राप्त हो जाता है उसके विभंगज्ञानके रहते हुए मिध्यात्व आदि छब्बीस प्रकृतियोंकी जवन्य स्थिति होती है अतः विभंगज्ञानीकं उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा उपरिम प्रवेयकके देवको छोड़ कर ऋन्य देव तथा नारकी जीवके ऋन्तिम समयमें सासादनका प्राप्त होने पर विभंगज्ञानमें उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है । विभंग ज्ञानका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है अत: इसमे उक्त प्रकृतियोंकी अजयन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल इक्त प्रमाण कहा । तथा सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य और ऋजघन्य स्थितिका जवन्य आंर उत्कृष्ट काल जिस प्रकार एकेन्द्रियोंकं घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी घटित कर लेना चाहिये।

हु प्रश्. श्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर श्रवधिज्ञानियोंमें जघन्य स्थितिका भंग उत्कृष्ट स्थितिके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट काल श्रन्तमु हूत है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, श्रवधिदर्शनवाले, सम्यग्दष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट और वेदक-सम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि ज्ञपकश्रेणीमें छह नोकषायोंका जघन्य स्थितिका काल श्रोधके समान है। मनःपर्ययञ्चानियोंमें श्राठ नोकषायोंका भंग प्रक्षवेदके समान है। शेष प्रकृतियोंका भंग श्रपनी उत्कृष्ट स्थितिके समान है।

१४३३. श्रसंजद० पिच्छत्त० जह० जहण्णुक० एगसमओ । अज० केत्रचिरं ? अणादिअपज्जवसिदो, श्रणादिसपज्जवसिदो सादिसपज्जव० । जो सो सादिसपज्जवसिदो तस्स इमो णिह् सो—जह० अंतोमु०, उक्क० उवहृणोगगलपियटं । सम्मत्त०-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगसमञ्रो । श्रज० ज० एगस० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादिरेयाणि । अणंताणु०चउक्क० ओर्घ । बारसक०-णवणोक० मदि०भंगो । अचक्खु० ओर्घ ।

विशेषार्थ—चपकश्रेणीमें जब छह नोकपायोंका अन्तिम काण्डक प्राप्त होता है तब उनकी जघन्य स्थित होती है और इसका काल अन्तर्मु हुत्ते हैं, अतः आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोके छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हूर्त कहा। शेप कथन गुगम है। इसी प्रकार संयत आदि मार्गणाओंमें जानना। इसका यह तात्पर्य है कि इन मार्गणाओंमें जिस प्रकार उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका काल कह आये हैं उसी प्रकार यहाँ जघन्य और अजघन्य स्थितिका काल कहना चिहिये, क्योंकि इनमें परस्पर कालकी अपेत्ता समानना देखी जाती है। किन्तु इनमेसे जिन मार्गणाओंमें चपकश्रेणी सम्भव हो उन्हींमें छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल आंघक समान जानना चाहिये शेषमें नहीं। मनःपर्ययज्ञान पुरुपवेदी जीवक ही होता है अतः इनके आठ नोकपायोंका जघन्य और अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल पुरुपवेदियोंक समान कहा। शेप मुगम है।

§ ५३३ असंयतों में मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिका कितना काल हुँ श्रमादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त इम प्रकार तीन तरहका काल हैं। उनमें जो सादि-सान्त काल हुँ उसका यह कथन है। वह जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टसे उपाध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्य-गिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल कमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका काल आघके समान है। बारह कपाय और नो नोकपायोका काल मत्यज्ञानियोके समान है। अचनुद्र्यनमें आघके समान है।

विशेषार्थ—जो असंयत मिध्यात्वकी चपणा कर रहा है उसके मिध्यात्वकी चपणा के अनितम समयमे जयन्य स्थिति होती है, अतः असंयतके मिध्यात्वकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। मूलमे असंयतके मिध्यात्वकी अजयन्य स्थितिक अनादि-अनन्त, अनादिसान्त और सादिसान्त ये तीन भंग कहे हैं सो वास्तवमे ये असंयत्वके साथ मिध्यात्वकी अजयन्य स्थितिके तीन भंग हैं अतः उसके सम्बन्धसे मिध्यात्वकी अजयन्य स्थितिको तीन भागोंमे वाँट दिया है, क्योंकि ऐसा किये विना असंयतके मिध्यात्वकी अजयन्य स्थितिको तीन भागोंमे वाँट दिया है, क्योंकि ऐसा किये विना असंयतके मिध्यात्वकी अजयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल वतलाना कठिन था। इनमेसे सादि-सान्त असंयतका जयन्य काल अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है, अतः असंयतके मिध्यात्वकी अजवन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा। असंयतके अपनी अपनी चपणाके अन्तिम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्यिध्यात्वकी जयन्य स्थिति होती है, अतः इसके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। जब कोई संयत कृतकृत्यवेदकके कालमें दो समय शेप रहने पर असंयत हो जाता है तब

§ ५३४. लेम्साणुवादेण किण्ह-णील-काउ० मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अज० जह० एगस०, उक्क० सगिहदी। सत्तणोक० जह० जहएणुक्क० एगस०। अज० ज० एगस०, उक्क० सगिहदी। सम्मत्त०-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० एगस०, उक्क० सगिहदी। अणंताणु०चउक्क० जह० जहण्णुक्क० एगस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगिहदी।

ऽ ५३५ तेउ-पम्म० मिच्छत्त सोलसक०-एवणोक० जह० जहण्युक्क० एगस० । अज० जह० अंतोमु० अएांतागु० एगसमओ वा, उक्क० सगदिदी । सम्मत्त०-सम्मामि० ज० जदण्युक्क० एगम० । अज० ज० एगस०, उक्क० सगदिदी । सुक्क०

उसके सम्यक्त्वकी अज्ञवन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय पाया जाता है। तथा असंयतका जघन्य काल अन्तर्मृहूर्त हं अतः इसके सम्यिमिध्यात्वकी अज्ञघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मृहूर्त कहा। कोई जीव असंयतभावके रहते हुए सम्यक्त्य और सम्यिमिध्यात्वके साथ अधिकसे अधिक साधिक तेतीस सागर काल तक ही रह सकता है अतः असंयतके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी अज्ञघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा। जो असंयत अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर रहा है उसके अन्तिम समयमें अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति होती है अतः असंयतके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल आघके समान एक समय कहा। इसी प्रकार आघमें बताये अनुसार असंयतके अनन्तानुबन्धीकी अज्ञघन्य स्थितिका काल भी घटित कर लेना चाहिये। तथा असंयत जीवके बारह कपाय और नो नोकपायोंकी जघन्य और अज्ञघन्य स्थितिका काल मत्यज्ञानियोंके समान बन जाता है अतः इसके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अज्ञघन्य स्थितिका काल मत्यज्ञानियोंके समान कहा। इश्वस्थ जीवोंके अचन्त्रदर्शन निरन्तर रहत। हे अतः अचनुदर्शनमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अज्ञघन्य स्थितिका काल आघके समान कहा।

\$ ५३४. लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्ण, नील और कापातलेश्यामें मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्त- प्रृंहूर्त है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। सान नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यिग्मण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है।

§ ५३५. पीत और पद्म लेश्यामें मिध्यात्व सोलह कपाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त या अनन्तानुबन्धी चतुष्कका एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त और सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। शुक्ल-

उक्कस्समंगो । णवरि छण्गोक० जह० जहण्णुक्क० अंतोमु० । अभव० मदि०भंगो । णवरि सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि ।

लेश्यामें उत्कृष्ट स्थितिके समान भंग हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्भुहूर्त हैं। अभव्योंमें मत्यज्ञानियोके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता ह कि इनके सम्यक्त्व और सम्यग्निश्यात्व ये दो प्रकृतियाँ नहीं हैं।

विश्लोषार्थ-एकेन्द्रियोके कृष्णादि तीनों लेश्याएँ सम्भव हैं, अतः जिस प्रकार एकेन्द्रियोंके मिध्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त तथा अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय बतला आये हैं उसी प्रकार कृष्णादि तीन लेश्यात्रोमें घटित कर लेना चाहिये । किन्तु इनके ब्रज्जघन्य स्थितिके उत्कृष्ट कालमें विशेषना है। बान यह है कि कृष्णलेश्याका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर, नील लेश्याका उकुष्ट काल साधिक मन्नह सागर श्रीर कापोत लेश्याका उत्कृष्ट काल साधिक मात सागर है, श्रतः इतमें उक्त प्रकृतियोंकी अज़ रन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण ही प्राप्त होगा। उक्त तीनों लेश्याओंमेसे काई एक लेश्यावाला जो बादर एकन्द्रिय जीयजवन्य (स्थतिके साथ **पंचे**न्द्रियोमें उत्प**न्न** होता है उसके प्र तान्त प्रकृतियोंके बन्धकालके अन्तमें सात्र नोकपायोकी जवन्य स्थिति होती है, अतः कृष्णादि तीनों लेश्यात्र्योमें सात नो प्रपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य त्र्योर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। अब यदि उक्त जीव दूमरे समयमं अजवन्य स्थितिके साथ रहा और तीसरे समयमे उसके विश्वचित लेश्या बदल गइ तो उक्त लेश्यात्रांमें सात नौकपायोकी न्त्रज्ञघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है इस अपेजासे उक्त तीन लंक्याआमे सात नोक-पायाकी त्राजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय कहा । तथा उत्कृष्ट काल स्पष्ट ही है । कृष्ण और नील लेश्यामे सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी उद्देलनाकी श्रपेत्ता तथा कापीत लेश्यामे मम्यक्त्वका कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वका ऋषेज्ञा खार सम्यग्निध्यात्वकी उद्वेलनाकी ऋषेज्ञा जगम्य म्थित प्राप्त होता है जिसका काल एक साय है, अतः उक्त तीनों लेश्यात्रामे सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य ऋौर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। जिस जीवके सम्यक्त और सम्यग्मिध्यात्वकी उद्वेलनामें दो समय शेव रहने पर कृष्णादि तीन लेश्याएँ प्राप्त हाती है उसके कृष्टलादि तीन लेश्यात्रोमें उक्त प्रकृतियोंकी अज्ञघन्य स्थिति एक समय तक पाई जानी है, अतः इनके उक्त दां प्रकृतियोंकी अजयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय कहा। किन्तु इतनी विशेषता है कि कापों लेश्यामें एक समय तक सम्यक्त्वकी श्रजधम्य स्थिति कृतकुत्य वेदकके दो अन्तिम समयकी अपेल। घटित करनो चाहिये। तात्पर्यं यह हें कि सम्यक्त्वकी च पणाके दा अन्तिम समयमें कापात लेश्या प्राप्त करावे और इस प्रकार कापीत लेश्याम सम्यक्त्वकी अजवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय कहे। तथा उत्क्रप्ट काल स्पष्ट ही है। विसंयोजनाके अन्तिम समयमें अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है जा तीनों लेश्यास्रामें सम्भव है, अतः इनके अनन्तानुबन्धीका जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा । तथा उक्त लेश्यात्रोके जघन्य और उल्हृष्ट कालकी ऋपेना उनमें स्मनन्तानुबन्धीकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा। जो चायिकसम्यग्रहिष्ट जीव उपशामश्रेणीसे उतर कर पीत श्रीर पद्मलश्याका प्राप्त हुआ ह वह यदि तदनन्तर शुक्ललेश्याको प्राप्त होकर चपकश्रेणीपर चढ़े तो उसके पीत मार पद्मलश्याके अन्तिम समयमं बारह कषाय श्रीर नो नोकषायोंकी जघन्य स्थिति होती है।

१३६ जनसम० मिच्छत्त-सोलसक०-एवरणोक० जह० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जहण्णुक्क० अंतोमु० । सम्मत्त-सम्मामि० जह० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जहएगुक्क० अंतोमु० । एवं सम्मामि० । सासण० मन्वपयडीणं जह० जहण्णुक्क० एगस० । अज० जह० एगस०, उन्क० छात्रलियाओ । मिच्छादिद्वी० मदि०भंगो । असण्णि० तिरिक्खोघं । एात्ररि अणंताणु०चउक्क० सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियभंगो ।

तथा इन दांनों लेश्यावाले जीवों के मिण्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्व की जघन्य स्थिति इनकी च्रपणाके अन्तिम समयमे श्रीर श्रनन्तानुबन्धींकी जघन्य स्थिति अनन्तानुबन्धींकी विसंयोजनाके श्रन्तिम समयमे श्रीर होती हैं, अतः इनके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। यहां इतना विशेष जानना कि उक्त लेश्याश्रोमे सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति उद्वेलनाकी अपंचा भी प्राप्त होती हैं। तथा उक्त लेश्याश्रोके जघन्य श्रीर उत्कृष्ट कालकी अपंचा इनमें मिण्यात्व, सोलह कपाय और नो नोकपायोंकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल कहा। किन्तु चौर्वास प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव भीत श्रोर पद्मलेश्याक श्रान्तम समयमे मिण्यात्वको प्राप्त हो सकता है अतः इनमे श्रनन्तानुबन्धींकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय भी कहा। जा जीव कृतकृत्यवेदकके उपान्त्य समयमे श्रीर उद्वेलनाके उपान्त्य समयमे पीत श्रोर पद्मलेश्याको प्राप्त होते हैं उनके कमसे सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिण्यात्वकी श्रजघन्य स्थिति एक समय तक पाई जाती हैं, श्रतः उक्त लेश्याश्रोमे उक्त दो प्रकृतियोंकी श्रजघन्य स्थिति जघन्य काल एक समय कहा। तथा उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण होता है यह स्थिति जघन्य काल एक समय कहा। तथा उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण होता है यह स्थिति प्राप्त होती हैं जो श्रन्तम् हूर्त काल तक रहती हैं, श्रतः इसके छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्म हूर्त काल तक रहती हैं, श्रतः इसके छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्म हूर्त कहा। श्रेष कथन गुगम हैं।

§ ५३६ उपशमसम्यग्दृष्टियोमें मिण्यात्व, सीलह कपाय और नौ नीकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है। इसी प्रकार सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोके जानना चाहिए। सासादनसम्यग्दृष्टियोमें सब प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल छह आवलीप्रमाण है। मिण्यादृष्टियोमें मत्यज्ञानियोंके समान भंग है। असंज्ञियोमें सामान्य तिर्यचोके समान जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंज्ञियोमें अनन्तानुबन्धी चतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंक समान है।

विशेषार्थ — जो उपशमसम्यग्दिष्ट उपशमश्रेणीसे उतर कर अनन्तर वेदकसम्यग्दिष्ट होनेवाला है उसके अन्तिम समयमें सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थिति होती है, अतः उपशमसम्यग्दिष्टके सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थित होती है, अतः उपशमसम्यग्दिष्टके सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा उपशमसम्यक्त्वक जवन्य और उत्कृष्ट कालकी श्रपेत्ता सब प्रकृतियोंकी आजवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल अन्त्रमुँ हूर्त कहा। किन्तु इतनी विशेषता है कि उपशमश्रेणीमें अनन्तानुवन्धी चतुष्कका सत्त्व नहीं पाया जाता, अतः जो प्रथमापशमसम्यग्दिष्ट जीव तदनन्तर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करता है उसके अन्तिम समयमें अनन्तानुवन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थिति होती है। या जिन आचार्योंके मतसे उपशमसम्यग्दिष्ट जीव अनन्तानुनन्ता

६५२७ त्राहारीसु मिच्छत्त-सम्मत्त०-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० जह० ओघं। अज॰ जह० खुद्दाभवग्गहणं तिसमऊणं, उक्क० सगिद्धदी। सम्मत्त०-सम्मामि० पंचिंदियभंगो। अणंताणु०चउक्क० जह० जहण्णुक्क० एगस०। अज॰ जह॰ अंतोमु॰ एगसमयो वा, उक्क० सगिद्धदी।

#### एवं कालाणुगमो समत्तो ।

बन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके विसंयोजनाके श्रान्तिम समयमें अनन्तानुबन्धी-की जघन्य स्थिति होती है। जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला सम्यग्मिण्यात्व गुणस्थान-को प्राप्त होता है उसके अन्तिम समयमे मिध्यात्व, वारह कषाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थित होती है, ऋतः सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति-का जघन्य त्रीर उत्क्रप्टकाल एक समय कहा। सम्यक्त्व त्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी पृथक्त्व-सागर स्थितिकी सत्तावाला जा मिश्यादृष्टि जीव सम्यग्मिश्यात्वको प्राप्त होता है उसके अन्तिम समयमें सम्यक्तव त्रौर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति होती है, त्रतः सम्यग्मिश्यादृष्टिके इनकी जयन्य स्थितिका जयन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा। श्रनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति ऋट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले सन्यग्मिण्यादृष्टिके ऋन्तिम समयमे होती है, ऋतः इसके अनन्तानुबन्धीकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा । तथा इसके सब प्रकृतियोकी अजचन्य (स्थितिका जचन्य अपोर उत्कृष्ट काल अन्तम् हूर्त होता है यह स्पष्ट ही है । जो उपशमश्रेणीसे गिरकर सासादनभावको प्राप्त होता है उसके सासादनके श्रन्तिम समयमें सब प्रकृतियोंकी जवन्य स्थिति होती हैं, ऋतः सासादनसम्यग्दृष्टिके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा । स्थानके जवन्य ऋोर उत्कृष्ट कालकी अपेत्ता सब प्रकृतियोंकी श्रज्ञचन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह श्रावलिप्रमाण कहा। मिण्याद्रव्टियों के सब प्रकृतियोंकी जघन्य ऋौर ऋजघन्य स्थितिका काल मत्यज्ञानियोंके समान होता है यह स्पष्ट ही है। ऋसंज्ञी तिर्यञ्ज ही होते हैं अनः सामान्य तिर्यञ्जोंके समान असंज्ञियोंके सब प्रकृतियोंकी जघन्य और त्रज्ञचन्य स्थितिका काल जानना चाहिये । किन्तु सामान्य तिर्यक्रोमे संज्ञी तिर्यक्र भी सम्मिलित हैं श्रीर उनके श्रनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना भी होती है तथा उनमे कृतकृत्यवेदक सम्यग्द्दाष्टि भी उत्पन्न होता है, अत: अमंजियोंमें सम्यग्भिध्यात्व सहित उक्त छह प्रकृतियोंकी जघन्य त्र्यौर अजघन्य स्थिति मामान्य तिर्यचोंके समान नहीं बन सकती है, फिर भी यहाँ जघन्य और श्रजघन्य स्थितिके कालकी मुख्यता है जो यथायोग्य एकेन्द्रियोंके सम्भव है, श्रतः असंज्ञियोंके उक्त प्रकृतियोंके जवन्य और अजवन्य स्थितिका काल एकेन्द्रियोंके समान कहा ।

§ ५३७. आहारकों में मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निण्यात्व, वारह कपाय और नो नोकपायों की जघन्य स्थितिका काल त्रोघके समान हैं। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल तीन समय कम खुद्दाभवमहण्यमाण और उत्कृष्ट काल त्र्यपनी स्थितियमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वकी अजघन्य स्थितिका भंग पंचेन्द्रियों के समान हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मृहनै या एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितियमाण हैं।

विशोषार्थ-त्रांघसे मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, वारह कपाय और नौ नोकषायोंकी

# अंतरं । मिच्छुत्त-सोलसकसायाणमुक्कस्सिटिदिसंतकम्मिगं अंतरं जहरुणेण अंतोमुहृत्तं ।

§ ५३८ कुदो १ भिणदकम्माणमुकस्सिटिदिं वंधमाणो जीवो अणुकस्सवंधस्रो होद्ग अंतोमुहुत्तमित्र्वय पुणो एदेसिं कम्माणमुकस्सिटिदिवंधुत्रलंभादो । दोण्हमु-कस्सिटिदाणं विचालिमझणुवकस्सिटिदिवंधकालो तासिमतरं ति भणिदं होदि । एगसमओ जहण्णं तरं किण्ण होदि १ ण, उकस्सिटिदिं वंधिय पडिहस्सस्स पुणो अंतोमुहुत्तेण विणा उकस्सिटिदिवंधासंभवादो ।

जघन्य स्थिति आहारकोंक ही सम्भव है, अतः आहारकाक उक्त प्रकृतियांकी जघन्य स्थितिका काल श्रोघके समान कहा । सम्यक्त श्रीर सम्याग्मध्यात्वकी जघन्य (स्थित श्रनाहारकों के भी होती है यहाँ इतना विशेष जानना । त्र्याहारकोंका जघन्य काल तीन समय कम खदाभवप्रक्रण प्रमाण श्रीर उत्कृष्ट काल ऋंगुलके ऋसंख्यातवें भाग ऋसंख्यातासंख्यात अवसपर्धी उत्सवर्धी काल प्रमास है, अतः इनके सम्यक्तव और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर उक्त सब प्रकृतियोंकी अजधन्य स्थितिका जधन्य काल तीन समय कम खुद्दाभवग्रहण प्रमाण त्यार उत्कृष्ट काल त्र्यंगुलके त्र्यसख्यातवं भागप्रमाण कहा। तथा मम्यक्ता त्रार सम्यग्मिध्यात्वका त्राज्ञचन्य स्थितका जचन्य और उत्कृष्ट गाल जिम प्रकार पंचेन्द्रियों रु घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार आहारकां रु जानना, क्यों कि उसमें इसमें कोई विशेषता नहीं है। आहारक अवस्थामे ही अनन्तानुबन्धीकी विसंधाजना हाती हैं, श्रतः इनके श्रनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्टकाल एक समय कहा। श्वनस्तानुबन्धीका जघन्य सत्त्वकाल अन्तर्मुहृत है, अतः इनक अज्ञघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा। चौबीस प्रकृतियोकी सत्तावाला उपशमसम्यग्द्रष्टि जीव जीवनके अन्तिम समय-में सासादन हुआ और दूसरे समयमे मरकर अनाहार कहा गया ता उसके अनन्तानुबन्धीकी श्रजवन्य स्थिति एक समय भी पाई जायगी, त्रातः त्राहारक के त्रानन्तानुबन्धीकी त्राजघन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय भी कहा। तथा अनन्तानुबन्धीकी अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल आहारकके उत्कृष्ट काल प्रमाण होता है यह स्पष्ट है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

अब अन्तरका प्रकरण है। उसमें मिथ्यात्व और सोलह कपायोंके उत्कृष्ट
 स्थितिसत्कर्मका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहते है।

§ ५३-. शंका-उक्त प्रकृतियोक उत्कृष्ट स्थितिसत्कमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त क्यो है ?

समाधान—क्योंकि चूर्णिसूत्रमे कहे हुए कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाला जो जीव अनुत्कृष्ट स्थितिका कमसे कम अन्तमुहूत काल तक बन्ध करता है उसके अन्तमुहूतके बाद पुनः पूर्वोक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध पाया जाता है। इस कथनका यह तात्पय है कि दानो उत्कृष्ट स्थितियोंक मध्यमे जो अनुत्कृष्ट स्थितका अन्तमुहूत प्रमाण बन्धकाल है वह उन दोनों उत्कृष्ट स्थितियोंका अन्तरकाल है।

शंका-जघन्य अन्तर एक समय क्यों नहीं होता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिको बाँध कर उससे च्युत हुए जीवके पुनः अन्तर्सुहूर्त कालके बिना उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध नहीं हो सकता, अतः जघन्य अन्तर एक समय नहीं होता।

# 🕸 उक्कस्समसंखेजा पोग्गलपरियट्टा ।

\$ ५३९. कुदो? उक्कस्सिट्टिवं वंधिय पाँडहम्मो होद्ग अणुक्कस्सिट्टिवं वंधमाणो ताव अच्छिद जाव अणुक्स्सिट्टिवंधमाद्याए उक्किस्सियाए चरिमसमश्रो ति । तदो एइंदिएसुवविज्ञिय असंखेज्ञाणि पोग्मलारियटाणि तत्थ पिभमिय पुणो पंचिदिय-तसम्ज्ञत्तएसु उप्पज्जिय पज्जत्तयदो होद्ग उक्कस्सिद्दा गंत्ग उक्किस्सिट्टीए पबद्धाए आविष्यए अमंखेज्जदिभागपमाणपोग्गलपरियट्टाणमंतरेणुवलभादो ।

#### 🏶 एवं णवणोकसायाणं। णवरि जहरुणेण एगसमञ्जो।

उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गलपिवर्तनप्रमाण है।

§ ५:६. शंका-उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गल पारवतनप्रमाण क्यों है।

समाधान—िकसी एक जीवने उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया अनन्तर उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके कारणभूत उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामोंसे निवृत होकर उसने अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया और यह बन्ध अनुत्कृष्ट स्थितिक उन्कृष्ट बन्धकालके अन्तिम समय तक करता रहा। नद्नन्तर यह जीव एकेन्द्रियोंमे उत्पन्न हुआ और वहाँ असंख्यात पुद्गल परिवर्तन काल तक परिश्रमण करके पुनः पंचेन्द्रिय त्रस पर्याप्तकोंमे उत्पन्न हुआ। और पर्याप्त होकर उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामोंको प्राप्त हुआ तब जाकर इसके उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है और इमिलय उन्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट अन्तर आवली के अमंख्यातवें भागके जितने समय हो उतने पुद्गल परिवर्तनप्रमाण पाया जाता है।

\* इसी प्रकार नौ नोकपायोंका श्रन्तर है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनकी उन्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है ।

शंका-नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय क्यों हं ?

समाधान—जिस जीवने संालह कपायों मेसे किसी एक कपायकी उत्कृष्ट स्थितिको एक समय तक बाँधा पुनः दूसरे समयमे सब कपायों की अनुत्कृष्ट स्थितिको बाँधा और तीसरे समयमे अन्य कपायकी न्त्कृष्ट स्थितिको बाँधा इस प्रकार जो जीव आगे अगो कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिसत्त्वके मध्यमे कपायाकी अनुत्कृष्ट स्थितिसत्त्वको करता है। तदनन्तर जिसके बन्धावितके पश्चात् कपायकी उत्कृष्ट स्थितिको संकांत होने पर नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिका

अंतरिय पुर्णो तदियसमए सोकसाएसु बंधावित्याइक्कंतकसायुक्कस्सिहिदीए संकंताए एगसयमेन्तंतरुवलंभादो ।

 सम्मत्त-सम्मामिच्छताणमुक्कस्साणमुक्कस्सिदिसंतकिमयंतरं जह-ग्णेण श्रंतोमुहुत्तं ।

§ ५४१. इदो ? मिच्छत्तुक्कस्सिटिदिसंतकम्मेण वेदगसम्मत्तं पिट्टवण्णपदम-समप सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिटिदिसंतकम्मं कादृण विदियसम् अणुक्कस्सद्विदिं गंत्र्णतिरिय सन्वजहण्णसम्मत्तकात्तमच्छिय भिच्छत्तेण परिणमिय पुणो उक्कस्सदिदिं वंधिय अंतोमुहुत्तं पिड्हिग्गो होदृणच्छिय वेदगसम्मत्तपाओग्गमिच्छत्तुक्कस्सदिदिसंतकम्मेण वेदगसम्मत्ते पिड्विण्णं सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिटिदिसंतकम्ममुवगयस्स उक्कस्सिटिदीए अंतोमुहुत्तमेत्तजहण्णंतस्वत्तंभादो ।

🕸 उक्कस्समुबङ्गपोग्गलपरियट्ट' ।

१४२ तं जहाँ एगो अणादियिमच्छाइद्वी छ्व्वीससंतकिम्मयो ज्वसम-सम्भन्तं पिडवण्णो । पुणो उत्रसमसम्भन्तेण अंतोमुहुन्तमच्छिय मिच्छन्तं गंतूण उक्कस्स-दिदिं विधय पिडहग्गो होद्गा दिदिघादमकिरय वेदगसम्मन्तं घेन्तूण सम्मन-प्रारम्भ हुआ। तथा जो दूसरे समयमे अनुत्कृष्ट स्थितिकां अन्तरित करके पुनः तीसरे समयमे बन्धाविलकं परचान् कपायकी उन्कृष्ट स्थितिकां नोकपायोंमे संक्रान्त करता है उसके नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तरकाल एक समय प्रमाग् पाया जाता है।

 \* सम्यक्त्व त्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मका जवन्य त्रन्तर अन्तर्मु हुत है ।

§ ४४१. शंका-जयन्य अन्तर अन्तर्मु हुर्त कैसे है १

समाधान—मिण्यात्वके उन्हृष्ट स्थितिसत्कर्मवाले किसी एक जीवने वेदकसम्यक्त्वकां प्राप्त करके अथम समयमे सम्यक्त्व और मम्यग्मिण्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म किया। तदनन्तर वह दूसरे समयमे अनुःकृष्ट स्थितिको प्राप्त हुआ और इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मका अन्तर करके सबसे जघन्य सम्यक्त्वकं कालतक वहाँ रहा। तदनन्तर मिण्यात्वको प्राप्त हुआ और वहाँ पुनः मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर और संक्लेश परिणामोंसे च्युत हो विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ अन्तम् हूर्त कालतक वहाँ रहा। तदनन्तर वेदकसम्यक्त्वकं योग्य मिण्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर होता तदनन्तर वेदकसम्यक्त्वकं योग्य मिण्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला वह जीव जय वेदकसम्यक्त्वकं प्राप्त कर लेता है नव पुनः उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है और इस प्रकार उस जीवके सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्म हूर्त पाया जाता है।

## उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है ।

§ ५.४२. वह इस प्रकार है—छुट्यास प्रकृतियोकी सत्तावाला कोई एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः वह उपशमसम्यक्त्वके साथ अन्तर्मु हूर्त कालतक रहकर मिथ्यात्वमें गया और वहाँ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर और संक्लेश परिणामोंसे च्युत होकर स्थितिघात न करके वदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः वहाँ सम्यक्त्व और सम्य- सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिटिदिसंतकम्मं काद्ण सम्मनेण अंतामुहृत्तमिच्छय मिच्छत्तं गंत्ण देस्णाद्योग्गलपरियष्टं परिभमिय पुणो तिष्णि वि करणाणि करिय पदमसम्मत्तं पिडविज्ञिय मिच्छत्तं गंत्णुक्कस्सिटिदं विधिय अंतोमुहुनेण वेदगसम्भत्तमुवगयपहम्समए मिच्छत्तु क्कस्सिटिदीए सम्मत्तसम्मामिच्छत्तेस संकंताए लद्धमंतरं होदि। एवं पुक्लिलेललअंतोमुहुनोग्रूलमद्धपोग्गलपरियट्टमुक्कस्संतरं। जणमद्धपोग्गलपरियट्टं उवहूपोग्गलपरियट्टं ति घेत्तव्वं।

१ ५४३. संपित चुण्णिसत्तपरूवणं काऊण विसेमावलिद्धं पद्य पुणरुत्तभयं लंडिय सायस्यारणं भिण्स्सामा । अंतरं दुविहं—जहण्णकृत्रकस्सं च । उक्कस्से पयदं । दुविहा िण्ड्देसो — त्रोघेण आदेसेण य । तत्य स्रोघेण भिन्छत्त-वारसकः उक्कः जिल्ल आतोमुः , उक्कः स्रणंतकालः । अणुक्कः जः एगसम्त्रो, उक्कः अंतोमुः । सम्मत्त-सम्माभिः उक्कः जहः अंतोमुः , उक्कः उवहृषोग्गलप्रयदः । स्रणुक्कः जः एगसः , उक्कः उवहृषोग्गलप्रयदः । स्रणुक्कः जः एगसः , उक्कः अतरं केविचरं ? जः अंतोमुः , उक्कः स्रणंतकालः । स्रणुक्कः जः एगसः , उक्कः वेद्यादिसागरा-वमाणि देसुणाणि । पंचणोकः उक्कः जहः एगसः , उक्कः स्रणंतकालः । स्रणुक्कः

गिभध्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मकां करके तथा सम्यक्त्वके साथ अन् मुहूत कालतक रहकर मिध्यात्वमें गया। पुनः वह मिध्यात्वके साथ उद्ध कम अर्थपुद्गल परियतन कालतक परिश्लमण करके पुनः तीनों करण करके प्रथम सम्यक्त्वका श्राप्त हुआ। तदनन्तर इसने मिध्यात्वमें जाकर आर वहाँ मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वॉधकर अन्तमु हूत कालके द्वारा वेदकरम्यक्त्वका प्राप्त करके प्रथम समयमे मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है। इस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर पहलेके और अन्तके अन्तमु हूनोंसे कम अर्थपुद्गलपरिवतन प्रमाण प्राप्त होता है। यहाँ सूत्रमं जो उपार्ध पुद्गल परिवर्तन पदका ग्रहण किया है सो उससे कुछ कम अर्थपुद्गल परिवतनरूप कालका ग्रहण करना चाहिये।

§ ५४३, इस प्रकार चूणिसूत्रका कथन करके अब विशेष ज्ञान करानेके लिये पुनरुक्त दांपके भयका छोड़कर बोघसहित उच्चारणाका कथन करते हैं—अन्तर दां प्रकारका है—ज्ञ्चन्य
अन्तर और उत्कृष्ट अन्तर। उनमंसे उत्कृष्ट अन्तरका प्रकरण है। उसकी अपंचा निर्देश दां
प्रकारका है—आंघनिदेश और आंदशनिर्देश। उनमंसे आंघकी अपंचा मिण्यात्व और वारह
कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य अन्तर अन्तर्मुहृत और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत हैं। सम्यक्त्व और
सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य अन्तर अन्तर्मुहृत और उत्कृष्ट अन्तर उपाध पुद्गलपरिवर्तन काल है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर उपाध
पुद्गल परिवर्तनकाल है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कि उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर कितना है? ज्ञचन्य
अन्तर अन्तर्मुहृत्व और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका ज्ञचन्य अन्तर
एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसी वत्तीस सागरप्रमाण है। पांच नोक्षायोंकी

ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । चत्तारिणोक ॰ उक्क० न० एगस०, उक्क० ऋणंतकाल० । ऋणुक्क० ज० एगस०, उक्क० एगावित्या । एसो चुण्णिसुत्तउवएसो ।
उच्चारणाए पुण वे उवएसा— एगावित्या आवित्याए असंखेळिदिभागो चेदि । पिडहग्गसमए चेव जे आइरिया चदुणे।कसायाण वंधो होदि ति भणंति तेसिमहिप्पाएण
एगावित्यमेनो चदुणे।कसायाणमणुक्कम्सिट्टिए उक्कस्मंतरकालो । पिडहग्गपढमसमयप्पहुडि आवित्याए असंखेज्जेमु भागेसु गदेसु अमंखे०भागावसेसे चदुणोकसाया
बज्कांति ति जे आइरिया भणंति तेसिमहिष्पाएण ऋणुक्कस्सिट्टिशए उक्कस्संतरं
आवित्याए असंखे०भागो । एवपचक्खु०-भविमिद्धि० ।

उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय आर उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुं हूं ते हैं। चार नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर एक आवली काल है। चार नोकपायों की अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आवलीप्रमाण है यह उपदेश चूर्णिसूत्रके अनुसार है। उन्चारणाकी अपेचा तो दो उपदेश पाये जाते हैं। एक उपदेश एक आवली कालका ह और दूसरा उ देश आवलिक अमंख्यातवे भागप्रमाण कालका ह। जो आचार्य उत्कृष्ट स्थितिन वन्ध के कारणभूत उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामों ने निष्टुन होकर तदनन्तर सम में ही चार नोकपायों का वन्ध होता है ऐसा कहते हैं उनके अभिप्रायानुसार चार नाकपायों अनुत्कृष्ट स्थितिन उत्कृष्ट अन्तर वाल एक आवलिक माण प्राप्त होता है। तथा जो आचाय उत्कृष्ट स्थितिवन्ध के कारणभूत उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामों निष्टुन होकर पहले समयसे कर अविलेक असंख्यात वहुमाग कालको विताकर असख्यातवें भागप्रमाण कालक शेव रहन पर चार नोकपायों का बन्ध होता है ऐसा कहते हैं उनके अभिप्रायानुसार चार नोकपायों अनुत्कृष्ट स्थितिक उत्कृष्ट अन्तर आविलेक असंख्यातवें मागप्रमाण प्राप्त होता है। इसी प्रकार चतुरशनवाले और भव्य जीवों के जानना चाहिये।

विशेषार्थ — मिण्यात्व आदि सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके जघन्य और उत्कृष्टा अन्तरका खुलासा मूलमें किया ही है, अतः यहां अनुत्कृष्ट स्थितिके जघन्य और, उत्कृष्ट अन्तरक खुलासा किया जाता है। जब किसा जीव के एक समय तक मिण्यात्व और सोल्ड कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है तब उसके उक्त प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय पाया जाता है। तथा जब किसीके मिण्यात्व और बारह कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध अन्तर्मुहूर्तकाल तक होता है तब उसके उक्त प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्वितका बन्ध अन्तर्मुहूर्तकाल तक होता है तब उसके उक्त प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है। जो जीव सम्यक्त्व या सम्यग्निण्यात्वकी उद्वेतना करके तीसरे समयमे उपशास सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय पाया जाता है। तथा जो जीव अर्धपुद्गल परिवर्तन कालके प्रारम्भमे उपशास सम्यक्त्वको प्राप्त करके और मिण्यात्वमे जाकर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वकी उद्वेतना करता है। पुनः अर्धपुद्गल परिवर्तन कालमें अन्तर्मुह्तं शेष रहनेपर उपशास सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाख पाया जाता है। जिसने अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाख पाया जाता है। जिसने अनुत्कृष्ट

९ ५४४. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक० उक्क० जह० अंतोष्ठु०, उक्क० तेत्रीसं सागरो० देस्णाणि। अणुक्क० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्रीसं सागरो० देस्णाणि। अणुक्क० एवं चेव। णविर जह० एगस०। अणं-ताणु०चउक्क० उक्क० ज० अंतोष्ठ०, उक्क० सगिंददी देस्णा। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिंददी देस्णा। पंचणोक० उक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिंददी देस्णा। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० अंतोष्ठ०। चत्तारिणोक० उक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिंददी देस्णा। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिंददी देस्णा। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिंददी देस्णा। अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० आविर्याए असंबे०भागो एगा-

नुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा जीव यदि पुनः मिध्यात्वमें आवे तो उसे मिध्यात्वमे आनेके लिये कमसे कम अन्तर्महर्त काल और अधिकसे अधिक कुछ कम एकसी बत्तीस सागर काल लगता है अतः अनन्तान्बन्धीकी अनुस्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर प्राप्त होता है। नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय श्रीर जुगुष्माकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कष्ट काल अन्तर्भृहते हैं, अतः इनकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय और उत्क्रप्ट अन्तर अन्तर्महूर्त प्राप्त होता है। तथा शेप चार नोकपायोंकी उत्क्रुष्ट स्थितिका जपन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक अविली है, अतः इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्चन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर एक आविल है। यहाँ चार नाकपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका एक आवितिप्रमाण जो उत्कृष्ट अन्तर बतलाया है वह चूर्णिसूत्रके उपदेशानुसार बतलाया है। परन्तु इस विषयमे उचारणामें दो उपदेश पाये जाते हैं। पहले उपदेशका सार यह है कि सोलह कपायोंके उत्कृष्ट स्थितियन्धकं हा चुकनेके दूसरे समयसे ही चार नोकपायोंका बन्ध होने लगता है। तथा दूसरे उपदेशका सार यह है कि सालह कपायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके हो चुकनेके परचान दसरे समयसे चार नोकपायोंका बन्ध नहीं होता किन्तु जब आवलिका असंख्यातवां भाग काल शेष रह जाता है तब वहांसे बन्ध होता है। इनमेसे पहले उपदेशके अनुसार चार नाकपायोंकी अनु-त्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर एक आवलि प्राप्त होता है और दूसरे उपदेशके श्रवसार आवलीका त्रसंख्यातवां भागप्रमाण उत्कृष्ट त्रम्तर प्राप्त होता है। त्रवच्चर्रान श्रीर भव्यमार्गणा छद्मस्थ जीवोंके सर्वेदा पाई जाती हैं, ऋतः इनमे आंघके समान सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट ऋीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वन जाता है।

§ ४८४, त्रादेश निर्देशकी अपंचा नारिकयोमे मिध्यात्व और वारह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहृतं और उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम तेतीस सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर काल आंघक समान है। सम्यक्त और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहृतं और उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम तेतीस सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर काल भी इसी प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर काल एक समय है। अनन्तानुबन्धी चतुष्किकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। चार नाकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य

विजया वा । एत्थ उवएसं लद्ध्यण एगयरिणण्णश्रो कायव्वो । पढमादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव । एवरि सगसगुकस्सिंहिट्री देसुणा त्ति वत्तव्वं ।

१४४५. तिरिक्ख मिच्छत्त०-बारमक०-णवणोक० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० अंतरं जह० अंतोमु०, उक्क० ऋद्योग्गलपरियष्टं देस्रणं। अणुक्क० एवं चेव। णवरि जह० एगस०। अणंताणु०चउक्क० उक्क० ओघं। अणुक्क० अंतरं ज० एगस०, उक्क० तिण्ण पिलदो० देस्रणाणि। पेचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज०- ऋन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण अथवा एक आवली हैं। यहाँ पर उपदेशको प्राप्त करके किसी एकका निर्णय करना चाहिये। पहली पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारिक्योंके इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इननी विशेषता हैं कि कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये।

विशोषार्थ--जिसने नरकमें उत्पन्न होकर श्रीर पर्याप्त होकर मिध्यात्व श्रीर बारह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया। अनन्तर जो अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता रहा किन्तु नरकसे निकलनेक पहले जिसने पुनः उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितका बन्ध किया उसके उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका कुछ कम तेतीस सागर उत्कृष्ट अन्तर पाया जाता है। अनन्तानु-बन्धा चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर इसी प्रकार घटिन कर लेना चाहिये। जिसने नरकमें उत्पन्न होकर और अन्तर्महर्तके पश्चान वेदक सम्यक्तवको प्राप्त करके अनन्तानु-बन्धीकी विसंयोजना कर दी वह यदि नरकमे रहनेका काल अन्तर्महते शेप रहने पर मिश्यात्वका प्राप्त होता है तो उसके अनन्तानुबन्धीकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर पाया जाता है। जिसने पर्याप्त होकर श्रीर मिध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थितिका वन्ध करके अन्तर्म-हुर्त कालमे वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त किया उसके सम्यक्त्व ब्रहण करनेके समय सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है। अनन्तर जो नरकमे रहनेका काल अन्तर्मुहूत शेप रह जाने पर पुनः इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करता है उसके सम्यक्त्व और सम्याग्मश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर पाया जाता है। जिस नारकीने नरकमे उत्पन्न हाकर सम्यक्त्व त्रीर सम्याग्मध्यात्वका उद्वेलना करके अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर किया । अनन्तर नरकम रहनेका काल अन्तमुहूत शेप रह जाने पर जिसने उनशम सम्यक्त्वका प्राप्त करके पुनः सम्यक्त्व श्रीर मम्यग्मिण्यात्वकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त किया उसके उक्त दोनो प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर पाया जाता है। तथा वारह कपायोंके समान नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर घटित कर लेना चाहिये। सब प्रकृतियाकी रोप स्थितियोंका उत्कृष्ट और जघन्य अन्तर जो स्रोघमे वतला स्रायं हैं उसी प्रकार जानना चाहिय । तथा प्रथमादि नरकोमे त्रपने अपने नरककी विशेष स्थितिका ख्याल करके इसी प्रकार कथन करना चाहिये **।** 

§ ५४: तिर्यचोंमे मिश्यात्व, वारह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति-का अन्तर ओवके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका ज्ञघन्य अन्तर अन्तर मुंहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अधंपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर भी इसी प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर एक समय है। अनन्तानुबन्धी चतुष्किकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर ओघके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट सन्तर कुछ कम तीन पत्य है। पंचेन्द्रियतिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंच पर्याप्त पंचिं विरि जोणिणीसु मिच्छत्त-बारसक उनक जिं अंतोसु , उनक पुन्वकोडि-पुथत्तं । अगुक्कस्त जिं एगस् , उनक अंतोसु । सम्मत्त -सम्मामि उनक अंतरं जि अंतो , उनक पुन्वकोडिपुधत्तं । अगुक्क जिं एगस् , उनक तिण्णि पितदो । पुन्वकोडिपुधत्तेण न्मिहियाणि । अगुक्क उनक मिन्छत्तभंगो । अगुक्क जि एगस् , उनक तिण्णि पितदो निर्माणि । पंचणोक उनक जिल्पा पितदो निर्माणि । पंचणोक उनक अंतोसु । चत्तारिणोक उनक जिल्पास् , उनक पुन्वकोडिपुधत्तं । अगुक्क जिल्पास् , उक्क पुन्वकोडिपुधत्तं । अगुक्क जिल्पास् , उक्क पुन्वकोडिपुधत्तं । अगुक्क जिल्पास् , उक्क अविष्ठ असंबे अगो एगाविष्ठिया वा। एवं मण्सितिय ।

अंतर पंचेन्द्रियतिर्यंच यांनिमता जांवामे मिध्यात्व और वारह कपायोकी उत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूतं और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्व है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूतं हैं। सम्यक्त्य और सम्यिमध्यात्वकी उत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्व है। अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्व से अधिक तीन पत्य है। अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्व है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त है। तथा अनुत्हृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्हृष्ट अन्तर आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण अथवा एक आवली है। इसी प्रकार अर्थान पचेन्द्रिय आदि उक्त तीन प्रकारके तिर्यक्वोके समान सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनी जीवोंक जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जिस निर्यंचने अधंपुद्गल परिवर्तन प्रमाण कालके शेप रहने पर उपशम सम्यक्त्वका प्राप्त किया परचान् मिध्यात्वमं जाकर और मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अन्तर्मुहूर्त कालमे वेदक सम्यक्त्वका प्राप्त करके सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितका प्राप्त किया। परचान् मिध्यात्वमं जाकर पर्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण् कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी उद्घेण ना की । अनन्तर जो अधपुद्गल परिवर्तन कालके अन्तमं अन्तमुहूत कालके शेप रह जाने पर उपश्मसम्यक्त्वका प्राप्त करके और मिध्यात्वमे जाकर तथा मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अन्तमुहूर्तमें वेदकसम्यग्दृष्टि होकर सम्यक्त्व और सम्याग्मध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितका अन्तर इन्कृष्ट स्थितिका प्राप्त करता है उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर इन्कृष्ट स्थितिका जन्तर वाल घटित कर लेना चाहिये। किन्तु इननी विशेषना है कि यह अन्तर उद्वेलना कालके अन्तसे प्रारम्भ होता है और अन्तमे उपश्चमसम्यक्त्वका प्राप्त करनेक समय समाप्त होता है। कोई एक जीव भोगभूमिक तिर्यंचोम उत्वन हुआ और दो माह गर्भमे रहा। अनन्तर गभसे निकल कर अन्तमुहूर्तमे जिसने वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की। परचान् जीवन भर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त होतर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त होतर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त होतर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त होतर अनन्तानुबन्धीको विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त होतर अनन्तानुबन्धीको विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त होतर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ रह कर अन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त हत्वर अनन्तानुबन्धीको विसंयोजनाके साथ रह कर अनन्तमे मिध्यात्वको प्राप्त हत्वर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ रह कर अनन्तमे अनुत्कृष्ट स्थितका उत्कृष्ट स्थातको प्राप्त हिन्स स्थातिक स्थातिक साथ रह कर अनन्तमे अन्तमे स्थातिक साथ रह कर अनन्तमे अन्तमे साथ रह कर अनन्तमे अनुत्वर स्थातिक साथ रह स्थातिक साथ साथ रह कर अन्तमे साथ रह कर अन्याप्त साथ साथ रह कर अन्तमे साथ रह कर अन्य साथ साथ साथ रह साथ साथ

१४६. पंचि०तिरि० अपज्ज० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि॰ - सोलस्क०-णव-णोक॰ उक्क० अणुक्क० णित्थ अंतरं । एवं मणुसअपज्ज० अणुहिसादि जाव सव्वह०-सव्वएइंदिय-सव्विवगिलिदिय-पंचि०अपज्ज०-पंचकाय०-तस्भ्रपज्ज०-ग्रोरालियमिस्स-वेउव्वियमिस्स०-आहार०-आहारमिस्स०-कम्मइय० - अवगद० - अकसा०-भ्राभिणि०-सद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छंदो०-परिहार०-सुहुमसांप०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-[असण्णि-]अणाहारि ति। णविर एइंदिय-बादरेइंदियपज्ज०-पुढवि०-आउ० तेसिं बादर-पज्ज०-बादरवणप्पदिपत्तेय०-तप्पज्जत्त - श्रोरालियमिस्स० - वेउव्वियमिस्स० - अस्पण्ण०

कुछ कम तीन पत्य प्रमाण पाया जाता है। भोगभूमिमं मिथ्यत्व आदिकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं प्राप्त होती किन्तु पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय निर्यंच पर्याप्त स्रोर पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती जीवोंका जो उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्वसे त्राधिक नीन पत्य बतलाया है उसमे भोगभूमिका काल भी सम्मिलित है अतः इसमेंसे तीन पत्य कम कर देने पर जो पूर्वकाटि पृथक्त प्रमाण काल शेप बचता है वह उक्त तीन प्रकारके तिर्यचौंमे मिश्यान्व आदि अट्टाईम प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल जानना चाहिये। यहां किस तिर्थंचके पूर्वकोटि पृथ्कत्वसे कितनी पूर्वकोटियोंका प्रहण करना चाहिये इसका कथन अन्यत्र किया है, इसलिये वहांसे जान लेना चाहिये । उक्त तीन प्रकारके तिर्यचोंमे जिस तिर्यचने श्रपनी पर्यायके प्रथम समयमें सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना की अनन्तर वह ऋपनी ऋपनी कायस्थितिके उत्क्रप्ट कालतक मिथ्यादृष्टि रहा पर अन्तमें उपशम सम्यक्त्वको प्रहण करके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी सत्ता प्राप्त कर ली उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल पूर्वकोटि पृथक्त्वसे अधिक तीन परुप प्रमाण पाया जाता है । तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुतकृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट श्चन्तरका कथन जिस प्रकार सामान्य तिर्यचोंके कर त्राये है उसी प्रकार इन तीन प्रकारके तिर्यंचोके कर लेना चाहिये। इसका प्रमाण कुछ कम तीन पत्य है। शेप कथन आंघके समान जानना चाहिए । समान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य श्रीर मनुष्यिनयोंकं भी उक्त तीन प्रकारके तिर्यंचीके समान श्रम्तर काल जानना चाहिये। किन्तु पूर्वकोटियां जिसकी जितनी हो उतनी कहनी चाहिये।

 णवणोकः उकः जः एगसमञ्चो, उक्कः श्वावित्वया दुसमयूणाः। त्र्रणुः जहः एगसः, उक्कः आवित्या समयूणाः।

१५४७ देवगदि० मिच्छत्त-बारसक० उक्क० ज० अंतोमु०, उक्क० ब्रहारस सागरो० सादिरेयाणि । अणुक्क० ज० एयस०, उक्क० अंतोमु० । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० ज० अंतोमु०, उक्क० ब्रहारस साग० सादिरेयाणि । अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० एक्कतीस सागरो० देसूणाणि । अणंताणु०च उक्क० उक्क० मिच्छत्तभंगो । अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० एक्कतीस सागरो० देसूणाणि । णवणोक० उक्क० ज० एयस०, उक्क० ब्रहारस सागरो० सादिरेयाणि । अणुक्क० श्रोघं । भवणादि जाव सहस्सार ति एवं चेव । णवि सगिहिदी देसूणा । आणवि जाव उविस्मिगविज्ञो ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० उक्कस्साणुक्क० स्निथ अंतरं स्मिरंतरं । सम्मत्त-

त्रसंज्ञी जीवोंमे नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल दो समय कम आविलिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल एक समय कम आविलिप्रमाण है।

विशेषार्थ पंचिन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्त और मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तसे लेकर मूलमे और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं पाया जाता। इसका कारण यह है कि इनके प्रथम समयमे उत्कृष्ट स्थिति होती है अतः उस उस पर्यायके रहते हुए दो बार उत्कृष्ट स्थित नहीं प्राप्त होती। किन्तु एकेन्द्रिय आदि मूलमें गिनाई हुई कुछ ऐसी मर्गणाएं हैं जिनमें नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर सम्भव है। यद्यपि उत्कृष्ट स्थितिका यदि पुनः उत्कृष्ट स्थितिकन्ध हो तो अन्तर्महूर्त कालके परचान ही हो सकता है परन्तु कपायोंको बदल बदल कर उनका एक या एकसमयसे अधिक कालके अन्तरसे भी उत्कृष्ट स्थितिकन्ध हो सकता है। अब यदि किसी जीवने इस प्रकार कपायकी उत्कृष्ट स्थिति बांधी और वह एकेन्द्रियादिक उक्त मार्गणाओंमेंसे किसी एक मार्गणामे उत्पन्न हुआ तो उसके नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर दो समय कम एक आविलकाल प्रमाण बन जाता है। और इसके विपरीत अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कम आविल प्रमाण भी वन जाता है।

§ ५४७. देवगितमे मिथ्यात्व श्रीर वारह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अतन्तानुवन्धी चतुष्कि उत्कृष्ट स्थितिक अन्तरका भंग मिथ्यात्वके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर श्रीघके समान है। भवनवासियोंसे लेकर सहस्नार कर्प तकके देवोंक इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वत्र कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिये।

सम्मामि० उक्क० स्तिथ अंतरं । असुक्क० ज० एगसम्त्रो, उक्क० सगिंदिरी देखसा । अस्तिस्तु च उक्क० पतिय अंतरं । असुक्क० जह० अंतीमु०, उक्क० सगिंदिरी देखसा ।

§ ५४ द्र. पंचिं०-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज० मिन्छत्त०-बारसक० उनक० अंतरं ज० अंतोमु०, उनक० सर्गाहदी देसूणा । अणुक्क० श्रोघं । सम्मत्त-सम्मामि० उनक० ज० अंतोमु० । उकक० सगिहदी देसूणा । अणुक्क० एवं चेव । णविर जह० एगस० । अणिताणु०चउनक० उनक० ज० अंतोमु०, उनक० सगिहदी देसूणा । अणुक्क० ज० एगसम्रो, उक्क० वेद्याबहिसागरो० देसूणाणि । एविणोक० उनक० ज० एगस०, उनक० सगिहदी देसूणा। अणुक्क० औष्टां। एवं पुरिस०-चक्खु०-सिण्णि त्ति ।

आनत करुपसे लेकर उपरिम प्रैंवयक तकके देवोम मिश्यात्व, बारह कपाय और नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है किन्तु पूर्वोक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका काल निरन्तर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्व की उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्क्रकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर श्रुह्म और उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है।

विशेषार्थ—देवोंमे सहस्रार स्वर्ग तकके देवोंके ही मिण्यात्व आदिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध और सक्रमण सम्भव है, अतः स मान्यसे देवोंमे मिण्यात्व आदि अट्टाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर साधिक अटारह सागर कहा । तथा नो प्रेवेयक तकके देव मिण्यात्वमें जा सकते हैं और सम्यग्दिष्ट भी हो सकते हैं अतः सामान्य देवोंमे सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुवन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर कहा। शेष कथन आवंक समान है। तथा भवनव सियोंसे लेकर सहस्रारस्वर्ग तकके देवोंमे अपनी अपनी स्थितिका विचार करके इसी प्रकार अन्तर काल जानना चाहिये। आनतसे लेकर उपरिम प्रेवेयक तकके देवों के मिण्यात्व, बारह कपाय और नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका तथा सम्यक्त्य, सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुवन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल तो होता हो नहीं, क्योंक इनके पर्यायक प्रथम समयमें ही उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है। हाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उद्देलनाकी अपन्त और अनन्तानुवन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका विसंयोजनाकी अपना आपना होती है। हाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका अपनत्वानुवन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका विसंयोजनाकी अपना अपना होती है। हाँ सम्यक्त्व

§ ५,४ म. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोमें मिण्यात्व और वारह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर आवके समान है। सम्यक्त और सम्याम-ण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर इसी प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण

ु ५४९. पंचमण --पंचविच उनक णित्य अंतरं। णवरि पंचणोक [ ज ] एयसमञ्चा, उनक अंतोमुहुत्तं । चढुणोक [उक्क ] ज एगस , उनक आवित्या दुसमऊणा । अणुक्क ज एगस , उनक अंतोमु आवित्य असंखे भागो एगावित्या वा। एव कायजोगि - ओगित्य - वेडिव्य - चत्तारिकसाए ति।

हैं। तथा त्रानुत्कृष्ट स्थितिका त्रान्तर त्रांपिक समान हैं। इसी प्रकार पुरुषवेदवाले, चत्नुदर्शनवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—कोई भी जीव पंचिन्द्रय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस श्रोर त्रसपर्याप्त जीवोंकी कायस्थित प्रमाण काल तक मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नो नोकपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके साथ रह सकता है पर यहाँ इनकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर काल वतलाना है, अतः इनके प्रारम्भ श्रोर श्रन्तमे उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त करावे श्रोर इस प्रकार उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्रन्तर काल ले श्रावे जो उक्त जीवोंकी कुछ कम कायस्थितिप्रमाण होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट श्रन्तरकाल इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतने काल तक लगातार सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वका सत्त्व मम्यक्त्व प्राप्तिकी अपेदा बन सकता है, श्रन्यथा मध्यमे इनकी उद्घलना भी हो जायगी। जिसने श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना की है ऐसा जीव यदि पुनः श्रनन्तानुबन्धीका सत्त्व प्राप्त करे तो यह श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककं विना श्रिष्वसे श्रिषक कुछ कम एकमो बन्ताम सागर तक रह सकता है, अतः उक्त जीवोंके श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उन्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम एकमो बन्ताम सागर कहा। श्रेष कथन श्रोघके समान है। पुरुपवेदी, चजुद्र्यंनी श्रोर मंद्री जीवोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति कमशः सो सागर पृथक्त्व, दो हजार सागर श्रोर सो सागर पृथक्त्व है, अतः इनमें भी उक्त कममें श्रन्तर काल वन जाता है।

§ ५.४६ पाँचों मनोयोगी खोर पाँचों वचनयोगी जीयोमें उन्छए स्थितिका अन्तर नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें पाँच नोकपायोकी उन्छए स्थितिका जयन्य अन्तर एक समय और उन्छए अन्तर अन्तर एक समय खोर उन्छए अन्तर अन्तर एक समय खोर उन्छए अन्तर अन्तर एक समय खोर उन्छए अन्तर दो समय कम एक आवित है। तथा सब प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उन्छए अन्तर चार नोकपायोके सिवा शेषका अन्तर्मुहूर्त तथा चार नोकपायोंका आवित्वके असंख्यातवें भागप्रमाण अथवा एक आवित्वप्रमाण है। इसी प्रकार काययोगी, औद्यारिककाययोगी, वैकियिककाययोगी और चारों कपायवाले जीवोके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — पांचों मनायांग ओर पांचों वचनयांगोंमें नी नीकपायोंको छोड़कर शेप सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता। इसका कारण यह है कि इन योगोंका काल थांड़ा है, अतः इनमें दो बार उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त होना सम्भव नहीं है। किन्तु मोलह कपायोंका बदल बदल कर अन्तरसे भी उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त होना है, अतः उनके सकमण्की अपेन्नासे नी नोकपायोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट और जघन्य अन्तर बन जाता है जो मूलमें बनलाया ही है। इसी प्रकार यहां शेप प्रकृतियाकी अनुत्कृष्ट स्थितिका भी अन्तर घटित कर लेना चाहिये। मूलमें काययोगी आदि जितनी मार्गणाएं बनलाई है उनमें भी यथायोग्य जानना चाहिये। यद्यपि काययोगका उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गल परिवतन प्रमाण है और औदारिक काययोगका काल कुछ कम बाईस हजार वर्ष प्रमाण है पर यह काल एकेन्द्रिय और प्रथिवीकायिक जीवोके ही प्राप्त होता है, अतः इनमें भी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल

६ ५५०. इतिथ० पंचिंदियभंगो । णविर सगिंदिदी देसूणा । अणंताणु०चउक्क० उक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० सगिंदिदी देसूणा । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० पणवण्ण पित्तदोवमाणि देसूणाणि । णवुंसओघं । णविर अणंताणु०चउक्क० अणुक्क० [ उक्क० ] तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि ।

५ ५ १ १ मदि०सुद्श्रण्णा० श्रोघं । एवि सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० श्रणुक्क०
 णात्थ अंतरं । श्रणंताणु०चउक्क० बारसकसायभंगो । विहंग० सत्तमपुढविभंगो ।
 णवि सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० श्रणुक० णित्थ अंतरं । श्रणंताणु०चउक० बारसकसायभंगो । श्रसंजद० णवुंस०भंगो ।

#### सम्भव नहीं।

§ ५५० स्त्रीवेदवालों में पंचेन्द्रियों के समान भंग हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिये। तथा श्राननतानुवन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्न और उत्कृष्ट श्रानतर कुछ कम श्रापनी स्थितिप्रमाण है। तथा श्रानुकृष्ट स्थितिका जधन्य श्रान्तर श्राम्य श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम पचवन पल्य है। नपुंसकवंदमें श्रोधके समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रानन्तानुवन्धी चतुष्ककी श्रानुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—स्त्रीवेदीकी उत्कृष्ट कायस्थिति सौ पत्य पृथक्त्व प्रमाण है, स्रतः इनमें सव प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछकम सौ पत्य पृथक्त्वप्रमाण प्राप्त होता है। तथा स्त्रीवेदी जीव सम्यक्त्वके साथ कुछकम पचवन पत्य तक रह सकता है और कुछकम इतने कालतक उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना पाई जा सकती है, अतः इसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पचवन पत्य प्रमाण कहा। शेष कथन सुगम है। नपुंसकवेदमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट अन्तर कालको छोड़ कर शेष सब कथन आंघक समान बन जाता है। किन्तु नपुंसकवेदी लगातार कुछ कम तेतीस सागर तक ही सम्यग्दर्शनके साथ रह सकता है अतः इसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त प्रमाण प्राप्त होता है।

६ ५५१ मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमं आंघके समान अन्तर हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिक अन्तरका भग बारह कपायोंक समान हैं। विभंगज्ञानियों में सातवीं पृथिवींक समान भंग हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं हैं। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थितिके अन्तरका भंग बारह कपायोंके समान हैं। असंयतोंमें नपुंसकों के समान भंग हैं।

विशोषार्थ—मत्यज्ञानी त्रोर श्रुनाज्ञानी जीवोंके सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उद्धेलना ही होती जाती हैं। अतः इनके इन दा प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट त्रौर त्रमुत्कृष्ट स्थितिका त्रम्तरकाल नहीं पाया जाता। शेप कथन मुगम हैं। इसी प्रकार विभंगज्ञानी जीवोंके भी उक्त दो प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट त्रौर त्रमुत्कृष्ट स्थितिका त्रम्तर नहीं पाया जायगा। त्रसंयतोंमें नपुंसकवेद प्रधान है, त्रातः त्रसंयतोंका कथन नपुंसकोंक समान कहा।

१४४२. तिण्णिले० मिच्छप्त०-बारसक० उक्क० ज० अंतीमु०, उक्क० सगिहिदी देसूणा । अणुक्क० स्रोधं०। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० अंतरं ज॰ अंतामु०, उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० एवं चेव। णविर जह० एगसमञ्चो। णवणीक० उक्क० जह० एगसमञ्चो, उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० औषं। अणताणु०चउक्क० उक्क० बारसकसायभंगो। अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० सगिहिदी देसूणा। तेउ०-पम्म० मिच्छत्त-बारसक० ज० अंतोमु०। उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० ज० अंतोमु०, उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० अोषं। सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० उक्क० ज० अंतोमु०, उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० एवं चेव। णविर जह० एयस०। णवणोक० उक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० एवं चेव। णविर जह० एयस०। णवणोक० उक्क० जह० एगस०, उक्क० सगिहिदी देसूणा। अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० एककतीस सागरोवमाणि देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० उक्क० णित्थ अंतरं। अणुक्क० ज० अंतोमु०। उक्क० एककतीस सा० देसूणाणि। सेस० उक्क० अणुक्क० णित्थ अंतरं।

§ ५५२ कृष्ण त्रादि तीन लेश्यावालोमे मिध्यात्व त्रौर बारह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त ओर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थिति का अन्तर इसी प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है। नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके अन्तरका भंग बारह कपायों के समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जधन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। पीत और पद्मलेश्यावालों में मिथ्यात्व और बारह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य अन्तर्र अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर स्रोघके समान है। सम्यक्तव, सम्यग्मिध्यात्व ऋौर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुळ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर इसी प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसका जयन्य अन्तर एक समय है। नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर ओघके समान है। शुक्ललेश्यावालों में सम्यक्त्व और सम्यग्मिभ्यात्व की उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इक्रतीस सागर है। श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर नहीं है।

विशोषार्थ — कृष्णादि पांच लेश्यात्रोंका उत्कृष्ट काल क्रमशः साधिक तेतीस सागर, साधिक सन्नद सागर, साधिक सात सागर, साधिक दो सागर त्रौर साधिक त्रठारह सागर है। श्रौर इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है, त्रातः इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है, त्रातः इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्रात्रमाण बन जाता है। तथा

§ ५५३. अभव । मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० द्योघं । एवरि अएंताणु०-चउक्क० मिच्छत्तभंगो । मिच्छादि० मदि०भंगो । आहार० मिच्छत्त-बारसक० उक्क० जह० अंतोग्रु०, उक्क० सगिंदिरी देखणा । अणुक्क० ओघं । सम्मत्त०-सम्मामि० पंचिदियभंगो । अणंताणु० चउक्क० उक्क०मिच्छत्तभंगो । अणुक्क० पंचिदियभंगो । णवणोक० उक्क० ज० एगसम्ब्रो, उक्क० सगिंदिरी देखणा । अणुक्क० ओघं । एवग्रक्कस्संतराणुगमो समत्तो ।

एवमुक्कस्सतराणुगमा सम

**ॐ एत्तो जहरण्णयंतरं।** १ ५५४. सुगमं।

सम्यक्तव श्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्रम्तर काल उद्वेलनाकी अपेत्ता श्रोर श्रमन्तानुबन्धी चतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्रम्तर काल विसंयोजनाकी अपेत्ता पूर्वोक्त प्रमाण बन जाता है। शेष कथन सुगम है। शुक्त लेश्यामें सम्यक्तव, सम्यग्मिश्यात्व श्रोर श्रमन्तानुबन्धी चतुष्ककी श्रमुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट श्रम्तर नीवें प्रैवेयकके समान घटित कर लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

§ ४५३. श्रभव्यों में मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायों की उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिका श्रम्तर श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रमन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थितिके श्रम्तरका भंग मिथ्यात्वके समान है। मिथ्याहिष्टियों सभी श्रेकृतियों की उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिके श्रम्तर का भंग मत्यक्षानियों के समान है। श्राहारक जीवों में मिथ्यात्व श्रोर बारह कपायों की उत्कृष्ट स्थिति का जधन्य अन्तर श्रम्तर्मृहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिका श्रम्तर श्रोघके समान है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पंचेन्द्रियों के समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके श्रम्तरका भंग मिथ्यात्वके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका श्रम्तर पंचेन्द्रियों के समान है। नो नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य श्रम्तर एक समय और उत्कृष्ट श्रम्तर कुछ कम श्रपनी स्थिति प्रमाण है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिका श्रम्तर श्रोघके समान है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिका श्रम्तर श्रोघके समान है।

विशेषार्थ — अभव्यों के अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना नहीं होती, अतः इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल मिध्यात्वके समान बन जाता है। आहारकका उत्कृष्ट काल अंगुलके असंख्यातवें भाग असंख्यातासंख्यात उत्सिर्पणी और अवसर्पिणी प्रमाण है, अतः इनमें मिध्यात्व, संालह कषाय और नौ नंकिपायोंका उत्कृष्ट स्थिति का उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम उक्त काल प्रमाण बन जाता है। यहाँ जो लगानार आहारक होनेका उत्कृष्ट काल बनलाया है सो वह पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियके पश्चान् चेंइन्द्रिय और चौइन्द्रियके पश्चान् तेइन्द्रिय, एकेन्द्रिय जीव जितने काल तक लगातार आहारक होते रहते हैं उन सब आहारक कालोंको जोड़ कर बतलाया है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर काल पंचेन्द्रियोंमें ही प्राप्त हो सकता है अन्यत्र नहीं, अतः आहारकके इनके अन्तर कालको पंचेन्द्रियोंके समान कहा। शेष कथन मुगम है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

\* इसके आगे जघन्य अन्तरका प्रकरण है। § ५५४ यह सूत्र सरल है। श्रीमञ्जुत्त-सम्मत्त-बारसकसाय-णवणोकसायाणं जहण्णिदिविह त्तियस्स णित्थ अंतरं ।

६ ५५५, कुदो ? खिवदकम्माणं पुणरुष्वतीए अभावादो ।

सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणं जहरणिदिविहत्तियस्स अंतरं
 जहरणेण अंतोमुहृत्तं ।

४५६. तं जहा—उच्वेन्तणाए सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णिद्दिसंतकम्मं कुणमाणो सम्मत्ताहिष्ठहो होद्णंतरचित्मफालीए सह उच्वेन्लणचित्मफालिमविणय तत्तोप्पहृिष्ठ मिच्छत्तपढमिद्दिए समयूणावित्यमेत्तमणुप्पविसिय तत्थ पयदजहण्णिद्दिसंतकम्मस्सादिं काद्णारिय कमेण मिच्छत्तपढमिद्दिं गालिय पढमसम्मत्तं पिदविज्ञिय
अंतोष्ठद्रुत्तमिच्छय वेदगसम्मत्तं पिदविज्ञिय पुणो अंतोष्ठहुत्तेण अणंताणुवंधिचउक्कं
विसंजोइय पुणो अधापवत्तअपुच्चकरणाणि करिय अणियद्दिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु
गदेसु मिच्छत्तं खिवय पुणो अंतोष्ठहुत्तेण सम्मामिच्छत्तचित्मफालिं परसङ्बेण संकामिय जहाकमेण अधिदिदगलणाए उदयावित्यणिसेगेसु गलमाणेसु एगिणसेगिद्दिरीए
दुसमयकालाए सेसाए अंतोष्ठहुत्त्तपमाणं सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णंतरं होदि। एव-

# मिध्यात्व, सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य स्थिति-विभक्तिका अन्तर नहीं है ।

§ ५५५. शंका - उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका अन्तर क्यों नहीं होता ?

समाधान—क्योंकि त्तयको प्राप्त हुए कर्मोंकी पुनः उत्पत्ति नहीं होती है स्रौर इन प्रकृतियोकी जघन्य स्थिति चपणाके अन्तमें ही प्राप्त होती है, स्रतः इनकी जघन्य स्थितिका स्रन्तर नहीं होता।

\* सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिका जघन्य
 अन्तर अन्तर्भु हुत है ।

ई प्रश् वह इस प्रकार है—उद्वेलनाके द्वारा सम्यग्मिध्यात्वका जघन्य स्थितिसत्कर्म करनेवाला कोई एक जीव सम्यक्त्वके सन्मुख हुआ और इसने अन्तरकरणकी अन्तिम फालिके साथ उद्वेलनाकी अन्तिम फालिको अन्य प्रश्नुतिमें खिपाया। फिर वहाँ से लेकर मिध्यात्वकी स्थितिमें एक समय कम आविलिप्रमाण कालको बिताकर सम्यग्मिध्यात्वके जघन्य स्थितिसत्कर्मका आदि किया और इस प्रकार उसका अन्तर कर दिया। फिर कमसे मिध्यात्वकी प्रथम स्थितिको गलाकर प्रथमा । श्रम सम्यक्त्वको प्राप्त किया और वहाँ अन्तर्मुहूत रह कर वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त किया। पुनः अम्त्रमुहूतकालके द्वारा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की। पुनः अधःकरण और अपूर्वकरणको करके अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभाग व्यतीत हो जाने पर मिध्यात्वका च्या किया। पुनः अन्तर्मुहूत्तं कालके द्वारा सम्यग्मिध्यात्वकी अन्तिम फालिका परस्त्रसे संक्रमण करके यथाकमसे अधःस्थितिगलनाके द्वारा उदयाविलके निषेकोंको गलाते हुए जब एक निषेककी स्थिति दो समय कालप्रमाण शेष रह जाती है तब उस जीवके सम्यग्मध्यात्वकी जघन्य

मणंताणुवंधिचउककस्स वि । णवरि अंतोष्पृहुत्तव्भंतरे दो वारं तेसिं विसंयोजणं काउण जहण्णंतरं वत्तव्यं ।

# 🏶 उक्कस्सेण उबहुपोग्गलपरियट्टं ।

६ ५५७ सुगममेदं । एवं चुण्णिसुत्तमस्सिद्ण त्रोधंतरपरूवणं करिय संपित्त
 तेण सूचिदसेसमग्गणात्रां अस्सिद्ण अंतरपरूवणाए कीरमाणाए उच्चारणमस्सिद्ण
 कस्सामो ।

\$ ५५८. जहण्णए पयदं । दुविहो णिइ सो-ओघेण ओदेसेण य । तत्थ त्रोघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० जह० त्रजह० णित्थ अंतरं । सम्मत्त० जह० णित्थ अंतरं । सम्मत्त० जह० णित्थ अंतरं । स्रमत्त० जह० णित्थ अंतरं । स्रज० अणुक्कस्सभंगो । सम्मामि० जह० ज० अंतोमु०, उक्क० देसूणं । स्रज० अणुक्क०भंगो । अणंताणु०चउक्क० जह० ज० अंतोमु०, उक्क० मद्भागे देसूणां । स्रज० ज० अंतोमु०, उक्क० बेछाविहसागरो० देसूणाणि । एवमचक्खु०-भवसि० ।

स्थितिका जघन्य अन्तर प्राप्त होता है जिसका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भी जघन्य अन्तर कहना चाहिये। किन्तु इननी विशेषता है कि अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर दोबार अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कराके जघन्य अन्तर कहना चाहिये।

### तथा उत्कृष्ट श्रन्तर उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ५५७ यह सूत्र सरल हैं। इस प्रकार चूर्णिसूत्रका आश्रय लेकर श्रोघ अन्तरका कथन करके अब सभी मार्गणाओं में इसके द्वारा सूचित होनेवाले अन्तरका कथन उच्चारणाके आश्रयसे करते हैं—

है ५५६ जवन्य अन्तरका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— ओघनिर्देश और आदेशिनिर्देश। उनमेसे आघकी अपेचा मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जवन्य भीर अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्यका मंग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्भूहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। तथा अजघन्यका मंग अनुत्कृष्टके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्भूहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। तथा अजघन्य अन्तर अन्तर्भूहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम वां छ्यासठ सागर प्रमाण है। इसी प्रकार अचचुदर्शनवाले और भव्योके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—सब प्रकृतियों की जपन्य स्थितिक जपन्य श्रार उत्कृष्ट श्रन्तरका उल्लेख चूर्णिसूत्रों की व्याख्या करते समय किया ही है अतः यहां श्रजपन्य स्थिति के जपन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरका उल्लेख किया जाता है—उत्कृष्ट स्थितिक प्राप्त हो जानेके बाद उससे न्यून जितनी स्थितियां प्राप्त होती है उन सबको श्रनुत्कृष्ट स्थिति कहते हैं तथा जपन्य स्थितिके श्रतिरक्त जितनी स्थितियाँ होती हैं उन्हे श्रजपन्य स्थिति कहते हैं । इसके श्रनुसार क्रोघसे मिण्यात्व, बारह कषाय श्रीर नौ नोकषायोंकी श्रजपन्य स्थितियोका श्रन्तर नहीं प्राप्त

६ ५५९. त्रादेसेण णेरइएसु भिच्छत्त-बारसक० णवणोक० जह० णित्थ अंतरं। **अज० जहण्णुक० एगस०। सम्मत्त० जह० ण**त्थि अंतरं। अज० अरणुक्क०भंगो। सम्मामि० जहर जहर पलिदो०असंखे०भागो । अजर जहर एगसर, उनकर दोण्हं पि तेत्तीस० देसूणाणि । त्र्रणंतासु०चउक्क० ज० त्रज्ञ० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । पढमाए मिच्छत्त-बारसक०णवणोक० जह० णत्थि अंतरं । अज० जहण्णुक्क० एगस० । सम्मत्त० ज० णत्थि अंतरं । अज० जह० एगस०, उक्कः सगहिदी देसुणा । सम्मामि० जह्० जह्० पिलदोवपस्स असं०भागो । श्रज० जह० एगस०, उक्क० सगद्दिर्दा देमूणा। ऋणंताणु०चउक्क० जह० अजह० जह० अंतो॰, उक्क॰ सगद्विदी देसूणा | विदियादि जाव छट्टि त्ति मिच्छत्त-वारसक॰-णव-णोकः जहः अजः णित्य अंतरं । सम्मत्तः सम्मामिः जहः जः पलिदोः ऋसंखेः हाता, क्यांकि स्त्रांघसे उन प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितियाँ चप्रांक स्नन्तमें ही प्राप्त होती है स्त्रीर चय होनेके परचान् पुनः इनका सत्त्व तहीं पाया जाता। किन्तु सम्यक्त्व त्रीर सन्यग्मिश्यात्वका उद्वेलनाके परचात सम्यक्त्वके होने पर नियमसे सत्त्व हो जाता है स्त्रीर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका विसंयोजनाके पश्चान पुनः सत्त्व हो सकता है ऋतः इन प्रकृतियोंकी श्रोघसे श्रजघन्य स्थितियों का भी अन्तर पाया जाता है। उनमेसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी अजवन्य स्थितिकं श्रन्तरका खुलासा इनके अनुत्कृष्ट स्थितिके श्रन्तरके समान जानना चाहिये । तथा श्रनन्ता-नुबन्धी चतुष्ककी श्रजधन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर अन्तर्भृहून है, क्योंकि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजनाके बाद पुनः उसका सत्त्व प्राप्त करनेमें कमसे कम अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर है, क्योंकि जिसने अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर दी है वह यदि मिथ्यात्वमे आकर पुनः उसका सत्त्व शाप्त करं तो उसे एसा करनेमं सबसे अधिक काल कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर लगता है।

१५५६ आदेशकी अपेता नारिकयोंमें मिध्यात्व, बारह कपाय और तो नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्यका भग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्यका भग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यिभ्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर पर्न्यापमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और दोनों स्थितियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर कुँ हुर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। पहली पृथिवीमे मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपयोंकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका अघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका अपन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। दूसरी पृथिवीमें लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंमें मिध्यात्व, बारह कघाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य और आजघन्य और अजघन्य और नौ नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य और अघन्य और अघन

भागो । अज्ञ जिल्लास्य, उक्क स्माहिदी देसूणा । अर्णताणु व्चउक्क जह अज्ञ जिल्लामु , उक्क स्माहिदी देसूणा । सत्तमाए मिन्छत्त-बारसक -भय-दुगुंञ्च जह जिल्लास्य अंतरं । अज्ञ जह एएस , उक्क अंतोमु । सत्तणोक व् जह जिल्लास्य अंतरं । अज्ञ जहण्णुक्क एगस । सम्मामि - अर्णताणु जिर्म्योघं । सम्मत्त सम्मामिन्छ त्रभंगो ।

स्थितिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और दोनों जघन्य अजघन्यका उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सातवीं पृथिवीमं मिश्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुष्माकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। सात नाकपायोंकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भेग सामान्य नारकियोंके समान है। तथा सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिश्यात्वके समान है।

विशोपार्थ - नरक में मिश्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति दूसरे विमहके समय एक वार ही प्राप्त हा सकती है, ऋतः यहाँ जवन्य स्थितिका ऋन्तर काल नहीं कहा । किन्तु इस जीवक पहले विमहमें खोर तृतीयादि समयों में अजधन्य स्थिति रहेगी श्चतः नरकमं उक्त प्रकृतियोकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्चन्तर काल एक समय कहा है। नरकमें उत्पन्न हुए कृतकृत्यवदक सम्यग्दृष्टि जीवके ही सम्यक्तवकी जघन्य स्थिति पाई जाती है. स्रतः इसकी जघन्य स्थितिका स्रन्तरकाल सम्भव नहीं। तथा इसकी अजघन्य स्थितिका श्च-तर काल अनुत्कृष्ट स्थितिके समान घटित कर लेना चाहिये। जिस नारकीने उद्वेलना करके सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य स्थिति प्राप्ति की है वह उपश्रमसम्यक्त्वका प्राप्त करके और मिण्यात्वमें श्राकर पुनः उद्देलना करके यदि पुनः उसकी जघन्य स्थितिको प्राप्त करे तो उसे ऐसा करनेमें पल्यका श्चमंख्यातवां भागप्रमाण काल लगना है, अतः सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिका अन्तरकाल उक्त प्रमाण कहा । जिस नारकीने सम्यग्मिश्यात्वकी श्रजघन्य स्थितिके बाद जघन्य स्थितिको प्राप्त किया श्रीर नीसरे समयमे उपशमसम्यक्त्वी होकर पुनः अजघन्य स्थितिको प्राप्त कर लिया उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी ऋजघन्य स्थितिका जघन्य ऋन्तर एक समय पाया जाता है। जो नारकी नरक में उत्पन्न होनेके पहले समयमें और अपनी आयुक्ते अन्तिम समय में उद्वेलनाद्वारा सम्यग्मिध्यात्व की जघन्य स्थितिको प्राप्त करता है उसके सम्यग्निश्यात्वकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होता है । तथा जिस नारकीने उत्पन्न होनेके बाद दूसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर ही श्रौर अन्तमें अन्तर्मृहर्त कालके हो। रहनेपर उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त किया उसके सम्यग्मिश्यात्वकी अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर पाया जाता है। तथा नरकमें सम्भव विसंयोजनाके जघन्य ऋौर उत्क्रष्ट कालकी ऋपेन्ना ऋनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य श्रीर त्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तर्मुहर्त श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर प्रमाण प्राप्त होता है। प्रथम नरकके कथनमें सामान्य नारिकयोंके कथनसे कोई विशेषता नहीं है। फिन्तु जहां सामान्य नारिकयोके कथनमें कुछ कम स्त्रपनी उत्कृष्ट स्थिति कही हो वहां प्रथम नरककी कुछ कम उत्कृष्ट स्थित जाननी चाहिये। दूसरेसे लेकर छठे नरक § ५६०. तिरिक्खेसु मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० ज० अंतोम०, उक्क० असंखेजा लोगा । अज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । सम्मत्त० जह० णित्थ अंतरं । अज० अणुक्कस्सभंगो । सम्मामि० जह० ज० पलिदो० असंखे०भागो । अज० ज० एगस०, उक्क० ओघं । अर्णाताणु०चउक० जह० आघं । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देमूणाणि । सत्तणोक० ज० ज० पलिदो० असंखे०-भागो, उक्क० अ्रणांतकालमसंखेजा पोग्गलपरियद्या । अज० जहण्णुक्क० एयस० ।

तकके नारिकयों के मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकापायो की जघन्य स्थिति अन्तिम समयमे ही प्राप्त हो सकती है अतः इनके उक्त प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिक। अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता। द्वितीयादि प्रथिवियों में कृतकृतत्यं वदक सम्यन्दृष्टि नहीं उद्युक्त होता हं अतः यहां सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिके अन्तरका कथन समान है। वह सामान्य नारिकयों के समान यहां भी घटित कर लेना चाहिये। शेष कथन मुगम है। सातवें नरकमें मिध्यात्व, बाहर कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति अन्तरकं अन्तमुहूर्तमें कम से कम एक समय तक और अधिक से अधिक अन्तर्मुहूर्त काल तक प्राप्त हो सकती ह। अब जिसने इस अन्तमुहूर्तके मध्यमे एक समयके लिये जघन्य स्थिति प्राप्त की उसके अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय पाया जाता है। तथा जिसने अन्तर्मुहूर्त तक जघन्य स्थिति प्राप्त करे अन्तर्में अजघन्य स्थिति प्राप्त की उसके अजघन्य स्थिति प्राप्त की उसके अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय पाया जाता है। तथा सात नोकषायों की जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है। तथा सात नोकषायों की जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय प्राप्त होता है। शेष कथन आघकं समान है। किन्तु यहां भी कृतकृत्यवेदक सम्यग्दिष्ट उत्पन्न नहीं होता, अतः यहां सम्यक्त्वका कथन सम्यग्मिध्यात्वके समान जानना।

§ ५६० तिर्यंचोमं मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुमाकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मु हृत है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका भंग अनुत्कृष्ट स्थितिक समान है। सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय तथा दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्किकी जघन्य स्थितिका अन्तर श्रोघके समान है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मु हृतें और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर पत्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। और उत्कृष्ट अन्तर श्रमन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशेषार्थ—पहले निर्यचोंके मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी अजधन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहर्त और उत्कृष्टकाल असंख्यान लोकप्रमाण वतला आये हैं अनः वही यहां इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये। तथा पहले इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्महर्त बनला आये हैं अतः बही यहां इनके उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिये। निर्यचोंके मम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति कृत्कृत्यवेदक सम्यग्दिके प्राप्त होती है अतः इनके सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति कृत्कृत्यवेदक सम्यक्त्वकी अधन्य स्थिति है अतः इनके सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति क्रिनकृत्वत्यवेदक सम्यक्त्वकी अधन्य स्थिति है अतः इनके सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिक अन्तरकालका निषेष किया है। तिर्यचोंके

 ५६१. पंचिदियतिरिक्ख-पंचिं श्रितिरिव्यक्तव-पंचिवितिरिव्जोणिणीसु मिच्छत्त-बारसकव-भय-दुगुंछव जहव णित्थ अंतरं । अजव जहण्णुकव एयसव । सम्मव जहव णित्थ अंतरं । अजव जहव एयसव, उक्कव तिण्णि पिलदोवमाणि पुत्वकोडिपुधत्तेण-

सम्यक्त्वको अनुत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण बतला आये है उसी प्रकार यहां उसकी अजयन्य स्थितिका अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये। किसी एक तिर्थंचने उद्वेलनाके अन्तिम समयमें सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिको प्राप्त किया। पुनः वह दसरे समयमे उपशमसम्यग्दाष्ट हो गया तो उसे मिथ्यात्वमें जाकर उद्वेलनाके द्वारा पुनः सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिको प्राप्त करनेमें पत्यका श्रासंख्यातवां भाग प्रमाण काल लगता है, अतः तिर्यंचके सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर-काल पत्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण कहा । जो तिर्यंच सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके साथ एक समय तक रहा श्रीर दसरे समयमें वह उपशमसम्यग्दृष्टि हो गया उसके सम्यग्मिध्यात्वकी अजवन्य स्थितिका जवन्य अन्तरकाल एक समय कहा। तथा सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य श्रीर अज्ञघन्य स्थितिका उत्क्रष्ट अन्तर स्रोघके समान जानना, क्योंकि स्रोघमे कहा गया उत्कृष्ट अन्तरकाल तिर्यचोंके ही घटित होता है। एक अन्तर्मृहर्तमे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना दो बार प्राप्त हो सकती है और श्रोघसे विसंयोजनाके श्रन्तिम समयमे श्रनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति होती है जो तिर्यचोंके भी सम्भव है अतः इनके अनन्तानुबन्धीकी जवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर-काल त्रांघके समान अन्तमहते कहा। तिर्यंचीमे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाका उत्कृष्ट अन्तर-काल ऋर्ध पुद्रगलपरिवर्तन है, अर्तः इनके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल क्रोचिक समान कुछ कम अर्थ पुर्गल परिवर्तन कहा। तथा तिर्यचौंक चौबीस प्रकृतिक स्थानका जघन्यकाल अन्तर्महर्त है अतः इनके अनन्तानुबन्धीकी अजधन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल श्चान्तर्महर्त कहा। तथा निर्यचोंके चावीस प्रकृतिक स्थानका सत्त्वकाल कुछ कम तीन पर्य है. अत: इनके अनन्तानुबन्धीकां अजधन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पस्य कहा । जो एकेन्द्रिय जीव सोलह कपायांकी जघन्य स्थितिके साथ पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके प्रतिपत्त प्रकृतियों हे बन्ध कालके अन्तिम समयमें सात नोकपायोंकी जवन्य स्थिति प्राप्त होती है। अब यदि दुमरी बार यह जीव इसी स्थितिको प्राप्त करना चाहे तो उसे कमसे कम पत्यका श्चासंख्यातवां भाग प्रमाण काल लगेगा, क्यों कि किसी एकेन्द्रियको पंचेन्द्रियके योग्य स्थितिका घात करके एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिको प्राप्त करनेमें पल्यका ऋसंख्यातवां भाग प्रमाण काल लगता है, स्रतः निर्यंचोके सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल पत्यके श्चसंख्यातवें भाग प्रमाण कहा ।) तथा एकेन्द्रियोंका उत्कृष्ट काल श्रसंख्यात पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। अब यदि किसी एकेन्द्रियने उक्त कालके प्रारम्भ और अन्तमे पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिको प्राप्त किया तो उसके सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका उक्त फाल प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर काल पाया जाता है। तिर्यचोंके सात नोकषायोंकी जघन्य स्थित एक समयके लिये प्राप्त होती है, अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य ऋौर उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा 🖡

§ ५६१. पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त ख्रौर पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतियोंमें मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका ख्रन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य ख्रौर उत्कृष्ट ख्रन्तर एक समय है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका ख्रन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य ख्रम्तर एक समय ख्रौर उत्कृष्ट ख्रन्तर पूर्वकोटि प्रथक्त्वसे

ब्महियाणि । सम्मामि० जह॰ ज० पिलदो० असंखे॰भागो । अज० ज० एगसम्य्रो, उक्कि तिण्णि पिलदो० पुन्वकोडिपुधत्तेणब्भिहियाणि । अर्णताणु०चउक्क० ज॰ ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगिहिदी देसूणा । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पिलदोव-माणि देसूणाणि । सत्तणोक॰ जह० णित्थ अंतरं । अज॰ जहण्णुक्क० एगस॰ । णविर पंचिदियतिरिक्खजोणिणीसु सम्मत्त० सम्मामिच्छत्तभंगो ।

श्रधिक तीन पर्यप्रमाण है। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर पर्योपमके श्रमंख्यात्वें भागप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रोर दोनोंका उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वसे अधिक तीन पर्य है। श्रनन्तानुवन्धी चतुष्कि जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर श्रन्तमुं हुत श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर श्रन्त श्रार उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पर्य है। सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका श्रन्तर नहीं है। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिथेच योनिमतियोंमें सम्यक्त्वका मंग सम्यग्मिध्यात्वके समान है।

विशोषार्थ- उक्त तीन प्रकारके तिर्यंचोंके मिश्यात्व, बारह कपाय, भय श्रीर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिका अन्तरकाल पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमनी पर्यायके रहते हुए नहीं प्राप्त होता, क्योंकि जो बादर एकेन्द्रिय हत समुत्पत्तिकमसे उक्त तीन प्रकारके तिर्यचोंमें उत्पन्न होता है उसीके इनकी जघन्य स्थिति पाई जाती है, अतः इनके उक्त प्रकृतियोंका जवन्य अन्तर काल नहीं कहा। इनके सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिके अन्तरके नहीं होनेका भी यही कारण जानना चाहिए। तथा इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति एक समयके लिये होती है, अतः अजधन्य स्थितिका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा। तिर्यचौमें सम्यक्तवकी जघन्य स्थिति कृतकृत्यवेदक सम्यम्दृष्टिके होती है और ऐसे जीवके पुनः सम्यक्तवका सत्त्व नहीं पाया जाता, ऋतः ऋग्तिम भेदको छोड़कर उक्त दो प्रकारके तिर्यंचोंके सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं कहा । जिस तिर्यंचने सम्यक्त्वकी उद्वेलना करके एक समयके श्रन्तरालसे उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त किया है उसके सम्यक्त्वका अन्तर एक समय पाया जाता है, अतः विवित्तित निर्वचोंके सम्यक्त्वकी अज्ञजनय स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय कहा रे उक्त तीन प्रकारके निर्यचोंका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्वसे अधिक तीन पत्य है। श्रव यदि किसीने श्रपने कालके प्रारम्भमें सम्यक्त्वकी उद्वेलना की ऋौर ऋन्तमें उपशुम सम्यक्त्वको प्राप्त करके सम्यक्त्वकी श्रजघन्य स्थितिको प्राप्त किया तो उसके उक्त काल तक सम्यक्त्वका श्रन्तर पाया जाता है, श्रतः उक्त तीन प्रकारके तियंचोंके सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल उक्त प्रमाण कहा। तथा सम्यग्मिश्यात्वकी अजघन्य स्थितिका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल सम्यक्तवके समान घटित कर लेना चाहिये श्रोर सामान्य तिर्यचोंके सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल जिस प्रकार घटिन करके लिख आये हैं उसी प्रकार यहां भी जानना चाहिए, इसलिये इसका अलगसे खुलासा नहीं किया। किन्तु यहां इतनी विशेषता है कि योनिमती तिर्यंचके सम्यक्त्वकी जबन्य स्थितिका अन्तरकाल सम्माग्मध्यात्वके समान ही प्राप्त होता है, क्योंकि इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दप्टि जीव नहीं उत्पन्न होता। उक्त तीनों प्रकारके तिर्थंचोंके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति विसंयोजनाके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है और जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा जीव मिथ्यात्वमें श्राकर और सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः विसंयोजना करे तो कमसे कम § ५६२. पंचिं०तिरि० [ अ ] पज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-गावणोक० पंचिं०-तिरिक्खभंगो । अणंताणु०चउक० मिच्छत्तभंगो । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णा-जहण्ण० णित्थ अंतरं । एवं मणुसग्रपज्ज०-सव्विवगिलिदिय-पंचिंदियश्रपज्ज०-तस-श्रपज्जत्तो ति ।

५६३ मणुसतिय० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० जह० त्राज० णित्थ स्रांतरं।
 सेसाणं पंचिंदियतिरिक्लभंगो । णवरि सम्मामि० जह० ओघं।

अन्तर्मुहूर्त काल लगता है, अतः इनके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। उक्त तीन प्रकारके तिर्यचोंका जो उत्कृष्ट काज पूर्वकोटिप्रथक्तमें अधिक तीन पत्य बतला आये हैं सो इसके आदि और अन्तमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करावे और इस प्रकार उभयत्र अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थिति ले आवे, अतः इनके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण कहा। किसीने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके अन्त समयमें अजयन्य स्थितिका अन्तर किया और अन्तर्मुहूतके बाद मिथ्यात्य में जाकर उसने पुनः अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थिति प्राप्त करली तो उसके अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थितिका जघन्य अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है इसीलिये उक्त तीन प्रकारके तिर्यचोंके अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थितिका जघन्य अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है इसीलिये उक्त तीन प्रकारके तिर्यचोंके अनन्तानुबन्धीकी अजयन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है यह स्पष्ट ही है। सात नोकपायोंकी जघन्य स्थिति एक समय तक पाई जाती है, अतः इनके सात नोकपायोंकी अजयन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा।

६ ४६२ पंचेन्द्रिय तिर्यंच ऋपर्याप्तकोंमे मिथ्यात्व, बारह कपाय झौर नी नोकपायोंका भंग पंचेन्द्रियतिर्यंचोके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य झौर अजवन्य स्थितिका ऋन्तर नहीं है। इसी प्रकार मनुष्य भपर्योप्त, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय ऋपर्याप्त झौर त्रस ऋपर्याप्त जीवोमें जानना चाहिये।

विशेषार्थ— पंचेन्द्रिय तिर्यंच लट्यपर्याप्तकोके मिण्यात्व आदि २२ प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका अन्तरकाल सम्भव नहीं तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है और यह सब व्यवस्था पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है, अतः इस कथनको पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान करनेकी सूचना की। पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके अन्तरके सम्बन्धमें यही व्यवस्था जाननी चाहिये, अतः इसकं कथनकों मिण्यात्वके समान कहा। पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपाप्तकोंक सम्यक्त और सम्यिगिण्यात्वकी उद्देलना तो होती है पर इसी पर्यायंक रहते हुए पुनः इनकी प्राप्ति नहीं होती, अतः इनके उक्त दो प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर काल नहीं बनता। मूलमें मनुष्य लब्ध्यपर्याप्त आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है, अतः उनकं कथनको पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोके समान कहा।

§ ५६२ सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनयोंमें मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जन्यय और अजयन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। शेष प्रकृतियोंका मंग पंचेन्द्रिय तियंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर श्रोघके समान हैं।

विशेषार्थ--- मनुष्य त्रिकके मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति दर्शनमोहनीयकी चपणाके समय

१५६४. देव० मिच्छत्त-वारसक०-णवणोक० जह० णित्य अंतरं । अज० जहण्णुक्क० एयस० । सम्मत्त० जह० एत्थि अंतरं । अज० जह० एगस०, उक० एकतीसं सागरोवमाणि देखणाणि । सम्मामि० जह० जह० पिलदो० असंखे०भागो । उक० एकत्तीससागरो० देखणाणि । अजह० जह० एगसमओ, ] उक० एकत्तीस सागरोवमाणि देखणाणि । अणंताणु० ज० अज० ज० अंतोग्रु०, उक० एकत्तीस० देखणा० ।

तथा भारह कपाय त्रीर नौ नोकपायोकी जयन्य स्थिति चारित्रमोहनीयकी चपणाके समय प्राप्त होती है तथा इसके बाद इनका पुनः सत्त्व सम्भव नहीं, श्रतः इनकी जयन्य त्रीर श्रजघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं कहा। श्रव शेप जो छह प्रकृतियां बचती हैं सो उनकी जयन्य श्रीर अजयन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं कहा। श्रव शेप जो छह प्रकृतियां बचती हैं सो उनकी जयन्य श्रीर अजयन्य स्थितिक श्रन्तरके विषयमें जिस प्रकार पंचेन्द्रिय निर्यचके खुलासा कर त्राये हैं उसी प्रकार यहां भी खुलासा कर लेना चाहिये। किन्तु इनके सम्यिग्मध्यात्वकी जयन्य स्थितिका जयन्य श्रन्तरकाल श्रोपके मदान वन जाता है, क्योंकि इनके सम्यिग्मध्यात्वकी उद्देलनाके समान चपणा भी पाई जाती है।

§ ४६४. देवोंमें मिण्यात्व, बारह कप|य श्रीर नो नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका श्रन्तर नहीं हैं। तथा श्रजवन्य स्थितिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर एक समय हैं। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका श्रन्तर नहीं हैं। तथा श्रजवन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर हैं। सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर पत्योपमके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हें श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर हैं। तथा श्रजवम्य म्थितिका जघन्य श्रन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर हैं। श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ठकी जघन्य श्रीर श्रजवन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्म कुछ कम इकतीस सागर हैं।

विशेषार्थ-जो असंज्ञी दो मोड़ा लेकर देवोंमे उत्पन्न होता है उसके दूसरे विमहके समय ही मिथ्यात्व, वारह कपाय, भय त्रीर जुगुष्साकी जघन्य स्थिति सम्भव है। तथा इसी जीवकं प्रतिपत्त प्रकृतियोके बन्धकालके अन्तमे सात नोकपायोंकी जघन्य स्थिति सम्भव है, अतः सामान्य देवोके उक्त प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिका अन्तर काल नहीं कहा । तथा इनके उक्त प्रश्नुतियोंकी जघन्य स्थिति एक समय तक पाई जाती हैं, ख्रात: इनके उक्त कृतियोंकी अजधन्य स्थितिका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा। देवींम कृतकृत्यवेदक सम्यादृष्टि जीव उत्पन्न होते हैं त्रात: इनके सम्यक्तवकी जघन्य स्थितिका त्रान्तरकाल सम्भव नहीं हैं। कारण स्पष्ट है। जिस देवके उद्वेलनाके एक समयके अन्तरालसे उपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति होती हैं, उसके सम्यक्तवकी त्राज्ञचन्य स्थितिका श्रन्तर एक समय पाया जाता है श्रात: सामान्य देवोंके सम्यक्तको अजधन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय कहा । देवोंमें उपरिम ग्रैवेयक तकके देव ही मिथ्यादृष्टि होते हैं। श्रव जिस देवने वहाँ उत्पन्न होनेके पहले समयमें सम्यक्त्वकी उद्देलना करके त्राजघन्य स्थितिका त्रान्तर किया त्रीर त्रान्तर्मूहर्तकालके शेष रह जाने पर उपशम सम्यक्तको प्राप्त करके सम्यक्तकी अजधन्य स्थितिको प्राप्त किया उसके सम्यक्तको अजधन्य स्थितिका अन्तरकाल कुछकम इकतीस सागर पाया जाता है, अतः सामान्य देवोंके उक्त प्रकृतिकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण कहा। इसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि \$ ५६५. भवण श्वाण ि मिच्छत्त व्यारसक व्याण मिच्छत्त व्याण । सम्मत्त व्यारमणेवाली ति भिच्छत्त वारसक व्याण क्ष्य व्याण । सम्मत्त व्याण व्याण

जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त करते समय जीवनमे पत्यके ऋसंख्यातवें भाग कालंक शेप रह जाने पर उपशम सम्यक्तवका प्राप्त करावे श्रीर वहांसे निकलनेके अन्तिम समयमें जघन्य स्थिति प्राप्त करावे । सम्याग्मिध्यात्वको जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तरकाल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण जिस प्रकार तिर्थंचके घटित करके बतला ऋ।यं हैं उसी प्रकार सामान्य देवोंके घटित कर लेना चाहिये। तथा जिस देवने सम्याग्मिण्यात्वकी उद्वेलनाके पहले समयमं सम्यक्तवकी प्राप्त कर लिया है उसके सम्यग्मिण्यात्वकी अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय पाया जाता है. श्रतः देवोंके सम्यग्मिध्यात्वकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय कहा। श्रनन्तानु-बन्धीकी जचन्य और अजघन्य स्थितिकं जघन्य अन्तरकालको जिस प्रकार तिर्यचौंकं अन्तसेहुर्त प्रमाण घटित करके लिख त्राये हैं उसी प्रकार सामान्य देवोंके घटित कर लेना चाहिये। एक देव है जिसने जीवनके प्रारम्भमे विसंयोजनाके ऋन्तिम समयमे ऋनन्तानुबन्धोकी जघन्य स्थितिको प्राप्त किया अनन्तर वह भिध्यात्वका प्राप्त हो गया और जब जीवनमें अन्तर्मुहर्त काल शेष रह जाय तब वह पुनः अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिको प्राप्त करे तो उसके अनन्तानुबन्धीकी जघन्य स्थितिका अन्तर कुछकम इकतीस सागर बन जाता है, श्रतः समान्य देवोक अनन्तानुबन्धीकी जवन्य स्थितिका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उक्त प्रमाण कहा । तथा जिस देवने प्रारम्भमं विसंयोजना द्वारा विसंयोजनाके अन्तिम समयमें अनन्तानुबन्धीकी श्रजघन्य स्थितिका श्रन्तर किया श्रीर जीवन भर वह सम्यक्त्वके साथ रहा। पुनः जीवनके श्रन्तिम समयमे वह मिथ्यात्वको प्राप्त हुत्रा तो उसके श्रनन्तानुबन्धीकी श्रज्ञघन्य स्थितिका श्रन्तर कुछकम इकतीस सागर पाया जाता है, त्रातः इसका उत्कृष्ट अन्तर उक्त प्रमाण कहा।

\$ ५६५ भवनवासी और व्यन्तर देवोंमे मिध्यात्व, बारह कषाय श्रीर नौ नोकषायोंकी जघन्य श्रीर श्रावचन्य स्थितिक। श्रान्तर सामान्य देवोंक समान है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य स्थितिक। जघन्य श्रान्तर पल्योपमक असंख्यात्व भाग प्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा श्राजघन्य स्थितिका जघन्य श्रान्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। श्रान्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्राजघन्य स्थितिका जघन्य श्रान्तर श्रान्तर स्थितिका जघन्य श्रीर नौ नोकषायोंकी जघन्य श्रीर श्राचन्य स्थितिका श्रान्तर नहीं है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका श्रान्तर नहीं है तथा श्राचन्यका भंग श्रानुत्कृष्टके समान है। सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य स्थितिका श्रान्तर नहीं है तथा श्राचन्यका भंग श्रानुत्कृष्टके समान है। सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य स्थितिका श्रान्तर पत्योपमके श्रासंख्यात्वे भाग प्रमाण है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम श्राम्ती श्राप्ती उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा श्राजघन्यका भंग श्रानुत्कृष्टके समान है। श्रान्तर कुछ कम श्राम्ती श्राप्ती उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा श्राजघन्यका भंग श्रानुत्कृष्टके समान है। श्रान्तर कुछ कम श्राम्ती श्राप्ती जचन्य श्रीर श्राचन्य स्थितिका जघन्य श्रान्तर श्रान्तर श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम

अंतो॰, उनके सगिंदि देसूणा । णविर जोइसिएस मम्मत्त० सम्मामिच्छत्तभंगो । अणुदिसादि जाव सन्बद्द० सन्वपयडीणं ज० श्रज्ज० णित्य अंतरं । कम्बइय-ग्राहार०- स्राहारिमस्स०-अवगद०-स्रकसा०-स्राभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-विहंग०-संजद०-सामाइय-छेदां०-परिहार० सुहुम०-जहावन्वाद०-संजदामंजद०-औहिदंस०-सम्मादि०- खइय०-वेदय०-उनसम०-सासण०-सम्मापि०-अणाहारए त्रि णित्य अंतरं ।

१ ५६६. एइंदिएसु भिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० ज० अंतोमु०, उक्क० असंखेळा लोगा । अज० ज० एगम०, उक्क० अंतोमु०। सम्भत्त०-सम्मामि० ज० अज० णित्थि० अंतरं। सत्तणोक० ज० ज० अतोमु०, उक्क० असंखेळा लोगा । अज० जहण्णुक० एगस० । एवं सुदुप० । बादराणमेवं चेव । णविर सगिद्दिरी देमूणा । एवं वादरपळ्जा-

अपनी स्थितिप्रमाण है। किन्तु इतनी विशेषता है कि ज्योतिषियोमें सम्यक्तका भंग सम्यग्मिज्यात्वके ममान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमें सब शक्कतियोकी जवन्य श्रोर
श्रजवन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार कार्मणकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्राहारकिमिश्रकाययोगी, श्रप्पतवेदी, श्रकषायी, श्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, श्रवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी,
विभंगज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत, यथाक्यातसंयत, संयतासंयत, श्रवधिद्द्यीतवाले, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्मसम्यग्दृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिष्ठयादृष्टि श्रीर अनाहारक जीवोके सब
प्रकृतियोंकी ज्ञान्य श्रीर श्रवचन्य स्थितिका श्रन्तर नहीं है।

विशेषार्थ — भवनवासी और व्यन्तरदेवोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते, अतः इनके वहाँ सम्भव सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका अन्तरकाल वन जाता है, क्योंकि एक यार सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका प्राप्त करके पुनः उसी स्थितिका प्राप्त करनेमे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल लगता है। शेप कथन सुगम है। ज्योतिपियोंसे लेकर उपित भैवयक तकके देवोंके मिथ्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका प्राप्त होना जीवनके अन्तिम सम्यम सम्भव है, अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तरकाल नहीं पाया जाता। ज्यातिपियोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यन्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होता, अतः उनके सम्यक्तकी जघन्य स्थितिका अन्तरकाल भवनवासियोंके समान वन जाता है, शेपके नहीं। अनुदिशादिकम सम्यन्दृष्टि जीव हो उत्पन्न होते हैं, अतः वहां किसी भी प्रकृतिका अन्तरकाल सम्भव नहीं है। इसी प्रकार आहारककाययोगमें लेकर सम्यग्मिण्यादृष्टि तकके जीवोंमें अपने अपने कालके अन्तिम समयमें जघन्य स्थिति होनेके कारण अन्तर संभव नहीं है। कार्मणकाययोग और अनाहारक ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें सम्भव सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तरकाल सम्भव नहीं, क्योंकि वहां अन्तरालके साथ दें। बार जघन्य या अजघन्य स्थितिका ही पाई जाती।

§ ५६६ एकेन्द्रियोंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय त्रौर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्महूर्त है त्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रसंख्यात लोकप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त श्रौर सम्यग्मि-ध्यात्वकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। सात नोकपायोकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर श्रम्ख्यात लोकप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिका

पज्जत्ताणं । सुहुमपज्जत्तापज्जत्तएसु मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० जहण्णुक्क० अंतोमु० । अज० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । सत्तणोकसाय० ज० जहएगुक्क० अंतोमु० । अज० जहण्णुक्क० एगसमञ्जो । [सम्मत्त-सम्मा० ज० अज० णत्थि स्रंतरं ।]

६ ५६७. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ञ०-तस०-तसपज्ञ० मिच्छत्त-वारसक०-णवणोक० जह० अज० णत्थि अंतरं। सम्मत्त० ज० णत्थि अंतरं। अज० अणुक्क०भंगो। सम्मा-मि० ज० ज० अंतोसु०। अज० ज० एगस०, उक्क० सगद्विदी देसूणा। अणंताणु०-

जघन्य खोर उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार सूद्रम एकेन्द्रियोक जानना चाहिये। बादर एकेन्द्रियोके भी इसी प्रकार जानना चाहिये, किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिये। इसी प्रकार बादर पर्याप्तक खोर बादर अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिये। सूद्रम एकेन्द्रिय पर्याप्तक खोर अपर्याप्तक जीवोंमे मिश्यात्व, सोलह कपाय, भय खोर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका जघन्य खोर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व खोर सम्यग्निकाश्वाद्यकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है।

विशेषार्थ-जो वादर एकेन्द्रिय मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका प्राप्त करके पुन: उसे प्राप्त करना चाहता है उसे वैसा करनेमे कमसे कम अन्तर्भुहूर्तकाल लगता है ऋतः एकेन्द्रियोंकं उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य ऋन्तरकाल ऋन्तर्मृहर्त कहा। तथा यदि ऐसा जीव सदम एकेन्द्रियोमें ऋपने उत्कृष्ट काल तक परिश्रमण करे श्रीर फिर बादर एकेन्द्रिय हो कर जघन्य स्थिति प्राप्त कर तो असंख्यात लोकप्रमाण काल लगता है, अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लाकप्रमाण कहा । तथा एकेन्द्रियोंके उक्त प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है अतः इनके श्चज्ञधन्य स्थितिका जधन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। इनके सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वोक्त रीतिसे ही घटित कर लेना चाहिये। किन्तु अजघन्य स्थितिके जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकालमे कुछ विशेषता है। बात यह हैं कि इनके सात नोकपायोकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय प्रमाण ही होता है. अत: त्रज्ञघन्य स्थितिका जघन्य त्रीर उत्कृष्ट त्रान्तर एक समय प्रमाण ही प्राप्त होगा। एकेन्द्रियोंको सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति नहीं होती, अतः उनके सम्यक्तव श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य त्रीर अजघन्य स्थितिका अन्तरकाल सम्भव नहीं, यह स्पष्ट ही है। सूत्तम एकेन्द्रिय अौर वादर एकेन्द्रियोंके मिध्यात्वादिकी जवन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण होता है। शेव कथन पूर्वीक्त प्रमाणही है। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त ऋौर बादर एकेन्द्रिय श्रपर्याप्त जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु सूच्म एकेन्द्रिय पर्याप्त श्रौर सूच्म एकेन्द्रिय श्रपर्याप्त जीवोका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त हा है, अतः इनके उक्त सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महर्त प्राप्त हो जाता है। शेव कथन पूर्वोक्त प्रमाण ही है।

§ ४६७ पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोमें मिण्यात्व, वारह कपाय श्रीर नो नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्यका भंग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है। चउक्क० ज० ज० अंतोम्र०, उक्क० सगिंददी देसूणा । अज० ज० अंतोम्र०, उक्क० वे छाविद्यसागरो० देसूणाणि । एवं पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति ।

१५६८ कायाणुवादेण पंचकाय० एइंदियभंगो । णवरि सगसगुकस्सिटिदी देसूणा । पंचमण०-पंचवचि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० ज० अज० णित्थ अंतरं । सम्मत्त० सम्मामि० ज० णित्थ अंतरं । अज० ज० एगस०, उक० अंतोमु० । काय-जोगि०-ओरालि०-वेडिव्यय० मणजोगिभंगो । ओरालियमिस्स० सुहुमेइंदियअपज्जत्त-भंगो । णवरि सत्तणोक० जह० णित्थ अंतरं । अज० जहण्णुक० एगसमओ । वेउिव्यमिस्स० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० ज० अज० णित्थ अंतरं । सत्तणोक० ज० णित्थ अंतरं । स्रज० जहण्णुक० एगस० ।

तथा दांनोंका उन्क्रप्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिष्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त और उत्क्रप्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिष्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है। इसी प्रकार पुरुषवेदवाले, चच्ददानवाले और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये।

विशोपार्थ — पंचेन्द्रिय खादि चार मार्गणाओं में दर्शनमाहनीय और चारित्रमोहनीयकी चपणांक समय मिण्यात्व, बारह कपाय खोर नो नाकाषायोंकी जघन्य स्थिति पाई जाती है, खतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका खन्नरकाल नहीं कहा। तथा इनके कृतकृत्यवेदकके खन्तिम समय में सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति पाई जाती है खतः इसकी जघन्य स्थितिका खन्तरकाल भी सम्भव नहीं। जिसने सम्यिग्धियात्वकी उद्देशना की खोर सम्यम्दिष्ट होकर अन्तर्मृहर्न में उसकी चपणा की उसके सम्याग्मण्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य खन्तरकाल खन्तमुहर्न पाया जाता है, खतः इसका जघन्य अन्तरकाल खन्तमुहर्न कहा। शेष कथन मृगम है।

ई ५६ काय मार्गणाके अनुवादसे पाच स्थावर कायोमें एकेन्द्रियों के समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छुछ कम अपनी अपनी उत्छृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। पांचों मनोयांगी और पाचों मनोयांगी जीयोमें मिण्यात्व, सोलह कपाय और नो नोकपायोंकी जघन्य और अजधन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यिग्ध्यात्वकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुद्दते हैं। काययांगी, औदारिककाययोगी और वैक्रियिककाययोगी जीवोमें मनो-योगियोंके समान भंग है। औदारिक मिश्रकाययोगियोंमें सूच्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें मिण्यात्व, सन्यक्त्व, सन्यग्निका अपन्तर नहीं है। तथा विश्वचिक्त अपन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशोषार्थ—पांचों मनोयांगों श्रीर पांचों वचनयोगोंम मिण्यात्व, बारह कपाय श्रीर नी नोकपायोकी जघन्य श्रीर त्रज्ञज्ञचन्य स्थितिका तथा सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं हैं मो इसका खुलासा पंचेन्द्रिय मार्गणामे जिस प्रकार कर आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिए । तथा उक्त योगोंमेंसे एक योगके रहते हुए श्रनन्तानुवन्धीकी दो बार विसंयोजना सम्मव नहीं, श्रतः

६ ५६९ इत्थिवेदेसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० ज० अज० एात्थि अंतरं। सम्मत्तः ज० णित्थ अंतरं। अज० अणुक्कःभंगो। सम्मामि० ज० ज० अंतोसुः। अज० ज० एगस०, उक्क० सगद्विदी देसुणा। अर्यातासु०च ज० सम्मामिच्छत्त-भंगो। अज० ज० अंतोमु०, उक्क० पणवण्णपित्वो० देसुणाणि।

६ ५७०. एावुंसर्वे मिच्छत्तव्यारसक०-णवणोक० जिल्ला अंतरं। सेसमोघं। णवरि त्र्रणंताणुव्चडक० अज्ञव् जिल्लां अंतोमु०, उक्कव् तेत्रीसं सागरोव देस्रणाणि। एवमसंजद०।णवरि बारसक०-णवणोक० तिरिक्खभंगो। चत्तारिक० मणजोगिभंगो।

९ ५७१ मदि-सुदत्रपणा॰ तिरिक्खोघं । णवरि सम्मत्त०-सम्मामि० ज० ग्रज्ज० सुरिय अंतरं । अणंतासु०चउक्क० मिच्छत्तमंगो । एवमभव०-मिच्छा० ।

इनमें अनन्तानुबन्धीकी जघन्य और श्रजघन्य स्थितिका अन्तरकाल नहीं कहा। इसी प्रकार उक्त योगोंमसे किसी एक योग के रहते हुए सम्यिग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं कहा। सम्भव नहीं, श्रतः इनमें सम्यिग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं कहा। सम्यिग्मिश्यात्वकी उद्देलनाके श्रन्तन्तर समयमें या श्रन्तर्मुहृतंक बाद विविच्तित योगके रहते हुए उपग्रम सम्यक्त्वकी प्राप्ति सम्भव हे श्रतः इनमें सम्यक्त्व श्रीर सम्यिग्मिश्यात्वकी अजघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहृतं कहा। श्रीदारिकमिश्रकाययोग में सात नोकपायोंकी जघन्य स्थिति पंचेन्द्रियके एक बार ही प्राप्त होती हे, श्रतः उसका श्रन्तरकाल पक समय वन जाता है। इसी प्रकार वैकिथिकमिश्रकाययोगमे सात नोकपायोंकी श्रजघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक समय प्रमाण घटित कर लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

§ ५६६ स्त्रीवंदवालोमें मिथ्यात्व, वारह कपाय और नी नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा अजघन्यका भंग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है। तथा दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्यस्थितिके अन्तरका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है। तथा अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पस्य है।

§ ४७०. नपुंसकवेदवालोमें मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जवन्य और अजधन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। तथा शेप प्रकृतियोंकी जघन्य और अजधन्य स्थितिका अन्तर ओष अधिक समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अजधन्य स्थितिका ज्ञानक समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अजधन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर कुल कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार असंयतों जे जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कपाय और नौ नोकपायोंका मंग तिर्यचों के समान है। चारों कपायवालोंका मंग मनोयोगियोंके समान है।

§ ५७१, मत्यज्ञानी ओर श्रुताज्ञानियोंका भंग सामान्य तिर्यचोंके समान है। किन्तु इतर्ता विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिण्यात्वके समान है। इसी प्रकार अभव्य और मिण्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इ ५७२ किण्ह-णील-काउ० मिच्छत्त-वारसक०-भय-दुगुं छ० ज० णित्थ अंतरं । अज० ज० एयस०, उक्क० अंतोमु० । सत्तणोक० जइ० णित्थ अंतरं । अज० जहण्णुक० एगसमओ। सम्मत्त-सम्मामि० ज० जह० पालिदो० झसंखे०भागो । अज० ज० एगस०, उक्क० सगिंददी देसूणा । अणंताणु०चउक्क० ज० अज० ज० अंतोमु०, उक्क० सगिंददी देसूणा । णविर काउ० सम्मत्त० जह० णित्थ अंतरं । तेउ० सोहम्मभंगो । पम्म० सहस्सारभंगो । सुक्कले० मिच्छत्त०-वारसक०-णवणोक० ज० अज० णित्थ अंतरं । सेसमुविरमगेवज्जभंगो । असिण्ण० मिच्छाइहिभंगो । श्राहार० ओघं । णविर सगुक्कस्सहिदी देसूणा ।

एवमंतराणुगमो समत्तो ।

- 🛞 णाणाजीवेहि भंगविचश्रो।
- ६ ५७३ एदमहियारसंभात्वणसुत्तं सुगमं।
- क्ष तत्थ अहपदं । तं जहा—जो उक्कसियाए हिंदीए विहत्तिओ सो अगुक्कस्सियाए हिंदीए ण होदि विहत्तिओ ।

४७४. कुदो १ उक्कस्सिटिदीए समऊणुक्कस्सिटिदियादिकालिक्सेसाणमभावादो ।

§ ५७२. कृटण, नील और कापात लेश्यावालोंमें मिण्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थितिका अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय अंतर उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व स्थितिका जवन्य ऑर उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यम्मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर पत्यापमके असंख्यात्वें भागप्रमाण और अजवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर पत्यापमके असंख्यात्वें भागप्रमाण और अजवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर पत्यापमके असंख्यात्वें भागप्रमाण और अजवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय है। तथा दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य और अजवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर अन्तर्मु हूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कापातलेश्यामें सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। पीतलेश्याका भंग सौधर्मक समान है। पदार्श्याका भंग सहस्रारके समान है। शुक्ललेश्यावालोंमें मिण्यात्व, बारह कपाय और नौ नाकपायोकी अवन्य और अजवन्य स्थितिका अन्तर नहीं है। शेप प्रकृतियोंका भंग उपरिममैवयकके समान है। असंिक्षयोंमें मिण्यादिके समान मेंग है। आहारकोमें औषकं समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी उत्कृष्ट स्थिति होती है।

इस प्रकार श्रन्तरानुगम समाप्त हुन्ना।

\* अब नाना जीवोंकी अपेत्ता भंगविचयका अधिकार है।

§ ५७३ यह सूत्र अधिकारके सम्हालनेक लिये आया है जो सुगम है।

\* इस विषयमें यह अर्थपद है। यथा—जो उत्कृष्ठ स्थितिविभक्तित्राला है वह अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला नहीं होता।

§ ५.१४, **शंका** - उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला क्यों नहीं होता है ? समाधान -क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिमें एक समय कम उत्कृष्ट स्थिति इत्यादि काल विशेष उकस्सिटिदिपडिसेहग्रुहेण अणुकस्सिटिदिपउत्तीदो वा ।

जो अणुक्कस्सियाए हिंदीए विहत्तिओ सो उक्कस्सियाए हिंदीए ए
 होदि विहत्तिओ ।

५७५. इदो ? परोप्परपिरहारसरूवेण उक्कस्साणुक्कस्सिटिदीणमवद्दाणादो । एव-मेदमेगमद्दपदं । किमद्दपदं णाम ? भणिस्समाणब्रहियारस्स जोणिभावेण अवद्दिअत्थो अत्थपदं णाम ।

- अजस्स मोहणीयपयडी ऋत्थि तम्मि पयदं । अकम्मे ववहारो णित्थ । ऽ ५७६ सुगममेदं ।
- एदेण ऋहपदेण मिच्छत्तस्स सन्वे जीवा उक्कस्सियाए हिदीए सिया
   श्रविहत्तिया ।

े ५७७ एत्थ सियासदो कदाचिदित्यस्यार्थे द्रष्टच्यः, तेण कम्हि वि काले सन्वे जीवा मिच्छत्तुकस्सिटिदीए अविहत्तिया होति त्ति सिद्धः । किम्हसुकस्सिटिदीए सन्वे जीवा त्रक्रमेण अविहत्तिया ? ण, तिन्वसंकिलोसाणं जीवाणं पाएण संभवाभावादो ।

नहीं पाये जाते । त्राथवा उत्कृष्ट स्थितिका प्रतिपंध करके त्रानुत्कृष्ट स्थितिकी प्रवृत्ति होती है, त्रातः जो उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला है वह उसी समय त्रानुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला नहीं हो सकता ।

 अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला है वह उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला नहीं होता ।

§ ५७५. शंका-अनुत्रृष्ट स्थितिविभक्तिवाला उत्रृष्ट स्थितिविभक्तिवाला क्यों नहीं होता ?

समाधान-क्योंकि एक दूसरेका परिहार करके उत्कृष्ट श्रीर श्रनुकृष्ट स्थितियाँ रहती हैं, श्रतः जो अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला है वह उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला हो सकता।

इस प्रकार यह एक अर्थपद है।

शंका-अर्थपद किसे कहते हैं ?

समाधान-कहे जानेवाले अधिकारके योनिरूपसे अवस्थित अर्थको अर्थपद कहते हैं।

\* जिसके मोहनीय प्रकृति है उसका यहाँ प्रकरण है, क्योंकि मोहनीय कर्मसे रहित जीवमें यह व्यवहार नहीं होता।

§ ५७६ यह सूत्र सुगम है।

# इस अर्थपदके अनुसार कदाचित् सब जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके अविभक्तिवाले हैं।

§ ५७७ यहाँ सूत्रमें त्राया हुत्रा 'स्यात्' शब्द 'कदाचित्' इस ऋथेमें जानना चाहिये। इससे यह सिद्ध हुत्रा कि किसी भी कालमे सब जीव मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकी भविभक्ति-वाले होते हैं।

शंका—सब जीव एक साथ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति के श्रविभक्तिवाले क्यों होते हैं ? समाधान—नहीं, क्योंकि तीव्र संक्लेशवाले जीव प्रायः करके नहीं पाये जाते हैं, अतः सब जीव एक साथ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकी अविभक्तिवाले होते हैं।

#### 🛞 सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च।

६ ५७८. कुदो ? कम्हि वि काले तिहुत्रणासेसजीवेसु श्रणुकस्सिट्टिदिविहित्तिएसु संतेसु तत्य एगजीवस्स उकस्सिट्टिदिविहित्तिदंसणादो ।

#### सिया श्रविहत्तिया च विहत्तिया च।

१५७९ कुदो १ अणंतेस अविहत्तिएस संतेस तत्थ संखेज्जाणमसंखेज्जाणं वा उक्कस्सिटिदिविहत्तिजीवाणं संभववलंभादो ।

#### \$ ₹ 1

# 🕸 अणुक्कस्सियाए हिंदीए सिया सन्वे जीवा विहत्तिया।

९ ५८१. कुदो, उक्कस्सिटिदिविहत्तिएहि विणा तिहुवणासेसजीवाणमणुक्कस्स-टिदीए चेव अवटिदाणं किम्ह वि काले उवलंभाटो ।

#### िसया विहत्तिया च अविहत्तिओ च।

\* कदाचित् बहुत जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके अविभिक्तवाले होते हैं श्रीर एक जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाला होता है।

§ ५०८. शंका-ऐसा क्यों होता है ?

समाधान-क्योंकि किसी भी कालमें तीन लोकके सब जीवोंके अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति-वाले रहते हुए उनमेंसे एक जीव उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला देखा जाता है।

\* कदाचित् बहुत जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिस्रविभिक्तवाले होते हैं स्रौर बहुत जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले होते हैं ।

६ ५७६. शंका-ऐसा क्यों होता है ?

समाधान—उत्कृष्ट स्थिति अविभक्तिवाले अनन्त जीवोंके रहते हुए उनमें कदाचित् संख्यात या असंख्यात जीव उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले पाये जाते हैं।

#### \* 3 1

§ ५८० शंका-यहां पर तीनका ऋंक किसलिये रखा है ?

समाधान-इस प्रकार यहाँ पर ये तीन ही भंग होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये यहां पर तीनका श्रंक रखा है।

कदाचित् सब जीव मिथ्यात्वकी श्रानुत्कृष्ट स्थितिविभिनतवाले होते हैं।

९ ५ ५१. शंका-ऐसा क्यों होता है ?

समाधान -क्योंकि किसी भी कालमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके बिना तीन लोकके सब जीव अनुत्कृष्ट स्थितिमें ही विद्यमान पाये जाते हैं।

\* कदाचित बहुत जीव मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले होते हैं और एक जीव मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थिति अविभक्तिवाला होता है। § ५८२. कुदो १ एक्केण श्रशुक्कस्सिट्टिदीए अविहर्त्तिएण सई सथलजीवाण-मणुक्कस्सिट्टिदिविहत्तियाणग्रुवलंभादो ।

# ि सिया विहत्तिया च श्रविहत्तिया च।

६ ५८३ कुदो १ अणंतेहि अग्रुक्कस्सिटिदिविद्दत्तिएहि सह संखेज्जासंखेज्जाण-मुक्कस्सिटिदिविद्यत्तियाणमुबलंभादो ।

#### 🕸 एवं सेसाणं पि पयडीणं कायव्यो ।

९ ५८४ जहा मिच्छत्तस्स णाणाजीवेहि भंगविचयपरूवणा कदा तहा सेसपय-डीणं हि कायच्या ।

६ ५८२. शंका-एसा क्यो हाता है ?

समाधान—क्योंकि अनुत्कृष्ट स्थिति आविभक्तिवाले एक जीवके साथ सब जीव अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले पाये जाते हैं।

\* कदाचित् बहुत जीव मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले होते हैं और बहुत जीव मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थिति अविभिक्तवाले होते हैं।

६ ५=३. शंका-ऐसा क्यों होता है ?

समाधान-क्योंकि कदाचित् अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले अनन्त जीवोंके साथ संख्यात या असंख्यात उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव पाय जाते हैं।

इसी प्रकार शेप प्रकृतियोंकी अपेक्षा भी कथन करना चाहिये।

९ ५८४ जिस प्रकार नाना जीवोंकी ऋषेत्ता मिथ्यात्वकी भंगविचयप्ररूपणा की है उसी प्रकार शेप प्रकृतियोंकी भी करनी चाहिये।

६ ४८५ इस प्रकार यतिवृपभ आचार्यके द्वारा सूचित किये गये अर्थकी उच्चारणाचार्यने वालजनोंके अनुमहके लिये जो प्ररूपणा की है उसे कहते हैं—नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेंसे उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आघनिदेश और आदेशनिदेश । उनमेंसे आघकी अपेक्षा अद्वाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा कदाचित सब जीव अविभक्तिवाले होते हैं, कदाचित बहुत जीव अविभक्तिवाले और वहुत जीव विभक्तिवाले होता है । कदाचित बहुत जीव विभक्तिवाले होते हैं । अनुत्कृष्ट स्थितकी अपेक्षा कदाचित् सब जीव विभक्तिवाले होते हैं । कदाचित् वहुत जीव विभक्तिवाले और एक जीव अविभक्तिवाले होते हैं । कदाचित् बहुत जीव विभक्तिवाले और वहुत जीव अविभक्तिवाले होते हैं । इसी प्रकार अनाहारकमार्गणासक

च । एवं णेदव्यं जाव अणाहारए ति । णवरि मणुसश्चपज्ज ० उक्कस्सिट्टिए सिया मन्वे जीवा अविहत्तिया, सिया सन्वे जीवा विहत्तिया, सिया एगो जीवो स्वविहत्तियो, सिया एगो जीवो दिहत्तियो। एवमेदे चत्तारि एगसंजोगभंगा । दुसंजोगभंगा वि एत्तिया चेव । सन्वभंगसमासो अह ८ । ब्रणुक्कस्सस्स वि एवं चेव परूवेदव्वं । एवं वेउव्वियमिस्स०-आहार०-आहारिमस्स० अवगद० अकसा०-सहुम०-जहाक्खाद०-उवसम०-सासण० सम्मामि० ।

# एवमुकस्सओ णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमो समत्तो ।

# अ जहरुएए भंगविचए पयदं ।

लेजाना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकों में उत्कृष्ट स्थितिकी अपेचा कदाचित् सब जीव अविभिक्तवाले, कदाचित् सब जीव विभिक्तवाले, कदाचित् एक जीव अभिक्तवाला, कदाचित् एक जीव विभिक्तवाला इस प्रकार ये एक संयोगी चार भंग होते हैं। तथा द्विसंयोगी भंग भी इतने ही होते हैं। इस प्रकार सब भंगोंका जोड़ आठ होता है द। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेचा भी इसी प्रकार कथन करना चाहिये। इसी प्रकार वैकियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदवाले, अकपायी, सूच्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, उपशमसम्यग्दिष्ट, सासादनसम्यग्दिष्ट और सम्यग्मिण्यादिष्ट जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — ताना जीवोंकी अपेजा भंग विचयानुगममें दो बात झातव्य हैं। प्रथम यह कि एक जीवमें उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थिति एक साथ नहीं पाई जाती । श्रीर दूसरी यह कि अनुकृष्ट स्थितियाले नाना जीव तो सर्वदा रहते हैं किन्तु उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाला कदाचिन् एक भी जीव नहीं होता, कदाचित एक होता है और कदाचित अनेक होते हैं Dडस प्रकार इन दी विशेषताओं की ध्यानमं रायकर यदि एक बार उत्कृष्ट स्थितिकी मुख्यतासे श्रीर दूसरी बार अनुत्कृष्ट स्थितिकी मुख्यतासे भंग प्राप्त किये जाते हैं तो वे छह होते हैं। यथा—कदाचित सब जीव उत्क्रष्ट स्थिति विभक्तिवाले नहीं हैं कदाचित् बहुत जीव उत्कृष्ट स्थिति अविभक्तिवाले और एक जीव उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाला है, कदाचिन् बहुत जीव उत्कृष्ट स्थिति अविभक्तिवाले और बहुत जीव उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाले हैं, कदाचितू सब जीव अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाले हैं। कदाचित् बहुत जीव अनुकृष्ट स्थिति विभक्तिवाले और एक जीव अनुकृष्ट स्थितिअविभक्तिवाला है तथा कदाचित् अनेक जीव अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाले और अनेक जीव अनुत्कृष्ट स्थिन अविभक्तिवाले हैं। यह क्रम माहनीयकी मिथ्यात्व ऋादि सब प्रकृतियोंकी ऋपेचा बन जाता है। आदेशकी अपेचा सब मार्गणाओंमे भी यही क्रम जानना चाहिये। किन्तु मनुष्य लब्ध्यपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, त्राहारककाययोगी, त्राहारकमिश्रकाययोगी, सूद्रमसाम्परायिकसंयत, उपश्रमसम्यग्दृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि इन त्राठ सान्तर मार्गणात्र्योमें तथा मोहनीयके सत्त्वकी श्रपेत्रा अन्तरको प्राप्त हुई अपरातवेदी, अकपायी और यथाख्यातसँगत इन तीन मार्गणाओंमें एक और अनेक जीवोंके सत्त्वासत्त्वका आश्रय लेकर उत्कृष्ट स्थिति और अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेज्ञा आठ श्राठ भंग होते हैं। जो मूलमें गिनाये ही हैं।

इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेचा उत्कृष्ट भंगविचयानुगम ममाप्त हुआ। \* अब जघन्य भंगविचयका प्रकरण है।

# § ५८६ एदमहियारसंभालणसुत्तं सुगमं ।

- \* तं चेव ऋहपदं।
- § ४८७ जमद्वपदमुक्कस्सम्मि परूविदं तं चेव एत्थ परूवेयव्वं विसेसाभावादी। णवरि जहण्णमजहण्णं ति वत्तव्वं एत्तियो चेव विसेसो।
- एदेण श्रद्वपदेण मिच्छुत्तस्स सन्वे जीवा जहिएणयाए दिदीए सियाश्रविहत्तिया ।
- - \* सिया ऋविहत्तिया च विहत्तिश्रो च।
- § ५८९. कुदो ? मिच्छत्तअजहण्णद्विदिधारएहि सह कम्हि वि काले एकस्स जीवस्स जहण्णद्विदिधारयस्युवलंभादो ।
  - \* सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च।
- - § . प्रधिकारके सम्हालनेके लिये यह सूत्र आया है जो सुगम है।
  - # यहां भी वही अर्थपद हैं।
- ि ५८० जो ऋर्थपद उत्कृष्टमें कहा है वही यहां कहन। चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट ऋौर ऋनुत्कृष्ट के स्थानमें जघन्य ऋौर ऋजघन्य कहना चाहिये।
- अ इस अर्थपदके अनुसार कदाचित् सब जीव मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके अविमक्तिवाले हैं।
- § ५८८ क्योंकि एक निपेककी दो समय काल प्रमाण स्थितिको धारण करनेवाले मिथ्यात्वके चपक जीवोंके विना मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिमें ऋवस्थित सब जीव कभी भी पाये जाते हैं।
- ॐ कदाचित् बहुत जीव मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके अविभक्तिवाले हैं श्रीर एक जीव मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाला है।

§ ४८६. शंका-ऐसा क्यों है ?

समाधान-क्योंकि किसी भी कालमें मिथ्यात्वकी अजधन्य स्थितिको धारण करनेवाले जीवोंके साथ जधन्य स्थितिको धारण करनेवाला एक जीव पाया जाता है।

\* कदाचित् बहुत जीव मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिके श्रविभक्तिवाले हैं और बहुत जीव मिध्यात्वको जघन्य स्थिति विभक्तिवाले हैं।

§ ५६०. शंका-ऐसा क्यों है ?

समाधान-क्योंकि किसी भी कालमें अजधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके साथ जधन्य स्थितिविभक्तिवाले संख्यात जीव पाये जाते हैं। इस प्रकार यहां तीन भंग होते हैं।  अजहिण्णियाए हिंदीए सिया सन्वे जीवा विहिनाया। सिया विह-निया च अविह तिओ च। सिया विहिनाया च अविहितिया च।

§ ५६१ एवमेदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि सुगस्राणि । भा

**ॐ एवं तिरिण भंगा**।

६ ५९२ एदं पि सुगमं।

**\* एवं सेसाणं पयडीणं कायव्वो ।** 

१ ४९३ जहा मिच्छत्तस्स णाणाजीवभंगविचयपरूपणा कदा तहा सेसपयडीणं
 पंगविचओ कायव्वो ।

§ ५६५ जहण्णए पयदं । दुविहो िएहेसी—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण श्रद्धावीसण्हं पयदीणं जहिए एवं ए हिंदीए सिया सन्वे जीवा अविहत्तिया, सिया अविहत्तिया च विहत्तिश्रो च, सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च । श्रजहण्णहिंदीए सिया सन्वे जीवा विहत्तिया, सिया विहत्तिया च अविहत्तिश्रो च, सिया विहत्तिया च श्रविहत्तिया च । एवं सत्तसु पुढवीसु पंचिंदियतिश्विख-पंचिंठतिरिठपज्जठ-पंचिंठ-

# मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिकी अपेत्रा कदाचित् सब जीव विभक्तिवाले हैं। कदाचित् बहुत जीव विभक्तिवाले हैं और एक जीव अविभक्तिवाला है। कदाचित् बहुत जीव विभक्तिवाले हैं और बहुत जीव अविभक्तिवाले हैं।

§ ५६१ इस प्रकार ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं।

अ इस प्रकार तीन भंग होते हैं।

६ ५६२. यह सूत्र भी सुगम ह।

🕸 इसी प्रकार शेष प्रकृतियोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये।

६ ५६३ जिस प्रकार नाना जीवोंकी अपेन्ना मिथ्यात्वकी भंगविचयप्ररूपणा की है उसी प्रकार शेष प्रकृतियोंका भी भंगविचय करना चाहिये।

§ ५६४. इस प्रकार यतिवृषभ त्राचार्यके द्वारा सूचित किये गये त्रथोंका उन्नारणाचार्यने मन्दबुद्धि जनोंके त्रानुप्रहके लिये जो व्याख्यान किया है त्रब उसे कहते हैं —

६ ५६५ अब जयन्य स्थितिका प्रकरण है । उसकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—
भोधनिर्देश और आदेशनिर्देश । श्रोधसे श्रद्धाईस प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिकी अपेत्ता कदाचिन्
सब जीव अविभक्तिवाले हैं । कदाचिन् बहुत जीव श्रविभक्तिवाले हैं श्रोर एक जीव विभक्तिवाला
है । कदाचिन् बहुत जीव श्रविभक्तिवाल हैं श्रोर बहुत जीव विभक्तिवाले हैं । श्रजधन्य स्थितिकी
श्रपेत्ता कदाचिन सब जीव विभक्तिवाले हैं । कदाचिन् बहुत जीव विभक्तिवाले हैं श्रोर एक जीव
श्रविभक्तिवाला है । कदाचिन् बहुत जीव विभक्तिवाले हैं श्रोर बहुत जीव श्रविभक्तिवाले हैं । इसी
प्रकार सातों प्रथिवियोंमें रहनेवाले नारकी, पंचेन्द्रिय तियंच, पंचेन्द्रिय तियंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय

तिरिक्खजोिषाणि - पंचि • तिरि० अपज्ज ० - मणुसतिय-सन्वदेव - सन्वविगिर्ज्ञिदय० - सन्व-पंचिदिय-वादरपुढविपज्ज ० - बादरआउपज्ज ० - बादरते उपज्ज ० - बादरवण-एफदिपत्तेयपज्ज ० - सन्वतस - पंचमण ० - पंचिवच ० - कायजोिग ० - अरेरालि० - वेउन्विय ० -इत्थि० - पुरिस० - एवुंस० - चत्तारिक० - विहंग ० - आभिणि० - सुद० - ओहि० - मणपज्ज ० -संजद० - सामाइय - छेदो ० - परिहार० - संजदासंजद० - चक्खु० - अचक्खु० - ओहिदंस० - तेउ० -पम्म० - सुक्क० - भवसिद्धि० - सम्मादि० - खड्य० - वेदय ० - सण्णि० - आहारए ति ।

§ ५६६. तिरिक्खगईए तिरिक्ख॰ मिच्छत्त०-बारसक०-भय-दुगुंछा० ज० अज्ञ० णियमा अत्थि । संसपयडीणमोघं । मणुसग्रपज्ज० उक्क॰भंगो सन्वपयडीणं । एवं वेडिव्वियमिस्स०-आहार०-ग्राहारमिस्स०-अवगद०-स्रकसा०-सुहुम०-जहाक्खाद०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०दिहि त्ति ।

\$ ५६७. एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० जह० अजह० णियमा ऋत्थि । सम्मत्त-सम्मामि० श्रोघं० । एवं बादरेइंदिय-वादरेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमेइंदिय-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमेइंदिय-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमेइंदिय-वादरपुढविअपज्ज०-सुहुमपुढवि० - सुहम-पुढविपज्जत्तापज्जत्त-आउ०-वादरआउ०-वादरश्राउश्रपज्ज०-सुहुमआउ-सुहुमश्राउपज्जत्ता- तिर्यंच यानिमती, पंचेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्त, सामान्य मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यनी, सब देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, बादर प्रथिबोकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर श्रिक्तवायक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकश्रारे पर्याप्त, सब त्रस, पांचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी, श्रोदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवद्याले, पुरुपवद्वाले, नपुंसकवद्वाले, चारों कपायवाले, विभंगज्ञानी, श्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार-विद्युद्धिसंयत, संयतासंयत, चजुदर्शनवाले, श्रचतुदर्शनवाले, श्रवधिदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, श्रुक्ललेश्यावाले, भव्य, सम्यग्द्यि, चायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, संज्ञी श्रोर श्राहारक जीवोंक जानना चाहिये।

इ ५६६. तियेचगितमें तियेचोमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुण्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। तथा शेप प्रकृतियोका कथन श्रोघके समान है। मनुष्य अपयाप्तकोमे सब प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार वैकियिकमिश्रकायोगी, श्राहारककाययोगी, श्राहारकिमश्रकाययोगी, श्रपगतवेदी, श्रकषायी, सूद्रमसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, उपश्मसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि श्रीर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये।

§ ५६७ एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य और श्रज्ञचन्य स्थिति विभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग श्रोघके समान हैं। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, बादर एकेन्द्रिय श्रप्याप्त, सूक्तम एकेन्द्रिय श्रप्याप्त, सूक्तम एकेन्द्रिय श्रप्याप्त, प्रविवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक, सूक्तम एकेन्द्रिय पर्याप्त, सूक्तम एकेन्द्रिय श्रप्याप्त, प्रथिवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक श्रप्याप्त, सूक्तमप्रथिवीकायिक श्रप्याप्त, जलकायिक, वादरजलकायिक, बादरजलकायिक श्रप्याप्त, सूक्तमजलकायिक, सूक्तमजलकायिक, बादरजलकायिक श्रप्याप्त,

पज्जत्त-तेउ०-बादरतेउ०- बादरतेउ०अपज्ज०-सुहुमतेउ०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-बाउ०-बादरबाउ०-बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउ०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्कदि०-णिगोद-वादर - सुहुमपज्जतापज्जत्त - बादरवणप्कदिपत्तेयसरीरअपज्ज० - त्रोरालियमिस्स-मदि-सुद्रअण्णाण०-मिच्छादि०-असण्णि त्ति । णवरि पुढवि-आउ०-तेउ०-बाउ०-बादर-वणप्कदिकाइयपत्तेयसरीराणं सगसगबादरपउजत्तभंगो। त्रोरालियमिस्सादिसु सत्तणो-कसायाणं तिरिक्कोघं। त्रभव० एवं चेव । णवरि सम्मत्त०-सम्मामिच्छनं णिरथ ।

६ ५६८. कम्मइय० सम्म०-सम्मामि० अह भंगा । सेस० जहण्ण० णियमा त्र्यतिथ । एवमणाहारीणं । त्र्रसंजद० तिरिक्खोघं । णवरि मिच्छत्तमोघं । किण्ड-णील-काउ० तिरिक्खोघं ।

#### एवं जहण्णस्रो णाणाजीवभंगविचयाणुगमो समत्तो । एवं णाणाजीवेहि भंगविचस्रो समत्तो ।

सूच्मजलकायिक अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादरअग्निकायिक, वादरअग्निकायिक अपर्याप्त, सूच्मअग्निकायिक, सूच्मअग्निकायिकपर्याप्त, सूच्मअग्निकायिकअपर्याप्त, वायुकायिक, बादरवायुकायिकअपर्याप्त, सूच्मवायुकायिकअपर्याप्त, सूच्मवायुकायिकअपर्याप्त, सूच्मवायुकायिकअपर्याप्त, सूच्मवायुकायिकअपर्याप्त, सूच्मवायुकायिकअपर्याप्त, सूच्मविगोद, सूच्मविगोदपर्याप्त, सूच्मविगोदपर्याप्त, सूच्मविगोदपर्याप्त, सूच्मविगोदपर्याप्त, सूच्मविगोदअपर्याप्त, बादरवनस्पतिकायिकप्रत्येकशरीर अपर्याप्त, औदारिक
मिश्रकाययांगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु
इतनी विशेषता है कि पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और बादरवनस्पतिकायिकप्रत्येशरीर जीवोंके अपने अपने बादर पर्याप्तकोंके समान मंग है। तथा औदारिकमिश्रकाययोगी आदिमें सात नोकपायोंका मंग सामान्य तिर्यचोंके समान है। अभव्योंमें भी इसी प्रकार
जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि उनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्व नहीं हैं।

६ ५६८ च कार्मणकाययोगियोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी अपेचा आठ भंग होते हैं। तथा शेप प्रकृतियोंकी अपेचा ज्ञघन्य श्रोर अज्ञघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिये। असंयतोंमें सामान्य तिर्यचोक समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके मिध्यात्वका भंग आघके समान है। कृष्ण, नील और कापोतलेश्या-वालोमें सामान्य तिर्यचोंके समान जानना चाहिये।

विशेषार्थ—पहले ओघसे उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेचा जिस प्रकार छह भंग बतला आये है उसी प्रकार जघन्य और अजघन्य स्थितिकी अपेचा छह भंग जानने चाहिये। तथा यह आघ प्रक्रपणा सामान्य नारिकयोंसे लेकर आहारक तक मूलमं जितना मार्गणाएं गिनाई हैं उनमे अपना अपनी जघन्य और अजघन्य स्थितिकी अपेचा घटित हो जाती हैं, अतः इनकी प्रक्रपणाको ओघके समान कहा। तिर्यचोमे मिध्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी आदेशसे जो जघन्य और अजघन्य स्थिति बतलाई हैं उसकी अपेचा उनमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थिति बतलाई हैं उसकी अपेचा उनमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थिति विभक्तिवाले और अवभक्तिवाले नाना जीव नियमसे हैं। तथा उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थिति विभक्तिवाले और अवभक्तिवाले नाना जीव नियमसे हैं ये दो भग ही बनते हैं। हाँ इनके अतिरिक्त शेष

\$ ५६६. भागाभागाणुगमो दुविहो-जहण्णओ उक्कस्सत्रो च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण ब्रादेसेण य । तत्थ ब्रोघेण ब्रद्धावीसण्हं पयडीएामुक्क्स्स-हिदिविहत्तिया सन्वजीवाणं केविड्यो भागो १ ब्रण्यंतिमभागो । ब्रण्यंक ० सन्वजी० के० १ अणंता भागा । णवरि सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० सन्वजी० असंखेज्जदिभागो । ब्रण्यंक ० सन्वजीवाणं ब्रसंखेज्जा भागा । एवं तिरिक्ख-सन्वण्हंदिय-वणप्पदि-णिगोद-कायजोगि०-ब्रोरालिय०-ब्रोरालिय०मिस्स०-कम्मइय०-णवुंस०-चत्तारिक०-मदि-सुद्यण्णा०-असं-जद०-अचक्खु०-किण्ह०-णील०-काड०-भवसिद्धि०-मिन्ब्रादिहि-ब्रसण्णि-ब्राहारि-ब्रणाहारि ति । अभव० एवं चेव । णवरि सम्मत्त-सम्मामिन्ब्रत्ताणि णित्थ ।

§ ६००, आदसेण णेरइएसु सन्वपयदीणसुक्क० सन्वजी० के० ? असंखेज्जिद-भागो | अणुक्क० असंखेज्जा भागा | एवं सन्वणेरइय-सन्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुस-मणुस-प्रकृतियोंकी अपेचा श्रोपके समान छहों भंग बन जाते हैं । मनुष्य अपर्याप्तकोसे लेकर सम्यग्निध्या-दृष्टि तक जितनी भी मार्गणाएं मृलमें गिनाई हैं उनमें जिस प्रकार उत्कृष्ट और अनुक्कृष्ट स्थितिकी अपेचा आठ आठ भंग वतला आये हैं उसी प्रकार जघन्य और अजघन्य स्थितिकी अपेचा आठ आठ भंग जानने चाहिये । एकेन्द्रियों में आदेशकी अपेचा जो उनकी जघन्य और अजघन्य स्थिति बतलाई है उसकी अपेचा मिध्यात्व, संालह कपाय और नौ नोकपायोंके सामान्य तिर्यचोंके समान दो भंग प्राप्त होते हैं । वे दो भंग पहले बतलाये ही हैं । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी अपेचा ता यहां भी ओघक समान छह भंग ही प्राप्त होते हैं । बादर एकेन्द्रियोंसे लेकर असंज्ञी तक मूलमें जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमेसे सामान्य पृथिवी आदि पांच मार्गणाओको छोड़कर शेषमें इसी प्रकार जानना चाहिये । इसी प्रकार आगे भी जिन मार्गणाओंमें जिन प्रकृतियोंकी स्थिति सम्बन्धी जो विशेषता बतलाई है उसको ध्यानमें रखकर भंगविचयकी प्रकृपणा करनी चाहिये ।

> इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेत्ता जघन्य विचयानुगम समाप्त हुत्रा। इस प्रकार नाना जीवोंकी ऋपेत्ता भंगविचय समाप्त हुत्रा।

\$ ५६६ भागाभागानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । पहले यहां उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है-आघिन्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे आघकी अपेना अद्वाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? अनन्त बहुभाग हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्तव और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवेंभाग हैं । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवेंभाग हैं । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवेंभाग हैं । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभाग हैं। इसी प्रकार तिर्यंच, सब एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद, काययोगी, औदारिककाययगी, औदारिक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपु सकवेदी, चारों कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचचुदर्शनवाले, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, भव्य, मिश्यादृष्टि, असंबी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। अभव्योंके भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्तव और सम्यग्मिण्यात्व ये दो प्रकृतियां नहीं हैं।

§ ६००. श्रादेशकी श्रपेत्ता नारिकयोंमे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? श्रासंख्यातवें भाग हैं । तथा श्रानुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव श्रासंख्यात बहुभाग हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, मनुष्यश्रप्राप्त, सामान्य देव,

श्रपज्ज०-देव०-भवणादि जाव श्रवराइद०-सव्वविगलिदिय० सव्वयंचिदिय-चत्तारिकाय-बादरवणप्पदिपत्तेयसरीर-सव्वतस-पंचमण०-पंचविच०-वेउव्वि०-वेउ०भिस्स०-इत्थि०-पुरिस०-विद्दंग०-आभिणि०-सुद०-श्रोहि०-संजदासंजद०-चक्खु०-श्रोहि०-तेउ०-पम्म०-सुक०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-सण्णि ति। मसुसपज्ज०-मणुसिणीसु सव्वपयडीणसुक० सव्वजी० के० १ संखेज्जदिभागो । असुक० सव्वजी० के० १ संखेज्जा भागा। एवं सव्वद्द०-आहार०-आहारमिस्स०-श्रवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०।

#### एवप्रकस्तओ भागाभागाणुगमो समत्तो ।

भवनवासियों में लेकर अपराजित तकके देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, चारों स्थावरकाय, सभी बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर, सब त्रस, पांचों मनायागी, पांचों वचनयोगी, वैक्रियिक काययोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, स्त्रोवेदवाले, पुरुपवदवाले, विभंगज्ञानी, आमिनवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी अवधिज्ञानी, संयतासंयत, चजुवर्शनवाले, अवधिद्र्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, श्रुतज्ञानी अवधिज्ञानी, संयतासंयत, चजुवर्शनवाले, अवधिद्र्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, श्रुकललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्मसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिण्यादृष्टि श्रोर संज्ञी जीवोके जानना चाहिये। मनुष्यपर्याप्त श्रोर मनुष्यतिवोमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिविमक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं १ संख्यात बहुभाग हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिके देव, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदवाले, श्रक्षायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदापस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत श्रीर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ-- त्रोघसे छन्त्रीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीव त्रानन्त है तथा सम्यवस्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव श्रसंख्यात हैं। यह तो प्रकृतियोंके सत्त्वकी श्रपेत्ता संख्या हुई । किन्तु उन्क्रप्ट स्थिति स्रौर त्र्यनुन्क्रष्ट स्थितिकी स्रपेन्ना विचार करने पर छव्वीस प्रकृतियोंकी उत्क्रुष्ट स्थितिवाले जीव ऋसंख्यात प्राप्त होते हैं ऋौर ऋनुत्कृष्ट स्थितिवाले ऋनन्त, इसलिये भागाभागकी अपेता यह बतलाया है कि छन्दीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंसे उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव श्रनन्तर्वे भाग प्रमाण है । तथा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निष्यात्वकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव प्रत्येक असंख्यात हैं फिर भी अनुत्कृष्ट स्थितवालोंसे उत्कृष्ट स्थितवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, इसलिये भागाभागको ऋपेना यह बतलाया है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी सत्तावाले जितने जीव हैं उनमेंसे असंख्यातवें भागप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिवाले हैं श्रीर श्रसंख्यात बहुभाग प्रमाण अनुत्कृष्ट स्थितिवाले हैं। मार्गणाओं की अपेचा सब जीव तीन भागोंमें बट जाते हैं 😎 मागणावाले जीव अनन्त हैं, कुछ मार्गणावाले जीव असंख्यात श्रीर कुछ मार्गणावाले जीव संख्यात । इनमेंसे ऋनन्त संख्यावाली जितनी भी मार्गणाएं हैं उनमें यह स्रोघ प्ररूपणा बन जाती है, इसलिये उनकी प्ररूपणाका श्रोघके समान कहा। वे मार्गणाएं मूलमें गिनाई ही हैं। किन्तु श्रमव्योंके सम्यक्त्व श्रौर सम्यग्मिध्यात्वका सत्त्व नहीं पाया जातो, श्रतः इनमे उक्त प्रकृतियोंकी ऋपेत्ता भागाभाग नहीं कहना चाहिये। ऋब रहीं ऋसंख्यात संख्यावाली ऋौर संख्यात संख्यावाली मार्गणाएं सो असंख्यात संख्यावाली मार्गणाश्रोंमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव ऋसंख्यात बहुभाग प्रमाण श्रोर उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण

§ ६०१ जहण्णए पयदं । दुविहो णिड्देसो— त्रोघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० जह० सव्वजी० के० १ त्रणंतिमभागो । अज० सव्वजी० के० १ त्रणंता भागा । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क०भंगो । एवं कायजोगि०-श्रोरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-श्रचक्खु०-भवसि०-श्राहारि त्ति ।

६०२, आदेसेण णेरइएस सन्त्रपयडीणं जह॰ अज० उक्कस्सभंगो । एवं सन्त्रपंचि० तिरिक्ख-सन्त्रमणुस-सन्त्रदेव-सन्त्रविग्रलिदिय-सन्त्रपंचिदिय-चत्तारिकाय-बादरवणप्फदिपत्तेय०-सन्त्रतस॰-पंचमण॰-पंचवचि०-वेउन्त्रिय॰-वेउ०भिस्स०-आहार०-आहारभिस्स०-इत्थि०-पुरिस०-अवगद०- अकसा०-विहंग०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय - छेदो० - परिहार०-सुहुम० - जहाक्खाद० - संजद।संजद॰-चक्खु०-ओहिदंस०-तिण्णिले०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-सण्णि ति ।

§ ६०३. तिरिक्ख० णारयभंगो । णवरि अणंताणु०चउक०-सत्तणोक० स्रोघं । जानने चाहिये । तथा संख्यात संख्यावाली मार्गणात्रोमें सब प्रकृतियोकी त्र्रातुन्द्रष्ट स्थितिवाले जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण त्र्योर उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव संख्यात एक भागप्रमाण होते हैं। श्रासंख्यात संख्यावालीं त्र्योर संख्यावालीं मार्गणात्रोके नाम मूलमे गिनाये ही हैं।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट भागाभागानुगम समाप्त हुआ।

§ ६०१ अब जघन्य भागाभागका प्रकरण है। उसकी अपेद्धा निर्देश दो प्रकारका हैं — अग्रेघनिर्देश और आदेशनिर्देश। अग्रेघकी अपेद्धा मिध्यात्व, सोलह कवाय और नौ नोकषायों की जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं १ अनन्तवे भाग हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंक कितने भाग हैं १ अनन्त बहुभाग हैं। सम्यक्तव और सम्यिग्मध्यात्वका भंग उत्कृष्टक समान हैं। इसी प्रकार काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकविद्याले, चारों कपायवाले, अच्चुद्रश्चित्वाले, भव्य और आहारकोक जानना चाहिये।

§ ६०२ त्रादेशकी त्रपंचा सब नारिकयोंमें सब प्रकृतियोकी जघन्य और श्रजघन्य स्थिति-विभक्ति त्रपंचा भंग उत्कृष्टकं समान है। इसी प्रकार सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सब मनुष्य, सब देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, सब चार स्थावरकाय, सब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्यंकशरीर, सब त्रस, पांचो मनायागी, पाचो वचनयोगा, वैक्षियंककाययोगी, वैक्रियिकिमिश्र-काययोगी, आहारककाययोगी, श्राहारकोमश्रकाययोगी, स्त्रीवद्वाले, पुरुषवेदवाले, अपगतवेदवाले, श्रक्षायी, विभंगज्ञानी, श्राभिनिश्राधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, स्त्रविद्वाली, मनःप्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छदोपस्थापनासंयत, परिहार्रविद्याद्धस्यत, सूद्मसापरायिकसंयत, यथाख्यात संयत, संयतासंयत, चलुदशनवाले, श्रवधिदशनवाले, तीन लेश्यावाले, सम्यग्टिष्ट, चाियक-सम्यग्टिष्ट, वेदकसम्यग्टिष्ट, उपशमसम्यग्टिष्ट, सासादनसम्यग्टिष्ट, सम्यग्निध्यादिष्ट श्रीर संही जीवोक जानना चाहिय।

§ ६०२ तियंचोंमें नारिकयोंके समान भंग हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि उनमें अनन्ता-तुबन्धी चतुष्क और सात नोकषायोंकी अपेचा भंग श्रोधके समान हैं । इसी प्रकार कृष्ण, नील एवं किण्ह०-णील-काउलेस्से ति । एइंदिय० णारयभंगो । एवं वणप्फदि०-णिगोद-कम्मइय०-ऋणाहारि ति । ओरालिविभस्स० निरिक्खोधं । एवरि अणंताणु० भिच्छत्त-भंगो । मदि-सुदश्रण्णा०-मिच्छादि० श्रसण्णि ति । श्रसंजद० निरिक्खोधं । एवरि-मिच्छत्त० ओधं । अभव० छव्वीसपयडीएां ओरालियमिस्सभंगो ।

#### एवं भागाभागाणुगमी समत्तो ।

श्रीर कापातलेश्यावाले जीवोंक जानना चाहिये। एकेन्द्रियोंमें नारिकयोंक समान भंग हैं। इसी प्रकार सब वनस्पतिकायिक, सब निगाद जीव, कामण्काययांगी श्रीर श्रनाहारकोंक जानना चाहिये। श्रीदारिकमिश्रकाययांगियोंमें सामान्य निर्यचोके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अतन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग भिथ्यात्वके समान है। इसी प्रकार मत्यज्ञानी, श्रुनाज्ञानी, मिथ्यादिष्ठ और श्रसंज्ञियोंके जानना चाहिये। श्रसंयतोंमें सामान्य तिर्यचोंके समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वका भंग श्रोधके समान है। श्रभव्योमें छक्वीस प्रकृतियोंका भंग श्रीदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है।

विशोषार्थ---भिष्यात्व, बारह कपाय और ती नोकपायवाले जीव अनन्त हैं। किन्तु इनमे आयसे जवन्य स्थितिवाले जीव संख्यात हैं श्रीर श्रजवन्य स्थितिवाले जीव श्रनन्त हैं. श्रतः भागाभागकी अपेद्मा उक्त प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिवाले जीव अनन्तवें भाग प्राप्त होते हैं और श्रजधन्य स्थितिवाले जीव श्रनन्त बहुभाग प्राप्त होते हैं। श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जधन्य स्थितिवालं जीव असंख्यात हैं ऋौर अजघन्य स्थितिवाले जीव अनन्त । फिर भी भागानागकी अपेना इनका भी वहां कम बन जाता है जा पूर्वम मिश्यात्व आदिकी अपेना बतलाया है। तथा सम्यक्त और सम्प्रान्थ्यात्वकी सत्तावाले जीव असंख्यात है किन्तु इनमे सम्यक्तवकी जधन्य स्थितिवार्त्र जीव संख्यात ऋोर सम्बर्ग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थितिवाले ऋसंख्यात हैं तथा दोनोंकी अजघन्य स्थितिवाले जीव असंख्यात है। अतः यहां उत्कृष्ट के समान यह भागाभाग बन जाता हैं कि उक्त दोनों श्रकृतियोंको जघन्य स्थितियाले जीव असंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर श्रजघन्य स्थितिवाले जीव असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। मूलमे काययागी आदि जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें यह त्रांघ प्रह्मपूर्णा घटित हो जाती है, अतः उनके कथनका श्रांघके समान कहा। अदिशकी अपेना नार्राकयोमं सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितवालोंक भागाभागको जो उत्कृष्टकं समान कहा उसका यह तात्पर्य है कि जिस प्रकार सब प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थिति-वाले जीव असंख्यात बृहभागप्रमाण हैं और उत्हृष्ट स्थितिवाले जीव असंख्यातर्वे भागप्रमाण हैं उसी प्रकार यहां भी जानना चाहिए। तथा सब पंचेन्द्रियोंसे लंकर संज्ञी तक और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार ज्ञानना यह जो कहा है सो इसका यह तात्पर्य नहीं कि इनमें नारिकयोंके समान भागाभाग होता है किन्तु इसका यह तात्वये हैं कि इन मागणात्रामें जिस प्रकार उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपना भागाभाग कहा है उसी प्रकार जवन्य और अजधन्य स्थितिका अपेचा भी भागाभाग कहना चाहिये, क्योंकि इन मार्गणात्रामें बहुतसी मार्गणाएं अनन्त संख्याबाली हैं, बहुतसी श्रसंख्यात संख्याबाली हैं तथा बहुतसी सख्यात संख्यातवाली हैं अतः इन सबमे नारिकयोंकं समान भागाभाग बन भी नहीं सकता। तथा इन मार्गणात्रोंन जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिवालोंकी संख्याको देखनेसे भी वहां श्रिभिप्राय फलित होता है जो इसने दिया है। तिर्यंचगतिमे श्रनन्तानुबन्धी चतुष्क और सात नोकपायोंका छोड़कर रोष सब मर्क्सतयोंकी ऋषेन्ना भागाभाग नारकियांक समान हे सो इसका यह ऋभिपाय है कि जिस § ६०४. परिमाणं दुविहं — जहण्णमुक्कस्सं च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिहेसोश्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण छव्वीसपयडीणमुक्क केत्तिया ? असंखेज्जा । श्रगुक्क केत्तिया ? अपंखेज्जा । श्रगुक्क केत्तिया ? अणंता । सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क०-श्रगुक्क० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं तिरिक्ख-सव्वएइंदिय-वणप्कदि-णिगोद-कायजोगि-श्रोरालिय०-ओरालियमिस्स-कम्मइय०-णवुम० चत्तारिक०-मदि-सुदश्रण्णा०-श्रसंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०मिच्छादि०-असण्णि०-श्राहारि-अणाहारि ति । एवमभवसि० । णवरि सम्म०-सम्मामि०
णित्थ ।

प्रकार नारिकयोमे सब प्रकृतियोकी ऋषेत्रा ऋजघन्य स्थितिवाले ऋसंख्यात बहुभागप्रमाण और जघन्य स्थितिवाले ऋसंख्यात एक भागप्रमाण हैं उसी प्रकार तिर्यचोंमें जानना चाहिये। यद्यपि तिर्यंचोंमे मिथ्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जचन्य और अजघन्य दोनों प्रकारकी स्थितिवाले जीव अनन्त हैं फिर भी जघन्य स्थितिवालोंसे अजघन्य स्थितिवाले जीव असंख्यात-गुण होनेसे उक्त व्यवस्था बन जाती हैं। तथा तिर्यचोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्क श्रीर सात नोक्रपायवाले जीयोंमे जवन्य स्थितिवालोंसे अजधन्य स्थितिवाले अनन्तगुर्ण हैं, अतः इनके कथनको ओघके समान कहा । कृष्ण, नील और कापोत लेश्यामे तिर्थचोके समान व्यवस्था बन जाती है, अतः इनके भागाभागका तियंचोंके समान कहा। एकेन्द्रियोंमे भागाभाग संबन्धी कुल व्यवस्था नारिकयोक भागाभागक समान बनती है, श्रतः इनके भागाभागको नारिकयोके भागा-भागके समान कहा। वनस्पित आदि और जितनी मार्गणाएं मूलमें गिनाई हैं उनमें भी नारिकयोंके समान भागाभाग जानना । श्रौदारिकमिश्रकाययोगमें यद्यपि भागाभाग सामान्य निर्यंचोंके समान है पर अनन्तानबन्धी चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिवालीका भागाभाग मिथ्यात्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके भागाभागक समान हैं। श्रथान् तिर्यचौमें जिस प्रकार मिध्यात्वकी अपेक्षा भागाभाग कहा है उसी प्रकार ऋौदारिकमिश्रकाययांगमे अनन्तानुबन्धीकी अपेक्षा जानना । मलमें जो मत्यज्ञानी श्रादि मार्गणाएं गिनाई है उनमें भी श्रीदारिकमिश्रकाययोगके समान भागाभाग जानना चाहिए । ऋसंयतोंकं सामान्य तिर्यंचोंके समान जानना । किन्तु इनके मिथ्यात्वकी जद्यन्य श्रीर त्राज्ञघन्य स्थितिवालोंका भागाभाग श्रोधके समान कहना चाहिये। त्राभव्योंके छब्बीस प्रकृतियोंका सत्त्व है, अतः इनके छन्वीस प्रकृतियोंकी अपेदा भागाभाग आदारकमिश्रकाययोगके समान जानना चाहिए।

#### इस प्रकार भागाभागानुगम समाप्त हुन्त्राः

इ ६०४. परिमाण दो प्रकारका है—जयन्य और उत्कृष्ट । पहले यहाँ उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेका निर्देश दो प्रकारका है—आंघनिदंश और आंदेशनिर्देश । आंघकी अपेका छन्दीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिकाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिकाले जीव कितने हैं ? असन्त हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिकाले जीव कितने हें ? असख्यात हैं । इसी प्रकार निर्यंच, सब एकेन्द्रिय, बनस्पितकायिक, निगोद, काययोगी, औदारिककायोगी, ओदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अवसुदर्शनवाले, तीन लेश्यावाले, भव्य, मिध्यादिष्ट, असंबी, आहारक और अनाहारक जोवोंके जानना चाहिये। इसी प्रकार अभव्योंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्व नहीं हैं।

६०५ श्रादेसेण णेरइएसु सञ्चपयि उक्क०-झणुक्क० केत्ति०१ असंखेज्जा। एवं सञ्चणेरइय०-सञ्चपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसश्चपज्ज०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-सञ्च-विगत्तिदिय-सञ्चपंचिंदिय-चत्तारिकाय-सञ्चतस-पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्विय०-वेउव्वि-यिमस्स-इन्थि०-पुरिस०-बिहंग०-आभिणि०-सुद०-श्रोहि०-संजदासंजद०-चक्खु०-श्रोहिदंस०-तिण्णिले०-सम्मादि०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-सण्णि ति ।

६०६ मणुसगईए मणुस॰ उक्क॰ केत्ति० १ संखेड्जा । अणुक्क॰ केत्ति० १ असंखेड्जा । एवमाणदादि जाव अवराइद्द०-खिइयदिहि ति । मणुसपड्ज०-मणुसिणी० मन्वपयडीणमुक्क०-अणुक्क० केत्ति० १ संखेड्जा । एवं सन्वह०-आहार०-आहारिमस्स० अवगद०-अकसा०-मणप्डज०-संजद०-सामाइय-छेदो० परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०। एवमुक्कस्स श्रो परिमाणाणुगमो समत्तो ।

ु ६०४ आदेशकी अपेचा नारिकयोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति-वाले जीव कितने हैं। असंख्यात हैं। इसी प्रधार सब नारकी, सब पंचेन्द्रियतियँच, मनुष्यश्वपर्याप्त, मामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्त्रारस्वर्गतककं, देव सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, सभी चार स्थावरकाय, सब त्रस, पांचो मनायोगी, पांचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिककिमिश्र-काययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुपवेदवाले, विभंगज्ञानी, श्राभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, श्रवधिज्ञानी, संयतासंयत, चनुदर्शनवाले, अवधिदर्शनवाले, तीन लेरयावाले, सम्यग्टिष्ट, वंदकसम्यग्द्रिष्ट, उपश्रमसम्यग्द्रि, सासादनसम्यग्द्रि, सम्यग्मिथ्याद्यक्ट और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये।

§ ६०६. मनुष्यगितमे मनुष्योंमे उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार आनतकल्पसे लेकर अपराजित तकके देव और ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमे जानना चाहिये। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्य-नियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभिनतवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार सर्वार्थांसिद्धिक देव, आहारककाययागी, आहारकिमिश्रकाययोगी, अपगतवंदवाले, अकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्यापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूचमसंपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोके ज्ञानना चाहिये।

विश्लोषार्थ—गुणस्थान अप्रतिपन्न सभी संसारी जीव छव्वीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले हैं। किन्तु इनमे उत्कृष्ट स्थितिवाले कारणभूत परिणामवाले जीव थोड़े हाते हैं, अतः आंघसे छव्वीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव असंख्यात और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव अनन्त कहे। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी सत्ता उपशमसम्यग्दृष्टि या वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोके पाई जाती हैं या जो इनसे च्युत हुए हैं उनके पाई जाती हैं। उसमें भी मिण्यात्वमें इनका संवयकाल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी सत्तावाले जीवोकी सामान्यसे संख्या असंख्यात ही होगी। और इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवालों में प्रत्येककी संख्या असंख्यात वन जाती हैं। मार्गणास्थानोमें राशियां तीन भागोंमें बटी हुई हैं कुछ मार्गणाएं अनन्त संख्यावाली, कुछ मार्गणाएं असंख्यात संख्यावाली और कुछ मार्गणाएं संख्यात संख्यावाली हैं। उनमें जो अनन्त संख्यावाली मार्गणाएं हैं उनमें आंघक समान व्यवस्था बन जाती हैं। जो असंख्यात संख्यावाली मार्गणाएं हैं उनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण असंख्यात ही प्राप्त होता है। किन्तु इनमें मनुष्वगित आदि कुछ

§ ६०७ जहण्णए पयदं। दुविहो णिइ सो-ओघेण आदेसेण य। श्रोघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० जह० केत्ति० १ संखेज्जा। अज० केत्ति० १ अणंता। सम्मत्त० जह० केत्ति० १ संखेज्जा। अजह० केत्ति० १ असंखेज्जा। सम्मामि० जह० अजह० के० १ असंखेज्जा। अणंताणु०चजक० जह० के० १ असंखेज्जा। अजह० के० १ अणंता। एवं कायजोगि०-आरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-अचक्खु०-भवसि०-आहारए ति ।

६०८. त्रादेसेस णेरइएसु मिच्छत्त-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० जह० त्रजह० के० ? असंखेडजा । सम्मत्त० जह० केति० ? संखेडजा । त्रजह० के० ? असंखेडजा । एवं पढमाए । विदियादि जाव छिट ति मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० जह० केति० ? संखेडजा । अजह० केति० ? असंखेडजा । सम्मत-सम्मामि०-त्र्रणंतासु०

मार्गणाएं अपवाद हैं। इसका कारण यह है कि मनुष्योंम पर्याप्त मनुष्योंके हां उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है। श्रीर उनकी संख्या संख्यात है, श्रतः सामान्यसे मनुष्योंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव संख्यात ही होंगे श्रीर श्रातृत्कृष्ट स्थितिवाले जीव श्रसंख्यात। श्रानत करूपसे लेकर अपराजित तककं देवोंमें श्रीर ज्ञायिकसम्यग्दृष्टियोंमें भी यही व्यवस्था जानना चाहिये, क्यों कि इनके श्रपनी श्रपनी पर्यायके प्राप्त होने के पहले समयमे ही उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है पर इनमें मनुष्यगतिसे ही जीव उत्पन्न होते हैं परन्तु श्रच्युत स्वर्गतक सम्यग्दृष्टि तिर्यच भी उत्पन्न होते हैं श्रीर एसे जीवोंकी संख्या संख्यात है, श्रतः उक्त मार्गणाश्रोमें भी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण संख्यात श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण श्रसंख्यात बन जाता है। श्रव रहीं संख्यात संख्यावाली मार्गणाएं सा उनमं उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट दोनों स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण संख्यात होगा यह स्पष्ट ही है। श्रनन्त, श्रसंख्यात श्रीर संख्यात संख्यावाली मार्गणाश्रोंका मृलमें उल्लेख किया ही है।

#### इस प्रकार दुत्कृष्ट परिमाणानुगम समाप्त हुआ।

§ ६०७ अब जघन्य परिमाणानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका हैंअग्रेघनिर्देश और अग्रेदशनिर्देश। आग्रेघकी अपेचा मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नांकषायोंकी
जघन्य म्थातिविभिक्तवाले जीव कितने हैं? सख्यात है। तथा अजघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीव
कितने हैं? अनन्त है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीव कितने हैं? सख्यात हैं।
अजघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। सम्यिभिध्यात्वकी जघन्य और
अजघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीव कितने हैं? असंख्यात है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य
स्थितिविभिक्तवाले जीव कितने हैं? असंख्यात है। अजघन्य स्थितिवभिक्तवाले जीव कितने
हैं? अनन्त हैं। इसी प्रकार काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, चारों कषायवाले,
अचनुदर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिय।

हु ६००. श्रादेशकी अपेत्ता नारिकयों में मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलह कषाय और तो नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। सम्यक्तक की जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये। दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयों में मिध्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकपायों की जघन्य स्थितिवभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिवभक्तिवाले जीव कितने हैं ?

चडक्क ज अज केति ? असंखेजा । सत्तमाए उक्क भंगो ।

६०६. तिरिक्खगइ० मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछ० ज० अज० के०? अणंता। सम्मत्त० ज० के०? संखेजा। अज० के०? असंखेजा। सम्मामि० ज० अज० के०? असंखेजा। अणंताणु०चउक्क०-सत्तणोक० ज० के०? असंखेजा। अजंताणु०चउक्क०-सत्तणोक० ज० के०? असंखेजा। अजंताणु०चउक्क०-सत्तणोक० ज० के०? अणंता। एवं किण्ह०-णील०-काउ०। णवरि किण्ह-णील० सम्म० सम्मामि०भंगो। पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणी० पदम-पुठिभंगो। णवरि पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीसु सम्मत्त० सम्मामि०भंगो। पंचिं०तिरि०-अपज्ज० एवं चेव। एवं मणुसअपज्ज०-सव्यविगतिंदिय-पंचिंदियअपज्ज०-चत्तारि-काय-[सव्ववणप्किदियन्तेय०-] तसअपज्ज०।

६ ६१०. मणुस० सव्यपयडीणं ज० केत्ति० ? संखेज्जा । श्रज्ज० के० ? असं-खेज्जा । णवरि सम्मामि० जह० श्रसंखे० । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्यप० जह० श्रज० संखेजा ।

६२१, देव० णारयभंगो । भवण०-वाण० एवं चेव। णबरि सम्मत्त० सम्मामि०-भंगो । जोदिसि० विदियपुढविभंगो । सोहम्मादि जाव त्रवशाइद० मिच्छत्त-०वाग्मक०-

असंख्यात हैं। सम्यक्त्य, सम्याग्मिश्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जवन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असख्यात है। सातवीं पृथिवीमें उत्कृष्टके समान भंग हैं।

§ ६०६ तिर्यचोमें मिध्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जवन्य और अजवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्वका जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यम्भिष्यात्वकी जवन्य और अजवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यम्भिष्यात्वकी जवन्य और अजवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्क और सात नोकपायोकी जवन्य स्थितिवभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । असंख्यात हैं । तथा अजवन्य स्थितिवभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त है । इसी प्रकार कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नीललेश्यावालोंमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिष्यात्वक समान है । पंचेन्द्रि तिर्यच, पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती जीवोमें पहली पृथिवीक समान मंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती जीवोमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिष्यात्वक समान है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यच अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सभी चार स्थावरकाय, सभी वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर और अस अपर्याप्तक जीवोंमें जानना चाहिये ।

§ ६१०. मनुष्योमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यिग्मध्यात्वकी अपेद्या जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं।

§ ६११. देवोमें नारिकयोके समान भंग हैं। भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्निध्यात्वके समान है। ज्योतिषियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। सौधर्म कल्पसे लेकर श्रपराजित तकके देवोंमें

णवणोकः जहः के० १ संखेजा । अजि० के० १ असंखेजा । सम्मत्त० एवं चेव । सम्मामि०-अणंताणुः चडकः जि० अजि० के० १ असंखे । णविर अणुहिसादि जाव अवराइद ति सम्मामि० जहः संखेजा । सन्वहं ० सन्वपयिष्ठः जि० अजि० के० १ संखेजा । एवमाहार-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय- छेदो ०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद्संजदे ति ।

§ ६१२ प्रंदिय० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० ज० श्रज्ज० के० ? अणंता । सम्मत्त-सम्मामि० ज० श्रज० के० ? असंखेज्जा । एवं वणप्फदि-णिगोद० ।

६१३ त्रोरालिय०िमस्स० तिरिक्खोघं । णविर अणंताणु०चउक्क० ज० अज०
 के० १ त्रणंता । वेउव्वियिमस्स० सोहम्मभंगो । णविर अणंताणु०४ जह० संखेज्ञा ।
 कम्मइ० एइंदियभंगो । णविर सम्मत्त० ज०के० १ संखेज्ञा । अज०के० १ असंखेज्ञा ।

६१४. पंचिदिय-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-वेउिव्य० इत्थि०-पुरि०-आभिणि०-सुद०-स्रोहि०-विहंग०संजदासंजद०-चक्खु०-स्रोहिदंस०-तेउ०-पम्म०-सुक्क०-सम्मा०-वेदय० मणुसगइभंगो । णवरि विहंग०वज्जेसु स्रणंताणु०चउक्क०

मिध्यात्व, बारह कपाय और नों नांकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। सम्यक्त्वकी अपेन्न। इसी प्रकार जानना चाहियं। सम्यिग्भध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनुदिशसे लेकर अपराजित कल्प तकके देवोंमें सम्यिग्भध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सय प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, अपगतवेदवाले, अकपायी, मनःपर्ययक्तानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविश्वर्द्धसंयत, सूच्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंक जानना चाहिये।

§ ६१२ एकेन्द्रियोमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य ।स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके जानना चाहिये ।

ह ६१३ श्रौदारिकमिश्रकाययोगियों में सामान्य तिर्यंचोके समान भंग हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रानन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और श्राजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं श्रानन्त हैं। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियों सौधर्मके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रानन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। कार्मणकाययोगियोमें एकेन्द्रियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं श्रासंख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं श्रासंख्यात हैं।

§ ६१४. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्तक, त्रस, त्रसपर्याप्तक, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, वैकियककाययोगी स्त्रीवेद्वाले, पुरुषवेद्वाले, त्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, त्रयधिज्ञानी, त्रिभंग-ज्ञानी, संयतासंयत, चतुदरानवाले, त्रविधदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, शुक्लेश्यावाले, सम्यग्दिष्ट त्र्योर वेदकसम्यग्दिष्ठ जीवोंमं मनुष्यगतिक समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि विभंग- जह० त्रासंखेजा । सम्म० जह० जिम्म खवणा णित्थ तिम्म असंखेजा । सम्मामि० सम्माइद्विपदेसु संखेजा । मिद-सुदअण्णा० सम्मत्त-अणंताणु०चउक्क० एइंदियभंगो । सेम० तिरिक्खोघं । एवं मिच्छादिद्वि-असिण्णि ति । असंजद० तिरिक्खोघं । णविर मिच्छत्त० ओघं ।

६१५ त्रभव० छन्वीसपयहि० तिरिक्खोघं । णविर अणंताणु० एइंदियभंगो । खइय० एकवीसपयहीणं ज० के० ? संखेजा । अज० के० ? असंखेजा । उवसम० चउवीसपयही० ज० के० ? संखेजा । अज० के० ? असंखेजा । अणंताणु०चउक । ज० अज० के० ? असंखेजा । एवं सम्मामिच्छादिद्दीणं । णविर अणंताणु० जह० संखेजा । सम्म०-सम्मामि० जह० अज० असंखेजा । सासण० अद्वावीस० ज० के० ? संखेजा । अज० के० ? असंखेजा । सण्णि० पंचिंदियभंगो । अणाहारि० कम्मइयभंगो । एवं परिमाणाणुगमो समत्तो ।

ब्रानियोका छोड़कर से मों अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जयन्य स्थितिविभक्तियाले जीव असंख्यात हैं। तथा जिस मार्गणास्थानमें दर्शनमोहनीयकी चपणा नहीं है उस मार्गणास्थानमें सम्यक्त्वकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं और सम्यग्दृष्टि मार्गणात्रोमें सम्यग्न्यत्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। मृत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवों सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग एकेन्द्रियोंकं समान है। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टि और असंबी जीवों समान है। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टि और असंबी जीवों जानना चाहिये। असंयतों सामान्य तिर्यंचोंके समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वका भंग ओवके समान है।

ई ६१५. ऋभव्यों में छन्दीस प्रकृतियोंका भंग सामान्य तियंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। चायिकसन्यग्दृष्टियों में इक्कीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। ऋजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ ऋसंख्यात हैं। उपशमसन्यग्दृष्टियों में चौबीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। इसी प्रकार सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनं। विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी जवन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। सामादन-सम्यग्दृष्टियों अञ्चाद्दिस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं। संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं। संख्यात हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं। समान भंग हैं। अनाहारकोंमें कामंणुकाययोगियोंके समान भंग हैं। अनाहारकोंमें कामंणुकाययोगियोंके समान भंग हैं।

विशेषार्थ — श्रोवसे मिध्यात्व, बारह कषाय श्रोर ती नोकपायोकी जवन्य स्थिति ज्ञपक्षेशीम श्रोर सम्यक्त्वकी जवन्य स्थिति कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वके श्रान्तम समयमें प्राप्त होती हैं श्रोर एसे जीवांका प्रमाण संख्यात हैं, श्रातः उक्त प्रकृतियोकी जवन्य स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण संख्यात कहा। मिध्यात्व, बारह कषाय श्रीर नौ नोकषायोंकी श्रजवन्य स्थितिवाले जीव श्रानन्त है यह स्पष्ट ही है। सम्यग्निध्यात्वकी जवन्य स्थिति उद्देलनाके श्रान्तम समयमें श्रीर हिताकरें क्राक्त्यवेदक सम्यक्त्वके उपान्त्य समयमें प्राप्त होती हैं श्रीर ऐसे जीवोंका प्रमाण श्रासंख्यात है,

६ ६१६ खेत्तं दुविहं — जहण्णमुकस्तं च । उकस्से पयदं । दुविहो णिहेसो — ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण मिच्छत्त-सोलस्क०-णवणोक० उक० केविह खेत्ते ? लोग० असंख०भागे । अणुक० के० खेत्ते १ सव्वलोए । सम्मत्त-सम्मामि० उक० श्रणुक्क० के० १ लोग० असंखेज्जदिभागे । एवमणंतरासीणं णेयव्वं जाव अणाहारए त्ति ।

\$ ६१७. पुढिवि०-बादरपुढवि०-बादरपुढवित्रप्रज्ञ०-आउ०-बादरत्राउ०-वादर-आउत्रपज्ञ०-तेउ०-बादरतेउ०-वादरतेउअपज्ज०-वाउ०-बादरवाउ०-बादरवाउत्रप्रज्ञ०-बादरवाउत्रप्रज्ञ०-बादरवाउत्रप्रज्ञ०-बादरवाएफिदिकाइयपत्ते य०-तेसिमपज्ज०-सन्बसुहुम-तेमिं पज्जत्तापज्जताणमेइंदियभंगो । सेसमंखेज्ज-असंखेज्जरासीणमुक्क० अणुक्क० केविड खेत्ते १ लोग० असखे०भागे । एवरि वादरवाउपज्ज० अणु० लोग० संखे०भागे ।

#### एवमुक्कस्सखेत्ताणुगमो समत्तो ।

श्रतः सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण असंख्यात कहा । तथा सम्यक्त्व और सम्प्रिमश्यात्वकी श्रजवन्य स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण श्रसंख्यात है यह स्पष्ट ही है । इसी प्रकार श्रागे भी जवन्य श्रोर श्रजवन्य स्थितिके स्वामीका विचार करके जहां जो संख्या सम्भव हो उसका कथन करना चाहिये।

#### इस प्रकार परिमाणानुगम समाप्त हुआ।

§ ६१६ चेत्र दो प्रकारका है — जघन्य चेत्र और उत्कृष्ट चेत्र । पहले यहाँ उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है — आघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेसे श्रोधकी अपेचा मिण्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने चेत्रमें रहते हैं ? लोकके असंख्यातविभाग चेत्रमें रहते हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाल जीव कितने चेत्रमें रहते हैं ? सम्यक्त्र और सम्यिग्मध्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने चेत्रमें रहते हैं ? लोकके असंख्यातविभाग चेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक अनन्त राशियोंका चेत्र जानना चाहिये ।

§ ६१७. पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक बादर जलकायिक अपन्तकायिक, बादर अप्निकायिक, बादर अप्निकायिक बादर अप्निकायिक बादर अप्निकायिक प्रत्येक अपर्याप्त, वायुकायिक प्रत्येक शरीर वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्तक, तथा सब सूद्दम और उनके पर्याप्तक तथा अपर्याप्तक जीवोंका भंग एक न्द्रियोंके समान हैं। शेष संख्यात और असंख्यात राशिवालोंम उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवभक्तिशाल जीव कितने च्रियमें रहते हैं १ लोकके असंख्यातवें भाग च्रियमें रहते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर वायुकायिकपर्याप्त जीवोंमे अनुत्कृष्ट स्थितिवभक्तिवाले जीव लोकके संख्यातवें भाग च्रियमें रहते हैं ।

विशेषार्थ — त्रोघ और त्रादेशसे जिसका जो चेत्र है, सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेचा यहां उसका वहीं चेत्र ले लिया गया है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेचा तथा सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका अपेचा चेत्रमे विशेषता है। बात यह है कि ऐसे जीव कहीं असंख्यात और कहीं संख्यात हाते हैं। तथा जहां असंख्यात है भी वहां वे अतिस्वरूप है, अतः इनका चेत्र लोकका असंख्यातवां भाग ही सर्वत्र प्राप्त होता है यह उक्त कथनका सार है।

इस प्रकार उत्कृष्ट चेत्रानुगम समाप्त हुआ।

६ ६१८. जहण्णए पयदं । दुविहं — श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छत्त-सोलसक०-णवर्णोक० जह० केविड खेत्ते १ लोग० श्रसंखे०भागे । श्रज० के० खेत्ते १ सन्बत्तोए । सम्मत्त०-सम्मामि० ज० अज० के० खेत्ते १ लोग० असंखेऽजिद्भागे । एवं कायजीगि०-श्रोरालि०-णवुं स०-चत्तारिक०-अचक्खु०-भवसि०-श्राहारए ति ।

६ ६१६. आदेसेण णेरइएस अहावीसण्हं पयडीणसुक्क०भंगो । एवं सत्तसु पुढ-वीसु सन्वपंचिंदियतिरिक्ख-सन्वमण्स-सन्वदेव-सन्विवयिलिंदिय-सन्वपंचिंदिय-बादर-पुढिविपज्ज०-बादरआउपज्ज०-बादरतेउ०पज्ज०-बादरवाउ०पज्ज०-बादरवणप्किदि०पत्तेय-पज्ज०-सन्वतस-पंचमण०-पंचविच-वेउिन्वय०-वेउ०िमस्स०-आहार०-आहारिमस्स०-इत्थि०-पुरिस०-अवगद०-अकसा०-विहंग०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद० सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुप०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-चक्खु०-ओहिदंस०-तिण्णिलेस्सा-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-सण्णिति। णविर वादरवाउपज्ज० छन्वीसपयडीणं जह० अजह० लोगस्स संखेजजिदभागे।

६२० तिरिक्ख० मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछ० ज० अज्ञ० के खेते ? सञ्चलोए । संस० उक्कस्समंगो । एवं सञ्चएइंदिय० । णवरि अणताणु०४-सत्तणोक०

§ ६१८ अब जबन्य त्त्रका प्रकरण है। उसकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आंपनिर्देश श्रोर आदेशनिर्देश। उनमेसे श्रोवकी अपेत्ता मिध्यात्व, संलिह कपाय आर नो नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने त्त्रमें रहते हैं। लाक्क असंख्यातवें भाग त्त्रमें रहते हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने त्रेत्रमें रहते हैं। सम्यक्त्व और सम्यक्तिविभक्तिवाले जीव कितने त्रेत्रमें रहते हैं। सम्यक्त्व और सम्यक्तिविभक्तिवाले जीव कितने त्रेत्रमें रहते हैं। लाक्के असंख्यातवें भाग त्रेत्रमें रहते हैं। इसी प्रकार काययोगी, आंदारिककाययोगी, नपुंसक्तेद-वाले, चारो कपायवाले, अचतुद्दर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवोके जानना चाहिये।

§ ६५६ आदेशकी अपेत्ता नारिकयोमे अट्टाईस प्रकृतियांका भंग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार मातों प्रथिवियोमें रहनेवाले नारिका, सब पंचेन्द्रियतियंच, सब मनुष्य, सब देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, बादर प्रथिवाकायिकपर्याप्त, बादर जलकायिकपर्याप्त, बादर आग्निकायिकपर्याप्त, बादर वायुकायिकपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त, सब त्रस, पांचों मनायोगी, पाचों वचनयोगी, बैकियिककाययोगी, बैकियिककाययोगी, बैकियिककाययोगी, आहारिककाययोगी, आहारिककाययोगी, आहारिकनिश्रकाययोगी, क्रांवदवाले, अप्रवदेवाले, अप्रवत्वदेवाले, अकपायी, विभंगज्ञानवाले, आभिनिवाधिकज्ञानी, अनुक्षानी, अवधिक्षानी, मनःपर्ययज्ञानी, सयत, सामायिकसंयत, छेदापस्था गनासंयत, परिहार विद्युद्धिस्यन, सूक्त्मसापरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, चतुदर्शनवाले, अवधिदर्शनवाले, तीन लेक्ष्यावाले, सम्यग्दृष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्मसम्यग्दृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिध्यादृष्टि और संज्ञी जीवोके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोमें छञ्जीस प्रकृतियोंकी ज्ञानय और अज्ञावन्य स्थितियिभक्तिवाले जीव लोकके संख्यातवें भाग नेत्रमें रहते हैं।

§ ६२० तिर्यचोमे मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय त्रार जुगुष्साकी जचन्य आर अजचन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने चेत्रमे रहते हैं ? सब लोकमें रहते हैं । तथा शेप प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है । इसी प्रकार सब एकेन्द्रियोंके जानना चाहिये । किन्तु इतनो विशेषता है कि

जह ॰ अज ॰ सब्वलोए । एवं पुढिवि ॰ बादरपुढिवि ॰ -बादरपुढिवि अपज्ज ० -आउ ० -बादर आउ ० -बादरखाउ अपज्ज ० - तेउ ० - वादरतेउ ० -बादरतेउ अपज्ज ० -बादरवाउ ० -वादरवाउ ० -वादरवाउ ० -वादरवापका ०

६२१ एत्थ मृतुचारणाहिष्पाएण तिरिक्स० मिच्छ०-बारसक०भय-दुगुंछ० जह० लोग० संस्वे०भागे, अज० सन्वलाए, सत्थाणिवसुद्धवादरेइंदियपज्जत्तएसु जहण्ण-सामित्तावलंबणादो । एवमोरालियभिस्स०-मिद-सुदअण्णा०-मिच्छादि-असण्णि ति । एइंदिय०-बादरेइंदियपज्जत्तापज्जत्त—वाउ०-बादरवाउ०-तदपज्जत्तएसु छन्वीसपयिड०- एवं चेव । एदम्मि अहिष्पाए चत्तारिकाय-तेसिं बादर-तदपज्जत्ताणं छन्बीसपय० जह० लोग० असंखे०भागे । अज० सन्वलोगे । एतदणुसारेण च पोसणं णेदन्विमिदि । असंजद० तिण्णिलेस्सा० तिरिक्सोघं । णवरि असंजद० मिच्छ० अोघं । अभव०

इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्क श्रोर सात नांकपायों की जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सब लांकमे रहते हैं। इसो प्रकार पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, अपर्याप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक अपर्याप्त, वादर त्राग्निकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक, श्रव्मक श्रव्मक श्रव्मक श्रव्मक श्रव्मक स्थाप्त, इन सबके सूदम, तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक श्रदेग श्रिर, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक श्रदेग श्रिर, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक श्रदेग श्रिर, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक श्रदेग श्रदेग, वनस्पतिकायिक, निगाद जीव तथा इनके बादर श्रीर सूदम तथा पर्याप्त श्रोर अपर्याप्त, श्रोदारिकमिश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिण्यादृष्टि, श्रमें श्रदेगी विशेषता है कि श्रोदारिकमिश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिण्यादृष्टि, श्रीर श्रसंज्ञी जीवोंमें सात नोकपायोंका त्रेत्र सामान्य तिर्येचोके समान है।

§ ६२१ यहां पर मूलंक्चारणाका ऐसा अभिप्राय है कि तिर्यचोमें मिध्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव लांकके संख्यातवें भाग चेत्रमें रहते हैं। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले सव लांकमें रहते हैं। सां यह कथन स्वस्थान विशुद्ध बादर- एकेन्द्रिय पर्याप्तकोमें जवन्य स्थितिके स्त्रामित्वको स्वीकार करके किया गया है। इसी प्रकार औरारिकमिश्रकाययांगी, मत्यज्ञानी, श्रुताक्षानी, मिध्यादृष्टि और असंज्ञां जीवोंक जानना चाहिये। एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर वायुकायिकअपर्याप्त जीवोंमें छुव्वीस प्रकृतियोंकी अपेत्ता इसी प्रकार चेत्र है। इसके अभिप्रायानुसार पृथिवीक।यिक आदि चार स्थावरकाय, इनके बादर तथा इनके अपर्याप्त जीवोंमें छुव्वीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीव लांकके असंख्यातवें भाग चेत्रमें रहते हैं। तथा अजघन्य स्थिति विभक्तिवाले जीव सब लांकमें रहते हैं। तथा इसीक अनुसार स्पर्शनका कथन करना चाहिये। असंयत और कृष्णादि तीन लेश्यावालोंमें सामान्यि तियंचोंक समान चेत्र है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंयतोमें मिध्यात्वका चेत्र अग्रके समान विशेषता स्थान के समान चेत्र है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंयतोमें मिध्यात्वका चेत्र अग्रचके समान

# छ्विसपयि । प्रवित्र अणंताणु व्यवक् एइंदियभंगी । एवं खेत्राणुगमो समत्तो ।

है। त्राभव्योंमें छड़बीस प्रकृतियोंका मंग सामान्य तिर्थचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें ऋनन्तानुबन्धी चतुष्कका मंग एकेन्द्रियोंके समान है।

विशेषार्थ-श्रोघसे मिध्यात्व, सोलह कपाय श्रीर नी नोकषायोंकी जधन्य स्थितिवाले जीव चपकश्रेणीमे ही होते हैं, अत: इनका च्रेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण कहा। तथा श्रोघसे उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिवाले जीव अनन्त हैं, श्रतः इनका चेत्र सब लोक कहा। जब सामान्यसे सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी सत्तावाले जीवोंका त्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है तब उनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिवाले जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होगा, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। यह ओघ प्ररूपणा मूलमें गिनाई हुई काययोगी श्रादि कुछ मार्गणात्रोंमें श्रविकल वन जाती है, इसलिये उनके कथनको श्रोघके समान कहा। सामान्य नारिकयोंका ज्ञेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि नारिकयोंकी संख्याको नारिकयोंकी ऋवगाहनासे गुणित करने पर लोकका ऋसंख्यातवां भाग ही प्राप्त होता है, ऋतः इनके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके समान जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिकी श्रपेता वर्तमान तेत्र लोकका असंख्यातवां भाग ही कहा। इसी प्रकार मूलमें सातों पृथिवियोंके नारिकयोसे लेकर संज्ञी-तक श्रीर जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें भी जानना चाहिए, क्यों कि सामान्यसे उनका वर्तमान जेत्र लोकके असंख्यातवें भागसे ऋधिक नहीं प्राप्त होना । हां केवल वायुकायिक पयाप जीव इसके अपवाद हैं सो इनके चंत्रका अनेक जगह खुलासा किया ही है। सामान्यसे तियंचोंका वर्तमान ज्ञंत्र मव लोक है। तथा इनमें मिध्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुष्माकी जघन्य और अजघन्य स्थितिवाले जीदोंका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्क और सात नोकपायोंकी अजघन्य स्थितिवाले जीवोंका प्रमाण अनन्त बतला आये हैं, अतः तियंचोंके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिकी अपेना सब लोक नेत्र वन जाता है। किन्तु शेप प्रकृतियोंकी जवन्य और अजधन्य स्थितिकी अपेन्। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्क और सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिकी अपेन्ना क्तेत्र लोकका असंख्यातवां ही होता है। इसका कारण इनकी संख्याकी न्यूनता है। यद्यपि एकेन्द्रियोमे सामान्य तिर्थेचांके समान व्यवस्था वन जाती है किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्क श्रीर सात नाकपायोंकी जघन्य स्थितिकी अपेना कुछ विशेषता है। वात यह है कि सामान्य तिर्यंचोंसे एकेन्द्रियोमे अनन्तानुबन्धी चतुष्क और सात नोकपायोंकी जघन्य स्थिति भिन्न बनलाई है। श्रतः इनमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिवाले जीवोका प्रमाण श्रनन्त प्राप्त होता है श्रोर इसलिय इनका वर्तमान क्षेत्र सब लोक बन जाता है। पृथिवीकायिकसे लेकर अनाहारक तक मूलमे श्रीर जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें भी एकेन्द्रियोंक समान व्यवस्था जानना चाहिए ! किन्तु औदारिक मिश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी मिथ्यादृष्टि श्रीर श्रुसंज्ञियोमें सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिकी अपेन्ता अपवाद है। बात यह है कि इनमें सात नोकपायोंकी जवन्य स्थिति पंचेन्द्रियोंके अपर्याप्त कालमें होती है । अतः जघन्य स्थितियाले जीवोंकी संख्या एकेन्द्रियोंके समान न प्राप्त होकर सामान्य तिर्यचोंके समान प्राप्त होती है अतः इस करण इनके सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिकी अपेता त्रेत्र सामान्य तिर्थेचोंके समान होता है। यद्यपि पहले यह बतलाया है कि तिथँचोंमें मिण्यात्व, बारह कपाय, भय श्रौर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिवाले जीवोंका जघन्य चेत्र सब लोक है फिर भी मूल उचारणाका यह अभिप्राय है कि ऐसे जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। सो इसका यह कारण है कि तिर्थवोंमें उक्त प्रकृतियोंकी जधन्य स्थिति बादर

§ ६२२. पोसणं दुविहं—जहण्णमुक्ससं च । उक्तस्से पयदं । दुविहो णिहेसो—
य्रोघेण य्रादेसेण० । तत्थ ओघेण मिन्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क० के० खे०
पोसिदं ? लोग० असंखेभागो यह-तेरह चोहसभागा वा देस्णा । अथवा इत्थिपुरिसवेद० उक्क० यह चोहसभागा वा देस्णा । अण्णेणाहिष्पाएण बारह चोहसभागा वा
देस्णा । अणु० सन्वलागो । सम्म०-सम्मामि० उक्क० लोग० असंखे०भागो यह
चोह० देस्णा । अणुक० [लोग० असंखे०भागो] अह चोह० देस्णा सन्वलोगो वा । एवं
[कायजोगि-] चत्तारिकसाय-मदि-सुदअण्णा०-असंजद०-अचक्खु०-भवसि०-मिन्छादि०आहारि ति । अभव० एवं चेव । णवरि सम्मत्त-सम्मामिन्छत्तवक्त०।

एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके ही प्राप्त होती है और बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका स्वस्थान चेन्न लोकके संख्यातवें भागप्रमाण ही है अतः इस अपेचासे तिर्यचोंमें उक्त प्रकृतियोंकी जपन्य स्थितिवाले जीवोंका चेन्न लोकके संख्यातवें भागप्रमाण भी बन जाता है। और पहले जो सब लोक चेन्न बतलाया है सो इसका कारण यह है कि मारणान्तिक समुद्धातकी अपेचा बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका चेन्न सब लोक है अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिवाले तिर्यचोंका चेन्न भी सब लोक वन जाता है। यही कम औदारिकमिश्रकायोगी, मत्यझानी, श्रुताझानी, मिध्यादृष्टि और असंझी जीवोंके भी घटित कर लेना चाहिये, क्योंकि उनके इस प्रकार घटित करनेमें कोई बाधा नहीं आती है। तथा इसी प्रकार एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त करनेमें कोई बाधा नहीं आती है। तथा इसी प्रकार एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त करों अपर्याप्त तथा वायुकायिक, बादर वायुकायिक और उनके अपर्याप्त त्यां वायुकायिक, बादर वायुकायिक और उनके अपर्याप्त जीवोंमें भी घटित कर लेना चाहिये। किन्तु इस मूल उचारणांके अनुसार पृथिवी आदि चार स्थावरकाय, इनके बादर और बादर अपर्याप्तकोंमें छन्वीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिवाले जीवोंका चेन्न लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होना है, क्योंकि इनमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिवाले जीवोंने वर्तमान कालमें लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेन्नको हो स्पन्न किया है। शेष कथन सुराम है।

#### इस प्रकार चेत्रानुगम समाप्त हुआ।

§ ६२२. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । पहले यहां उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका हे—आंघ निर्देश और आदेश निर्देश । उनमेंसे आंघकी अपेचा मिथ्यात्य, सोलह कपाय और नो नाकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्श किया है ? लांकके असंख्यात्वें भाग चेत्रका तथा त्रस नालींके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ और कुछ कम तरह भाग चेत्रका स्पर्श किया है । अथवा स्त्रीवंद और पुरुपवेदकी अपेचा उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालींके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अन्य अभिप्रायानुसार त्रसनालींके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम बारह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । दा सम्यक्त और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोंकके असंख्तावें भाग चेत्रका और त्रसनालींके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोंकके असंख्तावें भाग चेत्रका तथा त्रसनालींके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोंकके असंख्यातवें भाग चेत्रका तथा त्रसनालींक चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोंकके असंख्यातवें भाग चेत्रका तथा त्रसनालींक चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग चेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार काययोगी, चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचचुदर्शनवाले, भव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक जीवोंके जानना चाहिये । अभव्योंके इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेपता है कि इनके सम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वको छोड़कर कहना चाहिये ।

# ६६२३. त्रादेसेण णेरइसु छव्वीसपयंडि० उक्क० अग्नुक्क० लोग० असंखे०भागो

विशोषार्थ--पहले मोहनीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिवालोका वर्तमान कालीन स्पर्श लांकके श्चसंख्यातवं भागप्रमाण वतला त्राये हैं । तदनसार मोहनीय कर्मके अवान्तर भेदोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्ने भी लांकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है इससे अधिक नहीं। इसी बातको ध्यानमें रखकर यहां सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका वर्तमान कालीन स्पर्श लोकके त्रामंख्यातवें भागप्रमाण वतलाया है। तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम त्राठ स्त्रीर कुछ कम तेरह भाग प्रमाण स्पर्श ऋतीत कालकी अपेता बतलाया है, क्योंकि विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कपाय और वैकियक पदसे परिणत हुए उक्त जीवोंने असनालीक चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भाग स्पर्श किया है त्र्योर माराणान्तिक समुद्धातसे परिणत हुए उक्त जीवोने त्रसनालीक चौदह भागोंमेंसे बुख कम तेरह भागका स्पर्श किया है। यहा आठ भागसे नीचे दा और ऊपर छह राज क्षेत्रका प्रहण करना चाहिये । तथा तेरह भागमं नीचेका एक राजु छोड़ देना चाहिये । एक ऐसा नियम है कि जो जीव जिस वेदवालेमें उत्पन्न होता है मरणके समय अन्तर्महर्त पहलेसे उसके उसी वेदका बन्ध होता हूँ । अब जब इस नियमके अनुसार स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवालोके स्पर्शका विचार किया जाता है तो वह जुल कम तेरह बटे चौदह भाग नहीं प्राप्त होता, क्योंकि नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जो जीव नपुंसकवेदियोंमें उत्पन्न होते हैं उन्हींके यह स्पर्श सम्भव है, इसलिये विकल्पान्तर रूपसे स्त्रीवेट श्रीर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवालीका स्पर्श कुछ कम श्राठ बट चौदह भाग प्रमाण बतलाया है। किन्तु कुछ श्राचार्योका मत है कि यह स्वर्श कुछ कम बारह बटे चाँदह भागप्रमाण प्राप्त होता है। उनके इस मनका यह कारण प्रतीत होता है कि नीचे ्र सातर्वे नरक तक उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है और ऊपर विहारादिककी अपन्ना अन्यत कल्प तक उत्कृष्ट स्थिति सम्भव है। अब यदि इस क्विका संकलन किया जाता है तो वह कुछ कम बारह बटे चौदह भाग प्राप्त होता है। अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव सब लोकमें पाये जाते हैं यह स्पष्ट ही है अतः यहां श्रनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका वर्तमान और अतीन दोनो प्रकारका स्पर्श सब लांक बतलाया है । श्रब रहीं सम्यक्त्व और सम्योगमध्यात्व प्रकृतियां सो इनकी उत्कृष्ट स्थितियालोंका वर्तमान कालीन स्पर्श लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण ऋन्य प्रकृतियोंके समान जान लेना चाहिये। तथा सम्यक्त्व त्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श जो कुछ कम त्राठवटे चौरह भागश्माण बतलाया है। उसका कारण यह है कि सम्यक्त्व और सम्यग्निभश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति वेदकसम्यग्दृष्टियोके पहले समयमे होती है श्रीर वेदक सम्यन्द्रष्टियोंका अतीत कालीन स्वर्श कुछ कम आठ वटे चाँदह भाग प्रमाण बतलाया है, अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका भी स्पर्श उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। तथा इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्परा जी तीन प्रकारका बतलाया है सो उसमेंसे लोकका असंख्यातवाँ भाग प्रमाण स्पर्श वतमान कालकी अपेचा प्राप्त होता हैं। कुछ कम आठ वटे चौदह भाग प्रमाण स्पर्श अतीत कालीन विहारादिककी अपेन्ना प्राप्त होता है और सब लोक प्रमाण स्पर्श मारणान्तिक तथा उपपाद पदकी अपेन्ना प्राप्त होता है । इस प्रकार यह सब प्रकृतियोंका सामान्यसे स्पर्श हुआ । कुछ मार्गणाएं भी ऐसी है जिनमें यह श्रोघ प्ररूपणा वन जाती है, अतः उन म कथनको अधिके समान कहा है। जैसे चारों कषाय अदि। अभन्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी सत्ता नहीं होती। शेप सब स्पर्श त्रांघके समान बन जाता है, अतः उनके भी सम्यक्त्व श्रीर सन्यग्मिध्यात्वको छोड़कर शेपका स्पश श्रोधके समान बतलायां है।

§ ६२३. श्रादेशकी श्रपेता नारिकयोमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और श्रनुत्कृष्ट स्थिति-विभक्तिवाले जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग चेत्रका श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छ चोइ० देस्रणा । अथवा इत्थि-पुरिस० उक्क० लोग० असंखे०भागो चेव । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० खेत्तभंगो । अणुक्क० छ चोइस० देस्रणा । पढमाए खेत्तभंगो । विदि-यादि जाव सत्तमाए सगपोसणं कायव्वं ।

६२४. तिरिक्ख० मिच्छ्त-सोलसक०-पंचणोक० उक्क० लोग असंखे०-भागो छ चोइ० देस्रणा, अणुक्क० सव्वलोगो । चत्तारिणोकसाय० उक्क० लोग० असंखे०भागो । अथवा णवणोक० उक्क० तेरह चोहस० । अणुक्क० सव्वलोगो । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० लोग० असंखे०भागो, अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

छह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। अथवा स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीगोंने लोकके श्रमंख्यानवें भाग चेत्रका ही स्पर्श किया है। सम्यक्त्य और सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिनिविभक्तिवाले जीवोंके स्पर्शनका भंग चेत्रके समान है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रयमालीके चे दह भागोमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्श चेत्रके समान है। तथा दृसरीसे लेकर सातवीं पृथ्वी तक श्रपने श्रपने स्पर्शके समान स्पर्शन कहना चाहिये।

विशोषार्थ—नरकगितमें सामान्यसे और प्रत्येक नरकका जो स्पर्श वनलाया है वही यहां सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले नारिकयोंके स्पर्श प्राप्त होता है, इसलियं तदनसार उसका यहां विचार कर लेना चाहिये। किन्तु इसके दो अपवाद हैं। पहला तो यह कि विकल्प रूपसे स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवालोका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होना है। इसके कारणका निर्देश पहले कर ही आये हैं। और दूसरा यह कि सम्ययत्व और सम्यिगिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श उनके चेत्रक समान ही है। कारण यह है कि इन दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श उनके चेत्रक समयमं उन्हीं जीवोंके सम्भव है जिन्होंने मिश्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिवान्ध करके आति लघुकालमे वेदक सम्यक्त्वका प्राप्त कर लिया है। अब यदि ऐसे नारकी जीवोंका वर्तमान और अतीत दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंक असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं होता, अतः यहां उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श उनके चेत्रके समान बनलाया है।

§ ६२.८ तिर्थयों में मिण्यात्व, संलिह कपाय और पांच नंकिपायों की उत्कृष्ट स्थितिविभिवति-वाले जीवों ने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और त्रसनालीके चादह भागोमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिविभिवतवाले जीवों ने सब लोक प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। चार नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिविभिवतवाले जीवों ने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। अथवा नो नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिविभिवतवाले जीवों ने त्रसनाली के चौदह भागोमेंसे कुछ कम तेरह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभिवत्वाले जीवों ने सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यिग्धियात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभिवत्वाले जीवों ने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभिवतवाले जीवों ने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका और सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है।

विशेषार्थ—तिर्थचोंमें मंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्थचोंका वर्तमानकालीन स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं श्रीर ये ही मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रीर पांच नोकषायोंकी उत्कृष्ट

६२५. पंचिदियतिरिक्ख०-पंचि०तिरि०पज्ज०-पंचि०तिरि०जोणिणी० मिच्छत्त-सोल्लसक०-पंचणोक०-उक्क० लोग० असंखे०भागो छ चोइस० देस्रणा। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा। चत्तारिणोक० उक्क० लोग० असंखे०भागो। अथवा णवणोक० उक्क० बारस चोइस० देस्रणा। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो [सन्वलोगो वा। सम्मत्त-सम्मामि०] तिरिक्खोषं।

स्थितिको प्राप्त होते हैं अतः निर्यचोंमें इनकी उत्कृष्ट स्थितिवालोका वर्तमानकालीन स्पर्श उक्त प्रमाण वतलाया है। तथा इन कर्मोकी उत्कृष्ट स्थितिवाले तिर्यंच सातवें नरक तक मारणान्तिक समद्रात करते हैं अतर्व इनका अनीनकालीन स्वर्श कुछकम छह वटे चौदह राजुप्रमाण वतलाया हैं। तथा उक्त कर्मोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले तियंच सब लोकमे पाये जाते हैं यह स्पष्ट ही है, क्यांकि उक्त कर्मौंकी अनुस्कृष्ट स्थिति एकेन्द्रियादि सब निर्यचोंके सम्भव है, अतएव उक्त कर्मौंकी अनुत्कृष्ट म्थितिवाले नियंचोंका स्पर्श सव लोक बनलाया है। हास्य, रिन, स्त्रीवेद और पुरुपवेद इन चार नाकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श जो लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया है उसका खुलासा, जिस प्रकार मिध्यात्व आदिके वर्तमान कालीन स्पर्शका कर आये हैं, उसी प्रकार कर लेना चाहिये। किन्तु उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके जो देव एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उन तिर्वचों के भी नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है और नारिकयोमे मारणान्तिक समुद्र्यात करनेवाले तियेचोंके भी नौ नाकपायोंकी उत्दृष्ट स्थिति पाई जाती है। अब यदि इनके स्पर्शका विचार किया जाता है तो वह कुछ कम तरह बटे चौदह भाग प्रमाण प्राप्त होता है। यही कारण है कि मुलमें अथवा कह कर नौ नांकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिवालांका स्पन्न कुछ कम तेरह बटे चौदह भाग प्रमास बनलाया है। तथा चार नोकपायांकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले तिर्यंचीका स्पन्न सब लोक स्पष्ट ही है । कारणका उल्लेख पहले कर ही आये हैं । सम्यक्तव और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थित उन तियँचोके सम्भव है जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अतिशीघ वेदक सम्यक्तको प्राप्त होते हैं पर ऐसे तिर्थचोंका स्पर्श लांक हा असंख्यातवां भाग प्रमाण ही है. अतः यहां उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया है। तथा उक्त प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले तिर्यंचोंका वर्तमान स्पर्श तो लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण ही है, क्योंकि इन प्रकृतियोंकी सत्तावालोका वर्तमान स्पर्श लोकक असल्यातवें भागसे आधक नहीं शप्त होता । परन्तु इनकी सब लोकमे गति त्रोर त्रागति सम्भव है, इसलिये इनका श्रतीत कालान स्पर्श सब लोक बतलाया है।

§ ६२५ पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमितयोंमें मिण्यात्य, सोतह कपाय और पाच नाकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभिन्तित्वालोंन लोक के असंख्या वें भाग चेत्रका और उसनालोंके चौरह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण चत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जावोंने लोक असंख्यातवें भाग और सब लाक चेत्रका स्पर्श किया है। चार नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। अथवा नो नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जावोंने तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका आयों सव लोकका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व व सम्यग्मि-ध्यात्वका स्पर्श सामान्य तिर्यंचोंके समान जानना चाहिय।

विशोपार्ध — उक्त तीन प्रकारके तिर्थवोंमें मिध्यात्व आदिकी उत्क्रष्ट स्थितिवालोका स्पर्श जो कुछ कम छह बटे चौदह भाग बतलाया है उसका खुलासा सामान्य तिर्थवोंके समान कर लेना § ६२६ पंचिं०तिरि० अपज्ज० सन्वपयि उक्त० होग० असंखे०भागो, अणुक्त० हो० अमं०भागो सन्बहोगो वा । एवं सन्त्रमणुस-सन्विवगितिदिय-पंचिं-दियअपज्ज०-बादरपुढविपज्ज०-बादरआउपज्ज०-बादरतेष्ठपज्ज०-बादरवाउपज्जत्त-बादर-बणप्फिदिकाइयपत्तेयपज्ज०-तसअयज्जने ति । णविर बादरपुढवि०-आउ०-वणप्फिदि-पत्तेय०पज्ज० उक्त० णव चोइसभागा वा देमुणा ।

६२७ देव० मिच्छत्त-सोलसक०-सत्तर्णोक० उक्क० अह-णव चो० देसूणा।

चाहिये। तथा 'श्रथवा' कह कर नो नोकपायों की उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श जो कुछ कम बारह बटे चौदह भाग प्रमाण वतलाया है वह नीचे छह राजु और ऊपर छह राजुकी श्रपेचा जानना चाहिये। नीचेके छह राजु तो स्पष्ट हैं परन्तु ऊपरके छह राजु उपपाद पदकी अपेचा जानना चाहिये। वात यह है वारहवें कल्पतकके देव मर कर तिर्यंच होते हैं। श्रव नीचेके जो देव सोलहवें कल्पतक विहार करके गये श्रीर वहांसे मरकर तिर्यंचोमे उत्पन्न हुए उनकी श्रपेचा ऊपर छह राजु प्राप्त हो जाते हैं। श्रेप कथन मुगम है।

§ ६२६. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग च्रेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग च्रेत्रका ऑर सब लोक च्रेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार सब मनुष्य, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रय अपर्याप्तक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिकपर्याप्त, बादर जलकायिक, बादर जलकायिकपर्याप्त, बादर वासुकायिक, बादर वासुकायिकपर्याप्त, बादर वासुकायिक, बादर वासुकायिकपर्याप्त, बादर वासुकायिक, बादर वासुकायिपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, और त्रस अपर्याप्त जीवोंक जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर प्राथवीकायिकपर्याप्त, बादर जलकाथिकपर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंमे उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम नौ भाग च्रेत्रका स्पर्श किया है।

विशेषार्थ — जो निर्यंच या मनुष्य मोहनीयकी २८ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिको पाप हो कर और स्थितिघात किये विना पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोमें उत्पन्न होते हैं उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोके सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती हैं। अब यदि इनके स्पर्शका विचार किया जाता ह तो वह लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही प्राप्त होता है, इसलिये यहां उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण कहा। तथा इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका वर्तमान कालीन स्पर्श तो लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि इनका वर्तमान निवास लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रमें ही हैं। पर अतीतकालीन स्पर्श सब लोक बन जाता है, क्योंकि मारणान्तिक समुद्वात और उपपाद पद्के द्वारा इन्होंने सब लोकका स्पर्श किया है। कुछ मार्गणाएं और है जिनम पूर्वोक्त प्रमाण स्पर्श प्राप्त होता है, अतः उनके कथनको इसी प्रकार कहा है। जैसे सब मनुष्य आदि। किन्तु इनमेसे बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त और वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त इन तीन मार्गणाओमें कुछ अपवाद है। वात यह है कि इनमे देव मर कर भा उत्पन्न होते हैं, अतः इनकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श कुछकम नौ बटे चोदह भाग प्राप्त होता है। यहाँ नौ भागसे नीचेंक दो राजु और अपरके सात राजु लेना चाहिये।

§ ६२७ देवोंमें मिण्यात्व, सोलह कपाय त्रीर सात नोकषायोंकी उत्क्रष्ट स्थितिविभक्ति<sup>वाले</sup>

इत्थि-पुरिसवेद०-सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० अह चोइ० देख्णा । त्र्यणुक्क० त्रह-णव चो० देख्णा । एवं सोहम्मीसाणदेवाणं । भवण०-वाण० एवं चेव । णविर अद्धुह-श्रह-णव चोइस भागा देख्णा । सणक्कुमारादि जाव सहस्सारो ति सव्वपय० उक्क० अणुक्क० अह चोइस० देखूणा । श्राणद-पाणद-श्रारणच्चुद० सव्वपयणीणं उक्क० छो० श्रसंखे०भागो । अणुक्क० छ चोइस० देखुणा । उविर खेत्तभंगो ।

्र६२८. एइंदिय० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० उक्क० णव चोद० देसूणा। अणुक्क० सव्वलोगो । सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणमुक्क० णव चो०। अणुक्क० स्रोघं। एवं बादरेइंदिय-बादरेइंदियपज्ज०-वणप्फिदि-बादरवणप्फिदि-तप्पज्जत्त-कम्मइ-स्रणाहारए ति।

जीवोने त्रसनालीके चौदद भागोंमसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भाग चेत्रका स्पर्श किया है। स्त्रीवंद, पुरुपवंद, सम्प्रकरव और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तित्राले जीवोने त्रस नालीके चौदह भागोंमें कुछ कम आठ भाग चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति-वाले जीवोने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाखा चेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार सीधर्म और एशान करणके देवोंके जानना चाहिये। भवनवासी और ज्यन्तर देवोंके इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग, कुछ कम आठ भाग और कुछ कम नौ भागप्रमाख चेत्रका स्पर्श जानना चाहिये। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार करुप तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाख चेत्रका स्पर्श किया है। आनत, प्राखन, आर्थन, आर्थ और अच्छुत करणके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम छह भागप्रमाख चेत्रका स्पर्श किया है। इसके आगेके देवोंमें चेत्रके समान भंग है।

विशेषार्थ —सामान्य देवांका या पृथक पृथक् देवोंका जो स्पर्श बतलाया है वही यहां प्राप्त होता है, अतः तद्नुसार उसे यहां भी घटित कर लेना चाहिये। हां सामान्य देवोंमं स्त्रीवेद, पुरुषवेद, सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवालों के स्पर्शमं कुछ विशेषता है। बात यह है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितवालों देव एकेन्द्रियोंमं मारणान्तिक समुद्धात नहीं करते अतः इतका स्पर्शकुछ कम आठ वटे चौदह भाग ही प्राप्त होता है। तथा वेदकसम्यग्दिष्टियों के पहले समयमें ही सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। अब देवोमें इसका विचार करते हैं तो ऐसे देव नीचे तीसरे नरक तक और ऊपर सोलहवें करूप तक पाये जा सकते हैं, अतः सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श भी कुछकम आठ बटे चौदह भाग प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहां सामान्य देवोंमे उक्त प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श कुछ कम आठ बटे चौदह भाग प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहां सामान्य देवोंमे उक्त प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितवालोंका स्पर्श कुछ कम आठ बटे चौदह भाग प्रमाण बतलाया है।

§ ६२८. एकेन्द्रियों में मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नौकषायों की उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति-वाल जीवोने व्रम नालीके चौदह भागामें से कुछ कम नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने सब लोकका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मध्थात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोने व्रस नालीके चौदह भागोमें से कुछ कम नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श ओघके समान है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रियपर्याप, बनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पति णवरि कम्मइय०-अणाहार॰ उक्क० तेरह चो० भागा वा देख्यणा।

६ ६२६ वादरेइंदियश्रपज्ज०-सुहुमेइंदियपज्जतापज्जत-बादरपुढविश्रपज्ज०-सुहुम-पुढविपज्जतापज्जत-वादरआउअपज्ज०-सुहुमआउपज्जतापज्जत-बादरवेणप्पदिपत्तेयश्रपज्ज०-सुहुम-तेउपज्जतापज्जत-वादरवाउश्रपञ्ज०-सुहुमवाउपज्जतापज्जत-बादरवेणप्पदिपत्तेयश्रपज्ज०-सुहुमवणप्पदि-णिगाद-बादरसुहुमपज्जतापज्जत० उक्क० छोग० श्रसंखे०भागो सब्ब-छोगो वा। णविर बादरपुढिव-तेउ-वेणप्पदिअपज्ज० सब्वलोगो णित्थि। कुदो १ उक्कस्स-दिदिसंतकम्मेण पिडिणियदखेते चेव एदेसिमुप्पत्तीदो। श्रणुक्क० सब्वलोगो। [ श्रोरा-लिय० तिरिक्खोद्यं। ] श्रोरालियमिस्स० खेत्तमंगो।

कायिकपर्यात, कार्मणकाययोगी श्रोर श्रनाहरक जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता हैं कि कार्मणकाययोगी श्रोर श्रनाहारक जीवोंमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालींके चौदह भागोंमेसे कुछ कम तेरह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है।

विशेषार्थ एकेन्द्रियों मिध्यात्व त्रादि कर्मोकी उत्कृष्ट स्थित उन्होंके पायी जाती है जो देव पर्यायसे च्युत होकर एकेन्द्रिय हुए हैं, अतः एकेन्द्रियों में मिध्यात्व आदिकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पन्न कुछ कम नौ बटे चोदह राजु बनलाया है जो उपपादपदकी प्रधानतासे प्राप्त होता है। तथा एकेन्द्रिय जीव सब लोकमें पाये जाते हैं, अतएव अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पन्न सब लोक बनलाया है। आगों जो बादर एकेन्द्रिय आदि मार्गाणाएं गिनाई हैं उनमें भी यह व्यवस्था बन जाती हैं, अतः उनके कथनको एकेन्द्रियोंके समान कहा है। किन्तु कार्मणकायोग और अनाहारकोंमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि जो देव तद्योग्य उत्कृष्ट स्थितिक साथ एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके भी कार्मणकाययोग और अनाहारक अवस्था सम्भव है तथा जो तियच और मनुष्य उत्कृष्ट स्थितिक साथ नारिकयोंमें उत्पन्न होते हैं उनके भी कार्मणकाययोग और अनाहारक अवस्था सम्भव है। अब यदि इन दोनोंक स्पन्नका संकलन किया जाता है ता वह कुछ कम तेरह वट चोदह राजु प्राप्त होता है। यही कारण है कि कार्मणकाययोग और अनाहारक अवस्था सम्भव है। इति होता है। यही कारण है कि कार्मणकाययोग और अनाहारक अवस्था सम्भव हि।

§ ६२९. बादर एक्ट्रिय अपर्याप्त, सूक्त्म एक्ट्रिय, सूक्त्म एकेट्रियपर्याप्त, सूक्त्म एकेट्रिय अपर्याप्त, वादर पृथिवीकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म पृथिवीकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म पृथिवीकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म जलकायिकअपर्याप्त, बादर ज्ञानकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म जलकायिक, सूक्त्म ज्ञानकायिकपर्याप्त, सूक्त्म ज्ञानकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म ज्ञानकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म ज्ञानकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म ज्ञानकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिकअपर्याप्त, सूक्त्म वास्पतिकायिक व निगोद तथा इनकं बादर, वादर पर्याप्त, बादार अपर्याप्त, सूक्त्म पर्याप्त और सूक्त्म अपर्याप्त जीवोंमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग त्रेत्रका और सब लोक त्रेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर पृथिवीकायिकअपर्याप्त, बादर अग्निकायिकअपर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिकअपर्याप्त कोमें सब लोक स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्श किया है। औदारिक काययोगियोंका स्पर्श सामान्य तियेचोंके समान है। औदारिकमिश्रकाययोगियोमें स्पर्श त्रेत्रे समान है।

६३० पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-सत्तगोक० उक्क० त्रोघं । अणुक्क० अह चो० देसणा सव्वलोगो वा । इत्थि०-पुरिस० उक्क० श्रष्ट-बारह चोइसभागा वा देसूणा । अणुक्क० अह चोइस० सव्वलोगो वा । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० श्रष्ट चोइ० देसूणा । त्रणुक्क० लोग० अमंखे०भागो सव्वलोगो वा । एवं चक्खु०-सण्णि-पंचमण०-पंचविच० ।

विशेषार्थ-जो तिर्यंच या मनुष्य मिश्यात्व आदि कर्मोकी उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करके और स्थितिघात किये विना बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त आदि मार्गणात्रोमें उत्पन्न हाते हैं उन्होंके उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है। अब यदि इनके वर्तमान त्रेत्रका विचार करते हैं तो वह लोकके असंख्यातर्वे भागसे अधिक नहीं प्राप्त होता। यही कारण है कि उन बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त आदि मार्गणात्रोंमे उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्ज लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। तथा ऐसे जीव सब लोकमे उत्पन्न हाते हैं, ऋतः ऋतीतकालीन स्पर्श सब लोक बतलाया है। हां यहां इतनी विरोप बात है कि वादर पृथिबीकायिक अपर्याप्त, वादर अग्निकायिक अपर्याप्त न्त्रीर बादर वनस्पिनकायिक त्रपर्याप्त इनमे उत्कृष्ट स्थितिवालोंका ऋतीत कालीन स्परा भी सब-लोक नहीं प्राप्त होता, क्यों किएसे जीवोंकी उत्पत्ति नियत त्त्रिमें ही होती है, अतः इन्होने सब लोकको अतीत कालमे भी स्पर्श नहीं किया है। विशेष खुलासाके लियं निम्न दो बातें ध्यानमें रखनी चाहिये। पहली यह कि उक्त मार्गणावाले जीव पृथावयोके आश्रयसे रहते हैं श्रौर दुसरी यह कि जो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त निर्यंच या मनुष्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके श्रीर स्थितिघात किये बिना इनमें उत्पन्न होते हैं उन्होंके पहले समयमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती हैं। ऋव ऐसे जीवोंक प्रथिवियोंकी ऋार गमन करने पर सब लांक नहीं प्राप्त होता, अतः यहां सब लाक स्पर्शका निपेध किया है। तथा उक्त सब मार्गणात्रोमे अनुत्कृष्ट स्थिति-वालोका जो सब लोक स्पर्ज बतलाया है वह स्पष्ट ही है। श्रीदारिककाययोगवालीका स्पर्ज तियँचोके समान हे, यह स्पष्ट ही है। ऋौदारिकमिश्रकाययोगमे भिश्यात्व ऋादिकी उत्ऋष्ट स्थिति उन्हीं जीवोंके प्राप्त होती हूँ जो देव और नरक पर्यायसे आकर औदारिकामश्रकाययागी हाते हैं, अतः इनके स्पर्शमें त्रित्रसे अन्तर नहीं पड़ता, इसीलिये इसमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श चेत्रके समान बतलाया है।

६ ६३०. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस स्रोर त्रस पर्याप्त जीवोमे मिश्यात्व, सोलह कपाय स्रोर सान नोकषायवालोमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीवोंका स्पर्श स्राप्त समान है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीवोंने त्रस नालींक चींदह भागोमेंसे कुछ कम स्राठ भागप्रमाण चेत्रका और सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है । स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाले जीवोंने त्रस नालींके चौंदह भागोमेंसे कुछ कम स्राठ और कुछ कम बारह भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवभक्तियाले जीवोंने त्रस नालींके चौंदह भागोमेंसे कुछ कम स्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्थार सव्याग्तिककी उत्कृष्ट स्थितिवभक्तियाले जीवोंने त्रस नालींके चौंदह भागोमेंसे कुछ कम स्राठ भाग चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवभक्तियाले जीवोंने लोकके स्थांख्यातवें भाग स्रोर सव लोक चेत्रका स्पर्श किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवभक्तियाले जीवोंने लोकके स्थांख्यातवें भाग स्रोर सव लोक चेत्रका स्पर्श किया है । इसी प्रकार चन्नुदर्शनवाले, संझी, पांचों मनोयोगी स्रोर पांचों वचनयोगं जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ -- मिध्यात्व आदि २४ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितवालोंका जो श्रांघसे स्पर्श

§ ६३१ वेडिवय० मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक० उक्क० अणुक्क० अह-तेरह चोद्दस० देमूणा। एवं हस्म-रिद्०। इत्थि०-पुरिस० उक्क० अह-वारह० देसूणा। अथवा वारह चोद्दस० णित्थ। अणुक्क० अह-तेरह चो० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० अह चो०, अणुक्क० अह-तेरह चो०। वेडिव्वयिमस्स० खेत्तमंगो। एवमाहार०-आहारिमस्स०-अवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खादसंजदे ति।

बतलाया है वह पंचेन्द्रिय श्रादि पृथेंक चार मार्गणाश्रोंकी प्रमुखतासे ही बतलाया है, इसलिये यहां उक्त मार्गणाश्रोंमें मिण्यात्व श्रादिकी उन्कृष्ट स्थितिबालोका स्पर्श श्रायके समान कहा। उक्त मार्गणाश्रोंका विहारवत्स्वस्थान श्रादिकी अपंचा स्पर्श कुछ कम श्राठ बटे चौदह भाग तथा मारणान्तिक ममुद्धात श्रोर उपपादकी अपंचा स्पर्श सब लोक है, अतः इनमे श्रातुकृष्ट स्थितिबालोंका स्पर्श उक्त प्रमाण कहा। स्त्रीवद श्रोर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिबालोंका विहार श्रादिकी श्रपेचा कुछ कम श्राठ बटे चौदह भाग प्रमाण श्रोर मारणान्तिक समुद्धातकी श्रपेचा कुछ कम बारह बटे चौदह भाग प्रमाण स्पर्श प्रात होता हैं, इसलियं इनकी उत्कृष्ट स्थितिबालोंका उक्त प्रमाण स्पर्श वत्ताचार्य हैं। तथा इन दोनों प्रकृतियोंकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिबालोंका कुछ कम श्राठ बटे चौदह भाग प्रमाण स्पर्श विहारादिककी श्रपेचा वत्तलाया है श्रोर सब लोक स्पर्श मारणान्तिक तथा उपपाद पदकी श्रपंचा बतलाया है। तथा सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिबालोंका कुछ कम श्राठ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्श विहार श्रादिकी श्रपंचा बतलाया है श्रोर इन दोनों प्रकृतियोंकी श्रमुत्कृष्ट स्थितिबालोंका लोकके श्रमंख्यात्व भाग प्रमाण स्पर्श वर्तमान काल श्रादिकी श्रपंचा तथा सब लोक स्पर्श मारणान्तिक समुद्धात श्रोर उपपाद पदकी श्रपंचा वत्ताया है। चचुदर्शन श्रादि कुछ श्रोर मार्गणाएं है जिनमे यह व्यवस्था बन जाती है, श्रतः उनके कथनको श्राघके समान कहा है।

ह ६३१. वैकियिककाययोगियोमें मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर पांच नोकपायोंकी उत्कृष्ट और श्रानुन्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोने त्रस नालीके चांदह भागोंमेंसे कुछ कम त्राठ श्रोर कुछ कम तेरह भागप्रमाण नंत्रका स्पश्ने किया है। इसी प्रकार हास्य श्रोर रित नोकपायकी श्रपंत्ता जानना चाहिये। स्त्रीवद श्रोर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोने त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रोर कुछ कम बारह भागप्रमाण नंत्रका स्पर्श किया है। श्रथवा त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम बारह भागप्रमाण स्त्रका स्पर्श किया है। श्रथवा त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम बारह भागप्रमाण नंत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालीके चौदह भागोंमें के कुछ कम श्राठ भागप्रमाण नंत्रका स्पर्श किया है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालीके चौदह भागोंमें के कुछ कम बारह भागप्रमाण नंत्रका स्पर्श किया है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालीके चौदह भागोंमें कुछ कम आठ श्रोर कुछ कम तरह भाग प्रमाण नंत्रका स्पर्श किया है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें स्पर्श नंत्रके समान है। इसी प्रकार श्राहारककाययोगी, श्राहारकमिश्रकाययोगी, श्रपगतवेदवाले, श्रकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छदापस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धसंयत, सूद्मसांपरायिकसंयत श्रोर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — वैक्रियिककाययोगका स्पर्श कुछ कम आठ वटे चौदह भाग और कुछ कम तेरह वटे चौदह भाग है। वही यहां मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितवालोंके प्राप्त ६ ६३२. णवुंस० ओघं। णवरि अह चोइ० णस्थि। मिच्छत्त-सोलसक०-उक्क० छ चोइ०। इत्थि०-पुरिस० पंचिंदियभंगो।

६२२ आभिणि०-सुद०-ओहि० सव्वपयदी० उक्क० ऋणुक्क० लोग० ऋसंखे०भागो अह चो० देसूणा। एवमोहिदंस०-सम्मादि०-वेदय०-उवसम०-सम्मा-मिच्छादिहि ति । विहंग० मणजोगिभंगो। संजदासंजद० उक्क० खेत्तभंगो, ऋणुक्क०

हाता है, इसलिये इसे तत्प्रमाण कहा। किन्तु पुरुपवेद और स्त्रीवेदकी उत्कष्ट स्थितिवालोंका कुन्नकम तेरह बटे चौदह राजु स्पर्श न प्राप्त होकर कुन्नकम वारह बटे चौदह राजु प्राप्त होता है। कारणका स्पष्टीकरण त्रोधमें कर त्राये हैं। श्रव विकरूपरूपसे जो वारह बटे चौदह राजुका निपेध किया है। उसका मुख्य कारण यह है कि नीचे सात नरकके नारका स्त्रीवद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए यद्यपि तियंच और मनुष्योंमें मारणान्तिक समुद्धात करते हैं किर भी उनका प्रमाण स्वरूप होता है अतः कुन्नकम बारह बटे चौदह भाग प्रमाण स्पर्श नहीं बनता है। श्रनुत्कृष्टका खुलासा उत्कृष्टके समान ही है। सम्यक्त और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थित वेदकसम्यग्द्रष्टियोंके पहले समयमें होती है और वेदकसम्यग्द्रष्टियोंका स्पर्श कुन्न कम श्राठ बटे चौदह राजु होता है अतः सम्यक्त और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितवालोंक। स्पर्श भी उक्त प्रमाण ही बतलाया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितवालोंक स्पराका खुलासा मिण्यात्व आदि की अनुत्कृष्ट स्थितवालोंक समान है। चैकियिकमिश्रकाययोग और श्राहारककाययोग श्रादि ऐसी मार्गणाएं हैं जिनके स्पर्शनमें क्लिसे अन्तर नहीं पड़ता, अतः उनका स्पर्शन क्लिके समान कहा है।

§ ६३२. नपुंसकवेदवाले जीवोमें आघके समान भंग हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि इतमे त्रम नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भगप्रमाण स्पर्श नहीं हैं। मिण्यात्व और सोलह कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिविभितवाले जीवोंने त्रमनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण जेत्रका स्पर्श किया है। स्वीवेदवाले और पुरुपवेदवाले जीवोंमें पंचेन्द्रियितयंचोक समान भंग है।

विशोपार्थ — नपुंसकवेदमें जो ओघके समान स्पर्श बतलाया है वह अनुन्दृष्ट स्थितिकी अपेदा बतलाया है। उत्कृष्ट स्थितिकी अपेदा तो विशेषता है। बात यह है कि आंघसे सिभ्यात्व आदिकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका विहार आदिकी अपेदा जो कुछ कम आठ वटे चौदह राजु स्पर्श बतलाया है वह नपुंसकवेदियोंके नहीं ग्राप्त होता, क्योंकि वह देवोंकी सुख्यतासे बतलाया है और देवोंमें नपुंसकवेदी जीव होते नहीं। हां सिभ्यात्व और सोलह कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिवाले नपुसकवेदियोंने नीचेके छह राजु त्रेत्रका स्पर्श किया है, अतः इनमें उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका यह स्पर्श वन जाता है। तथा स्वीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श पंचेन्द्रियोंने समान है। इसका यह अभिप्राय है कि पंचेन्द्रियोंमें जिस प्रकार स्वीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहां भी घटित कर लेना चाहिये।

§ ६३३ श्राभिनिबोधिकज्ञानी, शुनज्ञानी और श्रवधिज्ञानियोंमें सव प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर अनुत्कष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लांकके श्रसंख्यातवें भाग चेत्रका श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राट भागप्रमाण चेत्रका स्पर्द किया है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनवाले, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्रमसम्यग्दृष्टि श्रोर सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंक जानना चाहिये। विभंगज्ञानियोंमें मनोयोगियोंके समान भंग है। संयतासंयतोंमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे

ब चोहस देसूणा । एवं सुक्क ।

§ ६३४. तिण्णि ले॰ मिच्छत्त-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० छ चोद० चत्तारि चोद० वे चोद० देस्णा । अणुक्क० सव्वलोगो । इत्थि०-पुरिस० खेत्तभंगो । अथवा णवणोक० उक्क० तेरह-एकारस-णव चोद्दसभागा वा देसूणा, उववाद्विवक्खाए तदुव-लंभादो । सम्मत्त॰सम्मामि० तिरिक्खोघं । तेउ० सोहम्मभंगो । एम्म० सणक्कुमार-भंगो । खइय० एक्कवीस॰ उक्क० खेत्तभंगो । अणुक्क० अह चो० देसूणा । सासण० उक्क० अणुक्क० अह-वारह चोद० देसूणा । असण्णि० एइंदियभंगो ।

## एवसुकस्सपोसणाणुगमो समत्तो ।

कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोके स्पर्श जानना चाहिये।

विशेषार्थ—अन्यत्र आभिनिशेधिकज्ञानी आदि जीवोंका जो स्पर्श वतलाया है वहीं यहां उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका प्राप्त होता है। उससे इसमें कोई विशेपता नहीं है। मिण्यात्वके रहते हुए जहां जहां मनोयोग सम्भव है वहां वहां विभंगज्ञान भी सम्भव है, अतः विभंगज्ञानियोंमें उत्कृष्ट और अनुकृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श मनोयोगियोंके समान बनलाया है। जो उत्कृष्ट स्थितवाले वेदकसम्यग्दिष्ट जीव संयमासंयमको प्राप्त होते हैं उन्होंके पहल समयमे उत्कृष्ट स्थिति होती है, अतः संयनासंयतोके सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितवालोंका स्पर्श क्षेत्रके समान ही प्राप्त होता है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श कुछ कम छह वटे चौदह राजु है, क्योंकि मारणानिक ममुद्वातकी अपेत्ता संयतसंयतोने इतने त्त्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यामे भी घटित कर लेना चाहिये।

§ ६:४. कृष्ण श्रादि नीन लेश्यावालोमें मिध्यात्व, सोलह कपाय और सात नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाले जीवोने त्रसनालीके चौदह भागामेंसे क्रमसे कुछ कम छह, कुछ कम चार और कुछ कम दो भागप्रमाण नेत्रका स्पर्श किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोने सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है। स्वीवेद श्रीर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है। श्रथवा नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रस नालीके चौदह भागोमेंसे कमसे कुछ कम तेरह, कुछ कम ग्यारह और कुछ कम नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है, क्योंकि उपपादकी विवचामे इस प्रकारका स्पर्श पाया जाता है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यिग्ध्यात्वकी श्रपेचा स्पर्श सामान्य तिर्यचोंके समान है। पीतलेश्यावालोंमें सौधर्म कल्पके समान भंग है। पद्मलेश्यावालोंमें सनत्कुमार कल्पके समान मंग है। चायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंक। स्पर्श चेत्रके समान है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सामादनसम्यग्दृष्टियोंमें उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम श्राठ श्रीर कुछ कम बारह भाग चेत्रका स्पर्श किया है। श्रसंक्रियोंमें एकेन्द्रियोंके समान भंग है।

विशोषार्थ—कृष्ण, नील और कापोत लेश्यामें मिध्यात्व, सीलह कपाय और सात नीकषायवालोंके जो कमसे कुछ कम छह बटे चौदह राजु, कुछ कम चार बटे चौदह राजु और कुछ कम दो बटे चौदह राजु प्रमाण स्पर्श हैं वह नारिकयोकी मुख्यतासे बतलाया है। तथा ये तीनों ६३५. जहरूणए पयदं । दुविहो० णिइ सो — मोघेण मादेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० जह० श्रजह० खेत्तभंगो । सम्मत्त जह० खेत्तभंगो । श्रज्ज० अणुक्क०भंगो । सम्मामि० जह० अज० अणुक्क०भंगो । अणंताणु०-चउक्क० ज० लो० असंखे०भागो अह चो० देसूणा । श्रज्ज० सन्वलोगो । एवं काययोगि-चत्तारिक०-अचक्खु०-भवसि०-श्राहारि ति ।

लेश्यावाले जीव सब लोकमें पाये जाते हैं अतः इनमे उक्त प्रकृतियोको अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका स्पर्श सब लोक बतलाया है। स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव लोकके असंख्यातवें भागमें पाये जाते हैं, चेत्र भी इतना ही हैं अतः इनका स्पर्श चेत्रके समान बतलाया है। तथा विकल्परूपसे कृष्णादि तीन लेश्याओमें उपपाद पदकी अपेचा नौ नाकपायोका स्पर्श जो कुछ कम तेरह बटे चोदह राजु कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजु और कुछ कम नौ बटे चौदह राजु वतलाया है वह कमसे नीचे छह, चार और दो राजु तथा ऊपर सात राजुकी अपेचा जानना चाहिये। कृष्णादि तीन लेश्यावालोंमें तिर्यचोंकी बहुलता है, अतः इनम सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वका स्पर्श तिर्यचोंके समान बतलाया है। शेष मार्गणाओंका स्पर्श सुगम है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट स्पर्शनानुगम समाप्त हुआ।

§ ६२४. श्रव जघन्य स्पर्शाका प्रकरण है। उसकी अपेद्धा निर्देश दो प्रकारका है—
श्रांयनिर्देश और श्रादेशनिर्देश। ओघकी अपेद्धा मिध्यात्व बारह कषाय और नो नोकपायांकी
जघन्य और श्रादेशनिर्देश। ओघकी अपेद्धा मिध्यात्व बारह कषाय और नो नोकपायांकी
जघन्य और श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रक समान है। तथा श्रजघन्य स्थितविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श
श्रजस्थिक समान है। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य श्रार श्रजघन्य स्थितिवाले जावोका स्पर्श अनुस्कृष्टके
ममान है। श्रजन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिवभक्तिवाले जीवोंने लोकक श्रसंख्यातवे
भाग श्रार त्रसनालीक चौदह भागोमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। तथा
श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने सब लोकका स्पर्श किया है। इसी प्रकार काययोगी, चारो
कपायवाले, श्रचचुदर्शनवाले, भव्य श्रीर श्राहारक जीवोंक जानना चाहिये।

विशेषार्थ — मिध्यात्व, बारह कपाय और नी नांकपायोंकी जघन्य स्थितिवालोंका तेत्र लांकक असंख्यात्वें भागप्रमाण और अजघन्य स्थितिवालोंका तेत्र सब लांक है। स्पर्श मां इतना ही है, अतः इनके स्पर्शकां तेत्रके समान बतलाया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति यद्यपि चारों गतिक जीवोंक पाई जाती है फिर भी एसे जीव संख्यात ही होते हैं अतः इनका स्पर्श मां तेत्रक समान ही प्राप्त होता है। यही कारण हाक सम्यक्त्वका अजघन्य स्थितिवालों का स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है यह स्पष्ट ही हैं। सम्यिग्मध्यात्वका जघन्य और अजघन्य स्थितिका स्पर्श त्रिक समान वनलाया है। अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान सब लांक है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति विसंयोजनाक समय प्राप्त होती है। अब यदि एसे जीवोंक वतमान स्पर्शका विचार किया जाता है तो वह लोंकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहां जघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श उक्त प्रमाण कहा है। तथा ऐसे जीवोंका विहार आदि कारण है कि यहां जघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श उक्त प्रमाण कहा है। तथा ऐसे जीवोंका विहार आदि कारण है। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अजघन्य स्थितिवाले जीव सब लोंकमें हैं, इसलिये उनका सब लोंक स्पर्श बतलाना स्पष्ट ही है। कुछ मागेणाएं भी ऐसी हैं जिनमें यह आंच प्रस्तिणा अविकल घटित हो जाती है अतः उनके कथनको अधिके समान कहा है।

§ ६३६. आदेसेण णेरइएसु सत्ताबीसपयडी० ज० खेत्तभंमो । त्राज० अणुक्क० भंगो । सम्मामि० ज० अज० अणुक्क०भंगो । पढमाए खेत्तभंगो । विदियादि जाव सत्तिमि ति ब्रव्वीसपयडी० जह० खेत्तभंगो । अज० अणुक्क०भंगो । सम्मत्त०-सम्मामि० ज० अज० अणुक्क०भंगो ।

६६३७. तिरिक्स० मिच्छत्त-बारसक०भय-दुगुंछ० ज० अज० सव्वछोगो। अण्णो पाढो जह० खेत्तं पोसणं च लोग०सखेज्जदिभागो ति।सत्तणोक०अणंताणु०-चउक्क०-सम्मत्त० ज० अज० खेत्तभंगो। सम्मामि० ज० अज० अणुक्क०भंगो। णवरि सम्मत्त० अज० अणुक्क० भंगो। एवं काउ०। असंजद० एवं चेव। णवरि

§ ६३६ ब्रादेशकी अपेत्त। नार्राकयोम सत्ताईस प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पश्च त्रव्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है। सम्यग्मिण्यात्वका जघन्य और अजघन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है। पहली पृथिवीम स्पर्श त्रव्यके समान है। तथा दूसरीसे लेकर सातवीं तकके नारिकयोंमें छन्वीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका स्पर्श त्रव्यक्ष समान है आर अजघन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका स्पर्श त्रव्यक्ष समान है। सम्यक्तव और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है।

विशोपार्थ - नारिकयोंमे मिध्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थिति उन जीवाके प्राप्त होती है जो असंज्ञी जीव अपनी जवन्य स्थितिक साथ नरकमे उत्वन्न होते हैं। सम्यक्तको जवन्य स्थिति कृतकृत्यवद्क सम्यन्द्धि नार्राक्योके होती है और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवम्य स्थिति विसंयोजना करनेवाले नारिकयोके हाती हैं। श्रव यदि इनके स्पर्शका विचार किया जाता है तो वह लोकके श्रसंख्यातवें भागत्रमाण ही प्राप्त होता है। चेत्र भी इतना ही हं, अतः इनके स्पशका चेत्रके समान बतलाया है। उक्त प्रकृतियोंकी खजघन्य स्थितिवालोका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है यह स्पष्ट ही है। जिनके सम्याग्मध्यात्वकी सत्ता हे उन सब नारिकयोंके सम्यामिण्यात्वकी त्राज्ञघन्य स्थिति होती है। इसमे भी जो नारकी सम्यामिण्यात्वकी उद्वेलनाके श्रन्तिम समयमे हैं उनके उसकी जघन्य स्थिति होती है। अब यदि इनके वर्तमान तथा कुछ पदोकी ऋपेद्मा ऋतीत स्पर्शका विचार किया जाता है तो वह लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण प्राप्त होता है तथा माराए।न्तिक अौर उपपाद पदकी अपेना अतीत कालीन स्पर्श कुछ कम छह बटे चोदह राजु प्राप्त होता है। अनुत्कृष्टकी अपेन्ना भी स्पर्श इतना ही है, अतः यहां सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य भौर अजघन्य स्थितिवालोका स्परा अनुत्कृष्टक समान बतजाया है। सर्वत्र पहली पृथिवीका स्पर्भ चेत्रके समान ही प्राप्त होता है अतः यहा पहली पृथिवीम सब प्रकृतियोंकी जवन्य और त्रजघन्य स्थितिवालोंका स्परा चत्रक समान बतलाया है। द्वितीयादि पृथिवियोमे भी इसी प्रकार जघन्यादि स्थितियोंके स्वामियोका विचार करके स्पश समभ लेता चाहिये।

§ ६३७ तिर्यचोमं मिध्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने सब लाकका स्पर्श किया है। यहां एक दूसरा पाठ है जिसके अनुसार उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका चेत्र आर स्पर्शन लाकके संख्यातवें भाग-प्रमाण है। सात नाकपाय, अनन्तानुबन्धी चतुष्क और सम्यक्तवकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है। तथा सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी

मिच्छत्त॰ जह० सम्मत्तभंगो । किण्ह-णील० तिरिक्खभंगो । णवरि सम्मत्त॰ सम्मा-मिच्छत्तभंगो । एवमोरालियमिस्स०-मदि-सुद्ज्यण्णाण-ग्रभय॰ मिच्छादि०-ग्रसण्णि ति । णवरि अणंताणु०चउक्क० मिच्छत्तभंगो । अभव० सम्मत्त०-सम्भामि० णित्थ । श्रोरा-लियमिस्स॰ सम्म० तिरिक्खोघं ।

अजघन्य स्थितिविभक्तिभाते जीवाका स्पर्शे अनुत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार कापीतलेश्यानले जीवोंक जानना चाहिये। तथा इमी प्रकार असंयतोंके भी जानना चाहिये। किन्तु इनके इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोंके स्पर्शका मंग सम्यक्त्वके समान है। कृष्ण और नोललेश्यावालोंमें तिर्यचोंके समान भग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका मंग सम्यिमण्यात्वके समान है। इसी प्रकार औदारिकिमश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, अभव्य, मिण्यात्वके समान है। इसी प्रकार औदारिकिमश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, अभव्य, मिण्यात्विष्ठ और असंज्ञा जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुवन्धीचतुष्ठका भंग मिण्यात्वके समान है। अभव्योंमें सम्यक्त्व और सम्यम्प्रियात्व ये दो प्रकृतियां नहीं हैं। तथा औदारिकिमिश्रकाययोगियोंमें सन्यक्त्वका मंग सामान्य तियचोंक समान है।

विशोपार्थ- 'तर्थचोमं मिथ्यात्व, वारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति बादर एकेन्द्रियोंक हाता है। वैसे ता बादर एकेन्द्रियोका निवास लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण नेत्रमें ही हैं किन्तु मारणान्तिक समुद्घातकी अपना इनका स्वर्श सब लोकमें पाया जाता है, इसलिये इनका सब लोक स्पर्श बतलाया है । तथा इनकी अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श सब लोक है यह स्पष्ट हा है। बारसेन स्वामीने यहां एक ऐसे पाठका उल्लंख किया है जिसके अनुसार तियांकों उक्त प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिवालोका चेत्र श्रीर स्पर्श लोकके मंख्यातर्थे भाग प्रमाण प्राप्त होता है । श्रव यदि इस पाठके त्रानुसार विचार करते हैं तो एसा प्रतीत होता है कि मारणान्तिक समुद्र्यातके समय ज्ञचन्य स्थिति नहीं होती होगी। सात नांकपाय, अनन्तानुबन्धी चतुपक और सम्यक्त्वकी जबन्य स्थित पंचेन्द्रिय तिर्थंचोंके होती है। यद्यपि पंचेन्द्रिय निर्थंचोका मारणान्तिक समद्यात श्रीर उपपाद पटकी अपेना स्पर्श सब लोक है तो भी उक्त प्रकृतियोंको जबत्य स्थितिक समय ये पद सम्भव नहीं उसलिये इनका स्पर्श चेत्रके समान वन जाता है। यद्यपि सम्यक्त्व प्रकृतिकी जवन्य स्थितिके समय उपपाद पद सम्भव है तो भी इससे स्परामे अन्तर नहीं पड़ता, क्योंकि ऐसे जीव संख्यात ही होते हैं। तथा इनकी अजयन्य स्थितिवालोका स्परा चेत्रके समान है इसका यह श्रभिपाय है कि जिस प्रकार इनका चेत्र सब लोक है उसी प्रकार स्पर्श भी सब लोक है। किन्त सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिवालोका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग और सब लाक दोनों प्रकारका प्राप्त होता है। इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोका स्पर्श भी ऐसा ही है। अतः सम्यक्त्वकी अजधन्य स्थितिवालोका स्वरं अनुत्रृष्टकं समान कहा है। इसं। प्रकार सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य और अजवन्य स्थितिबालोका स्परा भी अनुत्रुष्टकं समान घटित कर लेना चाहिये। कापानलेश्यावाल और श्रसंयतसम्यग्द्रियोंके यह व्यवस्था वन जाती है श्रतः इनके कथनको उक्त प्रमाण कहा है। किन्त श्रसंयतोंकं ज्ञायकसम्यग्दर्शनकी प्राप्तिकं समय मिध्यात्वकी भी ज्ञपण होती है श्रीर इमलिये यहां मिथ्यात्वकी त्रोघरूप जघन्य स्थिति बन जाती है। अब यदि ऐसे जीवोक स्पर्शका विचार किया जाता है तो वह सम्यक्त्वको जघन्य स्थितिवालोके समान लोकक श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण ही प्राप्त होता है, इसलिये ऋसंयतोंमें मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिवालोंका स्पश सम्यक्तवके समान बतलाया हैं। कृष्ण श्रीर नाल लेश्यामें भी सब प्रकृतियों की जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितियालों का स्पर्श तिर्येचोंक समान बन जाता है। किन्तु इन दोनों लेश्यास्त्रोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टियोंकी उत्पत्ति न

§ ६३८. पंचिदियतिरिक्लितिए सत्तावीसं पयडीणं जह० लोग० असंखे०भागो। अज० लोग० असंखे०भागो, सञ्बलोगो वा । सम्मामि० जह० अज० लोग० असंखे०-भागो सञ्बलोगो वा । णविर जोणिणीसु सम्म० सम्मामि०भंगो । पंचि०तिरि०-अपज्ज०-मणुसअपज्ज० जोणिणीभंगो । मणुसतिए पंचि०तिरिक्लभंगो ।

६६३६ देवेसु मिच्छ०-सम्म०-बारसक०-णवणोक० जह० खेत्तं, अज०

होनेसे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति एक समय प्रमाण नहीं प्राप्त होती श्रीर इसिलयं सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिवालोंका जो स्पर्श पूर्वमें बनलाया है वही यहां सम्यक्त्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिवालोंका प्राप्त होना है। यही कारण है कि उक्त दोनों लेश्याश्रोमें सम्यक्त्वके संगको सम्यग्मिण्यात्वके समान बनलाया है। श्रीदारिकिमिश्र श्रादि कुछ श्रीर मार्गणाएं हैं जिनमे उक्त व्यवस्था बन जाती है इसिलये उनके कथनका उक्त प्रमाण कहा है। किन्तु इन मार्गणाश्रोमें श्रनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं होती, अतः इनमें श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिवालोका स्पर्श मिण्यात्वके समान बनलाया है। श्रभव्य मार्गणामें सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिण्यात्व प्रकृति नहीं होती, अतः इनका निषेध किया है। श्रीदारिकिमिश्रमे कृतकृत्यवेदकसम्यग्दिष्योंकी उत्पत्ति सम्भव है श्रनः इसमें सम्यक्त्वका भंग सामान्य तिर्थचोंके समान बनलाया है।

§ ६३ ८ पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपयांत्र श्रीर पंचे द्रिययोनिमती इन तीन प्रकारके तिर्यंचोमं सत्ताईस प्रकृतियोंकां जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। नथा अजयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग ख्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है। सम्याग्मध्यात्वकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग ख्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इननी विशेषता है कि योनिमती तिर्यचोंमे सम्यक्त्वका भंग सम्यागमध्यात्वके समान है। पंचेन्द्रियतिर्यचअपर्यात ख्रीर मनुष्य अपर्याप्तकोमे तिर्यंच योनिमती जीवोके समान भंग है। सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त ख्रीर मनुष्यिनियोंमं पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान भंग है। सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त ख्रीर मनुष्यानियोंमं पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान भंग है।

विश्रेषार्थ — पंचेन्द्रिय तियंचित्रकमें सत्ताईस प्रश्नित्योंकी जचन्य स्थितिक जो स्वामी वतलाये हैं उन्हें देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि इनका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही प्राप्त होता है। अन्यत्र पचेन्द्रिय तियंचित्रकका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण व सब लोक बतलाया है। अब यदि इनमें उक्त प्रश्नुतियोकी अजचन्य स्थितिवालोंक स्पर्शका विचार करते हैं तो वह उतना बन जाता हं, इमलिये यहां इनके स्पर्शको उक्त प्रमाण वत्तलाया है। किन्तु उक्त तियंचोंमें सम्प्रिमण्यात्वकी जचन्य और अजचन्य स्थिति सब अवस्थाओं में सम्भव है और इसलिये उक्त तियंचोंका जो स्पर्श बतलाया है वह सम्यिगण्यात्वकी जचन्य और अजचन्य स्थितिकी अपेन्ना भी बन जाता है यहां कारण है कि इनमें सम्यिगण्यात्वकी जचन्य और अजचन्य स्थितिकी अपेन्ना भी बन जाता है यहां कारण है कि इनमें सम्यिगण्यात्वकी जचन्य और अजचन्य स्थितिकी अपेन्ना भी बन जाता है वहां कारण है कि इनमें सम्यिगण्यात्वकी जचन्य और अजचन्य स्थितिवालोंका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण व सब लोक बतलाया है। किन्तु योनिमती तियंचोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दिष्ट जीव नहीं उत्पन्न होते, अतः इनमें सम्यन्त्रका भीग सम्यिग्मण्यात्वक समान बतलाया है। पेचेन्द्रिय तियंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जो जचन्य और अजचन्य स्थितिक स्वामी बतलाये हैं उसे देखते हुए इनका स्पर्श योनिमतियोंके समान बन जाता है, इसलिये इनके भंगका योनिमतियोंके समान कहनेका भी यही तात्पर्य है।

§ ६३६. देवोमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थिति-

लोग० असंखे॰भागो अद्द-णव चोइ०। सम्मामि॰ जह० अज० लोग० असंखे०-भागो अद्द-णव चोइ०। अणंताणु०चउक० जह० लोग० असंखे०भागो अद्द चोइ०। अज० लोग० असंखे०भागो अद्द-णव चोइ०। एवं सोहम्मीसाण०।

§ ६४०, भवण - वाणवेंतर०-जोदिसि० मिच्छ०-बारसक०-णवणोक० जह० होग० असंखे०भागो । सन्वेसिमज० सम्म०-सम्मामि० ज० अज० लोगस्स असंखे०भागो अद्धुह-अह-णव चो६०। अणंताणु०४ जह० अद्धुह-अह चो६०। सणक्कुमारादि जाव सहस्सार त्ति मिच्छ०-सम्म०-वारसक०-णवणोक० जह० लोग० असंखे०भागो। सन्वेसिमज० सम्मामि०-अणंताणु० जह० अज० लोग० असंखे०भागो अह चोहस०। आणदादि अच्चुदा ति मिच्छ०-सम्म०-बारसक०-णवणोक० जह० लोग० असंखे०भागो। सन्वेसिमजह० सम्मामि०-अणंताणु०४ जह० अज० लोग० असंखे०भागो छ चो६०। उविर खेत्तभंगो। एवं वेउव्वियमिस्स०-आहार-आहारमि०-

विभक्तित्राले जीवोंका स्परा इंत्रके समान हैं। तथा अजवन्य स्थितिवभक्तिशले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमें ते कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भाग होत्रका स्पर्श किया है। सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमें कुछ दम आठ और कुछ कम नौ भाग प्रमाण हेत्रका स्पर्श किया है। अनन्तानुवन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमें कुछ कम आठ भाग प्रमाण हेत्रका स्परा किया है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम आठ भाग प्रमाण हेत्रका स्परा किया है। इसी प्रकार सोधमं और ऐशान कल्पके देवोंमे जानना चाहिये।

६६४० भवनवासी, व्यन्तर श्रीर ज्यांतिषी देवोंमें मिध्यात्व, बारह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके त्र्यसंख्यातवें भाग चेत्रका स्पर्श किया है। तथा मभी प्रकृतियोंकी अजधन्य तथा सम्यक्त और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य और अजधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागांमसे कळ कम साढे तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नी भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम साढ़े तीन श्रीर कुछ कम ब्याठ भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सानकुमारसे लेकर सहस्नार कल्प तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्तव, बारह कषाय और नौ नांकषायोंकी जधन्य स्थितिविभिक्तवाले जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग जेत्रका स्पर्श किया है। तथा सभी प्रकृतियोकी अजवन्य श्रीर सम्यग्मि-थ्यात्व तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लांकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण जेत्रका स्पर्श किया है। आनतसे लेकर अच्यत कल्पतकके देवोमें मिध्यात्व, सम्यक्तव, बारह कपाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तेत्रका स्पर्श किया है। तथा उक्त सब प्रकृतियोंकी अजवन्य ऋौर सम्यग्मिध्यात्व तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रज्ञचन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भाग श्रीर श्रमनालीके चौरह भागोंमंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। इसके आगेके देवोंमें चेत्रके अवगद् ॰-अकसाय ॰-मणपज्ज ॰-संजद् ॰-सामाइय-छेदो ॰-परिहार ०- सुहुम ०-जहाक्खाद-संजदे ति ।

६ ६४१, एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० ज० अत० सव्वलोगो ।
सम्मत्त-सम्मामि० ज० अज० अणुक्कस्सभंगो । एवं पुढिवि०-बादरपुढिवि०-बादरपुढिविअपज्ज०-सुहुमपुढिवि०-सुहुमपुढिविपज्जत्त।पज्जत्त-आउ०-बादरआउ०-बादरआउअपज्ज०सुहुमआउ०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त-तेउ० - बादरतेउ०-बादरतेउअपज्ज०-सुहुमतेउ०सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ० - बादरवाउ०-बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउ०-सुहुमवाउ०
पज्जत्तापज्जत्त-वादरवणप्फिदिपत्तेयअपज्ज०-वणप्फिदि-णिगोद० - बादरवणप्फिदि०-

समान भंग है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपपातवेदवाले, अकपायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार-विद्युद्धिसंयत, मृदमसांपरायिकसंयत श्रीर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्ध-देवोमें मिथ्यात्व, बारह कपाय, नौ नोकपाय और सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति किसी खाम अवस्थामें ही प्राप्त होती है और सबके सम्भव नहीं अतः इनकी जघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श चेत्रके समान ही प्राप्त होता है और इसलिय इसे चेत्रके समान वतलाया है। परन्तु श्रजघन्य स्थितिके लिये ऐसा कोई प्रतिवन्ध नहीं है श्रतः उक्त प्रकृतियोंकी त्राजघन्य स्थितिवालोंका वही स्पर्श प्राप्त हो जाता है जो सामान्य देवोंका बतलाया है। यही बात सम्यग्मि-श्यात्वकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिवालोंके लिये समक्त लेना चाहिये। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति विसंयोजनाके समय होती है पर ऐसे समय एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात सम्भव नहीं त्र्यतः इनकी जघन्य स्थितिवालोंका स्पर्ध लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण और क्रब कम त्राठ बटे चौदह राज बनलाया है। तथा त्रज्ञचन्य स्थितवालोंका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम त्राठ वटे चौदह राज त्रीर कुछ कम नौ वटे चौदह राज बनलाया है। यह सामान्य देवोमे स्पर्श हुआ। इसी प्रकार देवोंके प्रत्येक भेटमें ऋपनी ऋपनी विशेषताको जान कर स्पर्श जान लेना चाहियं । कहां कितना स्पर्श हैं इसका निर्देश मुलमे किया ही हैं । कोई विशेषता न होनेसे उसका खुलासा नहीं किया है। हां भवनविक्रमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते अतः उनमें सम्यक्त्वकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श सम्याग्मिश्यात्वके समान बनलाया है। यहां 'एवं' कह कर जो चैक्रियिक मिश्र आदिमें स्पर्शका निर्देश किया है सो उसका यह मतलब है कि जिस प्रकार नौ भैवयक ऋादिमें स्पर्श चंत्रके समान है उसी प्रकार इन वैकियिकमिश्र आदि मागेंगा श्रोमें अपने अपने ज्ञेंब्रके समान स्पर्श जानना चाहिये ।

६ ६४१ . एकेन्द्रियों में मिण्यात्व, मोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोने सब लोकका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोंके स्पर्शका मंग अनुत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, वादरपृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त पृथिवीकायिक, सूक्तम पृथिवीकायिक पर्याप्त, सूक्त पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त प्रथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त जलकायिक अपर्याप्त, आग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्त अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर अग्निकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक, सूक्त अपर्याप्त, सूक्त वायुकायिक, स्वर्ग वायुक्त वायुकायिक, स्वर्ग वायुक्त वायु

वादरवणप्रदिपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमवर्णप्रदि-सुहुमवणप्रदिपज्जत्तापज्जत्त-कम्मइय०-अणाहारि ति । एवरि कम्मइय०-ऋणाहारीसु सम्भत्तस्स तिरिक्खोधं । सन्वविगलिदिय-पंचिदियञ्चपज्ज-०तसअपज्ज० पंचिदियतिरिक्खञ्चपज्जत्तभंगो । वादरपुढविपज्ज०-वादरञ्चाउपज्ज०--वादरतेउपज्ज०--वादरवाउपज्ज०--वादरवणप्रदिपत्तेयसरीरपज्ज०-तसअपज्जत्तभंगो । णविरि वादरवाउपज्ज० ब्रन्वीसपय० ज० अज० लोग० संस्वे०भागो सन्वलोगो वा ।

६४२ पंचिंदिय-पंचिं०पज्जि तेवीसपयडी० ज० खेत्तं, श्रज० अणुक्क भंगो । सम्मामि० श्रोघं । अणंताणु०चउक्क० ज० देवोघं । अज० अणुक्क०भंगो । एवं तस-कायिक प्रत्येक शरीर, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपयोप्त, वनस्पतिकायिक, सभी-तिगोद, वादर वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, सूद्रम वनस्पतिकायिक अपयोप्त, सूद्रम वनस्पतिकायिक पर्याप्त, सूद्रम वनस्पतिकायिक अपयोप्त, कामण्कापयोगी और अनाहारक जीवोकं जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेपता है कि कार्मण्काययोगी श्रोर अनाहारको सम्यक्त्वका भग साम न्य तियंचोंके समान है। सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और इस अपर्याप्त जीवोमें पंचेन्द्रिय तियंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। बादर प्रथिवी-कायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, वादर अभिनकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त श्रीर वादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोमें छडवीस प्रकृतियोंकी जवन्य और अज्ञयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोने लोकके संख्यातवें भाग और सब लोक प्रमाण त्रेत्रका स्पर्श किया है।

विशेषार्थ—एकेन्द्रियों में मिण्यात्व, मोलह कपाय और नौ नोकपायों की जघन्य और अजघन्य स्थितिवाले जीव सर्वत्र पाये जाते हैं इसलिये इनका स्वां सब लोक वतलाया है। सम्यक्त्व और सम्यिमण्यात्वकी जघन्य और अजघन्य म्थितिवालोंका स्वर्ग अनुन्दृष्टक समान है मो इसका खुलासा जिम प्रकार पहले कर आये हैं उमी प्रकार यहां भी कर लेना चाहिये। पृथिवीकायिक आदि सागणाओं में एवं न्द्रियों के समान स्वर्ग वन जाना है, इसलिये उनके कथनको एकेन्द्रियों के समान कहा है। बिन्तु कामणकायोगी और अनाहारकों में कु कृत्यवेदक सम्यन्दृष्टि जीव भी उत्त्वन्न होते हैं अनः उनमें सम्यक्त्वका स्वर्ग मामान्य नियंचों के समान बन जाना है। पंचेन्द्रिय नियंच लब्ध्यपर्याप्तकों में सब प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के कारण स्वरामें जो विशेषता प्राप्त होती है इसलिये यहां इनके स्वरंका पंचेन्द्रिय अवर्याप्त और अलघन्य निवालों है। इसी प्रकार वादर पृथिवा पर्याप्त आदिमें सब प्रकृतियों के जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के स्वरंको त्रस अवपन्य स्थितिवालों के स्वरंको समान वनलाया है। इसी प्रकार वादर पृथिवा पर्याप्त आदिमें सब प्रकृतियों के जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के स्वरंको अचन्य और अजघन्य स्थितिवालों के प्रवंको जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के उन्ते अग्रमाण व सव लोक होनेसे इनमें छन्द्रशंस प्रकृतियों के जघन्य और अजघन्य स्थितिवालों के स्वरंग उक्त प्रमाण वनलाया है।

§ ६४२, पंचेन्द्रिय श्रोर पंचेन्द्रियपर्गप्त जीवोम तईस प्रकृतियोंकं जघन्य (स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान हैं। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिका भंग श्रजुत्कृष्टके समान हैं। सम्यग्मध्यान्वरा भंग श्रोघके समान हैं। श्रजनतानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श सामान्य देवोंके समान हैं। तथा श्रजघन्य स्थितिका भंग श्रजुत्कृष्टके समान हैं।

तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति ।

६ ६४३. वेउव्विय० वाबीमपयडी० ज० खेत्तं, अज० अगुक्क०भंगो । सम्मत्त-सम्मामि० ज० अज० अगुक्क०भंगो । अणंताणु०चउक्क० ज० अह चो०, अज० अगुक्क०भंगो । श्रोरालिय०-णवुंस० श्रोघं । णवरि अणंताणु०चउक्क० ज० तिरिक्खोघं ।

्र ६४४ विहंग० बन्बीसं पयडी० ज० खेत्तभंगो, अज० अणुक्क०भंगो। सम्मत्त०-सम्मामि० अणुक्क०भंगो। आभिणि०-सुद०-त्रोहि०-त्रोहिदंस०-सम्मादि०-वेदय० सन्त्रपय० जह० पंचिदियभंगो। णविर सम्मामि० सम्मत्तभंगो। अज० अणुक०-भंगो। संजदासंजद० सन्त्रपयडी० जह० खेत्तभंगो। अजह० आणुक०-भंगो।

इसी प्रकार त्रस, त्रसपर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चचुद्र्यनवाले त्रौर संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोमे तेईस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति चपणाके समय प्राप्त होता है, इसलिये इनका स्पर्श चेत्रके समान प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहां स्पर्शको चेत्रके समान कहा है। अजघन्य स्थिति सर्वत्र सम्भव है अतः इनका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान बतलाया है। सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितियालोंका जो श्रोध स्पर्श बतलाया है वह उक्त मार्गणाश्रोंमे भी सम्भव है, अतः इनके स्पर्शको श्रोधके समान कहा है। उक्त मार्गणाश्रोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिवालोंके देवोंकी प्रमुखता है अतः इनके स्पर्शको सामान्य देवोंके समान बतलाया है। तथा अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान बन जाता है, अतः इसे अनुत्कृष्टके समान बतलाया है। तसकायिक श्रादि मार्गणश्रोंमे उक्त व्यवस्था वन जाती है, अतः उनके कथनको उक्त प्रमाण कहा है।

§ ६४३ वैकियिककाययोगियों बाईस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीवोका स्पर्श त्रंत्रके समान है। तथा अजयन्य स्थितिका भंग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यक्त श्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य श्रोर अजघन्य स्थितिविभिक्तका भंग अनुत्कृष्टके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभिक्तवाले जीवोने त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण त्रेत्रका स्वर्श किया है। तथा अजघन्य स्थितिविभिक्तका भंग अनुत्कृष्टके समान है। श्रोदारिककाययोगी और नपुंसकवेदवालों श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभिक्तवाल जीवोंका स्पर्श सामान्य तिर्थचोंके समान है।

§ ६४४ विभंगञ्चानियोमें छुट्यीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवांका स्वर्श नेवक समान है। तथा अजयन्य स्थितिविभक्तिका मंग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यक्त्व और सम्यम्भिण्यात्वका मंग अनुत्कृष्टके समान है। आमितानो वक्कानी, अत्वानी, अवधिज्ञानी, अवधिज्ञानी, अवधिज्ञानी, अवधिज्ञानी, सम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोमे सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श पंचेन्द्रियोंक समान है। किन्तु इत्तनी विशेषता है कि सम्यग्मिण्यात्वका मंग सम्यक्त्वके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिका मंग अनुत्कृष्टके समान है। संयता-संयतोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श नेत्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिका मंग अनुत्कृष्टके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिका मंग अनुतकृष्टके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिका मंग अनुतकृष्टके समान है। तथा

ः ६४५, तेउ०-पम्म० तेत्रीसपयहि० जह० खेत्तमंगो, अज०, अणुक०मंगो। सम्मामि० ज० अज० अणुक्क०भंगो। अर्णताणु०चउक्क० ज० पंचि०मंगो, अज० अणुक्क०मंगो। सुक्क० तेत्रीसपयही० ज० खेत्तभंगो। अज० अणु०भंगो। सम्मामि०- अर्णताण०चउक्क० ज० अज० आण्दमंगो।

े ६४६, खइय० सञ्चपयदी० ज० खेत्तभंगो । अज० अणु०भंगो । उवसम० चउवीसपयदी॰ ज० खेत्तभंगो, अज० अणुक्क०भंगो । अणंताणु०चउक० ज० अज० अह चोदस० । सम्मामि०-सामणसम्मा० उवसम०भंगो ।

एवं पासणाणुगमा समत्तो ।

#### जधा उक्कस्सिटिवंधे णाणाजीवेहि कालो तथा उक्कस्सिटिदसंत-कम्मेण कायव्वो ।

६ ६४७. उकस्सिट्टिविबंधे जहा णाणाजीवेटि कालो परूविदो तहा उकस्सिट्टिटिसंतकम्मस्स वि परूवेयव्वो । तं जहा—जन्वीसपयडीणमुकस्सिट्टिद्संतकिम्मया केव-चिरं कालादो होति १ जहरु एगसमस्रो; एगसमयमुकस्सिट्टिवं वंधिय विदिसमए

§ ६४५ पीत और पद्मलेश्यावाल जीवोंमें तेर्डम प्रकृतियोकी जपन्य स्थितिविभित्तिवाले जीवोंका स्पर्श ज्ञेंत्रके समान हैं। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका भंग अनुत्कृष्टके समान हैं। सम्यिग्ध्यात्वकी जघन्य और अज्ञवन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका भंग अनुत्कृष्टके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका भंग पेचेन्द्रियोंक समान है। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभिक्तिवाले जीवोंका भंग अनुत्कृष्टके समान है। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पन्न च्यांके समान है। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पन्न च्यांके समान है। तथा अज्ञवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग अनुत्कृष्टके समान है। सम्यिग्धियात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी ज्ञवन्य और अज्ञवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग आनत्कर्पके समान है।

§ ६४६. चायिक सम्यग्दृष्टियोंमं सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है। उपशम-सम्यग्दृष्टियोंमं चौवीस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श चेत्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श अनुत्कृष्टके समान है। अनन्तानुवन्धी चनुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवाने त्रसमालीके चांद्ह भागोंमंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्श किया है। सम्यग्मिध्याद्दि आर सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमे उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंके समान भंग है।

इस प्रकार स्पर्शनानुगम समाप्त हुआ।

\* जिस मकार उत्कृष्ट स्थितिबन्धमें नाना जीवोंकी अपेक्षा काल कहा है उसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसत्कमकी अपेक्षा कालका कथन करना चाहिंग।

\$ ६४७. उत्कृष्ट स्थितिबन्धमं जिस प्रकार नाना जीवाकी अपेत्ता कालका कथन किया है उसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मका भी काल कहना चाहिये। जो इस प्रकार है—छन्दीस प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाले जीवोंका कितना काल हे ? जघन्य काल एक समय है, क्यांकि एक समय तक उत्कृष्ट स्थितिका बांधकर दूसर समामे उन सब जावोंक अनुत्कृष्ट स्थितसत्त्वको अणुकस्सिटिदिमंतं सव्यजीवेसु उवगएसु तिहुवणासेसजीवाणमेगसमयं चेव उक्कस्सिटिदि-दंसणादो । उक्क० पिट्टिदो० अमंखे०भागो । एक्कस्स जीवस्स जिद्द उक्कस्सिटिदिकालो अंतोमुहुत्तमेत्रो लब्भिदि तो आविष्ठियाए असंखे०भागमेत्तजीवाणं कि लभागो ति फल-गुणिदिच्छाए पमाणेणोविट्टिदाए असंखेज्ञाविष्ठियमेत्तुक्कस्सिटिदिसंतकालुवलंभादो । अणुक्कस्सिटिदिमंतकिम्पिया केविचरं कालादो होति ? णाणाजीवे पहुच सव्बद्धा । कृदो ? तिसु वि कालेसु अणुक्कस्मिटिदिनंतकिम्पयजीवाणं मंभवादो ।

## 🕸 एवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण्मुकस्सिट्दी जहण्णेण एगसमञ्जो ।

§ ६४८. कुदो ? उक्कस्मिहिदिसंतकिम्मियमिच्छादिहिणा मोहहाबीससंतकिम्मिएण वेदगसम्मत्तं पिडवण्णपढमसमए चेव मिच्छत्तुक्कस्सिहिदीए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेस् संकामिदाए एगममयं चेव उक्कस्सिहिदिकालुवलंभादो । उक्कस्सिहिदिसंतकिम्मिय-मिच्छादिही सम्मामिच्छत्तं किण्ण णीदो ? ण, तत्थ दंसणमोहणीयस्स संकमाभावेण सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्मिहिदीए करणुवायाभावादो ।

## 🏶 उक्कस्सेण श्रावितयाए श्रसंखेजिदिभागो ।

प्राप्त होने पर तीन लोकक सब जीवोंक एक सभय तक ही उत्कृष्ट स्थिति देखी जाती है। तथा उत्कृष्टकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि एक जीवके उत्कृष्ट स्थितिका काल यदि अन्तमुंहूर्त है तो आवलीक असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंके कितना काल प्राप्त होगा इस प्रकार त्रैराशिक करके इन्छाराशिको फलराशिसे गुणित करके जो लब्ध आवे उसमे प्रमाणराशिका भाग देने पर असंख्यात आवलिप्रमाण काल तक उत्कृष्ट स्थितिका सन्त्व पाया जाता है। अनुत्कृष्ट स्थितिसत्कमंबाले जीवोंका कितना काल है? नाना जीवोंकी अपेदा सब काल है, क्योंकि तीनों ही कालोंमें अनुत्कृष्ट स्थितिसत्कमंबाले जीवोंका जीवोंका पाया जाना संभव है।

क किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट
 स्थितिका जघन्य काल एक समय है।

६ ६४८. शंका—इन दाना प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल एक समय क्यों है ?

समाधान—जिसके माहनीयकी ऋटाईस प्रकृतियोंकी सत्ता है ऐसा कोई एक उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला मिथ्यादृष्टि जीव वेदक सम्यक्त्वका प्राप्त होनेके पहले समयमे ही मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमे संक्रमण कर देता है, ऋतः उसके एक समय काल तक उत्कृष्ट स्थिति पाई जाती है। ऋतः इन दोनों प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है।

शंका-उत्कृष्ट स्थिति सत्क्रमेवाला मिथ्यादृष्टि जीव सम्यग्मिथ्यात्व गुण्स्थानको क्यों नहीं प्राप्त कराया गया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यग्मिश्यादृष्टि गुणस्थानमें दर्शनमोहनीयका संक्रमण नहीं होनेसे वहाँ सम्यक्त्व ऋोर सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं प्राप्त की जा सकती है।

\* नथा उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भानप्रमाण है।

ृ६४६. कृदो १ उक्कस्सिटिदिमंतकिम्मियिनच्छाइद्दीणं णिरंतरं वेदयसम्मत्तं पिंडवर्ज्जताणमाविल्याए असंखेज्जदिभागमेनुवक्कमणकालुनलंभदंसणादो । एवं जइवसहा-इरियमुत्तपरूवणं करिय एदंण चेव सुन्तेण देसामासिएण सूचिदत्थागमुचारणाइरिय-पर्वविद्यक्तवाणं भणिस्सामो ।

६५० कालां दुविहो — जहण्णश्रो उक्कस्सश्रो चेदि । तत्थ उक्कस्सए पथदं। दुविहो णिहेसो — ओघेण आदेसेण य । तत्थ आघेण अव्वीसपयडी० उक्क० केव० १ ज० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखं०भागो । अणुक्क० सन्बद्धा । सम्मत्त सम्मामि० उक्क० के० १ जह० एगसमओ, उक्क० आविल् असंखं०भागो । अणुक्क० के० १ सन्बद्धा । एवं सन्बणिरय-तिरिक्ख-पंचि०तिरि०तिय-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिदिय-पंचि०पज्ञ०-तस्र-तसपज्ञ०-पंचमण० पंचिव्य-कायजोगि० — ओरालि० — वेउ-विव०-तिण्णिवेद-चत्तारिकमाय-मिद् -सुद् अण्णाण-विहंग०-असंजद ० -चक्खु० -अचक्खु० पंचले०-भवसि०-अभवसि०-मिच्छादिष्ठि०-मण्णि०-आहारि ति । णवरि अभव० सम्म०-सम्मामि० णित्थ ।

\$ ६४८. शंका-उक्त दोनों प्रकृतियोकां उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल आवलीका असंख्यातवां भाग क्यो है ?

समाधान -याद उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मशले मिण्यादृष्टि जीव निरन्तर वेदकसम्यक्त्वका प्राप्त हो तो वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त होनेका काल आवित्तके असंख्यातवें भागप्रमाण ही देखा जाता है। अतः उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका काल भी आवितीका असंख्यातवां भाग प्राप्त होता है।

इस प्रकार यतिष्टपभ अभावार्यकं सूत्रका कथन करके अब देशामर्पक रूपमे इसी सूत्रके द्वारा मृचित तुम अर्थका उज्ञारणाचार्यने जो व्याख्यान किया है उसे कहते हैं —

ू ६५० काल दो प्रकारका है-जघन्य और उन्कृष्ट । प्रकृतमे उन्कृष्ट से प्रयोजन है । उसकी अपना निर्देश दो प्रकारका है-आंघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे आंघकी अपना छन्नीस प्रकृतियोकी उन्कृष्ट स्थितिविशक्तियाले जीवोंका काल कितना है ? जघन्य एक समय और उन्कृष्ट पत्योपमके असल्यानवें भागप्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविशक्तियाले जीवोंका काल सर्वदा है । सम्यक्त्रय और सम्यक्तिथाले उन्कृष्ट स्थितिवशक्तियाले जीवोंका काल कितना है ? जघन्य एक समय और उन्कृष्ट आविलेक असल्यातवें भागप्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवशक्तिवाले जीवोंका काल कितना है ? सर्वदा है । इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तर्यच, पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्रार कत्य तर्यच पर्यात, पंचेन्द्रिय तर्यच योनिमती, सामान्य देव, भवनवासियोसे लेकर सहस्रार कत्य तर्यके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्यात, त्रस, त्रस पर्यात, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी काययोगी, औदारिककाययोगी, वैक्रियककाययोगी, तीनो वेदवाले, चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, अन्वान्ती, असंयत, चनुद्शंनवाले, अचनुद्र्शनवाले, कृष्णादि पाच लेश्यावाले, भन्य, अभव्य, मिथ्याहिष्ट, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योमें सम्यवत्व और सम्यग्निथ्यात्व ये दो प्रकृतियां नहीं है ।

विशेषाथ-- ग्रांचसे नाना जीवोकी अपेन्ना सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रतुस्कृष्ट

§ ६५१. पंचिं०तिरिक्ख० अपज्ज० सन्वपयडीणग्रुक्क० के० १ जह० एगस०, रक्क० आविल् असंखे०भागो । अणुक्क० सन्बद्धा । एवं सन्वेइंदिय-सन्विवगिलिंदिय-पंचिं०अपज्ज०-पंचकाय०-बादरग्रुहुपपज्जत्तापज्जत्त-तसअपज्ज०-ओरालियमिस्सकाय-जोगि ति । णविर जत्थ देवाणमुववादो तत्थ णवणोकसाय० उक्क० श्रोधभंगो ।

स्थितियोंके कालका खुलासा चूर्णिसूत्रोंकी टीका करते हुए स्वयं वीरसेन स्वामीने किया ही है अतः यहां उसे पुनः नहीं दुहराया गया है। इसो प्रकार सब नारकी आदि असंख्यात और अनन्त संख्यावाली कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें आवके समान उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति तथा उनका जघन्य और उत्कृष्ट काल बन जाता है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा। किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका सत्त्व नहीं पाया जाता, अतः उनके उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति तथा उनके जघन्य और उत्कृष्ट कालका कथन नहीं करना चाहिये।

§ ६५१ पंचेन्द्रिय तियँच श्रपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल हैं ? जघन्य एक समय और उत्कृष्ट श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सबदा हैं। इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय श्रपर्याप्त, पांचो स्थावर काय तथा उनके बादर और सूद्म तथा पर्याप्त और श्रपर्याप्त, त्रस श्रपर्याप्त और श्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहां देवोंका उपपाद है वहां नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल श्राघके समान हैं।

विशेषार्थ- पहले श्रांघसे उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय बतला आये है। श्रव यदि श्राघसं उत्कृष्ट स्थितिवाले ये जीव पंचेन्द्रिय तिर्थंच लब्ध्यपर्याप्तकोमं उत्पन्न हो ता उनके भी त्रादेश उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय ही पाया जायगा, क्योंकि द्वितीयादि समयोमे श्रोघ उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवोंका अभाव हो जानेसे पंचेन्द्रिय तिर्थंच लब्ध्यपर्याप्तकोमें भी आदेश उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव सम्भव नहीं, श्रतः पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपयीप्तकोंमे उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय कहा। तथा इनमे उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवे भागप्रमाण है जो इस प्रकारसे प्राप्त होता है- श्रोयसे उत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट कालका कथन करते हुए बतलाया है कि नाना जीव निरन्तर यदि उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करते रहें ता आवलीके त्र्यसंख्यातर्वे भागप्रमाण काल तक ही जीव उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त होंगे तथा उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्महूर्त है। अब यदि जीवोंकी संख्यासे कालके प्रमाणका गृणित कर दिया जाता है तो उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल पल्यके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। किन्तु ऐसे जीवोको यदि पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंमें क्रमसे उत्पन्न कराया जाय तो उनमें एक एक अन्तर्मुहूर्तके बाद ही उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होगी, क्योंकि अन्तर्महर्त तक उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर जो जीव पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंमे उत्पन्न होते हैं उनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकालके श्रन्तिम समयमे बंधी हुई स्थिति ही उत्कृष्ट हो सकती हैं इसके अतिरिक्त और सब स्थितियां अनुस्कृष्ट हो जायंगी, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिबन्धके कालके अन्तिम समयमें बंधी हुई स्थितिके कालसे उनका काल एक समय, दां समय आदि रूपसे और कम हो जाता है, अतः पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकांमे निरन्तर ऐसे आविलके असंख्यातर्वे भागप्रमाण जीवोंको उत्पन्न कराना चाहिये जिन्होंने क्रमसे एक एक समय तक निरन्तर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया हो । इस प्रकार ६६५२. मणुसितय० छन्नीसपयदी० उक्क० ज० एगसमञ्जो, उक्क० अंतोम्र०। श्रामुक्क० सन्बद्धा । सम्म०-सम्मामि० उक्क० ज० [एगस०], उक्क० संखेज्जा समया । श्रामुक्क० सन्बद्धा । मणुसअपज्ज० सन्वपयदी० उक्क० ज० एगसमञ्जो, उक्क० श्रावित् असंखे०भागो । अणुक्क० ज० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० पिद्धो० असंखे०भागो । णवरि समत्त-सम्मामि० अणुक्क० ज० एगस०। एवं वेउन्वियमिस्स०। णवरि छन्वीसपयदी० अणुक्क० ज० अंतोमु०। णवणोक० उक्क० श्रोघं। एवम्व-

पंचेन्द्रिय तियँच लब्ध्यपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट स्थितिका काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है स्रतः इनके उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल स्रावलीके स्रसंख्यातवं भागप्रमाण कहा । तथा इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि यह निरन्तर मार्गणा है. अतः इसमें सर्वेदा अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव पाये जाते हैं। सब एकेन्द्रिय आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमे भी यह व्यवस्था वन जाती है ऋतः उनके सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट ऋीर अनुत्कृष्ट स्थितिके जघन्य और उत्कृष्ट कालको पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान कहा। किन्तु जिन मार्गणात्रोमें देव उत्पन्न हो सकते हैं उनमें नौ नांकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेके दूसरे समयमे ही मर कर देव एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो सबते हैं और नौ नोकषायोको उत्कृष्ट स्थिति संक्रमणसे प्राप्त होती है जो बन्यावलीके बाद ही होता है। अब यदि एक एक आवलीके अन्तरालसे एक एककं क्रमसे अविनिकं असंख्यातवें भागप्रमाण देव सोलह कपार्योकी उत्कृष्ट स्थितिका एक एक आविल तक निरन्तर बन्ध करें श्रौर उत्कृष्ट स्थिति बन्धके दूसरं समयमें व मर कर उसी क्रमसे एकेन्द्रियोमें उत्पन्न होते जायं तो एकेन्द्रियोमें नो नाकपायोंका उत्कृष्ट काल परुयके असंख्यानवें भागप्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि ऐसे देवोमे प्रत्येकके एक एक आवित्तक नी नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति पाई जायगी। जिन मार्गणा त्रोमं नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका यह काल सम्भव है वे मार्गणाएं ये हैं-एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, जलकायिक बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त, प्रत्येक वनस्पतिकायिक, प्रत्येक वनस्पतिकायिक पर्याप्त । किन्तु इतना विशेष जानना चाहिए कि श्रोघमें अन्तर्महर्तको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करके पल्यका असंख्यातवां भाग काल प्राप्त किया गया था पर यहां आविलको आविलके असंख्यातर्वे भागसे गुणा करके पत्यका असंख्यातवां भाग काल प्राप्त करना चाहिये।

§ ६५२. सामान्य, पर्याप्त और मनुष्यिनी इन तीन प्रकारक मनुष्योमे छुठ्वीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूते हैं। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। सन्यक्त्व और सन्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यान समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलींक असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय कम खुद्दाभवमहण प्रमाण और उत्कृष्ट काल पत्थोपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है। इसी प्रकार वैकियिक-पिश्रकाययोगी जीवोंक जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि छुट्वीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट

सम०-साम्रण॰-सम्मामि०। णवरि णवणोक० उक्क० ऋोघं णत्थि । सम्म०-सम्मामि० अणुक्क० जह० अंतोमु०। साम्रण० मव्वपय० ऋणु० जह० एयम्र०, उक्क० तं चेव ।

स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्भुहूत है। तथा नौ नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थिति-विभक्तवाले जीवोंका काल ओघके समान है। इसी प्रकार उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल आघके समान नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्भुहूत है। तथा सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय हं और उत्कृष्ट काल वही पूर्वोंक्त है।

विशेषार्थ-जब कि ओवमे छन्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय है तो मनुष्यत्रिकमें इससे अधिक कैसे हो सकता है। पर उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है, क्योंकि ओघ उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त होनेवाले सामान्य मनुष्योंका प्रमाण संख्यात है तथा मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंका प्रमाण तो संख्यात है ही । श्रव यदि एक समयमें प्राप्त होनेवाली मनुष्योंके उत्कृष्ट स्थितिका काल अन्तर्महर्ते मान लें और एक के बाद दूसरा इस प्रकार निरन्तररूपसे संख्यान मनुष्योंके उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त कराई जाय तो भी उस सब कालका जोड़ त्रान्तर्मृहर्ते ही होगा। यही कारण है कि मनुष्यत्रिकके उत्हृष्ट स्थितिका उत्हृष्ट काल अन्तर्मुहर्त कहा। तथा एक जीवकी अपेज्ञा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय बतला आये हैं। श्रब यदि संख्यात जीव लगातार उक्त प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त हों तो उनके कालका जोड़ संख्यात समय ही होगा, अतः मनुष्यत्रिकके उक्त दो प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा । इन दो प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय स्पष्ट ही है। तथा इनके सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका काल सर्वदा है यह भी स्पष्ट है, क्योंकि ये निरन्तर मार्गणाएं हैं इसलिये इनमें सब प्रकृतियोकी ऋतुत्कृष्ट स्थितवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योका प्रमाण असंख्यात हे और उनमें आदेश उत्कृष्ट स्थिति होती है, अतः उनके पंचेन्द्रिय तियंच लब्ध्यपर्यातकोंक समान सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थिनिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल स्रावितके स्रसंख्यातवें भागप्रमाण वन जाता है। तथा यह मार्गेणा सान्तर ह अतः इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय कम खुद्दाभवयहरू प्रमास और उन्कृष्ट काल परुयके असंख्यातवें भागप्रमास भी वन जाता है। जयन्य कालमेंसे एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिकी अपैज्ञामे किया है । तथा उद्वेलनाकी अपैज्ञा इनके सम्यक्त्य त्र्यौर सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। वैक्रियिकमिश्रकाययोग मागंणा सान्तर है, अतः इसमें भी लब्ध्यपर्यापक मनुष्योंके समान सब कर्मोंकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिका काल जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इस मार्गणाका जघन्य काल अन्तर्मुहृतं है अतः इसमें छुट्यीम प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मृहर्ते प्राप्त होगा । तथा इसमें प्रत्येक जीवके नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल एक आवलियमाण प्राप्त ही सकता है, अतः नाना जीवों की अपेद्धा यहां भी नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल ओघके समान पत्यके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण बन जाता है। इसका विशेष खुलासा इमी प्रकरणमें एकेन्द्रियोंकी प्ररूपणाके समय कर आये है अत: वहांसे जान लेना चाहिये। उपशम-सम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि त्रीर सम्यग्निश्यादृष्टि ये तीन मार्गणाएँ भी सान्तर हैं, त्रातः इनम भी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका काल वैकियिकमिश्रकाययोगके समान कहा।

६५३ आणदादि जाव उविरमगेवज्जो ति सन्वपयडी० उक्क० ज० एगस०, उक्क० संस्तेष्ठा समया। अगुक्क० सन्वदा। एवमगुदिसादि जाव सन्वदृतिद्धि ति। एवं खइयसम्मादिद्दीणं। आहार० सन्वपय० उक्क० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। अगुक्क० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोष्ठ०। एवमवगद०-अकसा॰-सुहुम-सांपराय०-जहाक्खादमंजदे ति। एवमाहारिमस्स०। णविर अगुक्क० ज० अंतोष्ठ०। कम्मइय० एइंदियमंगो। णविर सम्मत्त०सम्मामि० अगुक्क० सत्तणोक्क० उक्क० ज० एगसमओ, उक्क० आविल० असंखे०भागो। एवमणाहारीणं। आभिणि०-सुद०-ओहि० सन्वपयडी० उक्क० ज० एगसमओ, उक्क० आविल० असंखे०भागो। अगुक्क० सन्वद्धा। एवं संजदासंजद०-स्रोहिदंस०-सुक्क०-सम्मादिद्धि०-वेदय०दिद्धि ति। मणपञ्ज० सन्वपयडी० सन्वद्दभंगो। एवं संजद०-सामाइय-बेदो०-परिहार-

किन्तु इसका कुछ अपवाद है। बात यह हैं कि इन तीनो मार्गणा ओमें एक जीवकी अपेता उत्कृष्ट स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, अतः यहां इनके उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल खोघके समान न प्राप्त हाकर आविले असंख्यातवें मार्गणमाण ही प्राप्ता होगा। और इन मार्गणाओं में सम्यक्त्य तथा सम्यग्मिण्यात्वकी उद्देलना नहीं होती है अतः यहां इन दोनों प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय न प्राप्त होकर अन्तर्सुहूर्त प्रात होगा। किन्तु सासादन गुण्स्थानका जयन्य काल एक समय है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जयन्य काल एक समय है। प्राप्त होगा।

६६५३ आनत करपसे लेकर उपरिमायैवेयक तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति विभावितवाले जीवोंका जबन्य काल एक समय त्र्यार उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोका काल सर्वदा है। इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वायंसिद्धि तककं देवोंके जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार चायिकसम्थरहष्टि जीवोंकं जानना चाहिये। अहारककाययागियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोका जघन्यकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यान समय है । नथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्न हैं। इसी प्रकार अपगतवेदवाले, अकपायी, सूच्मसांपरायिक संयत त्रौर यथाख्यातसयत जीवोंके जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार आहारकमिश्रकाययागियोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सब प्रकृतियोकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है । कार्मणकाययागियोमें एकन्द्रियोके समान भंग है । किन्त इतनी विशेषता है कि सम्यक्तव श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी श्रानुत्कृष्ट स्थि।तविभक्तिवाले जीवोंका श्रीर सात नोकषायोंकी उत्क्रष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जवन्य काल एक समय श्रीर उत्क्रष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। आभिनि-वोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिवाले जीवोंका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार संयतासंयत, अवधिदर्शनवाले, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि श्रीर वेद्कसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानियोमें सब प्रकृतियोंकी अपेन्ना सर्वार्थसिद्धिके समान भंग है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोप-स्थापनासंयत श्रौर परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके जानना चाहिये । श्रसंक्रियोंमे एकेन्द्रियोर्क समान

# संजदे ति । [ असण्णि० एइंदियभंगो । ]

एवमुक्कम्सत्रो कालाणुगमो समत्तो ।

ॐ जहरण्ए पयदं । मिच्छुत्त-सम्मत्त-बारसकसाय-तिवेदाणं जहरण्-दिविविहत्तिएहि णाणाजीवेहि कालो केवडिश्रो ?

§ ६५४. णाणाजीवेहि जहण्णिद्विदिविहत्तिएहि इदीए अत्थे तइया दहव्या । अहवा कत्तारम्मि तइया घेत्तव्या ; जहण्णिद्विदिविहत्तिएहि केबिडओ कालो लखो ति पदसंबंधादो । सेसं सुगमं ।

#### 🟶 जहरुणेण एगसमञ्जो।

जानना चाहिये ।

विशेषार्थ--- त्रानतादि चार करनोमे यद्यपि तिर्यंच भी मर कर उत्पन्न होते है किन्तु उनके उत्कृष्ट स्थिति नहीं पाई जाती, ऋतः जो द्रव्यतिगी मनुष्य मर कर त्राननादिकमे उत्पन्न होते हैं उन्हींके पहले समयमें उत्क्रष्ट स्थिति पाई जाती है, पर लगातार उत्पन्न होनेवाले इन जीवोंका प्रमाण संख्यात ही हांगा, क्योंकि ऐसे मनुष्य ही संख्यात है, अतः इनके सब प्रकृतियोका उत्कष्ट स्थितिका जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा। तथा अनुदिशादिकमें श्रीर ज्ञायिकसम्यग्दष्टियोंमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट म्थितिका जबन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय होता है यह स्पष्ट ही है। यदि एक साथ अनेक जीवोने आहारक. काययांग किया और उनके उत्कृष्ट स्थिति हुई तो आहारक काययांगमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य काल एक समय पात्रा जाता है और यदि नाना मनुष्य प्रत्येक समयम उत्कृष्ट स्थितिकं साथ त्राहारक काययागका प्राप्त होते रहे तो त्राहारककाययागमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय पाया जाता है। तथा आहारककाययांगके जवन्य और उत्कृष्ट कालकी ऋषेत्रा इसमे अनुत्कृष्ट स्थितिक। जधन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल ऋन्तर्भुहूत पाया जाता है। त्र्यपगतवेदी, त्रकपायी, सूच्मसाम्परायिकसंयत, यथारूयानसंयत त्र्यार आहारक मिश्रकाययोगी इनकी कथनीमें आहारककाययोगकी कथनीसे कोई विशेषता नहीं है अत: इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट त्र्यार अनुत्कृष्ट स्थितिका काल आहारककाययागक समान घटित कर लेना चाहिये। किन्तु आहारकमिश्रकायोगका जघन्य काल भी अन्तर्महूर्त है अतः इसमे सब प्रकृतियोकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होगा। इसी प्रकार शेप मागणात्रोमे भी कालका विचार कर सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट ऋौर अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्तिका काल ले आना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट कालानुगम समाप्त हुआ।

\* श्रव जघन्य कालानुगमका प्रकरण है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, बारह कषाय
श्रीर तीनों वेदोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले नाना जीवोंका काल कितना है।

§ ६५४ 'णाणाजावेहि जहण्णाद्विदिविहित्तिएहि' इन दोनों पदोमें जो तृतीया विभक्ति हैं वह पष्टी विभक्तिके अथमे जानना चाहिये। अथवा कर्ना अथमे तृतीया विभक्ति प्रहण्ण करनी चाहिये, क्योंकि 'जवन्य स्थितिविभक्तिवाले नाना जीवोंने कितना काल प्राप्त किया है' इस प्रकारका पदसम्बन्ध यहां विविच्चित है। जेप कथन सुगम है।

\* जघन्य काल एक समय है।

§ ६५५. इदो ? एदेमिं जहण्णणिसेयिद्विरीए दुसमयकालाए एगसमयकालाए वा पयदाए विदियसमए चेव णिम्मूलविणासुवलंभादो ।

## 🕸 उक्कस्सेण संखेजा समया।

६६५६. इदो ? णाणाजीत्राणमणुसमयं जहण्णद्विदिं पडिवज्जंताणं संखेज्ज-मणुसपज्जएहिंतो त्रागमवलंभादो ।

अ सम्मामिच्छुत्त श्रणंताणुबंधीणं चउकस्स जहरणहिदिविहत्तिएहि णाणाजीवेहि कालो केविडिग्रो ?

६६५७. सुगममेदं पुच्छासत्तं।

🕸 जहरुषेण एगसमञ्जो ।

६५८ कुदो ? एगणिसंगिहदीए दुसमयकालाए विदिसमए परसरूवेण गमणु-वर्लंभादो । श्रगमणे ण सा जहण्णिहिदी; द्वादिणिसेयाणं जहण्णत्तविरोहादो ।

## 🕸 उकस्सेण श्रावितयाए श्रसंखेज्जदिभागो।

६५६. कुदो ? सम्मामिच्छत्तमुच्वेल्लंताणमणतासुवंधिचउक्कं विसंजोएंताणं च

§ ६५५. **शंका**–उक्त प्रकृतियोकी जघन्य (स्थितियालाका जघन्य काल एक समय क्यों ८ १

समाधान—क्योंकि इन प्रकृतियोंके जघन्य निषेककी स्थिति चाहे दो समय कालवाली हो या चाहे एक समय कालवाली हो तथापि दूमरे समयमे ही उसका निर्मूल विनाश पाया जाता है, अनः इनका जबन्य काल एक समय कहा है।

🗯 उत्कृष्ट काल संख्यात समय है ।

६६५६. शंका-उत्कृष्ट काल संख्यात समय क्यों हैं ?

समाधान—क्योंकि प्रत्येक समयमे जवन्य स्थितिको प्राप्त होनेवाले नानाजीवोंका पर्याप्त मनुष्योमसे त्रागमन पाया जाता है, जिनकी संख्या संख्यात है।

\* सम्यग्मिथ्मात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जधन्य स्थितिविभक्तित्राले नाना जीवोंका काल कितना है ?

§ ६५७ यह पृच्छ।सूत्र सरत है।

\* जघन्य काल एक समय है।

§ ६५८. **शंका**—जघन्य काल एक समय क्यों हैं ?

समाधान—क्योंकि इनकी दो समय काल प्रमाण एक निपेकस्थितिका दूसरे समयमे पररूपसे संक्रमण पाया जाता है। जब तक पररूपसे संक्रमण नहीं होता है तब तक वह जघन्य स्थिति नहीं है, क्योंकि दो आदि निपेकोको जघन्य माननेमें विरोध आता है।

उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

६६५८ **शंका**—उत्रुष्ट काल आवलीके असंख्याववें भागप्रमाण क्यों है ?

समाधान-क्योकि सम्यग्मिश्यात्वकी उद्वेलना करनेवाले ख्रीर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी

पिट्रदो० त्रसंखे०भागमेत्तजीवाणमाविष्ठयाए त्रसंखे०भागमेत्तुवक्कमणकंडएसु तत्थ एगुक्कस्सकंडयकालग्गहणादो ।

अ अण्णोकसायाणं जहण्णिहिदिविहित्तिएहि णाणाजीवेहि कालो केविडचो ?

🖇 ६६०. सुगममेदं।

🛞 जहरुणुक्कस्तेण श्रंतोमुहत्तं।

६६१. कुदो ? चरिमिहिदिकंडयउक्कीरणकालग्गहणादो । एत्थ णिसेया चेय
 पहाणा कया ण कालो, एगसमयं मोत्तूण त्रंतोमुहुत्तकालपरूवणण्णहाग्नुववत्तीदो ।

§ ६६२ एवं जड्वसहाइरियस्रत्ताणं देसामासियाणं परूवणं काऊण संपिष्ठ एदेहि स्चिद्त्थाणं लिहिदुचारणमणुवत्तइस्सामो । जहण्णए पयदं । दुविहो णिदेसो—श्रोघेण श्रादेसेण । तत्थ ओघेण मिच्छत्त-सम्मत्त-वारसकः-तिण्णिवेदः जहण्णिहिदिवि०कालो ज०एगस०, उक्क० संखेज्ञासमया । श्रज० सव्वद्धा । सम्मामि०-श्रणंताणुः चउक्क० ज०ज० प्रासमओ, उक्कः श्राविल् असंखेलभागो । श्रज० सव्वद्धा । छण्णोक० जहण्णुक्कः अंतोम्०। अजः सव्वद्धा । एवं सोहम्भीसाणादि जाव उवरिमगेवज्ज०-पंचि-

विसंयोजना करनेवाले पल्यापमारे असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोके अवलीके असंख्यातवें भाग-प्रमाण उपक्रमण का॰डक होते हैं। उनमेसे यहां एक उत्कृष्ट काण्डकका काल लिया गया है।

\* ब्रह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले नाना जीवोंका कितना काल है।
§ ६६०, यह सूत्र सुगम है।

\* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्म हुर्त है।

६ ६६१ शंका-जधन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त क्यों है ?

समाधान-क्योंकि यहां अन्तिम स्थितिकाण्डकके उक्कीरण कालका प्रहण किया है। यहां पर निषकोंकी ध्यानता है कालकी नहीं, अन्यथा एक समयको छोड़कर अन्तर्मुहूर्त कालका कथन नहीं बन सकता था।

§ ६६२ इस प्रकार यितवृषम आचार्यके देशामर्पक सूत्रोंका कथन करके अब इनसे सूचित होनेवाले अर्थो पर जो उच्चारणा लिग्बी गई है उसका अनुसरण करते हैं—जघन्य कालका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अंघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओष की अपेचा मिध्यात्व, सम्यक्त्व, वारह कपाय और तीनों वेदोंकी जघन्य स्थिति विभक्तिवाले जीवों का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्ति वाले जीवोंका काल सर्वदा है। सम्यग्मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल जीवाका काल सर्वदा है। इसी प्रकार सौधम कल्पसे लेकर उपरिममेवेयक तकके

दिय-पंचिं ०पज्ज ०-तसः तसपज्ज ० - पंचमण ० - पंचवि ० - कायजोगि ० - स्रोरालि ० - तिष्णि-वेद ० - चत्तारिकसा ० - चक्खु ० - अचक्खु ० तिष्णिले ० - भविस ० - सिष्ण ० - स्राहार ति । णविर सोहम्मीसाणादिदेवेसु इत्थि - णवुं स० तेउपम्मलेस्सासु च लण्णोकसाय ० जहण्णदिदिकालो जह ० एगसमत्रो, उक्क ० संखेज्जा समया । इत्थि ० णवुं स० ओघं लण्णोक ० मंगो । पुरिस० इत्थि ० - णवुं स० लण्णोक ० मंगो । णवुं स० इत्थिवेद ० ओघं लण्णोक ० मंगो ।

६६३. त्रादेसेण णेरइएस्र सत्तावीसपयडो० ज० जह० एगस०, उक्क० आवित्र० त्रसंखे०भागो । त्रज० सन्बद्धा । सम्मत्तं ओघं । एवं पढमपुढवि०-पंचि०- तिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज० । पंचिं०तिरिक्खजोणिणीस्र एवं चेत्र । णविर सम्मत्तस्स

देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, स्स, त्रस्पर्याप्त, पाचो मतोयागी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, तीना वेदवाल, चारों कपायवाले, चत्तुदर्शनवाले, अचतुदर्शनवाले तीन लेश्यावाले, भव्य, संज्ञी आर आहारक जीवोंक जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सीधम और एशान आदि कल्पके देवोमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदमें तथा पीत और पद्मलेश्यावालोंमें छह नोकपायोंकी जवन्य स्थितिवभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। स्त्रीवद्यालोंमें नपुमकवेदकी जवन्य और अजघन्य स्थितिवभक्तिवालोंका काल आघ्ये समान है किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य स्थितिका काल आघसे छह नोकपायोंके समान है। पुरुपवेदवालोंमें स्त्रवेद आर नपुंसकवेदका भंग छह नोकपायोंके समान है। नपुंसकवेदवालोंमें स्त्रीवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका काल आघसे छह नोकपायोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता ह कि जघन्य स्थितिका काल आघसे छह नोकपायोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता ह कि जघन्य स्थितिका काल आघसे छह नोकपायोंके समान है।

विशेषार्थ—यहां जिन मार्गणाश्रोंमे सब प्रकृतियोकी जयन्य स्थितिका काल श्रीयके समान बतलाया है उनमें सौधर्मसे लेकर उपिरम ग्रैंबेयक तकके देव, पीत और पद्मलेश्यावाले तथा तीनों वेदवाले जीव भी सम्मिलित हैं परन्तु इन मार्गणाश्रोंमें कुछ प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिके कालमे कुछ विशेषता बतलाई है जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—बात यह है कि पुरुपवेदको छोड़ कर इन पूर्वोक्त मार्गणाश्रोंमें एक जीवकी श्रपेत्ता छह नोकपायोंकी जयन्य स्थितिका जयन्य काल अन्तर्मुहूर्त न होकर एक समय है अतः यहां नाना जीवोकी श्रपेत्ता छह नोकषायोंकी जयन्य स्थितिका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही प्राप्त होगा। तथा स्त्रीविदियोंके नपुंसकवेदकी जयन्य स्थिति, पुरुषवेदियोंके स्त्री और नपुंसकवेदकी जयन्य स्थिति वथा नपुंसकवेदियोंक स्त्री वेदका जयन्य स्थिति श्रन्तिम स्थिति काण्डकके पतनके समय होती है अतः इन तीनों वेदवाले जीवोंके उक्त प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिका जयन्य श्रीर उत्कृष्ट काल ओयसे छह नोकषायोंके समान कहा है। तथा अजधन्य स्थितिका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है।

\$ ६६३. श्रादेशकी श्रपेत्ता नारिकयों सत्ताईस प्रकृतियों की जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावलीके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रजपन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्वकी श्रपेत्ता ओघके समान काल है। इसी प्रकार पहली पृथिवी, पंचेन्द्रियतिर्यंच श्रीर पंचेन्द्रियतिर्यंच पर्याप्तकों में जानना चाहिए। पंचेन्द्रियतिर्यंच यानिमतियों भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें

#### सम्मामिच्छत्तभंगो ।

६६४. विदियादि जाव छि ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० श्रोघं। श्रोघम्मि छण्णोकसायाणं जहण्णिदिकालो जहण्णुक्कस्सेण चिण्णसुत्तिम्म वप्पदेवा-इरियलिहिदुचारणाए च अंतामुहुत्तिमिदि भणिदो। श्रम्हेहि लिहिदुचारणाए पुण जह० एगसमश्रो उक्क० मंखेजा समया ति पर्कविदो, कालपहाणत्ते विविक्खिए तहीव-लंभादो। तेण छण्णोकसायाणमोघत्तं ण विरुक्तिदे। सम्मत्त-सम्माभि०-श्रणंताणु०-चउक्क० ज० ज० एगस०, उक्क० श्रावलि० असंखे०भागो। अज० सम्बद्धा। एवं जोइसि०-वेडच्व०-विहंगणाणि ति। णवरिविहग० अणंताणु०चउक्क०भिच्छत्तभगो।

सम्यक्तवका मंग सम्यग्मिध्यात्वके समान है।

विशेषार्थ—नरकमें छतकृत्यवेदक सम्यग्दिष्ट जीव मरकर उत्पन्न होते हैं, ख्रतः यहां सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका काल ख्रोधके समान बन जाता है। शेष कथन मुगम है। पहली पृथिवीके नारकी आदि मूलमें ख्रोर जितनी मार्गणाएं गिनाइ है उनमें सामान्य नारिकयोंके समान काल सम्बन्धी व्यवस्था वन जाती है अतः उनके कथनको सामान्य नारिकयोंके समान कहा। किन्तु योनिमती तिर्यचोमें कृतछृत्यवेदक सम्यन्दिष्ट जीव नहीं उत्पन्न होते, ख्रतः वहां सम्यक्त्वकी जघन्य और ख्रजघन्य स्थितिका काल सम्यग्निध्यात्वके समान जानना चाहिये, क्योंकि योनिमती तिर्यचोक सम्यक्त्वकी ख्राय जघन्य स्थिति न प्राप्त होकर खादेश जघन्य स्थिति ही प्राप्त होगी जो कि सम्यग्निध्यात्वके समान होती है।

§ ६६४. दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तककं नारिकयोमें मिण्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी अपेना आंघकं समान काल है। चूिणसूत्रमें और वर ग्रेंच आचायके द्वारा लिखी गई उच्चारणामें ओवका कथन करते समय छह नोकपायोंकी जवन्य स्थितिका जवन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमुँहूर्त कहा है। परन्तु हमारे द्वारा लिखी गई उच्चारणामें जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है, क्योंकि प्रधानरूपमें कालकी विवन्ना हाने पर जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय वन जाता है, अतः छह नोकपायोंके कालको अधिकं समान कहनेमें कोई विरोध नहीं आता है। नथा सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यात्वें भागप्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार ज्योतिपादेव, वैकियिककाययोगी और विभंगज्ञानियोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि विभंगज्ञानियोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिण्यात्वके समान है।

विशेषार्थं — श्रोघसे मिध्यात्व, बारह कपाय श्रौर तीन वेदोंकी जघन्य स्थितिका जो जघन्य काल एक समय ख्रौर उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है वह दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंके भी बन जाता है, क्योंकि जो सम्यग्दृष्टि जीव इन नरकोंसे निकलकर मनुष्य पर्यायमें श्राते हैं उन्हींके उक्त कमोंकी जघन्य स्थिति सम्भव है किन्तु इन नरकोंमें छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रोर उत्कृष्टकाल श्रोघके समान धन्तर्मुहूर्त प्रमाण नहीं बनता। किर इन नरकोंमे छह नोकपायोकी जघन्य स्थितिक कालको भी श्रोघके समान क्यों कहा? यह शंका है जिसे मनमें रखकर वीरसेन स्वामीन श्रीघिम्म छण्णोक सायाएं। इत्यादि बाक्यों द्वारा उसका समाधान किया है। उनके इस समाधानका भाव यह है कि

§ ६६५. सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्त०-बारसक०-भय-दुर्गुद्ध० उक्क०भंगो। सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंता०चउक्क०-सत्तणोक० ज० ज० एगस०, उक्क० आवस्ति० असंखे०भागो। अजह० सव्बद्धा।

६६६<sub>.</sub> तिरिक्ख० मिच्छत्त०-वारसक०-भय-दुगुंछ ज० अज० सव्बद्धा ।

चूर्णिसूत्र, वष्पदेवकी लिखी हुई उचारणा श्रीर वीरसेन स्वामीके द्वारा लिखी गई उचारणा इनमेंसे प्रारम्भकी दो पाथियोंमें स्रोचसे छह नोकपायोंकी जधन्य स्थितिका जधन्य स्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्भ हुन निवढ़ है किन्तु वीरसेन स्वामीके द्वारा लिखी गई उचारणामे आंघसे छह नाकपायोंकी जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय निवद्ध है श्रीर यहां त्रोपके अनुसार कथन किया जा रहा है, अतएव द्वितीयादि नरकोमे छह नोकपायोंकी जधन्य स्थितिके कालको स्रोघके समान कहनेमें कोई बाधा नहीं स्राती है। स्रव प्रश्न यह होता है कि आखिर इस मतभेदका कारण क्या है ? इसका यह समाधान है कि चर्णिसूत्र और वरपदेवके द्वारा लिग्बी गई उचारणामे छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका काल निपेकोंकी प्रधानतासे कहा है और बीरसेन स्वामीके द्वारा लिम्बी गई रज्ञारणामे छह नोकपायांकी जवन्य स्थितिका काल कालकी प्रधानतासे कहा है, अतः इस कथनमें मतभेद न जानकर विवचाभेद जानना चाहिये जिसका विस्तृत खुलासा पहले कर आये हैं । विभंगज्ञानमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग जो निध्यात्वके समान कहा है सो इसका कारण यह है कि विभंगज्ञानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं होता अतः जो उपरिम प्रैवेरकका देव मिध्यात्वका प्राप्त होकर वहांसे च्युत होता है उसके अन्तिम समयमे मिध्यात्व, सोलह कपाय और नौ नौकपायोकी जघन्य स्थिति होती हैं। पर ऐसे जाव संख्यात ही होंगे श्रीर यदि लगातार हों तो संख्यात समय तक ही होगे, क्योंकि पर्याप्त मनुष्य संख्यात हैं। ऋतः विभंगज्ञानमे मिथ्यात्वके समान ऋनन्तानुबन्धा चतुष्ककी जधन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय जानना चाहिये । शेष कथन सुगम हं ।

\$ ६६५ सातवीं पृथिवीमे मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साका भंग उत्कृष्टके समात है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चतुष्क और सात नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अजधन्य स्थितिविभक्तिवालोका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—सातवें नरकमें क जीवकी अपेन्ना मिण्यत्य, वारह कपाय भय और जुगुप्सा-की जयन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्महृत है। अब यदि आवितके असस्यातवे भागप्रमाण नाना जीव कमशः इन प्रकृतियोकी जयन्य स्थितिका प्राप्त हों तो उस सब कालका जोड़ असंख्यात आविलप्रमाण होता है जो असंख्यात आविलयां पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होती हैं। मानवें नरकमें उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट वाल भी इतना ही है अतः यहां उक्त प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिके कालको इनको उत्कृष्ट स्थितिक कालके समान कहा। किन्तु सम्यक्त्य सम्यिग्मण्यात्य और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जयन्य स्थितिका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अब यदि आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण नाना जीव कमशः इनकी जयन्य स्थितिको प्राप्त हों तो उस सब कालका जोड़ आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होगा, अतः यहां उक्त छह प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। शेप कथन गुगम है।

§ ६६६ तिर्यचोंमें मिध्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य

सेसपयदीणं ज० अज० पंचि०तिरिक्खभंगो । एवं काउ० । किण्ह-णील्लेस्साणमेवं वेव । णविर सम्मत्तस्स सम्मामिच्छत्तभंगो । असंजद० तिरिक्खभंगो । णविर मिच्छ-त्तस्स सम्मत्तभंगो । ख्रोराल्यिमिस्स० तिरिक्खोघं । णविर द्यणंताणु०चउक्क० ज० अज० सव्बद्धा । पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोल्सक०-णवणोक० ज० ज० एगस०, उक्क० आवल्० असंखे०भागो । अज० सव्बद्धा । सम्मत्त-सम्मामि० ज० एगस०, उक्क० आवल्० असंखे०भागो । अज० सव्बद्धा । एवं सव्वविगलिंदिय-पंचिंदियद्यप्रज्ज०-बादरपुढविपज्ज०-बादरब्राउपज्ज०-बादरतेउपज्ज०-बादरवाउपज्ज०-बादरवाउपज्ज०-बादरवाउपज्ज०-सादरवाज०-कादरवाज०-कादरवाज०-कादरवाज०-कादरवाज०-कादरवाज०-कादरवाज०-तस्वयप्रज्जने ति । णविर पंचकाय-वादरपज्ज० मिच्छ० सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० ज० एगस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो ।

स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। तथा शेप प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थिति-विभक्तिवालं जीवोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोके समान है। इसी प्रकार कापोतलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। कृष्ण और नीललेश्यावाले जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिण्यात्वके समान है । ऋसंयतोंमे तिर्थवोंके समान भंग हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे मिथ्यात्वका भंग सम्यक्त्वके समान हैं । श्रौदारिकमिश्रकाय-योगियोंमें सामान्य तिर्यंचोंके समान जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिधिभक्तिवालोका काल सर्वदा है। पंचेन्द्रियतिर्थंच अपर्या-प्रकोंमे मिध्यात्व, सालह कपाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोका जघन्य काल एक समय त्रीर उत्कृष्ट काल त्रावर्लीके त्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा त्रजधन्य स्थितिविभक्ति-वालोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व श्रौर सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय त्रोर उत्कृष्ट काल श्रावलीके त्रासंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका काल सबदा है। इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय पंचेन्द्रियअपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिकपर्याप्त, बाद्र जलकायिकपर्याप्त, बाद्र अग्निकायिकपर्याप्त, बाद्र वायुकायिकपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीरपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये । किन्त इतनी विशेषता है कि पांचों स्थावरकाय वादर पर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलहकपाय, भय श्रौर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोका जघन्य काल एक समय श्रीर उरकृष्ट काल परुयोपमके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है ।

विशोषार्थ — तिर्यचोंका प्रमाण अनन्त है, अतः उनमें कोई न कोई जीव निरन्तर मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिको प्राप्त होते रहते हैं, अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका काल सबेदा कहा। अब शेव रहीं सात नोकषाय, सम्यक्त्व, सम्यिमिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क ये तेरह प्रकृतियां, सो सामान्य तिर्यचोंको अपेता सम्यिमिण्यात्व हो छोड़कर इनकी जघन्य स्थिति पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके ही प्राप्त होती है और इन सबकी अजघन्य स्थिति पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके सर्वदा पाई जाती है, अतः इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके कथनको पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके समान कहा। किन्तु सम्यिमिम्प्यात्वकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल सामान्यकी अपेत्वा भी आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है और पंचेन्द्र तिर्यचोंके भी इतना ही है अतः सामान्य निर्यचोंके इससे अधिक नहीं प्राप्त हो सकता है, क्योंक सम्यिग्धिक सम्यिग्धिक नहीं प्राप्त हो सकता है, क्योंक सम्यिग्धिक सम्योग्धिण्यात्वकी अधिक जघन्य स्थिति सम्योग्धिण्यात्वकी अधिक जघन्य स्थिति सम्योग्धिण्यात्वकी अधिक जघन्य स्थिति स्वत्र बनजाती है, अतः सामान्य

६६७ मणुस० मिन्छ० सम्म० सोलसक० तिण्णिवेद० जह० ज० एगस०। उक्क० संखेज्जा समया अज० सन्बद्धा। सम्मामि० छण्णोक० खोघं। मणुसपज्ज० एवं चेव, णवरि सम्मामि० सम्मत्तमंगो। इत्थिवेद० छण्णोक० भंगो। मणुसिणी०

तिर्यंचोंके सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका काल पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान कहा। कापोत-लेश्यामें उक्त सब व्यवस्था वन जाती है अतः कापोतलेश्याके कथनको सामान्य तिर्यंचोंके समान कहा । यही बात कृष्ण श्रीर नीललेश्याकी है । किन्तु कृष्ण श्रीर नील लेश्यावालोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यन्द्रष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते हैं त्रातः इनमें सम्यक्त्वकी त्रोघ जघन्य स्थिति न प्राप्त होकर श्रादेश जघन्य स्थिति प्राप्त होती है श्रीर इसलिये इन दोनों लेश्याश्रोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके कालको सम्यग्मिण्यात्वके समान कहा । श्रसंयतोके भी सब प्रकृतियोकी जबन्य श्रीर श्रजधन्य स्थितिका काल सामान्य तिर्थेचोंके समान बन जाता है, क्योंकि इनका प्रमाण भी अनन्त है। किन्तु मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिके कालमें विशेषता है। बात यह है कि असंयत मनुष्य भी होते हैं ऋौर इस प्रकार ऋसंयतोंके मिध्यात्वकी ओव जघन्य स्थिति भी बन जाती है. अतः असंयतोके मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात ममय कहा जांकि सम्यक्त्वकी श्रोध जघन्य स्थितिक जघन्य श्रीर उत्क्रष्ट कालके समान है। श्रीदारिकमिश्रकाययोगियोंके भी सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्राजवन्य स्थितिका काल सामान्य तिर्यचोंके समान बन जाता है, क्योंकि इनका प्रमाण अनन्त है। परन्तु औदारिकमिश्रकाययोगी जीव अनन्तानुबन्धी चतुष्कको विसंयोजना नहीं करते अतः इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी आय जघन्य स्थिति न प्राप्त होकर आदेश जघन्य स्थिति ही प्राप्त होती है और इसलिये इनमे इसका काल सर्वदा बन जाता है यही सबब है कि औदारिकमिश्रकाययागमे अन्तानबन्धी चतुष्ककी जवन्य और श्रजयन्य स्थितिका काल सर्वेदा कहा। पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोमें जो एक जीवकी अपेद्या मिथ्यात्व, सीलह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जबन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल दो समय तथा शेप प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल एक समय बनलाया है, नाना जीवोंकी श्रपेत्ता निरन्तर होनेवाले उस कालको यदि जोड़ा जाय तो वह त्रावलिके असंख्यातवें भागसे श्रिधिक नहीं होता है, अतः यहाँ सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल आवलीके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण कहा । शेप कथन सुगम है । इसी प्रकार जो सब विकलत्रय आदि मार्गणाएं बतलाई है उनमें घटित कर लेना चाहिये। किन्तु पांचों स्थावर काय वादर पर्याप्त जीवोमे एक जीवकी अपेदा मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुप्साकी जबन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है। अब यदि इसे आवितिके असंख्यातवें भागमें गुणित कर दिया जाय तो पल्यके ऋसंख्यातर्वे भागप्रमाण काल प्राप्त होता है अतः पांची स्थावर काय वादर पर्याप्त जीवोके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल परुयके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण कहा। शेप कथन सुगम है।

§ ६६७ मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और तीन वेदकी जघन्य स्थिति-विभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। सम्यग्मिथ्यात्व और छह नोकपायोकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल आघके समान है। मनुष्य पर्याप्तकामे इसा प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सम्यक्त्वकं समान है। तथा स्त्रीवेदका भंग छह नोकषायोंके समान है। मनुष्यितयोंमें सामान्य मनुष्योंके समान भंग है। किन्तु मणुसमंगो । एवरि सम्मामि० सम्मत्तभंगो । पुरिस० णवुंस० छण्णोकसायभंगो । मणुसत्रपञ्ज० मिन्छ० सम्म० सम्मामि० सोलसक० भयदुगुंछ० जह० ज० एगस० । उक्क० श्रावलि० असंखे०भागो । श्रज० जह० एगस० । उक्क० पलिदो० श्रासंखे०भागो । सत्तणोक० जह० ज० एगस० । उक्क० श्रावलि० श्रसंखे०भागो । श्रज० जह० अंतोम्र० । उक्क० पलिदो० श्रसंखे०भागो ।

इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिध्यात्वका भंग सम्यक्त्वके समान है। तथा पुरुषवेद श्रौर नपुंसक वेदका भंग छह नोकपायोके समान है। मनुष्य अपर्यभिकोंमें मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रौर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय श्रौर उत्कृष्ट काल श्रावलीके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय श्रौर उत्कृष्ट काल पत्योपमके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय श्रौर उत्कृष्ट काल श्रावलीके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल श्रावलीके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल श्रन्तर्भहूर्त श्रौर उत्कृष्ट काल पत्योपमके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ-सामान्य मनुष्योंके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कपाय श्रौर तीन वेदोंकी जघन्य स्थिति कहते समय पर्याप्र मनुष्योंकी मुख्यता है अतः इनके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय त्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय वहा। छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिके जघन्य श्रीर उत्कृष्ट कालमें भी यही बात है, स्रातः इनके कालको स्रांघके समान कहा क्योंकि त्रोघमें जो छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिक जघन्य त्रीर उत्कृष्ट कालको बतलाया है वह पर्याप्त मनुष्योंकं ही सम्भव हैं। किन्तु सामान्य मनुष्योकं सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य त्रौर ब्ल्कृष्ट काल लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंकी प्रधानतासे कहा है, क्योंकि उद्वेलनाकी ऋषेचा लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके भी सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति सम्भव है और इसलिये मामान्य मनुष्योके सम्यग्निध्यात्वकी जवन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल श्रोवके समान त्र्यावितके त्र्यसंख्यातवें भाग प्रमाण बन जाता है । होप कथन सुगम है । उपर्युक्त सब कथन मनुष्य पर्याप्त जीवोंके भी बन जाता है किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उत्कृष्ट कालके कथनमे कुछ विशेषता है। बात यह है कि मनुष्यपर्यास्त जीवोंका प्रमाण संख्यात ही है ऋतः इनके सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल सम्यक्तवक समान संख्यात समय ही होगा। तथा इनके स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके जघन्य और उत्कृष्ट कालमें भी कुछ विशेषता है, क्योंकि इनके स्त्रीवंदका स्वादयसे त्तय नहीं होता अतः जिस प्रकार यहाँ नोकपायोकी जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहर्त कहा है उसी प्रकार यहां स्त्रीवद्की जघन्य स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल भी श्रन्तमुंहूनं जानना चाहिये । सामान्य मनुष्योके समान ही मनुष्यनियोके सव प्रकृतियोकी जघन्य त्रोर त्राजघन्य स्थितिका काल है किन्तु सम्यग्मिध्यात्व, पुरुषवंद त्रीर नपुसक-वेदकी जघन्य स्थितिके उत्कृष्ट कालमे कुछ विशेषता है । बात यह है कि मनुष्यनियोंकी संख्या भी संख्यात है, श्रतः इनके सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल सम्यक्त्यकी जघन्य स्थितिके उत्कृष्ट क।लके समान संख्यात समय ही होगा। तथा पुरुषवेद श्रीर न्पुंसकवेदकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिके उत्कृष्ट कालके समान होगा, क्योंकि मनुष्यनियोंकं इन दोनों वेदोंका स्वोदयसे चय नहीं होता है। मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें एक जीवकी श्रपेत्ता मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलद्द कषाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिका

§ ६६८ देव।णं णारगभंगो । एवं भवण०-वाण०, णवरि सम्म० सम्मामि-च्छत्तभंगो । अणुहिसादि जाव अवराइद त्ति चडवीस-एयडीणं ज॰ ज० एगसमञ्जो । उक्क॰ संखेज्ञा समया । अज० सव्बद्धा । अणंताणु० ओघं। सव्बद्ध० सव्वपय० जह० हिदि० जह० एगस० उक्क॰ संखेज्ञा समया । अज० सव्बद्धा एवं परिहार०। एवं संजद-सामाइयछेदो०-खइयसम्मादिहि त्ति । णवरि छण्णोकसाय० ओघं।

उत्कृष्ट काल भी एक समय ही प्राप्त होता है अतः इनके नाना जीवोकी अपेचा उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवित्तके असंख्यानवें भागप्रमाण कहा। तथा इनके उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और सान्तर मार्गणा होनेके कारण उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण बन जाता है। तथा इनके एक जीवकी अपेचा सात नोकपायोंकी अजघन्य स्थिति कमसे कम अंतर्मुहूर्त काल तक पाई जाती है इमलिये सात नोकपायोंकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा। तथा शेष कथन पूर्वोक्त प्रकृतियोंक समान ही है।

\$ ६६ म. देवोंक नारिकयोंक समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंके जानना चाहिय। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिध्यात्वके समान है। अनुदिशसे लंकर अपराजित तकके देवोंमे चौबीस प्रकृतियोंकी ज्ञधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका ज्ञधन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा अज्ञधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल आधके समान है। सर्वार्थसिद्धिके देवोंमे सब प्रकृतियोंकी ज्ञधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका ज्ञधन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है। तथा अज्ञधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार परिहार विशुद्धिसंयतोंके जानना। तथा इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदापस्थापना संयत, और चायिकसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे छह नोकपायोंकी अपेना काल आधके समान।

विशेषार्थ-देवोंमें सत्ताईस प्रकृतियोकी जवन्य स्थितिका जवन्य काल एक समय, उत्कृष्ट काल आर्जालक असंख्यातवें भागप्रमाण, अजघन्य स्थितिका काल सर्वेदा तथा सम्यक्त्वकी जघन्य त्रीर त्रज्ञचन्य स्थितिका काल श्रांचक समान बन जाता है इसलिये इनके कथनका नारिकयोके समान कहा । भवनवासी त्रौर व्यन्तरोमे कृतकृत्यवेद् रु सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न नहीं होते इसलिये इनमं सम्यक्तवकी जवन्य श्रीर श्रजघन्य ।स्यतिका कुल काल सम्यग्मिश्यात्वके समान है। उक्त दोनों प्रकारके देवोमे इस विशेषताको छोड़कर शेप सब कथन सामान्य देवोंके समान है । ऋनुदिश त्रादिमं प्रकृतियोकी जबन्य स्थिति भवके ऋन्तिम समयमे होती है और ये जीव मरकर मनुष्य पर्याप्तकोंमें ही उत्पन्न होते हैं अतः इनक उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा । तथा यहां सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य स्थिति कृत-कृत्यवद्क सम्यन्द्दृष्टियांके प्राप्त हाती है अतः इसकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही प्राप्त होता है, क्योंकि कृतकृत्यवदक सम्यग्दृष्टि संख्यात ही होते हैं। पर यहां अनन्तानुबन्धीकी क्रमशः विसयाजना करनेवाले जीव असंख्यात हैं अतः इसकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिका काल श्रोघके समान बन जाता है। सर्वार्थसिद्धिमे देवोंका प्रमाण संख्यात ही है अतः वहां सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय धौर उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही प्राप्त होगा । शेष कथन सुगम है । सर्वार्थसिद्धिके समान परिहार विशुद्धि संयतोंके सब प्रकृतियोंकी जबन्य और अजबन्य स्थितिका काल प्राप्त होता है क्योंकि उनका § ६६६. एइंदिएसु मिच्छत्त—सोलसक०—णवणोक० ज० श्रज० सन्बद्धा । सम्मत्त-सम्मामि० पंचिदिय-श्रपज्जत्तभंगो । एवं पुढवि०- बादरपुढवि०-बादरपुढवि०-श्रुद्धमपुढवि०-सुहुमपुढवि०-सुहुमपुढवि०-सुहुमपुढवि०-सुहुमशुढवि०-सुहुमशुढविपज्जत्तापज्जत्त-त्राउ०-बादरभाउ०-बादरशाउश्रपज्ज०-सुहुमतोउ०-सुहुमशाउपज्जतापज्जत्त—तेउ०-वादरतेउ०—बादरतेउ०श्रपज्ज०—सुहुमतोउ०-सुहुमतोउ०-सुहुमतोउपज्जतापज्जत्त—वाउ०बादरवाउ०-वादरवाउश्रपज्ज०—सुहुमवाउ०-सुहुमवाउपज्जत्वापज्जत्त—वादरवणप्फिदिपत्तोय०श्रपज्ज०-वणप्फिदि-णिगोद०-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्ता-वादर्वणप्फिदिपत्तोय०श्रभव०-मिच्छादि०-असण्णीसु एवं चेव, णविर सत्तणोक० जह० तिरिक्सोघं।

प्रमाण भी संख्यात है। तथा संयत, सामायिकसयत, छेदांपस्थापनासंयत श्रीर चायिकसम्यग्दिष्टि जीवोंके भी सर्वाथिसिद्धिके देवोंके समान सम्भव सब प्रकृतियोंकी जवन्य श्रीर श्रजचन्य स्थितिका काल प्राप्त होता है, क्योंकि इनके सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति दर्शनमोहनीयकी चपणआदिके समय होती है और ये जीव संख्यात ही होते हैं। किन्तु इन संयत श्रादिके छह नोकपायोंकी जघन्य श्रीर श्रजवन्य स्थितिका काल आघके समान है क्योंकि इनके चपकश्रेणीमे छह नोकपायोंकी जघन्य स्थिति प्राप्त होती है।

\$ ६६६. एकंन्द्रियोमे मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायांका जघन्य और अजघन्य स्थितियिभिक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। तथा सम्यक्त्य और सम्यग्मिध्यात्वका मंग पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान है। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म पृथिवीकायिक, सूक्त्म पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म जलकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म जलकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म अग्निकायिक पर्याप्त, सूक्त्म अग्निकायिक पर्याप्त, सूक्त्म अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म अग्निकायिक पर्याप्त, सूक्त्म अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वायुकायिक अपर्याप्त, स्वत्म वायुकायिक अपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, स्वत्म वास्पर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, स्वत्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्त्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, स्वत्म वनस्पतिकायिक, स्वत्म वनस्पतिकायिक, स्वत्म वनस्पतिकायिक, स्वत्म वनस्पतिकायिक, स्वत्म वनस्पतिकाविक, स्वत्म वनस्यक्ति, स्वत्म वनस्पतिकाविक, स्वत्म वनस्यक्ति, स्वत्म वनस्वतिक्ति, स्वत्म वनस्यक्ति, स्वत्म वनस्यक्ति, स्वत्म वन

विशोषार्थ — एकेन्द्रियोंका प्रमाण श्राननत है इसलिय इनमें मिध्यात्व श्रादि छड़बीस प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्राज्ञ पस्थितिका काल सर्वदा बन जाता है। तथा सर्वत्र सम्यक्त्व श्रीर सम्यक्षिमध्यात्वकी सत्तावाल जीव स्वरूप हैं श्रातः एकेन्द्रियोंमें भी इनकी जघन्य और श्राज्ञ पन्य स्थितिके कालको पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान कहा। श्रागे जो पृथित्री श्रादिक मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें कईका प्रमाण तो श्रानन्त है श्रीर कईका प्रमाण त्रासंख्यात होते हुए भी बहुत श्राधिक है अतः इनमें भी एकेन्द्रियोंके समान सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्राज्ञ प्रमाण केन्द्रियोंके समान सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्राज्ञ स्थितिका काल बन जाता है। यही बात मत्यज्ञानी श्रादि मार्गणाश्रोंकी है किन्तु इनके सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिका काल बन स्थितिक कालमें विशेषता है। बात यह है कि एक जीवकी श्रोपता इनकी जघन्य स्थितिका काल

§ ६७० वेडिव्यिमस्स० मिच्छत-सम्मत्त-सोलसक०-भयदुगुंछ० ज० ज० एगस० । उक्क० संखेजा समया । अज० ज० अंतोमु० । उक्क० पिट्टदो० असंखे०-भागो । णविर सम्म० अज० ज० एयस० । सम्मामि० सत्तणोक० जह० पटमपु-ढिवभंगो । अज० अणुक्कस्तभंगो ।

६७१ त्राहार०-त्राहारिमस्स०-अवगद०-सुहुम०-जहाक्खादसंजदेति उक्क-स्सभंगो । णविर अवगद० छण्णोक० जह० छोषं । कम्मइय० एइंदियभंगो, णविर सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० ज० छोषं । छज० छण्जक०भंगो । एवमणाहारीणं ।

एक समय हैं अब यदि इसे आविलके असंख्यातवें भागसे गुणा किया जाय तो आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है अतः इन मार्गणाओं में सात नोकपायोंकी जयन्य स्थितिके कालको सामान्य तियंचोंके समान कहा, क्योंकि तिर्यचोंके भी इतना ही काल प्राप्त होता है।

§ ६७: वैकियिक मिश्रकाययोगियांमे, मिश्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कपाय, भय श्रोर जुगुष्साकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोका जयन्य काल एक समय श्रोर उत्द्रष्ट काल संख्यात समय है। तथा श्रजवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जयन्य काल श्रन्तर्मुहूतं और उत्द्रष्ट काल पल्योपमक श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी श्रजवन्य स्थितिवालोका जयन्य काल एक समय है। सम्यग्मिश्यात्व श्रोर सात नोकपायोंकी जयन्य स्थितिवासक्तिवालोंका भंग पहली पृथिवीके समान है तथा श्रजवन्य स्थितिविभक्तिवालोंका भंग श्रमुत्कृष्टके समान है।

विशेषार्थं — जब यथायांग्य मनुष्य संयत जीय मरकर वैक्रियिकिमिश्रकाययांगी हाते हैं तब उनके मिश्यात्व, सोलह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति पाइ जाती है पर ऐसे जीवोका प्रमाण संख्यातसे अधिक नहीं हो सकता अतः वैक्रियिकिमिश्रकाययांगमें उक्त प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा। पर यह जघन्य स्थिति अन्तिम समयमें होती है अतः इसमें उक्त प्रकृतियोकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तमुंहूर्त कहा, क्योंकि वैक्रियिकिमिश्रकाययोगका जघन्य काल अन्तमुंहूर्त कहा, क्योंकि वैक्रियिकिमिश्रकाययोगका जघन्य काल अन्तमुंहूर्त है। तथा नाना जीवोंकी अपना वैक्रियिकिमिश्रकाययोगका उत्कृष्ट काल पर्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है इसलिये इनमें उक्त प्रकृतियोकी अजघन्य स्थितिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा। यही बात सम्यक्त्व प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके संबन्धमें भी जानना चाहिये। किन्तु जिस कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीवोक सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण स्थित शेष रहन्पर वैक्रियिकिमिश्रकाययोगकी प्राप्ति हुई ह उसके सम्यक्त्वकी आजघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय भी बन जाता है। पहली प्रथिवीमें सम्यिमिध्यात्व और सात नोकपायोकी जघन्य स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृतियोकी अपस्थ्यातवें भागप्रमाण बतलाया है जो वैक्रियिकिमिश्रकाययोगमें भी घटित हो जाता है अतः इसके उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके कालको पहली पृथिवीके समान कहा। तथा इन आठ प्रकृतियोंकी आजघन्य स्थितिके कालको पहली पृथिवीके समान कहा। तथा इन आठ प्रकृतियोंकी आजघन्य स्थितिके कालको पहली पृथिवीके समान कहा।

§ ६७१ श्राहारककाययोगी, त्राहारकमिश्रकाययोगी, त्रपगत वेदी, सूरम सांपरायिकसंयत त्रीर यथाख्यात संयतोमें उत्कृष्टके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपगत वेदमे छह नाकपायोंकी जयन्य स्थिति।वभक्तिवालोंका काल श्रोघके समान है। कामेणकाययोगियोंमें एकेन्द्रियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्निथ्यात्वकी जयन्य स्थितिविभक्तिवालोंका काल श्राघके समान है। तथा श्रज्यन्यस्थितिविभक्तिवालोंका काल श्राघके समान है। तथा श्रज्यन्यस्थितिविभक्तिवालोंका भंग श्रनुत्कृष्ट

§ ६७२. श्राभिणि०सुद०श्रोहि० श्रोघं, णविर सम्मामि० सम्मत्तभंगो । एवमोहिदंसण-सम्माइि त्ति । मणपज्ज० संजदभंगो । णविर इत्थि० स्वुंस० छण्णोकसायभंगो । संजदासंजद०-वंदय० श्रणुद्दिसभंगो । उवसम० चउवीसपयडी० ज०
ज० एगसमश्रो । उक्क० संखेजा समया । अज० श्रणुक्क०भंगो । अणंताणु०चउक्क०
उक्क०भंगो । सम्मामि० सव्वपय० जह० ज० एगस० । उक्क० संखेज्जा समया । अज०
श्रणुक्क०भंगो । णविर सम्म०-सम्मामि० ज० ज० एगस० । उक्क० श्राविरु०
श्रसंखे०भागो । सासण० सव्वपयडी० ज० ज० एगममश्रो । उक्क० संखेज्जा समया ।
श्रज० ज० एगस० । उक्क० पछिदो० असंखे०भागो ।

एवं कालाणुगमो समत्तो ।

ॐ णाणाजीवेहि अंतरं । सञ्वपयडीणमुक्कस्सि दिविहत्तियाणमंतरं केव-चिरं कालादो होदि ।

६६७३ सुगममेदं।

अ जहरुणेण एगसमञ्जो।

के समान है । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये ।

§ ६७२. श्राभिनिबंधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर श्रविध ज्ञानियों से श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिश्यात्वका भंग सम्यक्त्वके समान है। इसी प्रकार श्रविध दर्शनवाले श्रीर सम्यग्दृष्टि जीवों के जानना चाहियं। मनः गर्यश्रज्ञानियोमें संयताके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद श्रीर नपुंसकवेदका भंग छह नोकषायों के समान है। संयतासयत श्रीर वेदकसम्यग्दृष्टियोमें श्रानुदिशके समान भंग है। उपशम सम्यग्दृष्टियोमें चौवीस प्रशृतियोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्दृष्ट काल संख्यात समय हैं। तथा श्राज्ञचन्य स्थितिविभक्तिवालोंका भंग श्रातुत्वृष्टके समान है। सम्यग्मिश्यादृष्टियोमें सब प्रशृतियोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालों जीवोका जघन्य काल एक समय और उत्दृष्ट काल संख्यात समय है। तथा श्राज्ञचन्य स्थितिविभक्तिवालोंका भंग श्रातुत्वृष्टके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्य श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्य श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्दृष्ट काल समय है श्रीर उत्दृष्ट काल श्रावलोंके श्रसंख्यात्वें भागप्रमाण है। सासादन सम्यग्दृष्टियोमें सब प्रशृतियोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्दृष्ट काल संख्यात समय है। तथा श्रावत्व स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्दृष्ट काल पत्योपमके श्रसंख्यात्वें भागप्रमाण है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुन्ह्या।

\* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरानुगमका अधिकार है। सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालीका अन्तरकाल कितना है ?

§ ६७३. यह सूत्र सुगम है।

# जघन्य अन्तर काल एक समय है।

६ ६७४, कुदो १ जनकस्सिंहिदिसंतकम्मेणिच्छिदसन्वजीवेस्र अणुक्कस्सिंहिदिसंत-कम्मेण एगसमयमिच्छिय तिद्यसमयमिह जनकस्सिंहिदिवंधेण परिणदेसु जक्कस्सिंहिदीए एगसमयंतरुवलंभादो ।

## 🏶 उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेञ्जदि भागो।

६७५ कुदो ? एक्किस्से हिदीए उक्कस्सहिदिबंधकालो जिद अंतोमुहुत्तमेतो लब्भिदि तो संखेजसागरोवमकोडाकोडीमेत्तहिदीणं किं लभामी ति पमाणेण फलगु-िणिदिच्छाए स्रोवहिदाए स्रंगुलस्स असंखेजिदिभागमेत्तरकालुवलंभादो । एवं जइवसहपरूविदचुण्णिसुत्तं देसामासियं पह्मविय संपिह तेण स्विवदत्थस्सुचारणाइरिय-पर्कविदवक्खाणं भणिस्सामो ।

ई ६७६ वंतरं दुविहं जहण्णमुक्ससं च । तत्थ उक्कस्सए पयदं । दुविहो णिद्-देमो ओघेण बादेसेण य । तत्थ त्रोघेण सन्वपयडीणमुक्कस्संतरं के॰ १ जह० एगस०। उक्क० अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । त्रणुक्क० णित्थ अंतरं । एवं सत्तमु पुढवीसु, सन्व-तिरिक्षव०-मणुसतिय-सन्वदेव-सन्वण्इंदिय-सन्वविगलिंदिय-सन्वपंचिंदिय-छकाय०-पंच-मण०-पंचवचि०-कायजोगि०-स्रोरालियमिस्स०-वेउन्विय०-तिण्णिवेद-चत्तारि-क०-म-

§ ६७४. शंका-जघन्य अन्तरकाल एक समय क्यों हैं ?

समाधान-क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मरूपसे स्थित सव जीवोके अनुत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म रूपसे एक समय तक रह कर तीसरे समयमे उत्कृष्ट स्थितिबन्धरूपसे परिणत होने पर उत्कृष्ट स्थितिका एक समय प्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है।

अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

६ ६७४ शंका—उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण क्यों हैं ?

समाधान—एक स्थितिका उत्कृष्ट स्थितिबन्धकाल यदि अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है तो संख्यात को इनकोड़ी सागर प्रमाण स्थितियोंका कितना प्राप्त होगा, इस प्रकार फल राशिसे इच्छा राशिको गुणित करके जो लब्ध आबे उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर अंगुनके असंख्यातर्वे भागप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार यितवृष्यभ आचार्यके द्वारा कहे गये देशामर्षक पूर्णिसूत्रका कथन करके अब उसके द्वारा सूचित होने वाले अर्थका जो उच्चारणाचार्यने ब्याख्यान किया है उसे कहते हैं—

§ ५७६. त्रान्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेसे पहले उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी त्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—जोघ और आदेश । उनमेंसे श्रोधकी अपेचा सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर कितना है ? जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तरकाल नहीं है । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंके नारकी, सब तियंच, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्यनी, सब देव, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, छहों स्थावरकाय, पांचों मनायागी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियककाययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कषायवाले.

दिसुद्रञ्रण्णाण०-विहंग०-ञ्राभिणि०-सुद०-न्रोहि०-मणपज्ज०-संजद्-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ग्रसंजद०-चक्खु०-त्र्राचक्खु०-न्रोहिदंस०-छलेस्स०-भवसि०-अभवसि०-सम्मादि०-वेदय०-खइय०-मिच्छा०-सण्णि०-असण्णि०-न्राहारए ति ।

६६७७ मणुसश्चपज्ज० सव्वपयिष्ठ० उक्क० ज० एगस० । उक्क० श्रंगुलस्स श्रसंखेज्जदि० भागो । अणुवक० ज० एगस० । उक्क० पिल्रदो० श्रमंखे०भागो । एवं सासण० सम्माभि०दिदि त्ति । वेउव्वियमिस्स० सव्वपयदी० उक्क० ओघं । अणुक्क० ज० एगम० । उक्क० बारस० मुहुत्ता । आहार०-श्राहारमिस्स० उक्क० ओघं । श्रणुक्क० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । कम्मइय० सम्म०.सम्मामि० उक्क० ओघं ।

मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदांपस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, संयतासंयत, असंयत, चतुद्र्वनचाले, अचन्द्र्वनचाले, अवधिद्र्शनवाले, छहों लेह्यावाले, भन्य, अभन्य, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, सायिकसम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, संज्ञो, असंज्ञो और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

विशेपार्थ — यहां पर सब प्रकृतियांको उत्कृष्ट स्थितिका जो जवन्य अन्तरकाल एक समय बनलाया है सो स्पष्ट ही है, किन्तु उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यानवें भागप्रमाण बनलाते हुए उसका वीरसेन स्वामीने जो खुतासा किया है उसका भाव यह है कि प्रत्येक स्थितिका उत्कृष्ट बन्धकाल अन्तमुहूर्त है अतः इस हिसाबसे संख्यान कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण सब स्थितियोंका बन्धकाल जोड़ा जाय तो कुल कालका जोड़ अंगुलके असंख्यानवें भागप्रमाण होता है, क्योंकि अन्तमुहूर्तसे संख्यान कोड़ाकोड़ी सागरोंके समयोंको गुणित करनेपर जो प्रमाण प्राप्त होता है वह एक अंगुलक संख्यानवें भागप्रमाण न होकर अंगुलके असंख्यानवें भागप्रमाण ही होता है। अब यदि कुछ जीवोने मोहनीयकी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त किया, अनन्तर वे अन्यस्थितिकिक्ष्पके साथ अन्तर्मु हूर्तकाल तक रहें और इतने कालके भीतर अन्य कोई भी जीव उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त न हो तो सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल उक्त प्रमाण प्राप्त हो जाना है। परन्तु मोहनीयको सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर्क अन्तरकाल नहीं पाया जाना, क्योंकि अनुत्कृष्ट स्थितिवालें जीवोंका सर्वदा सद्भाव पाया जाना है। उत्तर सानों प्रथिवियोंके नारकी आदि और जिननी मार्गणएं गिनाई है उनमें भी यह व्यवस्था बन जानी है, अतः उनके कथनको ब्रांघक समान कहा।

§ ६७७ मनुष्य अपर्याप्तकोंमं सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातव भागप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पत्यापमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सासादनसम्यग्टिष्ट और सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तरकाल आघके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वारहमुहूर्त है। आहारकक्रययोगी और आहारकिमिश्रकाययोगियोंमें उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तरकाल ओघके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालों का जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिवालों समयव्यव्यक्ति उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालों का अन्तरकाल अपेष्ठके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालों का उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालों का जघन्य अन्तरकाल और सन्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल

जि॰ एगस॰, उक्कि॰ श्रंतोमु॰ । सेसं श्रोघं । एवमणाहारीणं ।

६७८ अवगद् चडवीसपयडी० उक्क० श्रोघं । अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० झम्मासा । णवरि दंसणतिय०-अद्दकसा०-श्रद्धणोक० वासपुधत्तं ।

श्चन्तर्मुहुर्त है। शेप कथन श्रोघके समान है। इसी प्रकार श्वनाहारकोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ--लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य सान्तर मार्गणा है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा, क्योंकि इस मार्गणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके ऋसंख्यातर्वे भागप्रमाण है। तथा सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल जिस प्रकार श्रोघमें घटित कर आये हैं उसी प्रकार यहां भी घटित कर लेना चाहिये । सासादनसम्यग्दृष्टि श्रीर सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोंका श्चन्तरकाल लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंके समान है, अतः इनमे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका ऋन्तरकाल लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंके समान कहा । वैक्रियिकमिश्रकाययोगका जघन्य ऋन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर बारह मुहुर्त है अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर बारह सुहर्त कहा । आहारककाययोग और आहारक-मिश्रकाययोगका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त्व है अतः इनमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त्व कहा। शेप सब कथन सुगम है। कार्मणुकाययोगमे सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके जघन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तरमे कुछ विशेषता है। शेष कथन श्रीधके समान है। बात यह है कि कार्मणकाययोगमे सम्यक्त्व त्र्योर सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य त्र्यन्तर एक समय त्र्यौर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त होता है, अतः इसमें इन दोनों प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर भी उक्त प्रमाण ही प्राप्त होता है। यही बात अनाहारक मार्गणामें जानना चाहिये, क्योंकि मोहनीयकी सत्ता रहते हुए कार्मणकाययोगी जीव ही अनाहारक होता है।

ई ६७८ त्रापगतवेदवालोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका ऋन्तर काल खोघके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और, उत्कृष्ट अन्तर काल छह महीना है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीनो दर्शनमोहनीय, आठ कपाय और आठ नोकपायोंकी अपेन्ना अन्तरकाल वर्षपृथकत्व है।

विशेषार्थ — मोहनीयकी मना रहते हुए अपगतवदका जघन्य अन्तर एक समय और डल्ड्र अन्तर छह महीना प्रमाण है, अतः इसमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कके बिना शेप चौबीस प्रश्वतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना प्रमाण कहा। किन्तु उपशमश्रेणीका उत्कृष्ट अन्तर वप्षृथकत्व है अतः अपगतवदिके तीन दर्शनमोहनीय और आठ कपायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर वप्षृथकत्व प्रमाण प्राप्त होगा। तथा जो नपुंसकवेद और स्त्रीवेदके उदयसे उपशमश्रेणी या चपकश्रेणी पर चढ़ता है उसीके अपगतवेद अवस्थामे आठ नोकपायोंका सत्त्व पाया जाता है पर इनका भी उत्कृष्ट अन्तर वर्षष्ट्र अतः अपगतवेदमें आठ नाकपायोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्व प्रमाण प्राप्त होगा। तात्पर्य यह है कि अपगतवेदमें पुरुपवद और चार संज्वलनोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर छह महीनाप्रमाण और शेप उन्नीस प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्व प्रमाण प्राप्त होता है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७९. त्रकसा० त्राहारभंगो । एवं जहाक्खादसंजदाणं । सुहुम० एवं चेव । णविर लोसंजल० त्रणुक्क० उक्क० ल्रम्मासा । उवसम० सञ्जपयडी० उक्क० त्रोघं । अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० चउबीस त्रहोरत्ताणि ।

# एवमुकस्सओ अंतराणुगमो समत्तो ।

\* एतो जहरण्यंतरं ।६०० सुगममेदं ।

 भिच्छुत्त-सम्मत्त-अदृकसाय-छुग्णोकसायाणं जहण्णदिदिविहत्ति-अंतरं जहण्णेण एगसमञ्जो।

§ ६८१. कुदो १ पुन्तिन्छसमए जहण्णहिदिं काद्ण तदणंतरविदियसमए अंतरिय पुणो तदियसमए अण्णेस जीवेसु जहण्णहिदिम्वगएसु एगसमयंतरुवलंभादो ।

§ ६७६ अकषायियोंमें श्राहारककाययोगियोंके समान भंग है। इसी प्रकार यथाख्यात संयतोंके जानना । सून्मसांपरायिकसंयतोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है किलोभसंज्वलनकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। उपशम-सम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तरकाल श्रोषके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवालोंका ज्वन्तरकाल चौबीस दिन रात है।

विशेषार्थ—अकपाय अवस्थाके रहते हुए मोहनीयकी चौबीस प्रकृतियोंकी सत्ता उपशान्त मोह गुणस्थानमे पाई जाती है और इसका जघन्य अन्तर एक समय तथा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व प्रमाण है तथा आहारककाययोगका अन्तरकाल भी इतना ही है, अतः अकषायी जीवोके कथनको आहारककाययोगियोंक समान कहा। यही बात यथाख्यातसंयतोंक जानना चाहिये। सूद्रमसाम्परायिक सयतोंके भा यही बात घटित हो जाती है, पर त्तपक सूद्रमसाम्परायिक संयतका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना प्रमाण है अतः इसमें लाभकी अनुःकृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना प्रमाण जानना चाहिये। उपश्मसम्यक्त्वका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस दिनरात है अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुःकृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस दिनरात है तथाः इसमें सब प्रकृतियोंकी अनुःकृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस दिनरात कहा। शेप कथन सृगम है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

अब इसके आगे जघन्य अन्तरानुगमका अधिकार है। § ६८०, यह सूत्र सुगम है।

# मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, श्राठ कषाय और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थिति-विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ६८१. शंका-जघन्य अन्तरकाल एक समय क्यों है ?

समाधान—क्योंकि कुछ जीवोने पहले समयमें जघन्य स्थिति की। तदनन्तर दूसरे समयमें अन्तराल देकर पुनः तीसरे समयमें अन्य जीव जघन्य स्थितिको प्राप्त हुए इस प्रकार जघन्य अन्तरकाल एक समय प्राप्त होता है।

## 🏶 उक्कस्सेण ब्रुम्मासा ।

§ ६८२<sub>.</sub> कुदो ? खबगाणं छम्पासं मोत्तूण उविर उक्कस्संतराणुवर्लमादो ।

असम्मामिच्छत्त अणंताणुबंधीणं जहरणिदिविहत्तिश्रंतरं जहरणेण
 एगसमओ ।

६६८३ सुगममेदं।

🏶 उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे।

§ ६८४. छुदो ? कारणाणुरूवकज्जुवलंभादो । तं जहा-सम्मन्तं पहिवज्जंताणसुक्रस्संतरं सादिरेगचउवीसमहोरत्ताणि जहा जादाणि तहा एदेसिं मिन्छनं गन्छमाणाणं
पि उक्कस्संतरं सादिरेगचउवीसअहोरत्तमेतं । मिन्छतं गंतूण सम्मत्त-सम्मामिन्छताणि उन्वेल्लणंताणं पि एवं चेव उक्कस्संतरं; अण्णहाभावस्स कारणाभावादो । एवमणंताणुवंधिचउक्कं विसंजोणंताणं संजुज्जमाणाणं च सादिरेयचउवीसअहोरत्तंतरस्स
उक्कस्सस्स कारणं वत्तन्वं । सम्मनं पिडवज्जताणं चउवीसअहोरत्तमेत् क्रस्संतरिणयमो
कुदो ? साभावियादो ।

\* तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है।

६ ६ - २ शंका - उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना क्यों हैं ?

समाधान-क्योंकि चपकोंके छह महीना अन्तर कालको छोड़कर आगे उत्कृष्ट अन्तरकाल नहीं पाया जाता है।

\* सम्यग्निध्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवार्लीका जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ६८३ यह सूत्र सुगम है।

तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चोबीस दिन रात है।

§ ६८४. शंका-उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौत्रीस दिन रात क्यों है ?

समाधान—क्यों कि कारणके अनुरूप कार्य होता है। इसका खुलासा इस प्रकार है—जिस प्रकार सम्यक्तवको प्राप्त होनेवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौवीस दिनरात है उसी प्रकार मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका भी उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौवीस दिनरात है। मिथ्यात्वको प्राप्त होकर सम्यक्तव और सम्यग्निथ्यात्वकी उद्वेलना करनेवाले जीवोंका भी इसी प्रकार उत्कृष्ट अन्तरकाल होता है, क्योंकि इससे अम्य प्रकार होनेका और काई कारण नहीं पाया जाता। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले और अनन्तानुबन्धी चतुष्कसे संयुक्त होने वाले जीवोंके साधिक चौवीस दिनरात प्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकाल के कारणका कथन करना चाहिये।

शंका-सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस दिन रात प्रमाण होता है यह नियम किस कारणसे हैं ?

समाधान-स्वभावसे ही ऐसा नियम है।

## अ तिरुहं संजलण-पुरिसवेदाणं जहरणिदिविहत्तिश्चंतरं जहरणेण एगसम्बो।

६६८५ सुगममेदं ।

### 🕸 उक्कस्सेण वस्सं सादिरेयं।

्रद्र् कोधजहण्णिहिदीए उक्कस्संतरकालो चत्तारि झम्मासा २४ माणस्स तिण्णि झम्मासा १८ मायाए दो झम्मासा १२ जेण होदि तेण तिण्हं संजल्णाणामुकक-स्संतरकालो वासं सादिरेयमिदि ण घडदे, किंतु पुरिसवेद-माणसंजलणाणमेदमंतरं छज्जदे; तत्थहारसमासमेत्तुक्कस्संतरुवलंभादो ति १ होदि एसो दोसो जिद सव्वकालमु-कस्संतराणं चेव सभवो होदि, ण पुण एवं संभवो उक्कस्संतराणमणुबद्धाणं जिद संभवो होदि तो दोण्हं चेय ण तिण्हं चदुण्हं वा । एवं कुदो णव्वदे १ तिण्हं संजलण-पुरिसवेदाणं वासं सादिरेयमुक्कस्संतरं भण्णमाणमुत्तादो । तेणेदेसि चदुण्हं कम्माणं दोण्हं झम्मासाणमुत्रित को वि जिणदिहभावो कालो अहिओ ति वत्तव्वं । मायासंजलणाए संपुण्णवेद्यमासा चेव उक्कस्संतरं, तत्थ कथं वासं सादिरेयमेनंतरं छज्जदे १ ण, तत्थ वि लोभोदएण दो-तिण्णिआदिवारं खवगसेहिं चडाविदे सादिरेयवे-झम्मासमेत्त्वकस्संतरुवलंभादो । जिद एवं तो माण-माया-लोभाणमेग-दो-तिसंयोगाणं

\* तीन संज्वलन और पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालींका जघन्य अन्तर काल एक समय है।

§ ६=५ यह सूत्र गुगम है।

तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष है।

§ ६-६. शंका—चूंकि कांधकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर काल चौबीस महीना, मानका अठारह महीना और मायाका बारह महीना होता है इसलिये तीन संज्वलनोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष नहीं बनता, किन्तु पुरुषंद और मान संज्वलनका साधिक एक वर्ष अन्तरकाल वन जाता है, क्योंकि इन दानों प्रकृतियोंका अठारह महीना प्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकाल पाया जाता है?

समाधान-यदि सर्वदा उत्कृष्ट अन्तरकालोंका ही संभव होता तो यह दोप होता परन्तु ऐसा संभव नहीं है। क्योंकि अनुबद्ध रूपसे उत्कृष्ट अन्तरकालोंकी यदि संभावना है तो दोकी ही है, तीन और चार की नहीं।

शंका-एसा किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—तीन संज्वलन और पुरुपवेदके साधिक एक वर्ष प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर कालको कहनेवाले उक्त सूत्रसे ही यह जाना जाता है। अतः इन चार कर्मोंका एक वर्ष और इसके अपर जितना अधिक जिन भगवानने देखा हो उतना उत्कृष्ट अन्तरकाल होता है, ऐसा कहना चाहिये।

शंका-मायासंज्वलनका पूरा एक वर्ष उत्कृष्ट अन्तर काल है, अतः उसका साधिक एक वर्ष उत्कृष्ट अन्तरकाल कैसे बन सकता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि लाभके उदयसे दां, तीन आदि वार जीवोंको चयकश्रेणीपर चढ़ाने पर मायाका भी साधिक एक वर्ष प्रमाण उत्कृष्ट श्रन्तरकाल प्राप्त हो जाता है। खवगसेढिचडणवारसहस्सेहि कोधसंजलणस्स संखेज्जसहस्सल्लमासंतरकालो किण्ण लब्भदे ? ण, संखेज्जसहस्संतरकालेस्र मेलिदेसु वि मादिरेयवेल्लमासमेत्तपमाणचादो । तं कुदो णव्यदे १ एदम्हादो चेव सुत्तादो ।

- 🕸 लोभसंजलएस्स जहण्णिहिदिविहित्तिश्चंतरं जहण्णेण एगसमयो । १ ६=७ सुगममेदं ।
- \* उक्तस्सेण छुम्मासा ।
- ्र ६८८, कुदो ? जस्स कस्स वि कसायस्म उदएण खवगसेढिं चिडिदजीवाग्यं स्रोभस्स जहण्णिद्दिसंतकम्मुप्पत्तीदो । ण सेसाणमेसो कमा, सोदएपेव खवगसेढि चिडिदाणं जहण्णिद्दिसंतकम्मप्पत्तीदो ।
- इतिथ एवंसयवेदाणं जहरण्णिहिदि [विहत्ति ] अंतरं जहरण्णेण एगसमञ्जो ।

६६८६ सुगममेदं।

🕸 उक्कस्सेण संखेजाणि वस्साणि।

शंका—यदि ऐसा है तो कभी मान, कभी मान माया और कभी मान, माया लोभके उद्यसे जीवोंको हजारों बार चपकश्रेणीपर चढ़ाते रहनेसे कोधसंज्यलनका संख्यात हजार छह महीना-प्रमाण अन्तरकाल क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान-नहीं, संख्यात हजार अन्तरकालोंके मिला देने पर भी कोधसंज्यलनके उत्कृष्ट अन्तरकालका प्रमाण साधिक एक वर्ष ही होता है।

शंका-यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-इसी सूत्रसे जाना जाता है

ॐ लोमसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ६=७ यह सूत्र मुगम है।

अ तथा उत्कृष्ट अन्तर बह महीना है।

§ ६८८. बांका-उत्कृष्ट अन्तर छह महीना क्यो हैं ?

समाधान—क्योंकि जिस किसी भी कपायके उदयसे चपकश्रेणी पर चढ़े हुए जीवोंके लोभके ज्ञावन्य स्थिति सत्कर्मकी उत्पत्ति हो जाती है। परन्तु होप क्यायोका यह कम नहीं है, क्नांकि,होण क्यायोंकी अपेचा स्वोदयसे ही चपकश्रेणीपर चढ़े हुए जीवोंके ज्ञावन्य स्थिति सत्कर्मकी उत्पत्ति होती है।

अस्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जधन्य स्थितिविभक्तियाले जीवोंका जधन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ६८६, यह सूत्र सुगम है।

**ॐ तथा उत्कृष्ट अन्तरका**ल संख्यात वर्ष है।

६९० कुदो, अप्पसत्थवेदाणमुदएण खवगसेढिं चडमाणजीवाणंपाएण संभवा-भावादो ।

§ ६६०. शंका—उत्कुष्ट अन्तरकाल संख्यात वर्ष क्यों है ?

समाधान-क्योंकि श्रप्रशस्त वेदोंके उदयसे सपकश्रेणीपर चढ़नेवाले जीव प्रायः नहीं पाये जाते हैं।

विशेषार्थ--- दर्शनमोहनीयकी चपणाके समय मिध्यात्व श्रीर सम्यक्त्वकी, तथा चारित्र मोहनीयकी चपणाके समय आठ कपाय और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति नियमसे होती हैं और दर्शनमोहनीय तथा चारित्रमोहनीयकी जपरााका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीनाप्रमाण है अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीनाप्रमाण कहा । यद्यपि दर्शनमाहनीयकी चपणाके समय सम्यग्मिथ्यात्वकी भी जवन्य स्थिति होती है पर यह उद्वेलना प्रकृति हैं, श्रतः उद्वेलनाके समय भी इसकी जघन्य स्थित प्राप्त होती है अत: इसका अन्तरकाल अलगसे कहा है। ऐसा नियम है कि कोई भी जीव यदि सम्यक्त्वको प्राप्त २ हो तो साधिक चौबीस दिनरात तक सम्यक्त्वको नहीं प्राप्त होगा। तत्पश्चान कोई न कोई जीव सम्यक्त्वकी अवश्य ही प्राप्त होगा। इस परसे निम्न चार बातें फलित होती हैं (१) सम्यग्दृष्टि जीव यदि मिध्यात्वको न प्राप्त हों तो साधिक चौबीस दिन तक नहीं प्राप्त होंगे। इसके वाद कोई न कोई सम्यग्दृष्टि जीव अवश्य ही मिध्यादृष्टि हो जायगा। (२) यदि कोई भी जीव सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिश्यात्वकी उद्वेलनाका प्रारम्भ न करे तो साधिक चौबीम दिनरात तक नहीं करेंगे इसके बाद कोई न कोई जीव अवश्य ही सम्यक्त्व और सम्य-ग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाका प्रारम्भ करेंगे। (३) यदि कोई भी जीव अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना न करें तो साधिक चौबीस दिनरात तक नहीं करेंगे इसके बाद कोई न कोई जीव अवश्य ही अनन्तानु-बन्धी चतुष्ककी विसंयाजना करेगा। (४) जिन जीवोंने अनन्तानुबन्धीकी विसंयाजना की है वे यदि मिध्यात्वमं जाकर पुनः उससे संयुक्त न हों तो ऋधिकसे ऋधिक साधिक चौबीस दिनरात तक नहीं होंगे इसके बाद कोई न कोई जीव अवश्य ही मिध्यात्वमें जाकर पुनः उसका सत्त्व प्राप्त करेगा। इस कथनसे यह निष्कर्ष निकला कि सम्यग्मिण्यात्व त्रीर त्रानन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौर्बास दिनरात होता है तथा इनकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय है यह तो स्पष्ट ही है। तथा संज्वलन क्रांघ, संज्वलन मान, संज्वलन माया श्रीर पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिका जा जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष बतलाया है सा उसका खुलासा इस प्रकार है - जा भी जीव चपकश्रेणी पर चढता है उसके लोभका उदय तो अवस्य ही होता है, शेप तानका उदय हो और न भी हो। जो मायाके उदयसे चपकश्रेणी पर चढ़ता है उसके माया और लोभका उदय अवश्य होता है किन्तु शेष दोका उदय नहीं होता। जो जीव मानके उदयसे चपकश्रेणीपर चढ़ता है उसके मान, माया श्रीर लोभका उदय श्रवश्य होता है किन्तु क्रांधका उदय नहीं होता। तथा जो जीव क्रोधके उदयसे चपकश्रेणीपर चढता है उसके कोधादि चारोंका उदय अवस्य होता है। अब यदि पहले छह महीनामें केवल लोभके उदय षाले जीवोंको, दूसरे छह महीनामें माया श्रीर लोभके उदयवाले जीवोंको. तीसरे छह महीनामें मान, माया श्रीर लाभके उद्यवाले जीवोंका श्रीर चौथे छह महीनामें चारों कपायोंके उद्यवाले जीवों का चपकश्रेणी पर चढाया जाय तो कमसे लोभकी जघन्य स्थितिका छह महीना उत्कृष्ट अन्तर मायाकी जघन्य स्थितिका एक वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर, मानकी जघन्य स्थितिका डेढ वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर और कोधकी जधन्य स्थितिका दो वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है। अतएव \* णिरयगईए सम्मामिच्छत्त-अणंताणुषंधीणं जहण्णहिदि [ विहत्ति ] श्रंतरं जहण्णेण एगसमभ्रो ।

६६६१ सुगममेदं।

\* उक्कस्सं चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे।

§ ६८२ एदं पि सुगमं; ओघम्मि परूविदत्तादो । णवरि श्रोधम्मि उत्तंतरादो एदेणंतरेण सविसेसेण होदन्वं; एगगइमिस्सिद्ण हिदस्स चउग्गइमन्लीणंतरेण सह समाणत्तविरोहादो ।

\* सेसाणि जहा उदीरणा तहा णेदव्वाणि।

§ ६९३ सेसाणि पयडिअंतराणि जहा उदीरणाए एदासि पयडीणं परूविदाणि तहा परूवेदव्वं । संपिह जइवसहसुहिविणग्गयचुण्णिस्रत्तस्स देसामासियस्स अत्थपरूवणं काऊण तेण सुचिदत्थस्स परूवण्डं लिहिद्चारणं भणिस्सामो ।

६९४ जहण्णंतराणुगमेण दिवहो णिहेसो—श्रोघेण श्रादेसेण य । तत्थ

क्रोध, मान और माया संज्वलनकी जघन्य स्थितिका जो उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष कहा है वह नहीं बन सकता है यह एक शंका है जिसका वीरसेन स्वामीने प्रारम्भमें उल्लेख करके उसका इस प्रकारसे समाधान किया है। वीरसेन स्वामीका कहना है कि इस प्रकार छह छह महीनाके अन्तरकाल लगानार नहीं प्राप्त होते हैं। कदाचित् यदि प्राप्त भी हुए तो दो ही अन्तरकाल प्राप्त हो सकते हैं। दो अन्तरकालोंके वाद तीसरे और चौथे अन्तरकालका प्राप्त होना तो किसी भी हालतमें सम्भव नहीं है। यदि ऐसा न माना जाय तो चृिणसूत्रकारने जो तीन संज्वलनोंका साधिक एक वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकाल कहा है वह नहीं बन सकता है।

अ नरकगतिमें सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थिति-विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है।

§ ६८१ यह सूत्र सुगम है।

अक्ष तथा उन्कृष्ट अन्तर साधिक चौवीस दिनरात है।

§ ६६२, यह सूत्र भी मुगम है, क्योंकि इसका श्रोघ प्ररूपणाके समय कथन कर आये हैं। किन्तु इतना विशेष है कि जो अन्तर श्रोघमें कहा है उससे यह अन्तर कुछ अधिक होना चाहिये, क्योंकि एक गतिके आश्रयसे जो अन्तर स्थित है उसकी चार गतिसे संबन्ध रखनेवाले अन्तरके साथ समानता माननेमें विरोध आता ह।

अशेप प्रकृतियोंका अन्तरकाल, जिस प्रकार उदीरणामें अन्तर कहा है उस प्रकार जानना चाहिये।

§ ६६३ पहले जो पाँच प्रकृतियाँ गिना आये हैं उन्हें छोड़कर शेप प्रकृतियोका जिस प्रकार उदीरणामें अन्तरकाल कहा है उस प्रकार उनका अन्तरकाल जानना चाहिये। उस प्रकार यितवृषम आचार्यके मुखसे निकले हुए देशामपंक चूिणसूत्रके अर्थका कथन करके अब उपसे सूचित होनेवाले अर्थका कथन करनेके लिये उसके अपर लिखी गई उचारणाका कहते हैं।

§ ६८४. जघन्य अन्तरानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है-अोघनिर्देश और

श्रोघेण मिच्छत्त-सम्मत्त-श्रद्धकसायय्—छण्णोक०६-लोभसंज० ज० अंतरं ज० एगसमओ उक्क० छम्मासा । श्रज० पत्थि अंतरं । सम्मामि०-श्रणंतागु०चउक्क० ज० ज० एगसमश्रो, उक्क० चउनीस श्रहोरत्ताणि सादिरेयाणि । अज० पत्थि अंतरं । इत्थि०-णवुंस० ज० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । अज० पत्थि अंतरं । तिण्णिसंज०-पुरिस० जह० ज० एगस०, उक्क० वासं सादिरेयं । अज० पत्थि अंतरं । एवं मणुस-मणुसपज्ज०-पंचि०-पंचिं०-पज्ज०-तस-तमपज्ज०-पंचमण०- पंचविच०-कायजोगि०-ओरा-लि०-चक्खु०-श्रचक्खु० सुक्क०-भविस०-सण्णि०-आहारि ति । प्रवरि मणुसपज्ज० इत्थिवेद० जह० उक्क० छम्मासा ।

६९५ त्रादे० णेरइएसु मिच्छत्त-वारसंक०-णवणोक॰ उक्क०भंगो । सम्मत्त०
ज० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । त्राज्ञ० णित्थ त्रांतरं । सम्मामि०-त्राणंताणु०चउक्क० ज० जह० एगस० । उक्क० चउवीस त्राहोरत्ताणि सादिरेयाणि । अज०
णित्थ अंतरं । एवं पढमाए पंचिंदियतिरिक्ख-पिचं०तिरि०पज्ज० । विदियादि जाव
सत्तिमि ति एवं चेव । णवरि सम्मत्तस्स सम्मामिच्छत्तभंगो । एवं पंचिं०तिरि०

श्रादेशनिर्देश । उनमेसे श्रोवकी श्रपंत्ता मिण्यात्व, सम्यक्त्व, श्राठ कषाय, छह नोकषाय श्रीर लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल छह महीना है । तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका श्रन्तरकाल नहीं है । सम्यिग्धित्र्यात्व और श्रन्ततानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौवीस दिनरात है । तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर चपप्रथक्त्व है । तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर चपप्रथक्त्व है । तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका श्रन्तर नहीं है । तीन संज्वलन और पुरुपवंदकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका श्रन्तर नहीं है । तीन संज्वलन और पुरुपवंदकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका श्रन्तर नहीं है । इसी प्रकार साधिक एक वर्ष है । तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका श्रन्तर नहीं है । इसी प्रकार साधिक एक वर्ष है । तथा श्रजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका श्रन्तर नहीं है । इसी प्रकार साधान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, श्रोदारिककाययोगी, चतुदर्शनवाले, श्रचतुदर्शनवाले, श्रुक्तलेश्यावाले, भव्य, संज्ञी श्रीर श्राहारक जोवोंके जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्रिवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिका उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है ।

§ ६८५ अ।देशकी अपेत्ता नारिकयोमें मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंका मंग उत्कृष्टके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वष्ष्रथक्तव है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तर नहीं है। सम्यिग्मध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच और पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारिकयोंके इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मध्यात्वके समान

जोणिणी-भवण०-वाण०-जोदिसि०-वेउन्विय० जोगे ति ।

६६६ तिरिक्ख० मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछ० ज॰ श्रज० णित्थ अंतरं। सम्मत्त-सम्मामि०-श्रणंताणु० पढमपुढवीभंगो । सत्तणोक० एवं चेव । पंचिं०तिरि०-श्रपज्ज० पंचिं०तिरिक्खजोणिणीभंगो । णवरि श्रणंताणु०चउक० श्रपज्जत्तुकस्सभंगो । एवं सव्विविग्लिंदिय-पंचिं०श्रपज्ज०-तसश्रपज्जनो ति ।

है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तियँच योनिमती, भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैकियिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ--नारिकयोके सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण बतला आये हैं तथा यह भी बतला आये हैं कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तरकाल नहीं होता। इसी प्रकार यहां भी मिथ्यात्व, बारह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके श्रन्तरकालके विषयमें जानना चाहिये। कारण जो उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके श्रन्तरके समय बतला श्राये हैं वे ही यहां जानना चाहिये। किन्तु शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके श्रान्तरकालके विषयमं कुछ विशेषता है। बात यह है कि नरकमे कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्व है, श्रतः वहां सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्त्व प्राप्त होता है, क्योंकि सम्यक्त्वकी त्रोघ जघन्य स्थिति कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिके ही प्राप्त होती है। इसी प्रकार सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात जानना चाहिये । इसका कारण श्रोध-प्ररूपणाके समय बतला ही आये हैं। तथा इन छहों प्रकृतियोंकी श्रज्ञचन्य स्थितिका श्रन्तरकाल नहीं पाया जाना यह स्पष्ट ही है। मूलमें पहली पृथिवीके नारकी आदिक जो और तीन मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें यह सब व्यवस्था बन जाती है, अतः उनके कथनको सामान्य नारिकयोंके समान कहा है। द्वितीयादि पृथिवियोंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते हैं स्रतः वहां सम्यक्तको त्रांघ जघन्य स्थिति सम्भव न होकर त्रादेश जघन्य स्थिति पाई जाती है जो उद्वेलनाके समय सम्भव है श्रीर उद्वेलनाका उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक चौबीस दिनरात होता है श्रत: यहां सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका अन्तर सम्यग्मिध्यात्वके समान कहा । यहां इतनी ही विशेषता हैं शेप सब कथन सामान्य नारिकयोंके समान है। मूलमें जो पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिमती श्रादि मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें दूसरी पृथिवीके समान व्यवस्था बन जाती है, इसलिये उनके कथनको दूसरी पृथिवीके समान कहा ।

§ ६८६ तिर्येचोंमें मिध्यात्व बारह कषाय, भय छौर जुगुष्साकी जघन्य छौर अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका मंग पहली पृथिवीके समान है। सात नोकषायोंका मंग भी इसी प्रकार जानना चाहिये। पंचेन्द्रिय तिर्येच अपर्याप्तकोंमें पंचेन्द्रिय तिर्येच यानिमितियोंके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेचा भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और अस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

विशेषार्थ — तिर्यंचोंका प्रमाण अनन्त है। उनमें मिध्यात्व, बाहर कपाय, भय और जुगुत्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं अतः इनका अन्तर काल नहीं है। तिर्यंचोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वके समय, सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य

६६७ मणुसिणीसु सम्मामि०-अणंताणु०चउक० ओघं। सेस० ज० ज०एगस०, उक० वासपुधत्तं । त्रज० णित्थ अंतरं । मणुसत्र्यपज्ज० छन्वीसपयडीणं उक्कस्सभगो। सम्म०-सम्मामि० जह० त्रज० जह० एयसमओ, उक्क० पिट्टो० त्रसंखे०भागो।

§ ६९८ देवाएां णारगभंगो । एवं सोहम्मादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति । अणुद्दिसादि जाव सव्यद्दा त्ति एवं चेव । णवरि सम्म०-अणंताणु०चउक्क० जह० ज०

स्थिति उद्वेलनाके समय और त्रानन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति विसंयोजनाके समय पाई जाती है जिनका अन्तरकाल पहले नरकके समान यहां भी बन जाता है, अतः इनके भंगको पहली पृथिवीके समान कहा तथा सान नोकषायोंकी जघन्य स्थिति, जो एकेन्द्रिय स्थितिसत्त्वके समान स्थितिको बाधकर पंचेन्द्रियोंम उत्पन्न हुए हैं उनके, प्रतिपन्न प्रकृतिके बन्धकालके अन्तिम समयमें होती है। अब यदि नानाजीवोंकी अपेचा इसका अन्तरकाल देखा जाय तो पहली पृथिवीके नारिकयोंके समान यहां भी जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है इमिल्यं तिर्यचोंमे सात नोकपायोंकी जघन्य ऋौर अजघन्य स्थितिका भंग पहले नरकके समान कहा। पंचेन्द्रियतियँच यानिमती जीवोके पहले सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर अजयन्य स्थितिका ऋन्तर दूसरी पृथिवीकं समान कर ऋाये हैं उसी प्रकार यहां पंचेन्द्रिय तियंच अपर्याप्तकों के कर लेना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना नहीं होती, इसलिये यहां अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी श्रोघ जघन्य स्थिति न प्राप्त होकर आदेश जवन्य स्थिति प्राप्त होती है और इसलिये यहां इनकी जवन्य स्थितिका जवन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है जो कि इनके अनन्तानुबन्धीकी उत्कृष्ट स्थितिके अन्तरके समान है। यही कारण है कि इनके अनन्तानुबन्धी चत्रककी जघन्य स्थितिके श्रान्तरको अपने ही अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके अन्तरके समान कहा । मुलमें जो मब विकलेन्द्रिय आदि मार्गणाएं गिनाई हैं उनमे भी यही व्यवस्था वन जाती है अतः उनके कथनको पंचेन्द्रियतियँच अपर्याप्तकोके समान कहा ।

६६७. मनुष्यिनयांमे सम्यग्मिश्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेना अन्तरकाल अभिषे समान है। तथा क्षेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तियांने जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्य है। तथा अजघन्य स्थिति विभक्तिवांने जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकों सं इच्चीस प्रकृतियोंकी अपेना मंग उत्कृष्टके समान है। सम्यक्त्य और सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिवभक्तिवांने जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्योंपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

विशोषार्थ—मनुष्यितयोंकं दर्शनमोहनीय और चारिक्रमोहनीयकी चपणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्व प्रमाण पाया जाता है, अतः इनमे सम्याग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धीको छोड़कर शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्वप्रमाण कहा। शेष कथन सुगम हैं। मनुष्यश्चपर्याप्रकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर प्रस्य और उत्कृष्ट अन्तर प्रस्य विश्व अपन्तर प्रस्य विश्व अपन्तर प्रस्य अपन्तर अपन्तर प्रस्य अपन्तर प्रस्य अपन्तर प्रस्य अपन्तर प्रस्य अपन्तर प्रस्य अपन्तर प्रस्य अप

६६८= देवोंमें नारिकयोंके समान भंग है। इसी प्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर उपिरम भेवेयक तकके देवोंके जानना चाहिये। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंके भी इसी प्रकार एगस०, उक्क० वासपुधत्तं पछिदो० संखे०भागो ।

६६६ एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० ज० अज० एत्थि अंतरं। सम्मत्त०-सम्मामि० पंचिं०तिरि०अपज्जत्तभंगो। एवं पुढवि०-वादरपुढवि०-वादरपुढवि०-वादरपुढवि०-सुहुमपुढवि०पज्जत्तापज्जत्त-आउ०-वादरआउ०-वादरआउ०-वादरआउ०-सुहुमआउ०-सुहुमआउ०-सुहुमआउ०-सुहुमआउ०-सुहुमआउ०-वादरवाउ०-वादरतेउ०-वादरतेउअपज्ञ०-सुहुम-तेउ०-सुहुमतेउ०पज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-वादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउ०-सुहुम-वाउ०पज्जतापज्जत्त-वादरवणप्पदिपत्तेयअपज्ज०-वणप्पदि-णिगोदवादरसुहुमपज्जता-पज्जत्त-कम्मइय० अणाहारिति। णवरि पच्छिमदोपदेसु सम्मत्त० जह० तिरिक्खोगं। सम्म० सम्मामि० अज० अणुक्कस्सभंगो। पंचकाय०वादरपज्ज० पंचिं०तिरि०अपज्जतमंगो।

जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिविभिक्तिवालोंका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तर काल कमशः वर्षप्रथक्तव और पल्योपमके संख्यानवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ सुनुदिश आदिमें अधिकसे अधिक वर्षपृथक्त काल तक कृतकृत्यवेदक सम्यग्दिष्ट जीव उत्पन्न नहीं होता है और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं होती है अतः इनमें सम्यक्त और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण कहा । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें अधिकसे अधिक पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण काल तक कृतकृत्यवेदक सम्यग्दिष्ट जीव नहीं उत्पन्न होता है और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं होती है इसलिये इनमें उक्त प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्थकं संख्यातवें भागप्रमाण कहा । शेष कथन सुगम है ।

§ ६८१. एकेन्द्रियोमें मिध्यात्व, सालह कपाय और नौ नोकपायोकी जवन्य और अजधन्य स्थितिविभक्तिवालोंका त्रान्तर काल नही है। तथा सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी अपेत्त पचेन्द्रिय निर्यंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूर्म पृथिवीकायिक, सूर्म पृथिवीकायिक पर्याप्त, सूर्म पृथिवी-कायिक अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूदम जलकायिक, सूचम जलकायिक पर्याप्त, सूचम जलकायिक अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सुद्म अग्निकायिक, सूद्म अग्निकायिक पर्याप्त, सूद्म अग्निकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूदम वायुकायिक, सूदम वायुकायिक पर्याप्त, सूच्म वायुकायिक अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, निगोद, वादर वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, बादर बनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूदम बनस्पतिकायिक, सूदम बनस्पति-कायिक पर्याप्त, सूदम बनस्पतिकायिक श्रपर्याप्त, बादर निगाद, बादर निगोद पर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, सूच्म निगोद, सूच्म निगोद पर्याप्त, सूच्म निगाद अपर्याप्त, कार्मणकाययांगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु अन्तिम दो पदोंमें इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्तवकी जबन्य स्थितिविभक्तित्रालोंका अन्तर काल सामान्य तिर्वचोंक समान है और सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिथ्यात्वकी अजवन्य स्थितिविभक्तिवालोंका भंग श्रनुत्कृष्टकं समान है। पांचों स्थावरकाय बादर पर्याप्त जीवोंमें पंचेन्द्रिय तियँच अपर्याप्तकोंक समान भंग है।

 ९ ७००, श्रोरालियमिस्स० तिरिक्खोघं। णविर त्रणंताणु०चउक्क० एइंदिय-भंगो। वेउव्वियमिस्स० सम्मत्त-सम्मामि० ज० देवोघं। सेस० उक्क०भंगो।

 ९७०१ त्र्राहार०-आहारिमस्स० उक्क०भंगो०। एवमकसा०-जहाक्खाद-संजदे ति । इत्थि० सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० त्र्रोयं। मिच्छत्त-सम्मत्त-

विशोषार्थ-पंचेन्द्रिय तिर्थंच अपर्याप्तकोंमं सन्यक्तव श्रोर सन्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्क्रष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है तथा अजधन्य स्थितिका अन्तरकाल नहीं है यह पहले बतला आये हैं उसी प्रकार एकेन्द्रियोंके जानना चाहिये. इसलिये एकेन्द्रियोंके उक्त दो प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके अन्तरका कथन पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान कहा । शेप कथन सुगम है । मूलमें सामान्य पृथिवी त्रादि जो श्रीर मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है, इसलिये इनके कथनका एकेन्द्रियोंके समान कहा । किन्तु कार्मणकाययोग श्रीर श्रनाहारकोमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि इनमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव भी उत्पन्न होते हैं स्रतः यहाँ सम्यक्त्वकी स्रोघ जघन्य स्थिति बन जाती है। तदनसार यहाँ इसका जवन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तवप्रमाण होता है जो सामान्य तिर्येचोंके इस प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके अन्तरके समान है। अतः यहाँ सम्यक्त्वको जघन्य स्थितिके अन्तरको सामान्य तिर्थेचोके समान कहा । तथा इन दोनों मार्ग-ए। त्रोंमें सम्यक्त्व त्रोर सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महर्त पाया जाता है और यही यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट या अजधन्य स्थितिका अन्तरकाल है. इसलिये यहाँ इन दो प्रकृतियोंकी श्रजधन्य स्थितिके श्रन्तरको त्रानुत्कृष्ट स्थितिके श्रन्तरके समान कहा । पाँचों स्थावरकाय बाहर पर्याप्त जीवोमं सब प्रकृतियोंकी जघन्य और श्रजघन्य स्थितिका श्रन्तरकाल पंचेन्द्रियतिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान प्राप्त होता है, अतः इनके कथनको पंचेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्तकोंक समान कहा।

§ ७०० श्रीदारिकमिश्रकाययोगियोमें सामान्य तियँचोंके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी श्रपंत्ता एकेन्द्रियोके समान मंग है। वैक्रियिक मिश्रकाययोगियोमें सम्यक्त्व श्रार सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका श्रन्तर सामान्य देवोक समान है। तथा शेप प्रकृतियो का श्रन्तरकाल उत्कृष्टके समान है।

विश्राषार्थ — श्रोदारिकमिश्रकाययोगमे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना नहीं होती है इसिलये इनके उक्त प्रकृतियोंकी श्रोच जघन्य स्थिति न प्राप्त होकर आदेश जघन्य स्थिति प्राप्त होती है जिसका यहाँ अन्तर नहीं पाया जाता। यहीं बात एकेन्द्रियोंके हैं। अतः श्रोदारिक-मिश्रकाययोगमे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककं भंगका एकेन्द्रियोंके समान कहा। सामान्य देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चपपृथक्त्व हैं। तथा सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है जो बैकियिकमिश्रकाययोगमे भी सम्भव हे अतः वैकियिकमिश्रकाययोगमे सम्यक्तव श्रीर सम्यग्मिध्यात्वके भंगको सामान्य देवोंके समान कहा। श्रेव कथन सुगम है।

§ ७०१. त्राहारककाययोगी और त्राहारकिमश्रकाययोगियोंमे उत्कृष्टकं समान भंग है। इसी मकार त्रकषायी और यथाख्यातसंयत जीवोंकं जानना चाहिये। स्त्रीवेदवालोमें सम्यग्मिध्यात्व भौर त्रानन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग त्रोघकं समान है। मिध्यात्व, सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ बारसक०-णवणोक् • ज॰ ज॰ एगस०, उक्क० वासपुथत्तं । अज० णित्थ अंतरं । एवं णवुं सयवेदाणं । पुरिस॰ मिन्छत्त॰-सम्मत्त-सम्माभि०-अणंताणु०चडकः ओघं । बारसक०-णवणोकः ज० ज० एगस०, उक्क० वासं सादिरेयं । अज० णित्थ श्रंतरं । अवगद० मिन्छत्त०-सम्मत्त-सम्माभि०-श्रद्धकः अद्यणोकः ज० ज० एगस०, उक्क० वासपुथत्तं । अज० एवं चेव, विसेसाभावादो । सेसाणं जह० ओघं । अज० श्रु क्क०भंगो ।

। प्रवास प्रवास । प्रवास प्रवास विकाश कार्य कार्य प्रवास । प्रवास प्रवास । प्रवास

नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय ख्रीर उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त्व प्रमाण है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार नपुंसक-वेदवालोंके जानना चाहिये। पुरुषवंद्वालोंमें मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व ख्रीर अनन्ता-तुवन्धी चतुष्कि अपेचा अन्तर काल ओघके समान है। तथा बारह कपाय और नो नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय ख्रोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है। अपगतवेदवालोंमे मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, आठ कपाय ख्रोर खाठ नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय ख्रोर उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर भा इसी प्रकार जानना चाहिये, क्योंकि उनसे इसमें कोई विशेषता नहीं है। तथा दो प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर स्थान्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर स्थान्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर ख्रोषक समान है ख्रोर अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका मंग अनुत्कृष्टके समान है।

विशेषार्थ—दर्शनमाहनीयकी लपणा श्रीर चारित्रमोहनीयकी चपणामें खिवंद श्रीर नपुंसकवंदके उदयका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर वर्षपुथक्त्व वनलाया है, श्रतः खिवंदी श्रीर नपुंसकवंदी जीवोंके मिण्यात्व, सम्यक्त्य, वारह कपाय श्रीर नो नोकपायांकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपुथक्त्व प्रमाण कहा। पुरुपंवदमं चरकश्रेणीका जघन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक एक वर्ष है, इसलिये इसमें वारह कपाय श्रीर नो नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक एक वर्ष कहा। श्रवगतवंदमे मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यित्रध्यात्व श्रीर श्राठ कपायोंकी जघन्य श्रीर श्रावन्य स्थिति उपश्रमश्रेणीकी श्रपंचा पाई जाती है। तथा जो जीव खावंद श्रीर नपुसकवंदके उदयके साथ चपकश्रेणीयर चढ़ते है उनके श्राठ नोकपायोंकी जघन्य श्रार अजयन्य स्थिति पाई जाती है। श्राठ नोकपायोंकी श्रावचन्य स्थिति श्रागतवंदी उपश्रमश्रेणीयांको जीवोंके भी सम्भव है पर इनका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वपपृथक्त्व है, श्रतः श्रपगतवंदमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और श्रज्वच्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वपपृथक्त्व है, श्रतः अपगतवंदमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और श्रज्वच्य स्थितिका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वपपृथक्त्व कहा। श्रेष कथन सुगम है।

§ ७०२ क्राधकवायवालों में अन्तर त्रांघके समान है। किन्तु इतनी विशेषना हं कि नौ कषाय त्रोर छः नांकपायोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है। तथा धजधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार मान और मायाकपायवाले जीवोंके जानना चाहिए। लांभकषायवाले जीवोंके भी इसी प्रकार

६ ७०३, मदि-सुदअण्णा० तिरिक्खोधं । णवरि सम्मत्त-अर्थातागु० एइंदिय-भंगो । एवं मिच्छादि०-असण्णि ति । विहंग० सम्मामिच्छत्तमोधं । संसपयडीण-सुक्क०भंगो । णवरि सम्म० सम्मामि०भंगो ।

६ ७०४. आभिणि०-सुद० ओघं।णविर सम्मामि० सम्मत्तभंगो। एवं मंजद०-सामाइय-छेदो०-सम्मादिहि त्ति । त्रोहिणाणि०-त्रोहिदंसणी० एवं चेव । णविर ज० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । एवं मरापज्ज० ।

जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनका ऋषेता अन्तर आघके समान है।

विशेषार्थ — यद्यपि कोध कपायमें सब प्रकृतियोंका कथन स्रोपक समान कहा है पर स्रोपमें स्रवत्याख्यानावरण चतुष्क, प्रत्याख्यानावरण चतुष्क, लाभसंज्यलन और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना वतलाया है जो काधमे किसी भी हालतमें सम्भव नहीं है, क्योंकि चपकश्रेणीमें कोधका उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष पाया जाता है अतः यहां उक्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष कहा। मान, माया और लाभमे भी यह व्यवस्था बन जाती है। किन्तु चपकश्रेणीमें लोभका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है अतः लाभमे लोभसंज्वलनका अन्तर आंघके समान ही जानना चाहिय। शेप कथन सुगम है।

§ ७०3 मत्यज्ञानी श्रोर श्रुताज्ञानियोमं सामान्य तिर्यंचोके समान अन्तर है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेचा भंग एकेन्द्रियोके समान हैं इसी प्रकार मिण्यादृष्टि श्रीर असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। विभंगज्ञानियामे सम्याग्मध्यात्वकी अपेचा अन्तर आंघके समान है। शेष प्रकृतियों की अपेचा उत्कृष्टके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिण्यात्वकं समान है।

विशेषार्थ—मत्यज्ञानी और श्रुनाज्ञानी जीवोमे न तो कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होता है और न अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना हो होती है अतः इनमे इन प्रकृतियोंके भगको एकेन्द्रियोंके समान कहा । विभंगज्ञानमे सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उद्वेतना होती है अतः इसमे सम्यग्मिण्यात्वका भंग आंघके समान और सम्यक्त्वका भग सम्यग्मिण्यात्वके समान बन जाता है । शेप कथन सुगम है ।

§ ७०४. त्र्यामिनिवाधिकहानी त्रीर श्रुतह्यानियोंमें आंघक समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिण्यात्वका भंग सम्यक्त्यके समान है। इसी प्रकार संयत, सामायिक-सयत, खेदापस्थापनासंयत और सम्यग्दृष्टि जीवोंक जानना चाहिए। अवधिज्ञानी त्रीर अवधिद्दर्शनी जीवोक भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें जयन्य स्थितिविभक्ति-वालोका जयन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तव है। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानियोके जानना चाहियं।

विशेषार्थ — आभिनिवोधिकज्ञानी और श्रुतज्ञानी जीवोके सम्यग्मिण्यात्वकी उद्वेलना नहीं होती, श्रतः यहां सम्यग्मिण्यात्वका मंग सम्यक्त्वके समान कहा। मूलमें संयत श्रादि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें उक्तप्रमाण व्यवस्था बन जाती है इसलिये उनके कथनको श्राभिनिवोधिक-ज्ञानी आदिके समान कहा। अविधिज्ञानी और श्रवधिदर्शनी जीवोमें यह व्यवस्था बन तो जाती § ७०५ परिहार० मिच्छत्त०-सम्मत्त०-सम्मामि० ज० ज० एगस०, उनक० वासपुथत्तं । अज० णित्थ अंतरं । अणंताणु०चउक्क० ओषं । संसपयिडि० उनक०-भंगो । स्रुहुम० तेबीसपयडी० ज० अज० ज० एगसमओ, उनक० वासपुथत्तं । लोभसंजल० अवगद०भंगो । संजदासंजद० मिच्छत्त-सम्मत्त-अणंताणु०चउनक० अोषं । सम्मामि० सम्मत्तभंगो । सेसपयिडि० उनक०भंगो । असंजद० तिरिक्खोधं । णविरि मिच्छत्त० सम्मत्त० औधभंगो ।

है पर चपक श्रेणीमें इनका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्य है अतः ओपमें जिनकी जघन्य स्थितिका चपकश्रेणीमें वर्षपृथक्त्वसे कम अन्तर सम्भव है उनकी जघन्य स्थितिका यहां जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्यप्रमाण जानना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानमे भी इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

§ ५०५ परिहारिविशुद्धिसंयतोंमें मिण्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति-विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त्व है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेचा अन्तर आंघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान हैं। सूद्रमसापरायिकसंयतोंमें तेईस प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त्व है। तथा लोभसंज्वलनका भंग अवगतवेदवालोंके समान है। संयतासंयतोंम मिण्यात्व, सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी स्थितिविभक्तिवालोंका अन्तर आंघके समान है। सम्यग्मिण्यात्वका भंग सम्यक्त्वके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है। असंयतोंमे सामान्य तिर्यचों के समान भंग जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मिण्यात्व और सम्यक्त्वका भंग आंघके समान है।

विशोषार्थ—परिहारविशुद्धिसंयममें चायिकसम्यग्दर्शनकी प्राप्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षापृथक्त्व है, अतः यहां मिध्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षापृथक्त्व कहा। सूचमांपरायमें मिध्यात्व आदि तेईस प्रकृतियोंकी सम्भावना उपश्मिश्रेणीकी अपेचा है और उपश्मिश्रेणीका जघन्य अन्तर एक समय तथा उत्कृष्ट अन्तर वर्षापृथक्त्व है, अतः यहां उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजयन्य स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षापृथक्त्व कहा। संयतासंयतोंके सम्यग्मिध्यात्वकी उद्वेलना नहीं होती, अतः यहां सम्यग्मिध्यात्वका भंग सम्यक्त्वकं समान कहा। असंयत्वके दर्शनमाहनीयकी चपणा होती है, अतः यहां मिध्यात्व और सम्यक्त्वका भंग आंघके समान कहा।

§ ७०६ कापोतलेश्यावालोमं सामान्य तिर्यंचोंके समान भंग जानना चाहिये। कृष्ण श्रौर नील लेश्यावालोंमें भी इसीप्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिण्यात्वके समान है। पीत श्रौर पद्मलेश्यावालोंमे सम्यग्मिण्यात्वका अन्तर श्रोघके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भंग संयतासंयतोंके समान है। श्रभव्योंम छुब्बीस प्रकृतियोंका भंग षेदय० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-त्र्यणंताणु०चउक्क० आभिणि०भंगो । सेसपयडी० उक्क०भंगो । उवसम० अणंताणु०चउक्क० ज्ञ० ज्ञ० ज० एगस०, उक्क० चउवीस-महोरत्ताणि सादिरेयाणि । सेसपयडी० उक्क०भंगो।सासाण०-सम्मामि० उक्क०भंगो।

## एवमंतराखुगमो समत्तो ।

५ ७०७ भावाणुगमो दुविहो--जहण्णश्रो उनकस्सश्रो चेदि । उनकस्सए पयदं । दुविहो णिद्दे सो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ श्रोघेण उनकस्साणुनकस्सपदाणं सन्वेसिं को भावो १ श्रोदइओ; मोहोदएण विणा तेसिमसंभवादो । ण उवसंतकसाएण वियहिचारो, तत्थ संतस्स मोहणीयस्स उदओ णित्थ चेवे त्ति णियमाभावादो । भाविम्मि भूदोवयारेण तत्थ वि ओदइयभावुवलंभादो । एवं णेदव्वं जाव श्रणाहारए त्ति ।

१ ७०८ जहण्णए पयदं । दुविहो णिहेसो-ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण सन्वपयिक जिल्ला अजिल को भावो १ ओदइओ । कुदो १ सरीरणामकम्मोदएण कम्म-इयवग्गणक्त्वधार्णा कम्मभावेण परिणामुवलंभादो । एसो अत्थो एत्थ पहाणो त्ति

भौदारिकमिश्रकाययागियोकं समान है। चायिकसम्यग्दृष्टियोंमे इक्कीस प्रकृतियोका अन्तर आघके समान है। वंदकसम्यग्दृष्टियोंमे मिथ्यात्व, सम्यक्तव, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका मंग आभिनिवाधिकज्ञानियोके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका मंग उत्कृष्टके समान है। उपशम-सम्यग्दृष्टियोंमे अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चोवीस दिन रात है। तथा शेष प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है। सासादन और सग्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोमें उत्कृष्टके समान भंग है।

विश्रोपार्थ — कृष्ण और नीललेश्यामे कृतकृत्यवेदक सम्यग्द्दष्ट जीव नहीं उत्पन्न होता है अतः इनमें सम्यक्त्वके भगको सम्यग्मिथ्यात्वके समान कहा । पीत और पद्य लेश्यामें सम्यग्मिध्यात्वकी उद्वेलना होती हैं अतः इनमें सम्यग्मिध्यात्वका भंग आंघके समान कहा । शेष कथन सुगम है ।

इस प्रकार अन्तरानुगम ममाप्त हुआ।

§ ७०७ भावानुगम दो प्रकार है — जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेंसे पहले उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दा प्रकारका है — ओघनिर्देश और आदिशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेचा सभी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट पदोंका कौनसा भाव हं १ औद्मीयक भाव है । क्योंकि मोहनीय कर्मके उदयके विना कोई पद नहीं होता है इमलिये सब पदोंमे औद्मीयक भाव है । यदि कहा जाय कि ऐसा मानने पर उपशान्तकपायक साथ व्यभिचार प्राप्त होता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि वहा पर विद्यमान मोहनीयका उदय नहीं ही होता है ऐसा नियम नहीं है क्योंकि भाविकार्यमें भूत कार्यका उपचार कर देनसे वहां भी औद्मीयक भाव पाया जाता है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

हु ७०८. अब जघन्य भावानुगमका प्रकरण है। उसकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—ओपनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेसे श्रोधकी अपेद्या सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कौनसा भाव है ? और्पयक भाव है। और्यिक, भाव क्यों है ? क्योंकि शरीर नामकर्मके उदयसे कार्मण वर्गणास्कन्धोंका कर्मरूपसे परिण्यन पाया जाता है।

घेत्तव्वो ण पुन्त्रिल्लत्थो, उवयारमवलंबिय अवद्विदत्तादो । एवं णेद्व्वं जाव अणाहारए ति ।

### एवं भावाणुगमो समत्तो ।

#### # सिएएयासो ।

 ७०९ उच्चिद् ति एत्थ पदन्भाहारो कायव्वो, अण्णहा स्रुत्तहावगमाणुव-वत्तीदो । कः सन्निकषः ? सन्निकृष्यन्ते प्रकृतयो यस्मिन् स सन्निकर्षो नामाधिकारः । एदमहियारसंभाळणसुत्तः ।

# # मिच्छुत्तस्स उक्कस्सियाए हिदीए जो विहत्तिक्रो सो सम्मत्त-सम्मामिच्छुत्ताणं सिया कम्मंसिक्रो सिया अकम्मंसिक्रो ।

§ ७१०, कुदो ? जिंद अणादियमिच्छाइंडी सादियमिच्छाइंडी वा उथ्वेल्लिद-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मित्रो मिच्छत्तस्स उक्किस्सियं दिदिं वंधदि तो सम्मत्त सम्मामिच्छत्ताणमकम्मंसिओ होदि । जिंद पुण सादियमिच्छाइंडी अणुव्वेल्लिदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मो उक्किस्सियं दिदिं वंधदि तो संतकम्मंसिश्चो ति दहव्वो । संपिंडि असंतकम्मियम्मि णित्थि मण्णिकासो; भावस्स अभावेण सह संबंधविरोहादो । यह अर्थ यहा पर प्रधान है ऐसा बहुण करना चाहियं, पहलेका अर्थ नहीं, क्योंकि वह उपचारका अप्रथ लेकर अवस्थित हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

इस प्रकार भावानुगम समाप्त हुन्ना ।

# अ अब सिक्षक को कहते हैं।

\$ ७०६ 'सण्णियासां' इद सूत्रमं 'उच्चिद्' इस क्रियापदका ऋध्याहार करना चाहिये, ऋन्यथा सूत्रके ऋर्थका ज्ञान नहीं होसकता है।

शंका-सन्निकप किसे कहते हैं ?

स्माधान-जिसमें प्रकृतियाँ सन्तिकृष्ट की जाती है अर्थात् जिसमे प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थिति आदिकी अपेना संयोग बतलाया जाता है वह सन्तिकप नामका अधिकार ह।

यह सूत्र अधिकारके सम्हालनेके लिये आया है।

की मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाला है वह कदाचित् सम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वके सत्कर्मवाला होता है और कदाचित् सम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वके सत्कर्मवाला होता है।

§ ७१०. शंका-ऐसा क्यों है ?

समाधान—यदि अनादि मिथ्यादृष्टि जीव या जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वसत्कर्म की उद्वलना कर दी है ऐसा सादि मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको वांधता है तो वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मवाला नहीं होता है। और जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्व सत्कर्मकी उद्वलना नहीं की है ऐसा सादि मिथ्यादृष्टि जीव यदि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है ता वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मवाला होता है ऐसा जानना चाहिये। जिस जीवके कर्मकी सत्ता नहीं होती उसके सन्निकर्ष नहीं होता है, क्योंकि भावका अभावके

तत्थ संतक्रिमयस्स सण्णियासपरूवणद्वमुत्तरसुत्तं भणदि--

### 🏶 जदि कम्मंसित्रो णियमा ऋणुकस्सा ।

§ ७११. कुदो ? मिच्छत्तस्स उक्कस्सिहिदीए बद्धाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिहिदीए वेदयसम्मादिहिपढमसमए चेव समुष्पज्ञमाणाए उप्पत्तिविरोहादो । ण
च पढमसमए वेदगसम्माइहिपिडवद्धं कज्जः मिच्छत्तु क्कस्सिहिदिसंतकम्मियमिच्छाइिह्मिडिबद्धं होदिः; कज्ज-कारणणियमाभावष्पसंगादो । तदो णियमा अणुक्कस्सा ति
सहहेयव्वं ।

🕸 उक्कस्सादो ऋणुक्कस्सा श्रंतोमुहुत्तृ एमादिं कादृण जाव एगा दिदि त्ति।

\$ ७१२ , एदस्स सुत्तस्स अत्थो बुचरे । तं जहा—मिच्छत्तुकस्सिटिदिबंधकाले सम्मत्तिद्वि सगुक्तस्सं पेक्खिद्ण समयूणा दुसमयूणा तिसमयूणा वा ण होदिः सम्मत्तु-कस्सिटिदियारयवेदगसम्मादिदिविदियसमए तिदयसमए वा मिच्छत्तकम्मस्स बंधा-भावादो । ण च मिच्छत्तपचणण वज्भमाणाणं पयडीणं तेण विणा बंधो अत्थिः अतक-ज्ञत्तपसंगादो । तम्हा मिच्छत्तुक्कस्सिटिदिबंधकाले सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तिदिरीए सगसगुक्कस्सिटिदिं पेक्खिद्ण अंतामुहुत्तूणियाए होदच्चं । केत्तिएणूणा ? समयूण-

साथ सम्बन्धका विरोध है, अतः सत्कर्मवालोंके सन्निकर्षका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं

अयदि वह जीव सत्कर्मवाला होता है तो नियमसे उसके इन दोनोंकी अनुत्कृष्ट स्थिति होती है।

§ ७११ क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति वेदकसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें हो होती है, श्रतः मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धके समय उमकी उत्पत्ति माननेमें विरोध श्राता है। और वेदकसम्यग्दृष्टिके पहले समयसे सम्बन्ध रखनेवाला कार्य मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाले मिश्याद्विके साथ सम्बद्ध नहीं होसकता, श्रन्यथा कार्यकारण नियमके अभावका प्रसंग प्राप्त होता है। इसलियं मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मवालेके सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है ऐसा श्रद्धान करना चाहिये।

\* वह अनुत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर दो समय-वाली एक स्थिति पर्यन्त होती है।

§ ७१२. अब इस सूत्रका अथ कहते हैं। वह इस प्रकार है—मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके समय सम्यक्त्वकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक समय कम, दो समय कम या तीन समय कम नहीं होती हैं, क्योंकि सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके धारक वेदकसम्यग्दृष्टिके दूसरे या तीसरे समयमें मिण्यात्व कमेका बन्ध नहीं होता है। यदि कहा जाय कि मिण्यात्वके निमित्तसे बंधनेवाली प्रकृतियोंका मिण्यात्वके बिना भी बन्ध होता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर वह मिण्यात्वका कार्य नहीं होगा। अतः मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बन्धके समय सम्यक्त और सम्यग्मिण्यात्वकी स्थिति अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए अन्तर्मुहूर्त कम अवश्य होनी चाहिये।

वेदगसम्मत्त जहण्णकालेण मिच्छत्तं गंत्णुक्कस्ससंकिलेसावूरणजहण्णकालेण च । एक्केण सम्मत्तांतकम्मिएण मिच्छाइद्विणा उक्कस्ससंकिलेसमावूरिय बद्धमिच्छत्तु - क्कस्सिद्धिणा सन्वजहण्णपद्धिमग्गद्धमिच्छय वेदगसम्मत्तं घेत्त्ण कयसम्मतुक्कस्स-द्विदिणा अंतोम्रहुत्त्णसत्तिरसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसम्मतुक्कस्सद्विदिं कमेण अधिदि-गलणाए जहण्णवेदगसम्मत्तद्धमेत्तेण ऊणियं करिय मिच्छत्तं गंत्ण सन्वजहण्ण-कालेणावूरिदुक्कस्ससंकिलेसेण मिच्छत्त् क्रस्सद्विदीए पबद्धाए एत्तियमेत्तेणेव कालेग्णुणत्तु वन्तंभादो ।

§ ७१३, पुणो मिच्छत्तस्स समयूगुकस्सिहिदिं वंधिय अवहिद्वविहरगकालेण अधिहिदिगलणाए ऊणं करिय वेदगसम्मत्तं घेत् ण सम्मत्तु कस्सिहिदिं समयूणमुष्पाइय अविद्वसम्मत्तिमिच्छत्तुओं कमेण गिमय मिच्छत्तु क्कस्सिहिदीए पबद्धाए सम्मत्तिहिदी सग्नकस्सिहिदिं पेक्खिद्ण समयाहियअंतोम्रहुत्तेण ऊणा होदि । एवं दुसमयूणिमच्छ-त्तु क्कस्सिहिदिं वंधिय अवहिद्वविहरगसम्मत्तिमच्छत्तुओं जहण्णियाओं कमेण गिमय मिच्छत्तु क्कस्सिहिदीए पबद्धाए सम्मत्तिहिदीए सगुक्कस्सिहिदें पेक्खिद्ण दुसमयाहिय-

शंका-कमका प्रमाण कितदा है ?

समाधान—एक समय कम वेदक सम्यक्त्वका ज्ञान्य काल और मिध्यात्वको प्राप्त होकर उत्कृष्ट सेक्लेशको पूर्ण करनेवाला ज्ञान्य काल ये दानों काल यहां कम का प्रमाण है। जिसने उत्कृष्ट संक्लेशको करके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधा है ऐसे किसी एक सम्यक्त्व सत्कर्मवाले मिध्यादिष्ट जीवने मिध्यात्वसे च्युत होनेमें लगनेवाले सबसे ज्ञान्य काल तक मिध्यात्वसे रह कर वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त किया और वहां सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिको किया। अनन्तर वह जीव सम्यक्त्वकी अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोइकाइी सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थितको कमसे अधःस्थितिगलनाके द्वारा वेदक सम्यक्त्वके ज्ञान्य काल प्रमाण कम करके मिध्यात्वमे गया और वहां उसने सवमे ज्ञान्य कालके द्वारा उत्कृष्ट संक्लेशको पूरा करके मिध्यात्वको उत्कृष्ट स्थितिको बांधा इस प्रकार वेदक सम्यक्त्वके पहले समयसे लेकर यहां तकका काल ही यहां कम का प्रमाण जानना चाहिये। अर्थात् इतने कालको सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे वटा देने पर जो स्थिति शेष रहे अधिकसे अधिक उतनी अनुत्कृष्ट स्थिति मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय संभव है, इससे और अधिक नहीं।

ई ७१३ पुनः मिध्यात्वकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर और अवस्थित प्रतिभग्न कालको अधःस्थितिगलनाके द्वारा कम करके अनन्तर वेदक सम्यक्त्वको प्रह्म करके और वेदक सम्यक्त्वके पहले समयमें सम्यक्त्वकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको उत्पन्न करके तथा सम्यक्त्व और मिध्यात्वके अवस्थित कालोंको कमसे ब्यतीत करके जो मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है उसके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्त्वकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है उसके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर तदनन्तर प्रतिभग्नकाल, सम्यक्त्यकाल और मिध्यात्वकाल इन तीनों अवस्थित ज्ञयन्य कालोंको कमसे बिता कर जो मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है उसके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको समय सम्यक्त्वकी स्थित अपनी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है उसके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको समय सम्यक्त्वकी स्थित अपनी उत्कृष्ट

त्रंतोम्रहुत्तूणा होदि । एवं ति-चदुसमयादि जावावित्तयमुहुत्त-दिवस-पक्ख-मास-उडु-अयण-संवच्छरादिमूणं करिय णेदव्वं ।

5 ७१४ मंपिह आवाधाकंडएग्र्णसम्मत्तिहिदीए इच्छिज्जमाणाए सव्वजहण्ण-सम्मत्तद्वाए सव्वजहण्णिमच्छत्तद्वाए च ऊणेण आवाहाकंडएण ऊणियं मिच्छत्तिहिदं बंधाविय पुणो पिंडहम्गो होद्ण सम्मत्तं पिंडिबिज्जिय मिच्छत्तु क्कस्सिहिदीए पबद्धाए सम्मत्तु क्कस्सिहिदिमंतोमहुत्तू णसत्तिरमेत्तं पेक्खिद्ण वद्टमाणसम्मत्तिहिदी एगाबाहा-कंडएग्रुणा होदि ।

५ ७१५ संपित त्रावाहाकंडयस्स हेटा इच्छिज्जमाणे दोहि अविद्विञ्जतोम्रहुचेहि ऊणाबाहाकंडएण समयाहिएण ऊणियं मिच्छत्त क्कस्सिटिदिं वंधिय अविद्विज्ञहण्ण- द्वात्रो तिण्णि वि अधिद्विदिगलणाए कमेण गालिय मिच्छत्त क्कस्सिटिदीए पवद्धाए सम्मत्तिदिवी सगुक्षस्सिटिदी पेक्खिद्ण समयाहियत्राबाहाकंडएण ऊणा होदि । एव- मेदमत्थपदं चित्रोणावहारिय त्रोदारेदव्यं जाव णिव्वियप्पा अंतोकोडाकोडिमेत्ता सम्मत्तिदिवी जादा ति । णविर जित्तय-जित्यभावाहाकंडएहि ऊणं सम्मत्तिदिवी मिच्छिद तित्त्य-तित्त्यमेत्तावाहाकंडपाणि दोहि अविद्विज्षहण्णाद्धाहि परिहीणाणि

स्थितिको देखते हुए दो समय अधिक अन्तर्मुहूर्त काल प्रमाण कम होती है। इसी प्रकार तीन और चार समयसे लेकर एक आवर्ली, एक मुहूर्त, एक दिन, एक पत्त, एक महीना, एक ऋतु, एक अयन, एक वर्षे आदिको कम करके सम्यक्त्व और सम्यमिण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थिति ले आना चाहिये।

§ ७१४ अब मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक बन्धक समय सम्यक्त्वकी एक आधाधा काण्डकस कम उत्कृष्ट स्थिति इच्छित है, अतः सबसे कम सम्यक्त्वके कालको और सबसे कम मिथ्यात्वके कात्रको आवाधाकाण्डकमेसे कम करके जो शेप रहे उतने आवाधाकाण्डकमेसे कम मिथ्यात्वकी स्थितिको वंधा कर पुनः मिथ्यात्वसे निवृत्त होकर और सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अनन्तर जो मिथ्यात्वमे जा कर मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक वधके समय सम्यक्त्वको अन्तर्मुहूत कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए वर्तमान सम्यक्त्वकी स्थिति एक आवाधाकाण्डक कम होती है।

ई ७५५ अब मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक वन्धक समय एक आबाधाकाण्डकसे नीचे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति इच्छित है, अतः समयाधिक आबाधाकाण्डकमेंसे दां अवस्थित अन्तर्मुहूते प्रमाण कालको कम करने पर समयाधिक आबाधाकाण्डकका जितना काल होष रहे उतना कम मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बंधा कर तदनन्तर तीनों ही अवस्थित जधन्य कालोंको अधःस्थितिगलनाके द्वारा कमसे गला कर जो मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है उसके मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धके समय सम्यक्त्वकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक समय अधिक एक आबाधाकाण्डक काल प्रमाण कम होती है। इस प्रकार इस अर्थपदको अपने चित्तमे धारण करके सम्यक्त्वकी स्थितिको तव तक कम करते जाना चाहिये जब तक निर्विकस्प अन्तः कोड़ाकोड़ी प्रमाण सम्यक्त्वकी स्थिति प्राप्त हो। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धके समय जहां जितने जितने आबाधाकाण्डकोसे कम सन्यक्त्वकी स्थिति इच्छित हो वहा दो अवस्थित जघन्य कालोको उतने उतने आबाधाकाण्डकोमेंसे कम करने पर जो काल

उक्कस्सिटिदिम्मि ऊणाणि करिय बंधिदूण श्रोदारेदव्वं। संपिह मिच्छत्तमिस्सिदूण हेटा ओदारेदुं ण सक्कदे सञ्जविसुद्धेण मिच्छाइटिणा घादिदसन्त्रजहण्णिटिदिसंतं तिहि श्रविटिदजहण्णद्धाहि युणं सम्मत्तिदि पत्ता ति ।

५०१६ संपित सम्मत्तसंतकिम्यिमिच्छ।इिनीवे घेत् णुव्वेल्लणाए मिच्छत् वकस्सिटिरीए सह सम्मत्तहेदिपिदिरीणं सिष्णयासो बचरे । तं जहा—तत्थ समयाहियउच्वेल्लणकंडयमेत्तजीवे अस्सिद्ण सिष्णयासपह्नवणं कस्सामो । एत्थ ताव समयाहियकंडयमेत्तजीवाणं सम्मत्तिदिरीए दीहत्तं बचरे—पढमजीवो मिच्छत्ताधुविदिरीदो ममुष्णणसम्मत्तिधुविदिरीए उवित् सम्यूणुकीरणद्धाहियसयलेगुच्वेल्लणकंडयधारस्रो विदियजीवो समयूणुकीरद्धाहियसम्यूणुच्वेल्लणकंडएण स्रहियसम्मत्तिधुविदिधारस्रो तदियजीवो सम्यूणुकीरणद्धाहियद्वसम्द्रणुच्वेल्लणकंडएणब्धिस्यसम्मत्तिधुविदिधारस्रो पंचमजीवो सम्यूणुकीरणद्धाहियतसम्यूणुच्वेल्लणकंडयब्मिहियसम्मत्तिधुविदिधारस्रो पंचमजीवो सम्यूणुकीरणद्धाहियतसम्यूणुच्वेल्लणकंडयब्मिहियसम्मत्तिधुविदिधारस्रो एवं णेदच्वं जाव समयाहियउच्वेल्लणकंडयमत्त्रजीवा ति । तत्थ एदेसु जीवेसु जो पढमजीवो तेणुच्वेल्लणएगकंडए

शेष रहे उतना कम मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध कराके सम्यक्त्वकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये। इसके छागे मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको छपेता सम्यक्त्वकी स्थितिको अन्तःकोङ्गाकोड़ी सागरसे ख्रोर नीचे उतारना शक्य नहीं है क्योंकि घात करने पर जिसके ( संज्ञी पेचेन्द्रिय पर्याप्तके यांग्य ) मिश्यात्वकी सबसे जघन्य स्थितिका सत्त्व है ऐसे सर्वविद्युद्ध मिश्यादृष्टिने मिश्यात्वके जघन्य स्थितिसत्त्वकी ख्रोपंत्ता तीन अवस्थित जघन्य कालोंसे न्यून सम्यक्त्वकी स्थिति प्राप्त कर ली है।

§ ७१६ अब सम्यक्त्व सत्कर्मवाले मिण्यादृष्टि जीवका आश्रय लेकर उद्वेलनामें मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक साथ सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे नांचेकी स्थितियोंका सन्तिकर्प कहते हैं। जो इस प्रकार है—इस कथनमें पहले एक समय अधिक उद्वेलनाकाण्डकप्रमाण जीवोंका आश्रय लेकर सिन्नकर्पका प्रकृतण करेंगे। अतः यहां पर पहले एक समय अधिक आवाधाकाण्डकप्रमाण जीवोंके सम्यक्त्वकी स्थितिका दोर्घत्व कहते हैं—मिण्यात्वकी ध्रुवस्थितिसे जो सम्यक्त्वका ध्रुवस्थित उत्पन्न होती है उसके उत्पर एक समय कम उत्कीरणाकालसे अधिक पूरे उद्वेलनाकाण्डकका धारक प्रथम जाव है। एक समय कम उत्कीरणाकालको एक समय कम उद्वेलनाकाण्डकमें मिला देने पर जो प्रमाण हो उतने प्रमाणसे अधिक सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिका धारक दूसरा जीव है। एक समय कम उत्कीरणाकालको दो समय कम उद्वेलनाकाण्डकमें मिला देनेपर जो प्रमाण हो उतने प्रमाणसे अधिक सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिका धारक दोसरा जीव है। एक समय कम उद्वेलनाकाण्डकमें मिला देनेपर जो प्रमाण हो उतने प्रमाणसे अधिक सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिका धारक वीथा जीव है। एक समय कम उद्वेलनाकाण्डकमें मिला देनेपर जो प्रमाण हो उतने प्रमाण हो वारक चारक समय कम उद्वेलनाकाण्डकमें मिला देने पर जो प्रमाण हो उतने प्रमाणसे अधिक सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिका धारक चौथा जीव है। एक समय कम उत्कीरणा कालको चार समय कम उद्वेलनाकाण्डकमें मिला देने पर जो प्रमाण हो उतने प्रमाणसे अधिक सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिका धारक पांचवां जीव है। इस प्रकार समयाधिक उद्वेलनाकाण्डकप्रमाण जीव प्राप्त होने तक इसीप्रकार कथन करते जाना चाहिये। अब इन जीवोंमें जो पहला जीव है उसके द्वारा एक उद्वेलनाकाण्डकके घात करने पर सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे एक समय कम सम्यक्त्वकी स्थिति

पादिदे सम्मत्तधुविद्दिदो समयुणा सम्मत्तिद्दि होदि । ताघे चेव मिच्छत्तु कस्सिद्दििए बद्धाए अवरो सिण्णयासिवयणो होदि । पुणो तदणंतरिविद्यजीवेण उन्वेन्लणकंडए पादिदे सेससम्मत्तिद्दि सम्मत्तधुविद्दिदि दुसमयूणा होदि । ताघे तेण मिच्छत्तु कस्सिद्दिरिए पबद्धाए अण्णो मिण्णयासिवयणो होदि । पुणो तिद्यजीवेण उन्वेन्लणकंडए खंडिदे संससम्मत्तिद्दि सम्मत्तधुविद्दिदि तिसमयूणा । तत्य तेण मिच्छत्तु कस्सिद्दिरिए पबद्धाए अण्णो सिण्णयासिवयणो होदि । पुणो चउत्थजीवेण उन्वेन्लणकंडए खंडिदे संससम्मत्तिद्दि सम्मत्तधुविद्दिदो चदुसमयूणा । ताघे तेण मिच्छत्तु कस्सिद्दिरीए पबद्धाए अण्णो सिण्णयासिवयणो होदि । पंचमजीवेण उन्वेन्लणकंडए खंडिदे संससम्मत्तिद्दिरी पंचिह समएहि उणा । एदेण कमेण चिरमजीवेणुव्वेन्लकंडए खंडिदे तत्थ सेससम्मत्तिदिरी पंचिह समएहि उणा । एदेण कमेण चरिमजीवेणुव्वेन्लकंडए खंडिदे तत्थ सेससम्मत्तिदिरी सम्मत्तिधुविदेदीदो सम्मत्तिधुविदेदीदो समयाहियउन्वेन्लणकंडए ख्रांडिदे तत्थ सेससम्मत्तिदिरी एबद्धाए अण्णो सिण्णयासिवयणो लब्भिदि । एवं पढमवारपक्वणा गदा ।

६ ७१७ . एदं परुवणमवहारिय विदिय-तिदय-चडत्थादि जाव पलिदोवमस्स असंखे भागमेत्तवारेसु उन्वेल्लणकंडए पादिय मिच्छत्तु कस्सिटिदिं बंधावि यसण्णि-यासिवयपा उप्पाएदन्वा । तत्थ चरिसुन्वेल्लणकंडयचरिमफालीए पादिदाए सम्मत्तिद्दि सेसा समयूणुद्यावलियमेत्ता होदि । ताथे मिच्छत्तु कस्सिटिदीए पबद्धाए

प्राप्त होती है । और उसी समय मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होने पर एक अन्य सिक्निकर्ष- विकल्प प्राप्त होता है । पुनः तदनन्तर दूसरे जीवके द्वारा उद्वेलनाकाण्डकके घात करने पर सम्यक्त्व की शेव स्थिति सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे दो समय कम होती है । तथा उसी समय उसके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होने पर एक अन्य सिन्तकर्णविकल्प प्राप्त होता है । पुनः तांसरे जीवके द्वारा उद्वेलनाकाण्डकके खण्डित करने पर सम्यक्त्वकी शेव स्थिति सम्यक्त्वकी ध्रुव स्थितिसे तांन समय कम होती है । तथा उसी समय उसके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होने पर एक अन्य सिन्तकर्ण विकल्प प्राप्त होता है । पुनः चोथे जीवके द्वारा उद्वेलनाकाण्डकके खण्डित करने पर सम्यक्त्वकी शेव स्थिति सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे चार समय कम हाती है । तथा उसी समय उसके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होने पर एक अन्य सिन्तकर्ण विकल्प प्राप्त होता है । पुनः पांचवें जीवके द्वारा उद्वेलनाकाण्डकके खण्डित करने पर सम्यक्त्वकी शेप स्थिति सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे पांच समय कम होती है । इसी कमसे अन्तिम जीवके द्वारा उद्वेलना काण्डकके खण्डित करने पर सम्यक्त्वकी शेप स्थिति सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे समयाधिक उद्वेलनाकाण्डकके खण्डित करने पर वहां सम्यक्त्वकी शेप स्थिति सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे समयाधिक उद्वेलनाकाण्डकक्रमाण कम होती है । तथा उसी समय उसके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होने पर एक अन्य सिन्तकर्णविकल्प प्राप्त होता है । इस प्रकार प्रथमवार प्रकाण। समाप्त हुई ।

ई ७१७ इस प्रकार इस प्ररूपणाको समम कर आगे दूसरी, तीसरी और चौथी बारसे लेकर पत्योपमके असंख्यातवें भागबार उद्वेलनाकाण्डकोंका घात कराके और मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके सिन्नकर्षविकल्य उत्पन्न कर लेने चाहिये। उसमें भी अन्तिम उद्वेलना-काण्डककी अन्तिम फालिके घात करनेपर सम्यक्त्वकी शेव स्थिति एक समय कम उदयावलिप्रमाण प्राप्त होती है। तथा उसी समय मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध होने पर एक अन्य सिन्कर्ष- अण्णो सिण्णियासिवयणो होदि । दुसमयूणुद्याविष्ठियमेत्तसम्मत्तिदिधारएण मिच्छतु-क्कस्सिटिदीए पबद्धाए अण्णो सिण्णियासिवयणो होदि । एवं गंत्ण दुसमयकालेग-सम्मत्तिषिसेयिटिदिधारएण मिच्छत्त क्कस्सिटिदीए पबद्धाए चरिमो सिण्णियासिवयणो होदि । एदस्स स्रत्तस्स एसा संदिटी ।

000	•२०० <b>•२</b> ०००२०००२०००२०००
000	००२०००२०००२०००२०००२०००
000	०००२०००२०००२०००२०००२०००
000	००००२०००२०००२०००२०००
000	000000000000000000000000000000000000000
1	<u> </u>

### 🕸 एवरि चरिमुव्वेल्लएकंडयचरिमफालीए ऊएा।

९०१८ जहा संसुव्वेल्लणकंडएसु णाणाजीवे अस्सिद्ण णिरंतरहाणाणि लद्धाणि तथा चिरमुव्वेल्लणकंडयम्मि णिरतरहाणाणि किण्ण लब्भंति १ ण, चिरम-जहण्णुव्वंल्लणकंडयादो किम्हि वि जीवे समयूणादिकमेण्णचिरमुव्वेल्लणकंडयायो किम्हि वि जीवे समयूणादिकमेण्णचिरमुव्वेल्लणकंडयायो वर्णमादो । उव्वेल्लणकण्डयफालीओ सव्वजीवेसु सिरसाओ किण्ण होति १ ण, तासिं सिरसचे संते धुर्वाहदीए हेटा सांतरहाणुष्पचिष्पसंगादो । ण च एवं; चिरमकंडयचिरमफालिं मोचूण अण्णत्थ णिरंतरकमेण सिण्णियासपरूवयसुचेणेदेण सह विरोहादो । एवं पढमपरूवणा समता ।

विकल्प प्राप्त होता है। तथा सम्यक्त्वकी दो समय कम उदयाविलप्रमाण स्थितिको धारण करने-वाले जीवके द्वारा मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्ध करने पर एक अन्य सन्तिकर्षविकल्प प्राप्त होता है। इसी प्रकार आगे जाकर सम्यक्त्वके एक निषेककी दो समय कालप्रमाण स्थितिको धारण करनेवाले जीवके द्वारा भिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्ध करने पर अन्तिम सन्तिकप-विकल्प प्राप्त होता है। इस सूत्रकी यह संदृष्टि है। (संदृष्टि मूलमें देखियं।)

किन्तु इतनी विशेषता है कि ये सिन्नकर्षविकल्प अन्तिम उद्देलनाकाण्डककी अन्तिम फालिसे रहित हैं।

्र ७१⊏. <mark>प्रांका,—ि</mark>जस प्रकार शेष उद्वेलन। का∘डकोंमें नाना जीवोंकी श्रपेचा सिन्नकर्षके निरन्तर स्थान प्राप्त होते हैं उसी प्रकार श्रन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें निरन्तर स्थान क्यीं नहीं प्राप्त होते हैं १

समाधान-नहीं, क्यों कि किसी भी जीवके अन्तिम जघन्य उद्वेलनाक ।ण्डकसे एक समय कम अादि कमसे न्यन अन्य अन्तिम उद्वेलना काण्डक नहीं उपलब्ध होता है।

शंका-उद्देलना काण्डककी फालियां सब जीवींमें समान क्यों नहीं होती है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि यदि उनको समान माना जाता है तो ध्रुवस्थितिके नीचे सान्तर स्थानों की उत्पत्तिका प्रसंग प्राप्त होता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि एसा मानने पर अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिको छोड़ कर अन्य सब स्थानोमें निरन्तर क्रमसे सन्निकर्षका कथन करने-वाले इसी सुत्रके साथ विरोध आता है। इस प्रकार प्रथम प्ररूपणा समाप्त हुई।

विश्रोषार्थ-सन्निकर्प दो या दो से अधिक वस्तुत्रोंके सम्बन्धको कहते हैं। प्रकृतमें मोहनीयकी उत्तर प्रकृतियोंकी स्थितियोंक। प्रकरण है, जिनके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य श्रीर श्रजघन्य ये चार भेद हैं। तदनुसार यहाँ मोहनीयकी किस प्रकृतिकी कौन-सी स्थितिके रहते हुए उससे अन्य किस प्रकृतिके कितने स्थितिविकल्प सम्भव हैं इसका विचार किया गया है। उसमें भी पहले मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए सम्यक्तव और सम्यग्मिथ्यात्वके कितने स्थितिविकल्प किस प्रकार प्राप्त होते हैं यह बतलाया है। यदापि यह सम्भव है कि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी सत्ता न हो. क्योंकि जो अनादि मिध्या दृष्टि है उसके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध हो सकता है पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्व-की सत्ता नहीं पाई जाती। इसी प्रकार जिसने सम्यक्त्वसे च्यूत होनेके बाद सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी खंढेलना कर दो है उसके भी मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके होने पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी सन्ता नहीं पाई जाती । पर यहां सिन्नकर्पका प्रकरण है इसलिये ऐसे जीवका ही प्रहण करना चाहियं जिसके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी सत्ता हो । श्रव देखना यह है कि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्त्वके कितने स्थितिविकल्प सम्भव हैं। बात यह है कि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति अपने बन्धके समय मिथ्यादृष्टिके होती है और सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति वेदक-सम्यग्दृष्टिके पहले समयमें प्राप्त होती है जो मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे अन्तर्मुहूर्त कम होती है. क्योंकि जिस मिध्यादृष्टि जीवने वेदकसम्यक्त्वके योग्य कालमें मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है वह यदि अतिलघु अन्तर्महर्त कालके द्वारा वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त हो जाय तो उसके पहले समयमें मिथ्यात्वकी अन्तर्महुत कम उत्कृष्ट स्थित सम्यक्त प्रकृतिरूपसे संक्रमित हो जाती हैं जो सम्यक्त्वप्रकृतिकी त्र्रपेन्ना उसकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। पर इस समय मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं रहती, क्योंकि मिध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थितिमें अन्तर्महर्त कम हो गया है। और हमें सर्वप्रथम मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्तवकी अधिकसे अधिक कौनसा स्थितिविकल्प सम्भव है यह लाना है, अत: पूर्वोक्त सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवको अतिलघु अन्तर्महर्त काल तक वेदकसम्यक्त्वमें राव कर मिध्यात्वमें ले जाय श्रीर वहां श्रतिलघु अन्तमुंहूर्त कालके द्वारा उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त कराके मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे। इस प्रकार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती है किन्तु अनुत्कृष्ट स्थिति होती हैं जो अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेदा नियमसे पूर्वोक्त दो अन्तर्मुहूर्त कम है। इससे सिद्ध हुआ। कि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्तवकी नियमसे अनुत्कृष्ट स्थिति होती है। फिर भी मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक समय सम्यक्त्वकी ऋनुत्कृष्ट स्थितिका केवल यही विकल्प सम्भव नहीं हैं किन्तु इसके नीचे सम्यक्तवकी अनुत्कृष्ट स्थितिके दो समयवाली अनुत्कृष्ट स्थिति तक जितने भी विकल्प हो सकते हैं वे सब सम्भव हैं किन्तु कुछ अपवाद है जिसका उल्लेख हम यथास्थान करेंगे। इन सब स्थितिविकल्पोंको लानेके लिये आगे कही जानेवाली चार बातें ध्यानमं रखनी चाहिये । (१) मिथ्यात्वका स्थितिबन्ध (२) प्रतिभग्नकाल श्रर्थान् उत्कृष्ट संक्लेशसे निवृत्त होकर सम्यक्त्वके याम्य विशुद्धिका प्राप्त होनेका काल (३) वेदकसम्यक्त्वका काल श्रौर (४) मिथ्यात्वमे जाकर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होनेका काल। अब पहले मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम, दो समय कम आदि उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करात्रे अनन्तर नन्दर २ के प्रतिभागकालके भीतर उसे वेदकसम्यक्तवके योग्य विशुद्धि प्राप्त करावे । इसके बाद नम्बर ३ के वेदकसम्यक्त्वके कालके प्रथम समयमें मिश्यात्वकी अन्तमुंहर्त कम पूर्वबद्ध स्थितिका सम्यक्त्वमे संक्रमण करावे। पश्चात वेदक सम्यक्त्वमें अन्तर्मृहत्काल तक उस जीवका रखकर मिध्यात्वमें

लेजाय त्रीर वहां नम्बर चारके काल द्वारा उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त कराके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे और इस प्रकार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ सम्यक्त्वकी उत्तरोत्तर एक एक समय कम स्थितिका सिन्निकर्ष प्राप्त करता जाय। यहां नम्बर २,३ त्रीर ४ के काल तो श्रवस्थित रहते हैं उनमें घटा-वड़ी नहीं होती किन्तु नम्बर एकमें जो मिध्यात्वकी स्थिति कही हैं उसमें एक एक समय घटता जाता है त्र्यौर इसीलिये सन्निकर्षक समय सम्यक्त्वकी स्थितिमें भी एक एक समय घटता जाता है। इस प्रकार यह कम सम्यक्त्वकी नन्वर २, ३ और ४ के कालमे कम अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक चलता रहता है, क्योंकि संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके मिध्यात्वकी स्त्रन्तःकोडाकोडी सागरसे कम स्थितिका वन्ध नहीं होता। स्रब सम्ममें जो नम्बर २, ३ श्रौर ४ के कालको कम किया है सो सन्निकर्षके समय तक इतना काल श्रीर कम हो जाता है श्रर्थात् उस समय सम्यक्त्वकी स्थिति इन तीन कालोसे कम श्रन्तः कांड़ाकांड़ी सागरप्रमाण रहती है। मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक बन्धके समय सम्यक्त्वकी स्थितिके इतने सन्तिकपं विकल्प तो पूर्वोक्त क्रमसे प्राप्त होते हैं किन्तु आगेके सन्तिकपं विकल्प उद्वेलनाकी अपेज्ञासे प्राप्त करना चाहिये, क्योंकि संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्र जीवके मिध्यात्वका स्थितिबन्ध अन्तः-कोड़ाकोड़ी मागरसे कम न होनेके कारण संक्रमणकी अपेदा सम्यक्त्वकी पूर्वोक्त स्थितिसे कम स्थिति नहीं प्राप्त की जा सकती है। फिर भी सम्यक्त्वके त्यागेके स्थितिविकल्प नाना जीवोंकी ऋषेज्ञासे प्राप्त करना चाहिये, क्योंकि एक-एक स्थितिकाण्डकका उत्कीरणाकाल यदापि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है फिर भी स्थितिकाण्डकका बात अन्तिम फालिके पतनके समय ही होता है इससे पहलेके उन्कीरणा कालके समयोंम तो स्थितिकाण्डकके पूर निर्पकोंका पतन न होकर उनके नियमित संख्या-वाले परमाणुओंका ही पतन होना है, अनः एक जीवकी अपेत्ता उद्देलनामे सम्यक्त्वकी स्थितिके सब सन्निकर्प विकल्प नहीं प्राप्त हो। सकते हैं और इसीलिये वीरसेन स्वामीने आगेके सन्निकर्प विक**त्रोंको प्राप्त करनेके लिये नाना जीवों**की ऋषेचा कथन किया *है* । उसमे भी यहाँ सूर्वे प्रथम सम्यक्तिकी घ्रवस्थितिसे एक समय कम, दो समय कम ऋादि स्थितिविकल्प प्राप्त करना है, क्योंकि तभी तो सम्यक्त्वके उन स्थितिविकल्पोंक साथ मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके सिन्नकर्ष विकल्प प्राप्त किये जा सकेंगे, ऋतः उद्बेलनांके लिये एसी स्थितियोंका श्रहण करना चाहिये जिससे उद्वलनाक होनेपर सम्यक्त्वको घुवस्थितिसे एक समय कम, दो समय कम आदि स्थितिविकल्प प्राप्त किये जा सकें । इसी प्रकार अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन तक उत्तरोत्तर एक-एक समय कमके क्रमसे स्थितियोंको घटाते जाना चाहिये पर इतनी विशेपता है अन्तिम स्थिति-काण्डकका प्रमाण सर्वत्र एक समान है, अतः सम्यक्त्वके अन्तिम स्थितिकाण्डक प्रमाण स्थित-विकत्म मन्निकर्पमे नहीं प्राप्त हो। सकते हैं, क्योंकि नाना जीवोंकी। ऋषेक्ता भी। वह सबके एकसी ही होगी। तत्पश्चात् सम्यक्त्वकी स्थितिक एक समय कम एक आवलिप्रमाण स्थिति विकल्पोंके रोप रहने पर उनकी ऋषेद्वा भी तत्प्रमाण सन्निकर्ण विकल्प प्राप्त कर लेना चाहिये। ऋागे ऋंक-संदृष्टिसे पूर्वोक्त कथनके खुलासा करनेका प्रयत्न किया जाता है-यहाँ जितने भी श्रांक दिये जा रहे हैं वे सब काल्पनिक हैं। उनसे केवल पूर्वीक्त कथनके समफनेम सहायता मिलती हैं, श्रतः उनकी योजना की गई है।

मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति मिथ्यात्वकी घ्रुवस्थिति प्रतिभग्नकाल १०८० ३०० १६ वेदकसम्यक्त्व जघन्य काल उत्कृष्ट संक्लेश पूरण काल

१६

१६

मिथ्यात्वकी बन्ध-	प्र० भ०	संक्रमणसे प्राप्त	<sup>वे०</sup> स०	~	मि० की उ०स्थि० व० व
स्थिति	काल	सम्यक्त्वकी स्थिति	काल		स० सम्यक्त्वकी स्थि
१०२८ - १८१५ - १६१५ - १६१५ - १११ - ११ - १ -	१६	33 34 54 54 54 54 54 54 54 54 54 54 54 54 54	१६	१६	हपुर हपुर हपुर हपुर हपुर स्पष्ठ स्पुर स० की प्रुवस्थिति

इतने सिन्निकर्ष विकल्प सक्रमण्से प्राप्त हुए हैं। ये कुल सिन्निकर्ष विकल्प ७०१ हुए। श्रव श्रागे श्रंकसंदृष्टिसे उद्वेलनाकी श्रपेत्ता सिन्निकप विकल्पोंके खुलासा करनेका प्रयत्न किया जाता है— नाना जीव म. स्थितिकाण्डक १६. उत्कीरणुकाल ४

नाना जीव	सम्यक्त्वकी ध्रु वस्थिति	१ समय कम उ० का०	उत्तरीत्तर एक एक समय कम उ॰ काण्डक	सम्यक्त्त्रकी सत्त्वस्थिति	उत्कीरणाकाल ऋोर उद्वेलना काण्डककायाग	सम्यक्त्वकी उद्वेलनासे प्राप्त स्थिति
१ला	રપૂર	३	१६	२७४	२०	રપૂર
२ स	२५२	3	१पू	२७०	२०	ર્યૂ૦
३रा	રપ્રર	3	१४	२६६	२०	ર૪૬
४ था	રપૂર	३	१३	२६⊏	२०	२४≒
५ वाँ	<b>ર</b> પૂર	3	१२	२६७	२०	२४७
६ठा	२५२	3	११	२६६	२०	२४६
ড वाँ	२५२	३	१०	२६५	२०	રેજપૂ
दवॉ	२५२	3	8	२६४	२०	<b>૨</b> ૪૪

यहाँ जो उत्कीरणाकालमे एक समय कम करके श्रीर उद्वेलनाकाण्डकमें उत्तरोत्तर एक एक समय कम करके श्रनन्तर इनके योगको सम्यक्त्वकी घ्रु वृह्थितिमे जोड़ा है सो नाना जीवोंकी श्रपेत्ता सम्यक्त्वकी सत्त्विश्यित उत्तरोत्तर एक-एक समय कम बनलानेके लिये किया गया है। यहाँ उत्कीरणाकालप्रमाण हिथित तो श्रधः हिथित गलनासे गल जाती है श्रीर उद्वेलना काण्डक-प्रमाण हिथितका उद्वेलनाकाण्डककी श्रन्तिम फालिके पननके समय घात हो जाता है। यही कारण है कि सम्यक्त्वकी सत्त्विश्यिनमेंसे सर्वत्र उत्कीरणाकाल श्रीर उद्वेलनाकाण्डक प्रमाण हिथितियाँ घटाकर बतलाई गई हैं। इसी प्रकार श्रागे भी उद्वेलनाकी श्रपेत्ता सिन्नकर्ण विकल्प ले

६ ७१६, संपिद्द विदियपयारेण सिण्णियासपरूवणा कीरदे। तं जहा—वेदग-पात्रोग्गमिच्छादिद्दिणा बद्धमिच्छत्तु क्कस्सदिदिणा सन्वजहण्णपिहरुगकालमिच्छय सम्मतः घेत्ण मिच्छत्तदिदिसंकमे सम्मत्तसमुक्कस्सदिदिं काद्ण सन्वजहण्णसम्मत्त-कालमिच्छदेण मिच्छत्तं गंत्ण सन्वजहण्णमिच्छत्तकालेणुक्कस्ससंकिलेसं पूरेदृण मिच्छत्तु कस्सदिदीए पबद्धाए सम्मत्तु क्कस्सदिदी अंतोम्रहुत्तूणा होदि। तदो अ्रण्णेण

अपने चाहिये। किन्तु अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकके यात होनेपर अनेक स्थितिविकस्प नहीं प्राप्त होते, क्योंकि जयन्य उद्वेलनाकाण्डकका प्रमाण सब जीवोंके समान है, अतः उसका घात होनेपर सबके एक ही स्थिति प्राप्त होती है। यथा—

नाना जीव	सम्यक्त्वकी सत्त्व स्थिति	उत्कीरणाकाल	उद्वेलनाकाण् <b>द</b> क	उद्वेलनासे प्राप्त 🦞 सम्यक्त्वकी स्थिति
१ला	२७	8	१६	હ
२ रा	ર્હ	×	१६	ا ه
३रा	२७	8	१६	o و
४था	وي	४	१६	v
પૂર્વો	રહ	8	१६	હ
६ठा	૨૭	૪	१६	ه
७ वाँ	૨૭	४	१६	ا ف
⊏वाँ	२७	8	१६	ه
ì	)		)	एक समय कम उद-
	}		<u> </u>	यावलिप्रमाण नि०

यहाँ उत्कीरणा कालप्रमाण स्थितियाँ तो अधः स्थिति गलनाके द्वारा गलती गई हैं, अतः उनकी अपेद्मा सिन्नकर्प विकल्प बन जाते हैं पर उद्वेलनाकाण्डक प्रमाण स्थितियोंका घात एक साथ हुआ है और सम्यक्त्वकी सत्त्व स्थितियोंमे विभिन्नता न होनेसे उद्वेलनाकाण्डकघातसे नाना जीवोके स्थितियाँ भी एकसी ही प्राप्त हुई, अतः उद्वेलनाकाण्डक १६ प्रमाण स्थितियाँ सिन्नकर्पसे परे हैं। तथा अन्तमे प्रत्येक जीवक जो एक कम उदयाविष्ममाण निषेक बचे हैं वे अधः स्थितिगलनाक द्वारा गलते जाते हैं और इस प्रकार उत्तने सिन्नकर्षविकल्प और प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार उद्वेलनासे कुल सिन्नकर्षविकल्प २५१ – १६ = २३५ प्राप्त हुए।

§ ७१६ अब दूसरे प्रकारसे सन्निकर्षकी प्ररूपणा करते हैं, हजा इस प्रकार है—जिसने मिध्यात्वकी उत्ऋष्ट स्थितिका बन्ध किया है ऐसा कोई एक वेदकसम्यक्त्वके योग्य मिध्यादृष्टि जीव मिध्यात्वसी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है ऐसा कोई एक वेदकसम्यक्त्वके योग्य मिध्यादृष्टि जीव मिध्यात्वसे उत्कृष्ट स्थितिका संक्रम करके सम्यक्त्वकी प्रहृण करके पहले समयमें उसने मिध्यात्वकी उत्ऋष्ट स्थितिका संक्रम करके सम्यक्त्वकी उत्ऋष्ट स्थिति की और वहां सम्यक्त्वके सबसे जघन्य काल तक रह कर मिध्यात्वको प्राप्त हुआ। तद्मन्तर मिध्यात्वके सबसे जघन्य कालक द्वारा उत्कृष्ट संक्लेशकी पूर्ति करके उसके मिध्यात्वकी उत्ऋष्ट स्थितिके बन्ध होने पर उस समय सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्भुहूर्त कम होती है।

जीवेण वेदगसम्मत्तपात्रोग्गेण वद्धमिच्छतुक्कस्सिहिदिणा समयाहियसव्वजहण्णपिडहगग-द्धमिच्छय सम्मत्तं घेत् ण सव्वजहण्णसम्मत्त-मिच्छत्तदाओ गिमय उक्कस्सिनिलेसं प्रेद्ण मिच्छत्तु क्रस्सिहिदीए पबद्धाए सम्मत्ताप्ठक्कस्सिहिदि पेक्खिट ण संपिहियसम्मत्त हिदी समयाहियअंतोमुहुत्तेग्ग्रणा होदि । पुणो अण्णेण जीवेण बद्धमिच्छत्तु क्क्कस्सिहिदिणा दुसमयाहियपिडहग्गद्धमिच्छय वेदगसम्मत्तं पिडवण्णेण सव्वजहण्णसम्मत्त-मिच्छत्त-द्धाओ गिमय मिच्छत्तु क्रस्सिहिदीए पबद्धाए सम्मत्तोष्ठकस्सिहिदीदो संपिहियसम्मत्तिहिदी दुसमयाहियअंतोमुहुत्तेग्ग्र्णा होदि । एवं पिडहग्गकालं तिसमयाहिय-चदुसमया हियादिकमेण वहु।विय संससम्मत्त-मिच्छत्तजहण्णकाले अवहिदे कादूण मिच्छत्तु क्कस्सिहिदि वंधाविय णेदव्वं जाव जहण्णपिडहग्गकालादो उक्कस्सेण संखेज्जगुणं पावेदि ति । तं पत्ते मिच्छत्तु क्कस्सिहिदि वंधाविय गेण्डिद्वव्वं । पुणो उक्कस्सपिडहग्गकालिम् जहण्हपिडहग्गकालं सोहिय सुद्धसेसमेत्तकालेणूणमिच्छत्तु क्कस्सिहिदि वंधिय पिडहग्गो होद्ण सम्मत्तं पिड्यज्ञिय मिच्छत्तं गंत्णविहद्विणिणकाले अविच्छय मिच्छत्तुक्कश्सिहिदी पेक्खित् गंत्रणविह्यसम्मत्तिहिदी अंतोमुहुत्तेण पिडहग्गा स्वद्धाए सम्मत्तोष्ठकस्मिहिदि पेक्खित् ण संपिहियसम्मत्तिहिदी अंतोमुहुत्तेण पिडहग्गा-

तदनन्तर जिसके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ब हुआ है ऐसा बेदकसम्यक्त्वके योग्य एक श्चन्य मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वसे च्युत होनेके समयाधिक सबसे जघन्य प्रतिभग्न कालतक मिश्यात्वमे रह कर सम्यक्त्वको प्राप्त हत्र्या और सम्यक्त्व तथा मिश्यात्वके सवसे जवन्य कालोंको व्यतीत करके उसने उत्हृष्ट संक्लेशकी पृति की तब उसके मिश्यात्वकी उत्हृष्ट स्थितिके बन्ध होने पर सम्यक्तवकी सामान्य उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए इस समयकी सम्यक्तवकी स्थिति एक समय अधिक श्रन्तमुंहर्त प्रमाण कम होती हैं। तदनन्तर जिसने मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है ऐसा कोई एक अन्य मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वसे च्युत होनेके दो समय अधिक जघन्य प्रतिभग्न काल तक मिथ्यात्वमे रहकर वदकसम्यक्त्वको प्राप्त हत्रा श्रीर सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्वके सबसे जवन्य कालोका व्यतीत किया श्रीर इस प्रकार उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्य होने पर सम्यक्त्वकी त्राघ उत्कृष्ट स्थितिकी ऋषेत्रा इस समयकी सम्यक्तवकी स्थिति दो समय अधिक अन्तर्मृहर्तप्रमाण कम होती है। इसी प्रकार मिथ्यात्वसे च्युत होनेके कालको तीन समय अधिक, चार समय अधिक आदि कमसे बढ़ाते हुए तथा सम्यक्त्व और मिध्यात्वके शेप दो जघन्य कालोंका अवस्थित करके और मिध्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराते हुए तब तक कथन करते जाना चाहियं जब जाकर मिध्यात्वसं च्युत होनेक जबन्य कालसे उत्कृष्ट काल संख्यात गुणा प्राप्त होवे । इस प्रकार इसके प्राप्त होने पर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बस्ध कराके सम्यक्तवकी स्थिति प्रहण करना चाहिय। पुनः मिध्यात्वसे च्युत होनेके उत्कृष्ट प्रतिभाग कालमेसे मिथ्यात्वसे च्युत होनेके जघन्य प्रतिभाग कालको घटाकर जा शेप रहे उतने कालसे कम मिण्यात्वकी उत्कृष्टस्थितिका बन्ध करके तथा प्रतिभग्न होकर स्त्रौर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके श्रनन्तर जो मिथ्यात्वमें गया है श्रीर इस प्रकार तीन श्रवस्थित कालों तक तीनों स्थानोंम रहा है उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक बन्धके समय सम्यक्त्वकी स्रोघ उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए इस समय संबंधी सम्यक्त्वकी स्थिति अन्तमुहूर्त और प्रतिभग्नकालिवशेष प्रमाण कम हाती है। यह सन्निकर्पविकल्प पुनरुक्त है। तदनन्तर वेदकसम्यवस्वके याग्य एक अन्य मिध्यादृष्टि

कालिवसेसेण च जणा होति। एस वियण्पो पुणरुत्तो। तदो अण्णो जीवो वेदगपात्रोग्गमिच्छाहिदी पिड्गमकालिवसेसेण्णुक्कस्सिहिदिं बंधिय समयाहियस्व्वजहण्णपिडह्ममकालिमच्छय सम्मत्तं पिडविजय मिच्छत्तः गंतूण मिच्छत्तु क्कस्सिहिदीए
पबद्धाए पुव्युत्तसम्मत्तिहिदी समयृणा होदि। एसो वियण्पा अपुणरुत्तो। एवं
पुव्वं व दुसमयाहिय-तिसमयाहियादिकमेण पिड्ममकाले वहुावेयव्यो आव जहण्णादो
उक्कस्सभो मंखेज्जगुणो ति। एवं वहुाविय पुणो पुव्वविहाणेण जहण्णपिडहमाद्धमुक्कस्सपिडहम्मद्धादो सोहिय सुद्धसंसण दुगुणेणूणिमच्छत्तु क्कस्सिहिदिं वंधाविय
अविदिद्धाओं जहण्णाओ तिष्णि वि गिमय मिच्छत्तु क्रस्सिहिदीए पबद्धाए पुण्युक्तो
सिण्णियासिवयण्पो होदि। एदेण क्रमेण ओदारेद्ण णोद्व्वं जाव णिव्ययण्पुत्रहिदी
पत्ता ति। पुणो पुव्वं व उव्वेल्लणमिस्सद्ण णोद्व्वं जाव सम्मत्तस्य एगा हिदी
दुसमयकालपमाणा चेहिदा ति। एवमोदारिदे विदियपस्वणा समना।

९ ७२०. संपित तिदयपरूवणा वृच्चदे । तं जहा—वेदभपात्रोग्गामिन्छादिहिणा वंधुक्तम्सिहिदिणा सन्वजहण्णपिहरूग-सम्मत्त-मिन्छत्तद्धे णुक्कस्सिहिदीए पबद्धाए पुण-रुत्तवियण्यो होदि, तिण्हं पि अद्धाणं जहण्णभावुवलंभादो । अपुणरुत्तवियण्ये इन्छिज्ज-

जीव प्रतिभग्नकालिविशेषमे कम मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बायकर श्रीर मिध्यात्वसे च्युत हानके एक समय अधिक सबसे जयन्य प्रतिभग्न काल तक मिध्यात्वमे रह कर सम्यक्तको प्राप्त हुआ। तथा पुनः मिध्यात्वको प्राप्त करके उस जीवके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक वन्ध होने पर पूर्वोक्त सम्यक्तको स्थित एक समय कम होती है। यह सन्निकर्षविकत्प अपुनरक्त है। इसी प्रकार पहलेके समान दो समय अधिक और तीन समय अधिक इत्पादि क्रमसे मिध्यात्वसे निवृत्त होनेका काल तव तक बढ़ाते जाना चाहिये जब तक जयन्य कालसे उत्कृष्ट कान संख्यातगुणा प्राप्त होते। इस प्रकार पुनः मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको बढ़ावर पुनः पूर्वावधानानुमार मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके जयन्य कालसे पटाकर जो काल शेष रहे उसके दृने कालसे कम मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध कराके और तीनो ही जयन्य अवस्थित कालोंको विता कर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध कराके और तीनो ही जयन्य अवस्थित कालोंको विता कर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध होने पर सन्निकर्षका पुनरुक्त विकल्प प्राप्त होता है। आगे इसी कमसे निर्विकल्प प्रुवस्थितिक प्राप्त होने तक सम्यक्त्वको स्थितिको घटाते हुए ले जान। चाहिए। तदनन्तर पहलेक समान उद्वेतनाका आश्रय लेकर सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण एक स्थितिके प्राप्त होने तक उसकी स्थिति घटाते जाना चाहिए। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थित घटाने पर दूसरी प्रस्त्वणा समाप्त हुई।

§ ७२० श्रव तीसरी प्ररूपणाको कहते हैं जो इस प्रकार ह-जिसने मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधा है ऐसा वेदकसम्यक्तके योग्य मिश्याद्यष्टि जीव पुनः मिश्यात्वमे च्युत होनेके सबसे जघन्य प्रतिभग्न कालके साथ तथा सम्यक्त और मिश्यात्वक सबसे जघन्य कालोंके साथ जब मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है तब उसके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक बन्धके समय सिन्नकर्पका पुनरुक्त विकल्प होता है, क्योंकि यहां पर तीनों ही काल जघन्य पाये जाते हैं। श्रव अपुनरुक्त विकल्प इच्छित होने पर उसे इस विधिसे लाना चाहिये जो इस प्रकार है-

माणे एदाए किरियाए आणेयन्वो । तं जहा—मिन्छत्तु कस्सिट्टि वंधाविय पिड्हिग-कालमविद्दमन्छिय सम्मत्तकालं समयाद्वियं मिन्छत्तकालमविद्दमन्छिय सिक्लेसं पूरेद्णुकस्सिट्टिरीए पबद्धाए अपुणरुत्तिवयप्पो होदि । पुणो जहा पिड्हिग्मकालं वट्टाविय सम्मत्तिद्दिरी ओदारिदा तहा सम्मत्तकालं वट्टाविय ओदारेदन्वा जाव णिन्वियप्प-धुविद्दि ति । पुणो उन्वेल्लणमिस्सिद्ण आदारेदन्वं जाव सम्मत्तस्स एया दिदी दुसमयकालपमाणा चेटिदा ति । एवं गीदि तदियप्रवाणा समना होदि ३।

६ ७२१ चउत्थपरूवणा संपिंह वृच्चदे । तं जहा—पुणरुत्तवियण्पं पुन्वविहाणेण भणिद्ण मिन्छत्तु कस्सिंहिर्दि वंधाविय पिंडहग्ग-सम्मत्तद्धात्रो अविहरात्रो अन्छिय समयाहियभिन्छत्तद्भनिन्छदेण आऊरिद्कस्मसंकिलेसेण मिन्छत्तु कस्सिंहिदीए पवद्धाए अपुणरुत्तवियण्पो होदि । एवं मिन्छत्तद्धाए दुसमउत्तरादिकमेण बहु विय ओदारिदे चउत्थपरूवणा समण्पदि ४ । एवमेगसंजोगपरूवणा गदा ।

मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर के मिण्यात्वसे च्युत होनेके अवस्थित का जतक मिण्यात्वसे रह कर फिर सम्यक्त्वके एक समय अधिक अवस्थित कालतक सम्यक्त्वके साथ रह कर फिर मिण्यात्वके अवस्थित कालतक मिण्यात्वमे रह कर और उसी समय उत्कृष्ट संक्लेशकी पूर्ति करके जो मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करता है उसके मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक वन्धके समय सिक्कर्षका अपुनरुक्त विकल्प होता है। तदनन्तर पहले जिस प्रकार मिण्यात्वसे पुनः च्युत होनेके कालको बढ़ाकर सम्यक्त्वकी स्थितिको घटाया था उसी प्रकार यहां पर वेदकसम्यक्त्वके कालको बढ़ाकर निर्विकल्प ध्रुवस्थितिके प्राप्त होने तक सम्यक्त्वका स्थितिको घटाता चाहिये। पुनः उद्वेलनाका आश्रय लेकर सम्यक्त्वकी दो समय काल प्रमाण एक स्थितिके प्राप्त होनेतक उसकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थिति घटाते हुए ले जाने पर तीसरी प्रस्पणा समाप्त होती है।

\$ ७२१ अब चोथी प्ररूपणाको बहते हैं जो इस प्रकार है—पहले पूर्वोक्त विधिसे पुनरक्त विकल्पका वह ल। फिर मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके फिर मिण्यात्वसे पुनः च्युत होनेक अबस्थित कालतक और सम्यक्त्वम अबस्थित काल तक मिण्यात्व और सम्यक्त्वमें रहकर फिर जो मिण्यात्वके एक समय अधिक अबस्थित काल तक मिण्यात्वमें रह कर और उत्कृष्ट सेक्लेशकी पूर्ति करके मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक बन्धक समय सिन्नकपंका अपुनरुक्त विकल्प होता है। इस प्रकार मिण्यात्वके कालको दो समय अधिक आदि कमसे बढ़ाकर सम्यक्त्वकी स्थितिक घटाने पर चौथी प्ररूपणा समाप्त होती है।

विशेषार्थ — दूसरी प्ररूपणामं मिध्यात्वकी उत्हृष्ट स्थितिका बन्ध कराके और प्रतिभन्न-कालमे एक-एक समय बढ़ाकर संक्रमणसे प्राप्त सम्बन्दवर्का स्थितिमे एक-एक समय कम किया गया है। तथा बेदक सम्बन्दव काल और संक्लेश पूरण कालको अवस्थित रखा है। पर जब प्रतिभन्नकालमें एक-एक समय बढ़ाते हुए उत्कृष्ट प्रतिभन्नकाल प्रात हो गया तब उत्कृष्ट प्रतिभन्न-कालमेंसे जयन्य प्रतिभन्न कालको घटाकर जो शेप बचा उमसे न्यून मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराया गया और पुनः जबन्य प्रतिभन्न कालने एक-एक समय बढ़ाते हुए संक्रमणसे प्राप्त १७२२, संपित दुसंजोगेण पंचमपरूवणं वत्तइस्सामो । तं जहा—एक्केण पुन्नुप्पाइद्सम्मत्तेण अविणद्ववेद्ग्यात्रोगेण समयूणं भिच्छत्तु क्रस्सिद्दिं वंधिय पिट्टिहम्गद्धं समयाहियमच्छिय सम्मत्त-मिच्छत्तद्धाओ अविद्या भिच्च्छत्तु क्रस्स-दिदिं पंक्सिय्णि होदि । पुन्युत्तसम्मत्तिदिं पंक्सिय्ण एसा तिद्दि दुसमयूणा होदि, दोण्हं णिसेगाणमेगवारेण गालिदत्तादो । पुणो अण्णेण जीवेण दुसमऊणिमच्छत्तु क्रस्सिद्दिं वंधिय समयाहियपिडिहम्गद्धमबिदि । पुणो अवरेण जीवेण बद्धतिसमऊणिमच्छत्तु क्रस्सिद्दिं वंधिय समयाहियपिडिहम्गद्धमबिदि । पुणो अवरेण जीवेण बद्धतिसमऊणिमच्छत्तु क्रस्सिद्दिण पबद्धाए सम्मत्तिद्दि तिसमयूणा होदि । पुणो अवरेण जीवेण बद्धतिसमऊणिमच्छत्तु क्रस्सिद्दिणा समयाहियजहण्णपिडिहम्गद्धमिच्छदेण सम्मत्ति भिच्छत्तद्धाओ अविद्याओ अविद्याओ अच्छिय मिच्छत्तु क्रस्सिद्दिण पबद्धाए सम्मत्तिद्दि चदु-समयूणा होदि । एवं मिच्छत्तिदि चदु-समयूणादिक्रमेण ओदारेयव्या जाव मिच्छत्त-समयूणा होदि । एवं मिच्छत्तिहिदी चदु-समयूणादिक्रमेण ओदारेयव्या जाव मिच्छत्त-

सम्यक्त्वकी स्थितिमें एक-एक समय कम किया गया है। और इस प्रकार सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थिति प्राप्त होनेतक सिन्नकर्षक विकल्प प्राप्त किये गये हैं। आगे जिस प्रकार उद्वेलनासे प्रथम प्रकृपणामें सिन्नकर्ष विकल्प प्राप्त किये गये है उसी प्रकार यहाँ भी प्राप्त कर लेना चाहिये। इस प्रकार दूमरी प्रकृपणा समाप्त हुई। तीसरी प्रकृपणामें प्रतिभन्न कालके समान सम्यक्त्वके कालमें एक एक समय वहाकर सम्यक्त्व प्रकृतिकी एक एक समय कम स्थिति प्राप्त की गई है। विशेष विधि दूसरी प्रकृपणाके समान जानना चाहिये। चौथी प्रकृपणामे मिण्यात्वके कालमे एक एक समय वढ़ाकर सम्यक्त्व प्रकृतिकी एक एक समय कम स्थिति प्राप्त की गई है। यहाँ भी विशेष विधि दूसरी प्रकृपणाके समान जानना चाहिये। इस प्रकार एक संयोगी प्रकृपणा समाप्त हुई, क्योंकि इससे और अधिक बार एकसंयोगीप्रकृपणा संभव नहीं है।

इस प्रकार एकसंयोगी प्ररूपणा समाप्त हुई।

६ ७२२ त्र्यव दो संयोगमे पांचवी प्ररूपणाका बतलाते हैं जो इस प्रकार है-जिसने पहले सम्यक्त्व उत्पन्न किया था त्र्योर जिसका वेदक सम्यक्त्वक योग्य मिध्यात्वका काल नष्ट नहीं हुआ हैं ऐसा कोई एक जीव एक समय कम मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर श्रीर मिण्यात्वसे निवृत्त होनेके एक समय अधिक अवस्थित कालको व्यतीत करके तदनन्तर सम्यक्त्व और मिध्यात्वके अवस्थित कालोंको व्यतीत करके मिध्यात्वकी दत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है तो उमके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धके समय सन्निकर्पका अपुनरुक्त विकल्प होता है। पूर्वोक्त सम्यक्त्वकी स्थितिको देखते हुए यह स्थिति दो समय कम है, क्योंकि यहां उसके दो निषंक एक ही बारमें गला दिये गये हैं । पुनः ऋन्य कोई जीव दो समय कम मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांध कर और मिथ्यात्वसे निवृत्त हानेके एक समय ऋधिक अवस्थित काल तक तथा सम्यवत्व और मिध्यात्वके अवस्थित कालों तक क्रमसे मिध्यात्व, सम्यक्त्व श्रोग मिध्यात्वमे रह कर यदि मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है तो उसके उस समय सम्यक्त्वकी स्थिति पूर्वोक्त स्थितिको देखते हुए तीन समय कम होती है। पुनः जिसने तीन समय कम मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है ऐसा कोई एक जीव मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके एक समय ऋधिक जवन्य काल तक मिथ्यात्वमें रहा । पुनः सम्यक्त्व श्रीर मिथ्यात्वके श्रवस्थित कालोंका व्यतीत करके यदि उसने मिध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थितिका बन्ध किया है तो। उसके उस। समय सम्यक्त्वकी। स्थिति पूर्वोक्त स्थितिको देखते हुए चार समय कम होती हैं। इस प्रकार वेदकसम्यक्त्वके प्रह्ण करनेके धुविदि सम्मत्तागहणपात्रोगां पत्ता ति । पुणो त्रण्णेण जीवेण बद्धमिच्छत्तधुव-हिदिणा दुममजत्तरपिडहग्गद्धमिच्छदेण सम्मत्त-मिच्छत्तद्धात्रो अविदिदाओ अचिछ्य मिच्छत्तु कस्मिहिदीण पवद्धाण ऋण्णो ऋषुणरुत्तिविष्यणो होदि । एवं सिण्णियास-पाओग्गधुविहिदिमबहिदेण कमेण बंधाविष पिडहग्गद्धा तिसमयुत्तरादिकमेण वड्डा-वेयव्वा नाव समजहण्णद्धादो संखेळागुणत्तं पत्ता ति । एवं बड्डाविदे पंचमविष्यणो समत्ती होदि ।

९ ७२३. अथवा पंचमवियणो एवमुणाएयव्वो । तं जहा— समयूणिमच्छत्तुकस्सिटिदिं वधाविय पिंडहरगद्धं चेव समयुत्तरादिकमेण जहण्णद्धादो संखे जागुणं त्ति
बहुाविय पुणो पिंडहरगद्धाविससमे चमेगवारेण मिच्छत्तिटिदिमोदारिय पुणो तमविद्दं
कार्ण समयुत्तरादिकमेण पिंडहरगद्धं चेव संखे जागुणं त्ति वहुाविय पुणो मिच्छत्तिदिदी
अपिट्हिदीदो पिंडहरगद्धाविसंसमे तमोदारेद्व्या। एव णेयव्यं जाव तप्पाओरगिमच्छत्तधुविदि ति । एवं णीदे विदियपयारेण पंचमिवयपो परूविदो होदि।

५०२४ संपिह तिद्यपयारेण पंचमिवयप्पस्स परूवणा कीखे । तं जहा—
 समयूणुकस्सिटिदिपबद्धिमन्द्रादिद्विणा समयाहियपिडिद्दग्यद्धमन्द्रिदेण सन्वजहण्ण-

योग्य मिथ्यात्वकी श्रुव स्थितिक प्राप्त होने तक चार समय कम आदिके कमसे मिथ्यात्वकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये। पुनः जिसने मिथ्यात्वकी श्रुवस्थितिका वन्ध किया है ऐसा कोई एक अन्य जीव मिथ्यात्वसे निवृत्त होनेके दो समय अधिक अवस्थित मिथ्यात्वसें रहा। पुनः सम्य कत्व और मिथ्यात्वके अवस्थित कालोंतिक सम्यक्त्व और मिथ्यात्वमें रह कर यदि उसने मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है नो उसके उस समय सिन्नकर्पका एक अन्य अपुनस्क विकल्प प्राप्त होना है। इसी प्रकार आगेके विकल्प लानेके लिये जो सिन्नकर्प के योग्य श्र्वस्थितिको अवस्थित करके उसका वन्ध करता है और जब तक अपने जवन्यसे उत्कृष्ट विकल्प संख्यातगुणा नहीं प्राप्त होता है तब तक मिथ्यात्वसे निवृत्त होनेके अवस्थित कालको तीन समय अधिक आदिक कमसे बढाता जाना है उसके इस प्रकार उक्त कालके बढ़ाने पर पांचवां विकल्प समाप्त होता है।

§ ७२३ अथवा पांचवां विकल्प इस प्रकार उत्पन्न करना चाहिये. जो इस प्रकार है—पहले एक समय कम मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे। तथा मिण्यात्वसे निवृत्त होनेका जो जघन्य काल है उसे पहली बार एक समय और दूसरी वार दो समय इस प्रकार उत्तरात्तर जघन्यसे संख्यातगुम्म उत्कृष्ट काल प्राप्त होने तक बढ़ाता जावे। तदनन्तर मिण्यात्वसे निवृत्त होनेके उत्कृष्ट कालमेसे जघन्य कालको घटा कर जो भेप रहे नत्यमाण मिण्यात्वकी स्थितिको एक साथ घटा कर उसे श्रवस्थित करदे और मिण्यात्वसे निवृत्त होनेका जो जघन्य काल है उसे पहली बारमें एक समय, दूसरी बारमें दो समय इस प्रकार उत्तरोत्तर जवन्यसे संख्यातगुणा उत्कृष्ट काल प्राप्त होने तक बढ़ाता जाव। तदनन्तर मिण्यात्वसे निवृत्त होनेके उत्कृष्ट कालमेसे जघन्य कालको घटा कर जो शेप रहे तत्प्रमाण मिण्यात्वकी स्थितिको दूसरी वार घटाना चाहिये। इस प्रकार सम्यक्त्वके योग्य मिण्यात्वकी धृवस्थितिके प्राप्त होने तक यह विधि करते जाना चाहिये। इस प्रकार इस विधिक करने पर दूसरे प्रकारसे पांचवें विकल्पकी प्रक्रपणा होती है।

§ ७२४ अब तीसरे प्रकारसे पांचर्चे विकल्पकी प्ररूपणा करते हैं, जो इस प्रकार है—एक समय कम मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला एक मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वसे सम्मत्त-मिच्छत्तद्वाओ अच्छिय मिच्छत्तुक्कस्सिटिदीए पबद्धाए अण्णां सण्णियासवियण्यो होदि । पुणो मिच्छत्तुकस्सिटिदिं दुसमयूणं बंधिय पिडहम्मद्धं समयाहियमिच्छय सम्मत्त-मिच्छत्तद्धाओ अविटदाओ अच्छिय मिच्छत्तुक्कस्सिटिदीए पबद्धाए अण्णो सण्णियासवियण्यो होदि । पुणो अण्णेण जीवेण दुसमऊणिमच्छत्तु क्कस्सिटिदिं बंधिय दुसमयुत्तरं जहण्णपिडहम्मद्धमिच्छय सम्मत्त-मिच्छत्तद्धाओ अविट्यो अच्छिय मिच्छत्तुक्कस्सिटिदीए पबद्धाए अण्णो सण्णियासिवयण्यो । एवमेगवारं टिदिं समयूणं वृहाविय विदियवारं पिडहम्मकालसमए एक्केण वृहाविय स्रोदारेद्व्यं जाव जहण्ण-पिडहम्मद्धा संखेज्जगुणा जादा ति । पुणो एदेण सक्वेण जाणिद्ण श्रोदारेद्व्यं जाव सम्मत्तस्स एगा टिदी दुसमयकाला चेटिदा ति । एवमण्णत्थ वि एदमत्थपक्ष्वणमव-हारिय पद्धवेद्व्यं । एवं पंचमिवयण्यो गदो ५ ।

७२५ संपिह छट्टवियप्पपरूवणा कीरदे। तं जहा—मिच्छत् क्कस्सिटिदिं समऊण-दुसमऊणादिकमेण बंधाविय पिंडहरगद्धमविद्दं करिय सम्मत्तद्वं समयाहिय-दुसमयाहियादिकमेण बड्ढाविय मिच्छत्तकालमबिट्दं करिय मिच्छत्त् कस्सिटिदीए पबद्धाए छट्टवियप्पो होदि । एत्थ पंचवियप्पस्सेव तीहि पयारेहि परूवणा कायन्वा । निवृत्त होनेके एक समय अधिक जघन्य काल तक मिध्यात्वमें रहा। पुनः उसके सम्यक्त्व श्रौर मिध्यात्वके सबसे जघन्य काल तक कमसे सम्यक्त और मिध्यात्वमें रह कर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करने पर एक अन्य सिक्नकर्ष विकल्प प्राप्त होता है । पुनः दो समय कम मिध्यात्व की उत्कृष्ट स्थितिको बाध कर कोई एक जीव मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके एक समय श्रधिक जघन्य काल नक मिध्यात्वमें रहा। तदनन्तर उसके सम्यक्तव श्रीर मिध्यात्वके श्रवस्थित कालों तक क्रमसे सम्यक्त्व श्रीर मिथ्यात्वमें रहकर मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध करने पर एक श्रन्य सिन्नकर्पविकल्प प्राप्त होता है। पुन: एक अन्य जीव दो समय कम मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके दो समय श्रधिक जवन्य काल तक मिध्यात्वमे रहा । तदनन्तर उसके सम्यक्तव और मिथ्यात्वके अवस्थित कालोंतक क्रमसे सम्यक्तव और मिथ्यात्वमें रहकर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्ध होने पर एक अन्य सन्निकर्पविकल्प प्राप्त होता है। इस प्रकार एक बार मिध्यात्वकी स्थितिको एक समय कम करके ऋौर दूसरी बार मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको एक समय बढ़ाकर सम्ययत्वकी स्थिनिको तब तक घटाते जाना चाहिये जब जाकर मिध्यात्वसे निवृत्त होनेका जवन्य काल संख्यातगुणा हो जावे। पुनः इसी क्रम से आगे भी सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक सम्यक्त्वकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये। इसी प्रकार अन्यत्र भी इस अर्थपदका निश्चय करके कथन करना चाहिये। इस प्रकार पाचवाँ विकल्प समाप्त हुआ।

§ ७२५ श्रब छुँठ विकल्पकी प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय कम, दां समय कम इत्यादि कमसे वन्ध कराके श्रीर मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको श्रवस्थित करके तथा सम्यक्तवके कालको एक समय श्रिधक, दो समय श्रिधक श्रादि कमसे बढ़ाकर श्रीर मिध्यात्वके कालको श्रवस्थित करके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराने पर छठा विकल्प होता है। यहां पर जिस प्रकार पांचवें विकल्पकी तीन प्रकारसे प्ररूपणा की है उसी प्रकार छठे विकल्पकी तीन प्रकारसे प्ररूपणा की है उसी प्रकार छठे विकल्पकी तीन प्रकारसे प्ररूपणा करनी चाहिये। इस प्रकार

### एवं छद्वपरूवणा गदा।

§ ७२६ मंपि सत्तमभंगे भण्णमाणे मिन्छत्तु कस्सिटिदिं समयूणादिकमेणो-दारिय पिटहरग-मम्मत्तद्धाओ अविद्याओ करिय मिन्छत्तद्धं समयादिकमेण बहुाविय मिन्छत्तुकस्सिटिदिं बंधाविय पुन्वं व जाणिद्ण खोदारेदव्बं जाव सम्मत्त-चरिमवियणो ति । एवमोदारिदे सत्तमपरूवणा समत्ता होदि ।

 ७२७, संपिह अद्वमवियप्पे भण्णमाणे मिच्छत्तुक्कस्सिद्धिदं बंधाविय पिटहरग-कालं सम्मत्तकालं च समयाहिय-दुसमयाहियादिकमेण बङ्गाविय मिच्छत्तद्धमविद्धं कादृण ओदारेद्व्वं जाव सम्मत्तस्स एगा द्विदी दुसमयकाला चेद्विदा ति । एवमोदारिदे अद्वमभगपरूवणा गदा ⊏ ।

१७२८ संपित णवमभंगपरूवणे भण्णमाणे मिच्छत्तु क्कस्सिद्धिं बंधाविय पिट्टिंग-मिच्छत्तद्धाओ समयाहिय-दुसमयाहियादिकमेण पिरवाडीए वृह्वाविय सम्मत्त-द्भमविदं किरिय मिच्छत्तु क्कस्सिद्धिदं बंधाविय श्रोदारेद्व्वं जाव सम्मत्तस्स एया दिदी दुममयकाला दिदा ति । एवं णीदे णवमभंगपरूवणा समत्ता ह ।

९ ७२९. संपिंह दसमपरूवणे भण्णमाणे सम्मत्त-मिच्छत्तद्धात्रो समउत्तरादि-कमेण परिवाडीए वड्डाविय पिंडहम्मकालमविद्दं करिय उभयत्थमिच्यत्तुक्कस्सिंहिदं

छठी प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ७२६ अब सातवें भंगके कथन करने पर मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको एक समय कम इत्यादि कमने घटाकर और मिथ्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको तथा सम्यक्त्वके कालको अवस्थित करके और मिथ्यात्वके कालको एक समय अविके कमने बढ़ाकर मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे । इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिका अन्तिम विकल्प प्राप्त होने तक पहलेके समान जानकर उसकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये । इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिके घटाने पर साववीं प्रकृपणा समाप्त होती है ।

§ ७२ ं श्रव श्राठवें विकल्पके कथन करने पर मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्य कराके तथा मिण्यात्वमे निवृत्त होनेके कालका श्रोर सम्यक्त्वकं कालका एक समय श्रिधिक और दो समय श्रिधिक इत्यादि क्रमसे बढ़ाकर तथा मिण्यात्वके कालको श्रवस्थित करके सम्यक्त्वका दो समय कालप्रमाण एक म्थिति प्राप्त होने तक उसकी स्थिति घटाते जाना चाहिये। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिके घटाने पर आठवीं प्रस्पणा समाप्त होती है।

\$ ७२= जब नौवें भंगकी प्ररूपणा करने पर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके और मिध्यात्वकी निवृत्त होनेके कालको तथा मिध्यात्वके कालको एक समय ऋषिक और दो समय ऋषिक इत्यादि कमसे बढ़ाकर तथा सम्यक्त्वके कालको ऋवस्थित करके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण एक स्थितिके प्राप्त होने तक उसकी स्थिति घटाते जाना चाहिये। इस प्रकार विधिके करने पर नौवें भंगकी प्ररूपणा समाप्त होती है।

 बंधाविय श्रोदारेदव्वं जाव सम्मत्तस्स एगा हिंदी दुसमयकालपमाणा चेहिदा ति । एवमोदारिदे दसमभंगपरूवणा गदा होदि १०।

९ ७३० संपिह चत्तारि एगसंजोगे भंगे च दुसंजोगभंगे च परूविय तिसंजोग-भंगपरूवणा कीरदे । ताए कीरमाणाए मिच्छत्तु क्रक्स्सिटिदिं समयूणादिकमेण बंधाविय पिडहरग-सम्मत्तद्धाओ परिवाडीए समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिकमेण बहुाविय मिच्छत्तद्ध-मविटिदं करिय मिच्छत्तु क्रक्स्सिटिदिं वंधाविय णेदच्वं जाव सम्मत्तस्स एगा हिदी दुसमयकाला सेसा ति । एवं णीदे एक्कारसमपरूवणा तिसंजोगभंगिम्म पढमा प्रक्विदा होदि ११ ।

दोनो जगह मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण एक स्थितिक प्राप्त होने तक उसका स्थितिको घटाते जाना चाहिये। इस प्रकार सम्यक्त्वको स्थितिके घटाने पर दसवें भंगकी प्ररूपणा समाप्त होती है।

विशेषार्थ-यहाँ दो संयोगकी ऋषेता पाँचवीं प्ररूपणा तीन प्रकारसे की है। पहले प्रकारमें बतलाया है कि मिध्यात्वकी एक एक समय स्थित कम करता जाय और प्रतिभन्न कालमें सर्वत्र एक समय बढ़ावे तथा शेप दी कालोंको अवस्थित रखे। दूसरे प्रकारमें यह बतलाया है कि सबंब एक समय कम निध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थितिका बन्ध करावे और प्रतिभग्न कालमे एकसयांगी दसरी प्ररूपणामे वनलाई विधिके अनुसार एक एक समय बढ़ाना जाय तथा दोप दो कालोको अवस्थित रख । तीसरे प्रकारमें यह बतलाया है कि एक बार मिथ्यात्वकी स्थिति घटावे श्रीर दूसरी बार प्रतिभन्न कालमें एक समय बढ़ावे तथा शेव कालोंको अवस्थित रखे। इस प्रकार इन तीनो प्रकारोंसे सम्यक्तको उत्तरात्तर कम स्थिति प्राप्त की जा सकती है। द्विसंयोगी छठी प्रह्मपुणामें प्रतिभाग कालके स्थानमं सम्यक्त्वके कालमं एक एक समय बढाना चाहिये। शेप सब कथन पॉचवी प्ररूपणाके समान है। सातवी प्ररूपणामे प्रतिभग्न कालके स्थानमे मिथ्यात्वके कालमें एक एक समय बढावे। रोप सब कथन पाँचवीं प्ररूपणाके समान है। द्विसंशोगी आठवीं प्ररूपणामें सर्वत्र मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे किन्तु प्रतिभग्नकाल श्रीर सम्यक्त्वकालम एक-एक समय बढ़ाता जाय । नौवीं प्ररूपणामे प्रतिभग्नकाल ऋौर मिध्यात्वकालका एक समय बढ़ाना चाहियं। तथा दसवीं प्ररूपणामें सम्यक्तव और मिध्यात्वके कालको एक-एक समय बढ़ावं। इस प्रकार करनेसे सर्वन्न सम्यक्त्वकी उत्तरोत्तर कम स्थिति प्राप्त हो जाती है। चारके द्विसंयोगी भंग इल छह ही हाते हैं, अतः यहाँ द्विसंयोगी प्ररूपणा छह प्रकारसे की गई है।

§ ७३० इससे पहले चार एकसंशामा भंग और द्विसंशोगी भंगोंकी प्ररूपणा करके अब तीनसंयांगी भंगोंकी प्ररूपणा करते हैं। उस तीन संयांगी भंगोंकी प्ररूपणांक करने पर मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय कम, दो समय कम इत्यादि कमसे बन्ध करावे और मिश्यात्वसे निवृत्त होनेके अवस्थित कालको तथा सम्यक्त्वके अवस्थित कालको उत्तरोत्तर एक समय अधिक, दो समय अधिक इत्यादि कमसे बढ़ाता जावे और मिश्यात्वके कालको अवस्थित करके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके सम्यक्त्वकी दो समय प्रमाण एक स्थितिके शेष रहने तक सम्यक्त्वकी स्थितिको घटाते हुए लेजाना चाहिये। इस प्रकार लेजाने पर ग्यारहवीं प्ररूपणा और तीन संयोगी भंगमें पहली प्ररूपणांका कथन समाप्त होता है।

§ ७३१, बारसमभंगे तिसंजोगिम्म विदिए भण्णमाणे मिन्छत्तु क्रास्सिटिं समयूणादिकमेण बंधाविय पिडहरग-मिन्छत्तद्धात्र्यो समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिकमेण बहुाविय सम्मत्तकालमविद्दं करिय मिन्छत्तु क्रास्सिटिदं पुन्वं व जाणिदूण औदारेदव्यं जाव सम्मत्तवियणो ति । एवमोदारिदं वारसमपरूवणा समत्ता होदि १२ ।

§ ७३२ संपिह तेरसमपरूवणे भण्णमाणे एकको वेदगसम्मादिद्दी मिच्छत्त-द्विदिं समयूण-दुसमयूणादिकमेण बंधाविय सम्मत्त-मिच्छत्तद्धात्रो परिवाडीए समयुत्त-रादिकमेण बहुाविय पिडहम्गद्धमबद्धिदं किन्य मिच्छत्तु क्कस्सिद्धिदं बंधाविय ओदारे-दच्चं जाव सम्मत्तस्स एगा द्विदी दुसमयकाला चेद्विदा ति । एवमोदारिदे तेरसम-वियप्पो समत्तो होदि १३ ।

§ ७३३, संपिंह चोहसमिवयप्पे भण्णमाणे मिच्छत्तु कस्सिटिदिं बंधाविय पिंडहरग-सम्मत्त मिच्छत्तद्वाञ्चो समयुत्तरादिकमेण परिवाडीए वङ्गाविय मिच्छत्तुकस्सिटिदिं बंधाविय त्र्योदारेदव्वं जाव सम्मत्तस्स एगा दिदी दुसमयकाला चेहिदा ति । एव-मोदारिदे चोहसवियप्पो समत्तो होदि १४ ।

§ ७३१ त्रव बारहवें मंगके और तीन संयोगीमें दूसरे मंगके कथन करने पर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय कम, दो समय कम इत्यादि कमसे बन्ध करावे, और मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको तथा मिध्यात्वके कालको एक समय ऋधिक, दो समय ऋधिक इत्यादि कमसे बढ़ावे तथा सम्यक्त्वके कालको अवस्थित करके और मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके सम्यक्त्वकी स्थितिके अन्तिम विकल्पके उत्पन्न होने तक पहलेके समान जानकर उसकी स्थितिको घटाना चाहिये। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिके घटाने पर बारहवीं प्रकृपणा समाप्त होती है।

§ ७३२ : अब तेरहवीं प्ररूपणाके कथन करने पर एक वेदकसम्यग्द्दष्टि जीव मिध्यात्वमें जाकर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय कम, दो समय कम इत्यादि कमसे बन्ध करे और सम्यक्त्व तथा मिध्यात्वके कालको उत्तरांत्तर एक समय, दो समय इत्यादि कमसे बढ़ावे और मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको अवस्थित करके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करे। इस प्रकार पूर्वोक्त विधिसे सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण स्थितिक प्राप्त होने तक सम्यक्त्वकी स्थितिको घटावे। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिको घटावे।

§ ७३३ श्रव चोदहर्षे विकल्पके कथन करने पर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे श्रोर मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको तथा सम्यक्त्व श्रोर मिध्यात्वके कालको उत्तरीत्तर एक समय, दो समय इत्यादि कमसे बढ़ता जावे तथा मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके सम्यक्त्वकी दो समय काल प्रमाण जघन्य स्थितिके प्राप्त होने तक उसकी स्थितिको घटाता जावे। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिके घटाने पर चौदहवाँ विकल्प समाप्त होता है।

विशोषार्थ—चारक तीन संयोगी भंग कुल चार होते हैं। ग्यारहवीं, बारहवीं, तेरहवीं खोर चौदवीं प्ररूपणामें ये ही चार भंग बतला कर सम्यक्तवकी स्थिति उत्तरीत्तर न्यून प्राप्त की गई हैं। कहाँ किनके संयोगसे न्थिति कम प्राप्त की गई है इसका खुलासा मूलमें किया ही है, ख्रतः यहाँ उसे पुनः नहीं दुहराया गया है।

§ ७३४. संपिः पण्णारसमिवयप्पे भण्णमाणे मिच्छत्तु क्कस्सिटिदिं समयूणादि-कमेण बंशाविय पिटहरग-सम्मत्त-मिच्छत्तद्धाओ समयुत्तरादिकमेण वहृाविय पुणो मिच्छत्तु क्कस्सिटिदिं बंधाविय ख्रोदारेदव्वं जाव सम्मत्तदुममयकालेगा टिदि ति । एवमोदान्दि पण्णारसमपद्भवणा समत्ता होदि १५ ।

§ ७३५ श्रह्मा पण्णारसमपरूवणा एवं वत्तवा। तं जहा—ध्रुविहिदीए समयूणाए ऊणुक्कस्सिहिदिसमयरयणं काऊण पुणो पिहहमा-सम्भत्त-मिच्छत्ताणं जहण्ण-द्धाओं समसगुक्कस्सद्धासु जहण्णद्धाहिंतो संखेज्जगुणासु सोहिय रूबाहियं कादृण पुध पुध एदेसि पि समयाणं पंतियागारेण रयणं काऊण पुणो चत्तारि अक्खे चदुसु पंतीसु हिचय तत्थ श्रितमञ्जक्षो ताव संचारेयव्यो जावप्पणो समयपंतीए अतं पत्तो ति । पुणो तमक्खं तत्थेव हिवय तिद्यक्खो कमेण संचारेयव्यो जावप्पणो समयपंतिपञ्चक्याणं पत्तो ति । पुणो तं पि तत्थेव हिवय विदियक्खं कमेण संचारिय श्रपणो समयपंतिरयणाए अंतम्मि जोजये। तदो तिण्हमद्धाणं समयपंतिरयणसंकल्लाण जित्तया समया तित्त्यमेत्तसमए एगवारेण पहमक्खो ओयारेयव्यो । पुणो सेसितिण्णि वि श्रक्खे तिण्णं पंतीरणं पहमसयएसु ठिवय पुत्र्यं व श्रक्खसंचारं काऊण तदो तित्त्यमेत्तं चेवद्धाणं पुणो वि पहमस्यणस्य उत्वय पुत्र्यं व श्रक्खसंचारं काऊण तदो तित्त्यमेत्तं चेवद्धाणं पुणो वि पहमस्यणस्य अतं पत्तो ति। पुणो सेसितिण्णि पुणो ताव कायव्यं जाव पहमक्खो पहमसमयपंतीए अतं पत्तो ति। पुणो सेसितिण्णि

§ ७३४ श्रव पन्द्रहवें विकल्पके कथन करने पर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय कम, दो समय कम इत्यादि क्रमसे वन्ध करावे तथा मिध्यात्वसे निवृत्त होनेके कालको तथा सम्यक्त्व श्रोर मिध्यात्वके कालको एक समय, दो समय इत्यादि क्रमसे उत्तरांत्तर बढ़ाता जावे। पुनः मिध्यात्वकी उत्तर्ष्ट स्थितिका बन्ध कराके सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण एक स्थितिके शेष रहने तक उसकी स्थितिको घटाता जावे। इस प्रकार सम्यक्त्वकी स्थितिके घटाने परपन्द्रहवीं प्रकपणा समाप्त होती है।

§ ७२५ अथवा पन्द्रह्वीं प्ररूपणाका इस प्रकार कथन करना चाहिये। आगे उसीको ताते हैं— उत्कृष्ट स्थितिमें एक समय कम ध्रुविस्थितिमें कम करके जो शेप रहे उसके समयोंकी रचना करें। पुनः मिण्यात्वसे निवृत्त होनेके जवन्य कालको तथा सम्यक्त्व और िण्यात्वके जवन्य कालोंको जवन्य कालोंसे पर्वात करें जवन्य कालोंको जवन्य कालोंसे संख्यातगुणे अपने अपने उत्कृष्ट कालोंसे घटाकर और एक अधिक करके अलग अलग इनके भी समयोंकी पंक्तिरूपसे रचना करें। पुनः चारों पिक्तयोंमें चार अज्ञोंकी स्थापना करके उनमेंसे अन्तिम अच्का अपनी समयपंक्तिके अन्तको प्राप्त होने तक संचार करते रहना चाहिये। पुनः उस अज्ञको वहीं पर स्थापित करके तृतीय अज्ञका अपनी समयपंक्तिके अन्तको प्राप्त होने तक कमसे संचार करते रहना चाहिये। पुनः इस अज्ञको भी वहीं पर स्थापित करके दूसरे अज्ञको कमसे संचार करते रहना चाहिये। पुनः इस अज्ञको भी वहीं पर स्थापित करके दूसरे अज्ञको कमसे संचार करते अपनी समयपंक्तिरचनाके अन्तको प्राप्त करावे। तदनन्तर तीनों कालोंको समयपंक्तिरचनाके जोड़ करने पर जितने समय हों प्रथमाचको उतने समयप्रमाण एक वारमे उतारे। पुनः शेष तीनों ही अज्ञोंको तीनों पंक्तियोंके पहले समयोंमें स्थापित करके और पहलेके समान अज्ञसंचार करके तदनन्तर प्रथम अज्ञको उतने समय प्रमाण प्रथम पंक्तिमें उतारे। इस प्रकार जब तक पहला अज्ञ पहली पंक्तिमें अन्तको प्राप्त होने तब तक पुनः पुनः इसी प्रकार

वि अक्खा पुन्वं व संचारिय सगसगपंतीए अंतम्मि कायन्वा । एवं कदे हिदिबंधो-सरणेणुष्पणसन्वसण्णियासवियप्पा लद्धा होति । पुणा सेसवियप्पे णागाजीवाणग्रुन्वे-न्लणमस्सिद्ण उप्पाएज्जो । एवग्रुप्पाइदे पण्णारसमपष्ट्वणा समत्त होदि १५ ।

१७३६ सोलसमपरूवणे भण्णमाणे दुममयकालेगिटिदिसंतकिम्मिएण मिच्छत्तुकक्स्सिटिदीए पबद्धाए एगो सिण्णियासिवयप्पे। दोटिदितिसमयसंतकिम्मिएण मिच्छत्तुकक्स्सिटिदीए पबद्धाए विदियो सिण्णियासिवयप्पे। तिण्णिटिदिचदुसमयसम्मन्नसंतकिम्मिएण मिच्छत्तुक्कस्सिटिदीए पबद्धाए तिद्ध्यो सिण्णियासिवयप्पे। एवं गंतूण
समयूणाविलयमेत्तिटिदिसंतकिम्मएण मिच्छत्तु कस्सिटिदीए पबद्धाए समयूणाविलयमेत्ता
सिण्णियासिवयप्पा ल्रब्भिति। पुणो आविल्यव्भित्तियदिसंतकिम्मिएण मिच्छत्तु कस्सिटिदीए पबद्धाए आविल्यमेत्ता सिण्णियासिवयप्पा
होति। कुदो, पिलदोवमस्स असंखेज्जिदिभागमंतिरद्दण संपित्वयसिण्णयासिवयप्पु
प्पत्तीदो। एत्तो उर्वारममिण्णियासिवयप्पटाणाणि पिललोमेण णिरंतरमुप्पाइय घेत्तव्याणि
जाव मिच्छत्तु कस्सिटिदि बंधिय सव्यजहण्णपिहिर्ग्य-सम्मत्त-मिच्छत्तद्धाओ गिमय मिच्छत्तु कस्सिटिदि बंधिय हिदो त्ति। एवं णीदे सोलसमपरूपणा समत्ता होदि। एदे सिण्णयासिवयप्पा सव्येवि पुणरुत्ता पढमपरूवणाए उप्पण्णाणं चेवुप्पत्तीदो। तद्गे पढमरूवणा

करना चाहिये। पुनः शेव तीना ही अज्ञाका पहलेके समान संचार करके उन्हें अपनी अपनी पंक्तिमें अन्तको प्राप्त कराना चाहिये। इस प्रकार करने पर स्थितिबन्धापसरणासे उत्पन्न हुए सभी सन्निकर्षके विकल्प प्राप्त हो जाते हैं। पुनः शेव विकल्प नाना जीवोके उद्देलनाका आश्रय लेकर उत्पन्न करना चाहिये। इस प्रकार उत्पन्न करने पर पन्द्रहवीं प्ररूपणा समाप्त होती है।

\$ ७३६ अब सोलहबीं प्ररूपणांके कथन करने पर सम्यक्त्व हो तो समय कालप्रमाण एक स्थितिनिषेकसत्कर्मवाले जीवकं मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकं बन्ध होने पर एक सन्निक्षैविकल्प होता है। सम्यक्त्वकी तीन समय कालप्रमाण दो निपेकस्थितिसत्कर्मवाले जीवके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकं बन्ध होने पर दूसरा सन्निक्षिविकल्प होता है। सम्यक्त्वकी चार समयप्रमाण तान निषेकस्थितिसत्कर्मवाले जीवके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट निथितिकं बन्ध होने पर तीमरा सन्निक्षिविकल्प होता है। इसी प्रकार आगे जाकर एक समय कम आवलीप्रमाण स्थितिसत्कर्मवाले जीवके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध होने पर एक समय कम आवलीप्रमाण सन्निक्ष्मवाले जीवके मिश्यात्वकी अधिक अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिप्रमाण स्थितिसत्कर्मवाले जीवके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकं बन्ध होने पर आवलीप्रमाण सन्निक्षिवकल्प प्राप्त होते हैं। पुनः एक आवली अधिक अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिप्रमाण स्थितिसत्कर्मवाले जीवके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकं बन्ध हाने पर आवलीप्रमाण सन्निक्षिवकल्प प्राप्त होते हैं, क्योंकि पल्योपम के असंख्यातवें भागको अन्तरित करके वर्तमानकालीन सन्निक्षेविकल्प उत्पन्न हुए हैं। इसी प्रकार आगे भी उपरिम सन्निकर्प विकल्पस्थानोंको प्रतिलोमपद्धिते निरन्तर उत्पन्न करके तब तक प्रहण करना चाहिये जब तक मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके तदन्तर मिश्यात्वसे निवृत्त होनेके सबसे जघन्य कालको तथा सम्यक्त्व और मिश्यात्वके सबसे जघन्य कालोंको व्यतीत करके मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला प्राप्त होते। इस प्रकार सन्निक्षविकल्पोंके ले जाने पर सांलहवीं प्रहरणा समाप्त होती हैं।

शंका-ये सभी सन्निकर्पविकल्प पुनरुक्त है, क्योंकि पहली प्ररूपणामें उत्पन्न करके बतलाये

चेव कायव्वा, ण विदियादिपह्रवणात्रो ति ? ण एस दोसी, सण्णियासवियप्पाणधुष्पति-वियप्पपहृत्वणाद्दं तप्पहृत्वणादो । एवं सम्माभिच्छत्तरस वि वत्तव्वं, विसेसाभावादो ।

## 🕸 सोलसकसायाणं किमुक्कस्सा ऋणुक्कस्सा ?

६ ७३७ सुगममेदं ?

#### 🛞 उक्तस्सा वा श्रगुक्तस्सा वा ।

ः ७३८. जदि मिच्छत्तु कस्सिहिदीए बज्भभाणाए सोलसकसायाणस्रकस्सिहिद-बंधी होज्ज तो उकस्सा । श्रह ण होज्ज तो श्रणुकस्सा । उकस्ससंकिलेसे संते किमहं गये सन्तिकवैविकल्पोंको ही श्रागेकी प्ररूपणाश्रोंमें उत्पन्न करके बताया गया है, श्रतः पहली प्ररूपणा ही करनी चाहिये, द्वितीयादि प्ररूपणाएँ नहीं ?

समाधान-यह कोई दोप नहीं है, क्योंकि सन्निकर्पविकल्प कितने प्रकारसे उत्पन्न किये जा सकते हैं इसका कथन करनेके लिये उन द्विनीयादि प्ररूपणाओंका कथन किया है।

इसो प्रकार सम्यग्मिश्यात्वकी ऋषेत्। भी सन्निकर्पविकरूप कहना <mark>चाहिये क्योंकि सम्यक्त्वकी</mark> प्ररूप<mark>णासे सम्यग्मिश्यात्वकी प्ररूपणासे कोई</mark> विशेषता नहीं है।

विशेषार्थ-पन्द्रहवीं प्ररूपणा चार संयोगी है जो दो प्रकारसे बतलाई है। पहला प्रकार तो स्पष्ट है किन्तु दूसरे प्रकारमें कुछ विशेषता है जिसका यहाँ खूलामा किया जाता है। एक समय कम ध्रवस्थितिसे न्यून मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक जितने समय हो उनकी एक एक करके पंक्तिरूपसे स्थापना करे। अनन्तर अपने-अपने उत्कृष्ट कालों में से जघन्य कालों के घटाने पर जो प्रतिभग्नकाल. सम्यक्त्वकाल और मिथ्यात्वकालक समयोंका प्रमाण आवे उनकी भी प्रथक प्रथक तीन पंक्तियाँ करे। तदनन्तर अन्तिम पंक्तिके समयोंकी गिनती कर ले। तदनन्तर ततीय पंक्तिके समयोंकी गिनती करे। तदनन्तर दसरी पंक्तिके समयोंकी गिनती करे। इस प्रकार गिनती करनेसे इन तीनों पंक्तियोक्षे समयोकी जितनी संख्या हो उतना प्रथम पंक्तिके समयोमेंसे घटा दे। तद-नन्तर दूसरी और तीसरी आदि बार भी यही कम चालु रखे। इस प्रकार इस कमके करनेसे धवस्थिति पर्यन्त कितने सम्निक्टा विकल्प हाते है उनका प्रमाण त्रा जाता है। तथा इसके त्रागेके शेप विकल्प नाना जीवोंकी उद्वेलनाकी अपेदाा प्राप्त होते हैं। इस प्रकार इस प्ररूपणाके द्वारा कल सिन्नकर्प विकल्प प्राप्त हो जाते हैं। सीलहवीं प्ररूपणामें सम्यक्त्वकी दो समय कालप्रमाण जधन्य स्थितिसे लेकर उत्क्रष्ट स्थितिपर्यन्त प्रतिलाम कमसे सन्निकर्ण विकल्प उत्पन्न करके बतलाये गये हैं । इस प्रकार यद्यपि पूर्वमें सोलह प्ररूणाएं बनलाई हैं पर उनसे सन्निकर्ष विकल्पोंमें न्यूनाधिकता नहीं त्राती । ये प्रस्पाणाएँ तो केवल सन्तिकर्णविकल्प कितने प्रकारसे उत्पन्न किये जा सकते हैं इसमें चरितार्थ हैं। इनके वथन करनेका अन्य कोई प्रयोजन नहीं हैं। इसी प्रकार सम्यग्मिभ्यात्वकी स्थितिकी ख्रापेद्यासे भी सन्तिकर्ष विकस्प जानने चाहिये।

\* मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सोलह कषायोंको क्या उत्कृष्ट स्थिति होती है या अञ्चत्कृष्ट स्थिति होती है ?

९ ७३७ यह सूत्र स्गम है।

\* उत्कृष्ट स्थिति भी होती है और अनुत्कृष्ट स्थिति भी होती है।

\$ ७३० यदि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होते समय सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है तो उत्कृष्ट स्थिति होती है। श्रौर यदि नहीं होता है तो अनुत्कृष्ट सन्वकम्माणमक्तमेणुकस्सिटिदिवंघो ण होदि ? ण, सगसगिवसंसपच्चएहि विणा उक्कस्स-संकिलेसमेनेण चेव सन्वपवटीणग्रुकस्सिट्टिदिवंघाभावादो । सन्वकम्माणं जे विसेसपचया तेसिमक्कमेण संभवो किण्ण होदि ? को एवं भएदि ण होदि त्ति, किं तु कयाइ होदि, सन्वकम्माणमक्कमेण कम्हि वि काले उक्कस्सिटिदिवंधुवलंभादो । कयाइ ण होदि, कम्हि वि काले तदणुवलंभादो । के विसेसपचया ? जिणपडिमालयसंघाइरियपवयणपडिऊल-दादश्रो श्रसंखेज्जलोगमेता ।

७३९ अणुकस्सिवियप्पपदुष्पायणद्वमुत्तरमुत्तं भणदि ।

 उक्तस्सादो अणुक्तस्सा समयृणमादिं कादृण पिखदोवमस्स असंखे-ज्जिदभागेणुणा ति ।

५ ७४० तं जहा—मिच्छत्तु क्कस्सिटिदिं वंधंतो सोलसकसायाणं समयूणुक्कस्स-टिदिं बंधदि । एवं गृंत्ण समयूणाबाहाकंडएग्ग्रुणुक्कस्सिटिदिं पि बंधदि । किमा-बाहाकंडयं णाम ? उक्कस्साबाहं विरलेऊण उक्कस्सिटिदिं समखंडं करिय विरलणरूवं

स्थिति होती है।

शंका—उत्कृष्ट संक्लेशके रहते हुए एक साथ सब कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि त्रपने त्रपने स्थितिबन्धके विशेष कारणोंको छोड़कर केवल उत्क्रष्ट संक्लेशमात्रसे सभी प्रकृतियोंकी उत्क्रष्ट स्थितिका बन्ध नहीं होता है।

शंका-सब कर्मीके जो विशेष प्रत्यय हैं उनका एक साथ पाया जाना क्यों संभव नहीं है ?

समाधान—ऐसा कीन कहता है कि उनका एक साथ पाया जाना संभव नहीं है। किन्तु यदि सब प्रत्यय एक साथ होते हैं तो कदाचिन होते हैं, क्योंकि सब कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किसी कालमें पाया भी जाता है। ऋौर कदाचिन सब प्रत्यय नहीं भी होते हैं, क्योंकि सब कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किसी कालमें नहीं भी पाया जाता है।

शंका-वे विशेष प्रत्यय कौन हैं ?

समाधान—जिन प्रतिमा, जिनायलं, संघ, आचार्य और प्रवचनके प्रतिकूल चलना आदि असंख्यात लोकप्रमाण विशेष प्रत्यय हैं।

§ ७३८. अब श्रनुत्कृष्ट विकल्पोंका कथन करनेके लिये त्रागेका सूत्र कहते हैं—

\* अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेत्ना एक समय कमसे लेकर पन्योपमके असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती है।

§ ७४०, उसका खुलासा इस प्रकार है—मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाला जीव सोलह कषायोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बाँधता है। इस प्रकार आगे जाकर वह जीव एक समय कम आवाधाकाण्डकसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिको भी बाँधता है।

शंका-आवाधाकाण्डक किसे कहते हैं ?

पिंड दिण्णे तत्थेगरूवधिरिदमावाहाकंडओ णाम । तत्थ एगसमयमादिं काद्ण जाव समयूणाबाहाकंडओ त्ति ताव कसायाणमणुक्कस्सिद्धितंतिवयपा होति । संपुण्णाबाहाकंडयमेना किण्ण होति ? ण, एक्कस्स कम्मस्स उक्कस्सिद्धिए वज्भमाणाए सन्व-कम्माणं बज्भमाणाणमुक्कस्सावाहाए चेव तत्थ संभवादो । तं कुदो णव्वदे ? गुरूवएसादो हिदिबंधद्वाणमुत्तादो य ।

# 🕸 इत्थि-पुरिसवेद-हस्स-रदीणं णियमा ऋणुक्कस्सा ।

ह ७४१ कुदो ? सोलसकसायाणग्रुकस्सिहिदिवंधे संते एदासिं चदुण्हं पयडीणं वंधाभावादो । ण च वंधेण विणा अविहिदकम्मेसु कसायाणग्रुक्कस्सिहिदी वंधाविष्ठयाए

समाधान—उन्हृष्ट आवाधाका विरलन करके और विरलित राशिके प्रत्येक एक पर उत्कृष्ट स्थितिको समान खण्ड करके देयम्पसे दे देने पर एक विरलनके प्रति जो राशि प्राप्त होती है उतनेको एक आवाधाकाण्डक कहते हैं।

उनमें कपायोंके अनुत्कृष्ट स्थितिसत्त्वके विकरप एक समयसे लेकर एक समय कम आवाधा-काण्डक प्रमाण होते हैं।

दांका-कषायोंके अनुत्कृष्ट स्थितिसत्त्वकं विकत्र संपूर्ण आवाधाकाण्डकप्रमाण क्यों नहीं होते हैं १

समाधान—नहीं, क्योंकि एक कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध होने पर बंधनेवाले सभी कर्मोकी उत्कृष्ट आवाधा ही वहाँ पर संभव है।

शंका-यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-गुरूपदेशसे जाना जाना है और स्थिनियन्धस्थानके प्रतिपादक सूत्रसे जाना जाना है।

विशेषार्थ—ऐसा नियम है कि किसी एक कर्मके उरहृष्ट स्थितिबन्धके समय बंधनेवाले सब कर्मोकी आवाधा उत्कृष्ट ही होती है किन्तु स्थितिमें फरक भी रहता ह । यात यह है कि आवाधाके एक एक विकल्पके प्रति पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिवकल्प प्राप्त होते हैं, अतः उस समय बंधनेवाले सब कर्मोकी स्थिति उरहृष्ट ही होती चाहिये ऐसा काई नियम नहीं है । जिनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके कारण पाये जाते हैं उनकी उरहृष्ट स्थिति होती है और जिनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके कारण नहीं पाये जाते हैं उनकी स्थित अनुत्कृष्ट होती है । वह अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तक हो सकती है । यही कारण है कि यहां मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय सोलह कपायोंकी स्थिति उरकृष्ट और अनुत्कृष्ट दोनों प्रकारकी बतलाई है । तथा अनुत्कृष्ट स्थिति विकल्प एक समय कम आवाधाकाण्डक प्रमाण वतलाये हैं । यहाँ आवाधाकाण्डक प्रमाण वतलाये हैं । यहाँ आवाधाकाण्डक प्रमाण विकल्पोंमेसे उत्कृष्ट स्थितिका एक विकल्प कम कर दिया है ।

\* मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके सभय स्त्रीवेद, पुरुपवेद, हास्य श्रीर रितकी नियमसे अनुत्कृष्ट स्थिति होती है।

\$ ७४५, क्योंकि सालह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होते समय इत चार प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता है। यदि कहा जाय कि जिन कर्मोंका बन्ध नहीं हो रहा है किन्तु सत्तामें स्थित हैं ऊणा संकमिद 'बंधे संकमिद' ति सुनेण सह विरोहादो । ण च कसायिहिदिं सगुविर संकतं मोत्तृण सगबंधेणेदासिं चदुण्हं पयडीणमुक्कस्सिहिदिसतं होदिः, दस-पण्णारस-सागरोवमकोडाकोडिमेत्तिहिदीणमाविलयूणचालीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तिविरोहादो ।

अ उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तृ णमादि कादृण जाव अंतोकोडा-कोडि ति ।

§ ७४२ तं जहा—सोलसकसायाणमुकस्सिटिदिं बंधिय पिडहग्गसमए चेव इत्थिवेदं बंधाविय बंधाविलयादिक्कंतं कसायिटिदिं उक्कस्सिमित्थिवेदिम्मि संकामिदे इत्थिवेदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । तस्समए मिच्छत्तं णियमा अ्रणुक्कस्मं, तत्थ तस्मुक्कस्सिटिदिवंधाभावादो । तदो अ्रंतोमुहुत्तमिच्छय मंकिलेसं पूरेदृण मिच्छत्तु क्कस्स-हिदीए पबद्धाए तक्काले इत्थिवेदिदिदी अप्पणो उक्कस्सिटिदिं पेक्खिद्ण अंतोमुहूत्तूणा

उनमें बन्धावित से कम कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण हा जायगा, सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर 'वंधे संकामिदि' इस सूत्रके साथ विरोध आता है। यदि कहा जाय कि कपायकी स्थितिक। इनमें संक्रमण होकर जो इनकी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है उसे छोड़कर अपने बन्धसे इन चारों प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिमत्त्व हो जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि दस और पम्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितियोंके एक आवलीकम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होनेमें विरोध आता है।

विशेषार्थ—संक्रमणके पाँच भेद हैं। इनमेसे अधःप्रवृत्त संक्रम जिस प्रकृतिका बन्ध होता है उसमे ही अन्य सजातीय प्रकृतिका होता है। किन्तु मिण्यात्व और सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होते समय स्त्रीवेद आदि चार प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता, अतः सोलह कपायोंका पहले उत्कृष्टस्थिति बन्ध करावे और एक आविल बाद स्त्रीवेद आदिका बन्ध कराते हुए उनमें एक आविल कम कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण करावे। पुनः अन्तर्सुहूर्तमें उत्कृष्ट संक्रोशको प्राप्त कराके मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करावे। इस प्रकार यह सब व्यवस्था देखनेसे विदित होता है कि जिस समय मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति होती है उस समय स्त्रीवेद आदिको स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थिति होती है। यहाँ बन्धकी अपेत्ता इन चारों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थित प्राप्त होनेका प्रश्न इसलिए नहीं उठता है, क्योंक बन्धसे इनका उत्कृष्ट स्थिति सत्त्व प्राप्त होकर संक्रमणसे ही उत्कृष्ट स्थिति सत्त्व प्राप्त होता है। इनका उत्कृष्ट स्थिति सत्त्व कितना होता है। इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कितना होता है। इन स्थित होता है। इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कितना होता है। इन स्थित होता है। इनका उत्कृष्ट स्थितबन्ध कितना होता है। इन स्थित होता है। इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कितना होता है। इन स्थित होता है।

\* वह अनुत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मु हूर्तकम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी तक होती है।

\$ ७४२ उसका खुलासा इस प्रकार है—सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बांधकर मिण्यात्वमे निवृत्त होनेके समयमे ही जो स्त्रीवेदका बन्ध करके बन्धाविलसे रहित कषायकी उत्कृष्ट स्थितिका स्त्रीवेदमे संक्रमण करता है उसके उस समय स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं। श्रीर उस समय मिण्यात्व नियमसे अनुत्कृष्ट होता हैं, क्योंकि वहां पर मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध नहीं होता हैं। तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त ठहर कर और संक्लेशकी पूर्ति करके मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक बन्ध होने पर उस समय स्त्रीवेदकी स्थित अपनी उत्कृष्ट स्थितिक

होदि । एस वियप्पो सोलसकसायाणमुक्कस्सिटिदिं वंधिद्णित्थिवेदिन्म संकामिदे लद्धो । पुणो अण्णेण जीवेण सोलसकसायाणं वद्धसमय्णुक्कस्सिटिदिणा पिटहाग-समए चेव इिथवेदं वंधमाणेण तस्सुविर संकामिदवंधाविलयादिक्कंतकसायिटिदिणा तेण इिथवेदस्स समय्णुक्कस्सिटिदिधारएण तत्तो उत्वरि अविटिद्मंतोमुहुत्तमिच्छय उक्कस्ससंकिलेसं पूरेद्ण मिच्छत्त क्कस्सिटिदीए पबद्धाए एसो इत्थिवेदस्स विदियवियप्पो होदि, पुन्वुत्तिटिदं पेक्खिद्णा समय्णत्तादो । पुणो अण्णेण जीवेण सोलसकसायाणं वद्धदुसमय्णुक्कस्सिटिदिणा पांटहर्गसमए इन्थिवेदं वंधमाणेण तदुविर संकामिदवंधा-विलयादिक्कंतकसायिटिदिणा अविटिद्मंतोमुहुत्तमिच्छय उक्कस्समंकिलेसं गंत्ण मिच्छत्त्व क्कस्सिटिदीए पबद्धाए इत्थिवेदस्स अण्णो वियप्पो होदिः पुन्वुत्तिटिदं पेक्खिद्ण दुसमय्णत्तादो । पुणो अण्णेण जीवेण बद्धितसमय्णसोलसकसायुक्कस्सिटिदिणा पांटहर्गसमए इत्थिवेदं वंधंतेण तदुविर संकामिदवंधाविलयादिक्कंतकसायिटिदिणा अविटिद्मंतोमुहुत्तमिच्छय उक्कस्समंकिलेसं पूरेद्ण मिच्छत्तुक्कस्सिटिदीए पबद्धाए इत्थिवेदं वंधंतेण तदुविर संकामिदवंधाविलयादिक्कंतकसायिटिदिणा अविटिद्मंतोमुहुत्तमिच्छय उक्कस्समंकिलेसं पूरेद्ण मिच्छत्तुक्कस्सिटिदीए पबद्धाए इत्थिवेदस्य अण्णो वियप्पो होदिः पुन्चुत्तिटिदं पेक्खिद्ण तिवस्तयूणत्तादो । एवं चद्स्सिप्यवेदस्य अण्णो वियप्पो होदिः पुन्चुत्तिटिदं पेक्खिद्ण तिवस्तयूणतादो । एवं चद्स्सिप्यवेदस्य वंधाविय पिटहर्गसमए इत्थिवेदं वंधाविय वंधावित्यादिक्कंतकसायिटिदिदिदिदित्ति।

देखते हुए अन्तर्मुहुर्त कम होती है। यह विकन्प सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट (स्थतिका वांधकर उसका स्त्रीवेदमे संक्रमण कराने पर प्राप्त होता है। पुनः जिसने सालह कपायोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है एसा कोइ एक जीव जब प्रतिभग्न होनेक समयमें ही स्त्रीवेदका बन्ध करके उसमें बन्धावलिसे रहित कपायकी स्थितिका संक्रमण करता है तब वह स्नीवरकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका धारक होता हुआ इसके आगे अवस्थित अन्तर्मुहूर्त तक ठहर कर श्रीर उत्कृष्ट संक्लेशकी पूर्ति करके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है। उस समय उसके स्त्रीवेदका यह दूसरा विकल्प होता है, क्योंकि पहलेकी स्थितिको देखते हुए यह स्थिति एक समय कम है। पुनः जिसने सोलह कपायोंको दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है श्रीर प्रतिभग्न होनेके समयमें स्त्रीवेदका बन्ध करते हुए उसमें बन्धावलिसे रहित कपायकी स्थितिका संक्रमण किया है ऐसा कोई एक अन्य जाव अवस्थित अन्तर्मुहूर्न तक ठहर कर और उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर यदि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्य करता है तो उस समय उसके स्त्रीवेदका अभ्य विकल्प प्राप्त होता है, क्योंकि पहलेकी स्थितिका देखते हुए यह स्थिति दो समय कम है। पुनः जिसने सोलह कवायोंकी तीन समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है श्रीर प्रतिभग्न होनेके समयमे स्त्रीवेदका बन्ध करते हुए उसमें बन्धात्रलिसे रहित कषायकी स्थितिका संक्रमण किया ह ऐसा कोई एक अन्य जीव अवस्थित अन्तर्मुहर्त ठहर कर और उत्कृष्ट संक्लेशकी पूर्ति करके यदि मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है तो उस समय उसके स्त्रीवदका एक अन्य विकल्प प्राप्त होता है, क्योंकि पहलेकी स्थितिको देखते हुए यह स्थिति तीन समय कम है। इसी प्रकार चार समय कम, पांच समय कम इत्यादि क्रमसे पहले सोलह कपायोंको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके तदनन्दर प्रतिभग्न समयमें स्त्रीवंदका बन्ध कराके और बन्यावितसे रिहत कषायकी स्थितिका स्त्रीवेदरूपसे संक्रमण कराके तदनन्तर अवस्थित अन्तर्मुहूर्त बंधाविय त्रोदारेदव्वं जाव आवाधाकंडएग्र्णं ति ।

ॐ णवुंसयवेद-श्ररदि-सोग-भय-दुगुंछाणं हिदिविहत्ती किसुक्कस्सा किमणुक्कस्सा ?

६ ७४४. सुगममेदं ।

🕸 उक्कस्सा वा त्रगुक्कस्सा वा ।

\$ ७४५ मिच्छत्त क्कस्सिंहिदीए वज्भामाणाए जदि सोलसकसायाणसुक्कस्सिंहिदिवंघो णित्य तो णवुंसयवेद-अरिद्-सोग-भय-दुगुंछाणं पि णित्य उक्कस्सिंहिदिसंत-कम्मं, कसाएहितो एदामिं पयडीणमुक्कस्सिंहिद्मंतुष्पत्तीदा । मिच्छत्त-सोलसकसायाण-कालकं बाद उत्कृष्ट संक्लेशकं द्वारा मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराकं एक अवाधाकाण्डकसे न्यून स्थितिकं प्राप्त होने तक घटाते जाना चाहिय ।

\$ ७४३ अब आवाधाकाण्डकसे कम स्त्रांबेदकी स्थितिके इच्छित होनेपर संगलह कपायोंकी अन्तर्मुहूर्त कम आवाधाकाण्डकसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके और प्रतिभन्न होकर स्त्रींबेद-का बन्ध करते समय बन्धाविलंसे रहित कपायको स्थितिका स्त्रींबंदरूपसे संक्रमण करके तदनन्तर अवस्थित अन्तमुहूर्त काल तक ठहर कर और उत्कृष्ट संक्रंशकी पूर्ति करके जो जीव मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है उसके उस समय स्त्रांबेदकी स्थिति अपनी आंघ उत्कृष्ट स्थितिका देखते हुए एक आवाधाकाण्डकके नांचे स्त्रींबेदकी जो स्थिति इच्छित हो उस स्थितिसे सोलह कपायोंकी स्थितिका अन्तर्मुहूर्त अधिक बन्ध कराके पूर्वोक्त विधिको जानकर उसके योग्य स्त्रींबेदकी सबसे जवन्य अन्तर्मकोड़ाकोड़ी स्थितिके प्राप्त होने तक स्थिति घटाता जाव । इसी प्रकार पुरुपवेद, हास्य और रितका भी कथन करना चाहिये, क्योंकि उससे इनमें कोई विशेपता नहीं हैं।

अ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय नवुं सकवेद, अरित, शोक, भय और जुगुप्साकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ७४४. यह सूत्र सुगम है।

🕸 उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी।

§ ७४५ मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके समय यदि सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध नहीं होता है तो नपुंसकवद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका भी उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म नहीं होता है, क्योंकि कपायोंमे इन प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति उत्वन्न होती है। मिध्यात्व और मुक्कस्सिटिदिवंथे संते वि एदामि पयडीणमुक्कस्सिटिदिसंतकम्भं भयणिज्जं; वंधाविष्ठय-ब्मंतरे बद्धकसायउक्कस्सिटिदीए संकमाभावादो । बंधाविष्ठयादिक्कंतकसायसमयपबद्धक्कस्स-टिदीए एदासि पयडीणमुविर संकंतावत्थाए जिद्द मिच्छ्त्तुक्कस्सिटिदंबंधो होदि तो मिच्छत्तुक्कस्मिटिदिविह्त्तीए मह एदासि पयडीणमुक्कम्सिटिद्विह्ती होदि । एवं होदि ति काऊण जङ्गसहभडारएण उक्कम्मा वा अणुक्कस्सा वा होदि ति भणिदं ?

ॐ उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादि कार्य जाव वीससागरोवम-कोडाकोडीओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण ऊणाओ ति ।

१७४६. एत्थ ताव णवुंसयवेदमिस्सद्ण मुक्तत्थितवरणं कस्सामो । तं जहामिच्छक्त क्कस्सिटिदिं बंधिय सोलसकमायाणं समयूणुक्कस्सिटिदिं बंधिय पुणो वंधाविलयादिक्कंतकसायिदिवीए णवुंमयवेदसहवेण संक्रामिज्जमाणावत्थाए जिद्द मिच्छक्तस्स उक्कस्सिटिदिबंधो होदि तो णवुंसयवेदस्य अणुक्कस्सिटिदिविहक्तीः सगोधुक्कस्सिटिदिं बंधिय वेधाविल्यप्ण समयूणक्तादो । पुणो अण्णेण जीवण कसायाण दुसमञ्ज्यक्कस्सिटिदिं बंधिय बंधाविल्यादिक्कंतकसायाद्धिरोए एव्युंसयवेदसहवेण संक्रामिदा र तत्थ मिच्छक्त क्कस्स-टिदिबंधे मते णवुंसयवेदस्य अणुक्कम्बिटिदिविहक्तीः, सगोधुक्कम्सं पेक्खिद्ण दुसमयूण-क्तादो । एवमदेण क्रमण सोलसक्त्यायिदिदिं तिसमयूणादिसहवेण वंधाविय बंधाविल-यादिक्कंतकसायिदिदी णवुंसयवेदमहवेण मंक्रानिय संक्रंतसम् । मच्छक्त क्रस्सिटिदिं

सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिक। वन्ध हाने पर भा इन ५क्टानयोक। उत्कृष्ट स्थितिसक् मं भजनीय है, क्योंकि वंधी हुई क्रश्यकी उत्कृष्ट स्थितिक। बन्धावलीक भीतर संक्रमण नहीं होता है। तथा बन्धावलिसे रिहत कपायक समयप्रवद्घोकी उत्कृष्ट स्थितिक। इन प्रकृतियों संक्रमण होते समय यदि मिध्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है तो भिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिबभक्ति साथ इन प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिबभक्ति होती है। इस प्रकार मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिबभक्ति होती है। इस प्रकार मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक समय इन प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होती है ऐसा समभ कर यित्रव्यभ भट्टारकने 'उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट' यह वहा है।

क्ष त्रानुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पल्योपमका अमंख्यातवां भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है।

\$ ७४६ यहा पहले नपुसकवंदका ऋाश्रय लेकर सूत्रके अर्थका खुलासा करते हैं। वह इस प्रकार है—सिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके और मोलह कपायोंकी एक समय व.म. उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके तदनन्तर बन्धाविलसे रिहत कपायका स्थितिका नपुमकवंदरूपसे सक्रमण होनेक समय यदि मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है तो नपुंमकवंदकी अनुत्कृष्ट स्थितिक होती हे, क्योंकि उस समय अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए वह एक समय कम होती है। पुनः अन्य जावके कपायकी दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर बंबाविलसे रिहत कपायकी स्थितिका नपुंसकवंदरूपसे संक्रमण होते समय यदि मिश्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होता है तो उस समय उसके नपुंसकवंदकी अनुत्कृष्ट स्थितिवभिक्त होती है, क्योंकि अपनी ओच उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए वह दो समय कम होती है। इस प्रकार इसी कमसे सोलह कपायोंकी स्थितिका तीन समय कम आदिक्ष्यसे बन्ध कराके और बन्धाविलीसे रिहत कपायकी स्थितिका तीन समय कम आदिक्ष्यसे बन्ध कराके और बन्धाविलीसे रिहत कपायकी स्थितिका

बंधाविय त्रोदारेदव्वं जाव णवुंसयवेदस्स ओघुकस्सिट्टिदी एगेणाबाधाकंडएग्णूणा जादा त्रि ।

\$ ७४७. एदिस्सं हिदीए उप्पत्तिविहाणं बुचरे । तंजहा—िमच्छत्त-सोलसकसा-याणमाबाहाकंडएग्एणउकस्सिहिदिमाविलयमेत्तकालं बंधाविय पुणा उकस्ससंकिलेसं पूरेदूण मिच्छत्तु कस्सिहिदीए पबद्धाए तक्काले आबाधाकंडएग्एणाविलयादीदकसायहिदि णवुं सयवेदस्सुविर संकामिय मिच्छत्तुक्कस्सिहिदीए पबद्धाए णवुं सयवेदस्स अग्रुक्कस्स-हिदिविहत्ती होदि । कुदा ? आविलयब्भिहियआबाहाकंडएग्एणचत्तालीससागरोवम-काडाकोडिमेत्तिहिदित्तादो । एवं जाणिदूण ख्रोदारेद्व्यं जाव वीसंसागरोवमकोडाकोडि-मेत्तिहिदि त्ति ।

§ ७४८. संपित वीसंसागरोवमकोडाकोिडिपमाणे इच्छिज्जमाणे सोलसकसायाण-माविलयब्भित्तयवीससागरोवमकोडाकोिडिमेत्तिदिद्माविलयमेत्तकालं वंधाविय पुणो उक्कस्स-संकिलेसं प्रेंद्ण मिच्छत्तु कस्सिदिविज्ञभगणसमण् पुत्र्युत्ताविलयादीदकसायिदिदीण् णवं सयवेदसरूवेण संकंताण् णवं सयवेदिदिती श्रणुक्कस्सा होदिः; वीससागरोवम-कोडाकोिडिपमाणत्तादो । पुणो समयूणावाहाकंडयमेत्तिदिमप्पणो वंधमिस्सिद्णोदारिय गेण्हिद्ववं । एवमरिद्-सोग-भय-दृगुञ्चाणं पि वत्तव्वं, वीससागरोवमकोडाकोिडिदिवंधा-दीिह तत्तो विसेसाभावादो । एवं मिच्छत्तेण सह सव्वपयडीणं सिण्णियासो गदो ।

नपुंसकवंदरूपसे संक्रमण कराके तथा संक्रमणके समय मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके नपुंसकवंदकी स्रोध उत्कृष्ट स्थिति एक स्रावाधाकाण्डक कम होने तक घटाते जाना चाहिये।

§ ७४९ श्रव इस स्थितिके उत्पन्न होनेकी विधि कहते हैं। यह इस प्रकार है—मिध्यात्व श्रोर सोलह कपायोंकी एक श्रावाधाकाण्डक न्यून उत्कृष्ट स्थितिका एक आविल कालतक वन्ध कराके पुनः उत्कृष्ट संवलेशकी पूर्ति करके मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करके उसी समय एक श्रावाधाकाण्डक कम श्रोर एक आविल रहित कपायकी स्थितिका नपुंमकवेदमे संक्रमण कराने पर मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध होने पर नपुंमकवेदकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है, क्योंकि यह स्थिति एक श्राविल श्रधिक श्रावाधाकाण्डक कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है। इसी प्रकार जानकर बीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिक प्राप्त होने तक नपुसकवेदकी स्थित घटाते जाना चाहिये।

\$ ७४८ अत्र बीस कोड़ाकोड़ी मागर स्थितिके इच्छित होने पर सोलह कपायोंकी एक आविल अधिक वीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिका एक आविल कालतक बन्ध कराके पुनः उत्कृष्ट संक्लेशकी पूर्ति करके जो मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है उसके उस समय पूर्वोक्त एक आविलसे रहित कपायकी स्थितिका नपुंसकवेदरूपसे संक्रमण होने पर नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि यह स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागर है। पुनः अपने वन्धकी अपेता एक समय कम आवाधाकाण्डक प्रमाण स्थितिका घटाकर प्रहण करना चाहिये। इसी प्रकार अरित, शोक, भय और जुगुप्साका भी कथन करना चाहिये, क्योंकि वीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितबन्ध आदिकी अपेता नपुंसकवेदसे इनमें कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार मिध्यात्वके साथ सब प्रकृतियोंका सिन्नकर्ष समाप्त हुआ।

## असम्मत्तस्य उक्कस्सिटिदिविहिन्यस्य मिच्छ्रत्तस्य टिदिविहत्ती किम्रक्कस्सा किमणुक्कस्सा ?

§ ७४९<sub>.</sub> सुगममेदं ।

# 🛞 णियमा ऋणुकसा।

् ७५० कुदा १ सम्मादिहिम्मि मिच्छत्तम्म वंधाभावेण तत्थ तदुक्कस्सहिदीए असंभवादो । ण च पढमसमयवेदयसम्मादिहिं मोत्तूणण्णत्थ सम्मत्तसमुक्कस्सिहिदि-विहत्ती होदि, मिच्छादिहिम्ह अपिडग्गहसम्मत्तकम्मे सम्मत्तसमुविर मिच्छत्तिहिदीए संकमाभावादो ।

# 🕸 उक्कस्सादो ऋणुक्कस्सा श्रंतोमुहुत्त् णा ।

§ ७५१, कुदो ? मिच्छत्तु क्कस्सिटिदि विधिय पिडहिज्जदृण अंतोम्रहुत्तमिच्छय वंदगसम्मत्त पिडवण्णपदमसमए मिच्छत्तिहिदीए सम्मत्तसम्भविति संकंताए सम्मत्तसम्भः क्कस्सिटिविहत्ती होदि, तत्थ मिच्छत्तिहिदीए सगोघुक्कस्सिटिदि पेक्खदूण अतोमुहु-त्तृणत्त्वलंभादो ।

## 🏶 णत्थि ऋग्णो वियप्पो।

९ ७५२ सम्मत्तिदिरीए उक्किस्सियाए संतीए जहा अण्णेसि कम्माणमणुकस्सिहिदी त्र्रणेयवियप्पा तथा मिच्छत्ताणुक्कस्सिहिदी ्णाणेमिवयप्पाः सम्मत्तु क्कस्सिहिदीए एय-वियप्पत्तण्णहाणुबवत्तीदो ।

\* सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति
 ±या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

🖇 ७४८. यह सूत्र सुगम हैं ।

## नियमसे अनुत्कृष्ट होती है ।

§ ७५० क्योंकि सम्यग्द्रष्टिके मिश्यात्वका वन्ध नहीं होता, अतएव वहां उसकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती और प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्द्रष्टिको छोड़कर सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति अन्यत्र होती नहीं, क्योंकि मिश्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्व प्रकृति पतद्महपनेके अयोग्य है, अतः उसके सम्यक्त्वमें मिश्यात्वकी स्थितिका संक्रमण नहीं होता है

# \* वह अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे अन्तर्भृहूर्त कम होती है।

§ ७५१, क्यांकि मिध्यात्वकी उत्कृष्टिस्थितिका बन्ध करके और मिध्यात्वसे निवृत्त होकर तथा वहां अन्तमु हूर्तकाल तक ठहरकर जो वेदकसम्यक्त्वके प्राप्त होनेके पहले समयमें मिध्यात्वकी स्थितिका सम्यक्त्वमें संक्रमण करता है उसके सम्यक्त्यकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। पर वहां मिध्यात्वकी स्थिति अपनी ओघ उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए अन्तर्मु हुर्त कम पाई जानी है।

## \* यहां मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिका इससे अतिरिक्त अन्य विकल्प नहीं होता ।

# अ सम्मामिच्छ्रत्तिदिविहत्ती किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा ?

६ ७५३ सुगममेदं ।

% णियमा उक्कस्सा ।

५०५८ कुदो ? अंतोमुहुत्त णमत्तिरमागरोवमकोडाकोडिमेत्तिम्बत्तिद्दिण पहमसमयवेदगसम्मादिहिम्मि सम्मत्त-सम्मामिन्बत्तसस्वेण जुगवं संकंतिदंसणादो । सम्मामिन्बत्तससुदयणिसेगो सगसस्वेण णित्थः थिवुक्कसंकमेण सम्मत्तुदयणिसेगसरूवेण
परिणदत्तादो । तम्हा सम्मत्तु क्रुस्सिहिदं पेक्खिद्ण सम्मामिन्ब्रत्तु क्रुस्सिहिदीए
एगणिसेगेण्णाए होद्व्वं । ण च उदयणिसेगस्स सगसस्वेण धरणहमहावीससंतकिम्मयमिन्ब्राइही तप्पाचोग्गकस्सिम्ब्बत्तिहिद्संतक्रीम्मद्र्यो सम्मामिन्ब्रत्तं पिडवज्जावेदुं
सिक्किज्जइ, सम्मामिन्ब्राइहिम्मि दंसणितयस्म मंकमाभावेण दोण्हं पि अणुक्कस्सिहिदिप्रसंगादो ति ? ण, उक्कस्मिहिदीए पक्कंताए कालं मोत्तूण णिसेयाणं पहाणत्ताभावादो । कत्थ पुण णिसेयाणं पहाणत्तं ? जहण्णहिदीए । तं कुदो णव्वदे ? ब्रुण्णोकसायजहण्णहिदीए अंतोमुहुत्तावहाणपस्त्रवणस्त्रतादो । ण कोहमंजल्रणेण वियहिचारो,

अन्यथा सम्यक्त्वको उत्कृष्टस्थिति एक प्रकारकी नहीं वन सकती है।

\* सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

६ ७५३ यह सूत्र सुगम है।

# नियमसे उत्कृष्ट होती है।

६ ७५४ क्योंकि ब्रान्तमुं हुत कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण मिथ्यात्वकी स्थितिका वेदकसम्यग्द्दष्टिक पहले समयमे सम्यक्त्य ब्रौर सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे एक साथ संक्रमण देखा जाता है।

शंका—मन्यग्रि जीवके सम्यग्मिश्यात्वका उत्यनिषेक अपने रूपसे उत्यमे नहीं आता है, क्योंकि स्तिवृक्षमंक्रमणके द्वारा उसका मन्यक्त्वके उत्यनिषेक्षमपसे परिमणन हो जाता है। अतः सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिक समय मन्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति एक निषेक कम होनी चाहिये। यदि कहा जाय कि जिससे सम्यग्मिश्यात्वका उदयनिषक अपने रूपसे प्राप्त हो जाय इसलिये अद्वाहिस प्रवृत्तियोंका सत्तावाले निश्याहिष्ट जीवको तत्प्रायोग्य मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसत्कमके साथ सम्यग्मिश्यात्व गुणस्थान प्राप्त करा दिया जाव सो भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि सम्यग्मिश्याहिष्ट गुणस्थानमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका संक्रमण नहीं होता, अतः वहा दोनोंकी ही अनुस्कृष्ट स्थितका प्रसंग प्राप्त होता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिमें कालको छोड़कर निषेकोंकी प्रधानता नहीं है। शंका-तो फिर निषेकोकी प्रधानता कहाँ पर हैं ?

समाधान-जघन्य स्थितिमें।

शंका-यह किस प्रमाणसे जाना जाता हैं ?

..... समाधान–छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिका काल अन्तर्मुहूर्त है इस बातका कथन करने- एगसमयपबद्धस्स णिसेगग्गहणद्वं समयूणदोआविष्ठयमेत्तद्धाणमुबिर गंतूण जहण्णसामित्त-प्याणादो । तदो सम्मामिन्छतं णियमा उक्तस्मं ति सिद्धं ।

सोलसकसाय-णवणोकसायाणं हिदि विहत्ती किम्रुक्कस्सा अग्रुक्कस्सा ?

९ ७५५ सुगममेदं ।

## 🐞 णियमा ऋणुक्कस्सा ।

६ ७५६, कुदो ? सम्मत्तु क्रम्सिटिदिविहत्तियजीवे पढमसमयवेदयसम्मादिटिम्मि सोलसकसाय-णवणोकसायाणमुक्कस्सिटिदिवंधाभावादो । सो वि कुदो ? सगविसेस-कारणुक्कस्सितिकलेसाणुविद्धिमिच्छत् द्याभावादो । ण च कारणेण विणा कज्जं संभवइ, अङ्ग्यसंगादो ।

उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तृणमादि कादृण जाव पितदोवमस्स
 असंखेज्जदिभागेणुणा ति ।

**९७५७ तं जहा—- त्रद्वावीससंतकिम्मएण बद्धमिच्छत्त-सोलसकसायुक्कस्स-**

वाले सूत्रसे जाना जाता है।

यदि कहा जाय कि उक्त कथनका कोधसंज्यलनसे व्यभिचार हो जायगा सो भी वात नहीं है, क्योंकि वहाँ एक समयप्रवद्धके निपेकोंके ब्रह्ण करनेके लिये एक समय कम दो आवलिप्रमाण काल ऊपर जाकर जघन्य स्वामित्वकी प्रधानता है।

श्रतः सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके समय सम्यग्मिध्यात्व नियमसे उत्कृष्ट स्थिति-वाला होता है यह बात सिद्ध हुई ।

सम्यक्तकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सोलह कपायोंकी और नौ नोकपायों-की स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ७५५. यह सूत्र मुगम है।

## 角 नियमसे अनुत्कृष्ट होती है।

§ ७५६. क्योंकि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध नहीं होता है।

शंका-इस जीवके सोलह कपाय और नो नाकपायोंका उत्क्रष्ट स्थितिबन्ध क्यों नहीं होता है ?

समाधान—क्योंकि सोलह कपाय और नौ नौकपायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका जो विशेष कारण उत्कृष्ट संक्लेशसे सम्बन्ध रखनेवाला मिध्यात्वका उदय हैं वह वहाँ पर नहीं पाया जाता है। यदि कहा जाय कि कारणके विना भी कार्य हो जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर श्रतिष्रसंग दोष श्राता है।

क वह अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्ता अन्तर्मु हूर्त कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम तक होती हैं।

§ ७५७ बुलासा इस प्रकार है—जिसने मिध्यात्व श्रीर सालह कपायों की उन्क्रष्ट स्थिति

हिदिणा बंधावित्याइक्कंतकसायिहिद्संकमेणुक्कस्सीक्यणवणोकसाएण जहण्णपिहिरमाद्धपिच्छय सम्पत्ते पाँडवण्णे मम्मत्त क्करसाहिद्विहित्ती होदि । तक्काले सोलस-कसाय-णवणोकसायाणुक्करमहिद्दी अंतोमुहुत्तूणाः जहण्णपिहिरगद्धाए अधिहिदगलणाए गिलद्तादो । भिच्छत्त क्करमहिदिवंधकाले सोलसकसायाणं समयूणुक्करसिहिदीए पबद्धाए अण्णा सोलसकस्य-णवणोकसायाणमणुक्करसिहिदी होदिः पुञ्बिदि पेक्खि-दृण समयूणनादो । एवं दुमभयूण-तिसमयूणादिकमण ओदारेदच्वं जाव समयूणाबाहा-कंडएण्णुणुक्कम्मिहिदि ति । तन्ध सव्वपिच्छमिवयप्पो वृच्चदे । तं जहा— मिच्छत् क्करसिहिद्वंभेण सह कसायाणं समयूणाबाहाकडएण्णुणुक्करमिहिदि वंधिय अविदिद्वपिद्धमियद्भाद्यपिद्धमियद्भण सोलसकसाय-णवणोकसायाणं हिद्दी मगुक्कम्मिहिदिं पेक्खिद्ण समयूणाबाहाकडएण्णु कहण्णपिद्धरगद्धाए च ऊणा । एत्तो हेट्टा णोदारेदं सिक्कजइ, ओदारिदे सम्मत्त कस्सिहिदिंविणासादो ।

#### 🕸 एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि ।

७५८ जहा सम्मन विकस्मिद्धिविणिरोहं काऊण अवसेसकम्मिद्धिवीणं सिण्णयासो कदो तहा सम्भाभिच्छन् वकम्सिद्धिविणिरोहं काऊण सेसकम्मिद्धिणं मिण्णयासो कायच्चो,

बाधी ह त्र्योर बन्धायलिके बाद जिसने कपायकी स्थितिका संक्रमण् करके तो नोकपायोकी उत्कष्ट म्थिति की है ऐसा ऋट्टाईस प्रकृतियोका सत्कर्मवाला जीव यदि जबन्य प्रतिभग्नकाल तक मिथ्यात्वमे रहकर सम्बक्त्वको प्राप्त हुन्ना तो उस समय उसके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है और उसी समय उसके सोतह कपाय और नी नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थिति स्रन्तर्मुहूर्त कम होती है, क्योंकि इसके जघन्य प्रतिभग्न काल ऋधःस्थितिगलनाके द्वारा गल चुका है। तथा मिण्यात्वक। उत्कृष्ट स्थितिके वन्धके समय सोलह कपायों की एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध होने पर सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सीलह कपाय और नौ नौकपायोंकी अन्य अनुत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि पहलेकी स्थितिको देखते हुए यह स्थिति एक समय कम है। इसी प्रकार दो समय कम, तीन समय कम आदि क्रमसे एक समय कम आवाधा काण्डकसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिके प्राप होने तक सालह कपाय श्रोर नी नोकपायोंकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये । वहाँ अब सबसे अन्तिम विकल्प कहते हैं । वह इस प्रकार है—मिश्यात्वके उत्कृष्ट स्थिति बन्धके साथ कपायोकी एक समय कम आवाधाकाण्डकसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिको बाँध कर तदनन्तर अवस्थित प्रतिभग्नकालको अधःस्थितिगलनाके द्वारा गलाकर इस जीवके सम्यक्तवके प्राप्त होने पर सोलह कपाय और नो नोकपायोकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक समय कम अविधावाण्डक और जवन्य प्रतिभग्न काल प्रमाण कम होती है। यहां सोलह कपाय श्रीर नौ नोकपायोकी स्थितिको उससे श्रीर कम नहीं किया जा सकता है, क्योंकि इनकी स्थितिको इससे और कम करने पर सम्यक्तवकी उत्कृष्ट स्थितिका विनाश हो जाता है।

## इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको विविद्यत कर शेष प्रकृतियौँ की स्थितियोंका सन्निकर्ष करना चाहिये।

्र उप= जिस प्रकार सम्यवस्वकी उत्कृष्ट स्थितिको विविच्चित कर अर्थान् सम्यवस्वकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए शेष कर्मोकी स्थितियोंका सिक्नकर्प कहा उसी प्रकार सम्यमिथ्यात्वकी

#### विसेसाभावादो ।

🛞 जहा मिच्छत्तस्स तहा सोलसकसायाणं।

६ ७५८, जहा मिन्बन्त् क्कस्सिटिदिणिरं भणं काऊण सेसासेसमोहपयडिटिदीणं सिण्णियासो कदो तहा सोलसकसाएसु एगेगकसायस्स उक्कस्सिटिदिणिरुं भणं काऊण सेसकम्मिटिदीणं सिण्णियासो कायव्वो; अविसेसादो ।

\* इत्थिवेदस्स उक्कस्सि दिविहत्तियस्स मिच्छत्तस्स दिविवहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ?

६ ७६० सुगममेदं।

% णियमा अणुकस्सा ।

९ ७६१. कुदो ? इत्थिवेदबंधकाले मिच्छत्त कस्मिटिदिवंधाभावादो । ए। च इत्थिवेदस्स बंधेण विणा हिदीए उक्कस्मत्तं संभवइ, अपिडम्महस्सित्थिवेदस्सुविर वंधाव-लियाइक्कंतकसायुक्कस्मिटिदीए संकमाभावादो । तम्हा णियमा अणुक्कस्सा ति सुत्तं सुभासिदं ।

अ उक्कस्सादो त्र्रणुक्कस्सा समयूणमादि कादूण जाव पिलदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणुणा त्ति ।

उत्कृष्ट स्थितिको विविच्चित कर शेप कर्मोको स्थितियोको सिन्निकप कहना चाहिये ; क्योकि उससे इसमे कोई विशेषता नहीं है ।

ॐ जिस पकार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको विवक्षित कर शेप प्रकृतियों की स्थितियोंका सिक्नकर्प कहा उसी पकार सोल्ड कपार्थोकी उत्कृष्ट स्थितिको विविचत कर शेप प्रकृतियोंकी स्थितियोंका भी सिक्नकर्प कहना चाहिये ।

\$ ७५६ जिस प्रकार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको रांक कर शेप सब मोह प्रकृतियोंकी स्थितियोंका सिन्नकर्ष किया है उसी प्रकार सोलह कपायोमेसे एक एक कपायकी उत्कृष्ट स्थितिको रोककर शेप कमौंकी स्थितियोंका सन्तिकर्प करना चाहिये, क्योंकि इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है ।

स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके समय मिथ्यात्वकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ७६० यह सूत्र सुगम है।

🛞 नियमसे अनुत्कृष्ट होती है।

§ ७६१ क्योंकि स्त्रावदक वन्धक समय मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका बन्ध नहीं होता है। और स्त्रीवेदका बन्ध हुए बिना उसकी स्थिति उत्कृष्ट हो नहीं सकती, क्योंकि अपतद्यहरूप स्त्रीवेदमें बन्धाविलके बाद कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण नहीं होता है। इसलिय स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक समय मिध्यात्वकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है यह सूत्र उचित ही कहा है।

अ वह अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेता एक समय कमसे लेकर प्ल्योपमके असंख्यातचें भाग कम स्थिति तक होती हैं। े ७६२ तं जहा—मिच्छत्त-सोलसकमायाणमुक्तस्सिटिदिं बंधिय पिडहग्गसमण् चेव इत्थिवेदवधाविलयादिक्कंतकसायिटिदीए इत्थिवेदस्हवण संकामिदाण इत्थिवेदस्हु-क्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । तकाले मिच्छत्तं समयूणं होदि; उक्कस्सिटिदिवे अधिटिदिगलणाए गलिदेगसमयत्तादो । मंपिह सोलसकसायाणमुक्कस्सिटिदिवंधकाले मिच्छत्तस्स्सिम्यूणुक्कस्सिटिदिवंधिय पिडहग्गसमए इत्थिवंदं वधितेण कसायिटिदीए तस्सक्ष्वेण संकामिदाए इत्थिवेदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । तस्ममए भिच्छत्तस्स अणुकस्सिटिदिविहत्ती; सगुक्कस्सिटिदिं पेक्खिद्ण दुसमयूणत्तादो । एवं तिसमयूणादिकमेण मिच्छत्तमेदारेयव्यं जाव आवाहाकंडएरणुणिटिद्दं पत्तं ति । पुणो वि आवाहाकंडयस्स हेटा मिच्छत्तं समऊणाविलयमेत्तमोद्दरि । तं जहा—सोलसकसायाणमुक्कस्सिटिदिमंतो-मुहुत्तमेत्तमाविलयमेत्तं वा कालं वंथंतेण मिच्छत्त क्कस्सिटिदी वि समयूणावाहाकंडएरणुणा बद्धा । पुणो पिडहग्गसमए इत्थिवंदं वंधंतेण वधाविलयादीदकसायिटिदी तस्सक्ष्वेण संकामिदा ताथे इत्थिवंदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । एवं पिडहग्गाविलयमेत्तकाल-मित्थिवंदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । एवं पिडहग्गाविलयमेत्तकाल-मित्थिवंदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । एवं पिडहग्गाविलयमेत्तकाल-मित्थिवंदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती चेवः वंधगणदाण चित्माविलयमेत्तकस्सिटिदीणं तत्थ संकातिदसणादो । मिच्छत्तं पुण पिडहग्गपटमग्रमण् आवाहाकंडएग्गुण विद्समण् तेण समयाहिएण एवं णेद्वं जाव पिडग्गाविलयसेरम-

१ ७६२ उसका चुलासा इस प्रकार ह—जा मिध्यात्व और मालह क्यायों जी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभग्नकालके भीतर ही स्त्रीवेदका बन्ध करता हुआ। बन्धावलिसे रहित कपायकी स्थितिका स्त्रीवेदरूपसे संक्रमण करता है उसके स्वीवेदका उत्क्रष्ट स्थिति विभक्ति होती है। तथा उस समय मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थित एक समय कम होती है. क्योंकि इसकी उत्कृष्ट स्थितिमेसे ऋधःस्थितगलनाक द्वारा एक समय गल गया है। अब सालह कपायों की उत्कृष्ट स्थितिक वन्धक समय मिण्यात्वकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर प्रतिभग्न कालकं भीतर स्त्रीवेदका बांधते हुए किसी जीवके कपायकी स्थितिके स्त्रीवेदरूपमे संक्रामित होने पर जिससमय स्त्रीवेदकी उत्क्रप्ट स्थितिविभक्ति होती है उस समय मिथ्यात्वकी अनुत्रृष्ट स्थितिविभक्ति होती हे, क्यांकि अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए यह दो समय कम होती है। इसी प्रकार तीन समय कम इत्यादि कम से आबाधाकाण्डक प्रमाण कम स्थितिके प्राप्त हाने तक मिण्यात्वकी स्थितिको घटात जाना चाहियं । तथा इसके बाद भी आवाधाकाण्डकके नीचे मिण्यात्वकी स्थितिको एक समय कम स्रावितप्रमाण स्रीर कम करना चाहिये। खुलासा इस प्रकार है—सोलह कपायोका उत्ऋष्ट स्थितिको एक अन्तर्मुहूर्तकाल तक या एक त्र्यावालि कालतक वांधते हुए किसी जावने मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति भी एक समयकम श्राबाधाकाण्डकप्रमाण न्यून बाधी। पुनः प्रतिभग्नकालके भीतर स्त्रीवेदका वध जीवने बन्धावालसे रहित कपायकी उत्कृट स्थितिका स्त्रीवेदरूपसे संक्रमण किया तब उस जीवके स्त्रावेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। इस प्रकार प्रति-भग्नकालके एक आविल काल तक स्त्रीवदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति ही होती है, क्योंकि स्त्रीवेदके बन्धककालमे अन्तिम अावलिप्रमाण कपायकी उत्कृष्ट स्थितियोंका स्त्रीवेदमें संक्रमण देखा जाता है। तथा मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति प्रतिभग्नकालके पहले समयमें तो एक त्रावाधाकाण्डकप्रमाण कम होती हैं, दूसरे समयमे एक समय त्र्राधिक एक त्रावाधाकाण्डकप्रमाण समओ ति । णवरि तत्थ मिच्छत्तु कस्सिटिदी समय्णावित्यव्भिहियत्रावाहाकंडएण ऊणा होदि । कुदो १ वंधेण समयूणावाहाकंडएणूणिमच्छत्तस्स हिदीए पुणी वि ऋध-हिदिगलणाए आवित्यमेत्तिहिदीणं शिरहाणिदंसणादो ।

**अ सम्मत-सम्मामिच्छताणं हिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा** ?

६७६३ सुगममेदं।

🕸 णियमा ऋणुकस्सा ।

ॐ उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तॄणमादिं कादृण जाव एगा हिदि त्ति ।

§ ७६५ तं जहा--भिच्छत्त वकस्सिटिदिं बंधिय पिडहागो होद्ण सम्मत्तं घेत् ण तत्थ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिटिदिविहत्तिस्रो होद्ण सम्मत्तेणंतामुहुत्तमिच्छय भिच्छत्तं गंतुण सञ्बजहण्णेण कालेण संकिलेमं गंतुण सोलसकसायाणमेगसमयमाविलयमेत्तकालं

कम हाती है और तीसरे समयम दा समय अधिक एक आवाधाकाण्डकप्रमाण कम हाती है। इस प्रकार प्रतिभग्न कालकी एक आवालिके अन्तिम समय तक मिण्यात्वकी (स्वित घटात जाना चाहिये। इतनी विशेषता है कि वहाँ पर मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थित एक समय कम आवालप्रमाण कालसे अधिक एक आवाधाकाण्ड क कालप्रमाण कम होती है, क्योंकि वन्धकी अपेत्ता एक समय कम आवाधाकाण्डक कालप्रमाण कम मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिमसे अधःस्थितिगलनाक द्वारा आवलप्रमाण स्थितियोंकी हानि और देखी जाती है।

\* स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्तव और सम्यिग्ध्यात्वकी स्थिति विभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुतकृष्ट ?

§ ७६३. यह सूत्र सुगम है।

\* नियमसे अनुत्कृष्ट होती है।

§ ७६४. क्योंकि मिथ्यादृष्टिक सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं पाई जाती है। यदि कहा जाय कि मिथ्यादृष्टिको छोड़कर सम्यग्दृष्टिक स्त्रीवदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति रही त्रावे सो भा बात नहीं है, क्योंकि सम्यग्दृष्टिक स्त्रीवदका बन्ध नहीं होता है, अतः वहाँ पर स्त्रीवदका पतद्प्रह्पना नहीं पाया जाता है। तथा वहाँ पर कपायकी स्थिति भी उत्कृष्ट नहीं होती है।

अ वह अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेत्रा अन्तर्मृहूर्त कमसे लेकर एक स्थिति तक होती है।

§ ७६५. उसका खुलासा इस प्रकार है—जो जीव मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको वाँधकर, स्रोर प्रतिभग्न होकर, तदनन्तर सम्यक्त्वको प्रहण करके, उसके प्रथम समयम सम्यक्त्व स्रोर सम्य-ग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट विभक्तिका धारक होकर नथा सम्यक्त्वकं साथ स्रन्तर्मृहूत काल तक रहकर तदुनन्तर मिध्यात्वमें जाकर स्रोर सबसे जघन्य कालके द्वारा संक्रशकी पूर्ति करके सोलह कपायों- वा उक्कस्मिटिदिं वंधिय पिंडहरगपदमसमए इन्थिवेदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । तक्काले सम्मत्त-सम्माभिच्छताणमणुक्कस्मिटिदीः सगुक्कस्सिटिदें पेक्खिद्ण अंतोसुहुत्त - एात्तादो । सेमं जहा मिच्छत्तु कम्मिटिदीए णिरुद्धाए मम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणं सण्णियासो कदो तहा इन्थिवेद्कस्मिटिदीए णिरुद्धाए वि ताभिं पयडीणं टिदीए सण्णियासो कायच्वोः विसेसाभावादो ।

### **अ एवरि चरिमु**व्वेल्लएकंडयचरिमफालीए ऊएा ति ।

ऽ ७६६, अंतोमुहुत्तूणुक्कम्महिदिप्पहुडि जावेगा हिदि ति सव्वहिदीहि सह सिण्णियासे पुत्र्वसुत्ते ण संपत्ते तस्सापबादहमेदं सृत्तमागदं। चित्मुव्वेल्लणकंडयिम्म उक्कीरणद्धामेताओं फालीओं होंति। एत्तियमेत्ताओं फालीओं होंति ति कुदो णव्वदे ? चित्मुव्वेल्लणकडयचित्मफालीए ऊणा ति एदम्हादी सुत्तादी। ण च एगसमएण हिदिखंडए पदंते मंते 'चरिमफालीए ऊणा' ति णिहेसी जुज्जदे; एक्किम्म चारिमा-चरिमवबहाराभावादी। होदु णाम फालीएं वहुत्तमिद्धी, ताओं उक्कीरणद्धामेत्ताओं ति कथं णव्वदे ? हिदिकडयिणवदणकालस्म उक्कीरणद्धाववएमण्णहाणुववत्तीदी। ण च

की एक समय तक या एक आवित्त काल तक उत्कृष्ट ।स्थितिको बाँधता है उसक प्रतिभग्न हानेके प्रथम समयमे स्त्रावेदकी उत्कृष्ट स्थितिबिमिक्त होती है। तथा उस समय सम्यक्त्व और सम्यम्भियात्वकी अनुत्कृष्ट स्थिति होती है; क्योंकि बह अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए अन्तर्मुहूत कम हाती है। आगे जिस प्रकार मिण्यात्वकी उन्कृष्ट स्थितिका राक्त कर सम्यक्त्य और सम्याग्मिण्यात्वकी हो। स्थितियाका मिन्नकर्ष किया है उसी अकार स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिको रोक कर भी उन प्रकृतियोंको स्थितियोंका मिन्नकर्ष करना चाहिये, क्योंकि दानोंमे कोई विशेषता नहीं है।

ॐ किन्तु इतनी विशेषता है कि वह अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति अन्तिम उद्देलना काण्डककी अन्तिम फालिसे न्यन होती है।

§ ७६६ अन्तर्मुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिमें लेकर एक स्थितितक अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्ति होती हैं। इस प्रकार पूर्व सूत्र बचनसे सब स्थितियोंके साथ मन्निकर्षके प्राप्त होने पर उसके अपवादके लिये यह सूत्र आया है। अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें उरकीरणा काल प्रमाण फालियां होती हैं।

शंका-इतनी फालियां होती है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—'चरिमुञ्बेल्लएकंडयचरिमफालीए ऊए।' इस सूत्र वचनसे जाना जाता है। याद एक समयकं द्वारा स्थितिकाण्डकका पतन स्वीकार किया जाय तो 'चरिमफालीए ऊए।' यह निर्देश नहीं बन सकता है, क्योंकि एकमें अन्तिम और अनितम इस प्रकारका व्यवहार नहीं बन सकता है।

्रांका-फालियां बहुत होती है यह भले ही सिद्ध हो जाओ परन्तु वे उत्कीरणकाल प्रमाण होती हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-यदि फालियां उरकीरण काल प्रमाण न मानी जायं तो स्थितिकाण्डकके पतन होनेक कालका उरकीरण काल यह संझा नहीं बन सकती है। इससे जाना जाता है कि फालियां

हिदिपदेसाणमुक्कीरणमकुणमाणाए अद्धाए उनकीरणद्धा ति वनएसो घडदे। णाणित्थया एसा सण्णा, आगमसन्त्रसण्णाणमत्थाणुगयाणमुन्नलंभादो। एदं सुत्तं देसामासियं ति काऊण सन्वहिदिकंडयाणि ऋंतोमुहुत्तेण णिनदंति ति घेत्तन्वं। ण समुग्रघादगद-केनिलिहिदिकंडएहि नियहिचारो; केनलीणमकेनलीहि साहम्माभानादो।

§ ७६७ चरिममुब्वेलणवंडयस्स चरिमफालीए जित्तया णिसेया तित्रयमेत्ति हिदीश्रो मोत्त ण जित्तयाश्रो संसिद्दिश्रो तित्रयमेत्ता चेव सिण्णियासिवयणा होति । चरिम-फालिमेत्ता किण्ण लद्धा १ ण, तित्त्रयमेत्ति हिदीस एगवारेण णिवदिदास मिन्छत्त कस्स-हिदीए सह पादेक्तं तिहदीणं सिण्णियासास्त्रवलंभादो । ण तद्विरिमादिमुब्वेल्लणकंड-एहि वियहिचारो, तेसि कंडयाणमविहिद्श्रायामाभावेण सव्विणिसेगाणं मिक्छत्त कस्स-हिदीए सह सिण्णियासुवलंभादो । ण चित्रमुब्वेल्लणकंडयिम जहण्णिम श्रायामं पिष्ठ अणियमो; तिकालविसयासेमजीवेस चिरमुब्वेल्लणजहण्णकंडयायामस्स एगसस्त्रवत्तदो । एदं दो णब्वदे १ एदस्स सुत्तिणहेमस्स श्रण्णहासुववत्तीदो ।

उत्कीरण कालप्रमाण होती हैं। तथा स्थितिगत प्रदेशोकी उत्कारणा नहीं करने पर कालको इत्कीरणकाल यह संज्ञा दी नहीं जा सकती। यदि कहा जाय कि यह संज्ञा निष्कत है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि आगमिक सभी संज्ञाएं अर्थका अनुसरण करनेवाली होती हैं।

यह सूत्र देशामर्पक है ऐसा समक्तकर सब स्थितिकाण्डकोंका पतन अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा / होता है ऐसा ब्रह्ण करना चाहिये। यदि कहा जाय कि ऐसा मानने पर समुद्घातगत केवलीके स्थितिकाण्डकोंके साथ व्यक्तिचार आता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि केवलियोंकी इतर छुद्यस्थोंके साथ समानता नहीं पाई जाती है।

शंका--अन्तिम फाणिप्रमारा सन्निकर्यविकल्प क्यों नहीं प्राप्त होते हैं।

समाधान—नहीं, क्योंकि उतनी स्थितियोका एक बारमें पतन हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिक साथ उनमें से प्रत्येक स्थितिका सन्निकप नहीं पाया उत्ता है।

यदि कहा जाय कि इसप्रकार तो इसके उत्पर्क उद्वेलनकाण्डकमें लेकर प्रथम उद्वेलनकाण्डक तक सभी उद्वेलनकाण्डकोंके साथ व्यभिचार हो जायगा, सा भी बात नहीं है, क्योंकि उन काण्डकोंका अवस्थित आयाम नहीं पाया जाता, इसलिये उनके सब निपंकीका मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ सिन्निकर्ष बन जाता है। यदि कहा जाय कि जयन्य अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें आयामका कोई नियम नहीं है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि त्रिकालवर्ती सब जीवोंमें जयन्य अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकका आयाम एकसा ही होना है।

शंका-यह किस प्रमाणसे जाना जाना है १

समाधान-इस सूत्रका निर्देश अन्यथा वन नहीं सकता था, इससे जाना जाता है कि जघन्य अनितम उद्देलना काण्डकका आयाम एकसा होता है।

विशेषार्थ - यहाँ प्रकरण यह है कि मिध्यात्व आदिकी उत्कृष्ट स्थितवाले जीवके सम्यक्तव और सम्यग्मिध्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या ऋनुःकृष्ट ? इसका जो उत्तर दिया है उसका

भाव यह है कि नियममें अनुस्कृष्ट होती है, क्यांकि मिध्यात्व आदिकी उत्कृष्ट स्थिति मिध्यात्व गुणस्थानमें प्राप्त होती है और उक्त दोनों कर्मीकी उत्कृष्ट स्थित वेदकसम्यग्द्रष्टिके पहले समयमें सम्भव है, श्रतः मिध्यात्व अहिकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्तव और सम्यिग्मध्यात्वकी उत्क्रष्ट स्थिति तो हो नहीं सकतो । हाँ अनुत्कृष्ट स्थिति अवश्य सम्भव ह सो भी वह अन्तर्मृहर्त कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक स्थिति तक जानना चाहिये । किन्तु इसका एक ऋपवाद है । बात यह है कि सब प्रकृतियोंके प्रथमादि स्थितिकाण्डक सम और विषम दोनों प्रकारके होते हैं। इसिलिये उन स्थितिकाण्डकोमे प्राप्त स्थितिविकल्पोंके साथ नाना जीवोंकी अपेचा सन्निकप बन जाता है। किन्तु अन्तिम जघन्य स्थितिकाण्डक एक समान होता है। अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्व ं सम्बन्धी अन्तिम (स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिम जितने निषेक सम्भव हैं उतने स्थितिविकस्य सन्निकर्पमे नहीं प्राप्त होते. क्योंकि उनका पतन क्रमसे न होवर एक समयमे हो जाता है। इस पर एक स्थितिकाण्डकमे प्राप्त होनेवालीं फालियाँ उत्कीरणकालकी सार्थकता त्रीर समुद्घातको प्राप्त हुए केवलीके स्थितिकाण्डके साथ आनेवाला व्यभिचारका निराकरण इनका विचार किया गया है। पहली और दृसरी बातका विचार करते हुए बतलाया है कि एक स्थितिकाण्डकमें एक फालि न होकर अनेक फालियाँ होती है। प्रमाण रूपमे 'एवरि चरिमुठ्वेल्त्रणकंडयचरिमफालीए ऊणा' यही सत्र उपस्थित किया गया है। इस सृत्रमं फालिके साथ चरम विशेषण श्राया है। इससे प्रतीत होता है कि एक स्थितिकाण्डकमें अनेक फालियाँ होती है। अन्यथा फालिका चरम विशेषण देनेकी आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि एकमें चरम और अचरम यह व्यवहार नहीं बन सकता है। तो फिर वे कितनी होती है। इस शंकाके होने पर बतलाया है कि स्थितिकाण्डकका जितना े उत्कीरण काल होता है उननी फालियाँ होती हैं। इसका यह तात्पर्य है कि उत्कीरण कालके एक-एक समयमें एक-एक फालिक पतन होता है। यहाँ फालि शब्द फॉक इस अर्थमे आया है। जैसे लडकीके चीरने पर उसमे अनेक फलक या स्तर निकलते हैं उसी प्रकार स्थितिकाण्डकका पतन होते समय वियक्तित स्थितिकाण्डकक ऋनेक स्तर या फलक हो जाते हैं । उनमेसे एक-एक फलकका एक-एक समयमे पतन होता है। इस प्रकार इन फालियों के पतनमे कितना समय लगता है उस सब कालको उत्कीरणकाल कहते हैं । उत्कीरणका ऋर्य उकीरना है और इसमे जो काल लगता है उसे उत्कीरणुकाल कहते हैं । भावार्थ यह है कि एक स्थितिकाण्डकके पतनका काल अन्तर्सु हुर्त बतलाया है। इसलियं उत्कीरण कालका प्रमाण भी इतना ही होता है। और एक स्थितिकाण्डकमे कालियाँ भी उक्तप्रमाण ही होनी है । पुरन्तु प्रत्येक फालि स्थितिकाण्डकके आयामप्रमाण होती है । और तभी उमकी फालि यह संज्ञा सार्थक हैं। तीसरी वातका विचार करते हुए बतलाया है कि अकेवलियोकं साथ केविलयांकी समानता करना ठीक नहीं। मतलव यह है कि संसारी जनोंको एक-एक स्थितिकाण्डकके पतनमे अन्तर्भृहते काल लगता है और समुद्धानगन केवलीको एक-एक समय ही लगता है। अब जब कि सब स्थितिकाण्डकोका काल अन्तर्सुहूर्त मान लिया जाय तो यह बात केवलियोंके स्थितिकाण्डकमें घटित नहीं होती, इसलिय व्यभिचार दोप आता है। बस इसी शंकाका समाधान करते हुए यह बनलाया है कि केबलियोंकी छदास्थ जनोंके साथ समानता नहीं है। श्रर्थात् एक-एक स्थितिकाण्डकका काल जो अन्तर्मुहूर्त वतलाया है वह छद्मस्थ जनोंकी श्रपेचा बतलाया है समुद्घातगत केवलियोकी अपेचा नहीं, इसलिये कोई दीप नहीं प्राप्त होता। समुद्र्यातगत केवलियोंके तो परिणामोकी विशुद्धिके कारण एक-एक समयमें एक-एक स्थिति काण्डकका पतन हो जाता है। इस प्रकार इनने कथनका यह तात्पर्य है कि सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके निपंकोङा एक साथ पतन होता है इसलिये उतने निपेक सन्निकर्पको नहीं प्राप्त होते।

# अ सोलसकसायाणं हिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुकसा ?

ः ७६८ सुगममेदं ।

#### 🛞 णियमा ऋणुकस्सा ।

६ ७६६, कुदो ? कसायाणमुक्कस्सिटिद्वंधकाले इत्थिवेदस्स वंधाभावादो । वधभावेण अपिडहमास्सित्थिवेदस्स सोलसकमायाणमुक्कम्सिटिद्वंधक ले उक्कस्स-हिटीए संभवाभावादो ।

अ उक्कस्सादो अगुक्कस्मा समजणमादिं कादृण जाव आवित्यृणा ति ।

७७० तं जहा—पिंडहग्गपढमसमए वंधावालियादिकंतकसायिहिदीए इत्थिवेदिम्म संकंताए इत्थिवेदस्स उक्कस्सिंहिदिविहत्ती होदि । तक्काले कसायिहिदो
सगुक्कस्सं पेक्लिद्ग समयूणाः चिर्मसमयिम्म वंधुक्कस्सिंहिदीए गलिदेगसमयत्तादो ।
एवं विदियसमए दुसमयूणा तदियसमए तिममयूणा एवमाविष्यमेत्तसमएसु कसायुक्कस्सहिदी आविष्यूणा होदि । इत्थिवेदिहिदी पुण उक्कम्सा चेव, चिर्मसमयिम्म
बद्धकसायुक्कम्सिंहिदीए वंधाविलियादिक्कंताए इत्थिवेदस्सुविर संकंतिद्यणादो ।
आविष्यादो उविर कसायुक्कस्सिंहिदी जणा किण्ण कीरइ ? ण, उविर इत्थिवेदुक्कस्स-

क्ष स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक समय सोलह कपायोंकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ७६= यह सूत्र सुगम है।

#### नियमसे अनुत्कृष्ट होती है।

७६६ क्योंकि कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धक समय स्त्रीवेदका बन्ध नहीं होता है। तथा बन्धरूपसे पतद्महपनेको नहीं प्राप्त हुए स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति सोलह उपायोकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके समय संसव नहीं है।

\* वह अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उन्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा एक समय कम से लेकर एक आवलिकम उन्कृष्ट स्थिति तक होती है।

§ ७७० इसका खुलासा इस पकार हे—प्रतिभन्नकालके प्रथम समयमे बन्धाविलसे रहित कषायकी स्थितिक स्त्रीवेदमें संकान्त होने पर स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। उस समय कषायकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक सभय कम होती है, क्योंकि यहां पर अन्तिम समयमें बंधी हुई कषायकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय गल गया है। इसी प्रकार दूसरे समयमें दो समय कम तीसरे समयमें तीन समय कम तथा इसी प्रकार आविलिश्माण समयोंके ब्यतीत होने पर कपायकी उत्कृष्ट स्थिति एक आविलिश्म होती है परन्तु यहांतक स्त्रीवेदकी स्थिति उत्कृष्ट ही रहती है, क्योंकि अन्तिम समयमें वंधी हुई कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धाविलके व्यतीत होने पर स्त्रीवेदमें संक्रमण देखा जाता है।

शंका-कपायकी उत्छप्ट स्थिति एक आविति काल तक ही कम क्यों होती है इससे और पर

## हिदीए अमंभवादो ।

अपुरिसवेदस्स दिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुकस्सा ?७०१ मृगममेटं ।

**%** णियमा अणुक्कस्सा ।

१ ७७२. कुदो ? इत्थिवेदवंधकाले सेसवेदाणं वंधाभावादो । किमिदि णित्थि वंधो ! साहावियादो । ण च सहावो पिडयवायणाजाग्गो, अन्ववत्थावत्तीदो । ण च वंधेण विणा पुरिसवेदो कसायिद्दिदं पिडच्छिदि, अपिडिग्गहत्तादो ।

 अवकस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तृणमादिं कादृण जाव अंतो-कोझाकोडि नि ।

७७३ तं जहा—कसायाणग्रुकस्सिटिदि पिडवंधिय पिडहरगसमए विज्ञानिक पाणपुरिसवेदस्सुविर वंधाविष्ठियादीदकसायिदिदीए संकंताए पुरिसवेदस्सुकस्सिटिदिविहत्ती होदि । पुणो सन्वजहण्णेणंतोग्रहूनोग्रुक्कस्सिनिक्तं गंतृण कसायुक्कस्सिटिदि

श्रिधिक कम क्यों नहीं की जाती है।

समाधान—नहीं, क्योंकि आविलिसे अधिक कपायकी स्थितिके कम होने पर स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका पाया जाना संभव नहीं है।

\* स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय पुरुषवेदकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

९ ७७१. यह सूत्र सुगम है।

\* नियमसे अनत्कृष्ट होती है।

§ ७७२. क्योंकि स्त्रीवेदके बन्धके समय शेष वेदोंका बन्ध नहीं होता है।

श्रांका-स्त्रीवेदके बन्धके समय शेप वेदोंका बन्ध क्यों नहीं होता है ?

समाधान—एसा स्वभाव ही है कि स्त्रांबेदके बन्धके समय शेप बेदोका बन्ध नहीं होता है श्रोर स्वभावमे शंका नहीं की जा सकती, श्रन्थथा श्रव्यवस्थाकी श्रापित प्राप्त होती है। श्रोर बन्धके बिना पुरुपवेद कपायकी स्थितिको प्राप्त नहीं होता, क्यों कि उस समय वह श्रपतद्ग्रहरूप है। तात्पर्य यह है कि जब तक पुरुपवेदका बन्ध न हो तब तक उसमें कपायकी स्थितिका संक्रमण नहीं होता।

\* वह अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेत्ता अन्तर्गु हूर्न कमसे लकर अन्तः कोड़ाकोड़ी तक होती है।

§ ७७३. इसका खुलासा इस प्रकार है—कषायकी उत्कृष्ट स्थितिको बांध कर प्रतिभग्नकालके पहले समयमें बंधनेवाले पुरुषवेदमें बन्धावितसे रहित कपायकी स्थितिके संक्रमण होने पर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिबिभक्ति होती है। पुनः सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा उत्कृष्ट संक्लेशका प्राप्त होकर स्रोर कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभग्न कालके प्रथम समयमे

बंधिय पिंडहग्गसमए बज्भमाणित्थिवेदिम बंधाविलयादिक्कंतकसायिद्दिणि संकंताए इत्थिवेदिद्दी उक्कस्सा होदि । तक्काले पुरिसवेदिद्दी सगुक्कस्सं पेक्खिद्ण अंतो हु- हुन्न णाः पुरिस-णवुं सयवेद जहण्णबंधगद्धाणं समूहस्स अंतो मुहुन्त वलंभादो । पुणो कसायाणं समयू गुक्कस्सिद्दि वंधिय पिंडहग्गसमए बज्भमाणपुरिसवेदिम वंधाविलया- दीदकसायुक्कस्सिद्दि संकंताए पुव्विक्लदिदिं पेक्खिद्ण पुरिसवेदिद्दी संपिंह समयूणा होदि । पुणो अविद्धिमंतो ग्रहुन्तमिच्छय उक्कस्ससंकिलेसं गंतूण कसायाण हु- क्किस्सिद्दि वंधिय पिंडहग्गसमए बज्भमाणित्थिवेदिम वंधाविलयादीदिकसायिद्दिण संकंताए इत्थिवेदस्स उक्कस्सिद्दि होदि । तक्काले पुरिसवेदिद्दी सगुक्कस्सिद्दि पेक्खिद्ण समयाहियअंतो मुहुन णा । एवं जाणिदृण श्रोदारेयव्वं जाव णिव्वियप्य- अंतोको डाको हि ति ।

- \* हस्स-रदीणं दिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ?
- ६ ७७४ सुगममेदं ।
- 😘 उक्कसा वा अशुक्कस्सा वा ।

§ ७७५ जदि इत्थिवेद वज्भमाणे हस्स-रदीणं वंघो अत्थि तो इत्थिवेदुक्कस्सहिदीए विहत्तिओ एदासिं पि उक्कस्सिहिदीए; तिण्हं पयडीणमुत्ररि श्रक्कमेण संकंतीए ।

व्ययनेवाले स्त्रीवेदमे बन्धाविलसे रहित कपायकी स्थितिके संक्रमण करने पर स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। इस समय पुरुपवेदकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिका देखते हुए अन्तर्मुहूर्त कम होती है, क्योंकि पुरुपवेद और नपुंसकवेदके जवन्य बन्धककालोंका समूह अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है। पुनः कपायोकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर प्रतिभमकालके पहले समयमें वंधनेवाले पुरुपवेदमे बन्धाविलसे रहित कपायकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिके संक्रान्त होने पर पुरुपवेदकी पहलेकी स्थितिको देखते हुए इस समयकी स्थिति एक समय कम होती है। पुनः अवस्थित अन्तर्मुहूर्त कालतक ठहर कर और उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तथा कपायकी उत्कृष्ट स्थितिको बन्ध करके प्रतिभग्न कालके प्रथम समयमें वँधनेवाले स्त्रीवेदमें बन्धाविलसे रहित कपायकी स्थितिके संक्रान्त होने पर स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति होती है। तथा उस समय पुरुपवेदकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक समय अधिक अन्तर्मुहूर्त कम होती है। इसी प्रकार जान कर निर्विकरण अन्तरकोड़ाकोड़ी स्थितिके प्राप्त होनेतक पुरुपवेदकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये।

⊕ स्त्रीवेद्की उत्कृष्ट स्थितिके समय हास्य श्रीर रितको स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या श्रवत्कृष्ट ?

§ ७७४. यह सूत्र मुगम है ।

🖲 उत्कृष्ट होती है और अनुत्कृष्ट होती है।

 अध्णहा अणुक्कस्माः बंधाभावेण अपिडागहाणं हस्स-रदीणमुविर कसायुक्कस्सिहिदीए संक्रमाभावादो ।

**अ उक्तस्सादो अ**गुक्कस्सा समयूणमादि कादृण जाव अंतोकोडाकोडि ति?

ं ७७६ तं जहा— अंतरमृहुत्तकालमाविलयमेत्तकालं वा कसायुक्षस्सिहिदिं विधिय पहिहम्मासम् वज्ञभमाणित्यिवेद्-हम्म-रहीसु वंधाविलयादिक्कंतकसायिहिदीए संकंताए तिण्हं पि उक्कम्मिहिदिविहत्ती होदि । पुणो तद्णंतर उविस्मिसम् हस्स-रिदिवंधवोच्छेददुवारेण अरिद-सोगेमु वंधमागदेमु इत्थिवेदस्तुक्कम्सिहिदीए सह हस्स-रदीणमणुक्कम्सिहिदी होदि; अप्पणो उक्कम्सिहिदीदो अधिहिदिगलणेण गलिदेगसम-यत्तादो । एवं हस्स-रिदिहिदीए जाव समयुणाविलयमेत्तकालो गलिद तावित्थि-वेदस्तुक्कम्सिहिदिविहत्ती वेव । उविर अणुक्कम्सा होदि: तत्थ वंधाविलयादीदकसायु-क्कम्सिहिदिसंकंतीए अभावादो ।

् ७७७ तदो अण्णेण जीवेण एगममयं समयूणावित्रयूणकमायउक्कस्सिहिदिं वंधिय समयूणावित्तयमेत्तकात्तमुक्कस्सिहिदिं वंधिय पिडहरगसमए इत्थिवेदेण सह वज्भमाणहम्म-रदीमु आवित्यादिक्कंतकमायहिदीए मंकामिदाए इत्थिवेद-हम्म-रदीणं

अन्यथा अनुतकृष्ट हाती है, क्योंकि बन्ध नहीं होनेमें अपनतृबहको श्राप्त हुई हाम्य और रितमें कृपायकी उन्कृष्ट स्थितिका संक्रमण नहीं होता है।

क वह अनुन्कृष्ट स्थिति अपनी उन्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा एक समय क्रमते लेकर
 अन्तःकोड्राकोड्री सागर तक होती है ।

§ ७७६ खुलासा इस प्रकार है— प्रन्तमीहर्न काल तक या एक आविल कालतक कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभग्न वालके पहले समयमें बंधनेवाले स्वीवेद हास्य और रितमें बन्धाविलेसे रहित कपायकी स्थितिके संकान्त होने पर तीनो ही प्रकृतियाकी उन्कृष्ट स्थिति होती हैं। पुनः तदनन्तर अगले समयमें हास्य और रितकी बन्धव्युच्छिति होकर अरित और शोकके बन्धको प्राप्त होने पर स्त्रीवेदकी उन्कृष्ट स्थितिके साथ हास्य और रितकी अनुत्रृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि तब इन प्रकृतियोंकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे अधःस्थितिगलनाके द्वारा एक समय गल गया है। इस प्रकार जब तक हास्य और रितकी स्थितिमेंसे एक समय कम एक आविल प्रमाण काल जीगां होता है तब तक स्त्रीवेदकी उन्कृष्ट स्थितिमेंसे एक समय कम एक आविल प्रमाण काल जीगां होता है तब तक स्त्रीवेदकी उन्कृष्ट स्थितियोंकि होती है, क्योंकि एक समय कम एक आविलके बाद स्त्रीवेदमें बन्धाविलमें रहित कपायकी उन्कृष्ट स्थितिका संक्रमण नहीं पाया जाता है। अर्थात् तब स्त्रीवेदमें बन्धाविलसे रहित कपायकी उन्कृष्ट स्थितिमें उत्तरांत्र कम स्थितिका संक्रमण होता है।

§ ७७७ तदनन्तर किसी एक जीवने एक समय तक एक समयसे न्यून एक आवित कम कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके तदनन्तर एक समय एक आवित प्रमाण काल तक कपाय की उत्कृष्ट स्थितिको बाँध कर प्रतिभग्नकालके पहले समयमें स्त्रीवेदके साथ बंधनेवाली हास्य और रितमें बन्धावित्से रहित कपायकी स्थितिका संक्रमण किया तब उसके स्त्रीवेद, हास्य और रितमें बन्धावित्से रहित कपायकी स्थितिका संक्रमण किया तब उसके स्त्रीवेद, हास्य और रित

हिदी सगुनकस्सिहिदिं पेक्सिवर्ण समयूणाविजयाण जणा होदि । विदियसमण् हस्स-रिद्वंभवोच्छेददुवारेण अर्राद-सोगेस वंभमागदेस इत्थिवेदस्युनकस्सिहिदिविहत्ती होदि; बंभाविजयादिक्कंतकसायुक्कस्सिहिदीण् तित्थित्यिवेद्म्मि संकंतिदंसणादो । हस्स-रिद्-हिदी पुण सगुनकस्सिहिदिं पेक्सिवर्ण अवित्यिय्णं; वंभाभावादो । एवं नाव दुसम-यूणावित्यमेत्तमद्धाणस्विरि गच्छिदि तावित्थिवेद्दिदी उक्कस्सा चेत्र । हस्स-रिद्गणं पुण जाव तित्त्यमद्धाणं गच्छिदि ताव सगुनकस्सिहिदी दुसमयूणा दोस्रावित्यूणां होदि । वंभावित्यादीदकसायुक्कम्यिदिग् आविजयादि जणा होदि ।

९७७= तदो अण्णो जीवो दुमसयुणदोत्र्याऽलियाहि ऊणियं कमायुक्स्य-हिदिं वंधिय पूर्णो समयुणावित्यमेत्तकालमुक्सम्महिदं वंधिय पिडरमगमभए इत्थिवेद-हस्स-रदीस वज्भागाणियास बंधावित्यादीद्कमायहिदि संकामिय तिण्हं पि अणुकस्स-हिदिविहत्तिस्रो जादो । तदो उवरिमसमयप्पहृडि हस्स-र्राद्वंथवोच्छेदुरवारेण अत्थिवेदेण सह अरदि-सोगे वंधाविय पुष्वं व औटारेट्व्यं । एवं पुर्णो पुणो एदेण विहाणेण श्रोदारेदण णेदच्चं जाव अंनोकोडाकोडि चि । णवि जं जं दिदिं णिरुं भिदमिच्छिद तत्तो आवल्यिबभहियमेगसमयं वंधाविय पुणो समयुणावल्यिमेत्तकालं कसायाणमुक्तस्स-हिदिं वंधिय पडिहम्मसम् वज्भसाणित्थिवेद्-हम्स-म्दीसु पुट्यणिरुद्धहिदीए आवित्-की स्थिति अपनी उन्हरूट स्थितिको देखते हुए एक समयसे न्यन एक आविलिकाल प्रमाण कम होती है। तथा दूसरे समयमें हास्य और रितकी बन्ध व्यक्तिके द्वारा अरित और ज्ञांकके बन्धको प्राप्त होने पर स्त्रीवेदकी उत्हृष्ट स्थिति विभाग है। क्योंकि वन्याविलसे रहित क्यायकी उत्कृष्ट स्थितिका वहाँ स्त्रीवंदमं संक्रमण देखा जाता है। पर हास्य और रित की स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक आवित कम होती है, क्याकि उस समय उनका वैध नहीं है। इस प्रकार जब तक दो समय कम अविशिष्टमाण काल आगे जाते है तब तक स्त्रीबेदकी स्थिति जन्क्र**ा**प्ट ही होती है। पर हास्य ऋौर रित्या उत्तरा काल आगे जाने तक उनकी उन्कृष्ट स्थिति दों समयसे न्यन दो घावित कप होती है।

\$ ७ उर्दे पुनः अन्य जीवने एक समय तक दो समय कम दो आविजयों में न्यून कपायों की उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके पुनः एक समय कम एक आविज काल तक उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभग्न कालके पहले समयमें वैचनेवाले स्वीवद, हाम्य और रितमे बन्धाविल्मी रहित कपायकी स्थितिका संक्रमण किया तब वह तीनों ही प्रकृतियों की अनुकृष्ट स्थितिविभक्तिका धारक हुआ। तदनन्तर इसके आगेके समयमें लेकर हास्य और रितकी बन्धव्युक्ति वहारा स्त्रीवेदके साथ अरित और कोकका बन्ध कराके पहले के समान हास्य और रितकी स्थितिका घटाते जाना चाहिये। इस प्रकार पुनः पुनः इस विधिरों अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिको घटाते जाना चाहिये। इस प्रकार पुनः पुनः इस विधिरों अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिको प्रहात होने तक हास्य और रितकी स्थितिको घटाते हुए लेजाना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जिस जिस स्थितिको रोकना चाही उससे एक आविज अधिक कपायकी स्थितिक। एक समय तक बन्ध कराके पुनः एक समय कम एक आविज काल तक कपायकी उत्कृष्ट स्थितिक। वस्य कराके प्रतिभन्न कालके पहले समयमें वंधनेवाले स्त्रीवेद, हास्य और रितमें पहले क्री हुई स्थितिक एक आविज के पहले समयमें वंधनेवाले स्त्रीवेद, हास्य और रितमें पहले क्री हुई स्थितिक एक आविजिके

त्रा प्रती 'त्रावलिय्णा' इति स्थाने 'विहत्तिन्रो' इति पाठः ।

यादीदाए संकंताए तिण्हं अणुक्रस्सिटिदिविहत्ती होदि । तदो उवरिमसमए हस्स-रिदंधे फिट्टे अरदि-सोन्गित्थिवेदाणग्रुक्रस्सिटिदिविहत्ती होदि । तत्काले हस्स-रदीणं पुव्व-णिरुद्धिटिदी समयुणा होदि ।

- अश्वरिदं सोगाणं हिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ऽ ७७६ सगममेदं ।
- 🕸 उद्धरसा वा अणुकस्सा वा।
- े ७८० इत्थिवेदं बज्भमाणे जिंद अरिद-सोगा बंज्भिति तो इत्थिवेदुकस्स-हिंदीए सह अरिद-सोगाण पि उक्तस्सिहिदिविह्ती होदिः; बंधावित्यादीदकसायुक्तस्स-हिंदीए अक्तमेण तिण्हमुविर संकितीए । अण्णहा अणुक्तस्साः; पिंडहम्गावित्याए अरिद-मोगाणं बंधाभावेण णहपिंडहम्गभावाणं कसायुक्कस्सिहिदीए आगमाभावादो ।
- % उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि कादृण जाव वीससागरो-वमकोडाकोडीओ पलिदोवमस्स असंखेजदिभागेणणाओ ति ।
- ऽ ७८१ , एदासि पयडीणं समयूणुकस्सिद्धित्र्यादिद्विणं सिष्णियासो बुच्चदे । तं जहा—त्रावित्तयमेत्तकालं कसायाणमुकस्मिद्धिदं वंधिय पडिहग्गसमए बङ्फमा-णित्थिवेद-त्र्यरिद-सोगेसु वंधावित्यादिक्कंतकसायदिदीए संकंताए तिण्हं पि उकस्स-

वाद संकान्त होने पर तीनोंकी अनुत्कृष्ट स्थिति विभक्ति होती है तदनन्तर इसके आगेके समयमे हास्य और रितकी वन्धव्युन्छिन्ति हो जानेपर अरित, शोक और स्नीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। तथा उस ममय हास्य और रितकी पहले रुकी हुई स्थिति एक समय कम होती है!

अ. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय अरित और शोककी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुन्कृष्ट ?

§ ७४: यह सृत्र सुगम हैं।

अ उन्क्रप्ट होती है और अनुत्कप्ट होती है ।

§ ७८० स्वितंदके बन्धके समय यदि अर्रात और शोकका बन्य होता है तो स्वितंदकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ अर्रात और शोककी भी उत्कृष्ट स्थिति विभक्ति होती है, क्योंकि बन्धावित से रहित कपायकी उन्कृष्ट स्थितिका एक साथ तीनोंमें संक्रमण हुआ है। अन्यथा अर्रात और शोक की स्थिति अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि प्रतिभग्न कालकी एक आवितिके भीतर बन्ध नहीं होनेसे पतद्यहपनेसे रहित अर्रात और शोकमें कपायकी उत्कृष्ट स्थितिक। संक्रमण नहीं होता।

क वह अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेत्ता एक समय कमसे लेकर पन्य का असंख्यातवाँ भाग कम वीस कोडाकोडी सागर तक होती है।

§ ७८१ अब इन प्रकृतियोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर शेप स्थितियोंका सिन्निकर्प वहते हैं। जो इस प्रकार है—एक आवालिकाल तक कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभान कालके प्रथम समयमे वंधनेवाली स्त्रीवेद, अरित और शोक प्रकृतियोंमें बंधाविल से रहित कपायकी स्थितिके संकान्त होनेपर तीनोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। तदनन्तर

हिदिविहत्ती होदि । तदो उवरिमसमए अरिद-सोगबंधवोच्छेददुवारेण हस्स-रदीसु बंधमागयासु अरिद-सोगुक्कस्मिहिदी समयूणा होदि; पिडग्गहत्ताभावेण तत्थ कसाय-हिदीए संकमाभावादो । एवमुविर वि वत्तव्वं जाव समयूणावित्याए ऊणमुक्कस्स-हिदी जादा ति । सेसुविरमपरूवणा जहा हस्स रदीणमित्थिवेदुकस्सिहिदिसंबंधाणं कदा तहा कायव्वा । णविर एत्थ समयूणाबाहाकंडएण्णवीससागरोवमकोडाकोडीत्रो कसायुक्कस्सिहिदिबंधेण सह अरिद-मोगे वंधाविय पिडिदग्समए अरिद-सोगवंध-वोच्छेदं काद्ण आवित्यमेत्तिहिदीत्रो गालिय अंतिमिवयणो वत्तव्वो । कुदो ? कसायुक्कस्सिहिदीए विक्रमाणाए णवुंसयवेद-अरिद-सोग-भय-दुगुंछाणं णियमेण तत्थ वंधे संते सगुक्कस्सिहिदीदो समयूणाबाहाकंडएण्णस्सेव हिदिबंधस्सुवलंभादो ।

## 🛞 एवं णबुं सयवेदस्स ।

्र ७८२ जहा अरदि-सोगाणं इत्थिवेदुक्कम्सिटिदिपडिवद्धाणं परूवणा कदा तहा णवुंसयवेदस्स वि परूवणा कायव्वाः समयूणमादिं काद्ण जाव वीसंसागरोवम-कोडाकोडीत्रो पलिदो० त्र्यसंखे०भागेण ऊलात्रो त्ति एदेहि सण्णियासवियप्पेहि अविसंसादो । एत्थतणविसेसपद्प्पायणदृष्ठुत्तरसुत्तं भणदि—

#### 🕸 एवरि णियमा श्रणुक्तस्सा।

श्रागेक समयम अर्ति ओर शोककी वन्धुन्छिति होकर हास्य और रितक वन्धको प्राप्त होनेपर अरित और शोककी उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम होती है, क्योंकि उस समय पतद्महपना नहीं रहनेसे उनमें कपायकी स्थितिका संक्रमण नहीं होता है। इसी प्रकार श्रागे भी एक समयकम एक श्रावित्तसे न्यून उत्कृष्ट स्थितिक प्राप्त होने तक इसी प्रकार कथन करना चाहिये। शेप श्रागंकी प्ररूपणा, जिस प्रकार स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिसे सम्बन्ध रखनेवाली हास्य श्रीर रितकी की है उस प्रकार करनी चाहिये। किन्तु यहां पर कपायकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके साथ अर्रात श्रीर शोकका एक समय कम श्रावाधाकाण्डकसे न्यून वीस कोड़ाकाड़ी सागर स्थितिप्रमाण बन्ध करांक तथा प्रतिभन्न कालके प्रथम समयमें अरित श्रीर शोककी वन्धव्यित्वित्त करांके श्रीर एक श्रावित्त प्रमाण स्थितियोंका गलाकर श्रीनिम विकल्प कहना चाहिये, क्योंकि कपायकी उत्कृष्ट स्थितिक बम्धके समय नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्ध होता है पर वह स्थितिबन्ध श्रपनी उत्कृष्ट स्थितिसे एक समय कम श्रावाधाकाण्डकसे न्यून नक ही होता है।

#### 🖷 इसी प्रकार नपुंसकवेदकी परूपणा करनी चाहिए ।

§ ७-२ जिस प्रकार स्त्रीवदकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ त्रार्गत त्रीर शोककी प्रकृपणा की हैं उसी प्रकार नपुंसकवदकी भी प्रकृपणा करनी चाहिये, क्योंकि एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्योपमके असंख्यातवें भाग कम बीस कोड़ाकाड़ी सागर प्रमाण स्थिति तक होनेवाले सिन्नकर्षके भेदोंकी अपेचा अर्थत और शोकके कथनसे नपुंसकवदके कथनमे कोई भेद नहीं हैं। अब इस विषय में विशेषता बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

\* किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय नपुंसकवेदकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है।

७८३. हुदो ? इत्थिवदेण सह णवुं सयवेदम्म वंधाभावादो । तेण पिडहगा-पढमसगए बङ्भमाणिन्थिवदिम्म वंधावित्तयादीदकमायुक्कम्मिडिदीए मंकंताए इत्थि-वंदम्म उक्कम्मिडिदी होदि णवुं सयवेदस्म पुण णियमेण समयूणुक्कम्सिडिदी । एतो उविर जाव ब्रावित्यमेत्तद्धाणं गच्छिदि तािवित्थिवदो उक्कम्सो चेव । णवि णवुं सयवेदु-क्कम्सिडिदी आवित्रयुणा होदि । एवमुविर अर्दि-सोगोयरणविहाणं बुद्धीए काऊण ब्रोदारेयन्वं।

# अय-दुगुं ञ्चाणं दिदिविहत्ती किसुक्कस्सा अणुक्कस्सा १७८४ सुगमं।

#### 🏶 णियमा उक्कस्सा ।

७८५ जिम्म कालं इन्धिवेदो वज्मादि तिम्म कालं भय-दुर्गुद्धाणं विधो णियमा ऋत्थिः, धुवर्विश्वनादी । तेणिन्धिवेदम्म उक्कम्सिटिदीए सर्तःए भय-दुर्गुद्धाश्रो हिदि पहुरुच णियमा उक्कस्माओं ति भणिदं ।

## 🏶 जहा इन्धिवेदेण तहा सेसेहि कम्मेहि।

. ७८६ जहा इत्यिवेदुवकम्महिदीए णिरुद्धाए संसद्भमेहि सण्णियामी कदो तहा हम्म-रदि-पुण्सवेदाणमुक्कम्महिदिणिरुंभणं कार्ण मण्णियामो वत्तव्वी

ु अन्दर् क्यांकि खांग्रंके साथ नपुंसकत्यका प्रस्थ नहीं होना है। अनः पंतिमध्त कालके प्रथम समयमे वंबनेवाल खांब्यमे पर अवस्ति ते उत्तर हपाएकी उन्हर्ट स्थितिके सकान्त होने पर स्त्रीवदकी उन्हर्ट स्थिति होता है परस्तु उस समय नपुंसकवेदकी नियममे एक समय कम उन्हर्ट स्थिति होती है। इसी आगे एक आपितकात हपनीत होने एक स्त्रीवेद उन्हर्ट ही रहना है परन्तु वपुंस लेदकी उन्हर्ट स्थिति उस उसमा एक आपित कम होती है। इसी प्रकार आगे आरित और शोककी स्थितिके पटानेकी व्यापका बुद्धिये विचार कर उसी प्रकार नपुंसक्षेदकी स्थितिको घटाना चाहिये।

क्ष स्त्रीवंदकी उत्क्रष्ट स्थितिक समय मय और जुगुप्साकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

६ ७५४. <sup>२</sup>०० सूत्र सुगम ५ ।

#### **\* नियमस उन्कृष्ट होती है ।**

६ ७८५ । जस कालमे म्बादद ता बन्ध होता है उस कालमे भय और जुगुप्साका बन्ध तियमसे होता है, क्यांकि ये दाला प्रकृतियां धुवबन्धिनी हैं। खनः स्त्रीवेदकी उत्कृष्टास्थितिके होने पर भय और जुगुप्साकी (स्थात नियमसे उत्कृष्ट होती है। यह इस सूत्रका तालय है।

अ जिस मकार स्त्रीवंदके साथ सिन्नकपेके विकल्प कहे हैं उसी प्रकार शेष कर्माके साथ जानने चाहिये।

§ ७८६ जिस प्रकार स्त्रीवेदकी उत्हार स्थितिके सद्भावमे शेप कर्मीके साथ सन्निकर्प कहा है उसी प्रकार हास्य, रित और पुरुपवेदकी उत्हार स्थितका सद्भाव करके सन्निकर्प कहना

#### विसेसाभावादो ।

#### 🕸 एवरि विसेसो जाणिदव्वो ।

§ ७८७ तत्थ पुरिसवेदणिरं भणं काऊण भण्णमाणे णित्थ विसेसो; सन्वकम्मेहि सह सिण्णकासिङ्जमाणे इत्थिवेदसिण्णिकासेण समाणत्तादो । हस्स-रिद्यिण्हं भणं काऊण भण्णमाणे मिन्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिन्छत्त-सोलसकसाय-भय-दुगुंझाणं सिण्ण्यासेष्ठ णित्थ विसेसो; इत्थिवेदुकस्सिहिदिसिण्ण्यासेण समाणत्तादो । इत्थि-पुरिसाणं सिण्ण्यासे अत्थि विसेसो, तं वत्तइस्सासो । तं जहा—हस्स-रदीणमुकस्सिहिदीए संतीए इत्थि-पुरिसवेदाणं हिदी सिया उक्तस्सा; कसायाणमुक्कस्सिहिदीए पिडिन्छदाए चदुण्हं पि कम्माणमुक्कस्सिहिदिदंसणादो । सिया अणुक्कस्सा; पिडहम्मसमए हस्स-रदीमु बज्भमाणियामु इत्थि-पुरिसवेदाणं वंधाभावे संते उक्तस्सिहिदीए अभावादो । जिद अणुक्कस्सा तो अंतोमुहुत्णमादि काद्ण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति । कुदो सम-ऊणुक्कस्सिहिदिआदिवियण्पो ण लब्भदे ? हस्स-रदीणं व इत्थि-पुरिसवेदाणमेगसमएण पयिडबंधस्स वोच्छेदाभावादो ।

् ७८८. एदस्स णयणिरुद्धाए कमो वृच्चदे । तं जहा—कसायाणमुकस्सिटिदं चाहिये. क्योंकि इनके कथनमे कोई विशेषता नहीं है ।

#### अक्ष किन्तु कुछ विशेष जानना चाहिये।

§ ७=७ उनमेंसे पुरुपवेदका रांककर कथन करने पर कांई विशेषना नहीं है, क्योंकि सब कर्मी के साथ पुरुपवेदका सिन्नक के करने पर स्त्रीवेदके सिन्निक के समान है। हास्य और रितको रांक कर कथन करने पर मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यक्त्य, सोलह कपाय, भय और जुगुप्सांके सिन्निकाई विशेषना नहीं है, क्योंकि हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ उक्त ब्रुह्मियोंकी स्थितिका होनेवाला सिन्नकर्ष स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ होनेवाले सिन्नकष्ठे समान है। पर स्त्रीवेद और पुरुपवेदके सिन्नकर्ष के समान है। पर स्त्रीवेद और पुरुपवेदके सिन्नकर्ष के इक्ष्य विशेषता है। आगे उसीको बताते हैं। जो इस बकार है—हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थिति कदाचित् उत्कृष्ट होती है, क्योंकि कपायकी उत्कृष्ट स्थितिके इनमे संक्रमित हो जाने पर चारों हीं कर्माकी उत्कृष्ट स्थित देखी जानी है। कदाचित अनुतकृष्ट होती है, क्योंकि प्रतिभन्न कालके प्रथम समयमें हास्य और रितके वन्ध के समय स्त्रीवेद और पुरुपवेदका बन्ध नहीं होने पर उनकी उत्कृष्ट स्थिति नहीं होती है। यदि हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थितिके समय स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी अनुतकृष्ट स्थिति होती है। विद हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थितिके समय स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी अनुतकृष्ट स्थिति होती है तो वह अन्तर्मुह्तं कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तः कोड़ाकोड़ी तक होती है।

शंका-एक समय कम उन्कृष्ट स्थिति आदि विकल्प क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान—क्योकि जिस प्रकार हास्य और रितका एक समयतक बन्ध होकर अनन्तर उसकी ब्युच्छिति हो जाती है, उस प्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदका एक समयतक बन्ध होकर उसकी ब्युच्छित्ति नहीं होती।

§ ७८८. अब नयकी अपेचा इसके क्रमका कथन करते हैं, जो इस प्रकार है—कपायोंकी

बंधिय पिडहरगसमए वज्भमाणिन्धि-पुरिसवेदेसु वंधावित्यादिक्वंतकसायुक्कस्सिहिदीए संकंताए इत्थि-पुरिसवेदाणसुक्कस्सिहिदिं काद्ण पुणो अंतोस्रहुत्तं णवुं सयवेद-अरदि-सोगेहि सह कमायुक्कस्सिहिदिं बंधिय पिडहरगसमए अरदि-सोगपयिडवंधवोच्छेद-दुवारेण वज्भमाणहस्म-रदीसु वंधावित्यादिक्वंतकसायिहिदीए संकंताए हस्स-रदीण-मुक्कस्सिहिदिविहत्ती होदि । तक्काले इत्थि-पुरिसवेदिहिदी सगुक्कस्सिहिदिं पेक्खिद्ण अंतोमुहुत्तूणा । संपिष्ठ एदमंतोमुहुत्तूणमादिं काद्ण णेदच्वं जाव धुविहिदि ति एसो विसेसो ति ।

इ०८६ के वि आइरिया भणंति—एदासु वि पयडीसु णित्थ विसेसो; हस्स-रदीणं व एगसमएण पयडिबंधवीच्छेदसंभवादो । इत्थि पुरिसवेदाणमेगसमएण वंधबीच्छेदो होदि ति कुदो णव्वदो ? महावंधसुत्तादो हस्म-रदीणमुकस्सिटिदि-णिरुंभणं काऊणित्थि-पुरिसवेदाणं समयूणादिसण्णियासवियप्पप्रत्वयउच्चारणादो च णव्वदे । 'णवरि विसंसो जाणियव्वो' ति चुण्णिसुत्तणिद्देसण्णहाणुववत्तीदो इत्थि-पुरिसवेदाणमेगसमएण बंधवीच्छेदो ण होदि ति ण वोत्तुं जुत्तः; एदस्स णिद्देसस्स णवुंसयवेद-अरदि-सोगाणं सण्णियासेसु जववत्तिदंसणादो । तं जहा—इत्थिवेद

उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभन्न कालके प्रथम समयमे वॅघनेवाले स्त्रीवेद और पुरुपवेदमें बन्धाविलसे रहित कपायकी उत्कृष्ट स्थितिक संकान्त होने पर स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त होनी हैं। पुनः अन्तर्मुहूत काल तक नपुंसकवेद, अरित और शांकके साथ कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके प्रतिभन्नकालके प्रथम समयमे अरित और जांक इन दो प्रकृतियोंकी बन्ध व्युन्छिन्द्वारा वंधनेवाली हास्य और रितमें बन्धाविलमें रहित कपायकी स्थितिक संकान्त होने पर हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थितिकों हे। तथा उस समय स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकों देखते हुए अन्तर्मुहूर्त कम होता है। अब इस अन्तमुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिमें लेकर ध्रुवस्थित प्राप्त होने तक स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी स्थिति घटाते जाना चाहिये। यही यहाँ विशेषता है।

्र ७८६. हुछ आचार्य कहते हैं कि इन प्रकृतियोंमें भी कोई विशेषना नहीं है, क्योंकि हास्य और रितक समान इन प्रकृतियोंका भी एक समय तक बन्ध होकर अनन्तर उनकी व्युच्छित्ति संभव है।

र्शका-स्वीवेद और पुरुषवेदकी एक समयके द्वारा बन्धव्युन्छिन होती है यह किस अभाग से जाना जाता है ?

समाधान—महावन्धसूत्र से । तथा हास्य और रित की उत्कृष्ट स्थितिको रोककर स्त्रीवेद और पुरुपवेद की एक समय कम उन्कृष्ट स्थिति आदि सिन्निकर्प विकल्पो का कथन करनेवाली उचारणासे जाना जाता है।

शंका—'एवरि विसेसो जािएयव्यो इस प्रकार चूिर्णसूत्रका निर्देश अन्यथा बन नहीं सकता, इसिलिये स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी एक समयके द्वारा बन्धव्यच्छित्त नहीं होती।

समाधान-ऐसा कहना ठीक नहीं है क्योंकि इस निर्देशकी साथकता नपुंसकवेद्त्र, रित

णिरुद्धे णवुं सयवेदो णियमा अणुक्कस्साः इत्थिवेदबंधकाले णवुं सयवेदस्स बंधाभावादो । हस्स-रदीणं पुण उक्कस्सिहिदीए णिरुद्धाए णवुं सयवेदिहिदी सिया उक्कस्साः हस्स-रिवंधकाले वि णवुं सयवेदस्स बंधुवलंभादो । मिया अणुक्कस्माः कयाइ तत्थ-वंधाभावेण तस्स समयूणादिवियप्पुवलद्धीदो । इत्थिवेदउक्कस्सिहिदीएण अरिद-सोगाणं सिया उक्कस्साः इत्थिवेदेण सह एदेमिं वंधं पि विश्वाभावादो । सिया अणुक्कस्साः पि पि विश्वाभावादो । सिया अणुक्कस्साः पि हिम्मसम् इत्थिवेदेण सह एदेमिं वंधं पि विश्वाभावादो । सिया अणुक्कस्साः पि हिम्मसम् असंखेजनिद्याग्यभावाद्ये अरिद-सोगाणं समयूणमादिं काद्ण जाव पि लिद्येवमस्स असंखेजनिद्याग्यभि हिम्मसागरोवमकोडाकोडिमेन्तवियप्पुवलंभादो है। हस्स-रदीणमुक्कस्सिहिदीए णिरुद्धाए पुण अरिद-सोगिहिदी णियमा अणुक्कस्साः पि हिम्मस्य हस्स-रदीग्र विभक्तमाणियास्र तप्पि हवक्षणमरिद-सोगाणं, बंधाभावादो । तदो इत्थि-पुरिसवेदेसु णित्थ विसेसो न्नि सिद्धं ।

§ ७६० सुत्ताहिष्पाएण पुण इत्थि-पुरिसवेदेसु वि विसेसी अत्थि चेव, हस्स-रदीणं व इत्थि-पुरिसवेदाणमेगसमएण बंधुवरमाणब्भुवगमादो । तदो इत्थिवेदे णिरुद्धे हस्स-रदीणं समयूणादिवियष्पा होति । हस्स-रदीसु पुण णिरुद्धासु इत्थि-पुरिसवेदाणमंतो-सुदुत्त्र्णादिवियष्पा ति ।

श्रार शाक प्रकृतिया के सिन्नकपों में बतलाई गई है। खुलासा इस प्रकार है—स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक रहन पर नपुसकवेदकी स्थित । नयमसे श्रनुत्कृष्ट होती है, क्यों कि स्त्रीवेदकी बन्धक समय नपुंसकवेदका बन्ध नहां होता। परन्तु होस्य त्रार रातकी उत्कृष्ट स्थितिक रहने पर नपुसकवेदका स्थान कदाचिन उत्कृष्ट होती ह, क्यों कि होस्य श्रीर रातके बन्धके समय भा नपुसकवेदका बन्ध पाया जाता है। कदाचिन् श्रनुत्कृष्ट होती ह, क्यों के कदाचिन् होस्य श्रीर रातको वहा बन्ध नहीं होनस नपुसकवेदको उत्कृष्ट होती ह, क्यों के कदाचिन् उत्कृष्ट होती ह, क्यों के स्त्रीवेदक साथ श्रीत श्रीत श्रीत एक समय कम श्रीद विकल्प पाय जात है। स्त्रीवेदक होच उत्कृष्ट होती ह, क्यों के होच अन्ति है। कदाचिन् अनुत्कृष्ट होती ह, क्यों के श्रीत समय कम उत्कृष्ट स्थातस लेकर पर्यक्ष श्रीस होन पर श्रीत आर शाकको एक समय कम उत्कृष्ट स्थातस लेकर पर्यका श्रीस होन पर श्रीत आर शाकको एक समय कम उत्कृष्ट स्थातस लेकर पर्यका श्रीस होन पर श्रीत आर शाकको एक समय कम उत्कृष्ट स्थातस लेकर पर्यका श्रीस होन पर अरात आर शाकको एक समय कम उत्कृष्ट स्थातस लेकर पर्यका श्रीस रातको उत्कृष्ट स्थातक रहन पर अरात आर शाकको स्थात नियमस श्रीतुक्ष्य होता है, क्यों के प्रकृतियाको वन्ध नहा होता है, इसालय स्त्रीवेद आर पुरुपवेदक विषयम काई विश्वता नहा है यह सिद्ध हुशा।

§ ७६० परन्तु उक्त सूत्रके श्रामित्रायानुसार स्त्रीवद और पुरुषवेदके विषयमे भी विशेषता है ही, क्योंकि उक्त सूत्रमे हास्य और रितक समान स्त्रीवद आर पुरुषवदकी एक समयक द्वारा धन्ध क्युचिक्कत्ति नहीं स्वीकार की हैं, अतः स्त्रीवेदकी उत्क्रप्ट स्थितिक रहने पर हास्य और रितक एक समय कम उत्क्रप्ट स्थिति आदि विकल्प होते हैं। परन्तु हास्य आर रानकी उदक्रप्ट स्थिति क रहने पर स्त्रीवद और पुरुषवेदके अन्तमुंहूने कम उत्क्रप्ट स्थिति आदि विकल्प होते हैं।

# 

🖇 ७९१ सुगमं।

#### 🛞 उकस्सा वा ऋणुकस्सा वा ।

५ ७६२ णवुंसयवेदिंदीए उकस्साए संतीए जिद मिच्छत्तस्स उकस्सिंदिदी पबदा होज्ज तो मिच्छत्तस्स उकस्सिंदिदिविद्ती होदि ऋण्णहा ऋणुकस्सा; उकस्सादो हेदिमदिदीदो बंधंतस्य उकस्सत्ताभावादो ।

# उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि कादृण जाव पिलदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण जणा ति ।

६ ७६३ पिलदो० त्रमंखे० भागो किंपमाणो १ एगाविलयव्भिह्यसमयूणावाहा-कंडयमेतो । अहित्रो किण्ण होदि १ ण, कसाएस उक्कस्सिटिद्वंधे संते मिच्छत्तस्स समऊणावाहाकंडएग्र्राउक्कस्सिटिद्मेत्तजहण्णिटिद्वंधस्स तत्थुवलंभादो । एगाविष्टयाए अहियत्तं कथमुवछव्मदे १ ण, पिटिह्म्मकाले वि णवुंसयवेदस्स आविलयमेत्तकालमुकस्स-दिदिसंभवादो । सेसं सुगमं; वहुसो परुविदत्तादो ।

\* नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति-विभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ७८१ यह सूत्र सुगम है।

🗯 उन्कृष्ट होती है और अनुत्कृष्ट भी।

\$ ५६२, नपुंसकवदकी उत्कृष्ट स्थितिक रहते हुए यदि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है तो मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है, अन्यथा अनुत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि उत्कृष्टसे कमकी स्थितिका बन्ध करनेवालेके उत्कृष्ट स्थिति नहीं हो सकती।

\* वह अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेन्ना एक समय कमसे लेकर पल्यापमक असंख्यातवें भाग कम तक होती है।

§ ७६३. शंका-यहापर पल्योपमके असख्यातवे आगका कितना प्रमाण लिया है ?

समाधान-एक समय कम आवाधाक।ण्डकमं एक आविल कालके जोड़ देने पर जितना प्रमाख हो तत्प्रमाण् यहा परुषका असंख्यातथा भाग काल लिया है।

शंका-इससे अधिक क्यां नहीं होता हं ?

समाधान-नहीं, क्योंकि कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध होते समय मिश्यात्वका कमसे कम स्थितिक्य एक समय न्यून ऋाबाधाकाण्डकसे कम उत्कृष्ट स्थिति मात्र ही होता है, इससे कम नहीं।

शंका-पल्यके असंख्यातवे भागको जो एक आवित अधिक और एक समय कम आवाधा काण्डक प्रमास बतलाया है तो यहां एक आवित काल अधिक कैसे सम्भव है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि प्रतिभन्न कालके भीतर भी नपुंसकवेदकी एक आविल काल तक उत्कृष्ट स्थिति संभव है।

सूत्रका शेष व्याख्यान सुगम हं, क्यों कि उसका अनेकवार कथन कर आये हैं।

### अ सम्मत्त-सम्मामिच्छुताणं हिदिविहत्ती किम्रुकस्सा अणुकस्सा ? १ ७६४ मुगमं० ।

### 🛞 णियमा अणुकस्सा ।

९ ७६५ णवुं सयवेदुकस्सिटिदिविहत्तियम्मि मिच्छ।इिटिम्म सम्मत्त-सम्मामिच्छ-त्ताणमुकस्सिटिदीए अभावादो । ण च सम्माइिटपढमसमए पिडबद्धाए सम्मत्त-सम्मा-मिच्छत्त्वकस्सिटिदीए अण्णत्थित्थि संभवो; विरोहादो ।

अ उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्त ्यमादिं कादृ ए जाव एगा हिदि त्ति । एवरि चरिमुज्वेल्लणकंडयचरिमफालीए ऊणा ।

्र ७६६ एदेसि दोण्हं सुत्ताणमत्थे भण्णमाणे जहा मिच्छत्तुकस्सिट्टिदिणिरुंभणं काऊण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तदोसुत्ताणं परूवणा कदा तहा एत्थ वि कायव्वाः विसंसाभावादो ।

🕸 सोलसकसायाणं दिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ?

🖇 ७६७ , सुगमं ।

🕸 उकस्सा वा अगुक्स्सा वा।

# नषुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ७६४ यह सूत्र मुगम है।

# नियमसे अनुत्कृष्ट होती है ।

§ ७६५ नपुंसकवंदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति धारक मिश्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति नहीं पाई जाती है। सम्यक्तव श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सम्यग्दृष्टिक प्रथम समयमे होती है, अतः उसका अन्यत्र पाया जाना संभव नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर विरोध श्राता है।

\* वह अनुत्कृष्ट स्थिति अन्तमुं हुर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक स्थिति तक होती है। किन्तु इतनी विश्वपता है कि इसमेंसे अन्तिम उद्देलनाकाण्डककी अन्तिम फालिप्रमाण स्थितिको कम कर देना चाहिए।

ु ७६६. इन दाना सूत्राका ऋर्थ कहनेपर जिस प्रकार मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुये सम्यक्त्व ऋार सम्यग्मिध्यात्वसम्बन्धी दो सूत्रोका कथन किया है उसी प्रकार यहां भी करना चाहिये, क्योंकि दोनोंके कथनोंमें कोई विशेषता नहीं है।

नपुंसकवंदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय सोलह कषायोंकी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती है या अनत्कृष्ट ?

§ ७६७ यह सूत्र सुगम है।

🖀 उत्कृष्ट होती है और अनुत्कृष्ट भी।

९ ७६८ जिंद णवुंसयवेदस्स उक्कस्सिंदिरीए संतीए अप्पिदकसायाणमुक्कस्स-द्विदिवंघो होज्ज तो उक्कसा, अण्णहा अणुक्कस्सा; समयूणादिद्वितीसु बद्धामु उक्कस्सत्त-विरोहादो ।

अ उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि कार्ण जाव आविकि णा ति । ५०६६. तं जहा—कसायाणमुक्कस्सिटिदिमाविलयमेत्तकालं बंधिय पिट्टहरम-समए बिक्कमाणणवुंसयवेदिम्म बंधाविलयादिक्कंतकसायिदिदीए संकंताए णवुंसयवेद-दिदी उक्कस्सा होदि तस्समए कसायिदिदी समयूणा होदि; उक्कस्सिटिदीदो अधिदि-गलणाए गलिदेगसमयत्तादो । एवं दुसमयूणादिकमेण णेदव्वं जाव आविलयमेत्तकालो कसायिदिदीए गलिदो ति । अहि श्रो किण्ण गालिक्वदे १ ण, उविर णवुंसयवेदुक्कस्स-दिदीए असंभवादो ।

**अ इत्थि-पुरिसवेदाणं दिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा** ? १ ८०० सुगमं ।

🛞 णियमा ऋगुक्कस्सा।

🖇 ८०१ णवुंसयवेदबंधकाले णियमेणित्थि-पुरिसवेदाणं बंधाभावादो । कि

§ ७६≒ यदि नपु सक्वेदकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए विविक्ति कपायका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध होवे तो उत्कृष्ट स्थिति होती है, अन्यथा अनुरुक्ट स्थिति होती है, क्योंकि एक समय कम आदि स्थितियोंके वैंघने पर उन्हें उत्कृष्ट माननेमें विरोध आता है।

\* वह त्रानुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम त्रापनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर त्रावली कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती है।

§ ७६६. जो इस प्रकार हे—कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति एक आविल कालतक वांधकर प्रतिभग्न कालक प्रथम समयमे वंधनेवाले नपुंसकवेदमे बन्धाविलसे रहित कपायकी स्थिति कं संकानत होन पर नपुंसकवेदकी स्थिति उत्कृष्ट होती है और उस समय कपायकी स्थिति एक समय कम होती है, क्योंकि उस समय कपायकी उत्कृष्ट स्थितिमसे अधःस्थित गलनाक द्वारा एक समय गल गया है! इसी प्रकार कपायकी उत्कृष्ट स्थितिमसे दो समय कम आदि कमसे आविल प्रमाण कालके गलने तक कथन करते जाना चाहिये।

शंका-कपायकी उत्कृष्ट स्थितिमें से एक आविलसे अधिक काल क्यों नहीं गलाया जाता है ?

समाधान-नहीं, क्योंकि इसके आगे नपुंसकवंदकी उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त होना असंभव है।

\* नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय स्त्रीवेद श्रोर पुरुपवेदकी स्थितिविभिनत क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

§ ५००. यह सूत्र सुगम है।

\* नियमसे अनुत्कृष्ट होती है।

\$ 50%. क्योंकि नपुंसकवेदके बन्धके समय खीवेद श्रोर पुरुपवेदका बन्ध नियमसे नहीं होता है।

#### कारणं ? तदभावे अच्चंताभावो ?

ॐ उक्कस्सादो ऋणुक्कस्सा अंतोम्रहुत्तृ णमादिं कादृण जाव अंतो-कोडाकोडि ति ।

\$ ८०२. तं जहा—सोलसकसायाणमुक्कस्सिटिदिं बंधिय पिडहग्गसमए समया-विरोहेण वज्भमाणित्थि-पुरिसवेदेसु बंधाविलयादिक्कंतकसायिटिदीए संकंताए इत्थि-पुरिसवेदाणमुक्कस्सिटिदिविहत्ती होदि । तदो अंतोमुहुत्तेण संकिलेसं गंत्ण कसायु-क्कस्सिटिदिं बंधिय बंधाविलयादिक्कंतकसायिटिदिम्मि णवुंसयवेदे संकामिदिम्म णवुंसयवेदस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती । तत्थुद्देसे णं इत्थि-पुरिसवेदिटिदी पुण णियमा अंतोमुहुत्तूणाः सगुक्कस्सिटिदीदो अधिटिदिगलणाए गलिदंतोमुहुत्तत्तादो । एवं समयुणादिकमेण कसायिटिदिं बंधिय ओदारेद्ण णेद्व्वं जाव अंतोकोटाकोडि ति ।

५ ८०३ इत्थिवेदणिरुंभणे कदे णवुंसयवेदुक्कस्सिहिदी समयूणा जादा। णवुंसयवेदिम णिरुंभणे कदे पुण इन्थिवेदिहिदी सगुक्कस्सादो अंतोमुहुत्तूणा जादा। किमेदस्स कारणं १ वुच्चदे—कसायाणमुक्कस्सिहिदीए बज्भमाणाए णवुंसयवेदस्स जेण तत्थ णियमेण वंधो तेण पिहहम्मसमए इन्थिवेदे उक्कस्सिहिदिमुवगदे णवुंसय-

शंका-इसका क्या कारण है ?

समाधान—नपुंसकवेदके बन्धके समय स्त्रीवेद श्रीर पुरुपवेदका बन्ध नहीं होनेमें अत्यन्तां-भाव कारण है। अर्थान् नपुंसकवेदके बन्धके समय स्त्रीवेद श्रीर पुरुपवेदके बन्धका सर्वथ। अभाव है।

के वह अनुत्कृष्ट स्थिति अन्तर्भृहूर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तः-कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है।

इन्०२. जो इस प्रकार हैं — सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको बॉयकर प्रतिभग्नकालके प्रथम समयमे आगमानुकूल वॅथनेवाले स्त्रीवद और पुरुषवेदमें बन्धाविलसे रहित कपायकी स्थितिके संकान्त होने पर स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। तदनन्तर एक अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा संक्लेशको प्राप्त होकर और कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके बन्धावलीसे रहित कपायकी स्थितिके नपुंसकवेदमें संकान्त होने पर नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है। तब वहाँ पर स्त्रीवंद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थिति नियमसे अन्तर्मुहृतं कम होती है, क्योंकि स्त्रीवंद और पुरुषवेदकी अपनी उत्कृष्ट स्थितिमेसे अधःस्थितिगलनाके द्वारा एक अन्तर्मुहूर्त गल गया है। इस प्रकार एक समय कम आदिके कमसे कपायकी स्थितिका बन्ध कराके अन्तःकांड़ी सागर प्रमाण स्थितिक प्राप्त होनेतक स्त्रीवंद और पुरुपवेदकी स्थितिको घटाते जाना चाहिये।

्र ८०३. शंका—स्त्रीवदकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए नपु सकवेदकी उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम होती है और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके रहने पर स्त्रीवदकी स्थिति ऋपनी उत्कृष्ट स्थितिसे ऋम् हते कम होती है, इसका क्या कारण है ?

्समाधान-कपायोकी उत्कृष्ट स्थितिके वैंघते समय नपुंसकवेदका चूँ कि नियमसे बन्ध होता है इसलिये प्रतिभग्न कालके प्रथम समयमें स्त्रीवेदके उत्कृष्ट स्थितिका प्राप्त होने पर नपुंसक- वेदो सगुक्कस्सिहिदिं पेक्खिय समयूणो होदिः तत्थ तदो गलिदेगसमयत्तादो । णवुंसय-वेदे पुण उक्कस्सिहिदिग्रुवगदे इत्थिवेदो णियमेण अंतोग्रुहुत्तूणो इत्थिवेदवंधपितसेह-दुवारेण कसायाणग्रुकस्मिहिदीए सह णवुंसयवेदे वंधमागदे तब्बंधपढमसमयप्पहुि जाव अंतोग्रुहुत्तं ण गदं ताव कसायाणग्रुकस्सिहिदिबंधसंभवाभावादो । तं कुदो णव्यदे ? उक्कस्सिहिदिबंधंतरम्स जहण्णस्स वि अंतोग्रुहुत्तपमाणपरूवयबंधसुत्तादो । इत्थि-पुरिस-वेदाणमेगसमएण वंधवरमाणब्ग्रुवगमादो च अंतोग्रुहुत्तूणत्तमविरूदं सिद्धं ।

🕸 हस्स-रदीणं हिदिविहत्ती किमुक्कस्सा श्रणुक्कस्सा ?

६ ⊏०४, सुगमं

#### 🕸 उक्कस्सा वा ऋणक्कस्सा वा ।

्र ८०५ पिडरम्पदमसँमए एवुंसयवेदुकिस्सिटिदीए संतीए जिद्द हस्स-रदीणं वैभी होज्ज तो उक्तस्सा, अण्णहा अणुक्तस्साः वंथाभावेण हस्स-रदीसु कसायहिदि-संकंतीए अभावादो ।

ॐ उक्कस्सादो ऋणुक्क<sup>स्</sup>सा समऊणमादि कादृण जाव ऋंतोकोडा-कोडि ति ।

वदकी उत्कृष्ट स्थिति श्रापनी उत्कृष्ट स्थितिको देखने हुए एक समय कम होती है, क्योंकि वहां पर उसमेसे एक समय गल गया है। परन्तु नपुंसकवेदके उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त होने पर स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति नियमसे अन्तर्मुहर्त कम होती है, क्योंकि कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ नपुंसकवेदके बन्धको प्राप्त होने पर स्त्रीवेदका बन्ध नहीं होता और स्त्रीवेदके बन्धके प्रथम समयसे लेकर जब तक अन्तर्मुहर्त काल नहीं व्यतीन होता है तब तक कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध संभव नहीं है। अतः नपुंतकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिमेसे अन्तर्मुहर्त कम हो जाता है।

शंका-यह किस प्रमाणसे जाता जाता है ?

समाधान— उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य बन्धान्तर भी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है इस प्रकार कथन करनेवाले बन्धसूत्रसे जाना जाता है। तथा स्त्रीबंद और पुरुपवेदकी एक समयके द्वारा बन्ध-व्युन्छित्ति नहीं स्वीकार की गई है अतः इससे भी नपु सकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक समय पुरुपवेद और स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति ठीक अन्तर्मुहूर्त कम सिद्ध होती हैं।

 नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके ममय हास्य और रितकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ?

ु ८०४ यह सूत्र मुगम है।

# उत्कृष्ट होती है और अनुत्कृष्ट भी ।

्र न०५. प्रतिभग्न कालके प्रथम समयमे नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए यदि हास्य श्रीर रितका बन्ध होवे तो उनकी स्थिति उत्कृष्ट होती है अन्यथा अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि बन्धके विना हास्य श्रीर रितमें क्यायकी स्थितिका संक्रमण नहीं पाया जाता है।

 वह अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तः-कोडाकोडी सागर तक होती है। § ८०६. पिंडिन्गपढमसमयम्मि णबुंसयवेद-हस्स-रदीणं बंधे संते तिण्हं पि उनकस्सिहिदिविहत्ती होदि । तदणंतरिविदयसमए हस्स-रिद्वंधे बोच्छिणो हस्स-रदीणं सम्प्राणुक्कस्सिहिदी होदि । एवं दुसम्प्राणादिकमेण णेदव्वं जाव समऊणाविष्ठियाए ऊणुक्कस्सिहिदि ति । उवरि इत्थिबेदे णिरुद्धे हस्स-रदीणं वत्तकमं बुद्धीए अवहारिय वत्तव्वं ।

**अ अरदि-सोगाणं हिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ?** 

६ ८०७ सुगमं ?

🛞 उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा ।

§ ८०८. णवुसयवेदवंधकाले अरिद-सोगाणं वंधे संते तिण्हं पि उक्कस्सिट्टिदि-विहत्ती होदि, अण्णहा ऋणुक्कस्सा; ऋवज्भमाणवंधपयडीणं पिडग्गहत्ताभावादो ?

ॐ उक्कस्सादो अगुक्कस्सा समऊणमार्दि कादृण जाव वीसं सागरोवम-कोडाकोडीओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण ऊणाओ ।

§ ८०६. तं जहा — सोलसकसायाणमुक्कस्सिटिदिमंतोमुदुत्तमेत्तकालं विधिय
पिट्ठहरगसमए अरिद-सोगबंधवोच्छेददुवारेण हस्स-रदीसु वंधमागयासु णवुंसयवेदिदिदी
तत्थ उक्कस्साः; वज्मनाणत्तादो । अरिद-सोगिटिदी पुण समयुणुक्कस्साः; वंधाभावादो ।

§ ५०६ प्रतिभग्न कालके प्रथम समयमें नपुंसकवेद, हास्य और रितके बन्ध होते हुए तीनों की ही उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती हैं। नदनन्तर दूसरे समयमें हास्य और रितके बन्धके व्युच्छिन्न हो जाने पर हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम होती हैं। इस प्रकार दो समय कम आदि कमसे लेकर एक समय कम आविलसे न्यून उत्कृष्ट स्थिति तक जानना चाहिये। नथा इमके आगे स्वावेदकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए हास्य और रितका जो कम कहा है उसका बुद्धिसे निश्चय करके यहाँ भी कथन करना चाहिये।

क्क नपुंसक्रवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय अरित और शोककी स्थितिविभक्ति क्या उत्कृष्ट होती हैं या अनुत्कुष्ट ?

§ ८७७. यह सूत्र सुगम है।

अ उत्कृष्ट होती है और अनुत्कृष्ट भी।

§ प्राप्त नेपुसकवेदके बन्धके समय अरित और शांकके बन्ध होने पर तीनोकी ही उत्हृष्ट स्थितिविभक्ति हाती है, अन्यथा अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति होती है; क्योंकि नहीं वैधनेवाली प्रकृतियोंमे पतद्महपना नहीं पाया जाता है।

अ वह अनुत्कृष्ट िस्थित एक समय कम अपनी उत्कृष्ट िस्थितिसे लेकर पत्योपमके अमंख्यातवें भाग न्यून बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती हैं।

§ ८०६. जो इस प्रकार हैं—सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको अन्तर्सुहूर्त काल तक बाँधकर प्रतिभग्नकालके प्रथम समयमें अरित और शोककी बन्ध व्युन्छित्ति होकर हास्य और रितिके बन्धको प्राप्त होने पर वहाँ पर नपुंमकवेदकी स्थिति उत्कृष्ट होती है, क्योंकि उसका बन्ध हो रहा है परन्तु अरित और शोकको उत्कृष्ट स्थिति एक समय कम होती है, क्योंकि उनका बन्ध एवं जाव पहिद्रगाविष्ठयमेत्तकालो उवरि गन्द्रिदि ताव अरदि-सोगुक्कस्सिहिदी श्राविष्ठयूणा होदि। पुणो समयाहियाविलयपढमममए कसायाणमाविष्ठकणुक्कस्सिहिदिं वंधिय पणि श्राविलयपेत्तकालं उक्कस्सिहिदिं वंधिय पिढहग्गपढमसमए हस्स-रदीस्र वंधमागदामु श्रादि-सोगुक्कस्सिहिदी समयाहियाविलयाए ऊणा होदि। पुणो जाव श्राविलयमेत्तकालो गन्द्रिदि ताव श्रारिद-सोगुक्कस्विहिदी दोहि श्राविलयहि ऊणा होदि। एवं जाणिदृण श्रोदारेयन्त्रं जाव आविलयन्तरिस्समऊणाबाहाकंडएरणूणवीसं सागरोवमकोडाकोडिमेत्तकम्मिहिदी चेहिदा ति।

🟶 भय दुगुं छाणं हिदीविहसी किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ?

६८१० सुगमं ?

- 🏶 णियमा उक्कस्सा।
- § **८११, धुवबंधित्तादो** ।
- 🕸 एवमरदि सोग भय दुगु छाणं पि।
- ८१२ जहा णवंसयवंदरस सञ्जकम्मेहि सह सण्णियासी कदो तहा अरदि-सोग-भय-दुर्गु छाणं पि कायच्वं।

नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके समय भय और जुगुण्साकी स्थितिविभिक्त
 च्या उत्कृष्ट होती है या अनुतकृष्ट ?

§ **८१०**. यह सृत्र सुगम है।

नियमसे उत्कृष्ट होती है।

ु = ४१. क्योंकि ये दोनों प्रकृतियाँ ध्रुववन्धिनी हैं।

क इसी प्रकार अरति, शोक, भय और जुगुप्साका भी सब कमों के साथ सिक्षक कहना चाहिये।

६ प्रशः जिस प्रकार नपुंसकवेदका सब कमों के साथ सन्निकर्ष किया उसी प्रकार श्ररित, शोक, भय श्रीर जुगुत्साका भी करना चाहिये।

नहीं हो रहा है। इस प्रकार एक आवलिप्रमाण प्रतिभग्नकालके आगे जाने तक अरित और शोककी उत्हर्ष्ट स्थिति एक आवलिप्रमाण कम हो जातो है। पुनः एक समय अधिक आवलिके प्रथम समयमें क्यायोकी एक आविल कम उत्हर्ष्ट स्थितिको बाँधकर पुनः एक आविल काल तक कपायोकी उत्हर्ष्ट स्थितिको बाँधकर प्रतिभग्न वात्रके प्रथम समयमें हास्य और रितिके वन्धको प्राप्त होनेपर अर्रात और शोककी उत्हर्ष्ट स्थिति एक समय अधिक एक आविल कम होती है। पुनः एक आविल प्रमाण कालके जाने तक अरित और शोककी उत्हर्ष्ट स्थिति हो आविल काल प्रमाण कम होती है। इस प्रकार एक समय कम आवाधाकाण्डकमें एक आविल कालके जोड़ने पर जितना प्रमाण हो उतने कालसे न्यून वीम कोड़ाकोड़! सागर प्रमाण कमिस्थितिको प्राप्त होने तक अरित और शोरकी उत्हर्ष्ट स्थितिको घटाते जाना चाहिय।

## 🕸 णवरि विसेसो जाणियव्वो ।

्रदश्यः पत्थ विसेसपस्त्रणहं बुच्चदे—अरिद-सोगाणमुक्कस्सिहिदिणिरंभणं काद्ण भण्णमाणे मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-मोलसकसायाणं णवुंसयवेदभंगो । अरिद-सोगाणमुक्कस्सिहिदीए संतीए इत्थिवेदस्स निया उक्कस्सिहिदीः पिडिहगपढम-समए अरिद-सोगेहि सह इत्थिवेदे बज्भमाणे तिण्हं पि उक्कस्मिहिदिविहत्तिदंसणादो । अर्थ अण्डा अर्णुक्कस्साः वंधाभावे कसाय इदिपिडच्छणसत्तीए अभावादो । अथ अण्डक्कस्सा समऊणमादि काद्ण जाव अंतोकोडाकोडि ति । कुदो १ इत्थिवेदवंधकालस्स एगसमए संते समयूणउक्कस्सहिदिसंतुवलंभादो ।

§ = १४. जेसिमाइरियाणिमित्थिवेदबंधकालो जहण्णओ अंतोमुहुत्तमें तो तिसमहिप्पाएण अंनोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि ति । तं जहा—कसायुवक्षस्सिट्टिदिं बंधिय पिंडहर्गसमए इत्थिवद-अरिद-सोगाणमाविष्यमेत्तकालमुक्कस्सिट्टिदी
होदि । संपिह इत्थिवेदबंधो जाव अतोमहुत्तं ण गदं ताव ण फिट्टिद । एदिम्म आविष्यवञ्जतोमुहुत्तमेत्तइत्थिवेदबंधकालिम्म इत्थिवेद-अरिद-सोगाण दिदीओ अधिटिदगलणाए
गलमाणाओ चेट्टंति । कुदो १ जाव अतोमहुत्तं ण गदं ताव संकिलेसं पूरेद् णो सक्किदि
ति काद्रण लहुमुक्कस्सिट्टिदं बंधाविदो । पुणो तप्पाओगोण जहण्णकालेणुक्कस्स-

#### 🕸 परन्तु कुछ विशेष जानना चाहिये !

इ दश्व, श्रब यहाँ पर । धरोपका ५,थन करते हैं — अर्रात श्रोर शांककी उत्कृष्ट स्थितिकों रोककर कथन करने पर मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्याग्मध्यात्व और सोलह कपायोका मंग नपुंसक-वेदके समान हैं। अर्रात आर शोंककी उत्कृष्ट स्थितिके रहत हुए स्नावदका कदाचित् उत्कृष्ट स्थिति होती हैं, क्योंकि प्रतिभग्नकालके प्रथम समयम अर्रात और शांकक साथ स्त्रावेदक बन्ध होने पर तीनोंकी ही उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति दखा जाती ह। अन्यया अर्रात और शांककी उत्कृष्ट स्थितिके समय स्त्रावेदकी स्थात अनुत्कृष्ट हाता हे, क्यांक स्त्रावदका वन्ध नहीं हान पर उसम कपायकी स्थितिका संक्रामत करनेकी शांक नहीं पाइ जाती है। अब याद अनुत्कृष्ट स्थिति हाती ह तो वह एक समय कम उत्कृष्ट स्थिति लकर अन्तःकाड़ाकाड़ा सागर तक हाता ह, क्यांक स्त्रावेदके बन्धकालके एक समय होनेपर एक समय कम उत्कृष्ट स्थित पाई जाता ह।

इ दर्श किन्तु जिन आचायों क मतस स्त्रावेदका जयन्य बन्धकाल भी अन्तर्मु हूर्त हैं उनके अभिप्रायानुसार अन्तमुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिसे लकर अन्तःकाड़ाकाड़ी सागर तक अनुत्कृष्ट स्थिति पाई जात्नी ह । उसका खुलासा इस प्रकार ह — कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बॉधकर प्रतिभगनकालमें स्त्रावेद, अर्रात और शाककी एक आयोलकाल तक उत्कृष्ट स्थित होता ह । यहाँ पर स्त्रीवेदका बन्ध जब तक अन्तमुहूर्त काल व्यवीन नहीं हुआ है तब तक नहीं खूटता है । इस एक आविलसे रहित अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्त्रीवेदके बन्धकालमें स्त्रीवेद, अर्रात और शाककी स्थितियाँ अधः स्थिति गलनाके द्वारा गलती रहती हैं, क्यांक जब तक एक अन्तमुहूर्त काल व्यवीत नहीं हुआ है तब तक उत्कृष्ट संक्लेशको पूरा करना शक्य नहीं है, ऐसा समक्षकर छाटे अन्तर्मु हूत काल तक उत्कृष्ट संक्लेशको पूरा करना शक्य विश्व योग्य जवन्य कालके द्वारा उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त

संकिर्हसं गंतू णुक्कस्सि हिद्दं बंधिय बंधाविष्ठयादी दक्साय हिदीए संकामिदाए अंतीमृहुत्तकालं सन्वमरिद-सोगाण मुक्कस्सि हिदी होदि । इदो ? कसायाण मुक्कस्सि हिदी ए
उक्कस्ससंकिर्ह सेण बज्भमाणाए इस्स-रदी हि विणा अरिद-सोगाणं चेव बंध संभवादो ।
कसायुक्कस्सि हिदि विहत्तिका लेण अरिद-सोगाण मुक्कस्सि हिदि विहत्तिकालो सिरिसो कसायाण् मुक्कस्सि हिदि वंधे थक्के वि आविष्ठिय मे त्ति लाल मरिद-सोगाण मुक्कस्सि हिदि विहत्तिदंसणादो । सपि इत्थि वेद हिदी सगुक्कस्सं ऐकि खद्ण अंतो मृहुत्त्रणा । पुणो अण्णेण
जीवेण कसायाणं समऊणुक्कस्सि हिदि मंतो मृहुत्तकालं वंधिय पि हिद्द मसमण् बज्भमाणइत्थि वेद मि बंधाविष्ठियादी दक्साय हिदी संकामिदा । ताधे इत्थि वेद हिदी सगुक्कस्सं पेक्खित् ए समऊणा । तदो अतो महुत्तकाल मित्य वेदं विधिय पुणो अंतो महुत्त गुक्कस्ससंकिर्ह सं पूरेद गुक्क स्सक्साय हिदीं वंधिय वंधाविल यादी दक्साय हिदी ए संकामिदाए अरिद-सोगाण मुक्कस्स हिदी हो दि । तिम्म समण् इत्थि वेदो अपणो उक्कस्सि हिदि पेकि खद्ण समया हिय अंतो महुत्त्रणो हो दि । एवं दुसमय हिय-तिसमया हिय-अतो मृहुत्तम्णं का दृण णेद व्वं जाव अंतो को हो कि । एवं पुरिस वेदस्स । णवुंस य वेदस्स एवं चेव । णविष्ठ समऊण मादि का दृण [ जाव ] वोसंसागरोव मको डाको डी बोरी पि लेदि वेद मस्स असंस जित्र हो भागेण ऊणा छो ति णेद व्वं ।

होकर और कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके बन्धाविलसे रहित कपायकी स्थितिके संक्रमित होनेपर अन्तर्भृहत कालतक अरित और शांकर्का उत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि वापायकी उत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट संक्लेशमे व्याने पर हास्य और रतिकां छोड़कर अरित स्रोर शोकका ही बन्ध संभव है। यद्यपि अरित और शोककी उत्दृष्ट स्थितिविभक्तिका काल कपायकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके कालके समान है तो भी कपायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके रुक जाने पर भी एक अ।विल काल तक अरित और शोककी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति देखी जाती है। यहाँ पर स्त्रीवेदकी स्थिति ऋपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए ऋन्तर्महूते कम है। पुनः अन्य जीवने कपायोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका अन्तर्महूर्त काल तक बाँधा और प्रतिभग्न कालके प्रथम समयमे वँधनेवाले स्त्रीवेदमे बन्धावलिसे रहित कपायकी स्थितिका संक्रमण किया तो उस समय स्त्रीवंदकी स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक समय कम होती है। तदनन्तर अन्तर्महर्त काल तक स्त्रीवेदका वन्ध करके तथा दूसरे एक अन्तर्मुहर्त काल तक नपुंसकवेदका वन्ध करके पुनः एक अन्तर्महर्त कालके द्वारा ब्ल्डिप्ट संक्लेशकी पूर्ति करके श्रीर कपायकी उत्कृष्ट स्थितिको बॉधकर वन्धावलिसे रहित उस कपायकी स्थितिका अरति और शोकमे संक्रमण होनेपर अरित स्रोर शोककी उत्कृष्ट स्थिति होती है। तथा उस समय स्त्रीवंद स्रपनी उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए एक समय ऋधिक ऋन्तर्मुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिवाला होता है। इसी प्रकार दो समय अधिक और तीन समय अधिक अन्तर्मुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्त:-कोड़ कोड़ी सागर तक स्त्र वेदकी स्थिति घटाते जाना चाहिये। इसी प्रकार पुरुपवेदकी स्थिति होती है। तथा न्षुंसकवेदकी स्थिति भी इसी प्रकार होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकनेदकी स्थिति एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परयोपमका असंख्यातवां भाग कम यीम कोइ।कोड़ी सागर तक घटाते हुए ले जाना चाहिये।

ह ८१५ हस्स-रदीण णियमा ऋणुक्कस्सा समऊणमादि काद्ण जाव अंतोकोडा-कोडि त्ति । भय-दुर्गुञ्जाणं णियमा उक्कस्साः धुक्षंधित्तादो । भय-दुर्गुञ्जाणं णिरुंभणं काद्ण भण्णमाणे भिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-सोलसकसाय-तिण्णिवेदाणमरदि-सोगभंगो । हस्स-रदि-ऋरदि-सोगाणं णवुंसयवेदभंगो ।

्ट ८१६, एवं चुण्णिसुत्तमिस्सद्ग्ण सण्णियासपरूवणं करिय संपिष्ठं उच्चारणम-स्सिद्णुकस्ससण्णिय।सं कस्सामो । पुणरुत्तमिदि एत्थ अण्णयरो ण कायव्वो; ऋाइरियाणसुवदेसंतरजाणावणद्वं परूविदाए पुणरुत्तदोसाभावादो ।

ऽ ८१७ सिंण्णियासो दुविहो — जहण्णओ उकस्सन्नो चेदि। तत्थ उकस्सण् पयदं। दुविहो णिहेसो — न्रोघेण आदेसेण य। न्रोघेण मिच्छत्तउकस्सिद्धिदिविहत्तियस्स सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० सिया त्रतिथ सिया णित्थ। जदि अत्थि, किग्रुकस्सा अणुकस्सा १ णियमा अणुकस्सा। अंतोम्रुहुत्तृणमादिं काद्ण जाव एगा द्विदि ति। णविर चिरम्रुव्वेल्छणकंडएण्ण्णा। सोलसक० किम्रुक० अणुक्क० १ उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादिं काद्ण जाव पित्रदोवमस्स असंखेजिदिभागेण ऊणा। चत्तारिणोक० किमुक० अणुक० १ णियमा अणुक्क० अंतोमुहुत्तृणमादिं काद्ण

्र पर्यः हास्य और रितकी स्थिति एक समय कम श्रापनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर श्रान्तः कोड़ाकोड़ी सागर तक नियमसे अनुत्कृष्ट होती है। तथा भय और जुगुप्साकी स्थिति नियमसे उत्कृष्ट होती है, क्योंकि ये दानों प्रकृतियाँ ध्रुवविध्यती हैं। भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिके रहते हुए सिक्नकर्षका कथन करनेपर मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलह कपाय और तीनों वेदोंका भंग अरित और शोकके समान है। तथा हास्य, रित, अरित और शोकका भंग न्युंसकवेदके समान है।

§ न्र ६. इस प्रकार चूणिसूत्रक। आश्रय लेकर सिन्नकर्षका कथन करके अब उचारणाका आश्रय लेकर उत्हृब्द सिन्नकर्षको बताते हैं। यदि कोई कहे कि जिसका चूर्णिसूत्र द्वारा कथन किया है उसका उचारणा द्वारा कथन करने पर पुनरुक्त दोप आता है, अतः किसी एकका कथन नहीं करना चाहिये सो भी कहना ठांक नहीं है, क्योंकि आचार्योंके उपदेशोंमें अन्तरका झान करानेके लिए चूर्णिसूत्रके कथनके बाद भी उचारणाका कथन करने पर पुनरुक्त दोष नहीं आता है।

्रिं। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ज्ञायन्य और उत्कृष्ट । उनमेंसे पहले उत्कृष्टका प्रकरण हैं। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अोधनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे अधिकी अपेचा मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्तव और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति-विभक्ति कदाचित् हे और कदाचित् नहीं है। यदि है तो क्या उत्कृष्ट होती या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती है। जो एक अन्तमुहूर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक स्थिति तक होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि वह अनुत्कृष्ट स्थिति अन्तिम उद्देलनाकाण्डकके सन्निकर्ण विकल्पों से न्यून होती है। सोलह कपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट अथवा अनुत्कृष्ट होती है। उनमें अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थिति लेकर पत्योपम के असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती है। चार नोक्षायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट

जाव अंतोक्रोहाकोडि ति । पंचणोक ० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कस्सा अणुक्कस्सा या । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि कादृण जाव वीसंसागरोत्रमकोडाकोडीओ पलिदो ० असंखे ० भागेणुणाओ ति ।

इ द१८ सम्मत्तुकस्मिडिदिविहात्तियस्स मिच्छत्त० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणा । णित्थ अण्णो वियप्पो । सम्मामि० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्कस्सा । सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्क० अंतोमुहुत्तूणमादि कादृण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा ति । एवं सम्मामि० ।

६ ८१९, त्रणंताणु०कोध० मिच्छत्त-पण्णारसक० किमुक० ऋणुक्क० १ उकस्सा अणुकस्सा वा। उकस्सादो ऋणुकस्सा समयूणमादि काद्ण जाव पितदोवमस्स ऋसंखेज्जदिभागेणुणा ति। सम्मत्त-सम्मामि० पिच्छत्तभंगो। चत्तारिणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्सा अंतोम्रहुत्तूणमादि काद्ण जाव अंतोकोडाकोडि ति। पंचणोक० किमुक्क० ऋणुक्क० १ उक्कस्सा ऋणुक्कस्सा वा। जिद ऋणुक्कस्सा समऊणमादि काद्ण जाव वीसंसागरोवमकोडाकोडीओ पितदो० ऋसंखेज्जदिभागेण ऊणाओ ति। एवं पण्णारसकसायाणं।

होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती है। जो अन्तमुहूर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। पांच नाकपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट अथवा अनुत्कृष्ट होती है। उतमे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परयोपमका असंख्यावां भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है।

§ ५९८. सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती हैं या अनुरकृष्ट ? नियमसे अनुरकृष्ट होती हैं । जो अपनी उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त कम होती हैं । यहां मिथ्यात्वकी स्थितिका अन्य विकल्प नहीं होता । सम्यग्मिथ्यात्वका स्थिति क्या उत्कृष्ट होती हैं या अनुतकृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती हैं । सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती हैं या अनुतकृष्ट ? नियमसे अनुतकृष्ट होती हैं । जो अपनी उत्कृष्टकी अपेत्ता अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर पल्योपमक असल्यातवें भाग कम तक होती हैं । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके सिन्नकर्षका कथन करना चाहिये ।

§ ६१६ अनन्तानुबन्धी कोधकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिबाले जीवके मिध्यात्व श्रीर पन्द्रह् क्यायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुस्कृष्ट ? उत्कृष्ट अथवा अनुस्कृष्ट होती है। वह अनुस्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थिति से तकर पर्योपमके असंख्यात्वे भाग कम तक हाती है। सम्यक्त्व और सम्यिगध्यात्वका भंग मिध्यात्वके समान है। चारों नोकपायोंका स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अन्तर्मुहूत कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकांड़ाकाड़ा सागर तक होती है। पांच नोकपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। यदि अनुत्कृष्ट होती है तो एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परयोपमका असंख्यात्वां भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। इसा प्रकार शेप पन्द्रह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिबाले जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये।

्टर० इत्थिवेद्वकस्सिटिदिविहत्तियस्स मिच्छत्त० किष्ठुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्मा, एगसमयमादि काद्ण जाव पिलदो० असंखे०भागेण्णा । सम्मत्तसम्मामि० मिच्छत्तभंगो । पुरिस० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्सा समयूणमादि काद्ण जाव अंतोकोडाकोडि ति । अथवा अतोमुहुत्तूणमादि काद्णे ति वत्तव्वं । णवुंस० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्सा, समयूणमादि काद्ण जाव वीसं सागरोवमकोडाकोडी प्री पिलदो० असंखेज्जदिभागेण उज्याओ । इस्स-रिद० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कसा अणुक्कस्सा वा । उक्कसादो अणुक्कस्सा समयूणमादि काद्ण जाव अंतोकोडाकोडीओ । अरिद-सोग० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कसा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि काद्ण जाव वीसंसागरोवमकोडाकोडीओ पिलदो० असंखेज्जदिभागेण उज्याओ । भय-दुगुंछ० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्कस्सा । सोलसक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्क । समयूणमादि काद्ण जाव आविलक्षणा। एवं पुरस्वेदस्स ।

्र ८२१ णवु सयवेदउ स्कम्सिटिदिविहत्तियस्स मिच्छत्त० किमुक्क० अणुक्क० ? उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादि काद्ण जाव पलिदो० असंखे०भागेण ऊणा। सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो। सोलसक० किमुक्क० अणुक० ?

§ ८२०. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या ऋनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती हैं। जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्योपमके श्रसंख्यातवें भाग कम तक होती है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वका भंग मिश्यात्वके समान हैं। पुरुषवेदकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या ऋनुत्कृष्ट १ नियमसे ऋनुत्कृष्ट होती हैं। जो एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकाङ्गकोड़ी सागर तक होती है। अथवा एक समय कमके स्थानमें अन्तर्मुहुत कमसे लेकर एसा कहना चाहिये। नपुंसकवेदकी स्थिति उत्कृष्ट होती है या अनुकृष्ट? नियमसे अनुकृष्ट होती है। जो एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पर्यापमका असंख्यातवां भाग कम वीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। हास्य श्रीर रतिकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या ऋनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है स्त्रीर ऋनुत्कृष्ट भी । उसमेसे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। अरति और शोककी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उनमेसे अनुत्कृष्ट स्थित एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्योपमका असंख्यातवां भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। भय खीर जुगुप्साकी स्थित क्या उत्कृष्ट होती है या त्रातुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। सोलह कपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या श्रानुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती हैं। जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक आविल कम तक होती है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके सन्निकर्प कहना चाहिये।

ह ६२१. नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिध्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उनमेसे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पन्योपमके असंख्यातवें भाग कम तक होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्निष्यात्वका भंग मिध्यात्वके समान है। सो तह कपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या

उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि कार्य जाव आव-लिऊणा । इत्थि-पुरिस० किमुक० अणुक० ? शियमा अणुक्कस्सा । समयूणमादिं कार्ण जाव अंतोकोडाकोडि चि । अथवा अंतोमुहृत्त एपमादिं कार्ण । हस्स-रिद० किमुक्क० अणुक्क० ? उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूण-मादिं कार्ण जाव अंतोकोडाकोडि चि । अरिद-सोग० किमुक्क० अणुक्क० ? उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कार्ण जाव वीसंसागरोवम-कोडाकोडीक्रो पलिदो० असंखेजिदिभागेण ऊणास्रो । भय-दुगुंबा० इत्थिवेदमंगो ।

इस्त दस्स उनकस्स हिदिविह तियस्स मिच्छत्त० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्सा । समयूणमादिं कादृण जात्र पित्तदोत्रमस्स असंखेज्जदिमागेण्णा । सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो । सोलसक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक०। एगसमयमादिं कादृण जात्र आत्रिक्षणा । इत्थि०-पुरिस० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादृण जात्र अंतो-को डाकोडि ति । अध्वा अंतोमुहुत्तू णमादिं कादृण । णवुंसय० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादृण जात्र वीसं-

अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उनमेंसे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक आविल कम तक होती है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है। आवार कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःको इंकोड़ी सागर तक होती है। अथवा 'एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर के' स्थानमें 'अन्तर्मुहृतं कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर' कहना चाडिये। हास्य और रितकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उसमें अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःको इंकोड़ी सागर तक होती है। अरित और शोककी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उसमें अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परयोगमका अनुत्कृष्ट भी। उसमें अनुत्कृष्ट स्थित एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परयोगमका अनंदरयातवा भाग कम बोस को इंकोड़ी सागर तक होती है। भय और जुगुप्साका भंग स्त्रीवेदके समान है।

्र ६२२. हास्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है । जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्योपमके असंख्यावें भाग कम तक होती है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका मंग मिध्यात्वके समान है । सोलह कपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती है । जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक आविल कम तक होती है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उनमें ते अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है । अथवा 'एक समय कम उत्कृष्ट स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट शिविसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है । अथवा 'एक समय कम उत्कृष्ट स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर' जानना चाहिये। नपुंसक्वेदकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती है सौर अनुत्कृष्ट भी। उनमेंसे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कम अपनी उत्कृष्ट ?

सागरोवमकोडाकोडीच्रो पलिदो० असंखे०भागेणूणाद्यो। अरदि-सोग० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा त्रणुकस्सा। समयूणमादिं कादृण जाव वीसंसागरोवमकोडाकोडीओ पलिदो० ब्रसंखे०भागेणूणात्रो। रदि-भय-दुगुं छाओ किम्रुक्क० त्रणुक्क० १ णियमा उक्कस्सा। एवं रदि०।

§ ८२३ अरदि० उक्कस्सिद्धिदिविहत्तियस्स मिच्छत्त० किमुक्क० अणुक० १ उक्कस्सा अराक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं काद्ण जाव पिलदो० असंखे०भागेणूणा । सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो । सोलसक० णवुंसगभंगो । इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदाणं रिदमंगो । हस्स-रिद० किमुक० १ णियमा अणुक्क० । समयूण-मादिं कादृण जाव अंतोकोडाकोडि ति । सोग-भय-दुगुंछाणं णियमा उक्कस्सा । एवं सोग० ।

है ८२४ भय० उक्क०हिदिवि० मिच्छत्त०-सम्म० - सम्मामि० - सोलसक०-तिण्णिवेद० ऋरदिभंगो । हस्स-रिद-ऋरिद-सोग० णवुं सयभंगो । दुगुं छ० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्क० । एवं दुगुंछ० । एवं सब्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिंदियतिरि० पज्ज०-पंचिं०तिरि० जोणिणी०-मणुसतिय०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिं० — पंचिं० पज्ज० — तस — तसपज्ज० — पंचमण० — पंचविं० — कायजोगि० - स्रोरालि० -

स्थितिसे लेकर पत्योपमका असंख्यातवां भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। अरित और शोककी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती हैं या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती हैं। जा एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्योपमका असंख्यातवां भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती हैं। रित, भय और जुगुष्साकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती हैं। इसी प्रकार रित प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये।

६ ८२३ अरित प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिण्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होता है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भा होता है और अनुत्कृष्ट भा । उनमेसे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कमसे लेकर पत्यापमके असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थितिनक होता है । सम्यक्त्व और सम्यिगिण्यात्वका भंग मिण्यात्वके समान हैं । सोलह कपायोंका भंग नपुंसकवेदके समान हैं । स्त्रीवेद, पुरुपवेद और नपुंसकवेदका भग रितके समान है । हास्य और रितकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती है । जो एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है । तथा शोक, भय और जुगुष्साकी स्थिति नियमसे उत्कृष्ट होती है । इसी प्रकार शोकप्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्ष जानना चाहिये ।

इ न्२४. भयपकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यक्त्व, सम्यक्तिके समान है। हास्य, रित, अरित श्रीर शोकका मंग नपुंसकवेदके समान है। जुगुष्साकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या श्रातुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार जुगुष्सा प्रकृतिकी स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिलकप जानना चाहिये। इसी प्रकार सब नारकी, तियँच, पंचेन्द्रिय तियँच, पंचेन्द्रिय तियँच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तियँच योनिमती, सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस. त्रस पर्याप्त, पांचों मनोयोगी पांचों

वेउव्विय०-तिण्णिवेद०-चत्तारिक०-श्रमंजद**०-**चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०-भवसिद्धि०-सण्णि-आहारि ति ।

इत्रभ् पंचिंदियतिरि०अपज्ज० मिच्छत्त उक्कस्सिट्टिदिविहित्तियस्स सम्मत्त०-सम्मामि० सिया अत्थि सिया णित्थ । जिद अत्थि किम्रुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्कस्सा । अतोम्रुहृत्तृणमादिं कादृण जाव एया द्विदी । णवरि चरिम्रुव्वेल्लण-कंडएण्णा । सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादृण जाव पिल्रदो० असंखे०भागेण्णा । सम्मत्त० उक्कस्सिट्टिदिविहित्तियस्स मिच्छत्त० किम्रुक्क० अणुक्क० १ णियमा अणुक्क० अंतोम्रहुत्तूणा । सम्मामि० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्कस्सा । सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ रिणयमा अणुक्क० । अंतोमुहुत्तूणमादिं कादृण जाव पिल्रदोवमस्स अमुंखे०भागेण्णा । एवं सम्मामि० । अणंताणुवंधिकोध० उक्कस्सिट्टिविहित्तियस्स मिच्यत्ति० किमुक्क० अणुक्क० १ उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादृण जाव पिल्रदो० असंखे०भागेण्णा । सम्मत्त० सम्मा-मिच्छत्तभंगो । पण्णारसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्कस्सा ।

वचनयोगी, काययोगी, श्रोदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कपायवाले, श्रसंयत, चत्तुदर्शनवाले, श्रचतुदर्शनवाले, कृष्णादि पांच लेश्यावाले, भव्य, संज्ञी श्रीर त्राहारक जीवोंक जानना चाहिये।

९ ⊏२४ पंचेन्द्रिय तियंच अपर्याप्तकोमें मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्व ये दो प्रकृतियाँ कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो उनकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती है । जो अन्तर्मुहूर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक स्थिति पर्यंत होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसमें अन्तिम उद्वेलना काण्डक प्रमाण स्थितिका घट। देना चाहिय : सालह कपाय त्रीर नी नाकपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट १ उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी। उनमेसे अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कमसे लेकर पत्योपमके असख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती है। सम्यक्त्वका उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होनी है या त्र्यतुत्कृष्ट १ नियमसे अनुत्कृष्ट होती है । जो अपनी उत्कृष्टमे अन्तर्मुहूर्त कम होती है । सम्यग्मि-भ्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट १ नियमसे उत्कृष्ट होती है। सोलह कपाय और नो नोकपायोकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे अनुत्कृष्ट होती हैं। जो अन्तर्मुहूतं कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परुयापमके असंख्यानवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती हैं। इसी प्रकार सम्यग्मिश्यात्वकी स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ष जानना चाहिये। त्रमन्तानुबन्धी कोधकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति क्या उस्कृष्ट होती हैं या अनुःकृष्ट ? उत्कृष्ट भी होती हैं श्रीर श्रमुख्कुष्ट भी । उनमेंसे अनुस्कृष्ट स्थिति एक समय् कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिमे लेकर पत्योपमके असंस्थातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वका भंग मिश्यात्वके समान है। पन्द्रह कपाय श्रौर नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार पन्द्रह कपाय एवं पण्णारसक०-णवणोकसायाणं । एवं मणुसअपज्ज०-वादरेइंदियअपज्ज०-सुहुमेइंदिय-पज्जत्तापज्जत्त-सन्विवगलिंदिय-पंचि०श्रपज्ज०-वादरपुढविअपज्ज०-सुहुमपुढिव-पज्ज-त्तापज्जत्त-बादरश्राउश्रपञ्ज०-सुहुमश्राउ-पज्जतापज्जतः - तेउ-वादरसुहुमपज्जतापज्जत-वाउ०-वादरसुहुमपज्जतापज्जत्त-बादरवणप्फिदिपत्तेय०श्रपज्ज०-णिगोद-बादरसुहुमपज्ज-त्तापज्जत्त-तस्त्रप्रज्जता ति ।

\$ ८२६ त्राणदादि जाव उवरिमगेवजं ति मिच्छत्तुकस्सिटिदिविहत्तियस्स सम्मत्त-सम्मामि० सिया अत्थि, सिया ग्रात्थि । जदि ग्रात्थि किमुक्क० त्रणुक० १ उक्क० अणुकस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा पिल्रदो० त्र्यसंखेभागूणमादि कादूण जाव एगा हिदि ति । णविर चिरमुक्कलणकंडयचिरमफालीयाए ऊणा । सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० । णियमा उक्क० । एवं सोलसक०-णवणोक० । सम्मत्त० उक्कस्सिटिदिविहत्तियस्स मिच्झत्त सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्क० । एवं सम्मामि० ।

🖇 ८२७, अणुद्दिसादि जाव सव्वद्वसिद्धि त्ति मिच्छत्तुक्कस्सद्विदिविहत्तियस्स

श्रोर नो नाकषायोकी स्थितिवभिक्ति धारक जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये। इसी प्रकार मनुष्य श्रपयांप्त, बादर एकेन्द्रिय अपयांप्त, सूक्त एकेन्द्रिय अपयांप्त, सूक्त एकेन्द्रिय अपयांप्त, सूक्त एकेन्द्रिय अपयांप्त, सूक्त एकेन्द्रिय अपयांप्त, स्क्रम एकिन्द्रिय अपयांप्त, स्क्रम एथिवीकायिक, सूक्तम प्रथिवीकायिक प्रयांप्त, साक्त प्रयांप्त, सूक्तम प्रथिवीकायिक श्रपयांप्त, बादर जलकायिक अपयांप्त, स्कृत्त जलकायिक, बादर श्रिनकायिक, बादर श्रिनकायिक पर्याप्त, सूक्त्म जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक श्रपयांप्त, बादर वायुकायिक श्रपयांप्त, बादर वायुकायिक अपयांप्त, सूक्त्म वायुकायिक श्रपयांप्त, सूक्त्म वायुकायिक श्रपयांप्त, बादर वायुकायिक अपयांप्त, सूक्त्म वायुकायिक श्रपयांप्त, स्वादर वनस्पतिकायिक श्रप्यांप्त, सूक्त्म वायुकायिक, स्वादर निगाद, बादर निगाद श्रपयांप्त, सूक्त्म निगाद, सूक्त्म निगाद, सूक्त्म निगाद, सूक्त्म निगाद श्रपयांप्त, सूक्त्म निगाद, सूक्त्म निगाद, सूक्त्म निगाद श्रपयांप्त, सूक्त्म निगाद श्रपयांप्त, जीवोंक जानना चाहिये।

§ न्दर, त्रानत करवसे लेकर उपरिम मैंग्रेयक तकके देगोंमें मिण्यातको उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिक धारक जीवक सम्यक्त्व और सम्याग्मण्यात्व य दो प्रकृतियाँ कद्माचन् हे और कद्माचिन्
नहीं हैं। याद हैं ता इनका स्थिति क्या उत्कृष्ट हाती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भी हाती है और /
अनुत्कृष्ट भी। उनमंस अनुत्कृष्ट स्थिति वस्यापमक असंख्यात्व भाग कम अपना उत्कृष्ट स्थितिसे
लेकर एक स्थिति तक होती है। किन्तु इतनी विज्ञपता है कि इसमेसे अन्तिम उद्वलनाकाण्डककी
अन्तिम फालिप्रमाण स्थितियोका घटा दना चाहिये। सालह कपाय और नी नाकपायोकी स्थिति
क्या उत्कृष्ट होती ह या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती ह। इसी प्रकार सोलह कपाय और
नी नाकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिक धारक जीवक सान्नकप जानन। चाहिय। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट
स्थितिक्या उत्कृष्ट होती ह या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार सम्याग्मध्यात्व
की उत्कृष्ट होती ह या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार सम्याग्मध्यात्व
की उत्कृष्ट होती ह या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार सम्याग्मध्यात्व
की उत्कृष्ट होती ह या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार सम्याग्मध्यात्व

🖇 ८२५, अतुदिशसे लेकर सवाथासाद्ध तककं देवाम मिथ्यात्वका उत्क्रष्ट स्थितिविभक्तिके

सम्मत्त-सम्मामि०-सोलमक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्क० । एवमेक्केक्कस्स । एवमाहार०-ग्राहारमिस्स०-ग्रवगद०-ग्रकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइयद्वेदो०-परिहार०-ग्रहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-खइय-उवसम०-सामण०-दिहि ति ।

इंदर- एइंदिय-बादरेइंदिय-तप्पज्ञ०-पुढिवि०-बादरपुढिवि०-बादरपुढिविपज्ञ०-श्राड०-बादरशाउ०-बादरश्राउपज्ञ०-वणप्पदि- वादरवणप्पदिपत्तेयसरीर - तप्पज्ञ०-ओरालियिमिस्स-वेउव्वियमिस्स-कम्मइय०-श्रमण्णि०-अणाहारि०-मदि०-सुद०-विहंग०-भिच्छादिष्ठि ति ओषं। णविर एइंदियादि अणाहारिपज्ञंत्तेसु धुवबंधीणमुक्कस्सिष्टिदि-विहत्तियस्स चदुणोक० उक्कः श्राणुक्क० वा। समऊणमादिं कादृण जाव अंतोकोडा-कोडि ति। चदुणोक० उक्कस्सिष्टिदिवि० धुवबंधीणमुक्क० अणुक्क० वा। सम्यूण-मादि कादृण जाव पितदो० श्रमंखे० भागेणूणा। समऊणाविठऊणा ति एसो विससो जाणियच्वो।

इत्ह. श्राभिणि०-सुद् - श्रोहि० मिच्छत्तु क्रास्सिटिदिविहितियस्स सम्मत्त-सम्मामि० किमुक्क० अणुक्क० १ णियमा उक्क० । सालसक०-णवणोक० किमुक्क० धारक जीवक सम्यवस्य, सम्यागभ्ध्यात्व, सालह कपाय श्रार ना नाकपायाका स्थात क्या उत्कृष्ट हाती है या अनुत्कृष्ट १ नियमसे उत्कृष्ट हाती है। इसी प्रकार प्रत्यक प्रकृतिकी स्थितिविभक्तिक धारक जीवक सीन्नकप कहना चाहिय। इसी प्रकार श्राहारक्रवाययागा, श्राहारक्रमिश्रकाययागी, श्रापातवेदी, अकपायवाल, मनःपययञ्चाना, स्थत, सामायिकसंयत, छेदापस्थापनास्यत, परिहार-विशुद्धिसंयत, सूदमसापराथिकसंयत, व्याख्यातसंयत, स्यतासंयत, चायिकसम्यग्टाष्ट, उपशमसम्यग्टिष्ट श्रीर सासादनसम्यग्टिष्ट जीवाक जाननः चाहिय।

इ न्द्र- एकंन्द्रिय, वादर एकंन्द्रिय, वादर एकान्द्रिय पयाप्त, प्रथिवीकायिक, वादर प्रथिवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त, जलकायिक, वादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त, वनस्पति कायिक, बादर जनस्पतिकायिक पर्याप्त, व्यादार वनस्पति कायिक प्रत्येक शरीर पयाप्त, त्रीदारिकमिश्र-काययोगी, वोक्रायकामश्रकाययोगी, कामणकाययागी, असज्ञा, अनाहारक, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञाना और मिण्याद्याप्ट जावाक आवक समान साजकप जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि एकंन्द्रियास लेकर अनाहारकोत्तक जावाम श्रुवर्वान्धना प्रश्रुतियाकी उत्कृष्ट स्थिति विशेषता है कि एकंन्द्रियास लेकर अनाहारकोत्तक जावाम श्रुवर्वान्धना प्रश्रुतकृष्ट मा। उनमेसे अनुत्कृष्ट स्थित एक समय कम अपनी उत्कृष्ट स्थितसे लेकर अन्तःकोड़ाकाड़ा सागर तक होती है। चार नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितियाकी क्रियति प्रकृतकृष्ट मिथिति एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्योपमके असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति तक होती है। यहां पर एक समय कम या एक आवली कम उत्कृष्ट स्थित होती है इतना विशेष जानना चाहिए।

६ म२६. आभिनियोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोमे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिकं धारक जीवकं सम्यक्त्य और सम्यग्मिध्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट १ नियमसे उत्कृष्ट होती है। सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या उत्कृष्ट अणुक्क० ? उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०मागेणूणा । एवं सम्मत्त-सम्मामि० । अर्णताणु०कोधुक्कस्स०-विहत्तियस्स सम्मत्त-सम्मामि० किमुक्क० अणुक्क ? उक्कस्सा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पितदो० असंखे०भागेणूणा । पण्णारसक०-णवणोक० किमुक्क० अर्णुक्क० ? णियमा उक्क० । एवं पण्णारसक०-णवणोकसायाणं । एवोमहिदंस०-सम्मा०-वेदय० ति० ।

इत् दुनकलेस्सिय० पंचिं वितिर्वे अपज्ञत्तमंगो । अभव० सम्मत्त-सम्मामि० वज्ज० श्रोघं । सम्मामि० मिच्छत्तु कस्सिट्टिविदितियस्स सम्मत्त-सम्मामि० किमुक्क० अणुक्क० ! त्रांतोमुहुक्णादिं कादृण जाव सागरोवमपुधत्तं । सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० ! आमिणि०भगो । एवं सोलसक०-णवणाक० । सम्मत्तुक्कस्सिटिदिविदित्तियस्स मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० किमुक्क० अणुक्क० ! णियमा अणुक्क० अंतोमुहुत्तूणा । णविर पणुत्रीसकसायाण अंतोमुहुत्तूणमादिं कादृण जाव

होती है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भा होता ह और अनुत्कृष्ट भा । उनमेस अनुत्कृष्ट स्थित एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर पत्यापमके असंख्यानवे भाग कम तक होती है । इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्याग्मध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सम्यक्ष्य आर सम्याग्मध्यात्वक। स्थिति क्या उत्कृष्ट होता है या अनुत्कृष्ट ? उत्कृष्ट भा हाता है और अनुत्कृष्ट भी । उनमेसे अनुत्कृष्ट स्थिति अपेत्ता एक समय कमसे लेकर पत्यापमके असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति कक होती है । पन्द्रह कपाय और नो नाकपायोंकी स्थित क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार पन्द्रह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये। इसी प्रकार अवधिदशनवाले, सम्यग्दिष्ट और वेदकसम्यग्दिष्ट जावाके जानना चाहिये।

ई द्वं शुक्तलंश्यावालां के पंचान्द्रिय तियंच अपर्याप्तकों के समान मंग है। अभव्यों के सम्यक्त्व श्रार सम्यग्निध्यात्वको छाड़ कर शेष कथन आवके समान है। तात्प्य यह है कि अभव्यों के सम्यक्त्व श्रार सम्यग्निध्यात्व ये दा प्रकृतियां नहीं होतीं, अतः इनके साथ अन्य प्रकृतियों का श्रार अन्य प्रकृतियों के साथ इनका मित्रक्ष नहीं प्राप्त होता। शेष प्रकृतियों का सिन्नक्ष श्रीवके समान है। सम्यग्निध्याद्यां मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिक धारक जीवके सम्यक्त्व आर सम्यग्निध्याद्यकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट। नियमसे अनुत्कृष्ट होती है। जो अन्तमुहूत कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिहे या अनुत्कृष्ट। यहाँ आमिनियायिक ज्ञानियों के समान भंग है। इसी प्रकार सालह कपाय और नो नोकपायों कि सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिक धारक जीवके समान भंग है। इसी प्रकार सालह कपाय और ना नोकपायों के उत्कृष्ट स्थितिवभक्तिक धारक जीवके सम्यात्व, सोलह कपाय और नो नोकपायों के स्थिति क्या उत्कृष्ट हिती है या अनुत्कृष्ट १ नियमसे अनुतकृष्ट होती है। जो उत्कृष्ट स्थिति अन्तमु हूते कम होती है। किन्तु इतनी विशेषना है कि पच्चीस कपायों की अनुतकृष्ट स्थिति अन्तमु हूते कमसे लेकर पत्योपम क असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट स्थिति सक होती है। सम्यग्निध्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुतकृष्ट १ नियमसे उत्कृष्ट होती सक होती है। सम्यग्निध्यात्वकी स्थित क्या उत्कृष्ट होती है या अनुतकृष्ट १ नियमसे उत्कृष्ट होती सक होती है। सम्यग्निध्यात्वकी स्थिति क्या उत्कृष्ट होती है या अनुतकृष्ट १ नियमसे उत्कृष्ट होती

पछिदो० अमंखे०भागेणूणा ति । सम्मामि० किमुक्क० त्रणुक्क० १ णियमा उक्क० । एवं सम्मामि० ।

एवगुक्कस्महिदिसण्णियासो समत्तो ।

## **अ जहएण्डिदिसिएण्यासो** ।

६ =३१ सुगममेदं ।

🕸 मिच्छत्तजहरण्एिदिसंतकम्मियस्स ऋणंताणुवंधीणं एित्थ ।

६ = ३२ अणंताणुवंधीणं णत्थि सिण्यासो ति संबंधो कायच्यो । कुदो १ पुत्र्यं चेव विसंजोइदार्णं तत्थ हिदिसंताभावादो ।

- 🕸 सेसाणं कम्मणं दिविविहत्ती किं जहण्णा अजहण्णा ?
- ६ = ३३. सुगममेदं।
- 🏖 णियमा अजहरणा।
- ु ८३४. कुदो, उवरि जहण्णद्विदिं पडिवज्जमाणाणमेत्थ जहण्णत्तविरोहादो ।
- 🏵 जहरुणादो अजहरुणा असंखेजगुण्डभहिया।

६ ८३५. कुदो ? मिच्छत्तस्स दुसमयकालगिहदीए सेसाए सम्मत्त-सम्मामि-च्छत्ताणं पिट्टदोवमस्स असंखेज्जिदभागमेताणं बारसकसाय-णवणोकसायाणमंतीकोडा-कोडिसागरोवममेत्ताणं हिद्रीणमवसिद्वाणमुवलंभादो ।

हैं । इसी प्रकार सन्यग्मिश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति विभक्तिके धारक जीवके सिन्नकप जानना चाहिये । इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिसिन्नकपं समाप्त हुन्ना ।

अब जघन्य स्थितिके सिन्नकर्पका अधिकार है ।

६ ⊏३१ यह सूत्र सुगम है।

अं मिथ्यात्वकी जघन्य स्थित सत्कर्मवाल जीवके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका सिक्कि नहीं है ।

§ =३२ यहां पर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका सन्निकपे नहीं है, इस प्रकार संबन्ध करना चाहिय, क्योंकि मिथ्यात्वकी जयन्य स्थिति प्राप्त होनेके पहले हा इसकी थिसंयोजना हो जाती है, अतः इसका मिथ्यात्वकी जयन्य स्थितिके समय स्थिति सत्त्व नहीं पाया जाता है।

अ मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति सत्कर्मवाले जीवके शेष कर्मोंकी स्थितिविभक्ति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ?

§ =३३. यह सूत्र सुगम है।

# नियमसे अजघन्य होती है ।

९ ८२४. क्योंकि शेष कर्मोर्का जघन्य स्थिति आगे जाकर प्राप्त होनेवाली है, अतः उनकी
यहां जघन्य स्थिति माननेमें विरोध आता है।

\* वह अजयन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थिति से असंख्यातगुणी अधिक होती है ।

§ द्रश्वकोकि जब मिश्यत्वकी दो समय काल प्रमाण एक स्थिति शेष रहतो है तब सम्यक्त्व और सम्यग्गिश्यात्वकी पल्यापमके असल्यातवें भागप्रमाण तथा बारह कवाय और नौ नोकषायोकी अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थिति शेष पाई जाती है।

# 🕸 मिच्छुत्रोण णीदो सेसेहि वि ऋणुमिगयव्वो ।

ं ८३६ मिच्छत्तजहण्णिहिदीए सह सिण्णियासी णीदी कहिदी पद्धिदी ति षत्तं होदि । सेसेहि वि कम्मेहि एसो जहण्णसिण्णियासो अणुमिग्यव्वो गवेसियव्वो त्ति उत्तं होदि ।

्र = ३७. एवं जइवसहाइरियमुहविणिग्गय चुण्णिसृत्ताणां देमामासिएण सृचि-दस्स उच्चारणपरूवणं कस्सामो । जहण्णए पयदं । दुविहो णिह्सो — श्रोघेण आदेसेण । ओघेण मिच्छत्त - जहण्णिहिदिविहत्तियस्स सम्मत्त-सम्मामि० किं जह० अजह० ? णियमा अजह० अससे० गुण्डभिहया । बारस०-णवणोक० किं जह० अजह० ? णियमा अज० असंसे० गुण्डभिहया । अणंताणुवंधी णिस्संता ।

६ ८३८. सम्मत्तस्स जह० वारसक०-णत्रणोक० किं जह० अज० ? णियमा अज० अमंखे०गुणब्भिहया। सेसस्स असंतं।

् ८३६, सम्मामि० जह०विहित्तियस्स मिच्छत्त-सम्मत्त-ऋणंताणु० सिया ऋत्थि सिया रात्थि । यदि ऋत्थि किं जह० अजह० ? णियमा अज० ऋसंखे०गुण्यमिहिया। बारसक०-एवरणोक० किं ज० ऋज० ? णियमा ऋज० असखेळागुणा।

\* जिस प्रकार मिथ्यात्वके माथ सब प्रकृतियोंका सिन्नकर्ष कहा है उसी प्रकार शेष कर्मोंके साथ भी उसका विचार करना चाहिये।

्र प्रश्न जिस प्रकार मिश्यात्त्रकी जघन्य स्थितिके साथ सन्तिकपं कहा है उसी प्रकार रोष कमें कि साथ भी यह जघन्य सन्तिकपं कहना चाहिये । सूत्रमे जो 'णीदों' पद है उसका अर्थ 'कहना चाहिये, प्रस्तपण करना चाहिये' यह होता है तथा 'अणुमिगयव्यो' पदका अर्थ खोजना चाहिये' होता है ।

६ न३७ इस प्रकार यतिवृपभ आचार्यंके मुखसे निक्ते हुए चूर्णिस्त्रोंके देशामर्पक हानेसे स्चित हुए अर्थकी उचारणाका कथन करते हैं—अब जयन्य सिन्नकर्पका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेचा मिथ्यात्वकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य १ नियममे अजयन्य होती है। जो अपनी जयन्य स्थितिमें असंख्यात गुणी अधिक होती है। बारह क्याय और नौ नोकपायोकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य १ नियमसे अजयन्य होती है, जो अपनी जयन्य स्थितिसे असंख्यात गुणी अधिक होती है। तथा अनन्ता-नुवन्धीका यहाँ अभाव है।

६ न३८. सम्यक्त्वकी जबन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके वारह कपाय और नी नोकपायोंकी स्थिति क्या जबन्य होती है या श्रज्ञचन्य १ नियममे अजबन्य होती है। जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी श्रिक होती है। इसके शेप प्रकृतियोंका सत्त्व नहीं है।

्र प्रशेष्ट, सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य म्थितिके धारक जीवके मिण्यात्व, सम्यक्त्व और श्रमन्तानुबन्धी चतुरक ये छह प्रकृतियाँ कदाचिन् हैं श्रोर कदाचिन नहीं हैं। यदि हैं तो इनकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं। जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे

६ ८४०, अएंतासु०कोध० जह० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-बारसक०-णव-स्रोक० किं ज० अज०? स्थिमा अज० असंखेळागुसा। तिष्णिक० किं ज० [अजह०]? स्थिमा जह०। एवं तिष्हं कसायासं।

९ ८४१ अपचक्लाणकोध० जह०विहत्तियस्स चत्तारिसंज०-णवणोक० किं ज० अज० १ णियमा अज० असंखे०गुणा । सत्तकसाय० किं जह० अज० १ णियमा जह० । एवं मत्तकसायाणं ।

्र ८४२. इत्थि०न०विहत्तियम्स सत्तर्णोक०-तिण्णिसंजल० किं जह० अज० १ णियमा श्रज० मंखे०गुणा । लोभसंज० किं जह० अज० १ णियमा अज० असंखे०-गुणा । एवं णवुंस० ।

६ ८४३. पुरिस॰ज॰विद्दत्तियस्स तिण्हं मंजत्त॰ किं ज॰ अज॰ १ शियमा अज॰ संखेज्जगुणा । लोभसंज॰ किं जह॰ अज॰ १ णियमा अज॰ असंखे॰गुणा ।

६ ८४४, हस्मज् तिण्णिसंज्ञ०-पुरिस० किं जह० अज० ? शियमा ऋज०

ऋसंख्यातगुणी ऋधिक होती हैं। बारह कपाय ऋौर नो नोकपायोंकी स्थित क्या जवन्य होती है या ऋजघन्य ? नियमसे ऋजघन्य होती हैं। जो ऋपनी जयन्यस्थितिसे ऋसंख्यातगुणी होती हैं।

्रमश्रः अनन्तानुबन्धी कोधकी जपन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निध्यात्व वारह कपाय और नो नोकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। जो जघन्य (स्थितिसे असंख्यात्तगुणी होती है। अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजवन्य ? नियमसे जघन्य होती हैं। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोंकी जयन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्ण जानना चाहिये।

६ ८४१ अप्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवक चार संज्वलन खोर नो नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजघन्य १ नियममे अजघन्य होती हैं। जो अपनी जघन्य स्थितिसे अमंख्यातगुणी होती है। रोप अप्रत्याख्यानावरण मान आदि सात कपायों की स्थिति क्या जघन्य होती है । अजघन्य १ नियममे जघन्य होती है। इसी प्रकार अप्रत्याख्या-वरण मान आदि सात कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्घ जानना चाहिये।

६ ६४२. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सात नोकपाय श्रीर तीन संज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती है । जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुर्गी होती है । लोभसंज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे अजघन्य हाती है ? जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुर्गी होती है । इसी प्रकार नपुसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये।

्र ८४२ पुरुपंवदकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके तीनों संज्वलनोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य १ नियमसे श्रजवन्य होती है जो अपनी जवन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। लोभ संज्वलनकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य १ नियमसे श्रजवन्य होती है। जा श्रपनी जवन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है।

्र ८४४, हास्यकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके तीन संज्वलन श्रीर पुरुपवेदकी

संखे ॰ गुणा । लोभसं जल ॰ किं जह ॰ अजह ॰ ? णियमा अज ॰ असंखे गुणा । पंच-णोक ॰ किं जह ॰ अज ॰ ? णियमा जहण्णा । एवं पंचणोक ॰ ।

१ ८४५ कोधसंजल जह विहत्तियस्स दोसंजल किं जह अजह १ णियमा अज १ संखे ज्ञगुणा । लोभ ० किं ज ० अज ० १ णियमा अज ० , असंखे ० गुणा । माणसंज ० जह ० विहत्तियस्स मायासंज ० किं ज ० अज ० १ णियमा अज ० संखे ० गुणा । लोभ किं ज ० अज ० १ णियमा अज ०, असंखे ० गुणा । मायामं जल ० जह ० विहत्ति ० लोभ ० किं ज ० अज ० १ णियमा अज ० असंखे ० गुणा ।

्र ८४६ तोभसंज ० जह० हिदि० सेसंगित्य । एवं मणुस-मणुसपज्ज०-मणुसिणी-पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालि०-लोभक०-चक्खु०-अचक्खु०-सुक्क०-भवसि०-सिण्णि०-आहारि त्ति । णविर मणुमपज्जत्तएस इत्थि० जहण्णिहिदिविहत्तियस्स चदुसंजल०-सत्तणोक० णियमा अज० असंखे०गुणा । णवुंस० सिया अत्थि सिया णित्थि । जिद्द अत्थि, णियमा अज० असंखे०गुणा । मणुस्सिणीस णवुंस० ज० हिदिवि० चदुसंज०-अहणोक० णियमा

स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। लोभ संज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। पाँच नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार पाँच नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ष जानना चाहिये।

६ ८४५. क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितियभक्ति के धारक जीवके दो संज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है । जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है । लोभ मंज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है जो जघन्य स्थितियभक्तिके धारक जीवके मायासंज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है । मानसंज्वलनकी जघन्य स्थितियभक्तिके धारक जीवके मायासंज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है । या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है , जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है । लोभसंज्वलनकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है । मायासंज्वलनकी जघन्य स्थितियभक्तिके धारक जीवके लोभसंज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है । या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है । जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है । मायासंज्वलनकी जघन्य स्थितियभक्तिके धारक जीवके लोभसंज्वलनकी स्थिति क्या जघन्य होती है । या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है , जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है ।

इ मर्४६. लोभसंज्यलनकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके शेप प्रकृतियाँ नहीं पाई जाती हैं। इसी प्रकार अर्थात अंगवके समान मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, पंचीन्त्रय, पर्याप्त, अस, यस पर्याप्त, पाँचों मनायागी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, ब्राँदारिककाययोगी, लोभ कपायवाले, चनुदर्शनवाले, अचनुदर्शनवाले, शुक्ललेश्यावाले, भव्य, संझी श्रीर आहारक जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोमें स्नीवेदकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके चार संज्वलन और सान नोकपायोंकी नियमसे अजघन्य स्थिति होती है श्रीर वह जघन्य स्थितिसे असंख्यानगुणी होती है। तथा नपुंसकवेद कदाचिन् है स्रीर कदाचिन् नहीं है। यदि है तो उसकी स्थिति नियमसे अजघन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। मनुष्यनियोमे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके चार संज्वलन गुणी होती है। मनुष्यनियोमे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके चार संज्वलन

अज०, श्रमंखे०गुणा । पुरिस० छण्णोकसायभंगो ।

श्रीर श्राठ नोकपायोंकी स्थिति नियमसे श्रजवन्य होती हैं, जो जवन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती हैं। तथा पुरुपवेदका संग छह नोकपायोंके समान हैं।

६ ८४७ त्रादेशकी त्रपंत्रा नारिकयोंमे मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके बारह कषाय, भय श्रीर जुगुप्मार्का स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? जघन्य भी होती है श्रीर श्रजघन्य भी। उनमें से श्रजघन्य स्थिति एक समय श्रधिकसे लेकर पत्योपमके श्रसंख्या-तवें भाग अधिक जघन्य स्थिति तक होती है। सम्यक्त्व प्रकृति कदाचिन हैं और कदाचिन् नहीं है। यदि है ता उसकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। जो जघन्य स्थितिमे डिस्थान पतित होती हुई संख्यातगुणी अधिक होती है या असंख्यातगुणी श्रिधिक होती है। सम्यामाध्यात्व कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं है। यदि है तो उसकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। उनमेंमे अजघन्य स्थिति जवन्य स्थितिसे द्विस्थान पतित होती हुई मंख्यातगुणी या असंख्यातगुणी होती है। यह स्थिति निषेकोंकी प्रधाननामें कही हैं। अन्यथा जघन्य स्थितिसे अजघन्य स्थिति तीन स्थान पतित होती है। अनन्तानुबन्धी चुष्दकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है. जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। मान नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजधन्य ? नियमसे श्रजधन्य होती है, जो जधन्य स्थितिसे श्रसंख्यातवें भाग श्रधिक होती है ? सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिक्भिक्तिके धारक जीवके वारह कपाय और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है, जो जवन्यसे संख्यातगुणी होती है । सम्यग्मिश्यात्वकी जवन्य ।स्थ**िविभक्तिके धारक जीवके मिश्यात्व, बारह कपाय, श्रोर** नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? जवन्य भी होती है और अजघन्य भी। यदि अजधन्य होती है तो वह जधन्यसे असंख्यातवें भाग अधिक, संख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी प्रधिक इस प्रकार तीन स्थान पानित होती है। तथा श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति नियमसे अजवन्य होती हैं। जो जबन्यसे असंख्यातगुणी होती है। अनन्तानुबन्धी स्रसंखे ० गणा । स्रणंताणु ० कोघ० ज० विह ति । मिच्छत्त-बारसक ० - णवणोक ० किं ज० स्रज ० १ णि अत्र० संखे ० गुणा । सम्मामि ० किं ज० अजह० १ णियमा अज ०, स्रसंखे ॰ गुण ० मिच्छ । तिण्ह मणंताणु वंघीणं किं ० ज० स्रज ० १ णि० जहण्णा । एवं तिण्हं कसायाणं । स्रपच क्सायं ० कोघज० विह ति ० मिच्छ ० - एकारसक ० किं ज० स्रज ० १ स्रज वितं तु सम उत्तरमादिं कादृण जाव पिल ० स्रसंखे ० भाग ० मिच्छत्त-बारसक ० - स्रज ० १ णिय० जहण्णा । सम्मत्त-सम्मामि० - स्रणंताणु ० च उक्क ० स्तरणोक ० मिच्छत्त भंगो । एव मेकारसक ० । इत्थि० ज० विह ति ० मिच्छत्त-बारसक ० म्हणोक ० किं ज० स्रज ० १ णि० स्रज ० संखे ० गणा । सम्मत्त - सम्मामि० - स्रणंता ० च उक्क ० मिच्छत्त भंगो । एवं पुरिस० । एवं से ज० अज० १ णियमा स्रज ०, संखे ० गुणा । हस्सरिव० किं ज० अज० १ णियमा स्रज ०, संखे ० गुणा । हस्सरिव० किं ज० अज० १ णियमा स्रज ०, संखे ० गुणा । हस्सरिव० किं ज० अज० १ णियमा स्रज ० वेहाण पदिदा स्रसंखे ० भाग ० भहिया संखे ० गुणा ० भहिया वा । सम्मत्त - सम्मामि० - स्रणंताणु ० च उक्क ० मिच्छत्त भंगो ।

क्रोधकी जघन्य स्थितिके धारक जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजयन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं, जो जघन्यसे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है। जो जबन्यसे असंख्यातगुणी अधिक होती है। शेप तीन अनन्तानुबन्धियोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे जघन्य होती हैं। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोंकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवक सांत्रकर्ण जानना चाहिये। अप्रत्यान ख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिविभिवतंके धारक जीवके अप्रत्याख्यानावरण मा**न आदि** ग्यारह कपायोका स्थित क्या जघन्य होती है या अजधन्य ? नियमसे जघन्य होती है। भिध्यात्व की स्थिति क्या जवन्य होती है या अजधन्य ? जवन्य मा हाती है ओर अजघन्य भी। उनमंसे अजयन्य स्थिति जयन्य स्थितिकी ऋषेत्रा एक समय अधिकसे लकर पत्योपमके असंख्यातवें भाग तक अधिक होती है। भय और जुगुप्साकी स्थिति क्या जघन्य हाती है या अजधन्य ? नियमसे जबन्य होती हैं। सम्यक्त्व, सम्य/ग्मध्यात्व, अनन्तानुबन्यी चतुष्क और सात नोकपायोंका भंग मिश्यात्वक समान है। इसी प्रकार अत्रत्याख्यानावरण मान त्यादि ग्यारह क्यायाकी जधन्य स्थितिविभक्तिके घारक जावक सिन्नकर्ण जानना चाहिये । स्त्रीवदकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय त्रोर त्राठ नोकपायोकी न्यित क्या जवन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजवन्य होती है, जा जवन्यसे संख्यातगुणी अधिक होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्निध्यात्व श्रीर श्रानन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिध्यात्वक समान है। इसी प्रकार पुरुपवेदका जघन्य स्थितिविभक्तिक धारक जावक जानना चाहिये। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय, स्त्रीवंद, पुरुषवंद, ऋरति, शांक, भय और जुगुप्साकी स्थिति क्या जवन्य हाती है या अजवन्य ? नियम ते अजवन्य हाती है जा जवन्यसे संख्यातगुणी अधिक होती है। हास्य और रितकी स्थित क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होता है, जो जबन्यसे असंख्यातगुणी ऋधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। तथा सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व त्र्योर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिध्यात्वके समान है। किसी उच्चारणामें अरित और शोककी स्थित हास्य श्रीर रितके

किम्ह वि उचारणाए अरिद-सोगिहिदी हस्सरदीणं व वेहाणपिददा ति भणिद, तं जाणिय वत्तव्वं । हस्स० जह० विहत्ति० मिच्छत्त०-बारसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुंछ० किं ज० अज० १ णियमा अज० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि०-अर्णताणु० चडक० मिच्छत्तभंगो । इत्थि०-पृरिस०वे० किं ज० अज० १ णि० अज० विद्वाणपिददा असंखे०भाग० संखे०गुणा कमिच्छत्त-वारसक०-हस्स-रिद० किं ज० अज० १ णियमा अज० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि०-अर्णाताणु०चडक० मिच्छत्तभंगो । इत्थि-पुरिस-णवुंस० किं ज० अज० १ णियमा अज० विद्वाणपिददा असंखे०भागव्मिहिया संखे०गुणा-बमिहिया वा । सोग० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं सोग० । भयस्स ज० विद्वत्ति० मिच्छत्तवारसक० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं सोग० । भयस्स ज० विद्वत्ति० मिच्छत्तवारसक० किं ज० विद्वाणपिददा असंखे०भागव्मिहिया संखे०भाग-हमिहिया संखे०भागव्मिहिया वा । दुगुंछ० किं ज० अज० १ णियमा जहण्णा । सेसं मिच्छत्तभंगो । एवं दुगुंछाए । एवं पटमाए पुटवीए ।

\$ ८४८. विदिय।दि जाव छिंड ति भिच्छत्त ज० विहत्तियस्स सम्मत्त-सम्मामि०

समान दो स्थान पतित कही है मा जानकर उसका कथन करना चाहिये। हास्यकी जघन्य स्थिति विभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय, नपुंसकवेद, अरति. शोक, भय अौर जुगुष्माकी स्थिति क्या जवन्य होतो है या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती है, जो जवन्य स्थितिसे संख्या-तगुणी होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिश्यात्वके समान है। स्त्रीवंद और पुरुपवंदकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है, जो जघन्यसे ऋसंख्यातवे भाग ऋधिक या संख्यातगुणी ऋधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। रतिकी स्थिति क्या जधन्य होती है या अजधन्य १ नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार रतिकी स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिश्वकर्प जानना चाहिये । अरतिकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्व बारह कपाय, भय, जुगुप्सा, हास्य और रितकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका मंग मिध्यात्वके समान है । स्त्रीवेद पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दी स्थान पतित होती है। शोककी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे जघन्य होती हैं। इसी प्रकार शोककी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये। भयकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व खोर बारह कपायकी स्थित क्या जवन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे अजवन्य होती है। जो जघन्यसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातवें भाग अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। जुराप्साकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजधन्य ? नियमसे जघन्य होती हैं। शेप कथन मिध्यात्वके समान है। इसी प्रकार जगुप्साकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्घ जानना चाहिये । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये।

§ ८४८. दूसरीसे लेकर छठी पृथिचीतककं नारिकयोमे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिविभक्तिके

किं जि श्रजि १ णियमा श्रजि असंखे । गुणा । बारसक किं जि श्रजि १ णियमा जहण्णा । एवं वारसक । ज्यजि शिष्या । सम्मिन । सम्मिन । सम्मिन । सम्मामि । अर्णताणु । सम्मामि । अर्ज । अर्ज । अर्ज । अर्ज । सम्मामि । अर्णताणु । सम्मिन । सिम्मिन । स

🖇 ८४६, सत्तमाए पुढर्वीए भिच्छत्त० ज० विहत्ति० वारसक०-भय-दुगुं छा० कि ज० अज० ? जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अज० समयुत्तरमादि कादण जाव धारक जीवक सम्यक्त्व ओर सम्यागमध्यात्वका स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य? नियमसे अजधन्य हाती है, जा जधन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी हाती है। बारह कपायों और नी नोकपायोंकी स्थिति क्या जबन्य होती है या ऋजबन्य १ नियमसे जघन्य होती है । इसी प्रकार बारह कपाय श्रीर नी नोकपायोंकी जवन्य स्थितिविभिक्ति धारक जावक सन्निकण जानना चाहिये । सम्यक्त्वकी जबन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके भिश्यात्व, बारह कपाय श्रौर नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है, जो जयन्य स्थितिसे संख्यात्गुणी होती हैं। सम्यग्मिण्यात्व ऋौर श्रनन्तानबन्धी चतुरककी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती है। जो जवन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। सम्यग्मिण्यात्वकी जयन्य स्थितिविभक्तिके घारक जीवके मिण्यात्व, बारह कपाय श्रौर नौ नौकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है। जो अपनी ज्ञघन्य स्थितिसे सख्यातगुणी होती है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या ऋजवन्य ? नियमसे ऋजवन्य होती हैं, जो ऋपनी जवन्य स्थितिसे ऋसंख्यातगुणी होती हैं। इसके सम्यक्त्व प्रकृति नहीं हैं इसलिये उसका सन्निकर्ण नहीं कहा। श्रनन्तानुबन्धी क्रोंधकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व वारह कपाय और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजबन्य १ वियमसे अजबन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे श्रसंख्यातवें भाग श्रीधक या संख्यातवें भाग छाविक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। सम्यक्त्व त्रीर सम्यग्मिध्यात्वका स्थिति क्या जघन्य होती है या त्रजघन्य १ नियमसे त्रजघन्य होती है, जा श्रपना जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुर्णी होती है। श्रमन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य १ नियमसे जवन्य होती है। इसी प्रकार श्रनन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन प्रशृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ध

ु ८४६. सातवीं पृथिवीमे मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य ! जवन्य भी होती है और

१ ऋा० प्रतौ संखे० गुणा इति पाठः ।

पित्रो० असंखे०भागव्मिहिया । सम्मत्त-सम्मामि० अणंताणु०चउक्क० किं ज० अज० ? णि० अज० असंखे०गुणा । सत्तणोक० किं ज० अज० ? णियमा अज० असखं०भागव्मिहिया । एवं वारमकमायाणं, णविर भय-दुगुं छा० तं तु समयुत्तरमादिं० जाव आविलयब्मिहिया । सम्मत्त०जह० विहत्ति० मिच्छत्त-वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० शिण० अज० संखे०गुणा । सम्मामि० किं ज० अज० शिणयमा अज० असंखे०गुणा । अणंताणु० चउक्क० विद्यपुद्धविभंगो । सम्मामि० एवं चेव, णविर सम्मत्तं णित्य । अणंताणु० कोथ० ज० विह्ति० मिच्छत्त-वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० शिण० अज० विद्याणपिद्दा अमंखेज्ञभागव्मिहिया संखे०भागव्मिहिया वा । सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो । तिण्णि क० किं ज० अज० शिण० ज० । एवं तिण्हं कसायाणं । इत्थि० ज० विद्वत्ति० मिच्छत्त-वारसक०-अद्युणोक० किं ज० अज० शिणयमा अज० असंखे०गुणा । सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० किं ज० अज० शिणयमा अज० असंखे०गुणा । एवं पुरिस० । णवुंस० ज० विद्वत्ति० मिच्छत्त-

श्रजघन्य भी। उनमेसे श्रजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिकी श्रपेचा एक समय श्रधिकसे लेकर पत्योपमके ऋसंख्यातवे भाग तक ऋधिक होती हैं । सम्यक्तव, सम्यग्मिश्यात्व और श्रानन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियममे अजघन्य होती है। जो अपनी जघन्य स्थितिमे असंख्यातगुणी अधिक होती है। सात नोकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या ऋजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है, जा अपनी जघन्य स्थितसे असंख्यातवें भाग श्रिधिक होती है। इसी प्रकार बारह कपायोको जबन्य स्थिति।वसक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति श्रजघन्य होती है. जो अपनी जघन्य स्थितिमें एक समय अधिकसे लेकर एक अधिकत्व अधिक होती है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिक धारक जीवक मिध्यात्व बारह कपाय और नौ नौकपायोकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुण्। होती है। सम्यागमध्यात्वकी स्थिति क्या जयन्य हाती है या अजयन्य १ नियमसे अजघन्य होती है। जा अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग दुसरा पृथिवीके समान हैं। सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके घारक जीवके इसी प्रकार मन्तिकर्ण जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व प्रकृति नहीं है। अनन्तानुबन्धी क्रांधकी जयन्य स्थितिविभक्तिक धारक जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे ऋसंख्यातवे भाग ऋधिक या सख्यातवें भाग ऋधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिश्यात्वका भंग भिश्यात्वकं समान है। ऋनन्तानुबन्धी मान ऋादि तीन कपायोकी स्थिति क्या जघन्य हाती है। या अजघन्य १ नियमसं जघन्य होती है। इसी प्रकार श्चनन्तानुबन्धी मान त्रादि तीन कपायोकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय, ऋौर ऋाठ नोकपार्योकी स्थिति क्या जघन्य हो ते है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। सन्यक्त्व, सन्यग्निध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है जो अपनी जघन्य

बारसक०-इत्थि-पुरिस०-ऋरदि-सोग-भय-दुगुंछ० किं ज० अज० ? णियमा अज० संखे०गुणा । सम्मन-सम्मामि०-अणंताणु०चडकक० किं ज० अज० ? णियमा अज० असंखे०गुणा । हस्स-रिद० किं ज० अज० ? णि० अज० वेहाणपिद्दा असंखे० भागव्मिहिया संखेज्जगुणा वा ? हस्स जह० विहित्ति० मिच्छत्त०-बारसक०-णबुंस०-अरिद—सोग—भय-दुगुंछ० किं ज० अज० ? णि० अज० संखेज्जगुणा । सम्मन-सम्मामि०-अणंताणु०चडकक० णवुंस० भंगो । इत्थि-पुरिस० किं ज० अज० ? णिय० अज० वेहाणपिद्दा असंखे०भागव्मिहिया संखे०गुणा वा । रिद० किं ज० अज० ? णियण अज० वेहाणपिद्दा असंखे०भागव्मिहिया संखे०गुणा वा । रिद० किं ज० अज० ? णियमा जहण्णा । एवं रिद० । अरिद० जह० विहित्ति० मिच्छत्त-बारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुंछ० किं ज० अज० ? णियमा अज० संखे०गुणा । सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०चडकक० रिद्मंगो । तिण्णि वेद० किं ज० अज० शिय० अज० वेहाणपिद्दा असंखे०भागव्भिहिया संखे० गुणा वा । सोग० किं ज० अज० ? णियमा जहण्णा । एवं सोग० । भय ज० विहित्ति० मिच्छत्त०-बारसक० किं ज० श्रज० ? णियमा जहण्णा । एवं सोग० । भय ज० विहित्ति० मिच्छत्त०-बारसक० किं ज० श्रज० ? णियमा जहण्णा । एवं सोग० । भय ज० विहित्ति० मिच्छत्त०-बारसक० किं ज० श्रज० ? णियमा

स्थितिसे ऋसंख्यातगुणी होती हैं । इसी प्रकार पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्रा जानना चाहिये । नपुसक्वेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, अरति, शोय, भय और जुगुप्साकी स्थित क्या जघन्य होती है या श्रज्ञचन्य ? नियमसे श्रज्ञचन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व त्रौर त्रानन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जयन्य होती है या श्रज्ञघन्य १ नियमसे श्रज्ञघन्य होती है, जो श्रपनी जघन्य स्थितिमे श्रसंख्यातगुणी होती है। हास्य और रतिकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती है। जो त्रपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। हास्यकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिश्यात्व, बारह कपाय, नपुंसकवेद, श्चरति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य ? नियमसे श्चजवन्य होती है। जो ऋपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्यात्व ऋौर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग नपुंसकवेदक समान है। स्त्रीवेद और पुरुष्वेदकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यानवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतिन होती है। रतिकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार रितकी जघन्य स्थितिविभक्तिवालं जीवके सन्निकर्ण जानना चाहियं। ऋरतिकी जघन्य स्थिति(वभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय, हास्य, रति, भय श्रीर जुगुष्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजधन्य ? नियममे अजधन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे सख्यातगुणी होतीहै। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व ऋौर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग रतिके समान है। तीनों वेदोंकी स्थित क्या जयन्य होती हैं या श्रजघन्य १ नियमसे श्रजघन्य होती है। जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतिन होती हैं। शोककी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या ऋदाघन्य १ तियमसे जघन्य होती हैं। इसी प्रकार शोककी जघन्यस्थितिविभक्तवाने जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये । भयकी जघन्य स्थिति विभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व और बारह कपायकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? तिद्वाणपदिदा त्रमंखे० भागव्भिहिया संखे०भागव्भिहिया संखे०गुणा वा । दुगुंछ० किं ज० अज० १ णि॰ जहण्णा । सेसं मिच्छत्तभंगो । एवं दुगुंछा० ।

नियमसे श्रजघन्य होती हैं, जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग श्रधिक, संख्यातवें भाग श्रधिक या संख्यातगुणी श्रधिक इस पकार तीन स्थान पतित होती है। जुगुन्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य १ नियमसे जघन्य होती है। शेप प्रकृतियोका भंग मिध्यात्वके समान है। इसी प्रकार जुगुण्साकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ण जाननः चाहिये।

🖇 🛶 ० तिर्यंचगतिमे तिर्यंचोमे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके बारह कपाय, भय त्रीर जुगुप्साकी स्थिति क्या जवन्य होती है या त्रजवन्य १ जवन्य भी होती हैं और अजघन्य भी। उनमेसे अजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिकी अपेदा एक समय अधिकसे लेकर पत्योपमके असंख्यातवें भाग अधिक तक होती है। सम्यक्त्वप्रकृति कदाचिन हैं ऋौर कदाचित् नहीं हैं। यदि है तो उसकी स्थिति क्या जयन्य होती है या ऋजधन्य ? नियमसे श्रजघम्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी अधिक या असंख्यात गुणी इस प्रकार दो स्थानपतित होतो है। सम्यग्मिश्यात्व कदाचित् ह श्रोर कदाचित् नहीं है। यदि है तो उसकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ जवन्य भी होती है और अजवन्य भी । उनमेसे अजवन्य स्थिति ऋपनी ज्ञान्य स्थितिसे संख्यातगुणी या ऋसंख्यातगुणी इस प्रकार दो स्थानपतित होता है । श्चनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्वजघन्य १ नियमसे श्वजघन्य होती है जो अपनी जवन्य स्थितिसे ऋसंख्यातगुणी होती है। सात नोकपायोकी स्थिति क्या जवन्य होती है या ऋजघन्य ? नियमसे ऋजघन्य होती हैं, जो ऋपनी जघन्य स्थितिसे ऋसंख्यातवेंभाग अधिक होती है। इसी प्रकार बारह कपायोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्प कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि वारह कपायोमेसे किसी एक कपायकी जबन्य स्थितिके रुके रहने पर भय और जुगुप्साकी स्थिति क्या जवन्य होती है। या अजवन्य 🕻 नियमसे श्रजघन्य होती हैं, जो अपनी जघन्य स्थितिसे एक समय अधिकसे लेकर एक आविलितक ऋधिक होती है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जोवके वारह कपाय और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। जो अपनी

मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० ? जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा तिहाणपदिदा असंखे० भागव्भिहिया संखे०भागव्भिहिया संखे०गुणव्भिहिया वा । अणताणु०चउक्क० किं ज० अज० ? णि० अज० संखे०गुणव्भिहिया । अणंताणु० कोध० जह० विहत्ति० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० ? णि० अज० अंसंखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० किं ज० अज० ? णियमा अज० असंखे०गुणा । तिण्णिक० किं ज० अजह० ? णि० जहण्णा । एवं तिण्हं कसायाणं । भय० ज० विहत्ति० मिच्छत्त-बारसक० कि ज० अज० ? जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा असंखे०भागव्भिह्या । सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक० मिच्छत्त-भंगो ! सत्तरणोक० किं ज० अज० ? णि० अज० असंखे०भागव्भिह्या । दुगुंछ० किं ज० अज० ? णि० अज० असंखे०भागव्भिह्या । दुगुंछ० किं ज० अज० ? णि० जहण्णा । इत्थि० जह० विहत्ति० मिच्छत्त-बारसक०-अहणोक० किं ज० अज० ? णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक० मिच्छत्तभंगो । एवं पुरिस० । णवुंम० जह० विहत्ति० मिच्छत्त०-अणंताणु०चउक० मिच्छत्तभंगो । एवं पुरिस० । णवुंम० जह० विहत्ति० मिच्छत्त०-

जघन्य स्थितिसे संख्यानगुर्णी होती है। सम्यग्मिश्यात्त्रकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय और नौ नाकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजघन्य १ जघन्य भी होती है और अजघन्य भी । उनमेसे अजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातवेंभाग श्रिधिक, संख्यातवेंभाग अधिक या संख्यातगुणी श्रिधिक इस प्रकार तीन स्थान पतित होती है। श्रमन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जधन्य होती है या श्रजधन्य १ नियमसे अजधन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी अधिक होती है। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व बारह कपाय त्र्योर नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजधन्य ! नियमसे अजधन्य होती है. जो अपनी जधन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यान्वकी स्थिति क्या जधन्य होती है या अजधन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती है जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है। श्रनन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कषायोंकी स्थित क्या जयन्य होती है या श्रज्यन्य ? नियमसे जयन्य होती है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोंकी जघन्य स्थितिके धारक जीवके सन्नि-कर्ष जानना चाहिये। भयकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व श्रीर बारह कपायकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? जघन्य भी होती है और अजघन्य भी। उनमेंसे श्रजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यानवें भाग अधिक होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिथ्यात्वके समान है। सात नोकपायोंकी स्थित क्या जवन्य होता है। या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है, जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे असल्यानवें भाग श्रिधिक होती है। जुराप्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? तियममे जघन्य होती हैं। इसी प्रकार जुगुल्साको जघन्य स्थिति-विभक्तिके धारक जीत्रके सन्निकर्प जानना चाहिये। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय और आठ नोकपायोंकी स्थित क्या जवन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती हैं, जो श्रपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। सम्यक्त, सम्यग्मिण्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिण्यात्वके समान है। इसी प्रकार

१ आ ॰ प्रतौ 'संखेजगुगां इति पाठः।

बारसक०-इतिथ-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछ० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्त सम्मामि०-अणंतः णु०चउनक० इतिथ०भंगो । हस्स-रदि० किं ज० अज० [णियमा अज० ] वेद्दाणपिददा असंखे०भागव्मिहया संखे०गुणा वा । हस्स ज० विहत्ति० मिच्छत्त-वारसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछ० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि०-अणंता०चउक० णवुंसमंगो । हित्थ-पुरिस० किं ज० अज० १ णि० अज० वेद्दाणपिददा असंखे०भागव्मिहया संखे०-गुणा वा । रदि० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं रदीए । अरदि० जह० विहत्ति० मिच्छत्त-वारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुं छा० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक० हस्समंगो । तिण्णि वेद० किं ज० अज० १ णि० अज० वेद्दाणपिददा असंखे०भागव्मिहया संखे०गुणा वा । सोग० किं ज० अज० १ णि० अज० वेद्दाणपिददा असंखे०भागव्मिहया संखे०गुणा वा । सोग० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं सोग० ।

्रद्रश्र पंचिंदियतिरिक्स ०-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणी० मिच्छत्त० जह० विहस्ति० वारसक०-भय-दुगुंद्या० किं ज० अज० १ जहण्णा अजहण्णा वा ।

पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये । नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय, स्त्रीवंद, पुरुषवंद, ऋरति, गांक, भय श्रीर जगुष्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जचन्य स्थितिमे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग स्त्रीवेदके समान है। हास्य श्रीर रतिकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजयन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो ऋपनी जघन्य स्थितिसे ऋसंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी ऋधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। हास्यकी जघन्य स्थितिविभक्तिवा क जीवके मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद अरित, शांक, भय और जुराप्माकी स्थित क्या जघन्य होती है या जघन्य ? नियमसे अजधन्य हाती है जा अपनी जधन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्बद्धाः, सम्यग्मिण्यात्व त्र्योर त्रानन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग नपुंसकवद्के समान है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषंद्की स्थित क्या जवन्य होती है या श्रज्यन्य १ नियमसे श्रज्यन्य होती है जो श्रमंख्यातवें भाग श्रधिक या मंख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। रतिकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार रितकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सञ्चिक्षं जानना चाहिये। ऋरतिकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिध्यात्व, बारहकवाय, हास्य, रति, भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग हास्यके समान है। तीनों वेदोंकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती हैं जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दा स्थान पतित है । शोककी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे जवन्य होती है। इसी प्रकार शोककी जवन्य स्थितिविभक्तिवालं जीवके सिन्नकर्ण जानना चाहिये।

\$ ५५१. पंचेन्द्रियतियँच, पचेन्द्रियतियँच पर्याप्त श्रीर पंचेन्द्रियतिर्यंच योनिमती जीवोंमें मिथ्यात्वकी जपन्य स्थितिहमास्तवाले जीवके बारह व.शाय भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति क्या जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादृण जाव पिलदो ० असंखे ० भाग ब्या १ णविरे भयदुगुंछ ० तिहाणपिददा । सम्मत्तं सिया अत्थि सिया णित्थ । जिद अत्थि किं ज ० अज ० ? णि० अज ० वेहाणपिददा संखे ० गुणा असंखे ० गुणा वा । सम्मामि० सिया अत्थि सिया णित्थ । जिद अत्थि, किं ज० अज ० ? जहण्णा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा विहाणपिददा संखे ० गुणा असंखे ० गुणा वा । अपंताणु ० च उ व कि ज० अज ० ? णि० अज ० असंखे ० गुणा । सत्तणो क० किं ज० अज १ णि० अज ० तिहाण पिददा असंखे ० भाग व मिच्छ त्ते सिया पा । प्वं वारसक साय ० । भय ० जह ० मिच्छ त्त वारसक ० न्दुगुंछ ० किं ज० [अज ० ] ? अज ० तं तु समयुत्तरमादिं कादृण जाव पिलदो ० असंखे ० भाग व भिष्टे या । से सं मिच्छ त्ते भो । प्वं दुगुंछ ० । सम्मत्त ज० विहित्ति ० वारसक ० णवणो क० किं ज० अज ० ? णि० अज ० संखे ० गुणा । सम्मामि० ज० विहित्ति ० मिच्छ त्त - वारसक ० णवणो क० किं ज० अज ० ? णि० अज ० संखे ० गुणा । सम्मामि० ज० विहित्ति ० मिच्छ त्त - वारसक ० णवणो क० किं ज० अज ० ? णि० अज ० सिखे ० गाग वा । जहण्णादो अजहण्णा तिहाणपिददा असंखे ० भाग व भाग

जघन्य होती है या अजघन्य १ जबन्य भी होती है और अजघन्य भा । उनमंसे अजघन्य स्थिति एक समय ऋधिक जघन्य स्थितिसे लेकर परुयापमके असंख्यातवें भाग ऋधिक तक हाती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति तीन स्थानपतित होती है। सम्यक्त्व कदाचित् है ऋौर कदाचित् नहीं है। यदि है ता उसकी स्थित क्या जयन्य होती है या अजयन्य ? नियमसे अजवन्य हाती है जो संख्यातगुणी अधिक या असख्यात गुणी अधिक इन प्रकार दो स्थान पतित होती है। सम्यग्निध्यात्व कदाचित् है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो उसकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजघन्य ? जवन्य भी हाती है आर अजवन्य भा। उनमेसे अजघन्य स्थिति श्रपनी जघन्य स्थितिकी श्रपंत्ता-संख्यात गुणा अधिक या श्रसंख्यातगुणी श्रधिक इस प्रकार **दा** स्थानपतित होती है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जवस्य होता है या अजवस्य १ नियमसे श्रजघन्य होती है जो अपनी जंघन्य स्थितिसे असख्यातगुणी होती है। सात नाकषायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य हाती है जा असंख्यातवें भाग अधिक संख्यातवें भाग ऋधिक या संख्यातगुणी ऋधिक इस प्रकार तीन स्थान पतित होती है। इस प्रकार बारह कषायोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जावांके सन्निकर्प जानना चाहिये। भयकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कषाय, श्रीर जुगुत्साकी स्थिति क्या जघन्यहाती है या श्रजघन्य १ नियमसे अजवन्य होती हैं । फिरभी वह अपनी जवन्य (स्थिनका श्रपेन्न) एक समय श्रधिकसे लेकर परयोपमकं श्रसख्यातवें भाग श्रधिकतक होती है। श्रप भंग मिध्यात्वके समान है । इसी प्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सन्निकर्प जानना चाहिये। सन्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके बारह कपाय श्रीर नी नाकपायोंकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिध्यात्व, बारह कषाय श्रौर नौ नोकषायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? जघन्य भी होती है श्रीर अजघन्य भी। उनमेंसे त्रज्ञघन्य स्थिति त्रपनी जघन्य स्थितिसे त्रसंख्यातवें भाग त्राधिक, संख्यातवें भाग

श्रसंखे ०गुणा । इत्थि ० जह ० विहत्ति ० मिच्छत्त-वारसक ० - श्रहणोक ० किं ज ० अज ० १ णियमा अज ० संखे ० गुणा । सम्मत्त-सम्मामि ० - श्रणंताणु ० च उक्क ० मिच्छत्तमंगो । एवं पुरिस ० । णवुं स ० ज ० विहत्ति ० मिच्छत्त — बारसक ० - इत्थि - पुरिस ० - अरदि - सोग-भय - दुगुं छ ० किं ज ० श्रज ० १ णि० श्रज ० संखे ० गुणा । सम्मत्त - सम्मामि ० - श्रणं ताणु ० च उक्क ० मिच्छत्तभंगो । इस्स - रिद ० किं ज ० श्रज ० १ णियमा श्रज ० वेहाण पिददा श्रसंखे ० भागव्मिहिया संखे ० गुणा । इस्स ० जह ० विहत्ति ० मिच्छत्त - बारसक ० श्ररदि - सोग - भय - दुगुं छ ० किं ज ० अज ० १ णियमा श्रज ० संखे ० गुणा । एवं णवुं स ० । सम्मत्त - सम्मामि ० - श्रणंताणु ० च उक्क ० मिच्छत्तभंगो । इत्थि - पुरिस ० किं ज ० श्रज ० १ णि ० जहण्णा । एवं रदी ए । श्ररदि ० ज ० विहत्ति ० मिच्छत्त - बारसक ० - इस्स - रिद ० भय - दुगुं छ ० किं ज ० श्रज ० १ णि० श्रज ० संखे ० गुणा । सम्मत्त - सम्मामि ० - अगंताणु ० - च उक्क ० हस्स भंगो । तिण्णि वेद ० किं ज ० अज ० १ णि० अज ० वेहाणपदिदा श्रसंखे ०

श्रिधिक या संख्यातगुर्णी श्रिधिक इस प्रकार तीन स्थान पतित होती है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति क्या जचन्य होती है या अजधन्य ? नियमने अजधन्य होती है, जो अपनी जधन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय ऋौर आठ नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती है, जो त्रपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त, सम्यग्मिण्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिध्यात्वके समान है । इसी प्रकार पुरुपवेदकी जघन्य स्थिति-विभक्तिवाले जीवके सन्निकर्ष जानना चाहिये। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाल जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, ऋरात, शांक, भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या ऋजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यात-गुणी होती है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्यात्व श्रौर श्रमन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिश्यात्वके समान हैं। हास्य श्रीर रतिकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य १ नियमसे श्रजघन्य होती है, जो असंख्यातवें भाग अधिक श्रीर संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। हास्यकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय, अर्रात, शोक, भय और जुगुप्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। इसी प्रकार नपुंसकददका भंग जानना चाहिये। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चतुष्करा भंग मिथ्यात्वकं समान है । स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जा अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। रतिको स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार रतिकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सन्निकर्ण जानना चाहिये। त्र्रातिकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, बारह कपाय, हास्य, रिन, भय श्रीर जुगुप्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य? नियमसं अजघन्य होती है, जो अपना जघन्य स्थितिसे संख्यातगुर्गा होती है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व स्रोर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग हास्यके समान है। तीनो वदोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजयन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, भागब्भ० संखे०गुणा वा । सोग० किं ज० अज० ? खा० जहण्णा । एवं सो० । णवरि पंचिं० तिरि० जोणिणीसु सम्मत्त० सम्मामिच्छत्तर्भगो ।

६ ८५२, पंचिं ०तिरि० अपज्ज० मिच्छत्त ज० विहित्ति० सम्भत्त-सम्माभि०बारसक०-णवणोक० जोणिणीभंगो । अणंताणु०च उक्क० किं ज० अज० १ जहण्णा
अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादि काद्ण जाव पिलदो० अगंखे०भागब्मिह्या । सम्मत्त० ज० विहित्ति० मिच्छत्त सोलसक०-णवणोक० किं ज० अज० १
जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अज० तिहाणपाददा अयंखे०भागव्भ० संखे०
भागव्भ० संखे०गुणा वा । सम्माभि० णि० अज० असंखे०गुणा। एवं सम्माभि०, णविर् सम्मत्तं णित्थ । सोलसक० मिच्छत्तभंगो । भय० जह० विच्छत्त-सोलसक०-दुगुंछ०
किं ज० [ अज०] १ अज०, तं तु समयुत्तरमादि काद्ण जाव पिलद्रा० असखे०
भागव्भ० । सेसं मिच्छत्तभगो । एवं दुगुं छाए । सत्त्रणोक० जाणिणभगो । णविर अणंताणु० च उक्क० णि० संखे०गुणा । एवं मणुसअपज्ज०-पंचि०अपज्ज० तसअप-

जो अपनी जवन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक या सख्यातगुणा अधिक इस प्रकार दा स्थान पतित होती है। शाक की स्थिति क्या जाउन्य हाती है या अजवन्य १ नियमसे जवन्य होती है। इसी प्रकार शाकका जवन्य स्थितिविभक्तिवाल जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये। किन्तु इसना विशेषता है कि पंचेन्द्रिय नियंच योतनगत जावाम सम्यक्तवका भग सम्यग्निध्यात्वक समान है।

§ म्पर पंचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्यातकांमं मिध्यात्वकां जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व, सम्याग्मध्यात्व, बारह कवाय श्रोर नी नोकवायाका भंग यानिमात तियचीके समान है। अनन्तानुबन्धा चतुष्कका (स्यात क्या जधन्य हाता है या अजवन्य ? जधन्य भी हाता है और अजवन्य भी । उनमस अजवन्य स्थित अपनी जवन्य स्थितिकी अपना एक समय अधिकसे लकर पर्यापमक असल्यानव भाग आधक तक हाती है। सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जावके मिण्यात्व, प्रांलह कपाय श्रार ना नाकपायाका स्थित क्या जघन्य हाती है या अजघन्य १ जघन्य भी हाती ह स्रार अजघन्य भा । उत्तमसे अजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिकी अपेत्ता असल्यातवें भाग आधक, सल्यातवे भाग आधक या सल्यातगुणी आधक इस प्रकार तीन स्थान पातत हाती है। सम्यागमध्यात्वका स्थिति नियमसे अजधन्य हाती है जा अपनी जधन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणा हाती है। इसी प्रकार सम्यागिध्यात्वकी जघन्य स्थितिवभक्तियाले जीवक सिन्नकपं जानना चाहिये । किन्तु इतना विशयता है कि इस है सम्यक्त्व प्रकृति नहीं है । सोलह कषायोक्षी जघन्य स्थितिवर्भोक्तवाले जीवके सब प्रकृतियोका सन्त्रकर्प मिध्यात्वके समान है। भयकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिध्यात्व, सोलह कपाय और जगुप्ता ही स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य हाती ह फिर भा वह अपनी जघन्य स्थितिकी अपेचा एक समय अधिकर्स लकर परुयापमका असंख्यातवाँ भाग आधिक तक हाती है। शेप प्रकृतियोंका भंग निष्यात्वके समान है। इसा प्रकार जुगुण्याकी जवन्य स्थितिवर्माक्तवाले जीवके सिक्षकर्षं जानना चाहियं । सात नोकपायोका जघन्य स्थितिविमक्तिवाल जीवरि मंग यानिमती तियँचोकं समान हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थिति नियमसे संख्यात ुणी होती है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, पंचेश्चिय अपर्याप्तक और त्रस अपर्याप्तक

#### उजत्ताणं ।

्र द्वाणं णारयभंगो । भवण० वाणवंतराणमेवं चेव । णविर सम्मत्त्र सम्मामि० भंगो जोदिसि० विदियपुढिविभंगो । सोहम्मीसाणादि जाव उविरमगेवज्ञो- ति मिच्छत्तनह०विहत्ति० वारसक० णवणोक० किं ज० अज० ? णियमा श्रज० संखे० गुणा । सम्मत्त्र० किं ज० अज० ? णियमा श्रज० संखे० गुणा । सम्मत्त्र० किं ज० अज० ? णियमा अज० वेद्वाण- पिददा मंखे० वागमिहिया । कुदो ? उवसमसेढिं चिदय औदिरदूण दंसणमोहणीयं खिवय कदकरणिज्ञो होदूण ५ देवेसुप्पण्णस्य संखेज्जभगवमहियन्त्रवाभादो । संखेज्ज- गुणा वा, जवसमसेढिं चिढिय दंसणमोहणीयं खिवय कदकरणिज्ञो होदूण देवेसुप्पण्णस्य संखेज्जभगवमहियन्त्रवाभादो । संखेज्ज- गुणा वा, जवसमसेढिं चिढिय दंसणमोहणीयं खिवय कदकरणिज्ञो होदूण देवेसुप्पण्णस्य संखेजगुणत्त्रवाभादो । किरियाविरहिदसम्मादिद्वीणं द्विदिखंडयघादो णित्यं ति भणंताणमाहित्याण्ण एदं भणिदं । किरियाप् विणा तिव्वविसोहिवसेण दिदिखंडयघादो देवेसु अत्थि ति भणंताणामहिप्पाएण संखेज्जगुणा चेव । णेरइय०- भवण०-वाण०-जोदिसियसम्माइद्वीणं किरियाप् विणा णित्थ द्विदिखंडयघादो । कुदो ? साभावियादा । सम्मामि० जह० विहत्ति० मिच्छत्त०-वारसक-णवणोक० किं ज०

जावोक जानना चाहिये ।

§ ५५२ देवोंक नारिक्योंके समान भंग है। भवनवासी और व्यन्तर देवोंके इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्वका मंग सम्यग्निक्यात्वके समान है। अ्योतिषा देवाके भंग दूसरी पृथिवीके समान हैं।सौधर्म और ऐशान कल्पसे लेकर उपरिम प्रैवेयक तककं देशोमे मिथ्यात्त्रका जधन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके बारह कपाय और नौ नौकपायोंकी स्थिति क्या जधस्य होता है या अजधस्य १ नियमसे अजधस्य होती है, जो अपनी जधस्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती ह । सन्धक्तको स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजयन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। इसी प्रकार सम्योग्मध्यात्वका भंग जानेना चाहिये । सम्यक्तवकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके बारह कपाय और नी नीकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है जो दो स्थान पतित होती है। उतमेंसे पहली संख्यातवें भाग अधिक होती है क्योंकि जो जीव उपद्माने भी पा चढकर और उनरकर अनन्तर दर्शनमोहनीयका चय करता हुआ कृतकृत्यवेदकसम्य-म्हिष्ट होकर देवोमे उत्पन्न हुआ है उसके उक्त प्रकृतियोंकी स्थिति संख्यातर्वे भाग अधिक देखी जाती है। या संख्यातगुणी अधिक होती है क्योंकि उपशमश्रेणीपर चढ़कर और वहांसे उत्तरकर हर्भनमाहनीयका चय करता हुआ कतकत्यवदक सम्यादृष्टि होकर जो देवोमें उत्पन्न हुआ है उसके उक्त प्रकृतियोकी स्थित संख्यातगुणी ऋधिक देखी जाती है। किया रहित सम्यग्दर्षियोके स्थिति-काण्डकचात नहीं होता है ऐसा माननेवाले आचार्योंके अभिप्रायानुसार उक्त कथन किया है। परन्त जो स्राचाय क्रियांक विना तीव्र विशुद्ध परिए।मोंसे देवोमे स्थितिकाण्ड श्वात होता है ऐसा मानते है उनके अभिप्रायातुसार उक्त प्रकृतियोकी स्थिति संख्यात्गुखी ही होती है। तो भी तारकी, भवनवासी, व्यन्तर और व्यांतिषी सन्यग्दृष्टि जीवोंके कियांक बिता स्थितिकाण्डकघात नहीं होता है क्यांकि ऐसा स्वभाव है । सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके

श्वजः ? णि० अज्ञ० संखे०गुणा । श्रणंतासु० चउक्क किं ज० अज० ? णि० अज्ञ० असंखे०गुणा । श्रणंताणु० कोधज० मिन्छत्त-बारमक०-णवणोक० किं ज० अज० ? णि० श्रज्ञ० संखे०गुणा । सम्मत्तसम्मामि० किं ज० श्रज़० ? णि० श्रज्ञ० असंखे०गुणा । तिण्णिक० किं ज० श्रज्ञ० ? णि० जहण्णा । एवं तिण्हं कसायाणं । श्रपच्च-क्खाणकोधज० विहत्ति० एक्कारसक०-णवणोक० किं ज० श्रज्ञ० ? णि० जहण्णा । एवंकिएसक०-णवणोकसायाणं ।

९८५४ अणुदिसादि जाव सञ्वहिसिद्धि ति भिच्छत्त जह० विहत्ति० वारसक० णवणोक किं ज ज अज० १ णि० अज० संखे ०गुणा । सम्मत्त ० किं ज० अज० १ णि० अज० श णि० जहण्या । एवं सम्मामि० किं ज० अज० १ णि० जहण्या । एवं सम्मामि० । सम्मत्त ० जह० विहत्ती ० वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे ०गुणा । अथवा संखे ०भागच्भ० संखे ०गुणा त्ति वेह।णपदिदा । एतथ कारणं पुन्वं व वत्त्ववं । अर्णताणु ०को ४० ज०विह० भिच्छत्त-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक०

मिध्यात्व, बारह कषाय श्रीर नी नोकषायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्किं स्थिति क्या जघन्य होती हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्किं स्थिति क्या जघन्य होती हैं। अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं, जा अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती हैं। अनन्तानुबन्धी कोधकी जघन्य स्थितिधभक्तियांले जीवके मिध्यात्व, बारह कपाय और नी नोकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। सम्यक्त्य और सम्यन्तिभक्ति क्या जघन्य होती हैं। या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं, जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती हैं। अनन्तानुबन्धी मान आदि नीन कपायोकी स्थिति क्या जघन्य ? नियमसे जघन्य होती हैं। उसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि नीन कपायोकी जघन्य श्थितिवभक्तियां जीवके अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कपाय, और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जयन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे जघन्य हाती हैं। उसी प्रकार अपन्य हाती हैं। इसी प्रकार अपन्य हाती हैं। इसी प्रकार आदि ग्यारह कपाय, और नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जयन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे जघन्य हाती हैं। इसी प्रकार अपन्य हाती हैं। उसी प्रकार अपन्य हाती हैं। इसी प्रकार अपन्य हाती हैं।

§ ५५४. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमं मिध्यात्वकी जयन्य स्थितिविमक्तियाले जीवके बारह कपाय और नौ नोकषायोकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य ? नियममं अजयन्य होती है जो अपनी जयन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्वकी न्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य ? नियममे अजयन्य होती है, जो अपनी जयन्य स्थिति क्या जयन्य होती है। सम्यग्मिध्यात्वकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य ? नियमसे जयन्य होती है। सम्यग्मिध्यात्वकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य ? नियमसे जयन्य होती है। इसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्वकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मानकपं जानना चाहिये। सम्यक्त्वकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके बारह काय और नो नोकपायोंकी स्थिति क्या जयन्य है या अजयन्य ? नियमसे अजयन्य है जो अपनी जयन्य स्थितिसे संख्यातगुणी है। अथवा संख्यातवेभाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दा स्थान पतित है। यहाँ पर कारण पहलेके समान कहना चाहिये। अनन्तानुवन्धी कोधकी जयन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके

किं जि॰ अजि॰ ? णि॰ अजि॰ रंग्वे॰गुणा । सम्मत्ति किं जि॰ अजि ? णि॰ अजि॰ श्चमंखे॰गुणा । तिण्णिक ॰ किं जि॰ अजि॰ ? णि॰ जहण्णा । एवं तिण्हं कसायाणं । अपच्चक्खाण-कोधजि॰ एक्कारसक॰-णवणोक ॰ [कि॰ जह॰ अजि॰ ?] णि॰ जहण्णा । एवमेक्कारसक॰ णवणोकसायाणं ।

्रद्भभ् इंदियाणुबादेण एइंदिएसु मिच्छत्तजह० विहत्ति० सोलसक०-भय-दुगुंद्ध७ किं० ज० अज० ? जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादूण जाव पिलदो० अगंखे० मागेणब्मिह्या । सम्मत्त-सम्मामि० सिया अतिथ सिया णित्थ । जिद्द अतिथ किं ज० अज० ? जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अज० तिहाणपिददा मंखे० मागब्मिह्या संखे० गुणा वा अमंखे० गुणा वा । सत्तणोक० किं ज० अज० ? णि० अज० असर्वे० भागव्मिह्या । एवं मोलसकसाय-भय-दुगुंद्धाणं । णविर भय जह० दुगुंद्ध० णियमा जहण्णा । एव दुगुंद्ध० । भय-दुगुंद्धाणं जहण्णिहिदीए संतीए कथं सोलसकमायाणमसंग्वे० भागव्मिहयत्तं ? ण, सोलसकसायाणं जहण्णिहिदीदो अब्मिहियहिद-

मिध्यात्य, सभ्य गमध्यात्व, वारह कपाय झाँर नी नीकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रज्ञचन्य ? नियमसे श्रज्ञचन्य होती है, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सभ्यक्त्वकी स्थिति यया जघन्य होती है या श्रज्ञचन्य ? नियमसे श्रज्ञचन्य होती है, जो श्रपनी जघन्य स्थिति वया जघन्य होती है। अनन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रज्ञचन्य ? नियमसे जघन्य होता है। इसी प्रकार श्रनन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कपायों की जघन्य श्रितिक्याले जांवक सिन्नकर्प जानना चाहिये। श्रप्रत्याख्यानावरण क्राधकी जघन्य स्थितिविभक्ति भारक जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये। श्रप्रत्याख्यानावरण क्राधकी जघन्य स्थितिवभक्ति भारक जीवके श्रद्याख्यानावरण मान श्रादि ग्यारह कपाय श्रीर नी नोकपायोकी स्थित विभक्ति जघन्य स्थिति विभक्ति धारक जीवके सिन्नकर्प जानना चाहिये।

्रह्म. उन्त्रिय मार्गाम् अनुवादसे एकेन्द्रियोम भिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीद है मोजह वाग्य, भय श्रोर जुगुष्माकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? जघन्य भी होता है और अजघन्य भी। उत्तमेंसे अजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिकी अपेत्ता एक समय अधिक ने लेकर पन्योपम है असर्व्यातवें भाग अधिक तक होती है। सम्यक्त और सम्यम्मिश्यात्व कदाचिन् है और कदाचिन नही। यदि है तो उसकी स्थिति क्या जघन्य होती ह या अजघन्य ? जघन्य भो होती है आंर अजघन्य भी। उत्तमेंसे अजघन्य स्थिति अपनी जघन्य स्थितिमें संख्यातयें भाग अधिक, संख्यातगुणी अधिक या असंख्यातगुणी अधिक इस प्रकार तीन स्थातपिन होती है। सात नोकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। सात नोकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जा अपनी जपन्य स्थितिसे असंख्यातवें भाग अधिक होती है। इसी प्रकार मालह द्वाया, भय और जुगुष्माकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिक्का जानना चाहिये। विन्तु इतनी विशेषता है कि भयकी जघन्य स्थितिवाले जीवके जुगुष्माकी स्थिति नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार जुगुष्माकी जघन्य स्थितिवाले जीवके भयकी स्थिति नियमसे जघन्य होती है।

शंका-भय और जुगुष्माकी जयन्य स्थितिके रहते हुए सोलह कषायोंकी स्थिति असंख्या-तवें आग अधिक कैमे होंगी है ? वंधे जादे वि भय-दुगुंद्याणमाविलयमेत्तकालं जहण्णिहिदिविहित्तिदंसणादो । कसायाणं पुण जहण्णिहिदिविहित्तीए संतीए भय-दुगुंद्धान्त्रो समयुत्तरमादिं कादूण जाव आविलयमेत्तेण अन्मिहियाओ; एक्कस्स वि कसायस्स अजहण्णिहिदीए भय-दुगुंद्धासु संकंताए अप्पिदकसायस्स वि जहण्णिहिदिभावविणामादो । एढम-सत्तमपुढवि॰-पंचिं०तिरिक्ख-भवण०-वाणवेंतरादिसु वि एसो अत्थो एरूवेयच्वो । सम्मत्त० जह० विहित्ति० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० किं ज० [अन०] १ जहण्णा प्रजहण्णा वा । जहण्णादो अज०तिहाणपिददा असंखे०भागवभिह० संखे०भागवभिहिया संखे०गुणा वा । सम्मामि० किं ज० अज० १ णि० अन० असंखे०गुणा । एवं सम्मामि० । णविर सम्मत्तं णित्य । इत्थि०ज०विहित्ति० मिच्छत्त-सोलसक०-अहणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० असंखे०भागवभ० । सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो । एवं छण्णोकसायाणं । एवं सन्व-एइंदिय-पंचकायाणं ।

१८५६ विगलिदिएसु मिच्छत्त जह० विहत्ति । सोलसक०-भय-दुगुंछ० किं ज० अज॰ १ जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अज० समयुत्तरमादिं काद्ण जाव

समाधान-नहीं, क्योंकि संखह कपायोके जघन्य स्थितिसे ऋधिक स्थितिकन्धके होने पर भी भय और जगुष्साकी एक आविल कालनक जघन्य स्थितिविभक्ति देखी जाती है।

परन्तु कपायोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिके रहते हुए भय श्रीर जुगुष्साकी स्थिति श्रपनी जघन्य स्थितिकी अपेत्ता एक समयमे लेकर एक आविल कालतक अधिक होती है क्योंकि एक भी कपायकी श्रज्ञचन्य स्थितिके भय श्रीं जगुरमामें संज्ञान्त होने पर विवित्तित कपायकी जघन्य स्थितिका भी विनाश हो जाना है। पहली त्रीर मानवीं पृथिवीमें तथा पंचेन्द्रिय तियँच, भवन-वासी. और व्यन्तरादिक देवोंमें भी इम ऋर्यका कथन करना चाहिये। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति-विभक्तिके घारक जीवके मिध्यात्व सोलह कपाय और नौ नौकपायोंकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य १ जयन्य भी होती है और अजयन्य भी। उनमें मे अजयन्य स्थिति अपनी जयन्य स्थितिकी अपेत्ता असंख्यातवें भाग अधिक, संख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार तीन स्थान पतित होती हैं । सम्यग्निश्यात्वकी स्थिति क्या जयन्य होती है या **अजधन्य** ? नियमसे अजधन्य होती है। जो कि जबन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। इसी प्रकार सम्य-म्मिथ्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मन्निकर्ष कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके सम्यक्त्य प्रकृति नहीं होती है। खींबेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिकं भारक जीवके मिश्यात्व, मोलह कपाय और आठ नोकपायोंकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजधन्य ? नियमसे अजवन्य होती है, जो जवन्य स्थितिसे अमरुयातवें भाग अधिक होती है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निश्यात्वका भंग मिश्यात्वके समान है। इसी प्रकार छह नोक्यायोंकी जघन्य स्थिति-विभक्तिके धारक जीवके सन्तिकर्ष जानना चाहिये। इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय श्रीर पाँच स्थावरकाय जीवोंके जानना चाहिये।

६ ५५६ विकलेन्द्रियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभिक्तिके धारक जीवके सोलह कषाय भय खौर जुगुल्साकी स्थिति क्या जघन्य होती है या खजघन्य १ जघन्य भी होती है खौर अजघन्य भी। उनमेसे खजघन्य स्थिति खपनी जघन्य स्थितिकी खपेना एक समय अधिकसे

पिलदो॰ अमंखे॰भागन्मिहिया । णविर भय-दुगुं बाओ तिद्वाणपिददा । सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियमंगो । सत्तणोक० किं० ज० अज० १ णि० अज० तिद्वाणपिददा असंखे॰भागन्भिहिया मंखे॰भागन्भि० संखे॰गुणन्भिहिया वा । एवं सोखसकसाय-अय-दुगुं छाणं । णविर भयजह० दुगुं ० किं ज० [अजह०] १ अजह० तं तु समयुत्तरमादिं कादृण जावपिलदो॰ अमंखे॰भागन्भ० । एवं दुगुं०। सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियमंगो । इत्थि० ज०विहत्ति० मिच्छत्त-सोलसक० किं जह० अजहण्णा १ णि० अज० संखे०भागन्भिहिया । अद्वणोक० किं ज० अज० १ णियमा अज० संखे०गुणन्मिहिया । सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो । एवं पुरिस० । णवुं स० ज०विहत्ति० मिच्छत्त-सोलसक०-इत्थि-पुरिस०-अगदि-सोग-भय-दुगुं छ० इत्थिवेदमंगो । सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियभंगो । हस्सरिद० किं ज० अजह० १ णि० अज० वेद्वाणपिददा असंखे०भाग-भिद्या संखे० गुणन्भिहिया वा । इस्सज० विद्वत्ति० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवुं स०-अरिद-सोग-भय-दुगुं छ०-सम्मत्त०-सम्मामि० इत्थिवेदभंगो । इत्थि-पुरिस० किं ज० अज० १ णि० अज० वेद्वाणपिददा असंखे०भाग-अरिद-सोग-भय-दुगुं छ०-सम्मत्त०-सम्मामि० इत्थिवेदभंगो । इत्थि-पुरिस० किं ज० अज० १ णि० अज० वेद्वाणपिददा असंखे०भाग-अरिद्या संखे०गुणन्भिहया वा । रिद० अज० १ णि० अज० वेद्वाणपिददा असंखे०भागन्भिहिया संखे०गुणन्भिहया वा । रिद०

लेकर परुयायमक अमंख्यातव माग अधिक तक हाती हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि भय और जगुष्माकी स्थिति तीन स्थानगतिन हाती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। सात नोकपायोकी स्थित क्या जबन्य होती है या अजधन्य ? नियमसे अजधन्य होती है, जो ऋपनी जबन्य स्थितिकी ऋपेता ऋसंख्यातवें भाग ऋधिक, संख्यातवें भाग ऋधिक या संख्यातगुणी ऋधिक इस प्रकार नीत स्थान पतित होती है। इसी प्रकार सोलह कपाय, भय श्रीर जगुरमाकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिलकर्ष जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि भयकी जवन्य स्थितिवालेके जुगुष्माकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजघन्य १ नियममे अजघन्य होती है। जा अपनी जघन्य स्थितिकी अपेद्धा एक समय अधिकमे लेकर परुरोपमके असंख्यानवें भाग आधिक तक होती है। इसी प्रकार जुगुप्साके विषयमे जानना चाहिये । सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्य त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके घारक जावके एकेन्द्रियोके समान मंग हैं। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके मिध्यात्व स्त्रीर सोलह कपायोंकी स्थि। क्या जधन्य होती है या अजधन्य ? नियमसे अजधन्य होती है. जो जवन्य स्थितिरो सख्यातवें भाग अधिक होती है। आठ नोकपायोंकी स्थित क्या जघन्य होती हैं या श्रजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती हैं, जो जघन्य स्थितिसे संख्यातग्राणी ऋधिक होती है। सम्यक्त और सम्यग्मिण्यात्वका भंग मिण्यात्वके समान है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ष जानना चाहिये । न्युंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिश्वात्व, सोलह कषाय, स्त्रीवंद, पुरुववंद, अर्रात, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका भंग स्त्रीवंदक समान है। सम्यक्तव और सम्यग्मिध्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। हास्य त्रीर रतिकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है. जो श्रसंख्यातवें भाग श्रिविक या संख्यातगुणी श्रिधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। हास्यकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, ऋरति. शोक, भय, जुगुप्सा, सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्वका भंग स्त्रीवेदके समान है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदको स्थिति क्या जघन्य होतीहे या **अजघन्य ? नियमसे अ**जघन्य होती है, जो किं ज॰ अन॰ ? णि॰ जहण्णा । एवं रदीए । अरिद॰ ज॰ विह्ति॰ मिच्छत्त-सोलसक॰-हस्स-रिद-भय-दुगुं छा॰-सम्मत्त-सम्मामि॰ इत्थिवेदभंगो । तिण्णिवेद॰ किं ज॰ अज॰ १ णि॰ अज॰ वेदाणपिददा संखे॰भागब्भिहिया संखेज्जगुणब्भिहिया वा। सोग॰ किं ज॰ अज १ णि॰ जहण्णा। एवं सोग॰।

असंख्यातवे भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दा स्थान पतित होता है। रितकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे जघन्य हाती है। इसी प्रकार रितकी जघन्य स्थितिकिक धारक जीवके सिन्नकर्ण जानना चाहिय। अर्रातकी जघन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवके मिथ्यात्व, सोलह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग स्त्रीवेदके समान है। तीनों वेदोकी स्थित क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है। जो संख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। शोककी स्थिति क्या जघन्य होती ह या अजवन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार शोककी जघन्य स्थितिविभक्तिक धारक जीवक जानना चाढिये।

🖇 =५७. औदारिकमिश्रकाययोगा जीवोंके सामान्य तियंचाके समान भंग है । किन्तु इतती विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्क हा भंग मिध्यात्वक समान ह । वैक्रियककाययोगियामें मिध्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सम्यक्त्व और सम्याग्मध्यात्वका स्थिति क्या जघन्य है या अजधन्य ? नियमसे श्रजघन्य हैं, जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी है। बारह कपाय श्रीर नो नोकपायोंकी स्थिति कया जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। सम्यवस्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवक मिध्यात्व, बारह कषाय श्रीर नी नोकषायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे ऋजवन्य होती हैं, जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणा होती है। सम्याग्मध्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धां चतुष्ककी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती हैं, जो जयन्य स्थितिसे असख्यातगुर्गी होती है। इसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति।वभक्तिकं धारक जीवके सिन्नकर्ष जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता हं कि इसके सम्यक्त्व प्रकृति नहीं होती है। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जधन्य स्थितिविभाक्तके धारक जीवक सम्यक्त और सम्यग्मिध्यात्वकी स्थित क्या जवन्य होती हे या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती हैं, जो जबन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती हैं। मिध्यात्व, बारह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होती है, जा जघन्य स्थितिसे संख्यातगुर्णी होती है। अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोंकी स्थिति क्या

णि॰ जर्हे॰ । एवं तिण्हं कसायाणं । अपच्चक्खासकोधजि॰ विहत्ति॰ एक्कारसक०-णवणोक॰ किं ज॰ अजि॰ १ णि॰ जहण्णा । एवमेक्कारसक०-णवणोकसायाणं ।

इद्या वेडिन्यिमस्स० मिन्छत्त० ज०विह० वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० सखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि॰ किं ज० अज० १ णि० अज० असंखे०गुणा । सम्मत्तज॰ विह० वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० विद्याणपिद्दा असंखे०भागव्यहिया संखे०गुणा वा । सम्मामि॰ ज० वि० मिन्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुछ० किं० ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सत्त-णोक० किं ज० अज० १ जहण्णा अजहण्णा विद्याणपिद्दा असंखे०भागव्यहिया संखे० भागव्य० संखे०गुणा वा । अपच्चक्खाणकोथ० ज० वि० एकारसक०-भय-दुगुंछ० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । सत्तणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा। एवमेकारसकसाय-भय-दुगुंछाणं। अणंताणु० कोथ०-अज० १ णि० अज० संखे०गुणा। एवमेकारसकसाय-भय-दुगुंछाणं। अणंताणु० कोथ०-

जयन्य होती है या अजयन्य १ नियमसे जयन्य होती है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोंकी जयन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्निकप जानना चाहिये। श्रमत्याख्याना-वरण क्रोधकी जयन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कपाय और नो नोकपायोक्ती स्थिति क्या जयन्य होती हैं। अजयन्य १ नियमसे जयन्य होती हैं। इसी प्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कपाय और नो नोकपायाकी जयन्य स्थिति-विभक्तिक धारक जीवके सिन्निक्षे जानना चाहिये।

६ ८५८, वैकियिक्रमिश्रकाययोगियोमे मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके बारह कपाय और नी नोक गयोकी स्थित क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती हैं, जो जबन्य स्थितिसे संख्यातगुर्णा है । सम्यक्त्व त्रार सम्याग्मध्यात्वका स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ नियमसे अजघन्य हाती है । जा जघन्य स्थितिसे असख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्वकी जबन्य स्थातिवभक्तिके धारक जीवक बारह कपाय आर नी नाकपायांकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजयन्य १ नियमसे खजयन्य होती है, जो असंख्यातवें भाग श्रिधिक या संख्यातगुणी इस प्रकार दो स्थान पातत होती है। सम्योग्मध्यात्वकी जबन्य स्थिति-विभक्तिके धारक जीवक मिण्यात्व सोलह कपाय, भय और जुगुप्साकी स्थित क्या जवन्य होती है या अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती है, जो जयन्य स्थितसे संख्यातगुणी होती है। सात नांकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती हुं या अजधन्य । जवन्य भी होती हैं श्रार अजघन्य भी । उनमेसे अजधन्य स्थिति अपनी जधन्य स्थिति हो अपेन्। असल्यानवें भाग आंधर, संख्यातवें भाग ऋषिक या संख्यालगुणी आंधक इस प्रकार तीन स्थान पतित होती है । अप्रत्याख्यानावरण क्रांधकी जबन्य स्थितिावभक्तिके धारक जीवके अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कपाय, भय श्रीर जुगुष्साकी स्थिति क्या जधन्य होती है या अजबन्य १ नियमसे जधन्य होती है। सात नोकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे संज्यातगुणी होती है। इसी प्रकार ग्यारह कपाय भय और जुगुप्साकी जवन्य स्थिति॰ विभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्प जानता चाहिये । श्रमन्तानुबन्धी क्रायकी जवन्य स्थितिविभक्तिके

१ ऋा • प्रतौ 'श्रज • ' इति पाठः ।

जह ० द्विदिवि० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । तिण्णि कसाय० णियमा जहण्णा । एवं तिण्हं कसायाणं । इत्थि० ज० विह०मिच्छत्त-सोलसक०-श्रद्धणोक० किं ज० श्रज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्तसम्मामि० सिया अत्थि सिया णित्थि । जइ श्रतिथ किं ज० श्रज० १ जहण्णा अजहएणा वा । जहण्णादो श्रजहण्णा वेद्दाणपिद्दा मंखे०गुणा अमंखे०गुणा वा । णविरि
सम्म० ज० णित्थि । एवं पुरिस० । णवुं स० ज० वि० मिच्छत्त०-सोलसक०-छण्णोक०
किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० इत्थिमंगो । हस्स-रि०
किं ज० अज० १ णि० अज० तिद्दाणपिद्दा श्रमंखे०भागव्मिहया मंखे०गुणा वा ।
हस्स० जह० विह० मिच्छत्त-सोलसक०-पंचणोक० किं ज० श्रज० १ णि० अज०
संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० इत्थि०भंगो । इत्थि-पुरिस० किं ज० अज० १ णि०
अज० विद्दाणपिद्दा श्रसंखे०भाग०भिहया सखे०गुणा वा । रिद० किं ज० श्रज० १

धारक जावक मिथ्यात्व, वारह कपाय आंर ना नाकपायाकी स्थात क्या जघन्य हाता ह या श्रजवन्य ? नियमसे श्रजवन्य होती हैं। जो अपनी जवन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। (सम्यक्त्व ऋोर सम्यग्मिण्यात्वका भंग मिण्यात्वके समान जानना)। तथा ऋनन्तानुबन्धी मान ऋाहि तीन कपायोंकी स्थिति नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्ता सान आहर तान कपायोकी जबन्य स्थितिविभक्तिरे धारक जीवके सांत्ररूप जानना चाहिये । स्त्रीवेदकी जबन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिण्यात्व, सालह कषाय और आठ नाकपायांकी स्थित क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे अजवन्य हो है, जो जवन्य स्थितसे संख्यानगुणी होती हैं । सम्यक्त्व ऋार सम्यागमध्यात्व कदाचित् है ऋार कदाचित् नहीं है । याद है तो उनकी स्थित क्या जबन्य हाती है या ऋजबन्य १ जबन्य भी होती है और अजबन्य भा । उनमेस त्रजघन्य स्थिति अपना जघन्य स्थितिकी अपेत्रा संख्यातगुर्णा अधिक या असंख्यातगुर्णा अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होता है। किन्तु विशेषता इतना है कि इसके सम्बक्तवका जबन्य स्थिति नहीं होती है। इसी प्रकार पुरुपवद्। जावक सन्निकप जानना चाहिय। नपुसकवेदको जघन्य स्थितिविभाक्तरु धारक जीवरु ।मध्यात्व, साल् क्ष्पाय और छह् नोक्वायाकी।स्थति क्या जबस्य हाता हे या अजघन्य १ नियमसं अजघन्य हाता है। जा अपनी जघन्य स्थिातसं सल्यात्गुणी होती हैं। सम्यक्त्व त्रार सम्याग्मध्यात्वका भंग स्त्रावदक समान है। हास्य त्रार रतिका स्थिति क्या जबन्य होती है या अजबन्य ? ।नयमसे अजबन्य होती है, जा अपनी जबन्य ।स्थतिसे असंख्यातवें भाग अधिक या सख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दा स्थान पानत हाती है। हास्यका जवन्य स्थितिवर्माक्तरु धारक जावक मिध्यात्व, सालह कपाय त्यार पाच नाकपायोकी स्थिति क्या जबन्य होता ह या अजबन्य ? नियमसे अजबन्य होती हैं, जो अपनी जबन्य स्थितिसे संख्यातगुणा हाता है । सम्यक्त आर सम्यग्मिध्यात्वका भंग स्त्रावदीके समान है । स्त्रावद ओर पुरुषवेदका स्थिति क्या जवन्य होती है या अजघन्य ? नियममे अजवन्य होती है, जा अपनी जवन्य स्थितिसे असल्यातवे भाग अधिक या सल्यातगुणी अधिक इस प्रकार दो स्थान पतित होती है। रतिकी स्थिति क्या जघन्य होती है या ऋजघन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार रतिकी जवस्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्प जानना चाहिये । तथा इसी प्रकार इत्पर्धः श्राहार० मिच्छ्रतज्ञ वि० सम्मत्त-सम्मामि० किं ज० श्रज्ञ० १ णि० जहण्णा । बारमक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे ०गुणा । एवं सम्मत्त-सम्मामि० । अणंताणु०को धज्ञ० मिच्छत्त-सम्मत्त सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे ०गुणा । तिण्णिक० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं तिण्हं कमायाणं । अपचक्षाणको धज्ञ० वि० एकारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एकमेक्कारसकसाय-णवणोकसायाणं । एवमाहारमि० । कम्मइय० औरात्तिय मिस्सभंगो । णवरि सत्तणोक० अण्णदरज्ञ० मिच्छ० सोलसक० सेसणोकं० णिय० अज० विद्वाणपदिदा असंखे ०भाग्वभिहिया संखे ०गुणवभिहिया ।

§ ८६०, वंदाणुत्रादेण इत्थि० पंचिंदियमंगो । णवरि इत्थि०ज०वि० सत्तणोक०-चत्तारि संज० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं सत्त्रणोकसाय-चत्तारिसंजलणाणं । एवुं स० जह० विह० अहणोक०-चदुसंज० णि० अज० असंखे० गुणा । एवं णवुंस, अरात श्रोर शाककी जघन्य स्थितिविभक्तिक धारक जीवक सिन्नकप जानना चादिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुसकवेदकी स्थिति दो स्थान पतित होती हैं ।

১ ८५६. आहारक काययांगियोमे मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवोंमे सम्यक्त्व त्रोर सम्याग्मध्यात्वकी स्थिति क्या जवन्य होती हैं या अजवन्य ? नियमसे जघन्य हाती है। बारह कपाय त्र्यार ना नाकपार्याकी स्थिति क्या जघन्य होती है **या ऋ**जघन्य ? नियमसं श्रजघन्य होती हैं, जो अपनी जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। इसी प्रकार सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवक सन्निकप जानना चाहिये। अनन्तानुबन्धी कांधकी जघन्य स्थिति।वभक्तिकं धारक जीवके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्याग्मिथ्यात्व, बारह कषाय श्रीर नो नाकपायाकी स्थित क्या जवन्य होती है या अजवन्य शान्यमसे अजयन्य होती है, जो अपना जवन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य १ । नयमस जघन्य हाती है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कपायोकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्ष जानना चाहिये । श्रप्रत्याख्यानावरण काधकी जघन्य स्थितिविभक्तिकं धारक जावक ग्यारह कषाय और नी नोकपायाकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजधन्य ? नियमसे जघन्य हाती है। इसी प्रकार ग्यारह कपाय त्रीर नो नोकपायोंका जघन्य स्थितिवभक्तिक धारक जावक सन्निकषे जानना चाहिय । इसी प्रकार आहारकामश्रकाययोगी जीवोंक जानना चाहिये । कामएकाययोगियाक त्रांदारिकामश्रकाययागियाक समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सात नोकषायोगेसे किसी भा प्रकृतिका जघन्य स्थितिवालक । मध्यात्व, सीलह कषाय और शेष नोकपायोकी स्थिति नियमसे अजयन्य हाती ह, जा असल्यातव भाग ऋधिक या संख्यातगुणी अधिक इस प्रकार दा स्थान पतित हाती है।

§ ५६०. वद मागणाके अनुवादसे म्त्रीबंदियोका भंग पचेन्द्रियोके समान है। किन्तु इतनी विशेषता ह कि स्त्रीवेदका जवन्य स्थातविभक्तिवाले जीवके सात नाकपाय और चार संज्ञलनो की स्थिति वया जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे जवन्य होती है। इसा प्रकार सात नोक-षाय और चार सञ्जलनोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिन्नकर्ष जानना चाहिये।

१ ऋा॰ प्रतौ 'संसे गोक' इति पाठः।

पुरिस० एवं चेव । एवरि पुरिस० ज॰ वि० चतारिक० किं ज० अज० १ एि। जहण्णा । एवं चदुण्हं संजलगाएं । छण्णोक० पुरिस०-चदुमंज० णि० अज० संखे०गुणा ।

इट्रिश् अवगद्मिच्छत्तज० वि० सम्मत्त-सम्मामि० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । अहकसाय०-इत्थि-णवुंस० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । चदुसंज०-सत्तणोक० किं० ज० अज० १ णि० अज० असंखे०गुणा । एवं सम्म०-सम्मामि० । अपचक्ताणकोधज०वि० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० णित्थ १ सत्तक०-इत्थि-णवुंस० किं० अज० १ णि० जहण्णा । चत्तारिसंजल०-सत्तणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० असंखे०गुणा । एवं सत्तकसायाणं । इत्थि ज० वि० चत्तारिसंजल०-सत्तणोक० किं० ज० अज० १ णि० अज० असंखे०गुणा । अहक०-णवुंम० णि० जहण्णा । एवं णवुंस० । सत्तणोक०-चत्तारिसंजलणाणमोघं ।

नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके आठ नोकपाय और चार संज्वलनोंकी स्थिति नियमसे अजघन्य होती है जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। इसी प्रकार नपुंसकवेदी जीवके जानना चाहिये। पुरुपवेदी जीवके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके चार संज्वलन कपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे जघन्य हाती है। इसी प्रकार चार संज्वलनोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके धारक जीवके धारक जीवके प्रतिविभक्तिके धारक जीवके प्रतिविभक्तिके धारक जीवके प्रतिविभक्तिके धारक जीवके पुरुपवेद और चार संज्वलनोंकी स्थिति नियमसे अजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है।

६ ८६१ ऋपगतवेदियोमे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सम्यक्त्व सम्यग्मिश्यात्वकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजवन्य १ नियमसे जवन्य होती है। आठ कपाय, स्त्रीवेद ऋौर नपुंसकवेदकी स्थिति क्या जघन्य होता है या अजघन्य १ नियममे अजवन्य होती है जो जवन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है । चार संज्वलन और सात नोकपायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? नियमसे अजघन्य होता हैं। जो जघन्य स्थितिसे असंख्यात-गुणी होती है। इसी प्रकार सम्यक्तव और सम्यग्मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिकं धारक जीवके सन्निकर्षं जानना चाहिये। त्रापत्याख्यान क्रोधकी जवन्य स्थितियभक्तिकं धारक जावके मिध्यात्व, सम्यवत्व स्त्रीर सम्यग्मिध्यात्व ये तीन प्रष्टतियाँ नहीं है। सात कपाय, स्त्रीबंद स्त्रीर नपुंसकवेदकी स्थिति क्या जवन्य होती है या अजधन्य १ नियमसे जवन्य होता है । चार सुज्यलन श्रीर सात नोकवायोंकी स्थिति क्या जघन्य होती है या अजधन्य १ नियमसे श्रजधन्य होता है जो जयन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। इसी प्रकार सात कपायोकी जयन्य स्थिति-विभक्तिके धारक जीवके सन्निकर्प जानना चाहिये। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति विभिन्तके धारक जीवके चार संज्वलन श्रीर सात नोकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य १ नियमसे अजघन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणा हाती है। आठ कपाय और नपंसकवेदकी स्थिति नियमसे जधन्य होती हैं। इसी प्रकार नप्रभकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके सिक्नकर्ष जानना चाहिय। सात नोकपाय श्रीर चार सञ्वलनाकी जावन्य स्थिति विभक्तिके धारक जीवोंके छोघके समान जानना चाहिये।

्र ८६२ कसायाणुवादेण कोभ ॰ पंचिदियभंगो । णवरि कोभ ० ज०वि० तिण्णिसंज ० किं ज ॰ अज० १ णि० जहण्णा । एवं तिण्हं संजलणाणं । एवं माण० । णवरि दोण्णि० संजल ० णि० जहण्णा १ एवं माय० । णवरि एगसंज ० णियमा जहण्णा ।

्द्र अकसा० मिच्छ्रतज्ञ०वि० सम्मत्त-सम्मामि० किं ज० श्रज्ञ० १ णि० जहण्णा । बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० श्रज्ज० संखे०गुणा । एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छ्रतागां । श्रपञ्चक्खाणकोधज० वि० एकारसक०-णवणोक० किं ज० श्रज्ज० १ णि० जहण्णा । एवमेकारसक०-णवणोकसायाणं । एवं सुहुमसांपराय-जहा-क्खादाणं । णविर सुहुम०लोभमंज० जह० वि० सेसं णित्थ । सेस० जह० लोभसंज० णिय० श्रज्ज० श्रसंख०गुणा ।

ः ८६४, णाणाणुवादेण मित्सुदश्रण्णा० तिरिक्खोघं । णवरि श्रणंतासु० चडक० मिच्छत्तभंगो । सम्मत्त०सम्मामिच्छत्तभंगो । एवमभवसि० मिच्छायिद्वि०-ग्रसण्णी० । णवरि अभवसिद्धिएसु सम्मत्त०-सम्मामि० णित्थ । विहंग० मिच्छत्त ज० वि० सोलसक०-

६ द्वर् क्याय मार्गगाके अनुवादमे कांधी जीवका पंचेन्द्रियोके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कांधकी जयन्य स्मितिविभक्तिवाले जीवके तीन संज्वलनोंकी स्थिति क्या जयन्य होती है या अजयन्य १ नियममे जयन्य होती हैं। इसी प्रकार मान आदि तीन संज्वलनोंकी ज्ञान्य स्थिति विभक्तियाले जीवके मिनकर्ष जानना चाहिये। इसी प्रकार मानी जीवके जानना चाहिये। किन्तु उतनी विशेषता है कि इसके माया आदि दो संज्वलनोंकी स्थिति नियमसे जयन्य होती है। इसी प्रकार मार्या जीवके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके लोभ संज्वलनकी स्थिति नियमसे जयन्य होती है।

§ द्वहर कपायरहित जीवों में मिश्यात्वकी जपन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व श्रोंर सम्यग्मिश्यात्वकी म्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे जघन्य होती है। बारह कपाय श्रोर नो नोकपायोकी स्थिति क्या जघन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती है, जो जघन्य स्थितिसे संख्यात्यागा होती है। इमी प्रकार सम्यक्त श्रोर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवोंके जानना चाहिये। श्रप्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवोंके जानना चाहिये। श्रप्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य होती है या श्रजघन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार श्रेप ग्यारह कपाय और नो नोकपायोंकी जघन्य श्रितिविभक्तिके धारक जीवोंके मन्तिकर्प जानना चाहिये। इसी प्रकार सूदम सांपरायिक संयत श्रोर यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सूद्मसंपराय गुण्स्थानमे लोभ सञ्चलनकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके श्रेर प्रकृतियाँ नहीं हैं। तथा शेष प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जावके लोभसंज्यलनकी स्थिति नियमसे श्रजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जावके लोभसंज्यलनकी स्थिति नियमसे श्रजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जावके लोभसंज्यलनकी स्थिति नियमसे श्रजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जावके लोभसंज्यलनकी स्थिति नियमसे श्रजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिविभक्तिके धारक जावके लोभसंज्यलनकी स्थिति नियमसे श्रजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिमें श्रसंख्यात्त्राणी होती है।

§ द्दश्र ज्ञान मार्गलाकं अनुवादमे सत्यज्ञाती जीशमें सामान्य तियँचोंके समान कथन जानना चाहियं। किन्तु इतनी विद्येशता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिध्यात्वके समान है तथा सम्यक्तका भग सम्यग्मिध्यात्वके समान है। इसी प्रकार अभव्य, निध्यादृष्टि ख्रौर असंज्ञी जीशोक जानना चाहिये। किन्तु इतनी विद्येपता है कि अभव्य जीवोके सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्व ये दो प्रकृतियां नहीं हैं। विभंग ज्ञानियोंमे मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिके

णवणोक के जि अज श्रे १ णि जहण्णा । सम्मत्ति सम्मामि मिद्यण्णाणिभंगो । एवं सोत्तसक प्रवणोकसायाणं । सम्मत्त जह विह विश्वति निरुत्ति कर निरुप्ति के जिल्ला है ज

६८६५ त्राभिणि०-सुद्०-त्रोहि० त्रोघभंगो । णवरि सम्मामिच्छत्तस्स वस्य-वणाए जहण्णिहिदी कायव्या । एवं संजद०-मणपज्ज०-सामाइय-छेदो०-ओहिद्स०-सम्मादिहीणं । णवरि मणपज्ज० इत्थि-णवुंस०सामिणो जाणिदव्या । सामाइय-छेदो० तिण्णिसंज०-णवणोक०ज० वि० लोभसंज० किंज० त्रज्ञ १ णि० अजह० संस्वे०गुणा ।

्र ८६६ परिहार० मिच्छत्त०ज०वि० सम्मत्तसम्मामि० किं ज० अज० १ णि० अज० असंखे०गुणा । बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा । सम्मत्त०ज०वि० बारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० वेहाणपदिदा । सम्मामि०ज०वि० सम्मत्त० किं ज० अज० १ णि० अज० असंखे०गुणा० । सेस०

धारक जीवके सोलह कपाय त्रोर नौ नोकपायोकी स्थित क्या जवन्य होती है या श्राजवन्य ? नियमसे जवन्य होती है। सम्यक्त्य त्रोर सम्यिमिण्यात्वका भंग मत्यज्ञानियोंके समान है। इसी प्रकार सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवोंके मिश्रकष जानना चाहिये। सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिके धारक जीवके मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नौ नोकपायोंकी स्थित क्या जवन्य होती है या श्राजवन्य ? अजघन्य होती है जो तीन स्थानपतित होती है। सम्यम्मिण्यात्वकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्राजवन्य ? नियमसे अजघन्य होती है जो जघन्य स्थितिविभक्तिके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके सम्यक्त्व-प्रकृति नहीं है।

्रै पर्प. आभिनियोधक ज्ञानी, श्रुतक्षानी श्रोर श्रविध्ज्ञानी जीवोंका भंग श्रोषके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यग्मिण्यात्वकी ज्ञधन्य स्थिति च्रिप्णाके समय ही कहनी चाहिये। इसी प्रकार संयत, मनःपर्ययज्ञानी, सामायिकसंयत, छेदोषस्थापनासंयत, श्रविधदर्शनी श्रोर सम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनःपर्ययज्ञानियोंमें स्त्रीवेद श्रोर नपुंसकवेदके स्वामीको जानकर कहना चाहिये। सामायिकसंयत श्रोर छेदोषस्थापना-संयतोंमें तीन संव्यत्वत श्रोर नो नोकपायोंकी ज्ञषन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके लोभसंत्र्वनकी स्थिति क्या ज्ञष्यन्य होती है या श्रज्ज्ञचन्य १ नियमसे श्रज्ञचन्य होती है जो श्रपनी ज्ञष्यय स्थितिसे संख्यात्माणी होती है।

§ मद्द परिहार विद्युद्धिसंयनों में मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्तव श्रोर सम्यग्निण्यात्वकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती हैं जो जघन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है। बारह कषाय श्रोर नौ नोकपायों की स्थिति क्या जघन्य होती हैं या अजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती हैं जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती हैं। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके बारह कषाय श्रोर नौ नोकपायों की स्थिति क्या जघन्य होती हैं या श्रजघन्य ? नियमसे श्रजघन्य होती हैं जो दो स्थानपितत होती हैं। सम्यग्निथात्वकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्वकी स्थिति क्या जघन्य होती हैं या

सम्मत्तभंगो । त्र्रणंताणु०कोध० जह० दंसणतिय-तिष्णिकसा० ओघं । सेसं मिच्छत्त-भंगो । एवं तिण्हं कसायाणं । त्र्रपचक्ताणकोध० ज० वि० एकारसक०-णवणोक० किं ज० स्रज्ञ० १ णि० जहण्णा । एवमेकारसक० णवणोकसायाणं । एवं संजदासंजदाणं ।

\$ ८६७ असंजद० मिन्छत्त० ज० वि० सम्मत्त०-सम्मामि० किं ज० अज०। णि० अज० अमंखे०गुणा। वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संखे०गुणा। सम्मत्त० ज० वि० वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णियमा अज० संखेजगुणा। सम्मामि० ज० वि० सम्मत्त-अणंताणु०चडक्क० सिया अत्थि सिया णित्थि। जिद्य अतिथ णि० असंखे०गुणा। वारसक० णवणोक० किं ज० अज० १ जहण्णा अजहण्णा वा। जहण्णादो अज० तिहाणपिददा। सेसं तिरिक्खोघं। णविर मिन्छत्त० अणंताणु० चडक्क०मंगो।

्र ८६८. किण्ह-णील-काउ० तिरिक्खोषं । णवरि किण्ह-णीललेस्सासु सम्मत्त०-सम्मामिच्छत्तभंगो । तेउ०-पम्म०परिहार०भंगो । णवरि सम्मामि० ओषं ।

श्रज्ञघन्य ? नियमसे श्रज्ञघन्य होती है जो जघन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है। शेष प्रकृतियोंका भंग सम्यक्त्वके समान है। श्रम्तानुबन्धी कोधकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके तीन दर्शन मोहनीय श्रोर श्रमन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कपायोंका कथन श्रोपके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भंग भिश्यात्वके समान है। इसी प्रकार श्रमन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके सिन्नकर्प जानना चाहिये। श्रप्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके शेप ग्यारह कपाय श्रोर नौ नोकपायोंकी स्थित क्या जघन्य होती है या श्रज्ञचन्य ? नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार शेप ग्यारह कपाय श्रोर नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके सिन्नकर्ष जानना चाहिये। इसी प्रकार संयतासंयतोंके जानना चाहिये।

\$ ५६० श्रसंयतोंमें मिण्यात्वकी जवन्य स्थितिवभक्तिवाले जीवके सम्यक्त श्रौर सम्याग्यात्वकी स्थिति क्या जवन्य होती है जो अजवन्य ? नियमसे अजवन्य होती है जो जवन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है। सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिवभक्तिवाले जीवके बारह क्याय श्रोर नो नोकपायोकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य ? नियमसे श्रजवन्य होती है, जो श्रपनी जवन्य स्थितिवभक्तिकाले जीवके सम्यक्त्व श्रोर श्रननानुबन्धी चतुष्क कदाचिन् हैं श्रोर कदाचिन् नहीं हैं। यदि हैं तो उनकी स्थिति नियमसे श्रजवन्य होती है, जो श्रपनी जवन्य स्थितिवभक्तिकाले क्यात अवन्य होती है, जो श्रपनी जवन्य स्थितिसे श्रसंख्यातगुणी होती है। बारह कपाय श्रोर नो नोकपायोंकी स्थिति क्या जवन्य होती है या श्रजवन्य ? जवन्य भी होती है श्रोर श्रजवन्य भी। उनमंसे श्रजवन्य स्थिति जवन्य स्थितिसे तीन स्थान पतित होती है। शेप कथन सामान्य तियंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वका भंग श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कके समान है।

्रद्द छुट्ण नील और कापोत लेश्यावालोंके सामान्य तिर्यचोके समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि छुट्ण और नील लेश्याओंमे सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिण्यात्वके समान है। पीत और पञ्चलेश्यावालोंमें परिहार विशुद्धिसंयतोके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिण्यात्वका भंग ओषके समान है।

इद्धः खइयसम्मा ० एकवीसपयडीणमोघं । वेदय० मिच्छत्त-सम्मामि०प्रणंताग्रु०चउकाणं परिहारभंगो । सम्मत्त्र जिल्ला विद्याणपिद्दा । अपचक्खा०
अज० १ जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा वेद्याणपिद्दा । अपचक्खा०
कोधज ० वि० सम्मत्त्र किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवमेक्कारसक०-णवणोकसायाणं जहण्णतं वत्तव्वं । एवमेकारसक०-णवणोकसायाणं । उवसमसम्मा० मिच्छत्त०
ज० वि० सम्मत्त्र ०-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा ।
एवं सम्मत्त-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक० । अणंताग्रु०कोध०ज०वि० मिच्छत्तसम्मत्त-सम्मामि०-वारसक०-णवणोक० किं ज० अज० १ णि० अज० संसे०गुणा ।
तिण्णिक० किं ज० अज० १ णि० जहण्णा । एवं तिण्हं कसायाणं । एवं सासणसम्मादिद्दीणं । णविर अणंताग्रु०चउक्क० मिच्छत्तभंगो ।

§ ८७० सम्मामिच्छाइद्वी० मिच्छत्तजह० सम्म०-सम्मामि० णि० श्रज०
संखे०गुणा । संसं णियमा जह० । णवरि श्रणंताणु०चउक्कं णित्थ । एवं बारसक०-

६=६६ ज्ञायिकसम्यग्दृष्टियोमें इकीस प्रकृतियोंका भंग त्र्यायके समान है । वेदक सम्यग्दृष्टियोंमें मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भग परिहारविशुद्धिसंयतोके समान है। सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवक वारह कपाय स्रार नी नाकपायाकी स्थिति क्या जघन्य हाती है या अजधन्य ? जघन्य भी हाती है और अजधन्य भी । उनमंसे अजधन्य स्थिति जघन्य स्थितिसे दो स्थानपातत हाती है । अप्रत्याख्यानावरण काधकी जघन्य स्थिति-विभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्वकी स्थित क्या जघन्य हाता है या अजघन्य १ (नयमसे जघन्य हाती हैं। इसी प्रकार ग्यारह कपाय त्रार ना नाकपायाका स्थिति जयन्य कहना चाहिये। इसी प्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान आहर ग्यारह कवाय और ना नाकवायाकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जावोके सिन्नकप जानना चाहिय । उपशम सम्यग्टाष्टियामे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति।वभक्तिवालं जीवक सम्यक्त्व, सम्योग्मध्यात्व, वारह कपाय आर ना नोकपायोका स्थिति क्या जघन्य होती है या अजधन्य ? नियमसे जघन्य होता ह । इसी प्रकार सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कपाय आर ना नोकपायाकी जघन्य स्थितिविभाक्तिवाले जीवाक सन्निकष जानना चाहिये। अनन्तानुबन्धां क्राधका जवन्य स्थातावभाक्तवाल जीवक मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्योगमध्यात्व, बारह कषाय आर ना नाकपायाकी हिर्यात क्या जवन्य हाता हे या अजघन्य ? नियमसे अजधन्य होता ह जो जधन्य स्थितस सस्यातगुणा होती है। अनन्तानुबन्धी मान श्रादि तीन कषायोका स्थिति क्या जघन्य हाता ह या श्रजधन्य १ नियमसे जघन्य हाता है। इसा प्रकार अनन्तानुबन्धी मान त्र्यादि तीन कपायाका जधन्य स्थितिवाल जाबीके सन्निकर्प जानना चाहिये। इसी प्रकार साम्रादनसम्यग्दाष्ट जावाक जातना चाहिय । किन्तु इतनी विशेषता है कि श्चनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मिण्यात्वक समान है।

§ ८७० सम्याग्मिध्यादृष्टियामे मिध्यात्वकी जवन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यक्त्व श्रोर सम्याग्मिध्यात्वकी स्थिति नियमसे अजवन्य होती है जो जवन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होनी है। तथा शेष प्रकृतियोंकी स्थिति नियमसे जवन्य होती है किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धी चतुष्क नहीं है। इसी प्रकार वारह कपाय श्रोर नौ नोकपायोंकी जवन्य णवणोकः । श्चणंताणुः कोघः जिं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिः वारसकः णवणोकः णियः श्रजः श्रसंखेज्जगुणाः । तिण्णि कसाः णियः जहण्णाः । एवं तिण्णं कसायाणं । सम्मः जहः हिदिविहः सम्मामिः णियः जहः । सेससन्वः णियः अजः संखेः गुणाः । एवं सम्मामिः । श्चणाहाराणं कम्मइयभंगो ।

### एवं सिण्यासी समत्ती।

### ि अप्पाबहुऋं । ]

६ ८७१, अप्पाबहुअं दुविहं हिदिग्रप्पाबहुअ जीवअप्पाबहुअं चेदि । तत्थ हिदि-अप्पाबहुत्र्यं वत्तरस्सामो ।

## 

\$ ८७२. कुदो ? बंधावित्ययूणचत्तात्तीस-सागरोवमकोडाकोर्डिंपमाणत्तादो । किमहं-बंधाविष्ठियाए ऊणा ? ण, बद्धसमए चेव कसायुक्कस्सिट्टिदीए णोकसायाणमुविर संकम-णसत्तिविरोहादो । तं पि कुदो ? साहावियादो । ण च सहावो परपडिंजोयणारुहो.

स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके जानना चाहिये। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निध्यात्व, बारह कपाय आर नो नाकपायोंकी स्थिति नियमसे अजघन्य होती है जो अपनी जघन्य स्थितिसे असंख्यातगुणी होती है। तथा तीन कपायोंकी स्थिति नियमसे जघन्य होती है। इसी प्रकार तीन कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके सिश्वकर्ष जानना चाहिये। सम्यक्त्यकी जघन्य स्थितिविभक्तिवाले जीवके सम्यग्मिध्यात्वकी स्थिति नियमसे जघन्य होती है। तथा शेष सब प्रकृतियोकी स्थिति नियमसे अजघन्य होती है। जो जघन्य स्थितिसे संख्यातगुणी होती है। इसी प्रकार सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभिन्नाले जीवके सिश्वकर्ष जानना चाहिये। अनाहारकों के कामेणुकाययोगियोंक समान भंग है।

## इस प्रकार सन्निकर्ण समाप्त हुन्ना।

## अल्पबहुत्वका अधिकार है।

§ ५०१. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—स्थिति अल्पबहुत्व श्रौर जीव श्रल्पबहुत्व । उनमेसे स्थितिश्रल्पबहुत्वका बतलाते हैं—

## नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है।

\$ ५०२ क्योंकि नौ नोकपायोकी उत्क्रष्ट स्थितिका प्रमाण बन्धावित कम चालीस कोड़ा-कोड़ी सागर है।

शंका-इसे एक बन्धावितप्रमाण कम किसलिये किया हैं ?

समाधान—नहीं, क्योकि बन्ध होनेके पहले समयमे ही कवायोंकी उत्क्रष्ट स्थितिमें नौ

शंका-ऐसा क्यों है ?

समाधान-क्योंकि ऐसा स्वभाव है और स्वभाव दूसरेकी प्रकृतिके अनुरूप होता नहीं,

१. ता॰ प्रतौ 'संखे॰गुणा' इति पाठः । २ ता॰ प्रतौ 'कोडीश्रो' इति पाठः । ३ श्रा॰ प्रतौ 'परपयडि' इति पाठः ।

#### अइप्पसंगादो ।

- 🕸 सोत्तसकसायाणमुक्कस्सहिदिविहत्ती विसेसाहिया।
- ६ ८७३ वंधावित्यमेत्तेण ।
- 🕸 सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सि दिविहत्ती विसेसाहिया।
- 🖇 ८७४ केतियमेत्रेण ? त्रांतोमुहूत्वातासमागरीवमकोडाकोडोमेत्रेण ।
- 🟶 सम्मत्तस्स उक्कस्सहिदिविहत्ती विसे०।

ह ८७५. के॰ मेत्तेण १ एगुदयणिसेगिहिदिमेत्तेण । चुण्णसुत्ते जइत्रसहाइरियो किम्ह वि कालपहाणं काद्ण हिदिवण्णणं कुणदि मिच्छत्तस्स संपुण्णसत्तरिसागरो-वमकोडाकोडिहिदिपरूवणादो । किम्ह वि णिसेगपहाणं काद्ण वण्णणं कुणदि; सम्मत्तुकस्सिहिद्दं पेक्खिद्ण मम्मामिच्छतुकस्सिहिद्दं ए देस्रणत्तपरूवणादो, छण्णोकसाय-जहण्णहिदीए अंतोमुहुत्तमेत्तावहाणपरूवणादो च । उचारणाइरियो वि किम्ह वि कालपहाणं काद्ण हिदिवण्णणं कुणदि; सम्मत्तजहण्णांहिद्दं पेक्खिद्ण मिच्छत्तजहण्ण-हिदीए संखेजगुणत्तपरूवणादो । किम्ह वि णिसेगपहाणं काद्ण वण्णणं कुणदि; अणु-अन्यथा अतिप्रसंग दाव आता है।

\* ना नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है।

ई न•३. नौ नोकप।योंकी उत्कृष्ट स्थितिसे सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति एक वन्धावित-काल प्रमाण ऋधिक हैं।

\* सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है।

§ ८७४. शंका-कितनी अधिक हैं ?

समाधान-अन्तर्महुतै कम तीस कोड़ाकोड़ी सागर अधिक है।

\* सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष
 \*मधिक है ।

§ ८७५. शंका-कितनी अधिक है ?

समाधान-एक उदय निषेककी स्थितित्रमाण अधिक है।

शंका—चूर्णिसूत्रमं यतिवृपम आचार्य कहीं कालकी प्रधानता करक स्थितिका वर्णन करते हैं, जैसे मिण्यात्वको उत्कृष्ट स्थिति जो सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण कहीं है वह कालको प्रधानतासे कहीं है। कहीं निपंकोका प्रधान करके स्थितिका वर्णन करते हैं, जैसे, सम्यक्त्वको उत्कृष्ट स्थितिको देखते हुए सम्यग्मिण्यात्वको उत्कृष्ट स्थिति जो देशोन कहीं है और छह नोकपायोंकी जयन्य स्थितिकी जो अन्तमुहूतप्रमाण अवस्थित कहा है वह निपंकोकी प्रधानतासे ही कहीं है। इसी प्रकार उच्चारणाचार्य भी कहीं कालको प्रधान करके स्थितिका वर्णन करते हैं, जैसे सम्यक्त्वकी जयन्य स्थितिको देखते हुए जो मिण्यात्वकी जयन्य स्थिति संख्यातगुणी कही

दिसासु भिन्छत्ति दिविखद्ण सम्मतुकस्सिहिदीए विसेसाहियत्तपस्वणादो । तदो एदेसि दोण्डगाइरियाणमिहिपाओ दुरवगमी ति ? णः णिसेगेहितो कालस्स अभेद-प्पहाणा परूवणा भेदप्पणाए कालपहाणा ति दोसाभावादो । किमहं गुणपहाणभावेण परूवणा कीरदे ? कारणंतरावे स्वाप दुविहणयमस्सिद्णहिदसिस्साणुग्गहहं वा ।

- 🕸 मिच्छत्तस्स उक्कस्सिदिविहत्ती विसेसाहिया ।
- े ८७६ के॰ मेर्नेण ? अंतोम्रहुर्नेण ।
- ॐ णिरयगदीए सञ्बत्थोवा इत्थिवेदपुरिसवेदाणमुक्कस्सिटिदिविहत्ती । ६ ८७७, कृदो ? तत्थेदेसिमुदयाभावेणुदयणिसेगस्स णवुंसयवेदसरूवेण त्थि-उक्कसंक्रमेण गमणादो ।
  - 🏶 सेसाणं णोकसायाणमुक्कस्सिंदिविहत्ती विससाहिया।

हैं वह कालकी प्रधाननासे हा कहीं हैं। कहीं निपेकोंको प्रधान करके स्थितिका वर्णन करते हैं, जैसे अनुदिश आदिमें मिथ्यात्वकी स्थितिको देखते हुए जो सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति विशेष अधिक कहा है वह निपकोको प्रधानतासे ही कही है इससे माळ्म होता है कि इन दानो आचार्यों का अभिन्नाय दुरवगम हं ?

समाधान-नहीं, क्योंकि जहां निषेकोंकी अपेचा प्ररूपणा की है वहां निषेकोंसे कालके अभेदकी प्रधानता करके प्ररूपणा की है और जहां भेदकी विवचासे प्ररूपणा की है वहां कालकी प्रधानतासे प्ररूपणा की है, इसलिय कोई दोप नहीं है।

शंका-इस प्रकार गोण मुख्यभावसे प्ररूपणा किसलिये की जाती है ?

समाधान-भिन्न भिन्न कारणोकी अपेत्तासे अथवा द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयोंका आश्रय लनेवाले शिष्पोके अनुप्रहके लिये गोण मुख्यभावसे प्ररूपणा की जाती है।

\* सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है ?

§ =७६. शंका-िकतर्ना अधिक है ?

समाधान-अन्तर्महूतं अधिक है।

\* नरकगतिमें स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं।

इ ५७७. शंका-नरकगतिमें स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थिति सबसे थोड़ी क्यों हैं?

समांधान-क्योंकि वहा पर इन दो प्रकृतियोंका उदय नहीं होता है अतः इनका उदय-निपेक स्तवुकसक्रमणके द्वारा नपुंसकवेदरूपसे परिणत हो जाता है।

अः स्त्रावेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिसे शेप नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है ।

§ चऽन. शंका—िकतनी अधिक हँ १ समाधान—एक उदय निषंकप्रमाण अधिक हैं ।

# 🕸 सोलसण्हं कसायाणमुक्कस्सिटिदिविहत्ती विसेसाहिया।

६ ⊏७६़ केत्तिएएा, बंधावलियाए ⊦

## 🕸 सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सिहिदिविहत्ती विसेसाहिया।

६ ८० केत्तियमेत्तो विसेसो ति १ तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ अंतो-मुहुत्तृ्णात्रो ।

### 🛞 सम्मत्तस्स उक्कस्सिदिविहत्ती विसेसाहिया।

इ ⊏=१ केत्तिएएः एगदयिएसेगेएा ।

# 🕸 मिच्छुत्तस्स उक्कस्सिटिदिविहत्ती विसेसाहिया।

६ ⊏८२<sub>.</sub> के० १ अंतोम्रहुत्तेण ।

## असेसासु गदीसु ऐदन्वो ।

६ ८८३. एदेणेदेसिं सुत्ताणं देसामासियत्तं जाणाविदं, तेण चुण्णिसुत्तसूचि-दाणमत्थाणमुच्चारणमस्सिद्ण पह्नवणं कस्सामो ।

श्रोप नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे सोल्ड कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति
 विशेष अधिक है।

§ ८५६. शंका-कितनी अधिक है ?

समाधान-एक बन्धावित कालप्रमाण अधिक हैं।

\* सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है।

§ ८८०. शंका-विशेषका प्रमाण कितना है।

समाधान-विशेषका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त कम तीस कोड़ाकोड़ी सागर है।

अ सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे सम्यवत्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है।

६ मम् १. **शंका-**कितनी अधिक है ?

समाधान-एक उदयनिपेकप्रमाण अधिक है।

# सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष
 अधिक है ।

६ मनर. शंका-कितनी अधिक है ?

समाधान-अन्तर्मुहूर्त अधिक हं।

\* इसी पकार शेष गतियोंमें जानना चाहिये।

६ ८८२. पूर्वोक्त सभी सूत्र देशामर्पक हैं यह इस सूत्रसे जना दिया है, श्रतः चूर्णिसूत्रसे सूचित होनेवाले अथोंका उचारणाका आश्रय लेकर कथन करते हैं—

इतिहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य ? तत्थ श्रोघेण सन्वत्थोवा णवणोक० उक-स्माहिदिविहत्तीं। मोलसक० उक० विहत्ती विसे०। सम्मत्त-सम्मामि० उक० विसेसा०। मिन्छत्त० उकक० विसेसा०। एवं सत्तम्र पुढवीस्र। तिरिक्खगइच उकक०-मणुसितय०-देवगई०-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-ओरालि०-वेउव्वि०-तिण्णिवेद-चत्तारिक०-असंजद०-चक्ख०-श्रवक्ख०-पंचले०-भवसिद्धि०-सण्ण०-श्राहारए ति।

१८८५ पंचि तिरि० अपज्ज० सव्यत्त्योवा सोलसक्क०-णवणोक० उक्क० द्विदि विहत्ती । सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० द्विदिविहत्ती विसे०। मिन्द्वतुक्क० द्विदिविहत्ती विसे०। एवं मणुसअपज्ज०-बादरेइंदिय अपज्ज०-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-सव्यविग-लिंदिय-पेचिंदिय अपज्ज०-बादरपुढवि०अपज्ज०-सुहुमपुढवि०-पज्जतापज्जत्त-बादरआड० अपज्ज०-सुहुमआउ०पज्जत्तापज्जत्त - तेउ० बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त - वाउ० बादरसुहुम-

इन्दर्श स्थित अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । पहल यहां उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—जोघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेसे आघनिर्देशको अपेता नौ नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है । सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है । सम्यक्त्व और सम्यग्निण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है । मण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंक नारकी, तिर्यचगितमे सामान्य, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त और योनिमती तिर्यंच, सामान्य सनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्य, मनुष्य, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्त्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पांचों मनोयागी, पांचों वचनयागी, काययोगी, और शिक्षिककाययोगी, तीनों वेदवाले, कोघादि चारों कपायवाले, असंयत, चतुर्शनवाले, अचचुर्शनवाले, कृष्ण आदि पांच लेश्यावाले, भव्य, संज्ञी, और आहारक जीवोंक जानन। चाहिये ।

१ ता॰ प्रतौ 'विद्वती [ विशेखाहिया ] । शोलसक॰' इति पाठः ।

पज्जत्तापज्जत्त - बादरवणप्फदिश्रपज्ज० - सुहुमवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त - णिगोदवणप्फदि-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीस्त्रयज्ञ०-तस् अपज्जतेति ।

\$ ८८६ त्राणदादि जाव उविरमगेवज्जो त्ति सन्वत्थोवा सोलसक०-णवणोक० उक्कस्सिट्टिदिविहत्ती । सम्मामि० उक्कस्सिट्टिदिविहत्ती विसे० । मिच्छत्त-सम्मत्त०उक० द्विदिवि विसे० । एवं सुक्कलेस्साए । णवि सम्मत्तस्सुवि मिच्छ० उक्क० विसे० । अणुद्दिसादि जाव० सन्वद्वसिद्धि त्ति सन्वत्थोवा सोलसक०-णवणोक० उक्क०द्विदिविहत्ती । मिच्छत्त-सम्मामि० उक्क०वि० विसे० । सम्मत्तुक्क० वि६० विसे० । एवमाहार-आहारमि०-आभिण०-सुद०-त्रोहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइयच्छेदो०-परिहार०-मंजदासंजद०-स्रोहिदंस०-सम्मादि०-वेदयसम्मादिटिहित्ति ।

इट्छ, इंदियाणु० एइंदियेस् सञ्बत्थोवा णवणोक० उक्क०द्विदिविहत्ती। सोलसक० उक्क० वि॰ विमे॰। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० विहत्ती विसे०। मिच्छत्तुक्क० वि० विसे०। एवं बादरेइंदिय-वादरेइंदियपज्जत्त-पुढवि०-वादरपुढवि०-तप्पज्ज०-आउ०-वादरश्राउ०-तप्पज्ज०-वादरवणप्फदिपत्तेय-तप्पज्ज०-श्रोरालियमिस्स०-वेउ०मिस्स-कम्म-इय-तिण्णिअण्णाण-मिच्छादिदि—असण्णि०-अणाहारए ति। एवमभवसि०। णविर सम्मत्त०-सम्मामि० णिरथ।

निगोद श्रीर उनके पर्याप्त श्रीर श्रपर्याप्त, सूच्म निगोद श्रीर उनके पर्याप्त श्रीर श्रपर्याप्त, बादर वनस्पनि प्रत्येकशारीर अपर्याप्त और त्रस श्रपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

§ ८६६ आनत कल्पसे लेकर उपरिम मैंवयक तक देवोंमें संलह कपाय और नौ नोकपायों-की उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं। इससे सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक हैं। इससे मिण्यात्व और सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक हैं। इसी प्रकार शुक्ललेश्यामें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता हैं कि यहां सन्यक्त्वके अनन्तर मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति विशेष अधिक होती हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सोलह कषाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है। इससे मिण्यात्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति ] विशेष अधिक हैं। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, मितज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, सनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदापस्थापना संयत, परिहारिबशुद्धसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनवाले, सम्यग्टिष्ट, और वेदकमम्यग्टिष्ट जीवोंके ज्ञानना चाहिये।

६ मम् इन्द्रिय मार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियों मं नो नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबमें थोड़ो है। इससे सोलह कपायों की उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, पृथिवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक, बादर प्रथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर बनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर, वादर बनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीरपर्याप्त, अपेदारिक मिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों अज्ञानी, मिण्यादृष्टि, अमंज्ञी और अनाहारकोंके जानना चाहिये। तथा अभव्योंके इसी प्रकार जानना। किन्तु इनके

 ८८८ अवगद० सन्वत्थोवा गारसक०-णवणोक० उक्क० हिदिविहत्ती। मिन्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० उक्क०हिदिवि० विसे०। एवं सुहुम०-जहाक्खाद० अकसायिति।

\$ ८८६ , खइए णित्थ अप्पाबहुगं; बारसक०-णवणोक० हिदीणं सिरसत्तादो । अवसमे सञ्बत्थोवा सोलसक०-णवणोक०-उक्क० हिदिविहत्ती । मिन्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० हिदिविहत्ती विसे० । एवं सासण० । सम्मामि० सन्वत्थोवा सोलसक०-णवणोक० उक्क० हिदिविहत्ती । सम्मत्त० उक्किहिदिविहत्ती विसे० । सम्मामि० उक्क० हिदिवि० विसे० । मिन्छत्तउक्क० विसे० ।

## एवमुक्कस्सप्पाबहुत्राणुगमी समत्तो ।

१८६० जहण्णए पयदं । दुविहो णिदेसो ओघेण द्यादेसे० । द्योघेण सव्वत्थोवा सम्मत्त-इत्थि०-णतुंस०-लोभसंज० जहण्णिद्दिविहत्ती । मिच्छत्त-सम्मामि०-वारसक० जहण्णिद्दिविहत्ती संखे०गुणा । मायासंज० जह० द्विदिवि० द्यासंखे०गुणा । माण-संजल० जह० द्विदिविह० संखे०गुणा । कोधजह०द्विदिवि० संखे०गुणा । पुरिसजह० द्विदिवि० संखे०गुणा । पुरिसजह० द्विदिवि० संखे०गुणा । एवं मणुम०-मणुसपज्ज०-मगुसिणी-पंचिदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचविव०-काय-

सम्यक्त्व और सम्यग्मिश्यात्व प्रकृतियां नहीं है ।

६ ८८८ श्रवगत वेदियोंमें वारह कवाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं। इससे मिध्यात्व, सम्यवत्व और सम्यिगिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इसी प्रकार सुरुममांपरायिक संयत, यथाख्यातसंयत और अकपायी जीवामें जानना चाहिये।

६ ६८६ चायिक सम्यग्दृष्टियोमे अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि इनके वारह कपाय और नौ नोकपायोंकी स्थितियां समान है। उपशममम्यग्दृष्टियोंमें सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है। इससे मिण्यात्व, सम्यक्त्व चोर सम्यग्मण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इसी प्रकार सासादन सम्यग्दृष्टियोंके जानना चाहिये। सम्यग्मण्यादृष्टियोंमें सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है। इससे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट ऋल्पवतुत्व समाप्त हुऋ।।

\$ ८६० अव जघन्य स्थिति अल्पवत्त्वका प्रकरण है। इसकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघनिर्देश श्रोर आदेशनिर्देश। उनमेसे आघ्वी अपेता सम्यक्त्व, स्थीवंद, नपुंसकवेद और लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति सदसे थोड़ी है। इससे मिथ्यात्व, सम्यमिथ्यात्व और वारह कषायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे मायासंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे मानसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति सख्यातगुणी है। इससे क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति सख्यातगुणी है। इससे पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे प्रकार सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी, पंचिन्द्रिय, पंचिन्द्रिय पर्याप्त, इस, इस, पर्याप्त,

जोगि०-स्रोराल्यि०-लोभक०-आभिणि०-सुद०-स्रोहि०-संजद०-चक्खु०-स्रव्यक्खु०-ओहिदंस०-सुक्कले०-भवसि०-सम्मादि०-सिण्ण-स्राहारए ति । णवरि मणुसपज्ज० क्रणोकसायाणमुवरि इत्थिवेद० जह० स्रसंखे०गुणा । मणुसिणी० कोधसंजलणस्सुवरि पुरिस०-क्रण्णोक० जह० द्विदिवि० संखे०गुणा । णवुंस० जह० द्विदिवि० स्रसंखे०गुणा ।

इत्थ-पुरिसर्वप्रमुस्य पेरइएस सन्वत्थोवा सम्मत्त जह विदिवि । सम्मामि०अणंताणु०च कि जह विदिवि संखेगुणा । पुरिस० जह विदिवि असंखे०गुणा ।
इत्थिज विवि विसेसा० । के मेरोण १ पुरिसवेदवं पगद्धणित्थिवेदवं धगद्धामेरोण ।
इस्स-रिद जह वि वि विसे । के मेरोण १ अरिद-सोगवं धगद्धण पुरिसणवुंसयवेदवं धगद्धागेरोण । अरिद-सोग० जहण्ण० दिदिवि० विसे० । के मेरोण १ इस्सरइवं धगद्धापरिहीणसग्वं धगद्धामेरोण । णवुंस० जह विदिवि० विसे० । के मेरोण १
इत्थ-पुरिसवं धगद्धणहस्स-रिद्धं धगद्धामेरोण । बारसक०-भय-दुगुं छाणं जह विदिवि० विसे० ।
सिच्छ त्रज विदिवि० विसे० ।

्रद्धर एत्थुवउज्जंतमद्धपावहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा—सञ्वत्थोवा पुरिस-वंधगदा २ । इत्थिवदवंधयदा संखे०गुणा ४ । इस्स-रिद-वंधगदा संखे०गुणा १६ । पांचो मनायोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, आंदारिक काययोगी, लांम कपायवाले, मितिज्ञानी, श्रुवज्ञानी, श्रविध्वानी, संयत, चबुदर्शतवाले, श्रवबुद्शनवाले, श्रविध्वानी, शुक्ललेश्यावाले, भव्य, सम्यन्द्दिष्ट, संझा श्रोर श्राहारक जीवोके जानना चाहिये। <u>किन्तु इतनी विशेषता है कि</u> मनुष्य पर्याप्तकोंमे छह नोकपायोके उपर स्त्रीवदक्ती जयन्य स्थितिविभक्ति। होती है। मनुष्यित्योंमे क्रोधसंज्वलनके उपर पुरुपवंद श्रोर छह नोकपायोंकी जयन्य स्थितिविभक्ति। संख्यातगुणी होती है।

६१ श्रादेशनिर्देशकी अपेत्रा नारिकयोमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है? इससे सम्यम्भिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यात-गुणी है। इससे पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातनुणी है। इससे स्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। कितनी अधिक है? पुरुपवेदके वन्धककालसे कम स्वीवेदके वन्धक कालप्रमाण अधिक है। इससे हास्य और रितकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। कितनी अधिक है। इससे अरित और शोककी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे अरित और शोककी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे अरित और शोककी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे वारह कपाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है।

§ ८६२ अब यहाँ प्रकृतमें उपयोगी अल्पबहुत्यको बतलाते हैं । जो इस प्रकार है—
पुरुपवेदका बन्धकाल सबसे थोड़ा है जिसकी सहनाती २ हे । इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्याकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनाती ४ है । इससे हास्य और रितका बन्धकाल संख्यात

श्चरित-सोगबंधगद्धा संखे॰गुणा ३२ । णवुंसयवेदबंधगद्धा विसे॰ ४२ । सगसगपित-वक्सबंधगद्धाओं कसायजहण्णिहिदीदों २०० सोहिदे सत्तणोकसायाणं जहण्णिहिदीओं होति । तासिं पमाणमेदं—पुरिस० जहण्णिहिदी एसा १५४ । इत्थि० जहण्ण०िहिदी १५६ । हस्स-रिदज० हिदी १६ । अरिद-सोगजहण्णिहिदी १८४ । णवुंस०जह० हिदी १६४ । एसा उच्चारणपाबहु अस्स संदिही ।

इत्हर् संपिद्ध चिरंतणवक्त्वाणाइरियाणमप्पाबहु अं वत्तइस्सामो । सन्वत्थोवा सम्मत्त जह विदिविहत्ती । सम्मामि०-अर्णाताणु च चक्क जि विदिविहत्ती । सम्मामि०-अर्णाताणु च चक्क जि विदिविहत्ती । सम्मामि०-अर्णाताणु च चक्क जि विदिविहत्ती । हस्स-रिद्ध जि विदिविहत्ती असंस्वेवगुणा । इत्थिव जह विदित्ती विसेव । हस्स-रिद्ध जि विदिव विसेव । णवुंसव जह विविष्ठ । अरिद-सोगव जव विविष्ठ । स्वाप्य विद्या जव विविष्ठ । विद्या विसेव । विद्या अप्याबहुअस्स माहणहमद्धप्पाबहुअं वत्तइ-स्सामो । तं जहा—सन्वत्थोवा पुरिसव बंधगद्धा ३ । इत्थिव बंधगद्धा संस्वेवगुणा २२ । अरिद-सोग बंधगद्धा विसेसाव २३ । अप्यप्पणो पिडवक्सवबंधगद्धाओं कसायजहण्णिहिदीए २००

गुणा है जिसकी सहनानी १६ है। इससे अरित और शांकका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी ३२ है। इससे नपुंसकवदका बन्धकाल विशेष अधिक है इसकी महनानी ४२ है। उपर जो अंक संदृष्टि दी है उसके अनुसार अपने-अपने प्रतिपद्म बन्धकालोंको कपायकी जघन्य स्थित २०० मसे घटा देनेपर सात नांकपायोंकी जघन्य स्थितियाँ होती हैं। उनका प्रमाण निम्न प्रकार है—पुरुपवेदकी जघन्य स्थिति १५४ होती है। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति १५६ होती है। हास्य और रितकी जघन्य स्थिति १६८ होती है। अरित और शांककी जघन्य स्थिति १८४ होती है। वस्त्री शांककी जघन्य स्थित १८४ होती है। यह उच्चारणाचार्यके द्वारा कहे गये अल्प-बहुत्वकी संदृष्टि है।

§ न्ह्३ श्रव चिरन्तन व्याख्यानाचार्यके अल्पबहुत्वका बतलाते हैं। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थांड़ी है। इससे सम्यिग्मिश्यात्व और श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे हास्य और रितकी जघन्य स्थितिवभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे श्रात और शोककी जघन्य स्थितिवभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे श्रात और शोककी जघन्य स्थितिवभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे श्रात और शोककी जघन्य स्थितिवभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे माश्यात्वकी जघन्य स्थितिवभक्ति विशेष श्रधिक है। इस प्रकार है—पुरुषवेदका बन्धकाल सबसे थाड़ा है जिसकी सहनानी है है। इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी है है। इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी है है। इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी है है। इससे श्रधिक है जिसकी सहनानी है है। इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी है है। इससे श्रीवरका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी है है। इससे श्रीवरका बन्धकाल संख्यातगुणा है जिसकी सहनानी है। इस प्रकार उपर जो श्रीक संहिष्ट ही है उसके श्रीसार श्रीम श्रीवर है। इसके श्रीसार श्रीम

सोहिय सत्तणोकसायजहण्णिहिदीओ उप्पपादेदन्त्राओ। पुरिस० जहण्णिहिदी १६९। इत्थि० जह०हिदी १७४। हस्स-रिद्जहण्णिहिदी १७७। णवुंस० जह० हिदी १८८। श्ररिद-सोग जहण्णिहिदी १८६।

६८९४. एत्थ दोस्र वि वक्ताणेस एक्केणेव सच्चेण होद्व्वं, ण दोण्हं, विरोहादो । किंद्ध भय-दुगुं झाणस्रविर कसायाणं जह हिद्वित्रसेसाहिया ति जं भणिदं
तण्ण घडदे ; णेरइयविद्यसमए जादकसायिहिदें भयदुगुं झास्र संकामिय संकामणावित्यमेत्तिहिदीणं गालणोवायाभावादो । कुदो ? गिहदसरीरणेरइयम्स पढमसमए कसाएहि सह भय-दुगुं झाणमंतोकोडाकोडिमेत्तिहिद्वंधुवलंभादो । णेरइयविद्यसमयादो
हेट्ठा ण भयदुगुं झाणं जहण्णिहिदी होदि तत्थ भय-दुगुं छाहि पिडिक्षिज्जमाणकसायजहण्णिहिदीए झभावादो । तं पि कुदो णव्वदे ? णेरइयविद्यसमए चेव जहण्णसामित्तदाणादो । तम्हा वारसकसायदुगुं झाणं जहण्णिहिदी झो सिरसाझो त्ति जम्रचारणाए
भणिदं तं चेव घेत्तव्यं णिरवज्जत्तादो । जइ पुण असण्णिचरिमसमए कसायजहण्णहिदीदो भयदुगुं छ-जहण्णिहिदिविहत्तीए आवित्रयूणत्तं ल्रब्भइ तो कसायाणं विसेहियत्तं
घडदे । णवरि एदं जाणिय वत्तव्यं । उच्चारणाहिष्याओ पुण तहा ए ल्रब्भइ ति ।

त्रपने प्रतिपत्त बन्धकालोंको कपायकी जघन्य स्थिति २०० मेंसे घटानेपर सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितियां उत्पन्न करना चाहिये। उनमेंसे पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति १६६ होती है। स्त्रीवेद-की जघन्य स्थिति १७५ होती है। हास्य ऋौर रितकी जघन्य स्थिति १७७ होती है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति १८८ होती है। ऋरित ऋौर शोककी जघन्य स्थिति १८८ होती है।

§ प्रहा इन दोनों व्याख्यानोंमंसे कोई एक व्याख्यान ही सत्य होना चाहियं, दोनों नहीं, क्योंकि दोनोंको सत्य माननेमें विरोध आता है। किन्तु भय और जुगुप्साके ऊपर कपायोंकी जयन्य स्थितिको जो विशेष अधिक कहा है वह नहीं बनता है, क्योंकि नारिकयोंके उत्पन्न होनेके दूसरे समयमें प्राप्त हुई कपायकी स्थितिके भय और जुगुप्सामें संक्रमित कर देने पर संक्रमणाविलप्रमाण स्थितियोंके गलानेका कोई उपाय नहीं पाया जाता है। इसका कारण यह है कि नारकीके शरीर प्रहण करनेके पहले समयमें कपायोंके साथ भय और जुगुप्साका अन्तःकांड़ाकांड़ी प्रमाण स्थितिबन्ध पाया जाता है। और नारिकयोंके दूसरे समयसे नीचे भय और जुगुप्सा प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति नहीं होती है, क्योंकि वहां भय और जुगुप्सारूपसे छीजनेबाली कपायोंकी जघन्य स्थित नहीं पायी जाती है।

शंका — यह किस प्रमाणसे जाना जाता हैं?

समाधान—क्योंकि नारिकयोंके उत्पन्न होनेके दूसरे समयमें ही कवायोंका जघन्य स्वामित्व दिया है।

श्रतः बारह कषाय श्रीर जुगुप्स। इनकी जघन्य स्थितियां समान होती हैं ऐसा जो उचारणामें कहा है वही प्रहण करना चाहिये, क्योंकि वह कथन निर्दोप है। श्रीर यदि श्रसंक्रियोंके श्रन्तिम समयमें रहने वाली कषायोंकी जघन्य स्थितिसे भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिमें एक श्रावली काल कम प्राप्त होता है। तो कपायोंकी जघन्य स्थिति भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिसे विशेष श्रिक बन जाती है। किन्तु जानकर इसका कथन करना चाहिये। परन्तु उचारणाचार्यका

६८६५. एवं पढमाए पुढवीए । विदियादि जाव छट्ट ति सन्वत्थोवा सम्मत्त-सम्मामि०-अर्णताणु०-चउकाणं जह० विहत्ती । बारसक०-णवणोकसायाणं ज० विह० श्रसंखेज्जगुणा । मिच्छत्तज० वि० विसेसा० ।

इटह् सत्तमाए पुढवीए सन्वत्थोवा सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउकाणं ज० हिदिविहत्ती । पुरिस० ज० हिदी असंखे०गुणा । इत्थि० ज० हिदिविहत्ती विसेसा० । इस्स-र्रादज० वि० विसेसा० । अरदि-सोग० ज० हिदिवि० विसे० । णवुंस० ज० हि० वि० विसेसा० । भय-दुगुंछ० जह० हिदिवि० विसे० । बारसक० ज० वि० विसेसा० । केत्तियमेत्तेण १ एगाविष्ठयामेत्तेण । कुदो १ कसायाणं जहण्णि हिदीए जादाए पुणो आविष्ठयमेत्तमद्माणम्रुविर गंतूण भय-दुगुं छाणं जहण्णिहिदिसमु-एपत्तीदो । कसायाणमेत्थ जहण्णिहिद्मंतसमबंधस्स अंतोम्रहुत्तमेत्तकालसंभवादो । जहण्णिहिदिसंतादो कसायिहिद्वंधे अहिए जादे वि भयदुगु छाणं सग नहण्णिहिद्संतादो हेहा बंधसंभवादो । मिच्छत्तज० वि० विसे० । एत्थ अद्धप्पावहुअं णवणोकसायाणं जहण्णिविद्वेष्ठपायणविद्वाणं चै पढमपुढविभंगो; भेदीभावादो चिरंतणाइरियवक्खाणं पि एत्थ

अभिप्राय वैसा नहीं है।

्र मध्या दक्षी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये। दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिक्योमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं। इससे बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जबन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति-विभक्ति विशेष अधिक है।

इन्दि सातवीं पृथिवीं सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जयन्य स्थितिविभिक्त सबसे थाड़ी हैं। इससे पुरुपवदकी जयन्य स्थितिविभिक्त असंख्यातगुणी हैं। इससे स्त्रीवेदकी जयन्य स्थितिविभिक्त विशेष अधिक हैं। इससे हास्य और रितकी जयन्य स्थितिविभिक्त विशेष अधिक हैं। इससे हास्य और रितकी जयन्य स्थितिविभिक्त विशेष अधिक हैं। इससे नपुंसकवेदकी जयन्य स्थितिविभिक्त विशेष अधिक हैं। इससे मय और जुगुष्साकी जयन्य स्थितिविभिक्त विशेष अधिक हैं। इससे मय और विशेष अधिक हैं। इससे अधिक हैं। इससे अधिक हैं। इससे वारह कपायोंकी जयन्य स्थितिविभिक्ति विशेष अधिक हैं। कितनी अधिक हैं। एक आवलो अधिक हैं।

शंका-भय त्रौर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिसे बारह कपायोंकी जघन्य स्थिति एक त्राविल त्राधिक क्यों है ?

समाधान—क्योंकि कपायोंकी जघन्य स्थिति हो जानेपर तदनन्तर एक आविलिश्रमाण काल आगे जाकर भय और जुगुष्साकी जघन्य स्थिते उत्पन्न होती है। इसका कारण यह है कि यहां पर अन्तर्मुहूर्त कालतक कषायोंकी सत्तामें स्थित जघन्य स्थितिके समान कषायोंका बन्ध संभव है। और जघन्य स्थिति सत्त्वसे कषायका स्थितिबन्ध अधिक होनेपर भी भय और जुगुष्साका अपने जघन्य स्थितिसत्त्वसे नीचे बन्ध संभव है। बारह कषायोंकी जघन्य स्थितिसे मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिबभक्ति विशेष अधिक है। यहां पर काल सम्बन्धी अल्पबहुत्वको और नौ नाकपायोंकी जघन्य स्थितिके उत्पन्न करनेकी विधिको पहली पृथिवीके समान जानना चाहिये,

१. ता प्रतौ 'च [ समायां ] पढम<sup>,</sup> इति पाठः । २ ता० स्ना० प्रत्योः '–मंगभेदा–' इति पाठः ।

## अप्पणो पढमपुढविवक्स्वाणसमाणं।

क्योंकि उससे इसमे कोई भेद नहीं हैं । चिरन्तनाचार्यका व्याख्यान भी यहां अपने पहली पृथिवीके व्याख्यानके समान हैं ।

६ ८७ तिर्यंचगतिमें सम्यक्तवकी जयन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोडी है। सम्यक्तवकी जितनी स्थितिविभक्ति हैं उतनी ही सम्यग्मिध्यात्वकी और उतनी ही अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थिति है। पर यह स्थिति विभक्ति संख्यातगुणी है, क्योंकि इसमें निपेकोंके समयोंका प्रहण किया है। इससे पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति अमंख्यातगुणी है। इससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक हैं। इससे हास्य और रतिकी जवन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे ऋरति और शांककी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष ऋधिक है। इससे न्युंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे वारह कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इसका कारण जिस प्रकार सातवीं पृथिवीमें कह आये हैं उस प्रकार यहां कहना चाहिये। बारह कपायोंकी जघन्य स्थितिसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। यहां उच्चारणाचार्यकं द्वारा कहे गये सात नोकपायोंके बन्धकालोंका पहलेके समान व्याख्यान करना चाहिये; क्योंकि चारों गतियोंमें उनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। परन्तु यहां तिर्यंचगतिमें व्याख्यानाचार्यके द्वारा कहा गया सात नोकपायों सम्बन्धी ऋत्पबहुत्व उचारणाचार्यके ऋत्पबहुत्वके समान है, ऋतः तिर्यंचगितमें दोनों ऋलपबहत्वोमें कोई भेद नहीं है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तियंच श्रीर पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्तकोके जानना चाहियं । किन्तु इतनी विशेषता है कि न्यंसकवेदकी जवन्य स्थितिके ऊपर भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थिति संख्यातगुणी हैं: क्योंकि पंचेन्द्रिय तिर्धंच श्रीर पंचेन्द्रिय तिर्थैच पर्याप्रकोंमें नपु सक्वेदकी जघन्य स्थिति एक सागरके सात भागोंमसे पत्योपमका असंख्यातवां भाग ऋौर प्रतिपत्त प्रकृतिके वन्धकालसे कम चार भागप्रमाण होती है, क्योंकि कोई एक एकेन्द्रिय पंचेन्द्रियोंने उत्पन्न हुआ और उसने नपु सकवेदका बन्ध नहीं किया तो उसके

दुगुंद्वाणं पुण सागरोवमसहस्सस्स वे सत्तभागा पिलदोवमस्स संखे० भागेणूणा, भयदुगुंद्वाणं धुववंधित्तणेण पंचिंदिएसुप्पण्णपदमसमए वि बंधसंभवादो । तेण एव स० जहण्णहिदीदो भयदुगुंद्वजहण्णहिदी संखेज्जगुणा ति सिद्धः । बारसक० जहण्णहिदी संखे०गुणा । कुदो १ पिलदो । संखे०भागेणूणं सागरोवमसहस्सचत्तारिसत्तभागत्तादो । मिच्छत्त-जहण्णहिदी विसे०; पिलदो० संखे०भागेणूणसागरोवमसहस्सस्स सत्त सत्त भागत्तादो । जोणिणीसु एवं चेव, णविरं सव्वत्थोवा सम्मत्त-सम्मामि०-म्रणंताणु० चउक्क० ज० हिदिविहत्ती ।

८६८, पंचिंदियतिरिक्खश्रपज्जत्तप्सु सव्वत्थोवा सम्मत्त०-सम्मामि० ज० हि दिवि०। पुरिस० ज० हिदिवि० श्रसंखे०गुणा। सेस० पंचिं०तिरिक्खभंगो। णविर श्रग्णंताणु०चउकाणं वारसक्क०भंगो। एवं मणुसश्रपज्ज०-पंचि०अपज्ज०-तस-अपज्जन्ताणं।

 ६८. एइंदिय-बादरेइंदियपज्जनापज्जना-सुहुमेइंदियपज्जनापज्जनाणं तिरि-क्लोघमंगो । णविर सम्मन्तं सम्मामिच्छनेण सह वत्तव्वं, श्रणंताणु०चउक्क च बारस-

अन्तर्मुहूर्त कालतक एकेन्द्रियोंका स्थितिसन्त्र ही पाया जाता है। परन्तु भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति हजार सागरके सात भागोंमेंसे पत्यापमका सख्यातवां भाग कम दो भागप्रमाण पाई जाती है; क्योंकि भय और जुगुप्सा ध्रुववन्धिनी प्रकृतियां होनेसे पंचेन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेके पहले समयमें भी उनका वन्ध संभव है, इसिलये नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिसे भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति संख्यातगुणी होती है यह सिद्ध हुआ। भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति संख्यातगुणी होती है यह सिद्ध हुआ। भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति हजार सागरके सात भागोंमेंसे पत्योपमके संख्यातगुणी है, क्योंकि बारह कपायोंकी जघन्य स्थिति हजार सागरके सात भागोंमेंसे पत्योपमके संख्यातवें भाग कम चार भागप्रमाण है। इससे मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति विशेष अधिक है, क्योंकि इसका प्रमाण हजार सागरके सात भागोंमेंसे पत्योपमका संख्यातवां भाग कम सात भागप्रमाण है। पचेन्द्रिय तियँच योनिमितयोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व, सम्यिग्मण्यात्व और अनन्तानुवन्धी चतुप्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है।

६ म्हट्र पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति-विभक्ति सबसे थोड़ी है। इससे पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति ऋसंख्यातगुणी है। शेष प्रष्टृतियोंका मंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छानन्तानुबन्धी चतुष्कका मंग बारह कषायोंके समान है। इसी प्रकार मनुष्य ऋपर्याप्त, पंचेन्द्रिय ऋपर्याप्त श्रोर त्रस ऋपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

्र ८६६. पकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूदम एकेन्द्रिय, सूदम एकेन्द्रिय पर्याप्त अपेर सूदम एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके सामान्य तिर्यवोंके समान भंग हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका कथन सम्यग्निथ्यात्वके साथ करना चाहिये।

१ श्रा प्रतौ '— भागेण्णा' इति पाठः । २ श्रा ता प्रत्योः 'हिदिवि० संये०गुणा । पुन्सि०' इति पाठः ।

कसाएहिं सह भाणिद्व्वं । सन्त्रविगलिंदियाणं पंचिंदियत्रप्रजत्तभंगो ।

ः ६००, कायाणुवादेण सञ्बपुढवि०-सञ्बद्याउ०-सञ्बवाउ०-सञ्बवाण-प्फदि०-सञ्बणिगोद०-बादरवणप्फदिपत्तेय०-पज्जत्तापज्जत्ताणं एइंदियभंगो। वे अण्णाण०-स्रभव०-मिच्छादि०-स्रसण्णीणं च एइंदियभंगो। एविर अभव्वेस्र सम्मत्त-मम्मामि० एत्थि।

६ ९०१ देवगईए देवाणं णारगभंगो । एवं भवण ०-वाणवेंतर० । ग्रविर सम्मत्तं सम्मामिच्छत्तेण सह भाणिदव्वं । जोइसियेस्र सव्वत्थोवा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त०- अणंताग्रु० चउक्काणं ज० विहत्ती । बारसक० एविशोक० ज० विह० असंखे०गुणा । ज० हिदि० संखे०गुणा । मिच्छत्त० ज० विहत्ती विसेसा० ।

ह०२ सोहम्मादि जाव णवगेत्रज्ञाति सन्तर्यात्रा सम्मत्तज्ञ विहत्ती । सम्मामि० अणंताणु० चउक्क० ज० विहत्ती तत्तिया चेत्र । ज० द्विदी० संखेज्जगुणा । बारमक०-णवणोक० जहण्णविहत्ती असंखे०गुणा; कालपहाणत्तात्रवात्रायाते । णिमेय-पहाणत्ते पुणा बारमक०-अहणोकसायाणमुविद पुरिमवेदज्ञ द्विदिवि० विसे० । एसो अत्थो अएणत्थ वि वत्तव्यो । भिच्छत्तज० विह० संखे०गुणा । अणुदिसादि जाव सन्वद्वमिद्धि त्ति सन्वत्थोवा सम्मत्तज० विहत्ती । अणंता० चउक्क० ज० द्विदिविहत्ती और अनन्तानुवन्धी चतुष्कका कथन वारह कपायांक साथ करना चाहये । सब विकलेन्द्रियोंका भंग पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकों रू समान है ।

§ ६०० कायमानं एकि अनुवादसे सब पृथिवीकायिक, सब जलकायिक, सब अग्निकायिक, सब वायुकायिक, सब वनस्पतिकायिक, सब निनाद, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्ये कशरीर और उनक पर्याप्त तथा अपर्याप्त जीवोंक एकेन्द्रियोंक समान भंग है। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञाना, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञियोंक एकेन्द्रियोंक समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योमे सम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्व ये दो प्रकृतियां नहीं हैं।

६ ६०१. देवगतिमें देवोंका भंग नारिकयों के समान हैं। इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंक जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे सम्यक्त्वका सम्यग्मिण्यात्वके साथ अल्पबहुन्व कहना चाहिये। ज्यांतिषियोमें सम्यक्त्व सम्यग्मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी है इससे वारह कपाय, नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे पित्थितिवभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे पित्थितिवभक्ति विशेष अधिक है।

§ ६०२ सौधम स्वर्गसे लेकर नो मैंवेयक तकके देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं। सम्यग्मिश्यात्व ब्रोर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति उत्तनी ही हैं। पर यत्स्थित संख्यातगुणी है। इससे बारह कपाय ब्रौर नो नांकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी हैं क्योंकि यहां पर कालकी प्रधानता स्वीकार की गई है। निपेकोंकी प्रधानता रहनेपर नो बारह कपाय श्रौर आठ नांकपायोंके उत्तर पुरुपवेदकी जगन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। यह अर्थ अन्यत्र भी कहना चाहिये। इससे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्ध तकके देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति

तत्तिया चेव । ज०डि०वि संखे०गुणा । बारसक० णवणोक० जह० विहत्ती असंखे० गुणा । मिच्छत्त-सम्मामि० ज० डिदि वि० संखे०गुणा ।

§ ६०३ , औरालियमिस्स०तिरिक्खोघभंगो । णविर अणंताणु० चउक्क० बारसकसायभंगो । एवं वेउव्वियमिस्स० । णविर णवुंसयवेदस्सुविर वारसक०-भय-दुगुंद्व०
जह० संखे०गुणा । मिच्छ० संखे०गुणा । अणंताणु० चउक्क० संखे०गुणा । वेउव्वियक्काय० सोइम्मभंगो । णविर सम्मत्तं सम्मामिच्छत्तंण सह वत्तव्वं । कम्मइय० सव्वत्थोवा सम्मत्त० ज० हिदिवि० । सम्मामि० ज० वि० संखे०गुणा । पुरिस० ज०
हिदिवि० असंखं०गुणा । इत्थिज० वि० विसे० । हस्स-रिद० ज० वि० विसे० ।
अरिद-सोग० ज० वि० विसे० । णवुंस० ज० वि० विसे० । भय-दुगुंछ० ज० वि
विसे० । सोछसक० ज० वि० विसे० । मिच्छ० ज० वि० विसेसाहिया । एवमणाहारीणं । आहार० आहारिमस्स० सव्वत्थोवा वारसक०-णवणोक० ज० हिदिवि० ।
मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ज० हिदिवि० संखेजजगुणा । अणंताणु०चउक्क० ज० हि०
वि० संखे०गुणा ।

९०४ वेदाणुवादेण इत्थिवेदे सन्वत्थोवा सम्मत्त-इत्थि० जह० द्वि॰ विहत्ती ।

सबसे थोड़ी हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभिक्त उतनी ही है। पर यत्स्थिति-विभिक्त संख्यातगुणी हैं। इससे वारह कपाय और नौ नाकपायोकी जघन्य स्थितिविभिक्त असं-ख्यातगुणी हैं। इससे मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभिक्त संख्यातगुणी है।

६ ६०३ श्रीदारिकमिश्रकाययोगियोंका भंग सामान्य तिर्येचोके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग बारह कपायोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक-मिश्रकाययोगियोंमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे नपुंसकवेदके ऊपर बारह कषाय, भय त्र्रौर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिविभिक्त संख्यातगुणी है। इससे मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यात-गुणी है। वैिक्रियिककाययांगियोंका भंग सोधर्म कल्पकं समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्तको सम्यग्मिण्यात्वके साथ कहना चाहिये। कार्मणकाययोगियोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं। इससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे परुषवेदकी जघन्य स्थितिविभिक्त श्रसंख्यातगुणी है। इससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति-विभक्ति विशेष अधिक है। इससे हास्य श्रोर रतिकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे ऋरति ऋौर शोकको जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष ऋधिक है। इससे न्युंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष ऋधिक है। इससे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार श्रनाहारकों के जानता चाहिये। आहारककाययोगी श्रीर त्राहारकमिश्रकाययोगियोंमं बारह कपाय श्रीर नो नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं इससे मिध्यात्व, सम्यक्त्व त्र्योर सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है । इससे ऋनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है।

§ १०४ वेद मार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदमें सम्यक्त्व श्रीर स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति

मिच्छत्त॰-सम्मामि०-बारसक० ज॰ हि० वि० संखे०गुणा। सत्तणोक॰-चहुसंज० ज० हि॰ वि० असंखे०गुणा। णवुंसयवेद॰ ज० हि० वि० असंखे०गुणा। एवं णवुंस०। णविर जिम्ह इत्थिवेदो सम्मत्तेण सह वृत्तो तिम्ह णवुंसयवेदो वत्तव्यो। जिम्ह णवुंसयवेदो तिम्ह इत्थिवेदो वत्तव्यो। पुरिसवेदे सव्वत्थोवा सम्मत्त० ज० विहत्ती। मिच्छत्त-सम्मामि०-बारसक० जह० हिदि० विहत्ती संखे०गुणा। पुरिसवेदजह० असंखे०गुणा। चदुसंजल० जह० संखे०गुणा। छण्णोक० जह० संखे०गुणा। इत्थिवेदज० विहत्ती असंखे०गुणा। णवुंम० ज० वि० असंखे०गुणा। अवगदवेदे सव्वत्थोवा लोभसंजलणज० हि० विह०। मायासंज० ज० विहत्ती असंखे०गुणा। माणसंज० ज० संखे०गुणा। कोधसंज० ज० वि० संखे०गुणा। पुरिस० ज० वि० संखे०गुणा। छण्णोक० ज० वि० संखे०गुणा। अहकसा०-इत्थि०-णवुंस० ज० वि० असंखे०गुणा। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० ज० वि० संखे०गुणा।

\$ ६०५ कसायाणुवादेण कोधकसाईसु सन्वत्थोवा सम्मत्त०-इत्थि०-णवुंस० ज० हि० वि०। मिच्छ०-सम्मामि॰ नवारसक० ज० हि० वि० संखे०गुणा। चदुसंज० ज० हि० वि० ऋसंखे०गुणा। पुरिस॰ ज० हि० वि० संखे०गुणा। छण्णोक० ज०

सवसे थोड़ी हैं। इससे मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व स्रोर बारह कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी ह । इससे सात नाकपाय त्रीर चार सञ्चलनोंकी जवन्य स्थितिविभक्ति त्रसंख्यात-गुणी हं। इससे नपुंसकवंदकी जवन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इसी प्रकार नपुंसकवंद वाले जीवोके जानना चाहिय । किन्तु जहां पर सम्यक्त्वके साथ स्त्रीवेद कहा है वहां नपुंसकवेद कहना चाहिये और जहां नपुंसकत्रद कहा है वहां स्त्रीवंद कहना चाहिये। पुरुपवंदमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थाड़ी हैं। इससे मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व और बारह कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे चार सञ्जलनाका जयन्य ।स्थातावमाक्त संख्यातगुणी है। इससे छह नाकषायोंकी जवन्य स्थितिविभोक्त संख्यातगुर्खा ह । इससे स्त्रावदकी जवन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुर्खी ह । इससे न्युंमकवेदका जवन्य स्थितिवभोक्त असल्यातगुणी है । अपगतवद्मे लोभसञ्चलनकी जघन्य स्थितिवभक्ति सबसे थाड़ा है। इससे माथा संज्वलनकी जवन्य स्थितिविभक्ति श्रसंख्यात-गुणी हैं। इससे मानसंज्यलनकी जघन्य स्थितिविभाक्त संख्यातगुणी हैं। इससे काधसञ्बलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुः । इससं पुरुपत्रदक्ती जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुः । है। इससे छह नाकषायाका जधन्य स्थितिावभाक्त संख्यातगुणा है। इससे स्राठ कपाय, स्त्रीवद स्रीर न्पंसकवदकी जधन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणा है। इससे मिध्यात्व, सन्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणा ह ।

\$ ६०४. कपाय मागणाक अनुवादसं क्रांघ कपायवाले जीवोंमें सम्यक्त्व, स्त्रीचेद भौर नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसं थोड़ा है। इससे मध्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और बारह कषायोंको जवन्य स्थितिविभक्ति सख्यातगुणा है। इससे चार संब्वलनोकी जवन्य स्थितिविभक्ति ऋसंख्यातगुणी है। इससे पुरुषवेदका जवन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे छह

१. आ॰ प्रतौ 'मिच्छु॰ सम्म॰ सम्मामि॰' इति पाठः ।

वि० संखे ॰ गुणा । एवं माणकसाईसु, णविर बारसक ० ज विदीदो ति ण्णिसंज ० ज ॰ हिदी असंखे ॰ गुणा । को धसंज ० ज ॰ हि० संखे ॰ गुणा । पुरिम० ज ॰ हिदी संखे ॰ गुणा । छण्णोक ० ज ० हि० संखे ॰ गुणा । एवं मायक ०, णविर बारसक ० ज ० हि ० संखे ॰ गुणा । एवं मायक ०, णविर बारसक ० ज ० हिदीदो उविर माया-छो भसंज छणाणं ज ० हिदी छो असंखे ॰ गुणा छो । माणसंज ० ज ० संखे ० गुणा । को धसंज ० ज ० वि० संखे ॰ गुणा । पुरिसज ० वि० संखे ॰ गुणा । छण्णोक ० ज ० वि० संखे ॰ गुणा ।

ह०६ त्रकसाईसु सन्वत्थोवा बारसक०-णवणोक० ज० हि० विहत्ती । सम्मत्त-मिच्छत्त-सम्मामि० ज० वि० संखे॰ गुणा । एवं जहावखाद० । सुहुमसांपरा॰ एवं चेव । णवरि सच्वत्थोवा लोभसंजल॰ ज० हि० विह० । एकारसक॰-णवणोक० ज० हि० वि० असंखे० गुणा ।

६०७ विहंगणाणीणं जोदिसियमंगो । णवरि ऋणंताणु० चउकस्स बारसक-सायभंगो । मणपज्ज आभिणि०भंगो । णवरि छण्णोकसायाणमुत्ररि इत्थिवेद० जह० असंखे० गुणा । णवुंस० जह० अमखे० गुणा । सामाइयछेदो० मायकसायभंगो । णवरि बारसकसायाणमुत्ररि छोभमंज० ज० वि० ऋसंखे० गुणा । माय० ज० वि०

नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति सख्यातगुणी है। इसी प्रकार भान कपायवाले जावोम जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें वारह कपायाकी जघन्य स्थितिसे तीन संज्वलनोंकी जघन्य स्थिति असख्यातगुणी है। इससे कावसंज्ञलनकी जघन्य स्थिति सख्यातगुणी है। इससे प्रकार संख्यातगुणी है। इससे अह नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इसी प्रकार मायाकपायचाल जावोक जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें बारह कपायाकी जघन्य स्थितावभक्ति अपर माया और लोभसज्ज्ञलनोंकी जघन्य स्थितियां असंख्यातगुणी है। इससे मानसञ्जलनकी जयन्य स्थितिवभक्ति सख्यातगुणी है। इससे मानसञ्जलनकी जयन्य स्थितिवभक्ति सख्यातगुणी है। इससे अधसंख्यातगुणी है। इससे अधसंख्यातगुणी है। इससे अधसंख्यातगुणी है। इससे अहं नाकग्याका जयन्य स्थितविभक्ति सख्यातगुणी है।

§ ६०६, कपाय राहत जावाम बारह कपाय आर ना नोकपायाका जयन्य स्थातावेमिकत सबसे थाड़ी है। इससे सम्यक्त्व मिथ्यातव आर सम्याग्मध्यात्यका जयन्य स्थितिविभाकत संख्यातगुर्खी है। इसी प्रकार यथाख्यातस्यत जावाक जानना चाहिये। सूदम सांपरायिकसंयत जीवोंक इसी प्रकार जानना चाहिय। किन्तु इननी विशेषता है कि इनमे लाभसज्वलनकी जयन्य स्थितिविभाकत सबसे थोड़ी है इससे ग्यारह कपाय और नी नोकपायाकी जयन्य स्थितिविभाकत असंख्यातगुर्खी है।

§ ६०७. विभंगज्ञानियोके ज्यांतिषियोकं समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भग बारह कषायोकं समान है। मनःपर्ययञ्जानियोकं मितञ्जानियोंकं समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके छह नोकषायोकं ऊपर स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति-विभक्ति असंख्यातगुणी है। इससे नपुंसक्वेदकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। सामा-यिकसयत और छेदोपस्थापनासंयत जावोकं माधाकपायवाले जीवोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कपायोंकं ऊपर लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है।

संखे॰ गुणा। उबरि णत्थि विसेसो।

§ ९०८. परिहारसुद्ध० सन्बत्थोवा सम्मत्तज्ञ हि० वि०। भिच्छत्त०-सम्मा-भि०-त्र्यणंताणु०चउक्क० ज० वि० संखे० गुणा। वारसक०-णवणोक० ज० हि० वि० त्र्यसंखे० गुणा। एवं संजदासंजद-तेउ-पम्मलेस्साणं। त्र्यसंजद० सन्वत्थोवा सम्मत्त० ज० हि० वि०। भिच्छत्त०-सम्मामि०-त्र्यणताणु०चउक्क० ज० हि० वि० संखे०गुणा। सेस० तिरिक्खोधं।

§ ६०६ किण्इ-णीललेस्साणं तिरिक्खभंगो । णवरि सम्मत्त०-सम्मामिच्छत्तेण सह वत्तव्वं । काउ० तिरिक्खोघं ।

§ ६१०. खइय० सन्वत्थोवा लोभसंज० इत्थि-णवुंस० ज० विह०। ऋहक-साय ज० द्वि० वि० संखे० गुणा। मायासंज० ज० द्वि० वि० ऋसंखे० गुणा। सेसमोघं। वेदगसम्मादिद्वी० परिहारभंगो। जवसम० सन्वत्थोवा अणंताणु० चउक्क० ज० द्वि० वि०। बारसक०-णवणोक्क० ज० द्वि० वि० ऋसंखे० गुणा। मिन्छ्रच-सम्मामि० ज० द्विदि० वि० विसेसा०। सासण० सन्वत्थोवा सोलसक०-णवणोक० ज० द्वि० वि०। मिन्छ्रच-सम्मच-सम्मामि० ज० द्वि० वि० विसे०। सम्मामि० सन्वत्थोवा सम्मच० ज० द्वि० वि०। सम्मामि० ज० द्वि० वि० विसे०। बारसक०-

इससे मायासंज्वलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। ऊपर श्रीर कोई विशेषता नहीं है।

§ १०८ परिहारविशुद्धिसंयतों में सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थाड़ी है। इससे मिथ्यात्व, मम्यिगिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थि।तावभक्ति संख्यातगुणी है। इसमें बारह कपाय और नो नोकपायाकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी है। इसा प्रकार सयतासंयत, पीतलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले जीधोंके जानना चाहिये। असंयतोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ों है। इससे मिथ्यात्व, सम्याग्मध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। शेष वथन सामान्य तिर्यंबोंके समान है।

\$ ६०६. ऋष्ण श्रीर नीललेश्यावाले जीवोंके तियचीक समान भंग है। किन्तु इतनी विशोपता है कि इनके सम्यक्त्वका कथन सम्यग्मिण्यात्वके साथ करना चाहिये। का गेतलेश्यावाले जीवोके सामान्य तिर्यचोंके समान जानना चाहिये।

\$ ६१० चायिकसम्यग्दृष्टियोमं लोभमंज्यलन, स्त्रीवंद और नपुंमकवेदकी जघन्य स्थिति-विभक्ति सबपे थाड़ी हैं। इससे आठ कपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति संख्यानगुणी हैं। इससे मायासंज्यलनकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यानगुणी हैं। शेष कथन श्रीवंक समान हैं। वेदक-सम्यग्दृष्टियोंके परिहार्रावशुद्धिसंयतोंके समान भंग हैं। उपशममम्यग्दृष्ट्यामं अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थोड़ी हैं। इससे बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी जघन्य स्थितिविभक्ति असंख्यातगुणी हैं। इससे मिथ्यात्व सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। सासादनसम्यग्दृष्टियाम सालह कपाय और नौ नोकपायोकी जघन्य स्थितिविभक्ति सबसे थाइ। हैं। इससे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिविभक्ति विशेष अधिक है। इससे बारह कपाय णवणीकः जि हि वि संखेजागुणा । मिच्छ० जह० विसे०। श्रणंताग्रु० च उक्क० जि हि० वि संखे० गुणा ।

# एवं हिदिअप्पाबहुगाणुगमी समत्ती ।

\$ ९११ मंपिह जीव ऋषाबहुगाणुगमं वत्तइस्सामो । सो दुविहो — जहण्णऋो उकस्सद्रो चेदि । तत्थ उकस्सए पयदं । दुविहो णिद्देसो — ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण बन्वीसं पयडीणं सन्वत्थोवा उकस्सिटिदिविहित्तिया जीवा । ऋणुक ० दिदि विहित्तिया जीवा । अणुक ० दिदि विहित्तिया जीवा । अणुक ० दिदि ० जीवा । सम्मत्त-सम्मामिन्छत्ताणं सन्वत्थोवा उक ० दिदि ० जीवा । अणुक ० दिदि ० जीवा असंखे ० गुणा । एवं तिरिक्ख ० - एइंदिय-वणप्पिदि ० जीवा । अणुक ० दिदि ० जीवा असंखे ० गुणा । एवं तिरिक्ख ० - एइंदिय-वणप्पिदि ० जीवा । अणुक ० दिदि ० जीवा असंखे ० गुणा । एवं तिरिक्ख ० - एइंदिय-वणप्पिदि ० णिगोद ० - वादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त-कायजोगि-स्रोरालिय ० - ओरालियमिस्स० - कम्मइय ० णवुंस ० - चत्ति । प्रविक्ति ० - अस्मि ० - अभव ० - मिच्छादि ० - अस्णणी ० - आहारि ० - अणाहारि ति । प्रवि अभव ० सम्म० - सम्मा पि० प्रतिथ ।

६ ९१२, त्रादेसेण णेरइण्सु सन्त्रत्थोव। अहाबीस॰ उक्क० हिदि॰ जीवा । अ-गुक्क॰ हिदि० जीवा असंखे० गुणा । एवं सन्वणेरइय-सन्वपंचिदियतिरिक्ख०-मणुस मणुसअपज्ज॰-देव-भवणादि जाव अवराइद ति सन्वविग्रास्टिदय-सन्वपंचिदिय-सन्व-चत्तारिकाय-सन्वतस-पंचमण०-पंचवचि०-वेउन्विय०-वेउ० मिस्स-इत्थि-पुरिस०-विदं-

श्रीर नौ नोकपायोंकी जवन्य म्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इससे मिध्यात्वकी जवन्य स्थिति-विभक्ति विशेष श्रधिक है। इससे अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जवन्य स्थितिविभक्ति संख्यातगुणी है। इस प्रकार स्थिति अल्पवहुत्वानुगम समाप्त हुआ।

\$ ६१९ अब जीव विषयक अल्पबहुत्वानुगमको बनलाते हैं। वह दो प्रकारका है—जघन्य और उत्हृष्ट । उनमेंसे पहले उत्हृष्टका प्रकरण है ! उसकी अपना निर्देश दो प्रकारका है—ओघ-निर्देश और आदेशिनरेंश । उनमेंसे श्रोघकी अपना छव्वीस प्रकृतियोंकी उत्हृष्ट स्थितिविभक्तिन्वाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्वकी उत्हृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे अनुन्कृष्ट स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे अनुन्कृष्ट स्थितिवभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार तियंचों, नथा एकिन्द्रिय, चनस्पति और निगाद जीव तथा इन तीनोंक बादर और सूदम तथा पर्याप्त और अपयाप्त जीव तथा काययोगी, औदारिकिमिश्रकाययोगी कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदवाले, चारों कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचजुदशनवाले, इन्लादि तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यार्टाष्ट, असंज्ञ, आहारक और अनाहारक जीवाके जानना । किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योके सम्यक्त्व और सम्यग्मिण्यात्व प्रकृतियां नहीं हैं ।

§ ६१२. त्रादेशको त्र्रांपना नारिकयोमें ऋट्टाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभिन्तवाले जीव सबसे थोड़ हैं। इसे अनुत्कृष्ट स्थितिविभिन्तवाले जीव श्रसस्थातगुण हैं। इसे प्रकार सब नारकी, सब पचेन्द्रिय तिर्थंच, मनुष्य, मनुष्य श्रपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, सब पृथिवीकायिक आदि चार कायवाले,

ग०-श्राभिणि०-सुद०-ओहि०-संजदासंजद०-चक्खु०-शोहिदस०-तिण्णिले०-सम्मादि० खइयसम्मा०-वेदयसम्मादि०-उवसम०-सासण०-सम्माभि०-सण्णि ति ।

§ ९१३. मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु सट्घपय**री**णं स<sup>ु</sup>चत्थोवा उक्क० हिदि० जीवा। त्रणुक्क० हिदि जीवा संखे० गुणा। एवं सट्वह०—आहार०-त्राहारमिस्स-अवगद०-अकसा०-मणपज्ज०णाणी—संजद०—सामाइय-छेदी०-परिहार०-सुहुमसांप०- जहाक्खाद० संजदे त्ति।

### एवग्रुकस्सओ जीव अप्पाबहुगाणुगमो समत्तो ।

६१४. जहण्णए पयदं । दुिनहो णिहेसी—श्रोघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण सन्वत्थोना सन्वपयडीणं ज० द्विदि० जीना । अज० उक्तस्सभंगो । एवं सन्वणेरइय-सन्वपंचिदियतिरिक्ल-सन्वमणुस-सन्वदेव-सन्विनगिलिदिय-सन्वपंचिदिय-चत्तारिकाय-सन्वतस-पंचमण-पंचवचि०-कायजोगि०-श्रोरालि०-वेउन्वि०-वेउन्बियमिस्स०-श्राहार०-आहार०मिस्स०-तिण्णिवेद० अनगद०-चत्तारिक० अकसा०-विहंग०-आभिणि० - सुद०-श्रोहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइयञ्चेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-चक्खु०-श्रोहिदंस०-तिण्णिले०-भनसि०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उनसम०-सासण०

सब त्रस, पांचों मनायोगी, पांचो वचनयोगी, बैकियिककाययोगी. वैकियिकमिश्रकाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुपवेदवाले, विभंगज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रृतज्ञानी, श्रृविज्ञानी, संयतासंयत, चत्तु-दर्शनवाले, श्रृविपदर्शनवाले, पीत दि तीन लेह्यावाले, सम्यग्दृष्टि, त्वायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपश्रमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिण्यादृष्टि श्रोर मंज्ञां जीवोंक जानना।

६ ६१३. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इससे अनुत्कृष्ट स्थितिविभिक्तवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सर्वार्थ-सिद्धिके देव, आहारककाययागी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदवाले, अकपायवाले, मनः पर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकमंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, सूच्मसांपरायिक-संयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट जीव ऋरूपबहुत्वानुगम समाप्त हुआ।

हु १९४. श्रव जीव विषयक जघन्य श्राट्यबहुत्वका प्रकरण है। उसकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघनिर्देश श्रोर आदेशनिर्देश। उनमेंसे श्रोघकी अपेत्ता सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभिक्तिके धारक जीव सबसे थोड़े हैं। श्राजघन्यका मंग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सब मनुष्य, सब देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, पृथिवी श्रादि चार स्थावर काय. सब त्रस, पांचों मनायोगी, पांचों वचनयोगी, काययोगी, श्रोदारिक-काययोगी, बैकियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्राहारकिमिश्रकाययोगी, तीनों वेदवाले, श्रपगतवेदवाले, कोधादि चारों कपायवाले, श्रकपायी, विभंगज्ञानी, मति-ज्ञानी, श्रुतज्ञानी, श्रवधिज्ञानी, मति-ज्ञानी, श्रुतज्ञानी, सूचमसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, चलुदर्शनवाले, श्रवधि-दर्शनवाले, पीतादि तीन लेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दष्टि, न्नायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, उपश्चम-

१ ता॰ प्रतौ 'सन्विनगलिदिय चत्तारि' इति पाठः।

सम्मामि०-सृण्णि-श्राहारि ति ।

१ ६१५ तिग्विस्वेसु मिन्छत्त-वारसक०-भय-दुगुंद्य० खारगभंगो । सेसमोघं । एवमसंजद० तिण्णिलेस्साणं । खबरि असंज०-मिन्छ० श्रोघं ।

१९६ एइंदिएसु मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक०-सम्मत्त०-सम्मामि० णास्य-भंगो । एवं वराष्फदि-णिगोद०-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त-कम्मइय-अर्णाहारि ति । श्रोगलियमिस्स० तिरिक्खोधं । एवरि अ्रणंताणु०चउक्क० श्रपज्जत्तभंगो । एवं मदि-सुद्य्यण्णा०-मिच्छादि०-असण्णि ति । अभव० छन्त्रीसपयडी० औरालिय-मिस्सभंगो ।

### एवं चउवीस अणियोगहाराणि समत्ताणि।

सम्यग्दृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिध्यादृष्टि, संज्ञी और श्राहारक जीवोके जानना ।

ह ६१५. तिर्यंचोमें मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय श्रोर जुगुप्साका भंग नारिकयोंके समान है। शेष कथन आंघके समान हैं। इसी प्रकार श्रमंयत श्रीर कृष्णादि तीन लेक्शवाले जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रासंयतोंके मिथ्यात्वका कथन श्रोषके समान हैं।

ह ११६ एकेन्द्रियों में मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नौ नोकपाय, सम्यक्तव, और सम्यग्मिथ्यात्वका मंग नारिकयों के समान है। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक और निगोद तथा इनके वादर और सूद्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, तथा कार्मणकाययोगी और अनाशरक जीवोक जानना चाहिये। अौदारिकमिश्रकाययोगियों के सामान्य तियचों के ममान जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्क 51 मंग अपर्याप्तकों के समान है। इसी प्रकार मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी मिथ्यान्दृष्टि और असंक्षी जीवों के जानना। अभव्योमें छट्यांस प्रकृतियोंका भंग औदारिकमिश्रकाय-योगियों के समान है।

इस प्रकार चौत्रीस अनुयोगद्वार समाप्त हुए।